

ग्रीट-रचनानुवादकोमुद्री

डॉ॰ कपिलदेव द्विवेदी



प्रौढ-रचनानुवादकोमुदी

नवीनतम वैज्ञानिक पद्धति से लिखी गयी संस्कृत-व्याकरण, अनुवाद और निबन्ध की पुस्तक

लेखक—

डॉ॰ कपिलदेव द्विवेदी आचार्य,

एम. ए. (संस्कृत, हिन्दी), एम. ओ. एल., डी. फिल्. (प्रयाग), पी. ई. एस., विद्याभास्कर, साहित्यरत, व्याकरणाचार्य

> दीख्या भारती अकादमी खनान्ची रोड वटना-800004-(बिहार)



षष्ठम् संस्करण १९८५ ई०

भारत सरकार द्वारा उएलब्ध किये गये रियायती मूल्य के कागज पर मुद्रित

प्रकाशकः विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी-१ मुद्रकः -भार्गव आपसेट्स, मछोदरी, वाराणसी

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

समर्परा

इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः
पूर्वेभ्यः पिथकृद्भ्यः ।
(ऋग्वेद १०-१४-१५)

संस्कृत भाषा के प्रचार और प्रसार में संल्ग्न संस्कृत-प्रेमी जनता की सेवा में सस्नेह समर्पित।

कपिलदेव द्विवेदी आचार्य

विषय-सूची विवरण

अस्य	ास शब्द	घातु	कारकादि	समासादि	शब्दवर्गं	पृष्ठ
8	राम	भू, इस्	प्र॰, द्वितीया	लट् (पर) —	2
२	गृह	पठ्, रक्ष्	,,	लोट् "	-	8
₹	रमा	गम्, वद्	तृतीया	लङ् "	-	Ę
8	हरि, भूपति	चर्, दृश्,	,,	विधिलिङ् "	_	6
4	गुरु	सद्, पा	चतुर्थी	.लट् "	_	20
६	९ सर्वनाम पुं०	सेव्, वृत्	,,	लट् (आ॰)	_	१२
b	,, ,, नपुं०	वृध्, ईक्ष्	पंचमी	लोट् "		88
	,, ,, स्त्री॰	मन्न्, रम्	,,	लङ् "	_	74
9	इदम्	लभ्, स्था	षष्ठी	विधिलिङ् ,,	_	१८
१०	अदस्	मुद्, सह्	"	लृद् "	_	२०
88	युष्मद्	पत्, पच्, न	म् सप्तमी	-	_	२२
१२	अस्मद्	तृ, स्मृ, जि	;;			२४
१३	एक	ब्रा	स्वर-संधि	लिट्	देववर्ग	२६
58	द्वि	कृष्, वस्	" "	"	विद्यालयवर्ग	२८
१५	त्रि	त्यन्	व्यंजन ,,	खु ङ्	लेखनसामग्री	३०ं
े १६	चतुर्	याच्	" "	"	दिकालवर्ग	३२
१७	संख्या ५-१०	वह्	विसर्ग ,,	ख्ट ्	व्योमवर्ग	38
१८	,, ११-१००	नी	" "	आ० लिङ्, ल	हुङ् संबन्धिवर्ग	३६
88	संखि	ह		अव्ययीभाव	क्रीडासनवर्ग	36
२०	पति	श्रु		तत्पुरुष	ब्राह्मणवर्ग	80
. २१	सुधी, स्वभू	कृ (पर०)	-		क्षत्रियवर्ग	४२
. २२	कर्तृ	कु (आ॰)	_	बहुत्रीहि	आयुधवर्ग	88
२३	पितृ, नृ	अद्, शास्	-	33	सैन्यवर्ग	४६
58	गो	अस्		द्वन्द	वैश्यवर्ग	86
२५	प्राञ्च्, उदञ्च्	ब्रू	_	एकशेष, अलुव	् व्यापारवर्ग.	40
२६	पयोमुच् ,वणिज्	्या, पा	_	समासान्त प्र॰	अन्नवर्ग	47
२७	भूभृत्	दुह्, लिह्		स्त्रीप्रत्यय	भक्ष्यवर्ग	48
२८	भगवत्, धीमत्	रुद्, स्वप्	पदक्रम	कर्तृवाच्य	मिष्टान्नवर्ग	५६
79	महत्, भवत्	इन्, स्तु	-	आत्मनेपद	पानादिवर्ग	46
0.00	पठत् , यावत् Ramdev Tripathi	इ, विद्	आत्मनेपद	परसमैपद	पात्रवर्ग	ξο
CC-O. Dr	, Kamdev Tripathi	Collection at Sar	ai(CSDS). Digitiz	ed by Siddnanta	a eGangotri Gy	aan Kosna

अस	यास शब्द	घातु	कारकादि	प्रत्यय	शब्दवर्ग	रुष्ट
38	बुध्	ं आस्	_	कर्म-भाववाच्य		६२
32		राजन् शी, अधि	+ = -	33 33	शिल्पिवर्ग	६४
33			_	णिच्	"	६६
38	वृत्रहन्, म	ाघवन् हा, ही	_	,,	शाकादिवर्ग	६८
३५	करिन्, प	थिन् भृ, मा	_ +	सन्	,,	90
३६	ताहश्, च	ान्द्रमस् दा	-	यङ्, नामधातु		७२
३७	विद्वस्, पुं	स् धा	_	क्त	विशेषणवर्ग	७४
36		नडुह् दिव्, नृत्	_	"	"	७६
38	मति	नश्, भ्रम्		क्तवतु	शैलवर्ग	96
80		ी श्रम्, सिव्	द्वितीया	शतृ	वनवर्ग	60
४१	स्त्री, श्री		,,	शतृ, शानच्	वृक्षवर्ग	८२
85	धेनु, वधू		तृतीया	तुमुन्	पुष्पवर्ग	68
४३	स्वस्, मातृ			क्त्वा	फलवर्ग	८६
88	नौ, वाच्	आप्, शक्		ल्यप्, गमुल्	55	22
४५	स्रज्, सरि			तव्य, अनीय	The state of the s	90
४६	समिध्, अ		पंचमी	यत्, ण्यत्, क्यप		65
80	गिर्, पुर्	इष्, प्रच्छ्	"	घञ्	वारिवर्ग	88
28	दिश्, उपा		षष्ठी	तृच्, अच्, अप्		९६
४९	वारि, दिध	£, 5	"	ल्युट्, जुल्, ट		38
48	अक्षि, अस्थि		सप्तमी	क, खल्, णिनि		
42	मधु, कर्तृ	-1, -1	"	क्तिन्, अण्, किप्		
५३	जगत्	छिद्, भिद्	-	इण्णु, खश् आदि !		80
48	नामन् , शम	न् हिंस्, भञ्ज्	तद्धित		पुरवर्ग १	०६
44	ब्रह्मन्, अहर		"	A -		06
५६	हविष्, धनु	य् युज्, तन्	"		प्रहवर्ग १	१०
40	पयस्, मनस् पाद, दन्त		"		भव्ययवर्ग १	१२
46		7, 7	"			१४
18	गोपा, विश्वप कति		"			१६
	उम	चुर्, चिन्त्	"			१८
	-	कथ्, भक्ष्	"	विविध तद्भित र	ोगवर्ग १	२०

(१) शब्दरूप-संग्रह

१२३-१४०

१. राम, २. पाद, ३. गोपा, ४. हरि, ५. सखि, ६. पति, ७. भूपति, ८. सुधी, ९. गुरु, १०. स्वभू, ११. कर्तृ, १२. पितृ, १३. नृ, १४. गो, १५. पयोमुच् , १६. प्राञ्च् , १७. उदञ्च् , १८. वणिज् , १९. भूभृत्, २०. भगवत्, २१. धीमत्, २२. महत्, २३. भवत्, २४. पटत्, २५. यावत्, २६. बुध्, २७. आत्मन्, २८. राजन्, २९. श्वन्, ३०. युवन्, ३१. वृत्रहन्, ३२. मघवन्, ३३. करिन्, ३४. पथिन्, ३५. तादृश्, ३६. विद्वस्, ३७. पुंस्, ३८. चन्द्रमस्, ३९. श्रेयस्, ४०. अनडुह्, ४१. रमा, ४२. मति, ४३. नदी, ४४. लक्ष्मी, ४५. स्त्री, ४६. श्री, ४७. धेनु, ४८. वधू , ४९. स्वस्, ५०. मातृ, ५१. नौ, ५२. वाच्, ५३. स्रज्, ५४. सरित्, ५५. समिध्, ५६. अप्, ५७. गिर्, ५८. पुर्, ५९. दिश्, ६०. उपानह्, ६१. गृह, ६२. वारि, ६३. दिष, ६४. अक्षि, ६५. अस्थि, ६६. मधु, ६७. कर्तृ, ६८. जगत्, ६९. नामन्, ७०. शर्मन्, ७१. ब्रह्मन्, ७२. अहन्, ७३. हविष्, ७४. धनुष्, ७५. पयस्, ७६. मनस्, ७७. सर्व, ७८. विश्व, ७९. पूर्व, ८०. अन्य, ८१. तत् , ८२. यत् , ८३. एतत् , ८४. किम् , ८५. चुष्मद् , ८६. असाद् , ८७. इदम् , ८८. अदस् , ८९. एक, ९०. द्वि, ९१. त्रि, ९२. चतुर्, ९३. पञ्चन्, ९४. षष्, ९५. सप्तन्, ९६. अष्टन्, ९७. नवन्, ९८. दशन्, ९९. कति, १००. उम।

(२) संख्याएँ

१४१-१४२

गिनती—१ से १०० तक । संख्याएँ—सहस्र से महाशंख तक ।

(३) धातुरूप-संग्रह (दसों लकारों के रूप)

१४३-२२०

(१) भ्वादिगण—१. भू, २. हस्, ३. पठ्, ४. रक्ष्, ५. वद्, ६. गम्, ७. हश्, ८. पा, ९. स्था, १०. घा, ११. सद्, १२. पच्, १३. नम्, १४. स्मृ, १५. जि, १६. श्रु, १७. कृष्, १८. वस्, १९. त्यज्, २०. सेव्, २१. लम्, २२. वृष्, २३. मुद्, २४. सह्, २५. वृत्, २६ ईक्ष्, २७. नी, २८. हृ, २९. याच्, ३०. वह्।

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(२) अदादिगण—३१. अद्, ३२. अस्, ३३. इ, ३४. रुट्, ३५. स्वप्, ३६. दुह्, ३७. लिह्, ३८. हन्, ३९. स्त, ४०. या, ४१. पा, ४२. शास्, ४३. विद्, ४४. आस्, ४५. शी, ४६. अधि + इ, ४७. ब्रू।

(३) जुहोत्यादिगण-४८. हु, ४९. भी, ५०. हा, ५१. ही,

५२. भृ, ५३. मा, ५४. दा, ५५. धा।

(४) दिवादिगण—५६. दिव्, ५७. नृत्, ५८. नश्, ५९. भ्रम्, ६०. श्रम्, ६१. सिव्, ६२. सो, ६३. शो, ६४. कुप्, ६५. पद्, ६६. युष्, ६७. जन्।

(५) स्वादिगण—६८. आप्, ६९. शक्, ७०. चि, ७१. अश्, ७२. सु।

(६) तुदादिगण—७३. इष्, ७४. प्रच्छ्, ७५. लिख्, ७६. सृश्, ७७. कृ, ७८. गृ, ७९. क्षिप्, ८०. मृ, ८१. तुद्, ८२. मुच्।

(७) रुधादिगण—८३. छिद्, ८४. मिद्, ८५. हिंस्, ८६. भञ्ज्, ८७. रुष्, ८८. भुज्, ८९. युज्।

(८) तनादिगण-९०. तन् , ९१. कृ।

- (९) क्यादिगण—९२. बन्ध्, ९३. मन्य्, ९४. क्री, ९५. मृह्, ९६. ज्ञा।
- (१०) चुरादिगण—९७. चुरु, ९८. चिन्त्, ९९. कथ्, १००. मक्ष्।

(४) धातुरूपकोष

२२१-२५४

अकारादिकम से ४६५ धातुओं के दसों लकारों में रूप।

(१) अकर्मक धातुएँ । (२) अनिट् धातुओं का संग्रह ।

(५) प्रत्यय-विचार

२५५-२६८

निम्नलिखित प्रत्ययों के सभी उपयोगी रूपों का संग्रह :---

१. क, २. कवतु, ३. शतु, ४. शानच्, ५. तुमुन्, ६. तव्यत्, ७. तृच्, ८. त्तवा, ९. त्यप्, १०. त्युट्, ११. अनीयर्, १२. घञ्, १३. णुल्, १४. किन्, १५. यत्।

(६) सन्धि-विचार

२६९-२७८

७५ उपयोगी सन्धि-नियमों का सोदाहरण विवेचन ।

(७) प्रत्यय-परिचय

२७९-२८५

१०० भातुओं के क्त आदि प्रत्ययों से बने रूपों की सारणी (चार्ट)

(८) वाक्यार्थक-राब्द

२८६-२९०

वाक्यों का पूरा अर्थ बताने वाले शब्दों का संग्रह

(१०) निबन्ध-माला (२० निबन्ध)

२९६-३५६

१. वेदानां महत्त्वम्।

२. वेदाङ्गानि, तेषां वेदार्थवोधोपयोगिताः।

३. सर्वोपनिषदो गावो ः दुग्धं गीतामृतं महत्।

४. भासनाटकचक्रम्।

५. कालिदासस्य सर्वस्वमभिज्ञानशाकुन्तलम्।

६. उपमा कालिदासस्य।

७. भारवेरर्थगौरवम् ।

८. दण्डिनः प्दलालित्यम्।

९. माघे सन्ति त्रयो गुणाः।

१०. बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम् ।

११. कारुण्यं भवभूतिरेव तनुते।

१२. नैषधं विद्वदौषधम्।

१३. भारतीया संस्कृतिः।

१४. संस्कृतस्य रक्षार्थे प्रसारार्थे चोपायाः।

१५. कस्यैकान्तं सुखमुपनतं दुःखमेकान्ततो वा ।

१६. नालम्बते दैष्टिकतां न निषीदति पौरुषे।

१७. सहसा विदधीत न क्रियाम्।

१८. ज्वलितं न हिरण्यरेतसं, चयमास्कन्दति मस्मनां जनः।

१९. आशा बलवती राजन् , शस्यो जेष्यति पाण्डवान् ।

२०. स्त्रीशिक्षाया आवश्यकतोपयोगिता च।

(११) अनुवादार्थ-गद्य-संग्रह (२० पृष्ठ) ३५७-३७६

(१२) सुभाषित-मुक्तावली

308-805

प्रमुख १७ शिषंक:—१. भारतप्रशंसा, २. अध्यात्म, ३. अर्थ, ४. काम, ५. जगत्-स्वरूप, ६. चातुर्वर्ण्य, ७. जीवन, ८. आरोग्य, ९. राजधर्मादि, १०. आचार, ११. विद्या, १२. विचारात्मक, १३. मनोभाव, १४. व्यवहार, १५. पुरुष-स्त्री-स्वभावादि, १६. कवि, काव्य, कविता, १७. विविध ।

(१३) पारिभाषिक-दाब्दकोश

४०९-४२०

व्याकरण के अत्युपयोगी १६५ पारिभाषिक शब्दों का विवरण।

(१४) हिन्दी-संस्कृत-राज्यकोश

४२०-४४४

(१५) विषयानुक्रमणिका

४४५-४४६

भूमिका

डॉ॰ किपल्टिव द्विवेदी ने प्रौढ-रचनानुवादकौमुदी का निर्माण करके उस काम की पूर्ति की है जो रचनानुवादकौमुदी से आरम्भ हुआ था। मैं स्वयं संस्कृत व्याकरण और साहित्य का इतना ज्ञान नहीं रखता कि पुस्तक के गुण-दोषों की यथार्थ समीक्षा कर सकूँ। परन्तु उसका स्वरूप ऐसा है जिससे मुझको यह प्रतीत होता है कि वह उन लोगों को निश्चय ही उपयोगी प्रतीत होगी जिनके लिए उसकी रचना हुई है। मैं संस्कृत ग्रंथों को पढ़ता रहता हूँ। कभी कभी संस्कृत में कुछ लिखने का भी प्रयास करता हूँ। मुझे ऐसा लगता है कि इस पुस्तक से मेरे जैसे व्यक्ति को सहायता मिलेगी और कई भद्दी मूलों से त्राण हो जायेगा। यों तो संस्कृत के प्रामाणिक व्याकरणों का स्थान दूसरी पुस्तकें नहीं ले सकतीं, फिर भी जिन लोगों को किन्हीं कारणों से उनके अध्ययन का अवसर नहीं मिला है, उनके लिए प्रौढ-रचनानुवादकौमुदी जैसी पुस्तकें वस्तुतः बहुमृह्य हैं।

नैनीताल, जुलाई, ७, १९६०। (डॉ०) सम्पूर्णानन्द मुख्यमन्त्री, उत्तर प्रदेश ।

आत्म-निवेदन

- (१) पुस्तक-लेखन का उद्देश्य—यह पुस्तक कितपय विशेष उद्देशों को लक्ष्य में रखकर लिखी गयी हैं। उनमें से विशेष उल्लेखनीय ये हैं:—(क) संस्कृत के प्रौढ विद्यार्थियों को प्रौढ संस्कृत सिखाना। (ख) अित सरल और सुबोध ढंग से अनुवाद और निबन्ध सिखाना। (ग) २ वर्ष में प्रौढ संस्कृत लिखने और बोलने का अभ्यास कराना। (घ) अनुवाद के द्वारा सम्पूर्ण व्याकरण सिखाना। (ङ) संस्कृत के मुद्दावरों का वाक्य-रचना के द्वारा प्रयोग सिखाना। (च) प्रौढ संस्कृत-रचना के लिए उपयोगी समस्त व्याकरण का अभ्यास कराना। (छ) इस पुस्तक के प्रथम दो भाग प्रारम्भिक छात्रों के लिए हैं, यह प्रौढ विद्यार्थियों के लिए हैं। अतः यह उचित है कि इस पुस्तक का अभ्यास करने से पूर्व छात्र 'रचनानुवादकौमुदी' का अभ्यास अवश्य कर लें।
- (२) पुस्तक की शैली—यह पुस्तक कितपय नवीनतम विशेषताओं के साथ प्रस्तुत की गयी है। (क) इंग्लिश्, जर्मन, फ्रेंच और रूसी आदि भाषाओं में अपनायी गयी वैज्ञानिक पद्धित इस पुस्तक में अपनायी गयी है। (ख) प्रत्येक अभ्यास में २५ नए शब्द तथा कुछ व्याकरण के नियम दिए गए हैं। (ग) शब्दकोश और व्याकरण से सम्बद्ध सभी मुहावरे प्रत्येक अभ्यास में सिखाए गए हैं।
- (३) अभ्यास—इस पुस्तक में ६० अभ्यास हैं। प्रत्येक अभ्यास दो पृष्ठों में हैं। बाई ओर शब्दकोष और व्याकरण हैं, दाई ओर संस्कृत में अनुवादार्थ गद्य तथा संकेत हैं।
- (४) शब्दकोष—(क) प्रत्येक अभ्यास में २५ नये शब्द हैं। शब्दकोष में ४८ वर्ग भी दिए गए हैं। प्रयत्न किया गया है कि सभी उपयोगी शब्दों का संग्रह हो। अमरकोश के प्रायः सभी उपयोगी शब्द विभिन्न वर्गों में दिए गए हैं। यह भी ध्यान ख्या गया है कि प्रौद रचना को ध्यान में रखते हुए उच्च संस्कृत-साहित्य में प्रयुक्त शब्दों को विशेष रूप से अपनाया जाए। प्रत्येक वर्ग में उस वर्ग से सम्बद्ध सभी उपयोगी शब्द दिए गए हैं। (ख) यह भी प्रयत्न किया गया है कि आधुनिक प्रचलित शब्दों और भावों के लिए भी उपयोगी संस्कृत शब्द दिए जाएँ। इसके लिए दो बातें मुख्यतया ध्यान में रखी गयी हैं—१. जिन भावों के लिए प्राचीन संस्कृत-प्रत्यों में कोई शब्द मिल सकता है, वहाँ उन संस्कृत-शब्दों को अपनाया गया है। जो प्राचीन संस्कृत शब्द नवीन अथों का बोध करा सकते हैं, उनका नवीन अथों में प्रयोग किया गया है। २. जिन शब्दों के लिए संस्कृत में प्राचीन शब्द नहीं हैं, उनके लिए नए शब्द बनाए गए हैं। कहीं पर ध्वन्यनुकरण के आधार पर और कहीं पर भावानुकरण के आधार पर । जैसे—मिष्टान्नवर्ग और पानादिवर्ग में सभी मिठाइयों, नमकीन, चाय, टोस्ट और पेस्ट्री आदि के लिए शब्द हैं। नवशब्द-निर्माण वाले स्थलों पर अपने विवेक के अनुसार कार्य किया गया है। ऐसे स्थलों पर मतभेंद सम्भव है। जो विद्वान् नवीन भावों के लिए अधिक

उपयुक्त शब्दों का सुझाव देंगे, उनके सुझावों पर विशेष ध्यान दिया जायगा । (ग) शब्दकोष को चार भागों में विभक्त किया गया है। इसके लिए इन संकेतों को स्मरण कर लें। शब्दकोष में (क) का अर्थ है—संज्ञा या सर्वनाम शब्द। (ख) का अर्थ है—धातु या क्रिया-शब्द। (ग)=अव्यय। (घ)=विशेषण। (क) भाग में दिए अधिकांश शब्द राम, रमा या गृह के तुल्य चलते हैं। शब्दों के स्वरूप से इस बात का बोध हो जाता है। जहाँ पर सन्देह हो, वहाँ पर पुस्तक के अन्त में दिए हिन्दी-संस्कृत शब्दकोष से सहायता लें। वहाँ पर लिंग-निर्देश विशेष रूप से किया गया है। (ख) भाग में दी गयी धातुओं के गण और पद के विषय में जहाँ पर सन्देह हो, वहाँ पर धातुरूप-कोष में दिए हुए धातु के विवरण से सन्देह का निराकरण करें। (ग) भाग में दिए हुए शब्द अव्यय हैं, इनके रूप नहीं चलते हैं। (घ) भाग में दिए शब्द विशेषण हैं, इनके लिंग आदि विदोध्य के तुल्य होंगे। विदोषण-शब्द तीनों लिंगों में आते हैं। (घ) शब्दकोप में यह भी ध्यान रखा गया है कि जिस शब्द या धातु का प्रयोग उस अभ्यास में सिखाया गया है, उस प्रकार के अन्य शब्दों या धातुओं का भी अभ्यास उसी पाठ में कराया जाए। इसके लिए दो प्रकार अपनाए गए हैं। १. उस प्रकार के शब्द या धातुएँ शब्दकोष में दी गयी हैं। २, उस प्रकार के शब्दों या धातुओं का प्रयोग उसी पाठ के 'संस्कृत बनाओ' वाले अंश में सिखाया गया है। कोष्ठ में ऐसे शब्दों का संकेत कर दियां गया है। (इ) शब्दकोष के विषय में इन संकेतों का उपयोग किया गया है। १. 'वत्' अर्थात् इसके तुल्य रूप चलेंगे। जैसे-रामवत्, राम के तुल्य रूप चलेंगे। भवतिवत्, भू धातु के तुल्य रूप चलेंगे। २.— डैश, यहाँ से लेकर यहाँ तक के शब्द या धातु । ३.> अर्थात् 'का रूप बनता है' । भू>भवति, अर्थात् भू का भवति रूप बनता है। (च) शब्दकोष में शब्द विविध वर्गों के अनुसार रखे गए हैं। प्रयत्न किया गया है कि उस वर्ग से सम्बद्ध शब्द उसी अभ्यास में दिए जायें। अतः प्रत्येक वर्गों से सम्बद्ध शब्दों को उसी अभ्यास में देखें। प्रत्येक अभ्यास के शब्दकोष में (क) (ख) आदि के बाद निर्देश कर दिया गया है कि (क) या (ख) आदि में कितने शब्द दिए गए हैं। (छ) प्रत्येक अभ्यास में २५ नए शब्द हैं। प्रत्येक अभ्यास के प्रारम्भ में निर्देश किया गया है कि अबतक कितने शब्द पढ़ चुके हैं। ६० अभ्यासों में १५०० शब्दों का अभ्यास कराया गया है। लगभग इतने ही नए शब्दों और मुहावरों का प्रयोग 'संकेत' में सिखाया गया है। इस प्रकार लगभग ३ हजार शब्दों का ज्ञान विद्यार्थी को हो जाता है। शब्दकोष के शब्दों का वर्गीकरण इस प्रकार से हैं :-

(क) अर्थात् संज्ञा या सर्वनाम शब्द	११३४
(ख) अर्थात् धातु या क्रिया शब्द	२१ ५
(ग) अर्थात् अव्यय शब्द	६९
(घ) अर्थात् विशेषण	८२

- (५) व्याकरण—(क) प्रत्येक अभ्यास में कुछ शब्दों और धातुओं का प्रयोग सिखाया गया है। अतः आवश्यक है कि उन शब्दों और धातुओं को प्रत्येक अभ्यास में अवश्य स्मरण कर लें। (ख) सम्पूर्ण संस्कृत व्याकरण को केवल ३०० नियमों में समाप्त किया गया है। इन ३०० नियमों को विषयों के अनुसार ६० अभ्यासों में बाँटा गया है। प्रत्येक अभ्यास में कुछ नियमों का अभ्यास कराया गया है। इन नियमों को ठीक स्मरण कर लें। इनको ठीक स्मरण कर लेंने पर ही संस्कृत में अनुवाद शुद्ध एवं सरलता से हो सकेगा। (ग) नियमों के साथ पाणिनि के प्रामाणिक सूत्र भी कोष्ठ में दिए गए हैं। (घ) यह भी प्रयत्न किया गया है कि ह्विटनी, काले, आप्टे आदि विद्वानों के द्वारा निर्दिष्ट नियम या विवरण भी न छूटने पावें। ऐसे नियमों या विवरणों के साथ पाणिनि के नियमों का भी संकेत कर दिया गया है। (ङ) इस पुस्तक में यह भी प्रयत्न किया गया है कि संस्कृत-व्याकरण के सभी उपयोगी एवं प्रचलित नियमों का संग्रह हो। जो नियम अप्रचलित एवं विशेष उपयोगी नहीं हैं, वे छोड़ दिए गए हैं।
- (६) अनुवाद—(क) शब्दकोश में दिए शब्दों और व्याकरण के नियमों से सम्बद्ध वाक्य अनुवादार्थ दिए गए हैं। (ख) प्रत्येक पाठ में जिन शब्दों और धातुओं का अभ्यास कराया गया है, उनसे सम्बद्ध वाक्य तथा उनसे सम्बद्ध मुहावरे भी उसी अभ्यास में दिए गए हैं। (ग) किंठन वाक्य और मुहावरेवाले वाक्य काले टाइप में छपे हैं। उनकी संस्कृत नीचे 'संकेत' वाले अंश में दी गयी है। वहाँ देखें। कुछ विशेष मुहावरे सिखाने के लिए किंतपय सरल वाक्य भी काले टाइप में दिए गए हैं। उन सभी मुहावरों को सावधानी से समरण कर लें। (घ) व्याकरण के नियमों के जो उदाहरण संस्कृत में दिए हैं, उनका हिन्दी-रूप अनुवादार्थ दिया गया है। ऐसे वाक्यों की संस्कृत दिए गए नियमों के उदाहरणों में देखें। इनकी संस्कृत 'संकेत' में नहीं दी है। (ङ) प्रत्येक अभ्यास में प्रयुक्त शब्दों और धातुओं के तुत्य जिन शब्दों और धातुओं के रूप चलते हैं, उनका भी उसी पाठ में अभ्यास कराया गया है। ऐसे शब्द या धातुएँ उन अभ्यासों में कोष्ठ में दी गयी हैं।
- (७) संकेत—(क) 'संस्कृत बनाओ' वाले अंश में जितना अंश काले टाइप में छपा है, उसकी संस्कृत 'संकेत' में उसी कम और उन्हीं वाक्य-संख्याओं के साथ दी गयी है। (स्त्र) संस्कृत मे प्रचलित मुहावरे इस अंश में विशेष रूप से दिए गए हैं। (ग) कठिन शब्दों की संस्कृत, सूक्तियाँ, व्याकरण के विशिष्ट प्रयोग तथा अन्य उपयोगी संकेत इस अंश में दिए गए हैं।
- (८) परिशिष्ट पुस्तक के अन्त में अत्यन्त उपयोगी १५ परिशिष्ट दिए गए हैं। इनका विशेष विवरण विषय-सूची तथा विषयानुक्रमणिका में देखें। यहाँ पर कुछ विशेष

- (९) शब्दरूप-संग्रह—संस्कृत में विशेष प्रचलित सभी शब्दों के रूप इस परिशिष्ट में दिए गए हैं। पुंलिंग, स्त्रीलिंग, नपुंसकलिंग के शब्द प्रत्येक लिंग में अन्त्याक्षर के क्रम से दिए गए हैं। अन्य शब्दों के रूप लिंग तथा अन्त्याक्षर को देखकर इन शब्दों के तुल्य चलावें।
- (१०) संख्याएँ संस्कृत में १ से १०० तक गिनती तथा महाशंख तक संख्याएँ इस परिशिष्ट में दी गयी हैं।
- (११) धातुरूप-संग्रह—संस्कृत में अधिक प्रयुक्त १०० धातुओं के दसों लकारों के रूप इस परिशिष्ट में दिए गए हैं। अन्य धातुओं के रूप गण तथा पद को देखकर इनके तुल्य चलावें।
- (१२) धातुरूप-कोष—इस परिशिष्ट में संस्कृत में विशेष रूप से प्रयुक्त ४६५ धातुओं के दसों लकारों के प्रारम्भिक रूप दिए गए हैं। साथ में उनके अर्थ, गण और पद का भी निर्देश है। सभी धातुएँ अकारादि-क्रम से दी गयी हैं।
- (१३) प्रत्यय-विचार—१५ विशेष कृत्-प्रत्ययों से बनने वाले सभी विशेष रूप इस परिशिष्ट में अकारादि-क्रम से दिए गए हैं।
- (१४) सन्धि-विचार—इस परिशिष्ट में प्रयोग में आने वाले सभी सन्धि-नियम ७५ नियमों में दिए गए हैं।
- (१५) पत्रादि-लेखन-प्रकार—इस परिशिष्ट में संस्कृत में पत्र लिखना, प्रार्थना-पत्र देना, निमन्त्रण देना, परिषत्-सूचना और पुरस्कार-वितरण आदि का प्रकार बताया गया है।
- (१६) निबन्ध-माला—इसमें उदाहरण के रूप में २० अत्युपयोगी विषयों पर संस्कृत में निबन्ध दिए गए हैं। इसमें प्रयत्न किया गया है कि भाषा न अति कठिन हो और न अति सरल। भाषा में प्रौदता के साथ ही प्रवाह और मुहावरे आदि भी हों। शास्त्रीय और साहित्यिक विषयों पर उद्धरणों की संख्या अधिक दी गयी है। इसका कारण यह है कि छात्र स्वयोग्यतानुसार उन उद्धरणों की व्याख्या आदि करें। छात्र इन निबन्धों के आधार पर संस्कृत में अन्य निबन्ध स्वयं लिखने का अभ्यास करें।
- (१७) अनुवादार्थ गद्य-संग्रह—इस परिशिष्ट में ४० सन्दर्भ अनुवादार्थ दिए गए हैं। इनमें से अधिकांश प्रौढ़ संस्कृत ग्रन्थों से लिए गए हैं और उनका हिन्दी-रूपान्तर अनुवादार्थ दिया गया है। 'संकेत' में मुहावरे आदि भी मूल रूप में दिए गए हैं। ऐसे सन्दर्भ भी अनुवादार्थ दिए गए हैं, जिनके अभ्यास से संस्कृत साहित्य और नाट्यशास्त्र आदि का ज्ञान हो।
- (१८) सुभाषित-मुक्तावली—इसमें १४६७ सुभाषित १७ प्रमुख शीर्षकों तथा ८४ उपशीर्षकों में दिए गए हैं। सुभाषित अकारादि-क्रम से दिए गए हैं। यथा-सम्भव उनके मूल आकर-प्रन्थों का भी संकेत किया गया है। ये सुभाषित निबन्ध, Сिक्यास्थानिक्यादिः कि क्षिए अस्युपयोगी है।

- (१९) पारिभाषिक शब्दकोश—इसमें १६५ व्याकरण के पारिभाषिक शब्द अकारादि-क्रम से पूर्ण विवरण के साथ दिए हैं। साथ में पाणिनि के सूत्रादि भी दिए गए हैं। व्याकरण टीक समझने के लिए इनका ज्ञान अनिवार्य है।
- (२०) हिन्दी-संस्कृत-राव्दकोश—इस पुस्तक में प्रयुक्त सभी शब्दों का इसमें रांग्रह किया गया है। अकारादि-क्रम से हिन्दी-शब्द दिए गए हैं। इनके आगे उनकी संस्कृत दी गयी है। शब्दों के आगे लिंग-निर्देश आदि भी किया गया है।
- (२१) विषयानुक्रसणिका—पुस्तक में वर्णित सभी विषयों का इस परिशिष्ट में अकारादि-क्रम से उल्लेख है। प्रत्येक विषय के आगे पृष्ठ-संख्या के द्वारा निर्देश किया गया है कि वह विषय अमुक पृष्ठ पर मिलेगा।
- (२२) मुद्रण—मुद्रण में हस्व और दीर्घ ऋ में यह अन्तर रखा गया है। इसे स्मरण रखें। ऋ = हस्व ऋ। ऋ = दीर्घ ऋ।

पुस्तक की विशेषताएँ

- (१) इंग्लिश्, जर्मन, फ्रेंच और रूसी भाषाओं में अपनायी गयी नवीनतम वैज्ञानिक पद्धति इस पुस्तक में अपनायी गयी है।
- (२) प्रौढ संस्कृत-ज्ञान के लिए उपयुक्त समस्त व्याकरण अनुवाद और प्रौढ वाक्य-रचना के द्वारा अति सरल और सुबोध रूप में समझाया गया है।
- (३) केवल ६० अभ्यासों में ३०० नियमों के द्वारा समस्त आवश्यक व्याकरण समाप्त किया गया है। नियमों के साथ पाणिनि के सूत्र भी दिए गए हैं।
- (४) ४८ वर्गों और १२ विशिष्ट शब्द-संग्रहों के द्वारा सभी उपयोगी और आवश्यक शब्दों का संग्रह किया गया है। प्रत्येक अभ्यास में २५ नए शब्द हैं। १५०० उपयोगी शब्दों और धातुओं का प्रयोग सिखाया गया है।
- (५) लगभग एक सहस्र संस्कृत की लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग अनुवाद के द्वारा सिखाया गया है।
- (६) परिशिष्ट में लगभग १५०० सुभाषितों की 'सुभाषित-मुक्तावली' विभिन्न ८८ विषयों पर अकारादि-क्रम से दी गयी है।
- (७) संस्कृत साहित्य के उच्च कोटि के अन्य प्रन्थों से अनुवादार्थ सन्दर्भों का संचयन किया गया है। इनके लिए उपयुक्त संकेत भी दिए गए हैं।
 - (८) सभी प्रचलित शब्दों के रूपों का संग्रह किया गया है।
- (९) १०० विशेष प्रचलित धातुओं के दसों लकारों के रूपों का संकलन 'धातुरूप संग्रह' में किया गया है। 'धातुरूप-कोष' में अत्युपयोगी ४६५ धातुओं के दसों लकारों के प्रारम्भिक रूप दिए गए हैं। साथ में उनके अर्थ, गण और पद का भी निर्देश है। धातुएँ अकारादि-कम से दी गयी हैं।
- (१०) सभी उपयोगी व्याकरण की बातों का संग्रह किया गया है। जैसे सन्धि-विचार, कारक-विचार, समास विचार, क्रिया-विचार, क्रत्यत्यय-विचार, तद्धित-प्रत्यय-विचार) स्त्री-प्रास्त्रया विचार अहित्को at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(११) व्याकरण-ज्ञान के लिए अनिवार्य १६५ शब्दों का एक 'पारिभाषिक-शब्दकोश' अकारादि-क्रम से परिशिष्ट में दिया गया है।

(१२) अत्युपयोगी २० विषयों पर प्रौढ संस्कृत में निवन्ध दिए गए हैं।

(१३) प्रत्येक अभ्यास में व्याकरण के कुछ विशेष नियमों का अभ्यास कराया गया है और अनुवादार्थ अत्युपयोगी संकेत दिए गिए हैं।

(१४) परिशिष्ट के अन्त में बृहत् हिन्दी-संस्कृत-शब्दकोष भी दिया गया है।

कृतज्ञता-प्रकाशन

इस पुस्तक के लेखन में मुझे जिन महानुभावों से विशेष आवश्यक परामर्श, प्रेरणा और प्रोत्साहन मिला है, उनमें विशेष उल्लेखनीय ये हैं। मैं इनका कृतज्ञ हूँ।

सर्वश्री राष्ट्रपति डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद, डॉ॰ सम्पूर्णानन्द, डॉ॰ ज॰ कि॰ बलवीर (पेरिस), पं॰ छेदीप्रसाद व्याकरणाचार्य (गुरुकुल म॰ वि॰ ज्वालापुर), स्वामी अमृतानन्द सरस्वती (रामगढ़, नैनीताल), डॉ॰ हरिदत्त शास्त्री सप्ततीर्थ (कानपुर), श्रीमती ओम्शान्ति द्विवेदी, श्री पुरुषोत्तमदास मोदी।

अन्त में विद्वज्जन से निवेदन हैं कि वे पुस्तक के विषय में जो भी संशोधन, परिवर्तन, परिवर्धन आदि का विचार भेजेंगे, वह बहुत कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार किया जायगा।

गवर्नमेण्ट कॉलेज, नैनीताल }

कपिलदेव द्विवेदी

चतुर्थ संस्करण की भूमिका

संस्कृत प्रेमी शिक्षकों और छात्रों ने इस पुस्तक का जो हार्दिक स्वागत किया है, तदर्थ उनका अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। उत्तर भारत के प्रायः सभी विश्वविद्यालयों ने इसको अपने पाठ्यक्रम में स्थान दिया है, तदर्थ उनका अनुगृहीत हूँ। जिन विद्वानों ने आवश्यक संशोधनादि के विचार भेजे हैं, उनको विशेष धन्यवाद देता हूँ। उनके संशोधनादि के विचारों का यथासम्भव पूर्ण पालन किया गया है। पुस्तक को विशेष उपयोगी बनाने के लिए इस संस्करण में ३२ पृष्ठ और बढ़ाए गए हैं। १०० धातुओं के क्त आदि प्रत्ययों से बने रूपों की सारणी दी गयी है। वाक्यार्थ में प्रयुक्त होनेवाले शब्दों का एक संग्रह दिया गया है। १० निबन्धों को विस्तृत करके समस्त उद्धरणों को पूर्ण किया गया है तथा परिवर्धित रूप में लिखा गया है। यथास्थान आवश्यक सभी परिवर्षन, परिवर्धन और संशोधनादि किए गए हैं। आशा है प्रस्तुत संस्करण छात्रों के लिए विशेष उपयोगी सिद्ध होगा।

गवर्नमेण्ट कालेज, ज्ञानपुर CC-O. Dr. विकार्वेशक्रीक्षेत्र Collection of Sarai(CSDS). Digitized By Siddhan कि विकार कि कि कि कि आवश्यक-निर्देश

१. 'संस्कृत' शब्द का अर्थ है — ग़द्ध, परिमाजित, परिष्कृत। अतः संस्कृत भाषा का अर्थ है- गुद्ध एवं परिमाजित भाषा।

२. निम्नलिखित १४ माहेश्वर सूत्र हैं। इनमें पूरी वर्णमाला इस प्रकार दी हुई है — क्रमशः स्वर, अन्तःस्थ, वर्ग के पंचम, चतुर्थ, तृतीय, द्वितीय, प्रथम वर्ण, ऊष्म।

१. अइउण्। २. ऋत्हरू। ३. एओङ्। ४. ऐओच्। ५. हयवरट्। ६. छण्। ७. जमङणनम् । ८. झभज्। ९. घडधष्। १०. जबगडदेश्। ११. खफछठथचटतव्।

१२. कपयू। १३. शपसर्। १४. हल्।

३. पाणिनि के सूत्रों में प्रत्याहारों का प्रयोग है। प्रत्याहार का अर्थ है संक्षेप में कहना। उपर्युक्त सूत्रों से प्रत्याहार बनाने के लिए ये नियम हैं—(क) प्रत्याहार वनाने के लिए पहला अक्षर सूत्र में जहाँ हो, वहाँ से लें और दूसरा अक्षर सूत्रों के अन्तिम अक्षरों में हूँ हैं। (ख) सूत्रों के अन्तिम अक्षर (ण् , के आदि) प्रत्याहार में नहीं गिने जाते हैं। वे प्रत्याहार बनाने के साधन हैं। जैसे—अल् प्रत्याहार—प्रथम असे लेकर हल्के ल्तक। इक्—इ उऋ ल। अच्—असे औ तक पूरेस्वर।

४. सस्कृत में ३ वचन होते हैं-एकवचन (एक०), दिवचन (दि०), बहुवचन (बहु०)। तीन पुरुष होते हैं - प्रथम या अन्य पुरुष (प्र० पु० या प्र०), मध्यम पुरुष (म॰ पु॰ या म॰), उत्तम पुरुष (उ॰ पु॰ या उ॰)। कारक ६ हैं। षधी और संबोधन को लेकर आठ कारक (विभक्तियाँ) होते हैं। इनके नाम और

चिह्न ये हैं :--

विभक्ति चिह्न कारक विभक्ति (१) प्रथमा (प्र०) कर्ता कारक

—, ने (५) पंचमी (पं०) अपादान से को (६) षष्ठी (प०) सबन्ध का, के, की (२) द्वितीया (द्वि०) कर्म

(३) तृतीया (तृ०) करण ने, से, द्वारा (७) सप्तमी (सं०) अधिकरण में, पर (४) चतुर्थी (च०) संप्रदान के लिए (८) संबोधन (सं०) संबोधन है, अये, भोः

कर्ता कर्म च करणं संप्रदानं तथैव च। अपादानाधिकरणमित्याहुः कारकाणि घट्।।

५. संस्कृत में क्रिया के १० लकार (बृत्तियाँ) होते हैं। इनके नाम तथा अर्थ ये हैं—(१) लट् (वर्तमान काल), (२) लोट् (आज्ञा अर्थ), (३) लङ् (अनदातन भूत-काल), (४) विधिलिङ् (आज्ञा या चाहिए अर्थ), (५) लुट् (भविष्यत् काल), (६) लिट् (अनद्यतन परोक्ष भूत), (७) छुट् (अनद्यतन भविष्यत्), (८) आशीलिङ् (आज्ञीर्वाद), (१) छुङ् (सामान्य भूत), (१०) लुङ् (हेतुहेतुमद् भूत या भविण्यत्)।

६. घातुएँ तीन प्रकार की हैं, अतः धातुओं के रूप तीन प्रकार से चलते हैं। परस्मैपदी (प॰; ति तः अन्ति आदि अन्त में)। आत्मनेपदी (आ॰; ते एते अन्ते

आदि अन्त में)। उभयपदी (उ॰, दोनों प्रकार के रूप)।

७. संस्कृत में १० गण (धातुओं के विभाग) होते हैं। प्रत्येक धातु किसी एक गण में आती है। इनके लिए कोष्ठगत संकेत हैं। भ्वादिगण (१), अदादि॰ (२), जुहोत्यादि॰ (३), दिवादि॰ (४), स्वादि॰ (५), तुदादि॰ (६), रुधादि॰ (७), तनादि॰ (८), ऋयादि॰ (९), चुरादि॰ (१०)। ११ वॉ गण कण्वादिगण है।

८. शब्दकोष में इन संकेतों का प्रयोग किया गया है। इन्हें स्मरण रखें।

(क) = संज्ञा या सर्वनाम शब्द । (ख) = धातु या क्रिया-शब्द । CC-(मा हिक्का क्ष्य्याव्यामां क्रियान विशेषां क्षित्र विशेषां क्षित्र विशेषां है । | Piglished By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शब्दकोष-२५] अभ्यास १ (व्याकरण)

(क) रामः (राम), पातोत्पातः (उत्थान-पतन), सद्वृत्तः (सदाचारी), दुराचारः (दुराचारी), वैधेयः (मूर्ख), बुभुक्षितः (भूखा), महः (पहलवान)। (७)। (ख) भू (होना), अनुभू (अनुभव करना), प्रभू (१. निकलना, २. समर्थ होना, ३. अधिकार होना, ४. वरावर होना, ५. समाना), पराभू (हराना), परिभू (तिरस्कृत करना), अभिभू (हराना, दवाना), सम्भू (उत्पन्न होना), उद्भू (पैदा होना), आविर्भू (प्रकट होना), तिरोभू (छिप जाना), प्रादुर्भू (जन्म लेना), अह् (योग्य होना), परिहस् (हँसी करना), प्रलप् (वकवाद करना)। (१४)। (ग) परमार्थतः (सत्य, ठीक), नाम (निश्चय से)। (२)। (घ) मधुरम् (मीठा), तीवम् (तेज)। (२)

व्याकरण (राम, लट्, प्रथमा, द्वितीया)

१. राम शब्द के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्द रूप संख्या १)

२. भू तथा हस् धातुओं के रूप स्मरण करो। (देखो धातुरूप संख्या १, २) ३. भू धातु के उपसर्ग लगाने से हुए विशेष अर्थों को स्मरण करो और उनका

प्रयोग करो ।

नियम १—कर्तृवाच्य में कर्ता (व्यक्तिनाम, वस्तुनाम आदि) में प्रथमा होती है और कर्मवाच्य में कर्म में प्रथमा होती है। जैसे—रामः पठति। अश्वो धावति। रामेण पाठः पठ्यते।

नियम २—िकसी के अभिमुखीकरण तथा संमुखीकरण में (सम्बोधन करने में) सम्बोधन विभक्ति होती है। जैसे—हे राम, हे कृष्ण।

नियम ३—(कर्तुरीन्सिततमं कर्म) कर्ता जिसको (व्यक्ति, वस्तु या क्रिया को) विशेष रूप से चाहता है, उसे कर्म कहते हैं।

नियम ४—(कर्मणि द्वितीया) कर्म में द्वितीया विभक्ति होती है। जैसे —स पुस्तकं पठति । स रामं पश्यति । ते प्रश्नं पृच्छिन्ति ।

नियम ५—(अभितःपरितःसमयानिकषाहाप्रतियोगे ऽपि) अभितः, परितः, समया, निकषा, हा और प्रति के साथ द्वितीया होती है। जैसे—नृपम् अभितः परितः वा। प्रामं समया निकषा वा (गाँव के समीप)। बुभुक्षितं न प्रतिभाति किंचित्।

नियम ६—(उमनर्वतसोः कार्या०) उमयतः, सर्वतः, धिक्, उपर्युपरि, अधोऽषः, अध्यधि के साथ द्वितीया होती है। जैसे — कृष्णमुभयतो गोपाः। नृपं सर्वतो जनाः। धिक् नास्तिकम्।

नियम ७—गित (चलना, हिलना, जाना) अर्थ की धातुओं के साथ द्वितीया होती है। गत्यर्थ का आलंकारिक प्रयोग होगा तो भी द्वितीया होगी। जैसे —गृहं गच्छित। वनं विचरित। तृप्तिं ययो। मम स्मृतिं यातः। उमाख्यां जगाम। निद्रां ययो।

नियम ८—अकर्मक धातुएँ उपसर्ग पहले लगने से प्रायः अर्थानुसार सकर्मक हो जाती हैं, उनके साथ द्वितीया होगी। जैसे—हर्षमनुभवति। स खलम् अभिभवति। स खल्रम् अभिभवति। स खल्रम् अभिभवति। स खल्रम् अभिभवति। स्वामिचित्तमनुवर्तते।

नियम ९—हम् धातु के साथ साधारण स्मरण में द्वितीया होती है। खेदपूर्वक स्मरण में पश्ची होती है। जैसे —स पाठं स्मरति (वह पाठ याद करता है) ने जैसे —स पाठं स्मरति (वह पाठ याद करता है) ने जिसे —स पाठं स्मरति (देश) है कि सम्मर्शिक करता है ।

१. संस्कृत बनाओ—(क) (रामं, लट्) १. राम मीठे स्वर से पढ़ता है। २. देवता तेरा चरित लिख रहे हैं। ३. होनहार होकर ही रहती है। ४. जीवन में उत्थान और पतन सबके ही होते हैं। ५. वह तिल का ताड़ बनाता है। ६. उसे पुरस्कार मिलना चाहिए। ७. वह सदाचारी है, अतः उसका सवंत्र सम्मान होना चाहिए। ८. वह दुराचारी है, अतः आदर के योग्य नहीं है। ९. दुष्ट व्यक्ति दूसरों के सरसों के बराबर भी छोटे दोषों को देखता है और अपने बड़े दोषों की देखता हुआ भी नहीं देखता है। १०. में तुमसे हँसी नहीं कर रहा हूँ, ठीक कह रहा हूँ। ११. मनुष्य का भाग्य रथ-चक्र के सदश कभी नीचे जाता है और कभी ऊपर। १२. यह मूर्ख बकवाद करता है। (ख) (सू धातु) १. क्रोध से मोह होता है (सृ)। २. भाग्य से ही धन मिलता है और नष्ट होता है। ३. ऐसा कैसे हो सकता है ? ४. चाहे जो हो, में यह काम अवश्य करूँगा। ५. उस बालक का क्या हाल हुआ ? ६. यदि तुम्हें सन्देह हो तो पिता से पृछना । ७. दुष्ट, यदि प्रहार करेगा तो जीवित नहीं बचेगा। ८. यह जल आपके पैर धोने का काम देगा। ९. जो विद्या पढ़ता है, वह हर्ष का अनुभव करता है। १०. सजन मुख का अनुभव करता है। ११ वृक्ष अपने ऊपर तीक्ष्ण गर्मी सहन करता है। १२. तुम अपने किए हुए पुण्य कर्मी का फल भोग रहे हो (अनुसू)। १३. लोभ से क्रोध होता है (प्रभू)। १४. गंगा हिमालय से निकलती है (प्रभू)। १५. भाग्य बलवान् है। १६. आग के अतिरिक्त और कौन जला सकता है ? (ग) (द्वितीया) १. उसने प्रश्न पूछा । २. नदी के दोनों ओर खेत (क्षेत्राणि) हैं। ३. नगर के चारों ओर वन है। ४. नगर के पास ही एक सुन्दर उपवन है। ५. भूखे को कुछ अच्छा नहीं लगता है। ६. संसार के ऊपर, अन्दर और नीचे ईश्वर है। ७. सिंह वन में घूमता है (विचर्)। ८. यह बात मेरी समझ में आई। ९. वह पेड़ पर चढ़ता है। १०. छात्र पाठ याद कर रहा है। ११. उसका नान राम रखा गया। १२. उसे नींद आ गई।

संकेत—(क) १. मधुरम्। २. त्वच्चिर्तम्। ३. भवितव्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र। ४. पातोत्पाताः। ५. तिले तालं पदयति। ६. पुरस्कारमईति। ७. सम्मानमईति। ८. समादरं नाईति। ९. खलः सर्वपमात्राणि परिल्यािंग पदयति। आत्मनो विल्यमात्राणि पदयत्रिप न पदयति। १०. नाहं परिहसािम, परमार्थतः। ११. नीचैर्गच्छत्युपरि च दद्या चक्रनेमिक्रमेण। १२. प्रलप्तयेष वैधेयः। (ख) २. भाग्यक्रमेण हि धनािन भवन्ति यान्ति। ३. कथमेवं भवेत्राम। ४. यद्वािव तद्वतु । ५. किमभवत्। ६. यदि ते संद्यो भवेत्। ७. प्रहरिष्यसि—न भविष्यसि। ८. इतं ते पादादिकं भविष्यति। ९. हर्षमनुभवति। ११. अनुभवति हि मूर्ध्ना पादपस्तीव्रमुष्णम्। ०. प्रकृतिविश्विष्रा गर्थशाक्षित्रकृति स्विष्याः दिवहाः प्रिति हि मूर्ध्ना पादपस्तीव्रमुष्णम्।

(व्याकरण) शब्दकोप-२५ + २५ = ५०] अभ्यास २

(क) गृहम् (घर), नियोगः (आज्ञा, निर्धारित कार्य), शिलापट्टः (शिला), अर्थप्रतिपत्तिः (स्त्री॰, अर्थज्ञान)। (४)। (ख) अनुष्ठा (करना), अधिवस् (रहना), उपवस् (उपवास करना, रहना), दण्डि (दण्ड देना), अवचि (चुनना), मुप् (चुराना)। (६)। (ग) तावत् (तो, जरा), मुहूर्तम् (थोड़ी देर), जोषम् (चुप), अन्तरा (वीच में), अन्तरेण (विना, वारे में), किं नु (क्या), अनु (वाद में, घटिया, किनारे), उप (समीप, घटिया), अति (बढ़कर), अभि (समीप), दिवा (दिन में), नक्तम् (रात में)। (१२)। (घ) वाचंयमः(मोन),अब्रह्मण्यम् (अनर्थ), सकुसुमास्तरणम् (फूल के विस्तर से युक्त)। (३)। व्याकरण (गृह, लोट्, द्वितीया)

१. गृह शब्द के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्दरूप संख्या ६१)

२. पट तथा रक्ष् धातुओं के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ३, ४)

नियम १०—(अन्तरान्तरेणयुक्ते) अन्तरा और अन्तरेण के साथ द्वितीया होती है। विना के साथ भी द्वितीया होती है। गङ्गा यमुनां चान्तरा प्रयागः। ज्ञानमन्तरेण न सुखम् । भवन्तमन्तरेण (आपके बारे में) कीदृशोऽस्या अनुरागः । श्रमं विना न सिद्धिः ।

नियम ११—(अधिशीङ्स्थासां कर्म) अधिशी, अधिस्था और अध्यास् धातु के साथ आधार में द्वितीया होती है। जैसे—आसनमधिरोते, अधितिष्ठति, अध्यास्ते वा।

नियम १२—(अभिनिविशश्च) अभि + नि + विश् धातु के साथ आधार में द्वितीया होती है। जैमे-अभिनिविशते सन्मार्गम् (सन्मार्ग पर चलता है)। परन्तु पापेऽ-भिनिवेशः भी रूप बनता है।

नियम १३—(उपान्वध्याङ्वसः) उप, अनु, अधि और आ उपसर्ग के साथ वस् धातु होगी तो उसके आधार में द्वितीया होगी, किन्तु उपवास करना अर्थ में सप्तमी होगी । जैसे—हरिः वैकुण्टम् उपवसति अनुवसति अधिवसति आवसति वा (रहता है) । वने उपवसति (वन में उपवास करता है) - उपवास अर्थ के कारण सप्तमी होगी।

नियम १४ — (कालाध्वनारत्यन्तसंयोगे) समय और मार्ग के दूरीवाची दाब्दों में द्वितीया होती है, जब कार्य निरन्तर हुआ ही । मासं पठित । कोशं गच्छित । कोशं कुटिला नदी (नदी एक कोस तक टेढ़ी है)।

नियम १५ - इन उपसगों के साथ इन अथों में द्वितीया होती है - अनु (बाद में, घटिया, किनारे), उप (समीप, घटिया), अति (बढ़कर), अभि (समीप)। क्रमशः उदाहरण हैं: - जपमनु प्रावर्षेत्। अनु हरिं सुराः। नेदीमनु सेना। उपे हरिं सुराः। अति देवान् कृष्णः । भक्तो हरिमभि वर्तते ।

नियम १६ — (दुह्याच्प्च्दण्ड्०) ये धातुएँ द्विकर्मक हैं। इन अर्थों वाली अन्य धातुएँ भी द्विकर्मक हैं। इनके साथ दो कर्म होते हैं - दुह्, याच्, पच्, दण्ड्, रंधु, प्रच्छु, चि ब्रू, शास्, जि, मथ्, मुप्, नी, हु, कृष्, वह्। जैसे—गां दोरिध पयः। बल्लिं याचते वसुधाम्। तण्डुलान् ओदनं पचति। गर्गान् शतं दण्डयति। व्रजमवरुणिद्धं गाम् । माणवकं पन्थानं पृच्छिति । वृक्षमविचनोति फलानि । माणवकं धर्मे वर्ते शास्ति वा । शतं जयति देवद्रज्ञम् (CSDS) धीरुन्धिति By अत्यादि nla e देवद्रज्ञतं प्रत्ये aan Kosha पुरणाति । अजा ग्रामं नयति, हरति, कपैति, वहति वा ।

संस्कृत बनाओ $-(\mathbf{a})$ (गृह, लोट्) १. जरा रुकिये। २. जरा यह बात बन्द की जिये । ३. चुप रहो । ४. उस मूर्ख को वकवाद करने दो, तुम सजन हो अतः मौन रहो । ५. अपना काम करो । ६. अपने काम पर जाओ । ७. आगे कहिये, वहाँ क्या अनर्थ हो गया ? ८. भला या बुरा चाहे जो हो, मैं अपने वचन का पालन करूँगा। (ख) (भू) १. मैं कठिन परिश्रम के विना (विना, अन्तरेण) सफलता नहीं प्राप्त कर सकता हूँ। २. आपका छात्रों पर अधिकार है। ३. यदि अपने आपको सँगाल सकी तो यहाँ से जाऊँगी। ४. यह पहलवान उस पहलवान से लड़ सकता है। ५. वह अति प्रसन्नता से फूछा नहीं समाया। ६. वाँघें या छोड़ें, यह आपका अधिकार है। ७. राजा शत्रु को हराता है (पराभू)। ८. भरत सिंह-शावक को तिरस्कृत कर रहा है (परिभू)। ९. तुझे कौन दवा सकता है (अभिभू) ? १०. आप जैसे विरले ही संसार में जन्म लेते हैं (सम्मू)। ११. दरिद्रता से दुःख उत्पन्न होते हैं (उद्भू)। १२. रात्रि में चन्द्रमा निकलता है (आविर्भू)। १३. मुख में मुख उत्पन्न होते हैं (प्रादुर्भू) और दुःख में दुःख। १४. दिन में तारे छिप जाते हैं (तिरोभू) और रात में निकलते हैं (प्रादुर्भू)। १५. यह विचार मेरे मन में आया (प्रादुर्भू)। (ग) (द्वितीया) १. दूधयुक्त भोजन अमृत है, प्रिय का मिलन अमृत है, राजसम्मान अमृत है, जाड़े में आग अमृत है। २. गुलोक और पृथ्वी के बीच में अन्तरिक्ष है। ३. परिश्रम के बिना सुख नहीं है। ४. अर्थ जाने बिना प्रवृत्ति की योग्यता नहीं होती। ५. मैं आज विद्यालय नहीं गया, आचार्य मेरे बारे में क्या सोचेंगे, यह चिन्ता मुझे च्याकुल कर रही है। ६. शकुन्तला फूलों के विस्तारवाली शिला पर लेटी है। ७. राम दुर्गम वन में रहे। ८. बालक पलँग पर बैठा है (अध्यास्)। ९. राम सन्मार्ग पर चलता है (अभिनिविश्)। १० उसकी पाप में प्रवृत्ति है। ११. राम पंचवटी में बहुत दिन रहे (अधिवस्)। १२. गांधीजी ने अपने आश्रम में २१ दिन का उपवास किया। १३. वह वारह वर्ष गुरुकुल में पढ़ा। १४. वह प्रातः कोसभर घूमने जाता है। १५. यज्ञ के बाद वर्षा हुई। १६. सब किव कालिदास से घटिया हैं। १७. गंगा के किनारे हरिद्वार है। १८. सब राजा राम से घटिया हैं। १९. कपिल सब मुनियों से बढ़कर हैं। २०. राम के पास भक्त हैं। २१. वह गाय का दूध दुहता है। २२. वह राजा से धन माँगता है। २३. वह चावलों से भात पकावे। २४. राजा ने अपराधी पर सौ रुपया जुर्माना किया । २५. वह बकरी को बाड़े में बन्द करता है।

 शब्दकोष—५० + २५ = ७५] अभ्यास ३

(व्याकरण)

(क) शिखा (चोटी), संचिका (कापी), लेखनी (स्त्री॰, होल्डर), कौमुदी (स्त्री॰, चाँदनी), प्राघुणिकः (अतिथि, पाहुन), आतिथेयः (अतिथि-सत्कारकर्ता), कूर्चम् (दाढ़ी)। (७)। (ख) गम् (जाना, बीतना, प्राप्त होना), आगम् (आना), अनुगम् (पीछे जाना), अवगम् (जानना), अधिगम् (प्राप्त करना, जानना), अभ्युपगम् (स्वीकार करना), अस्यागम् (आना), प्रत्यागम् (लौटकर आना), निर्गम् (निकलना), संगम् (मिल्ना), उद्गम् (निकल्ना, उड़ना), अपगम् (नष्ट होना), उपगम् (पास जाना), परागम् (लौटना), प्रत्युद्गम् (स्वागतार्थं जाना), समधिगम् (पाना, जानना), ताडि (मारना)। (१७)। (घ) असंस्तुतम् (अपरिचित)। (१)

व्याकरण (रमा, मति, नदी, लङ्, तृतीया)

१. रमा, मति, नदी के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० ४१, ४२, ४३)

२. भू तथा अन्य तत्सम धातुओं के लङ् के रूप स्मरण करो ।

३. गम् और वद् धातुओं के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ५, ६)

नियम १9—(साधकतमं करणम्) किया की सिद्धि में सहायक को करण कहते हैं।

नियम १८—(कर्तृकरणयोस्तृतीया) करण में तृतीया होती है और कर्मवाच्य या भाववाच्य में कर्ता में। तृतीया मुख्यतः दो अथों को बताती है—(१) कर्ता, (२) साधन । जैसे — कन्दुकेन क्रीडित, दण्डेन चलति, बाणेन हन्ति । रामेण गृहं गम्यते । रामेण पाठः पठितः।

नियम् १९—(प्रकृत्यादिभ्य उपसंख्यानम्) प्रकृति आदि शब्दों में तृतीया होती है। ये शब्द साधारणतया कियाविशेषण या क्रिया-विशेषण-वाक्यांश होते हैं। जैसे पृक्तत्या साधः । सुखेन जीवति । दुःखेन जीवति । नाम्रा रामोऽयम् । गोत्रेण कार्यपः । समेनैति । विषमेणैति ।

नियम २०—(अपवर्गे तृतीया) समय और मार्ग के दूरीवाची शब्दों में तृतीया होती है, यदि कार्य की सफलता बताई जाए। मासेन प्रन्थोऽधीतः। क्रोशेन पाठोऽधीतः । दश्यभिर्दिनैरारोग्यं लब्धवान् (दस दिन में नीरोग हुआ) ।

नियम २१—(सहयुक्तेऽप्रधाने) सह, साकम्, सार्धम्, समम् आदि के साथ तृतीया होती है, साथ अर्थ हो तो । पित्रा सह साकं साधें समं वा गृहं गच्छित । मृगा मृगैः सङ्गमनुत्रजन्ति (मृग मृगों के साथ चलते हैं)।

नियम २२—(येनाङ्गविकारः) जिस अंग में विकार् से शरीर विकृत दिखाई पड़े अर्थात् शरीर ही विकृत माना जाय, उसमें तृतीया होती है। नेत्रेण काणः। पादेन खन्नः । कर्णेन बधिरः । शिरसा खन्वाटः ।

नियम २३ — (इत्थंभूतलक्षणे) जिस चिह्न से किसी व्यक्ति या वस्तु का बोध होता है, उसमें तृतीया होती है। जटाभिस्तापसः। कूचेंन यवनः। शिखया हिन्दुः।

नियम २४—(हेतौ) कारण-बोधक शब्दों में तृतीया होती है। अध्ययनेन वसति । पुण्येन दृष्टो हरिः । श्रमेण धनं विद्या वा भवति । विद्यया यशो लभते ।

नियम २५ — लङ्, लुङ् और लुङ् में अ या आ शुद्ध धातु से पहले ही लगेगा, उपसर्ग से पूर्व नहीं। अते: उपसर्गयुक्त धातुओं में लङ् आदि में धातु से पहले अ या CC अ. हरास्त्रार्रे द्वरपर्मा क्रिल्स हैं। det (सिंहिस्कर्मि (ट्वी) करें) iditi द्वेती By अस्तुमाम् के अन्तर्मा कि अस्तुमाम् के अन्तर्मा कि अस्तुमाम् के अन्तर्मा कि अस्तुमाम् के अस्तुमाम् कि अस्तुमाम् के अस्तुमाम के अ उद्गम्> उदगच्छत्।

संस्कृत बनाओ—(क) (रमा, लङ्) १. सुशीला सबेरे उठी, उसने माता और पिता को प्रणाम किया, पाठ पढ़ा, लेख लिखा, व्याकरण याद किया, खाना खाया और विद्यालय गई। २. पार्वती उपवन में गई, उसने फल देखे, फूल सूँघे, पेड़ पर चढ़ी, हता से फूल चुने और फूलों को घर लाई। ३. न इधर का रहा, न उधर का रहा । ४. लड़की पराई सम्पत्ति है। (ख) (गम् धातु) १. मेरा शरीर आगे जा रहा है और मन अपरिचित सा होकर पीछे की ओर दौड़ता है। २. बुद्धिमानों का समय काव्य-शास्त्र के विनोद में बीतता है। ३. निरर्थंक बकवाद से विद्वानों में मेरी हँसी हो जाएगी। ४. न चले तो गरुड भी एक पैर नहीं सरक सकता। ५. उस बालिका का नाम भारती रखा गया । ६. जलाशय तक प्रिय व्यक्ति की पहुँचाने जाना चाहिए। ७. राजा दिलीप छाया की तरह उस गाय के पीछे चला। ८. सुदक्षिणा इस प्रकार गाय के मार्ग पर चली, जैसे श्रुति के अर्थ के पीछे स्मृति चलती है। ९. मैं आपकी बात नहीं समझा। १०. आगे की बात तो समझ में आ गई। ११. में अपने आपको अपराधी सा समझ रहा हूँ। १२. मेरी बुद्धि कुछ निश्चय नहीं कर पा रही है। १३. अगस्त्य आदि ऋषियों से वेदान्त पढ़ने के लिए में वाल्मीकि के पास से यहाँ आई हूँ । १४. हम आपकी यह बात स्वीकार करते हैं । १५. मेरे घर पाहुन (अतिथि) आए हैं। १६. सज्जन सज्जनों के घर आते हैं। १७. कमला विद्यालय से घर छौटकर आई (प्रत्यागम्)। १८. ऋषि दयानन्द घर से निकलकर वन में गए। १९. प्रयाग में गंगा और यमुना मिलती हैं। २०. मिलकर चलो, मिलकर बोलो। २१. चन्द्रमा निकलता है, अन्धकार दूर होता है। २२. पक्षी आकाश में उड़कर जाते हैं। २३. शिष्य गुरु के पास गया। २४. मेघरहित चन्द्रमा को चाँद्नी प्राप्त हुई। (ग) (तृतीया) १. कमला ने होल्डर से कापी पर लेख लिखा। २. उमा ने डंडे से बन्दर को मारा। ३. बालक गेंद से खेला। ४. धनहीन दुःख से जीते हैं। ५. शान्ति ने सरलता से पुस्तक पढ़ ली। ६. उसका नाम कृष्ण है। ७. उसका गोत्र भारद्वाज है। ८. वह सममार्ग से आता है। ९. उसने एक वर्ष में गीता पढ़ी। १०. वह सात दिन में नीरोग हुआ । ११. वह धर्म से बढ़ता है।

संकेत—(क) १. उदितष्ठत्, पितरौ। २. आरोहत्, अचिनोत्, आनयत्। ३. इतो अष्टस्ततो अष्टः। ४. अथों हि बन्या परकीय एव। (ख) १. धावित पश्चारसंस्तुतं चेतः। २. कालो गच्छित धीमताम्। ३. अनर्गलप्रलापेन विदुषां मध्ये गिमण्याम्युपहास्यताम्। ४. अगच्छिन् वैनतेयोऽपि। ५. भारत्याख्यां जगाम। ६. ओदकान्तं स्निग्धो जनोऽनुगन्तच्यः। ७. छायेव तां भूपितरन्वगच्छत्। ८. श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्। ९. न खल्ववगच्छामि। १०. परस्तादवगम्यत एव। ११. कृतापराधिमवात्मानमवगच्छामि। १२. न मे बुद्धिनिश्चयमधिगच्छिति। १३. तेभ्यो-ऽधिगन्तुं निगमान्तविद्याम्। १४. अभ्युपगतं तावदस्माभिरेवम्। १५. अभ्यागतः। १८. गृहा-त्रिगत्य। १९. संगच्छिते (सम् न म आत्मनेपदो है)। २०. संगच्छध्वं संवदध्वम्। २१. उद्गण्डित, तिमिरमपगच्छिति। २२. खगाः खमुद्गच्छिनः। २३. उपागच्छत्। २४. शिक्षिपपतियं वौमुरी मेषमुक्तम्। (ग) ५. सरलतया। ६. नाम्ना कृष्णः। ९. वर्षेणेकेन। १०. सप्तिरितैः।

शब्दकोष-७५ + २५ = १००] अभ्यास ४ (व्याकरण)

(क) गिरि: (पुं॰, पर्वत), पदाित: (पुं॰, पैदल चलनेवाला), भूपित: (पुं॰, राजा), पितः (पुं॰, वज्र), निर्वन्धः (आग्रह, जिद्र), परिदेवनम् (रोना), वाप्पम् (भाप), कल्याणाभिनिवेदिान् (कल्याण का इच्छुक)। (८)। (ख) चर् (घृमना, करना, चरना), आचर् (व्यवहार करना), अनुचर् (पीछे चलना), संचर् (घूमना), विचर् (विचरण करना), उचर् (उठना, उल्लंघन करना), उपचर् (सेवा करना), प्रचर् (प्रचार होना), अनुह् (सहरा होना), संवद् (संवाद करना, सहरा होना), धप् (रापथ लेना), योजि (मिलाना)। (१२)। (ग) अलम् (वस), कृतम् (वस), किम् (क्या, क्या लाम)। (३)। (घ) नष्टाराङ्कः (निर्भय), मुग्धा (भोली-भाली)। (२)

व्याकरण (हरि, विधिलिङ् , तृतीया)

- १. हरि और भूपति शब्दों के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्द ॰ सं० ४, ७)
- २. भू तथा अन्य तत्सम धातुओं के विधिलिङ् के रूप स्मरण करो ।
- ३. दृश् धातु के रूप स्मरण करो (देखो धातु० ७)। चर् पठ् के तुल्य।

नियम २६—(गम्यमानापि क्रिया कारकविभक्तौ प्रयोजिका) अलम् और कृतम् के साथ तृतीया होती है, यदि वस या मत अर्थ हो तो । जैसे—अलं श्रमेण । कृतम् अत्यादरेण । अलम् के साथ इस अर्थ में क्ला (त्यप्) प्रत्यय भी होता है । अलमन्यथा सम्भाव्य (उलटा न समझें) ।

नियम २७—िकिम, कार्यम, अर्थः, प्रयोजनम्, गुणः के साथ तथा कि + कृ धातु के साथ तृतीया होती है, यदि प्रयोजन या लाभ अर्थ हो तो । जैसे—मूर्ख पुत्र से क्या लाभ—मूर्खेण पुत्रेण किम्, किं कार्यम्, कोऽर्थः, किं प्रयोजनम्, को गुणः, किं क्रियते वा।

नियम २८—(पृथिवना॰, तुल्यार्थेरतुलो॰) पृथक्, विना और तुल्यार्थक शब्दों के साथ तृतीया भी होती हैं। रामेण पृथक्। प्रियमा वियोगः। ज्ञानेन विना। कृष्णेन तुल्यः। पक्ष में पृथक्, विना के साथ द्वितीया और पंचमी भी होती हैं।

नियम २९—(कर्नृकरणयोस्तृतीया) करणत्व या क्रिया-विशेषणन्व के कारण इन स्थानों पर तृतीया होती है। (क) कार्यं करने के ढंग में। जैसे—विधिना यजते। (ख) जिस मृत्य से कोई वस्तु खरीदी जाए। जैसे—िक्रयता मृत्येन क्रीतं पुस्तकम् १ शतेन ०। (ग) यात्रा के साधन में। जैसे—रथेन चरित। विमानेन विगाहमानः। (घ) वहनार्थक धातु के साथ ढोने के साधन में। जैसे—स्कन्थेन शत्रुं वहित। भर्तुराज्ञां मूर्ध्नां आदाय। (ङ) शपथ अर्थ में शपथ की वस्तु में। जैसे—जीवितेन शपामि। आत्मना शपे। (च) युक्त और हीन अर्थ में। जैसे—समायुक्तोऽप्यथेंः। अर्थेन हीनः।

नियम ३०—(हैतौ) हैत्वर्थ के कारण इन अथों की धातुओं के साथ तृतीया होती है। (१) सन्तुष्ट या प्रसन्न होना, (२) आश्चर्ययुक्त होना, (३) लजित होना। (१) कापुरुषः स्वल्पेनापि तुष्यति। (२) तव प्रावीण्येन विस्मितोऽस्मि। (३) अनेन प्रागल्म्येन लज्जे।

नियम ३१—(हेतौ) उत्कर्प और साहश्य अर्थ की धातुओं के साथ गुणवोधक शब्द में तृतीया होती है। त्वं श्रद्धया पूर्वान् अतिशेषे (पूर्वजों से बढ़कर हो)। स्वरेण राममद्रमनुहरति (आवाज में राम से अस्ब्रिस्ट है)। Desire समुद्रमनुहरति (आवाज में राम से अस्ब्रिस है)। Desire सम्बर्ध असत्वाक से स्वाप्त है।

संस्कृत वनाओ—(क) (विधिलिङ्) १. हरि भोजन खावे, विद्यालय जावे, आसन पर वैठे और पाठ पढ़े। २. वह उपवन में जावे, फूल सूँघे, फलों को देखे, बुक्ष पर चढ़े। ३. भृपति तलवार से और इन्द्र वज्र से शत्रुओं को नष्ट करें। ४. मैं समझता हूँ कि यह बात उसको स्वीकार होगी। ५. इष्ट को धर्म से मिला दे। ६. अति का सर्वत्र त्याग करे। ७. कौन क्षत्रिय होकर अधर्मयुद्ध से जय चाहेगा। (ख) १. धर्म करो । २. मृगशिशु निःशंक हो धीरे-धीरे घूम रहे हैं । ३. वह पहाड़ पर तप कर रहा है। ४. वैल खेत में घास चरता है। ५. जो दुष्ट का सत्कार करता है, वह जल में लकीर खींचता है। ६. तुमने उसके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया। ७. सोलह षर्षं के पुत्र के साथ मित्रवत् व्यवहार करे । ८. यह कौन भोलीभाली तपस्व-कन्याओं के साथ अशिष्टता कर रहा है ? ९. विद्वान् व्यक्ति जानते हुए भी जड़ के तुल्य लोक अं व्यवहार करे। १०. गुरु शिष्य से पुत्रवत् व्यवहार करे। ११. चन्द्रमा के राहु से यस्त होने पर भी रोहिणी उसके पीछे चलती है। १२. कल्याण का इच्छुक सन्मार्ग पर चले। १३. वह रथ में घूमता है। १४. इस रास्ते से पैदल चलने वाले जाते हैं। १५. गिरि पर यति घूमते हैं। १६. राम वन में घूमे। १७. भाप उठी। १८. कोलाहल की ध्वनि उठी । १९. वह धर्म का उल्लंघन करता है। २०. तुम सबकी समानरूप से सेवा करो । २१. उसने भोजनादि से मेरी सेवा की । २२. रोगी की सावधानी से सेवा करो । २३. रामायण की कथा का संसार में प्रचार होगा । (ग) (तृतीया) १. हठ मत करो। २. श्रम से यह काम सिद्ध नहीं होगा। ३. विवाद मत करो, मत हँसो, मत रोओ । ४. हँसी मत करो । ५. बात बहुत मत बढ़ाओ । ६. इस बात से क्या लाभ, बस करो । ७. पुरुपार्थ के बिना भाग्य नहीं बनता । ८. इसकी आवाज कृष्ण से मिलती है। ९. इसका मुँह पिता के मुँह से मिलता है। १०. वह विधिपूर्वक पढता है। ११. तुमने यह साडी कितने मृत्य में खरीदी ? सो रुपए में। १२. विमान से आकाश में घूमता है। १३. धन से युक्त मनुष्य आहत होता है, धन से हीन तिरस्कृत होता है। १४. दुर्जन थोड़े से प्रसन्न होता है। १५. उसकी विद्वत्ता से विश्मित हूँ। १६. मैं असत्य-भाषण से लजित हूँ।

संकेत—(क) १. नाशयेताम्। ४. यथाहं पश्यामि, तथा तस्यानुमतं भवेत्। ५. चित्। ६. वर्जयेत्। ७. को हि क्षत्रियो भवन् "हच्छेत्। (स्व) १. धर्म चर। २. चरन्ति। ३. इचरित। ४. शस्यं चरित। ५. रचयित रेखाः सिलले यस्तु खले चरित सत्कारम्। ६. तिस्मन् त्वं साधु नाचरः। ७. प्राप्ते तु पोडशे वर्षे पुत्रम् "आचरेत्। ८. मुग्धामु आचरत्विनयम्। ९. जानन्निपि हि मेधावी जडवल्लोक आचरेत्। १०. शिष्यं "आचरेत्। ११. अनुचरित शशोङ् कं राहुद्रोपेऽपि तारा। १२. सन्मार्गमनुचरेत्। १३. रथेन संचरते (तृ० के साथ आत्मने० है) १६. विचचार दावम्। १७. उदचरत्। १९. धर्ममुचरते (सकर्मक आत्मने० है)। २०. सममुपचर। २१. मामुपाचरत्। २२. यत्नादुपचर्यतां रुग्णः। २३. लोकेषु प्रचरिष्यति। (त्र) १. अलं निर्वन्धेन। २. अलं अमेण। ३. अलं परिदेवनेन। ४. अलमुपहासेन। ५. अलमितिवस्तरेण। ६. किमनेन, आस्तां तावत्। ७. सिध्यित। ११. शाटिका क्रीता "शतकेन। १२. दिवं विगाहते। १३. आदियते तिरस्तियते।

शब्दकोप-१०० + २५ = १२५] अभ्यास ५ (व्याकरण)

(क) साधुः (पुं॰, सजन), मृत्युः (पुं॰, मृत्यु), पांसुः (पुं॰, धूल), असुः (पुं॰, प्राण), सानुः (पुं॰, शिखर)।(६)। (ख) सद् (वैठना, खिन्न होना), प्रसद् (प्रसन्न होना, स्वच्छ होना, सफल होना), विषद् (दुःखित होना), आसद् (पहुँचना), प्रत्यासद् (सभीप आना), निषद् (वैठना), अवसद् (नष्ट होना), उत्सद् (पास जाना), स्वद् (अच्छा लगना), प्रतिश्रु (प्रतिज्ञा करना), अवहननम् (कृटना)। (१२)। (ग) कृते (लिए)। (१)। (घ) पांगुः (जँचा), आगन्तुः (आगन्तुक), प्रभविष्णुः (समर्थ, स्वामी), स्प्रह्यालुः (इच्छुक), द्वित्राः (दो-तीन), पञ्चपाः (पाँच-छः)।(६)। पांगु और अमु शब्द नित्यवहुवचन हैं।

व्याकरण (गुरु, लुट्, चतुर्थाः)

१. गुरु शब्द के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्द ॰ सं॰ ९)

२. सद् और पा धातुओं के रूप स्मरण करो । (देखो धातु० ८, ११)

नियम ३२—(कर्मणा यमभिष्रति स सम्प्रदानम् , क्रियया यमभिष्रति । वान आदि कार्य या कोई क्रिया जिसके लिए की जाती है, उसे संप्रदान कहते हैं।

नियम ३२—(चतुर्थी सम्प्रदाने) संप्रदान में चतुर्थी होती है। जैसे—विप्राय गां ददाति । युद्धाय संनह्मते (तैयारी करता है)। विद्याये यतते । पुत्राय धनं प्रार्थयते ।

नियम ३४-—(रुच्यर्थानां प्रीयमाणः) रुच् (अच्छा लगना) अर्थ की धातुओं के साथ चतुर्थां होती है। हरये रोचते भक्तिः। यद् भवते रोचते। बालकाय मोदकं रोचते (बालक को लड्डू अच्छा लगता है)।

नियम ३५—(धारेक्तमर्णः) धारि धातु (ऋण छेना) के साथ ऋणदाता में चतुर्थां होती है। देवदत्तो रामाय शतं धारयति (राम का सौ रुपए ऋणी है)।

नियम ३६—(स्पृहेरीप्सितः) स्पृह् धातु तथा उससे बने शब्दों के साथ इष्ट वस्तु में चतुर्थी होती है। पुष्पेभ्यः स्पृहयित (पूलों को चाहता है)। भोगेभ्यः स्पृहयालवः।

नियम ३०—(कुधदुरेष्यांस्यार्थानां यं प्रति कोपः) कुध्, दुह्, ईर्ष्य्, अस्य अर्थ की धातुओं के साथ जिस पर कोध किया जाए, उसमें चतुर्थी होती है। रामः मूर्खाय (मूर्ख पर) कुध्यति, दुह्यति, ईर्प्यति, अस्यति । सीतायै नाकुध्यनाप्यस्यत । यदि कुध् और दुह् से पूर्व उपसर्ग होगा तो द्वितीया होगी। कूरम् अभिकुध्यति; अभिदुह्यति ।

नियम २८—(प्रत्याङ्म्यां श्रुवः०) प्रतिश्रु और आश्रु धातु के साथ प्रतिज्ञा करने अर्थ में चतुर्थी होती है। विप्राय गां प्रतिशृणोति (गाय देने की प्रतिज्ञा करता है)।

नियम ३९—(तादर्थ्यं चतुर्था वाच्या) जिस प्रयोजन के लिए जो वस्तु या किया होती है, उसमें चतुर्था होती है। मोक्षाय हिंर भजति। यूपाय दाह। काव्यं यशसे।

CC-O. Dr. नियम प्राप्त निवासिक के अर्थ में 'अर्थ में 'अर्थ में के साथ पष्टी। भोजनार्थम् , भोजनस्य कृते ।

संस्कृत वनाओ—(क) (गुरु, लुट्) १. जो जन्म लेगा, उसकी मृत्यु अवस्य होगी और जो मरेगा, उसका जन्म अवस्य होगा। २. राम लम्या है, पर उसका छोटा भाई भरत नाटा है। ३. छोटे वच्चे धूल में खेलते हैं। ४. शिशु के प्राण बचाने हैं। ५. ऋपि पर्वतों के शिखर पर रहते हैं। ६. भानु उदय होता है और विधु अस्त होता है। ७. अनुचरों को चाहिए कि स्वामी को धोखा न दें। ८. हाथी और गीदड़ की मित्रता नहीं होती। ९. दो तीन आगन्तुक कल मेरे घर आएँगे और मेरे यहाँ रहेंगे। १०. हम पाँच छः दिन में वनारस जाएँगे। ११. जाड़े में पहाड़ की चोटियों पर वर्फ गिरेगी और वे सफेद हो जाएँगी। १२. बड़े आदमी हँसी उड़ाएँगे। १३. गुरुओं की आज्ञा पर तर्क वितर्क नहीं करना चाहिए। १४. तरु फल आने पर झुक जाते हैं। १५. ऐसा करूँगा तो मेरी हँसी होगी। १६. मरना अच्छा है, अपमान सहना अच्छा नहीं। १७. ढीठ स्त्री शत्रुतुल्य है। (ख) (सद् धातु) १. में यहीं बैठा हूँ, आप शीव आवें। २. मेरा हृदय खिन्न हो रहा है। ३. मेरे अंग व्याकुल हो रहे हैं। ४. नीति की व्यवस्था ठीक न होने पर सारा संसार विवश हो दु:खित होता है। ५. जगदाधार भगवन् ! सुझसे प्रसन्न हों। ६. माता-पिता पुत्र की नम्रता से प्रसन्न होते हैं (प्र + सद्)। ७. जो किसी कारण से कुद्ध होता है, वह उस कारण के समाप्त होने पर प्रसन्न हो जाता है (प्र + सद्) । ८. दिशाएँ स्वच्छ हो गई' (प्र + सद्)। ९. उचित पात्र में रखी हुई किया शोभित होती है। १०. धीरे पुरुष मुख में प्रसन्न नहीं होते और दुःख में दुःखी नहीं होते (न, विषद्) । ११. दुःखित न होइये । १२. वह ज्योंही घर पहुँचे, त्योंही मेरे पास मेजना। १३. कुत्ता नदी पर पहुँचा। १४. घर जाने का समय हो रहा है, जल्दी करो। १५. तुम इधर बैठो। १६. आप बैठिये, मैं भी सुख से बैठता हूँ। १७. हल्की चीज तैरती है, भारी चीज नीचे बैठ जाती है। १८. उद्यम के तुल्य कोई बन्धु नहीं है, जिसे करके कोई दुःखित नहीं होता । १९. मेरे प्राण नष्ट हो रहे हैं (अवसद्) । २०. यदि मैं काम नहीं करूँगा तो ये लोग नष्ट हो जाएँगे।

संकेत—(क) १. जातस्य हि ध्रुत्रो मृत्युध्रुं वं जन्म मृतस्य च। २. वामनः खर्वः, पृहिनः। ३. पांसुषु। ४. असवो रक्षणीयाः। ५. उदेतिः अस्तमेति। ७. न वन्ननीयाः प्रभवोऽतु-जीविभिः। ८. भवन्ति गोमायुसखा न दन्तिनः। ९. निवत्स्यन्ति। १०. पन्चवैद्विसैः। १२. महाजनः स्मेरमुखो भविष्यति। १३. आज्ञा गुरूणां द्यविचारणीया। १४. भवन्ति नम्रास्तरवः फलागमैः। १५. गिमण्याम्युपहास्यताम्। १६. वरं मृत्युनं पुनरपमानः। १७. अविनोता रिपुर्भार्या। (ख) १. सोदामि। २. सीदिति। ३. सोदन्ति गात्राणि। ४. विपन्तायां नीतौ सकलम्बशं सीदित जगत्। ५. प्रसोद मे। ७. निमित्तमुह्दियः तस्यापगमे। ८, दिशः प्रसेदः। ९. किया हि वस्तूपहिता प्रसीदिति। ११. मा विषादतः। १२. यदैव आसोदित-तदैव मां प्रति प्रेषयः। १३. आससाद। १४. प्रत्यासीदिति गृहगमनकालः, त्वर्यताम्। १५. इतः। १६. सुखासीनो भवामि। १७. यल्लघु तदुत्न्लवते, यद् गुरु तन्निषोदिति। १८. यं कृत्वा नावसीदित। २०. उत्सोदेयुरिमें

लोका न कुर्या कर्म चेर्हम् । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha शब्दकोष-१२५ + २५ = १५०] अभ्यास ६ (व्याकरण)

(क) क्रमेलकः (ऊँट), निसर्गः (स्वभाव), प्रवृत्तिः (स्त्री॰, समाचार), विसृष्टिः (स्त्री॰, छुट्टी), कुलक्रमम् (कुल-परम्परा), शासनम् (आज्ञा), धामन् (नपुं॰, स्थान)। (७)। (ख) वृत् (होना, वर्ताव करना), प्रवृत् (लगना, चलना), अनुवृत् (पीछे चलना), निवृत् (लौटना), अभिवृत् (पास आना), अतिवृत् (१. उंल्लंघन करना, २. वीतना), आवृत् (लौटकर आना), आवर्ति (फेरना, दुहराना), परिवृत् (चक्कर खाना), आश्राङ्क् (आशंका करना), विप्रलम् (टगना), आशंस् (आशा करना), स्पन्द् (फड़-कना), घट (घटना होना), परिणम् (वदलना)। १५। (ग) उभयथा (दोनों प्रकार से), वृथा (व्यर्थ ही), अद्यत्वे (आजकल)। (३)।

ट्याकरण (९ सर्वनाम पुंलिंग, लट् आत्मनेपदी, चतुर्थी)

१. सर्व शब्द के पुंलिंग के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० ७७)

२. सेव् और वृत् धातुओं के रूप स्मरण करो । (देखी धातु॰ २०, २५)

नियम ४१—(क) (क्लिप संपद्यमाने च) क्लिप्, संपद्, जन्, भू, अस् (२प०) आदि धातुओं के साथ समर्थ होना या होना अर्थ में चतुर्थी होती है। विद्या ज्ञानाय करपते संपद्यते जायते वा। करपसे रक्षणाय। भूया अस् के प्रयोग के विना भी चतुर्थी होती है। काव्यं यशसे। (ख) (उत्पातेन०) कोई उत्पात किसी अशुभ घटना का संकेत करे तो चतुर्थी होगी। वाताय किपला विद्युत्। (ग) हित और सुख के साथ चतुर्थी होती है। ब्राह्मणाय हितं सुखं वा।

नियम ४२—(क्रियार्थोंपपदस्य च॰) यदि तुमुन्-प्रत्ययान्त धातु का अर्थ गुप्त हो तो कर्म में चतुर्थी होती है। फल्लेम्यो याति। (फल लाने के लिए॰)। वनाय गां मुमोच (वन जाने के लिए॰)। (तुमर्थाच॰) यदि तुमुन् के अर्थ में घञ् प्रत्यय होगा तो भी चतुर्थी होगी। यागाय याति (यष्टुं यातीत्यर्थः, यज्ञ करने के लिए जाता है)।

नियम ४३—(नमःस्वित्त्वाहास्वधालंवषड्योगाच्च) नमः, स्वित्ति, स्वाहा, स्वधा, अलम् (तथा पर्याप्त अर्थ वाले अन्य शब्द), वषट् के साथ चतुर्थी होती है। गुरवे नमः। पुत्राय स्वित्त । अग्वये स्वाहा। पितृभ्यः स्वधा। इन्द्राय वषट्। हरिः दैत्येभ्यः अलम्, प्रमुः, समर्थः, शक्तः वा। (क) नमस्क्र के साथ साधारणतया द्वितीया होती है। नमस्करोति देवान्। मुनित्रयं नमस्कृत्य। (ख) प्रणाम करना अर्थवाली प्रणम्, प्रणिपत् आदि धातुओं तथा इनके संज्ञाशब्दों के साथ द्वितीया और चतुर्थी दोनों होती हैं। जैसे —न प्रणमन्ति देवताभ्यः। तां प्रणनाम। प्रणिपत्य सुरास्तस्मै। धातारं प्रणिपत्य। अस्मै प्रणाममकरवम्। (ग) आशीर्वादार्थक स्वागतम्, कुशलम् आदि के साथ चतुर्थी और षष्टी दोनों होती हैं। (घ) अलम्, प्रभुः आदि तथा प्रभ धातु के साथ चतुर्थीं होती है। प्रभुमंत्लो मल्लाय। प्रभवति मल्लाय।

नियम ४४—(कियया यमभिषैति॰) 'कहना' अर्थ की धातुओं कथ्, ख्या, श्रंस्, चक्ष् और निवेदि आदि के साथ तथा 'भेजना' अर्थ की धातुओं प्र + हि, वि + सूज् आदि के साथ चतुर्थी होती है। मैथिलाय कथयांत्रभूव सः। आख्याहि को मे भवानुप्ररूपः। होमवेलां गुर्ते निवेदयामि। भोजेन दूतो रघवे विसृष्टः।

नियम ४'-(मन्यकर्मण्यनादरे०) अनादर अर्थ में मन् धातु के साथ द्वितीया और चतुर्थी होती है। न त्वां तृणं मन्ये तृणाय वा।

नियम ४६—(गत्यर्थकर्मणि द्वितीया॰) गत्यर्थक धातु के साथ कर्म में द्वितीया और चतुर्थी होती हैं, यदि चेष्टा हो तो। अन्यत्र द्वितीया ही होगी। ग्रामं ग्रामाय वा टि.स.स्मितस्य हिंदिनामिति॥ हेपानिभानं आच्छा हिए). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संस्कृत बनाओं —(क) (सर्वनाम, लट् आ०) १. तू जिसको अग्नि समझता है, वह स्पर्श के योग्य रत्न है। २. क्यों मुझे घोखा देते हो ? ३. मैं मनोरथ की आशा नहीं करता, हे भुजा, त् क्यों व्यर्थ फड़क रही है ? ४. दूघ दही के रूप में परिणत होता है । ५. क्या सोचकर आप यह कह रहे हैं ? ६. यह बात दोनों तरह से हो सकती है। ७. ऊँट कीडोद्यान में जाकर भी काँटे ही हूँ इता है। ८. अर्जुन, भाग्य से ही ऐसा युद्ध क्षत्रियों को मिलता है। (ख) (बृत्, सेव् धातु) १. ऐसा मेरे मन में है। २. इस विषय में हमारी वड़ी उत्सुकता है। ३. आप ही बताओ, इस दुष्ट के साथ कैसा वर्गाव करें। ४. वह आजकल परेशानी में है। ५. अव प्रातःकाल है, तुम सब पढ़ाई में लगो । ६. सीता देवी का क्या हुआ, क्या कुछ समाचार है ? ७. यज्ञ ठीक चल रहा है। ८. मेरी जीवन-यात्रा सुख से चल रही है (वृत्)। ९. परीक्षा सिर पर है, वह अध्ययन में लगा हुआ है (वृत्)। १०. माता स्वाभाविक स्नेह से सन्तान से व्यवहार करती है (वृत्)। ११. ऐसे पुत्र से क्या लाभ, जो पिता को दुःख दे। १२. क्या शिक्त भर पढ़ाई में लगे हो (पतृत) ? १३. राजा प्रजा के हित में लगे। १४. सहसा उसकी आँसू की धार बह चली। १५, बड़ा आदमी जैसा करता है, लोग उसका ही अनुपरण करते हैं (अनुहुत)। १६, लोग मालिक की इच्छा के अनुसार चलते हैं। १७, लौकिक सज्जनों की वाणी अर्थ के पीछे चलती है। १८. सत्पृत्र कुल-परम्परा का अनुसर्ण करता है (अनुवृत्)। १९. जहाँ जाकर नहीं लौटते, वह मेरा परम धाम है। २०. सजन पाप से निवृत्त होता है (निवृत्)। २१. मांसमक्षण से रुके (निवृत्)। २२. कन्याएँ पौधों को जल देने के लिए इधर ही आ रहा हैं। २३. भौरा मेरे मुँह की ओर आ रहा है। २४. जो पिता की आज्ञा का उल्लंधन करता है, वह दुःख पाता है। २५. माता-पिता की सेवा करो। (ग) (चतुर्थी) १. धन दान के लिए होता है (क्लप्)। २ तुम रक्षा में समर्थ हो। ३ काव्य यश के लिए, धन के लिए, व्यवहारज्ञान के लिए और अशिवक्षति के लिए होता है। ४. शिष्यों का हित और सख हो। ५. फ़लों के लिए उद्यान में जाता है। ६. हवन करने के लिए जाता है। ७. पिता जी को नमस्कार, शिष्यों को आशीर्वाद । ८. इन्द्र के लिए खाहा । ९. यह योद्धा उस योदा से लड़ने में समर्थ है। १०. राजा शतुओं के लिए समर्थ है, पर्याप्त है।

संकेत—(क) १० आशक्कि यदाँग तिहदं स्पर्शक्षमं रत्नम्। २० किं मां विप्रलभसे। ३० मनोरथाय नाशंसे, स्पन्दसे। ४० दिशमात्रेन परिणमते। ५० किमुद्दिश्य भवान् भाषते। ६० इदमुभयथाऽपि घरते। ७० निरोक्षते केलिवनं प्रिचिष्टः क्रमेलकः कण्टकजालमेव। ८० सुखिनः क्षत्रियाः पार्थं लभन्ते युद्धमीदृशम्। (ख) १० इदं मे मनिस वर्तते। २० महत् कुतूहलं वर्तते। ३० दुर्जने कथं वर्तताम्। ४० दुर्खे। ५० प्रवर्तव्यम्। ६० वृत्तम्, अस्ति काचित् प्रवृत्तिः। ७० सर्वथा वर्तते। ९० प्रत्यासीदित। १०० निसर्गस्नेहेनापत्येषु। ११० पुत्रेण किम्, यः पितृदुःखाय वर्तते। १२० अपि स्वश्वत्या। १३० प्रवर्ततां प्रकृतिहिताय पार्थितः। १४० प्रवर्तताश्रधारा। १५० यद्यवाचरित श्रेष्ठो लोकस्तदनुवर्तते। १६० प्रमुचित्तमेव हि जनोऽनुवर्तते। १७० लौकिकानां हि साधूनामर्थं वागनुवर्तते। १८० कुलक्रमम्। १९० यद् गत्वा न निवर्तन्ते तद् धाम परम मम। २२० वालपारपेभ्यः, इत एवाभिवर्तन्ते। २३० वद्यनमिवर्तते। २४० पितुः शासनमिवर्तते। (ग) २० कल्यसे रक्षणाय। ३० काल्यं यशसेऽर्थक्कते व्यवहारिवरे शिवेतरक्षतये। ४० सूपात्। ९० प्रभवित मल्लो मल्लाय।

शब्दकोप-१५० + २५ = १७५] अभ्यास ७ (व्याकरण)
(क) लोकापवादः (अफवाह), अभिजनः (कुलीन), अङ्गुलीयकम् (अंगूठी), वचनीयम् (निन्दा), संगतम् (मित्रता), गोमयम् (गोवर), वयस् (नपुं०, आयु)। (७)। (ख) ईश् (१. देखना, २. परवाह करना), अपेश् (१. प्रतीक्षा करना, २. ध्यान रखना), अवेश् (१. देखना, २. हाँ इना), परीक्ष् (परीक्षा करना), प्रतीक्ष् (प्रतीक्षा करना), प्रतिक्ष् (प्रतीक्षा करना), प्रतीक्ष् (प्रतीक्षा करना), प्रतिक्ष् (प्रतीक्षा करना), प्रतीक्ष् (प्रतान), प्रतीक्ष् (हारना), त्रै (रक्षा करना)। (१२)। (ग) रहः (एकान्त में), सदसत् (उचित-अनुचित)। (२)। (घ) सजः (तैयार), तीक्ष्णम् (तीव्र, उप्र), योत्स्यमानः

(लड़ने का इच्छुक), कामवृत्तिः (पु०, स्वेच्छाचारी) । (४) **ट्याकरण** (९ सर्वनाम नपु०, लोट् आत्मने०, पंचमी)

१. सर्व शब्द के नपुंसके के पूरे रूप समरण करो । (देखो शब्द ० ७७) २. वृध् और ईक्ष् धातुओं के रूप समरण करो । (देखो धातु ० २२, २६)

नियम ४७—(ध्रुवमपायेऽपादानम्) जिससे कोई वस्तु आदि अलग हो, उसे अपादान कहते हैं।

नियम ४८—(अपादाने पञ्चमी) अपादान में पंचमी होती है। ग्रामादायाति।

वृक्षात् पत्रं पतति ।

नियम ४९—(जुगुप्साविरामप्रमादार्थानाम्०) जुगुप्सा (घृणा), विराम (च्छना) और प्रमाद अर्थ की धातुओं और शब्दों के साथ पंचमी होती है। पापात् जुगुप्सते, विरमति। धर्मात् प्रमाद्यति।

नियम ५०—(भीत्रार्थानां भयहेतुः) भय और रक्षा अर्थ की घातुओं के साथ भय के कारण में पंचमी होती है। चोराद् विमेति। चोरात् त्रायते। न भीतो मरणादिसम ।

नियम ५१—(पराजेरसोटः) परो + जि के साथ असह्य अर्थ में पंचमी होती है। अध्ययनात् पराजयते (पढ़ाई से हार मानता है)। परन्तु शत्रून् पराजयते (शत्रुओं को हराता है) में द्वितीया होगी।

नियम ५२—(वारणार्थानामीप्सितः) जिस वस्तु से किसी को हटाया जाए, उसमें पंचमी होती है। यवेभ्यो गां वार्यति। पापात् निवारयति (पाप से हटाता है)।

नियम ५३— (अन्तर्धी येनादर्शनमिन्छति) जिससे छिपना चाहता है, उसमें

पंचभी होती है । मातुर्निलीयते कृष्णः (कृष्ण माता से छिपता है) ।

नियम ५४—(आख्यातोपयोगे) जिससे नियमपूर्वक विद्या आदि पढ़ी जाए, उसमें पञ्चमी होती है। उपाध्यायादघीते। मया तीर्थात् (गुरु से) अभिनयविद्या

शिक्षिता । तेम्योऽधिगन्तुं निगमान्तविद्याम् (उनसे वेदान्त पढ़ने को) ।

नियम ५५—(जनिकर्तुः प्रकृतिः, भुवः प्रभवः) उत्पन्न या प्रकट होना अर्थ-वाली जन् और भू आदि धातुओं के साथ पञ्चमी होती है। ब्रह्मणः प्रजाः प्रजायन्ते। हिमवतो गङ्गा प्रभवति, उद्भवति, उद्गच्छिति। परन्तु पुत्रादि के जन्म में स्त्री में सतमी होगी—मेनकायामुत्पन्नां गौरीम् (मेनका से उत्पन्न पार्वती को)

नियम ५६—(त्यब्लोपे कर्मण्यधिकरणे च) क्ता या त्यप् का अर्थ गुप्त होगा तो कर्म और अधिकरण में पंचमी होगी। प्रासादात् प्रेक्षते। आसनात् प्रेक्षते। स्वग्रुरात् जिहेति।

नियम ५७—(गम्यमानापि क्रिया॰) प्रश्न और उत्तर आदि में गुप्त क्रिया के आधार पर पंचमी होती है। कस्मात् त्वम् १ नद्याः (कहाँ से आए १ नदी से)। कुतो भवान १ पाटलिपुत्रात (आप कहाँ से आए १८८०) क्रिक्रों हो अप्तर्भ (CSO) Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai (CSO) क्रिक्रों हो अप्तर्भ (CSO) हो अप्तर्

अभ्यास अ

संस्कृत बनाओ —(क) (ईस्, वृध् धातु, लोट् आ०) १. माता पुत्र को देखे। २. स्वेच्छाचारी व्यक्ति निन्दा की चिन्ता नहीं करता (ईक्ष्)। ३. स्नेह समय की अपेक्षा नहीं करता। ४. रथ तैयार है, महाराज के विजय प्रस्थान की प्रतीक्षा कर रहा है। ५. आग्य भी पुरुपार्थ की अपेक्षा करता है। ६. विद्वान् भाग्य और पुरुपार्थ दोनों की आवश्यकता मानता है। ७. मैं लड़ने के इच्छुकों को देखता हूँ (अयेक्)। ८. कुछ बात सोचकर वह मौन हो गया। ९. अपने कर्तव्य की क्षणभर भी उपेक्षा न करें (उपेश्) १०, अच्छी तरह परीक्षा करके ही गुप्त-प्रेम करना चाहिए। ११, भले और बुरे की परीक्षा करके विद्वान् एक को अपनाते हैं। १२. तेजस्वियों की आयु नहीं देखी जाती। १३. धर्मवृद्धों की आयु नहीं देखी जाती। १४. धन कम होने पर भूख अधिक लगती है। १५. पुत्र-मुख-दर्शन के लिए आपको बधाई। (ख) (पंचमी) १. वृक्ष से पुराने पत्ते गिरे । २. वह दोइते हुए घोड़े से गिरा । ३. वह सदाचार से हीन हो रहा है। ४. वह असत्य-भाषण से घुणा करता है। ५. धीर लोग अपने निश्चय से नहीं हटते हैं। ६. मेरी उँगलियों से अँगूठी गिर गई। ७. मेनका पार्वती को कठोर मुनिव्रत से रोकती हुई बोली। ८. बालक महल से गिर पड़ा (पत्)। ९. पुत्र, इस काम से रुको । १०. वह अपने कर्तव्य को भूल गया था। ११. सब प्राणि-हिंसा से बचें (निवृत्)। १२. सभी प्रकार के मांस-भक्षण से बचें। १३. में मृत्यु से नहीं डरता । १४. धर्म का थोड़ा अंश भी उसे बड़े भय से बचाता है। १५. छोग उम्र पुरुष से डरते हैं। १६. मुझे लोक-निन्दा से भय है। १७. वह पढ़ाई से हार मानता है। १८. वह दुर्जनों को हराता है। १९. वह बकरी को खेत से हटाता है। २०. चोर सिपाही से छिपता है। २१. मैंने गुरु से अभिनय की विद्या सीखी है। २२. अगस्त्य मृति से वेदान्त पढ़ने के लिए यहाँ आया हूँ । २३. हिमालय से गंगा निकलती है। २४. काम से क्रोध होता है। २५. गोबर से बिच्छू होता है। २६. लोभ से क्रोध होता है। २७. शुकनास को मनोरमा से एक पुत्र हुआ। २८. ब्रह्मा के मुख से अग्नि उत्पन्न हुई और मन से चन्द्रमा।

संकेत — (क) २. न कामवृत्तिर्वचनीयमीक्षते । ३. न कालमपेक्षते स्नेहः । ४. प्रस्थानमपेक्षते । ५. दैवमिप पुरुषार्थमपेक्षते । ६. द्वयं विद्वानपेक्षते । ७. योत्स्यमानानवेक्षेऽइम् । ८. किमिप निमित्तमनेक्ष्य । ९. नोपेक्षेत क्षणमि । १०. अतः परीक्ष्य कर्तव्यं विशेषात् संगतं रहः । ११. सदसत्, सन्तः परीक्ष्यान्यतर्द् भ जन्ते । १२. तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते । १३. न धर्मवृद्धेषु वयः समीक्ष्यते । १४. धनक्षये वर्धते जाठराग्निः । १५. दिष्ट्या पुत्रमुखदर्शनेन वर्धते भवान् । (ख) १. जीणीनि । २. धावतः । ३. भ्रंशते । ५. न निश्चतार्थाद् विरमन्ति धीराः । ६. अग्रहस्तात् प्रभ्रष्टम् । ७. निवारयन्ती महतो मुनिव्रतात् । ९. पतसाद् विरम । १०. स्वाधिकारात् प्रमत्तः । ११. निवतेरन् । १२. निवतेत सर्वमांसस्य भक्षणात् । १४. स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात् । १५. तीक्ष्णान्द्विज्ञते लोकः । १६. लोकापत्रादाद् भयं मे । १९. क्षेत्रात् । २०. रिक्षणः । २२. निगमान्तिविद्यान्तुम् । २४. अभिजायते । २५. गोभयाद् वृश्चित्वते जायते । २६. प्रभवति । २७. मनोरमायां मिधगन्तुम् । २४. अभिजायते । २५. गोभयाद् वृश्चित्रते जायते । २६. प्रभवति । २७. मनोरमायां

शब्दकोष -१७५ + २५ = २००] अभ्यास ८

(व्याकरण)

(क) हुतवहः (आग), मरालः (हंस), अवकरः (कृड़ा), मानसम् (१. मन, २. मानसरांवर), जाङ्यम् (मूर्व्ता), अकिंचित्करत्वम् (तुच्छता), संनिधानम् (समीपता), अवज्ञा (तिरस्कार), अनुपल्लिधः (स्त्री॰, अप्राप्ति)। (९)। (ख) मन्त्र् (१. मन्त्रणा करना, २. कहना), आमन्त्र् (१. विदाई लेना, २. बुलाना), निमन्त्र् (न्योता देना), रम् (१. मन लगना, २. कीडा करना), विरम् (१. हटना, २. हकना, ३. समाप्त होना), उपरम् (१. हकना, २. मरना)। स्यन्द् (बहना), दह् (जलाना), आरम् (प्रारम्भ करना)। (९)। (ग) आरात् (१. दूर, २. समीप), ऋते (बिना), नाना (बिना), प्राक् (पूर्व की ओर), प्रत्यक् (पश्चिम की ओर), उदक् (उत्तर की ओर), दक्षिणा (दक्षिण की ओर)। (७)।

व्याकरण (९ सर्वनाम स्त्री॰, लङ् आत्मने॰, पंचमी)

१. सर्व शब्द के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० ७७)

२. मन्त् और रम् धातु के रूप स्मरण करो । मन्त्रयते, रमते (सेव् के तुल्य)।

नियम ५८—(अन्यारादितरतें०) अन्य, आरात्, इतर (तथा अन्य अर्थवाले और भी शब्द) ऋते, पूर्व आदि दिशावाची शब्द (इनका देश, काल अर्थ हो तो भी), प्राक् आदि शब्दों के साथ पंचमी होती है। कृष्णात् अन्यो भिन्न इतरो वा। आराद् वनात्। ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः। ग्रामात् पूर्वः, उत्तरौ वा। चैत्रात् पूर्वः फाल्गुनः। ग्रामात् प्राक् प्रत्यक् वा।

नियम ५९—(प्रभृत्यर्थय गे बहियोंगे च पञ्चमी) बहिः तथा 'बाद में' 'तब से लेकर' अर्थ के बोधक प्रभृति, आरभ्य, अनन्तरम्, परम्, ऊर्ध्वम् आदि शब्दों के साथ पंचमी होती है। शैशवात् प्रभृति। तिह्नादारभ्य। विवाहविधेरनन्तरम्। अस्मात्परम् (इसके बाद)। वर्षाद् ऊर्ध्वम् (एक वर्ष वाद)। प्रामाद् बहिः।

नियम ६०—(अपपरी वर्जने, आङ् मर्यादा॰, प्रतिः प्रतिनिधि॰) ये उपसर्ग इन अथों में हों तो इनके साथ पंचमी होती है:—अप (छोड़कर), परि (छोड़कर), आ (तक), प्रति (१. प्रतिनिधि, २. बदलना)। अप हरेः, परि हरेः संसारः। आ मुक्तेः संसारः। आ सकलाद् ब्रह्म। प्रद्युम्नः कृष्णात् प्रति। तिलेभ्यः प्रतियच्छति मापान्।

नियम ६१—(अकर्तर्यृणे०, विभाषा गुणे०) हेन्वोधक ऋण या गुणवाची शब्दों में पंचमी होती है। ऋणाद बद्धः, जाड्याद बद्धः। मौनान्मूर्वः। वाद-विवाद में युक्ति देने या उत्तर देने में भी पंचमी होती है। पर्वतो विह्नमान् धूमात्। नास्ति घटोऽनुप-रुब्धेः (धड़ा नहीं है, क्योंकि अविद्यमान है)।

नियम ६२—(पृथिवनानाभिः०) पृथक, विना और नाना के साथ पंचमी, दितीया और तृतीया होती हैं। रामात् रामं रामेण विना पृथक् वा।

नियम ६३—(दूरान्तिकार्थेम्यो०) दूर और समीपवाची शब्दों में पंचमी, द्वितीया और तृतीया तीनों होती हैं। ग्रामस्य दूरात् दूरेण दूरं वा।

नियम ६४— (पञ्चमी विभक्ते) तुलना में जिससे तुलना की जाती है, उसमें पंचमी होती है। राष्मात् कृष्णः पटुतरः। अणोरणीयान् महतो महीयान्। जननी जन्मभृमिश्च स्वर्गाद्पि गरीयसी (जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से बढ़कर हैं)।

नियम ६५—(यतश्चा वकालनिर्माणं०) स्थान और समय की दूरी नापने में पंचमी होती है। दूरीवाचक शब्द में प्रथमा और सप्तमी होती हैं, समयवाचक में सप्तमी। वनाद ग्रामो योजन योजन योजन कि कि कि अध्याद्यक्षि भासिन्। मांव eGangotri Gyaan Kosha

संस्कृत बनाओ—(क) (मन्त्र्, रम् धातु, लङ् आ०) १. राजा सचिवों के साथ मन्त्रणा करे। २. तुम कुछ मन में रखकर कह रहे हो (मन्त्र्)। ३. तुम अकेले क्या गुनगुना रहे हो ? ४. चकवी, अपने साथी से विदाई हो। ५. यज्ञों में ब्राह्मणों को आमन्त्रित करो (आमन्त्र्)। ६. राजा ने विद्वानों को विमन्त्रण दिया। ७ उसका एकान्त में मन लगता है। ८. हंस का मन मानसरोवर के बिना नहीं लगता। ९. पत्नी पति के साथ क्रीड़ा करती है (रम्)। १०. मेरा चित्त विषयों से इटता है। ११. रात्रि इस प्रकार बीत गयी । १२. यह कहकर शेर चुप हो गया। १३. राम के वियोग से उत्पन्न शोक से दशरथ का स्वर्गवास हो गया। (ख) (पंचमी) १. आपका ग्रुभागमन कहाँ से हुआ ? प्रयाग से। २. मकान पर चढ़कर उसने बरात देखी। ३. वह आसन पर बैठकर चित्र देखता है। ४. बहू स्वशुर से शर्माती है। ५. आग के अतिरिक्त और कौन जला सकता है ? ६. गाँव से दूर (आरात्) नदी है। ७. घर के पास (आरात्) उद्यान है। ८. श्रम के बिना (ऋते) धन नहीं। ९ गाँव के पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण की ओर अनाज से इरं-भरे खेत हैं। १०. वह बचपन से ही न्यायाम का प्रेमी है। ११. उसी दिन से दोनों की मित्रता हो गई। १२. इसके बाद क्या करना चाहिये ? १३. गाँव के बाहर उसकी कुटी है। १४. जन्म से छेकर आजतक इसने शठता नहीं सीखी है। १५. उड़द से जौ को बदलता है। १६. चोर ऋण के कारण पकड़ा गया। १७. मूर्खता के कारण अनाहत हुआ। १८. अति परिचय से अपमान होता है और किसी के यहाँ अधिक जाने से अनादर होता है। १९. दो हृद्यों की एकता से प्रेम होता है, समीप रहने मात्र से कुछ नहीं होता। २०. में निन्दा से मुक्त हो गया हूँ। २१. पहाड़ में आग है, चूँकि धुँआ दीखता है। २२. यहाँ पुस्तक नहीं है, चूँिक दिखाई नहीं देती है। २३. चाँदनी चन्द्रमा के बिना नहीं रह सकती। २४. कूड़ा घर से दूर फेंकना चाहिए (प्रक्षिप्)। २५. ईश्वर छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा है। २६. कृष्ण राम से अधिक चतुर है। २७. प्रयाग नगर से गंगा-यमुना का संगम कोस भर पर है। २८. माता और मातृभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर हैं। २९. भक्तिमार्ग से ज्ञानमार्ग अच्छा है। ३०. कार्तिक से अगहन एक महीने बाद होता है।

संकेत (क) १ मन्त्रयेत । २ किमपि हृदये कृत्वा । ३ किमेकाकी मन्त्रयसे । ४ चक्कवाकत्रधुके, आमन्त्रयस्व सहचरम् । ६ न्यमन्त्रयत । ७ स रहिस रमते । ८ रमते न मरालस्य
मानसं मानसं विना । १० विरमित । ११ रात्रिरेवं व्यरसीत् । १२ उपराम । १३ दाशरथिवियोगजन्मना शोकेन, उपरतः । (ख) १ कृतो भवान् , प्रयागात् । २ प्रासादात् वरयात्रां
प्रेक्षत । ३ आसनात् । ४ दवशुरात् जिहिति । ५ कोऽन्यो हुतवहाद् दग्धुं प्रभवति । ७ निष्कुटः ।
९ शस्यस्यामानि क्षेत्राणि । १० व्यायामिष्रयः । ११ तिहनादारभ्य । १२ अस्मात् परम् ।
१४ आ जन्मनः शास्त्रमितिद्वितोऽयम् । १६ वदः । १७ जाङ्यात् । १८ अतिपरिचयादवशा,
सन्ततगमनादनादरो भवति । १९ हरोरैक्यात् स्नेहः संजायते, संनिधानस्याकिनित्सरत्वात् ।
२० वचनीयात् । २१ पूर्वतो विह्नमान् , धूमात् । २२ अनुपल्ब्यः । २३ न स्थातुं शकनोति ।
८ अनुमसिक्षात्रस्य । निष्ठाक्षितोऽस्य । १३ विश्वादस्य ।

(व्याकरण) शब्दकोष-२०० + २५ = २२५] अ**¥यास ९**

(क) उद्गीथः (ओम्, ब्रह्म), विश्रमः (विश्राम), नियोगः (आज्ञा), विनियोगः (उपयोग, खर्च), विदग्धः (विद्वान्, चतुर), काल्हरणम् (देर करना), कैतवम् (धोखा), कार्यकालम् (मौका), साक्षिन् (पुं॰, साक्षी)। (९)। (ख) स्था (१. रुकना, २. रहना), उत्था (१. उठना, २. यत्न करना), उपस्था (१. पूजा करना, २. मिलना आदि), प्रस्था (प्रस्थान करना), अवस्था (१. रुवना, २. रहना), अनुष्ठा (१. करना, २. मानना), आस्था (मानना), संशी (संशय करना), अधि + इ (पर \circ , स्मरण करना), दय (दया करना)। (१ \circ)। (\mathbf{n}) कृते (लिए), अन्तरे (अन्दर, बीच में), शतम् (सौ रूपये)। (३)। (\mathbf{n}) अक्षमः (असमर्थ), अभिज्ञः (जानने वाला), अव्याजमनोहरम् (स्वभाव से ही सुन्दर)। (३)

व्याकरण (इदम् , विधिलिङ् आत्मने०, षष्ठी)

१. इदम् शब्द के तीनों लिंगों के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० ८७)

२. हम् और स्था धातुओं के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ९, २१)

नियम ६६—(षष्ठी शेवे) सम्बन्ध का बोध कराने के लिए षष्ठी विभक्ति होती है । राज्ञः पुरुषः । रामस्य पुस्तकम् । गङ्गाया जलम् । देवदत्तस्य धनम् ।

नियम ६७—(षष्ठी हेतुप्रयोगे) हेतु शब्द के साथ षष्ठी होती है। अनस्य

हेतोर्वसित (अन्न के लिए रहता है)।

नियम ६८—(निमित्तपर्यायप्रयोगे सर्वासां प्रायदर्शनम्) निमित्त अर्थवाले शब्दों (निमित्त, हेतु, कारण, प्रयोजन) के साथ प्रायः सभी विभक्तियाँ होती हैं। किं निमित्तं वसति, केन निमित्तेन, कस्मै निमित्ताय । कस्य हेतोः । कस्मात् कारणात् । केन प्रयोजनेन।

नियम ६९—(षष्ठयतसर्थप्रत्ययेन) उपरि, उपरिष्टात्, पुरः, पुरस्तात्, अधः, अधस्तात्, पश्चात्, अमे, दक्षिणतः, उत्तरतः आदि दिशावाची शब्दों के साथ पष्ठी होती है। गृहस्योपरि पुरः पश्चात् अग्रे वा। ग्रामस्य दक्षिणतः उत्तरतो वा। तरोरघः।

नियम ७०—(षष्ठी शेषे) कृते, समक्षम् , मध्ये, अन्तः, अन्तरं, पारे, आदौ आदि के साथ पष्टी होती है। धनस्य कृते। गुरोः समक्षम्। छात्राणां मध्ये। ग्रहस्य अन्तः अन्तरे वा । गङ्गायाः पारे । रामायणस्यादौ ।

नियम ७१—(एनपा द्वितीया) 'एन' प्रत्ययान्त दिशावाची दक्षिणेन उत्तरेण आदि के साथ पष्ठी और द्वितीया होती हैं। दक्षिणेन ग्रामं ग्रामस्य वा। दक्षिणेन वृक्षवाटिकाम् (वृक्ष-वाटिका के दाहिनी ओर)।

नियम ७२ —(दूरान्तिकार्थैः पष्ठी०) दूर और समीपवाची शब्दों के साथ पष्ठी और पंचमी दोनों होती हैं। ग्रामस्य प्रामाद् वा दूरं समीपं निकटं पार्व्व सकाशं वा।

नियम ७३ — (अधीगर्थदयेशां कर्मणि) स्मरण करना, दया करना और स्वामी होना, इन अर्थवाली धातुओं के साथ कर्म में पष्टी होती है। मातुः स्मरति। रामस्य दयमानः । अयं गात्राणामीष्टे (यह अपने अंगों का स्वामी है) ।

नियम ७४—(यतश्च निर्धारणम्) बहुतों में से एक को छाँटने में, जिसमें से CC-अर्डिश आएं, असम्बर्ध और अर्थ भारति होति हो | gittzer By Siddhanta eGandotti Gyagn Kosha

, अभ्यास ९

संस्कृत वनाओ—(क) (इदम्, विधिलिङ् आ०) १. इसमें जरा भी देरी न करो । २. विना कृत्रिमता के भी यह शरीर सुन्दर है। ३. यह कथा मुझको ही लक्ष्य करती है। ४. इस वन में अगस्य आदि ब्रह्मवेत्ता रहते हैं। ५. न यह मिळा, न वह मिला। ६. इसने धूर्तता नहीं सीखी है। ७. भला इस तरह भी चैन मिले। ८. युद्ध में जाकर पीठ न दिखावे। ९. सदा गुरु की सेवा करे, कप्टों को सहन करे, उन्नति के लिए यत्न करे, ज्ञान से बढ़े, प्रसन्न हो और सुख पावे। (ख) (स्था धातु) १. वह घर में रहता है (स्था)। २. बुद्धिमान् आदमी एक पैर से चलता है और एक पैर से रुका रहता है। ३. पित के कहने में रहना। ४. दुर्योधन सन्देह होने पर कर्ण आदि के पास निर्णयार्थ जाता था। ५. मुनि लोग मुक्ति के लिए यस्न करते हैं (उत्था, आ॰)। ६. वह आसन से उठता है (उत्था, पर॰)। ७. इस गाँव से सौ रुपए लगान मिलता है (उत्था, पर०)। ८. वह सूर्य की पूजा करता है (उपस्था, आ॰)। ९. प्रयाग में यमुना गंगा से मिळतो है। १०. वह रिथकों से मित्रता करता है। ११. यह मार्ग वाराणसी को जाता है और यह प्रयाग को। १२. भिक्षुक धनी के पास जाता है (उपस्था, आ॰)। १३. वह खाने के समय आ जाता है (उपस्था, आ०), पर काम पढ़ने पर दिखाई भी नहीं देता। १४. मैं वाराणसी चार दिन रुकूँगा (अवस्था, आ०), फिर प्रयाग चला जाऊँगा (प्रस्था, आ०)। १५. कृष्ण दिल्ली के लिए चल पड़े (प्रस्था, आ०)। १६. गुरु का वचन मानो (अनुष्ठा, पर०)। १७. भगवान् मारीच क्या कर रहे हैं (अनुष्ठा, पर०) ? १८. आप आज्ञा दें, क्या काम करें ? १९. वैयाकरण शब्द को नित्य मानते हैं (आस्था, आ०)। (ग) (षष्ठी) १. यह किस छात्र की पुस्तक है ? २. राजा का आदमी किसलिए यहाँ आया है ? ३. हरिद्वार में गंगा का जल शीतल, स्वच्छ और मधुर होता है। ४. वह अध्ययन के लिए छात्रावास में रहता है। ५. पेड़ के ऊपर और नीचे बन्दर कूद रहे है। ६. बच्चे मकान के आगे-पीछे, दक्षिण और उत्तर की ओर गेंद खेल रहे हैं। ७. याचक धन के लिए (इ.ते) धनी के सामने हाथ फैलाता है (प्रसारि)। ८. ईश्वर प्राणियों के बाहर और अन्दर है। ९. हे अ्गिन, तुम सब प्राणियों के अन्दर साक्षिरूप में हो। १०. पता नहीं, महाँगा कि जीऊँगा। ११. गंगा के पार मुनि लोग रहते हैं। १२. महाभारत के आदि में यह श्लोक है। १३. गाँव के दक्षिण की ओर वन है। १४. वाटिका के उत्तर की ओर कुछ बातचीत सी सुनाई देती है। १५. पिता के पास से यहाँ आया हूँ। शिश्र माता को स्मरण करता है।

संकेत—(क) १. अक्षमोऽयं कालहरणस्य । २. इदं किलान्याजमनोहरं वपुः । ३. लक्ष्यी-करोति । ४. प्रभृतयः, उद्गीथिवदः । ५. इदं च नास्ति, न परं च लभ्यते । ६. अनिमक्कोऽयं जनः कैतवस्य । ७. यद्येवमिष नाम विश्रमं लभेय । ८. न निवर्तेत । (ख) २. चल्त्येकेन पादेन, तिष्ठति । ३. शासने तिष्ठ भर्तः । ४. संशय्य कर्णादिषु तिष्ठते यः । (आत्मनेपद के नियमों के लिए देखो अभ्यास २९,३०) । ५. मुक्तावुक्तिष्ठन्ते । ६. उत्तिष्ठति । ७. ग्रामान्छतमुक्तिष्ठति । ८. आित्मनुपतिष्ठते । ११. वाराणसीमुपतिष्ठते । १३. भोजनकाले उपतिष्ठते, कार्यकाले तु न लभ्यते । १४. अवस्थास्ये, प्रयागं प्रस्थास्ये । १५. हिर्हिरिप्रस्थमथ प्रतस्थे । १७. किमनुतिष्ठति १८. आज्ञापयतु, को नियोगोऽनुष्ठीयताम् । १९. राब्दं नित्यमातिष्ठन्ते । (ग) ८. वहरन्तरच भूतानाम् । ९. त्वमग्ने सर्वभूतानामन्तरचरिस साक्ष्यन्त । कि. स्थालेक स्थानिक स्था

शब्दकोष - २२५ + २५ = २५०] अ**भ्यास १०**

(व्याकरण)

(क) रथ्यः (घोड़ा), वेला (१. समय, २. किनारा), रसना (जीभ)। (३)। (ख) मुद् (प्रसन्न होना), सह् (सहना), यत् (यत्न करना), वन्द् (प्रणाम करना), भाप (कहना), कूर्द् (कूदना), शिक्ष् (सीखना), कम्प (काँपना), ईह् (चाहना), शुम् (शाभित होना), स्पर्ध (स्पर्ध करना), चेष्ट् (चेष्टा करना), परा + अय्, पलाय् (भागना), युत् (चमकना), वेप् (काँपना), त्रप् (लिज्जित होना), भास् (चमकना), दीक्ष (दीक्षा देना), संस् (गिरना), ध्वंस् (नष्ट होना), अव + लम्ब् (१. सहारा देना, २. सहारा लेना), व्यथ् (दुःखित होना)। (२२)

व्याकरण (अदस्, लृट् आत्मने॰, पष्ठी)

अदस् शब्द के तीनों लिंगों के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० ८८)

२. मुट् और सह् धातुओं के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो धातु० २३, २४)

नियम ७५— (कर्तृकर्मणोः कृति) कृदन्त शब्दों के कर्ता और कर्म में षष्ठी होती है। जिनके अन्त में कृत् प्रत्यय अर्थात् तृच् (तृ), क्तिन् (ति), अच् (अ), घञ् (अ), ल्युट् (अन), ण्बुल् (अकं) आदि हों, उन्हें कृदन्त कहते हैं। जैसे — शिशोः शयनम् । पुस्तकस्य पाठः । शास्त्राणां परिचयः । दुःखस्य नाशः । ग्रन्थस्य प्रणेता । कवेः कृतिः । जनानां पालकः (लोगों का पालक) ।

नियम ७६—(उभयप्राप्तौ कर्मणि) कृदन्त के साथ जहाँ कर्ता और कर्म दोनों हो, वहाँ कर्म में पष्ठी होती है। आश्चयों गवां दोहोऽगोपेन। शब्दानामनुशासनमाचार्येण आचार्यस्य वा (आचार्य के द्वारा शब्दों का शिक्षण)।

नियम ७७ — (क्तस्य च वर्तमाने, अधिकरणवाचिनश्च) वर्तमानार्थक और भावार्थक कप्रत्ययान्त के साथ पश्री हाती है। राज्ञां मतः, सतां मतः। मयूरस्य नृत्तम्। छात्रस्य हसितम् (छात्र का हँसना)।

नियम ७८—(न लोकाव्यय०) इन प्रत्ययों से बने हुए कृदन्त शब्दों के साथ पश्ची नहीं होती: - शतृ, शानच् , उ, उक, क्या, तुमुन् , क, क्तवतु, खल् , तृन्। जैसे — कर्म कुर्वन् कुर्वाणो वा। हिर्रे दिद्धुः। दैत्यान् घातुको हिरः। जगत् सृष्ट्वा। सुखं कर्तुम्। विष्णुनाः हता दैत्याः। हिरणाः ईषत्करः प्रपञ्चः। कामुकः और द्विपत् के साथ षष्ठी होगी। लक्ष्म्याः कामुकः। मुरस्य मुरं वा द्विपन्।

नियम ७९—(कृत्यानां कर्तरि वा) कृत्य प्रत्ययों (तव्य, अनीय, यत्, ण्यत् आदि) के साथ कर्ता में तृतीया और षष्ठी होती हैं। मया मम वा सेव्यो हरिः। न वयमनुप्राह्याः प्रायो देवतानाम् । न वञ्चनीयाः प्रभवोऽन्जीविभिः ।

नियम ८०—(तुल्यार्थैरतुलोपमाभ्यां०) तुल्य अर्थवाले शब्दों के साथ तृतीया और पष्टी होती हैं। तुला और उपमा के साथ पष्टी ही होगी। कृष्णस्य कृष्णेन वा तुल्यः सहशः समो वा (कृष्ण के सहश)।

नियम ८१—(चतुर्थी चाशिष्यायुष्य॰) आशीर्वाद देने में आयुष्यम् , भद्रम् , कुरालम्, सुखम्, हितम् आदि के साथ चतुर्थी और पष्टी होती हैं। कृष्णस्य कृष्णाय वा कुशलं भद्रं वा भूयात् (कृष्ण का भला हो)।

नियम ८२—(व्यवद्वपणोः , दिवस्तदर्थस्य, कृत्वोऽर्थः) इन् स्थानों पर पष्ठी होती है :-व्यवह, पण् और दिव् धातु जब ज्ञा खेलने या क्रय-विक्रय अर्थ में हों और कृत्व CC-०मस्य त्रवेत्वस्थान्। त्रस्तारस्य तस्य स्थानं स्थानं (स्थानं स्थानं स्यानं स्थानं स्यानं स्थानं स्थानं

संस्कृत बनाओ—(क) (अदस्, लृट्) १. सामने इस देवदार के पेड़ को देख रहे हो, इसे शिव ने पुत्रवत् माना है। २. ये घोड़े मृग के वेग को सहन न करते हुए दौड़ रहे हैं। ३. इसकी विद्या जिह्नाग्र पर रहती है। ४. इनकी पढ़ने में प्रवृत्ति है। ५. में स्वामी की चित्तवृत्ति का अनुसरण करूँगा। ६. तुम थोडी देर में अपने घर पहुँच लोगे। ७. पिता इस समाचार को सनकर न जाने क्या विचारेंगे ? ८. जो दुःख सहेगा, यत्न करेगा, गुरु की सेवा करेगा, सत्य बोलेगा, वह सदा सुख पायेगा। ९. जो माता-पिता की वन्दना करेगा, समयानुसार खेलेगा, कूदेगा, वेद को सीखेगा, सवका हित चाहेगा, ज्ञानोपार्जन में स्पर्धा करेगा, सत्कर्म में चेष्टा करेगा, अध्ययन से नहीं वबदाएगा, दुष्कर्म से लिजित होगा, धर्म की दीक्षा लेगा, वह कभी भी न च्युत होगा, न नष्ट होगा और न दुःखी होगा। (ख) (षष्टी) १. यह कालिदास की कृति है। २. शास्त्रों का परिचय बुद्धि को बढ़ाता है। ३. मित्रों का दर्शन अब राम के लिए दु: खद हो गया है। ४. पाणिनि की अष्टाध्यायी की रचना सुन्दर है। ५. त्रुटि करना मनुष्यों का स्वभाव है। ६. इन दोनों पुस्तकों में से एक छे छो। ७. इन बालकों में से एक यहाँ आवे । ८. उसका स्वर्गवास हुए आज दसवाँ महीना है। ९. उसको तप करते हए कई वर्ष हो गए। १०. खभाव से ही सीता राम को प्रिय थी, इसी प्रकार राम सीता को प्राणों से भी विय थे। ११. वह सत्कार मेरे मनोरथ से भी परे की चीज थी। १२. थोड़े के लिए बहुत छोड़ने के इच्छुक तुम मुझे मूर्ख प्रतीत होते हो । १३. ग्वाले के अतिरिक्त अन्य व्यक्ति का गाय को दुहना आश्चर्य की बात है। १४. अनुचरों को चाहिये कि वे स्वामी को धोखा न दें। १५. हम लोग देवताओं के अनुग्रह के योग्य नहीं हैं। १६. मोर का नाचना मन को हरता है। १७. कोयल की आवाज कानों को सुखद होती है। १८. परिश्रम करता हुआ व्यक्ति सुखी रहता है। १९. राम को देखने का इच्छुक यहाँ आया। २०. रावण से द्वेष करनेवाले राम की विजय हो। २१. शिष्य का ग्रुभ हो। २२. राजा मुझे ही मानता है। २३. मनोरथों के लिए कुछ भी अगम्य नहीं है। २४. यह आपके योग्य नहीं है। २५. यह स्नेह के योग्य ही है। २६. वह सौ रुपए की लेन-देन करता है। २७. वह हिमालय की शोभा का अनुकरण करता था। २८. आपको न दीखे हुए बहुत दिन हो गए।

संकेत:—(क) १. अमुं पुरः पदयसि देवदारं, पुत्रीकृतोऽमी वृषभध्वजेन । २. धावन्त्यमी मृगजवाक्षमयेव रथ्याः । ३. अमुष्य विद्या रसनायनर्तकी । ५. चित्तवृत्तिमनुवर्तिष्ये । ६. क्षणात् स्वगृहे वर्तिष्यसे । ७. न जाने कि प्रतिपत्स्यते । ८. रुप्त्यते । ९. वित्तवृत्तिमनुवर्तिष्ये । ६. क्षणात् स्वगृहे वर्तिष्यसे । ए. न जाने कि प्रतिपत्स्यते । ८. रुप्त्यते । ९. वर्ष्त्रव्यते, स्विष्यते, स्विष्यते । ए. रखलनं, धर्मः । ६. गृद्यतामनयोरन्यतरत् । ७. अन्यतमः । ८. अद्य दश्मो मासस्तस्योपरतस्य । ९. कतिपये संवत्सरास्तस्य तपस्तप्यमानस्य । १०. प्रिया तु सीता रामस्य, तथैव रामः सीतायाः प्राणेभ्योऽपि प्रियोऽभवत् । ११. मनोरथानामप्यभूमिः । १२. अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन् , विचारमृढः प्रतिभासि मे त्वम् । १७. कोकिलस्य व्याहृतं कर्णो सुखयति । २२. अहमेव मतो महीपतेः । २३. मनोरथानामगिर्तनं विद्यते । २४. नैतदनुरूपं भवतः । २५. सहशमेवैतत् स्नेहस्य । २६. शतस्य

ब्यवहरति । २७. लक्ष्मीमनुचकार । २८. कापि महती वेला तवादृष्टस्य । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha शब्दकोप-२५० + २५ = २७५] अभ्यास ११

(व्याकरण)

(क) कन्दुकः (गेंद), मयूखः (किरण), व्यसनम् (विपत्ति), स्यन्दनम् (रथ), क्षतम् (चोट)। (५)। (ख) पत् (१. गिरना, २. पड़ना), आपत् (१. आ पड़ना, २. प्रतीत होना), अनुपत् (पीछा करना), उत्पत् (१. उड़ना, २. उटना), निपत् (१. गिरना, २. पड़ना), प्रणिपत् (प्रणाम करना)। नम् (१. प्रणाम करना, २. इकना), उन्नम् (उटना), अवनम् (इकना), अवनम्य (इकाना), प्रणम् (प्रणाम करना)। पच् (पकाना), परिपच् (परिपक होना), विपच् (फिटत होना)। आस् (वैटना)। (१५)। (ग) सद्यः (शीघ्र), मुहुः (बार-बार), अभीक्ष्णम् (१. बार-बार, २. निरन्तर)। (३)। (ग्र) अधीतिन् (विद्वान्), ग्रहीतिन् (सीखनेवाल्ला)। (२)

व्याकरण (युष्मद्, सप्तमी)

१. युष्मद् के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० ८५)

२. पत्, नम्, पच् सोपसर्ग के अथों तथा रूपों को स्मरण करो। (देखो

धातु० १२, १३)

नियम ८३—(आधारोऽधिकरणम्) किसी किया के आधार को अधिकरण कहते हैं, जहाँ पर या जिसमें वह कार्य किया जाता है। आधार तीन प्रकार का है—१. औपश्लेपिक (संयोग-सम्बन्धवाला), २. वैषयिक (विषय में), ३. अभिन्यापक (व्यापक होकर रहना)।

नियम ८४—(सतम्यधिकरणे च) तीनों प्रकार के आधार या अधिकरण में सप्तमी होती है। १. आसने उपविश्वात, स्थाल्यां पचित । २. मोक्षे इच्छाऽस्ति । ३.

सर्वसिन्नातमाऽस्ति (सवमें आत्मा है)।

नियम ८५—(वैषयिकाधारे सप्तमी) 'विषय में, बारे में' तथा समय-बोधक शब्दों में सप्तमी होती है। मोक्षे इच्छास्ति। प्रातःकाले मध्याह्ने सायंकाले दिवसे रात्रौ वा कार्ये करोति। शैशवे, यौवने, वार्धके (बाल्य, यौवन, वृद्धत्व काल में)। आषाढस्य प्रथमदिवसे।

नियम ८६—(क) (क्तस्येन्विषयस्य०) क्त-प्रत्ययान्त के अन्त में इन् प्रत्यय होगा तो उसके कर्म में सप्तमी होगी। अधीती व्याकरणे। गृहीती षट्स्वङ्गेषु। (ख) (साध्वसाधुप्रयोगे च) साधु और असाधु के साथ सप्तमी। साधुः कृष्णो मातरि, असाधुमांतुले। (ग) (निमित्तात् कर्मयोगे) जिस फल के लिए कोई काम किया जाता है, उसमें सप्तमी होगी। चर्मणि द्वीपिनं हन्ति, दन्तयोईन्ति कुञ्जरम्। केशेषु चमरीं हन्ति।

नियम ८७—(आयुक्तकुरालाभ्याम्०, साधुनिपुणाभ्याम्०) संलग्न अर्थवाले शब्दों (व्यापृतः, आयुक्तः, लग्नः, आसक्तः, युक्तः, व्यग्रः, तत्परः आदि) तथा चतुर अर्थवाले शब्दों (कुरालः, निपुणः, साधुः, पदुः, प्रवीणः, दक्षः, चतुरः आदि) के साथ सप्तमी होती है। गृहकर्मणि लग्नः, त्यापृतः, व्यग्री वा। शास्त्रेषु निपुणः प्रवीणः दक्षो वा।

नियम ८८—(यतश्च निर्धारणम्) वहुतों में से एक के छाँटने में, जिसमें से छाँटा जाय, उसमें पृष्ठी और सप्तमी होती हैं। छात्राणां छात्रेषु वा रामः श्रेष्ठः पटुतमो वा।

नियम ८९—(सप्तमीपञ्चम्यो कारकमध्ये) समय और मार्ग का अन्तर बतानेवाले शब्दों में पचमी और सप्तमी होती हैं। अद्य मुक्त्वाऽयं द्यहे द्यहाद् वा भोक्ता। क्रोशे क्रोशाद् वा लक्ष्यं विध्येत् (क्रोस भरके लक्ष्य को बींध देगा)।

नियम ९०—(वैषयिकाधारे सप्तमी) प्रेम, आसक्ति और आदर-सूचक धातुओं और शब्दों (स्निह्, अभिलप्, अनुरज्ञ्, आह, रम्, रितः, स्नेहः, आसक्तः, अनुरक्तः आदि) के साथ सप्तमी होती है। पिता पुत्रे स्निह्मित। रहिस रमते। श्रेयिस रतः। दण्डनीत्यां नात्याहतोऽभत्।

रतः । दण्डनीत्यां नात्याहतोऽभूत् । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संस्कृत बनाओ-(क) (पत्, नम्, पच्) १. आश्रम के वृक्षों पर धूल गिर रही है (पत्)। २. चन्द्रमा थोड़ी सी किरणों के साथ आकाश से गिर रहा है। ३. परवर्म को अपनाकर जीवित रहनेवाला शीघ्र ही जाति से पतित हो जाता है। ४. श्रेष्ठ आदमी पतित होता हुआ भी गेंद की तरह उठ जाता है। ५. यह बात आपके कानों में पड़ी ही होगी। ६. ओह, बड़ी विपत्ति आ पड़ी है। ७. ओह, यह अच्छा नहीं हुआ। ८. संसार में जन्म छेनेवालों पर ऐसी घटनाएँ आती ही हैं। ९. नवयौवन सं कपेले मनवालों को वे ही विषय मधुरतर प्रतीत होते हैं, जिनका वे आस्वादन कर चुके हैं (आपत्) । १०. मृग पीछा करते हुए रथ को बार-बार देखता था । ११. पश्ची आकाश में उड़ते हैं (उत्पत्)। १२. हाथ से पटकी हुई भी गेंद उछलती है। १३. शेर छोटा होने पर भी हाथियों पर टूटता है (निपत्)। १४. वृक्ष से फल भूमि पर गिर रहे हैं (निपत्)। १५. पुत्र पिता को प्रणाम करता है (प्रणिपत्) । १६. ईश्वर को प्रणाम करके कार्य को प्रारम्भ करता हूँ (प्रारम्) । १७. चोट पर ही चोट बार-बार लगती है। १८. आप सबको नमस्कार करता हूँ (नम्)। १९. वादल कभी झुकता है, कभी उठता है। २०. कमजोर सन्धि का इच्छुक होने पर मुके। २१: यादल जल लेने के लिए झुकता है। २२. शत्रुओं का शिर झुका देना। २३. वे देवताओं को प्रणाम करते हैं। २४. चावलों से भात पकाता है। २५. वह विद्वान् परिपक्व-बुद्धि है। २६. उसकी सारी योजनाएँ फल्रित हुईँ। (ख) (सप्तमी) १. वे चटाई पर बैठते हैं। २. वे पतीली में भोजन पकाते हैं। ३. सबमें ब्रह्म है। ४. बचपन में विद्याभ्यास करनेवाले, यौवन में विषयों के इच्छुक, बृद्धावस्था में सुनिवृत्ति-वाले और अन्त में योग से शरीर छोड़नेवाले रघुवंशियों का वर्णन करूँगा। ५. फालान शुक्ला पंचमी को वसन्त-पंचमी का पर्व होता है। ६. उसने दर्शन पढ़ रखे हैं। ७. उसने वेद के छहों अंग सीख लिये हैं। ८. इन्द्र देवों पर सजन है और असुरों पर कर। ९. चर्म के लिए मृग को मारता है, दाँतों के लिए हाथी को मारता है। १०. वह अध्ययन में लगा हुआ है। ११. कुण व्याकरण और साहित्य में निपुण है। १२. मनुष्यों में बुद्धिमान् श्रेष्ठ हैं। १३. आज खाना खाकर यह दो दिन बाद खायेगा। १४. यहाँ बैठकर वह कोसभर दूर निशाना मार सकता है। १५. उसका एकान्त में मन लगता है। १६. उसका दण्डनीति में विश्वास है।

संकेत—(क) १. रेणुः । २. अल्पशेषेर्मयूर्यः । ३. परघर्मेण जीवन् हि सद्यः पतित जातितः । ४. प्रायः कन्दुक्तपातेनोत्पतत्यार्थः पतन्नि । ५. एतद् भवतः श्रुतिविषयमापिततमेव । ६. अहो, महद् व्यसनमापिततम् । ७. अहो, न शोभनमापिततम् । ८. आपतन्ति हि संसारपथमवर्ताणांना- मेते विषयाः । ९. नवयोवनकपावितात्मनस्य तान्येव विषयस्यरूपाण्यास्वाद्यमानानि मधुरतराण्या- पतन्ति मनसः । १०. मुहुरनुपतित स्यन्दने दत्तदृष्टः । १२. पातितोऽपि करायःतैरुत्पतत्येव कन्दुकः । १३. तिहः शिशुरपि निपतित गजेषु । १५. पितरं प्रणिपतित । १६. प्रणिपत्य । १७. क्षते प्रवारा निपतन्त्यभीक्षणम् । १९. उन्नमित नमित च । २०. अशक्तः सन्धिमान् नमेत् । २१. जलमादातु- मवनमित । २२. अवनमय द्विपतां शिरांसि । २३. प्रणमन्ति देवताभ्यः । २४. तण्डुलान् । २६. विपेचिरे । (स) १. कटे आसते । ४. अभ्यस्तिवद्यानाम् , विषयेषिणाम् , मुनिवृत्तीनाम् । तनुत्यजाम् , रघुणामन्वयं वक्ष्ये । ५. पृच्चम्याम् । ६. अधोती दर्शने । ७. गृहोती पर्म्वङ्गेषु, СС-О०गः स्रिक्षाल्भ रेष्ट्रिक्षान्द्विशाल्यां वार्षेत्रः । अ. प्रविश्वरा Gyaan Kosha

शब्दकोष-२७५ + २५ = ३०० अभ्यास १२

(व्याकरण)

(क) सांयात्रिकः (समुद्री व्यापारी), पोतः (पानी का जहाज), उडुपः (छोटी नौका), रक्षिन् (सिपाही), सचेतस् (विद्वान्), अनागस् (निरपराध)। (६)। (ख) तॄ (१. तैरना, २. पार करना), अवतॄ (उतरना), उत्तॄ (१. पार करना, २. उत्तीर्ण होना), वितृ (देना), निस्तृ (पार करना), संतृ (तैरना)। स्मृ (याद करना), संस्मृ (याद करना), संस्मृ (याद करना)। जि (जीतना), विजि (जीतना), पराजि (१. हराना, २. हारना)। िस्नह् (प्रेम करना), विश्वस् (विश्वास करना), आक्षिप् (उल्लंधन करना), गण् (गिनना), मुच् (छोड़ना), श्रद्धा (श्रद्धा करना), उपपट् (ठीक वटना)। (१९)

व्याकरण (अस्मद्, सप्तमी विभक्ति)

१. असाद् शब्द के पृरे रूप सारण करो । (देखो शब्द ० ८६)

२. तु, समृ और जि के विशेष अथों को सारण करो । (देखो धातु० १४, १५)

नियम ९१—(आधारे सप्तमी) इन स्थानों पर सप्तमी होती है—(क) फंकना अर्थ की धातुओं क्षिपू, मुच्, अस् आदि के साथ। मृगे बाणं क्षिपति, मुञ्जति, अस्यति वा। (ख) विश्वास और श्रद्धा अर्थवाही धातुओं और शब्दों (विश्वसिति, विश्वासः, श्रद्धा, निष्ठा, आस्था आदि) के साथ व्यक्ति में । न विश्वसेदविश्वस्ते । ब्रह्मणि श्रद्धधाति, अद्धा निष्ठा वा वर्तते। (ग) 'व्यवहार करना' अर्थ में वृत् और व्यवह आदि के साथ । गुरुषु विनयेन वर्तते । कुरु सखीवृत्ति सपत्नीजने । विश्वस् के साथ द्वितीया भी ।

नियम ९२—(आधारे सप्तमी) इन स्थानों पर सप्तमी होती है:—(क) युज् धातु तथा उससे वने शब्दों के साथ। इमामाश्रमधर्मे नियुङ्क्ते। (ख) 'योग्य' और 'उपयुक्त' आदि अथों में व्यक्ति में । युक्तरूपिमद् त्विय । त्रैहोक्यस्यापि प्रभुत्वं तस्मिन् युज्यते । एते गुणा ब्रह्मण्युपपद्यन्ते । (ग) ग्रहण और प्रहार अर्थवाली धातुओं के साथ । केरोषु गृहीत्वा । न प्रहर्तुमनागिस । (घ) रखना अर्थ में । मन्त्रिणि राज्यभारमारोप्य । सचिवे भारो न्यस्तः। (ङ) अपराध् के साथ षष्ठी और सप्तमी होती हैं। कस्मिन्निप पूजाईं ऽपराद्धा शकुन्तला । सुभगमपराद्धं युवतिषु । अपराद्धोऽस्मि तत्रभवतः कण्वस्य ।

नियम ९३ — (पष्टी चानादरे) अनादर अर्थ में पष्टी और सप्तमी दोनों होती हैं। रुदति रुदतो वा प्रात्राजीत् (रोते हुए पुत्रादि को छोड़कर उसने संन्यास ले लिया)।

नियम ९४—(यस्य च भावेन भावलक्षणम्) एक किया के बाद दूसरी क्रिया होने पर पहली क्रिया में सप्तमी होती है। कर्तृवाच्य में कर्ता और कृदन्त में सप्तमी होगी। कर्मवाच्य में कर्म और कृदन्त में सप्तमी होगी, कर्ता में तृतीया। प्रथम क्रिया में कृदन्त का प्रयोग होना चाहिए। गोषु दुह्यमानासु गतः। रामे वनं गते दशरथो दिवंगतः।

नियम ९५—(यस्य च भावेन॰) (क) 'ज्योंही, इतने ही में, उसी क्षण' इन अर्थों में सप्तमी होती है। ऐसे खलों पर मात्र या एव का प्रयोग होता है। अनवसित्-वचने एव मिर्य (मेरी वात पृरी न हो पाई थी, उसी समय)। प्रविष्टमात्रे एव तत्रभवति (ज्योंही आप आए, त्योंही)। (ख) 'जव' अर्थ में पष्टी और सप्तमी होती हैं। एवं तयोः परस्परं वदतोः (जय वे दोनों वात कर रहे थे)। (ग) 'रहते हुए' अर्थ में सप्तमी। कुतो धर्मिक्रियाविष्नः सतां रक्षितिर् त्विय (तेरे रक्षक रहते हुए)। (घ) 'होने पर' या

संस्कृत वनाओ-(क) (असाद् शब्द) १. वह मुझ पर स्नेह करता है और विश्वास करता है। २. मेरी बात झूठी नहीं हो सकती है। ३. मेरी बात काटकर उसने कहना शुरू किया। ४. यह मुझे कुछ नहीं समझता। (ख) (त, स्मृ, जि धातु) १. वह छोटी नौका से नदी पार करता है (तृ)। २. छात्र नदी में तैर रहे हैं। ३. जल में पत्ता तैर सकता है, न कि पत्थर । ४. धीर आपत्ति को पार करते हैं (तृ) । ५. समुद्र में जहाज के टूटने पर भी समुद्री न्यापारी तैरकर उसे पार करना चाहता है। ६. वह रथ से उतरा (अवतृ)। ७. कृष्ण ने आंकाश से उतरते हुए नारद को देखा। ८. समुद्र को छोड़ कर महानदी और कहाँ उतरती है ? ९. राम परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ (उत्)। १०. वह गंगा पार करके प्रयाग गया। ११. गुरु जिस प्रकार चतुर को विद्या पढ़ाता है, उसी प्रकार मूर्ख को । १२. भगवान् मारीच तुम्हें दर्शन देते हैं । १३. धन से मनुष्य आपत्ति को पार करते हैं (निस्तृ)। १४. मैंने प्रतिज्ञारूपी नदी पार कर ली। १५. ग्रीष्म ऋतु में लोग नदी में तैरते हैं। १६. क्या तुम्हें मधुर जलवाली गोदावरी की याद है ? १७. क्या तुम्हें पित की याद आती है ? १८. उसकी याद करके मुझे शान्ति नहीं है। १९. हे भौरे, तुम उसको कैसे भूल गए ? २०. महाराज की जय हो । २१. आपकी विजय हो । २२. उसने पडवर्ग को जीत लिया । २३. उसकी आँख कमल को भी जीतती है। २४. वह शत्रुओं को हराता है (पराजि)। २५. वह पढाई से हार मानता है (पराजि)। (ग) (सप्तमी) १. इस मृग पर बाण न छोड़ना। २. वह मुगों पर बाण छोड़ता है। ३. अविश्वासी पर विश्वास न करे और विश्वासी पर भी अधिक विद्वास न करे। ४. गुरुओं के साथ विनयपूर्वक व्यवहार करे (वृत्)। ५. तू सपत्नियों के साथ प्रियसखी का व्यवहार करना । ६. राजा ने इसको रक्षा के काम में लगाया है। ७. विचित्रता के रहस्य के लोभी सहृदय इस काव्यमें श्रद्धा करेंगे। ८. सजन विद्वानों के गुणों की श्रद्धा करते हैं । ९. यह तुम्हारे योग्य नहीं है । १०. ये गुण ईश्वर में ठीक घटते हैं। ११. सिपाही ने चोर को बाल पकड़ कर पटक दिया। १२. निरपराधी पर क्यों प्रहार कर रहे हो ? १३. पुत्र पर कुटुम्ब का भार रखकर वह विदेश गया । १४. मैंने गुरु के प्रति अपराध किया है । १५. मेरे घर आने पर नौकर अपने घर गया । १६. रोते हुए पुत्रों को छोड़कर वह संन्यासी हो गया । १७. जब वह पढ़ रहा था, उसी समय उसके पिता यहाँ आए।

संकेत—(क) १. स्निद्यति, विश्वसिति। २. न मे वचनमन्यथाभिवतुमहिति। ३. वचनमािक्षिप्य। ४. न मामयं गणयित। (ख) १. नदीं तरिति। २. नयाम्। ३. पणं तरिष्यित। ५. याते समुद्रेऽपि च पोतभङ्गे, सांयाित्रक्षी वाञ्छिति तर्तुमेव। ६. अवततार। ७. अवतरन्तमम्बरात्। ८. सागरं वर्जिदिता कुत्र वा महानयवतरिति। ९. परीक्षामुदतरत्। १०. उत्तीर्य। ११. वितरिति गुरुः प्राज्ञे विद्यां यथैव तथा जडे। १२. ते दर्शनं वितरिति। १३. निस्तरिति। १४. निस्तीर्णा प्रतिज्ञासिरेत्। १५. निदाये। १६. स्मरिस सुरसनीरां तत्र गोदावरीं वा। १७. किच्चद् भर्तुः स्मरिस। १८. तं संस्मृत्य न मे शान्तिरित्ति। १९. विस्मृतोऽस्येनां कथम्। २१. विजयते भवान्। २२. व्यजेष्ट। २३. विजयते। (त) १. न संनिपात्यः। २. मुञ्चिति। ३. विद्वस्ते नाित विश्वसेत्। ४. गुरुषु। ६. रक्षणे। ७. वैचित्रयरहस्यकुब्धाः श्रद्धां विधास्यन्ति सचेतसोऽत्र। ८. विद्वत्सु गुणान् श्रद्धाति। ११. केशेषु गृहीत्वाऽपातयत्। १२. अनागिसि। १३. न्यस्य। १४. अपराद्धोऽस्मि गुरोः।

१७. पठति तस्मिन । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha शब्दकोप-२०० + २५ = ३२५] अभ्यास १३ (त्याकरण)

(क) नाकः (स्वर्ग), सुरः (देवता), असुरः (राक्षस), अच्युतः (विष्णु), व्यम्बकः (शिव), कृतान्तः (यम), शतकतुः (पुं॰, इन्द्र), कृशानुः (पुं॰, अन्नि), पुष्पधन्वन् (कामदेव), मातिरश्चन् (वायु), मनुष्यधर्मन् (कुवेर), वेधस् (ब्रह्मा), प्रचेतस् (वरुण), सेनानीः (पुं॰, कार्तिकेय), लक्ष्मीः (स्त्री॰, लक्ष्मी), शर्वाणी (स्त्री॰, पार्वती), पौलोमी (स्त्री॰, इन्द्राणी), पविः (पुं॰, वज्र), पीयूषम् (अमृत), एकवास्यम् (एक वात)। (२०)। (ग) एकतः (एक ओर से), एकधा (एक प्रकार से), एककशः (एक करके), एकान्ततः (सर्वथा)। (४)। (घ) एकमितः (एक रायवाले)। (१)

व्याकरण (एक शब्द, एकवचनान्त शब्द, घा, हिट्, स्वरसन्धि)

१. एक शब्द के तीनों लिंगों में रूप स्मरण करो । (देखो शब्द । सं० ८९)

२. ब्रा धातु के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो धातु० सं० १०)

नियम ९६—पात्र, आस्पद, स्थान, पद, भाजन, प्रमाण शब्द जब विधेय के रूप में प्रयुक्त होंगे तो इनमें नपुंसक लिंग एकवचन ही रहेगा। उद्देश्यरूप में होंगे तो अन्य वचन भी होंगे। जैसे—गुणाः पृजास्थानं सन्ति। यूत्रं मम कृपापात्रं स्थ।

नियम ९७—(संख्याया विधार्थे घा) सभी संख्यावाचक शब्दों से 'प्रकार से' अर्थ में 'धा' लगता है। 'प्रकार का' अर्थ में 'विघ', 'गुना' अर्थ में 'गुण' तथा 'बार' अर्थ में 'वारम्' लगता है। जैसे—एकधा, एकविधः, एकगुणः, एकवारम्। द्विधा, द्विविधः, द्विगुणः।

नियम ९८—(इको यणिच) इ ई को य, उ ऊ को च्, ऋ ऋ को र, ल को ल्हो जाता है, यदि वाद में कोई स्वर हो तो। सवर्ण (वैसा ही) स्वर हो तो नहीं। जैसे—इति + अत्र = इत्यत्र । मधु + अरिः = मध्वरिः । धातृ + अंदाः = धात्रंदाः । ल + आकृतिः = लाकृतिः ।

नियम ९९—(एचोऽयवायावः) ए को अय्, ओ को अव्, ऐ को आय्, औ को आव् हो जाता है, बाद में कोई स्वर हो तो। (पदान्त ए या ओ के बाद अ होगा तो नहीं)। जैसे—हरे + ए = हरये। विष्णो + ए = विष्णवे। नै + अकः = नायकः। पा + अकः = पावकः। परन्तु रामों + अयम् = रामोऽयम्।

नियम १००—(वान्तो यि प्रत्यये) ओ को अव् , औ को आव् हो जाता है, वाद में यकारादि प्रत्यय हो तो । जैसे—गो + यम् = गव्यम । नो + यम् = नाव्यम् । यृति वाद में होने पर गो के ओ को अव् होता है । गो + यृतिः = गव्यृतिः ।

नियम १०१ — (आद्गुणः) अ या आ के वाद (१) इ या ई को ए, (२) उ या ऊ को ओ, (३) ऋ या ऋ की अर, (४) ल को अल् होता है। जैसे—रमा + ईशः = रमेशः। पर + उपकारः = परोपकारः। महा + ऋषि = सहिष्ः। तव + लकारः = तवस्कारः। सूचना — दोनों वर्णों के स्थान पर एक आदेश होगा।

नियम १०२—(बृद्धिरेचि) अया आ के बाद (१) ए या ऐ को ऐ, (२) ओ या आ को औ होता है। तदा + एकः = तदेकः। राज + ऐस्वर्यम् = राजैस्वर्यम्। जल + ओवः = जलावः। देव + औदार्यम् + देवौदार्यम्। यह भी एकादेश है।

नियम १०३—(एङ: पदान्तादति) पद के अन्तिम ए या ओ के बाद अ हो तो cc-ठ. Dr. पुरस्ता (ए न्या असे हे की जाता है के ब्राह्म के अन्तिम ए या ओ के बाद अ हो तो

संस्कृत बनाओ-(क) (एक शब्द) १. राजा या संन्यासी एक को मित्र बनावे । २. एक निवासस्थान बनावे, नगर या वन में । ३. बाह्यविषयों से निवृत्त और एकाग्र-चित्त मनुष्य तत्त्व को देख पाता है। ४. दो चिक्तों के एक होने पर क्या असम्भव हो सकता है ? ५. गुण-समूह में एक दोष उसी प्रकार छिप जाता है, जैसे चन्द्रमा की किरणों में उसका कलंक। (ख) (एक, एकवचनान्त शब्द) १. एक वन में एक होर रहता था। २. इस स्त्री के दो बच्चे हैं, एक लड़का और एक लड़की। ३. एक पट्ने में चतुर है, दूसरी गाने में दक्ष है। ४. एक वालक को पुस्तक दो और एक लड़की को फूल दो। ५. एक बालक एक बालिका से वात कर रहा है। ६. युद्धभूमि में एक ओर से एक सेना आई और दूसरी ओर से दूसरी सेना आई। ७. कक्षा से एक-एक करके सब छात्र चले गये। ८. मैं इस प्रश्न को एक प्रकार से हल कर सकता हुँ, परन्तु अध्यापक इसे दो प्रकार से हल कर सकता है। ९. जनता की एक राय थी, उन्होंने राजा के सम्मुख एक बात कही। १०. किसको सदा सुख मिला है और किसको सदा दःख ? ११. कुछ लोग ऐसा मानते हैं । १२. गुण पूजा के स्थान हैं । १३. तुम कपा के पात्र हो। १४. आप इस विषय में प्रमाण हैं। (ग) (देववर्ग) १. देवता स्वर्ग में रहते हैं। २. देवों और असुरों का युद्ध हुआ। ३. इन्द्र ने वज्र से असुरों को नष्ट किया। ४. देवता अमृत पीकर अमर हो गये। ५. इन्द्र ने इन्द्राणी को, शिव ने पार्वती को और विष्णु ने लक्ष्मी को पत्नी के रूप में स्वीकार किया। ६. कुबेर धनाधि-पति हैं, उसकी नगरी अलका है और उसका विमान पुष्पक है। ७. विष्णु का शंख पांचजन्य, चक्र सुदर्शन, गदा कौमोदकी, खड्ग नन्दक और मणि कौस्तुभ हैं। ८. इन्द्र की नगरी अमरावती, घोडा उच्चै:श्रवाः, हाथी ऐरावत, सार्थि मातलि, उपवन नन्दन और पुत्र जयन्त हैं। ९. ब्रह्मा सृष्टि-कर्ता है। १०. वरुण जलपति है। ११. यम जीवों के प्राणों को हरता है। १२. अग्नि वन को जलाती है। १३. वायु अग्नि का मित्र होकर उसे बढ़ाता है। १४. कामदेव दम्पती में स्नेह का संचार करता है। १५. बालकों ने फुल सुँघा। १६. मैं फल सुँघूँगा। (घ) (लिट् का प्रयोग करो) १. सभासद अपने स्थानों को गये। २. वह कहानी समाप्त हुई। ३. राम के सारे प्रयत्न सफल हुए और देवदत्त के विफल। ४. उसकी लड़की का नाम उमा पड़ा। ५. वसुदेव का पुत्र कृष्ण नाम से संसार में प्रसिद्ध हुआ। ६. पार्वती हिमालय की चोटी पर गई। ७. स्वायम्भुव मरीचि से कश्यप हुए। ८. पार्वती ने हृदय से अपने रूप की निन्दा की, क्यों कि मदन के दाह के कारण वह रूप से शिव को नहीं जीत सकती थी।

संकेत—(क) १. एकं मित्रं भूपतिर्वा यतिर्वा। २. एको वासः पत्तने वा वने वा। ३. एकामो हि बहिवृत्तिनिवृत्तरतत्त्वमीक्षते। ४. एकचित्ते द्वयोरेव किमसाध्यं भवेदिह । ५. एको हि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः । (ख) २. अपत्यद्वयम् । ३. गाने । ६. अपरतः । ८. साधितुं शक्नोमि । ९. एकवाक्यं विवतुः । १०. कस्यैकान्तं सुखमुपनतं दुःखमेकान्ततो वा । ११. एके एवं मन्यन्ते । (ग) २. युयुधिरे । ३. जघान । ४. वभूवः । ५. स्वीचकुः । (घ) १. प्रतिजन्मः । २. विच्छेदमाप स कथाप्रवन्धः । ३. सफलतां ययुः । ४. उमाख्यां जगाम । ५. भुवि

शब्दकोष-३२५ + २५ = ३५०] अभ्यास १४

(व्याकरण)

(क) पाठशाला (पाठशाला), विद्यालयः (स्कूल), महाविद्यालयः (कालेज), विश्वविद्याल्यः (यूनिवसिटी), अध्यापकः (अध्यापक), प्राध्यापकः (प्रोफेसर), आचार्यः (प्रिन्सिपल), कुलपितः (पुं॰, वाइस-चान्सलर), कुलाधिपितः (पुं॰, चान्सलर), प्रस्तोतृ (रिजस्ट्रार), अन्तेवासिन् (शिष्य), अध्येतृ (छात्र), अध्येत्री (स्त्री॰, छात्रा), सतीर्थ्यः (सहाध्यायी, कक्षा का साथी), विद्यालय-निरीक्षकः (स्कूल-इन्स्पेक्टर), उप-शिक्षासंचा-लकः (एडिशनल डाइरेक्टर, A. D. E.), शिक्षा संचालकः (डाइरेक्टर, D. E.), करणिकः (क्लर्क), प्रधानकरणिकः (हैड क्लर्क), द्विजातिः (पु०, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य), द्विजिह्नः (१. साँप, २. चुगुलखोर), द्विपाद् (मनुष्य)। (२३)। (ग) द्विधा (दो प्रकार से)। (१)। (घ) द्वित्राः (दो तीन)। (१)।

व्याकरण (द्वि शब्द, द्विचनान्त शब्द, कृष्, वस्, लिट्, स्वरसिध) १. द्वि शब्द के तीनों लिंगों में रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० सं० ९०)

२. कृप् और वस् धातु के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० १७, १८)

नियम १०४-द्वि और उभ शब्द सदा द्विवचन में ही आते हैं। उभय (दोनों) शब्द तीनों वचनों में आता है। (उम और उभय के रूप तीनों लिंगों में सर्ववत् होंगे)।

नियम १०५—(क) दम्पती, पितरौ, अश्विनौ, इनके रूप द्विचचन में ही चलते हैं। इनके साथ किया द्विचन में आती है। दम्पती, पितरौ, अधिनौ वा गच्छतः। (ख) द्वय, युगल, युग, द्वन्द्व, ये चारों 'दो' अर्थ के बोधक हैं। ये शब्द के अन्त में जुड़ते हैं और नपुंसक लिंग एकवचन होते हैं। इनके साथ किया एक० में रहती है। जैसे—छात्रद्वयं, छात्रयुगलं, छात्रयुगं (छात्रद्वयी वा) पुस्तकानि पठित । (ग) हस्तौ, नेत्रे, पादौ, कर्णों आदि द्विवचन में ही प्रयुक्त होते हैं।

नियम १०६—(एत्येधत्यृट्सु) अ के बाद एकारांदि इ और एध् धातु या ऊठ् (ऊ) हो तो दोनों की वृद्धि होती है। अ + ए = ऐ, अ + ऊ = औ। उप + एति = उपैति । उप + एधते = उपैधते । विश्व + ऊहः = विश्वीहः ।

नियम १०७—(एङ पररूपम्) उपसर्ग के अ के बाद धातु का ए या ओ हो तो वहाँ ए या ओ ही रहता है। प्र + एजते = प्रेजते। उप + ओपति = उपीपति।

नियम १०८—(शकन्ध्वादिषु पररूपं वाच्यम्) शकन्धु आदि में टि (अन्तिम स्वरसहित अंश) को पररूप होता है। शक + अन्धुः = शकन्धुः। मनस् + ईषा = मनीषा।

नियम १०९—(ओमाङोश्च) अ के बाद ओम् या आङ् (आ) हो तो पररूप अर्थात् ओम् या आ रहता है। शिवाय + ओनमः = शिवायोनमः। शिव + एहि = शिवेहि।

नियम ११०—(अकः सवर्णे दीर्घः) (१) अ या आ + अ या आ = आ, (२) इया ई+इया ई=ई, (३) उया ऊ+उया ऊ=ऊ, (४) ऋ+ऋ= ऋ। विद्या + आलयः = विद्यालयः। गिरि + ईशः = गिरीशः। गुरु + उपदेशः = गुरूपदेशः । होतृ + ऋकारः = होतृकारः ।

नियम १११—(इदूदेद्द्विचचनं प्रगृह्मम्) द्विचचन के ई, ऊ और ए के साथ कोई सन्धि नहीं होती। हरी + एतौ = हरी एतौ। विष्णू इमौ। गङ्गे अमू। पचेते इमौ।

नियम ११२—(अदसो मात्) अदस् के म् के बाद् ई या ऊ होंगे तो उनके CC-खाअ कोई किन्मानहीं होगील अपिकारिक केंद्रिक किन्मानहीं होगील अपिकारिक किन्मान किन्न के बाद् ई या ऊ होंगे तो उनके CC-खाअ को किन्मान किन्न के बाद् ई या ऊ होंगे तो उनके CC-खाअ को किन्मान किन्न के बाद् ई या ऊ होंगे तो उनके CC-खाअ को किन्मान किन्न के बाद ई या ऊ होंगे तो उनके CC-खाअ को किन्न के बाद ई या ऊ होंगे तो उनके CC-खाअ को किन्न के बाद ई या ऊ होंगे तो उनके CC-खाअ को किन्न के बाद ई या ऊ होंगे तो उनके CC-खाअ को किन्न के बाद ई या ऊ होंगे तो उनके CC-खाअ को किन्न के बाद ई या ऊ होंगे तो उनके CC-खाअ को किन्न के बाद ई या ऊ होंगे तो उनके CC-खाअ को किन्न के बाद ई या ऊ होंगे तो उनके CC-खाअ को किन्न के बाद ई या ऊ होंगे तो उनके CC-खाअ किन्न के बाद के किन्न के किन्न के बाद के बाद के किन्न के किन्न के बाद के किन्न के किन्न के बाद के किन्न के बाद के किन्न के किन्

संस्कृत बनाओ—(क) (द्वि शब्द) १. फूल के गुच्छे की तरह मनिस्वयों की दो गित होती हैं, या तो सबके सिर पर रहेंगे या वन में ही झड़ जायेंगे। २. व्यास का कथन है कि इन दो को गले में भारी शिला बाँधकर जल में फेंक देना चाहिए, धनी जो दान न दे और निर्धन जो तपस्वी न हो । ३. ये दोनों पुरुष शिर-दर्द करनेवाले होते हैं, गृहस्थी निकम्मा हो और संन्यासी सपत्नीक हो। ४. ये दोनों कभी सुखी नहीं होते, निर्धन सहस्वाकांक्षी और दिस्द्र होकर क्रोधी। ५. शत्रु मिलने पर जलाता है, मित्र वियोग के समय । दोनों ही दुःखदायी हैं, रातुः मित्र में क्या अन्तर है ? ६. शिव से मिलने की इच्छा से दो चीजें शोक-योग्य हो गई हैं, चन्द्रमा की कान्तिमयी कला और संसार के नेत्र की कौमुदी पार्वती । ७. राम एक वार ही कहता है, दुवारा नहीं । ८. मैं जगत् के माता-पिता शिव-पार्वती को नमस्कार करता हूँ। ९. दम्पती सुख से बढ़ रहे हैं। १०. अश्विनीकुमार ध्यान दें। ११. अपने हाथ, पैर, मुँह, आँख, कान घोओ। १२. दो बाह्मण दो प्रकार से दो मन्त्रों को पढ़ते हैं। १३. दो-तीन चुगळखोर इस कक्षा में हैं। (ख) (कृष्, वस्) १. कृषक हल से खेत जोतता है। २. शेर ने बलात् गाय को खींच लिया। ३. सीधे जुते खेत को उल्टा जोतता है। ४. बलवान् इन्द्रिय-समूह विद्वान् को भी अपनी ओर खींच लेता है। ५. वह दो वर्ष वन में रहा। ६. सम्पत्ति और कीर्ति चतुर में रहती हैं, आलक्षी में नहीं। ७. गुण प्रेम में रहते हैं, वस्तु में नहीं। (ग) (लिट्का प्रयोग करो) १. पार्वती मन की बात न कह सकी। २. पार्वती न चल सकी, न रुक सकी । ३. शिव ने उसको सहारा दिया । ४. रानी ने आँखें वन्द कर लीं। ५. वह इस नाम से प्रसिद्ध हुआ। ६. पार्वती ने वल्कल बाँधा। ७. मृग उस पर विइवास करते थे। ८. वह वन पवित्र हो गया। ९. उसने कठोर तप करना प्रारम्भ किया। १०. वह गेंद खेळने से थक जाती थी। ११. उसके मुख ने कमल की शोभा धारण की। १२. एक तपस्वी तपोवन में आया। १३. उसने कहना शुरू किया । १४. जल की बूँद भूमि पर पहुँचीं। (घ) (विद्यालयवर्ग) १. अध्यापक, प्रोफ्सर और आचार्य अपने शिष्यों और शिष्याओं को प्रेम से पढ़ाते हैं। २. कुछ छात्र और छात्राएँ पाटशाला में पढ़ते हैं, कुछ स्कूल में, कुछ कालेज में और कुछ युनिवर्सिटी में। ३. रजिस्ट्रार परीक्षाओं का टाइम टेबुल बनाता है और परीक्षाओं का फल घोषित करता है। ४. इन्स्पेक्टर स्कूलों और कालेजों का निरीक्षण करते हैं। ५. हेडक्लर्क टाइप-राइटर से टाइप कर रहा है।

संकेत—(क) १. कुसुमस्तवकस्येव दे गती विशीर्यन्ते। २. द्दां व्यव्या क्षेप्यो, धनिनं चाप्रदातारम्। ३. शिरःशूलकरी, निरारम्मः, सपरिम्रहः। ४. यश्चाधनः कामयते, यश्च कुंप्यत्यनीश्वरः। ५. संयोमे ! ६. समागमप्रार्थनया द्वय शोचनीयतां गतम् । नेत्रश्रीमुरी । ७. द्विन्निभाषते । ८. पितरौ, वन्दे । ९. सुखमेधेते । १०. दत्ताम् । ११. हस्तौ, प्रक्षालय । १२. द्विजातिद्वयम्। (ख) १. क्षेत्रं कर्षति। २. प्रसद्या गां चक्रषे। १. अनुलोमकृष्टं प्रतिलोमं। ४. क्ष्मिति। ५. वन्मध्यवास। ६. नालसे। ७. प्रेम्णि। (ग) १. मनोगतं सा न शशाक शंसितुम्। २. न यथो न तस्थो। ३. समाललम्बे। ४. निमिमील। ५. पप्रथे। ६. ववन्थ। ७. विश्रश्वसुः । ८. वभूव । ९. तपश्चरितुं प्रचक्रमे । १०. क्लमं ययौ । ११. कमलश्रियं दधौ । १२. तपश्चरितुं प्रचक्रमे । १४. भुवं प्रपेदिरे । (घ) १. अध्यापयन्ति । २. कितपये । СС-६. सिमञ्जूक्षिक्षिण्याम् दिक्षीक्षिक्षकृति व्हकिविक्षं(ÇSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शब्दकोष-३५० + २५ = ३७५] अभ्यास १५

(व्याक्रण)

(क) कल्मः (कल्म), लेखनी (होल्डर), धारालेखनी (स्नी॰, पाउण्टेन पेन), त्लिका (पेन्सल), मसीत्लिका (डॉट पेन), किटनी (स्नी॰, चाक), लेखनीमुखम् (निय), पिट्टका (पही), अश्मपिट्टका (रुट), कागदः (कागज), कागदः दस्तकः (दस्ता), कागदः रीमकः (कागज का रीम), संचिका (कापी), पिड्डका (रिजस्टर), पत्रसंचयनी (स्त्री॰, पाइल), प्रावरणम् (जिल्द), वेष्टनम् (यस्ता), श्यामफलकः (ब्लेकवोर्ड), मार्जकः (इस्टर), मसीशोषः (ब्लाटिंग पेपर), धर्षकः (रबड़), पाठ्यपुस्तकम् (पाठ्यपुस्तक)। (२२)। (ख) साध् (हल करना)। (१)। (ग) कित (कितने), रुचिरम् (सुन्दर)। (२)

ट्याकरण (त्रिशब्द, नित्य बहु॰ शब्द, त्यज्, छङ्, व्यंजन सन्धि)

१. त्रि शब्द के तीनों लिंगों में रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० सं० ९१)

२. त्यज् धातु के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो धातु० १९)

नियम ११३—(क) दार, अक्षत, लाज (लाजा), असु, प्राण, इनके रूप पुंलिंग में और बहुवचन में ही चलते हैं। (ख) अप्, अप्सरस्, वर्षा, सिकता, समा, सुमनस्, इनके रूप स्त्रीलिंग में और बहुवचन में ही चलते हैं। (अप्सरस्, वर्षा, समा,सुमनस् इनका कहीं-कहीं एकवचन में भी प्रयोग मिलता है)। दाराः (स्त्री), अक्षताः (अक्षत चावल), लाजाः (खील), असवः (प्राण), प्राणाः (प्राण), आपः (जल), अप्सरसः (अप्सरा), वर्षाः (वर्षा), सिकताः (रेत), समाः (वर्ष), सुमनसः (फूल)।

नियम ११४ — त्रि से अष्टादशन् (३ से १८) तक के सारे शब्द तथा कित शब्द सदा बहुवचन में ही आते हैं। एक० = एकवचन, द्वि० = द्विवचन, बहु० = बहुवचन।

नियम ११५—(क) (आदरार्थे बहुवचनम्) आदर प्रकट करने में एक के लिए भी बहु॰ हो जाता है। गुरवः पूज्याः। (ख) (अस्मदो द्वयोश्च) अस्मद् शब्द के एक॰ और दि॰ (अहम्, आवाम्) के स्थान पर बहुवचन (वयम्) का प्रयोग होता है, यदि वक्ता विशिष्ट व्यक्ति हो तो । वयं ब्रूमः। (ग) (जात्याख्यायाम्०) जातिवाचक शब्दों में एक॰ और बहु॰ दोनों होते हैं। ब्राह्मणः पूज्यः, ब्राह्मणः पूज्याः। (घ) देशवाचक शब्दों में बहु॰ का प्रयोग होता है। 'नगर' या 'देश' अन्त में होने पर एक॰ होगा। अहम् अङ्गान् बङ्गान् कलिङ्गान् विदर्भान् गौडान् वा अगच्छम्। पाटलिपुत्रम् अङ्गदेशं वा अगच्छम्। (ङ) वंश का बोध कराने में बहु॰। कुरूणाम्, रघूणाम्।

नियम ११६—(स्तोः रचुना रचुः) स्या तवर्ग से पहले या बाद में श्या चवर्ग कोई भी हो तो स् और तवर्ग को क्रमशः श् और चवर्ग हो जाता है। स्को श्, त्को च्, द्को ज्, न्को अ्होगा। रामश्च। सचित्। सजनः।

नियम ११७—(एटुना ष्टुः) स्या तवर्ग से पहले या बाद में ष्या टवर्ग कोई भी हो तो स् और तवर्ग को क्रमशः ष् और टवर्ग होता है। स् को ष्, त् को ट्, द् को ड्, न् को ण् होगा। इष्+ तः = इष्टः। उड्डीनः। विष्णुः।

नियम ११८—(झलां जशोऽन्ते) झल् (वर्ग के १, २, ३, ४, ऊष्म) को जश् (३ अर्थात् अपने वर्ग का तृतीय अक्षर) होता है, झल् पद के अन्तिम अक्षर हों तो। जगत् + ईशः = जगदीशः। उद्देश्यम्। अच् + अन्तः = अजन्तः।

नियम ११९—(झलां जश् झिश) झल् को जश् होता है, बाद में झश् (वर्ग के ३, ४) हों तो। बुध् + धिः = बुद्धिः। क्षुभ् + धः = धुब्धः। दध् + धः = दग्धः। बुद्धिः। ССशुद्धिः। हिन्निव्हिः। Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संस्कृत वनाओ :-(क) (त्रिशब्द, बहुवचनान्त शब्द) १. दान, भोग और नाश ये धन की तीन गतियाँ होती हैं, जो न देता है और न भोगता है, उसकी तीसरी गति होती है। २. तीन अग्नियाँ हैं, तीन वेद हैं, तीन देव हैं, तीन गुण हैं। तीन दण्डी के प्रन्थ हैं और वे तीनों लोकों में प्रतिद्ध हैं। ३. त्रैलोक्य में धर्म दीपक के तुल्य है। ४. तीन प्रकार के पुरुष हैं, उत्तम, मध्यम और अधम। उनको उसी प्रकार तीन प्रकार के कामों में लगावे। ५. वृक्ष और पर्वत में क्या अन्तर रहेगा, यदि वायु चलने पर दोनों ही चखल हो जाएँ ? ६. तीन ही लोक हैं, तीन ही आश्रम हैं। ७. तीन प्रियाओं से वह राजा शोभित हुआ। ८. तीन दिन मेरे आने की प्रतीक्षा करना। ९. सीता राम की स्त्री थीं। १०. परस्त्री को न देखे। ११. अक्षत और खील यहाँ लाओ । १२. वर्षा में रेत पर जल शोभित होता है। १३. इन फूलों को देखो। दशर्थ ने प्राणों को छोड़ा। १५ गुरुजी मेरे घर पधारे। १६. हम कहते हैं कि सत्यभाषण से ही तुम्हारा उद्धार होगा। १७. मैं कुरुवंशियों और रघुवंशियों के वंश का वर्णन करूँगा। १८. वह भारत-दर्शन के लिए अंग, बंग, कलिंग, विदर्भ और पांचाल को गया। १९. इस कक्षा में कितने विद्यार्थी हैं ? २० इस कक्षा में सोलह छात्र हैं। (त्यज् धातु) २१. यति गृह को छोड़ता है। २२. घोड़े के मार्ग को छोड़ दो। २३. राम ने सीता को छोड़ दिया। २४. ऋषि लोग योग से शरीर को छोडेंगे। २५. राम ने रावण पर बाण छोड़ा। २६. धर्म की मर्यादा को क्लेश की दशा में होकर भी न छोड़े। २७. मानी लोग हर्ष से अपने प्राण और सुख छोड़ देते हैं, पर न माँगने के बत को नहीं छोड़ते। (ख) (लुङ् लकार) १. दुःख मत करो। २. कुत्ते से मत डरो। ३. शोक न करो। ४. कुकर्म मत करो। ५. स्वार्थपरायण मत हो। ६. अपना उत्साह मत छोड़ो। ७. माँ ने बच्चे को एक स्लेट, एक पेन्सिल, एक कापी और एक चाके दी। ८. बच्चे ने स्लेट पर चाक से लेख लिखा, पाठ पढ़ा और होल्डर से कापी पर मुलेख लिखा। ९. राम ने अपना फाउण्टेनपेन पाँच रूपये में मुझे बेचा और मैंने उससे खरीदा। (ग) (लेखनसामग्री) १. डॉट पेन में स्याही भरने की आवश्यकता नहीं होती। २. में दुकान से एक रीम और चार दस्ते कागज लाया। उसके साथ ही एक रजिस्टर, एक फाइल, एक निय और एक रवड़ लाया। ३. यदि कापी पर स्याही गिर जाए तो ब्लाटिंग पेपर या चाक से सुखा हो। ४. वह अपनी पाठ्यपुस्तक पढ़ता है और गणित के प्रश्नों को इल करता है। ५. डस्टर से ब्लैकबोर्ड को पोंछो।

संकेतः—(क) १. तिस्रो गतयः, भुङ्क्ते, तृतीया। २. दण्डिप्रबन्धाः, विश्रुताः। ३. दीपको धर्मः। ४. त्रिविधाः, त्रिविधेषु, नियोजयेत्। ५. दूमसानुमतोः यदि वायौ दितयेऽपि ते चलाः। ७. तिस्प्तिः, बभौ। ८. प्रतिक्षेथाः। ९. दाराः। १०. परदारान्। ११. अक्षतान्, लाजान्।१२. तिकतासु, आपः। १३. इमाः सुमनसः।१४. अस्न्, प्राणान् तत्याज। १७. कुरूणां, रघूणां चान्वयं वक्ष्ये। २५. अत्याक्षीत्। २६. अपि क्लेशदशां श्रितः। २७. त्यजन्त्यस्न् शर्मं च मानिनो वरं, त्यजन्ति न त्वेकमयाचितवतम्। (ख) १. विषादं मा गाः। २. श्रुनो मा भैषाः। ३. श्रुचो वशं मा गमः। ४. मा कार्षाः। ५. मा भूः। ६. उत्साहभङ्गं मा कृथाः। ७. अदात्। ८. अलेखीत्, अपठीत्। ९. महां रूप्यक्षपञ्चकेन व्यकेष्ट, अकैषम्। (ग) १. मसीपूरणस्य। २. आपणात्, तत्सार्थमेव। ३. प्रतिक्रिक्षेतः एसिविकेष्टाति अस्ति स्वाधिति विद्यामिति विद्यानिति होते। उत्साहमेवित्। १ प्रतिकृतिस्ति होते। उत्साहमेवितः होत्रिस्ति होति स्वाधिता विद्यानिति होत्रीस्ति होते। होत्रीस्ति होत्रीसिति होत्यीसिति होत्रीसिति होत्यासिति होत्यासिति होत्रीसिति होत्यासिति होति होत्यासिति होत्यासिति होत्यासिति होत्यासिति होत्यासिति होत्यास

शब्दकोष-३७५ + २५ = ४००] अभ्यास १६

(व्याकरण)

(क) काष्ठा (दिशा), प्राची (स्नी॰, पूर्व), प्रतीची (स्नी॰, पश्चिम), उदीची (स्नी॰, उत्तर), दक्षिणा (दक्षिण), घटिका (घड़ी), वेला (समय), होरा (घण्टा), कला (मिनट), विकला (सेकण्ड), वादनम् (बजे), पूर्वाह्नः (दो पहर से पहले का समय, a.m.) पराह्नः (दोपहर से बाद का समय, p. m.), प्रत्यूषः (प्रातः), मध्याह्नः (दोपहर), अपराह्नः (तीसरा पहर), प्रदोषः (सूर्यास्त समय), दिवसः (दिन), विभावरी (स्नी॰, रात), निश्चीथः (आधीरात), निदाधः (ग्री॰म ऋतु), प्रावृष् (वर्षाकाल)। (२२)। (ग) दिवा (दिन में), नक्तम् (रात में), रात्रिन्दिवम् (दिन-रात)। (३)

व्याकरण (चतुर् शब्द, याच्, छङ्, व्यञ्जन सन्धि)

१. चतुर् शब्द के तीनों लिंगों में रूप स्मरण करो । (देखो शब्द सं० ९२) २. याचु धातु के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो धातु० २९)

नियम १२०—(यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा) पदान्त यर् (ह् के अतिरिक्त सभी व्यञ्जन) के बाद अनुनासिक (वर्ग का पंचम अक्षर) हो तो यर् को अपने वर्ग का पंचम अक्षर हो जायगा। यह नियम ऐच्छिक है। तत्+ न = तन्न। तद्+ मयम् = तन्मयम्। वाक् + मयम् = वाङ्मयम्। सद् + मितः = सन्मितः।

नियम १२१—(तोलि) तवर्ग के बाद ल हो तो तवर्ग को भी ल् हो जाता है। अर्थात् (१) त् या द्+ल=हल, (२) न्+ल=ँहल। तत्+ लीनः = तह्लीनः। विद्वान् + लिखति = विद्वाँहिलखति।

नियम १२२—(उदः स्थास्तम्भोः पूर्वस्य) उद् के बाद स्था या स्तम्भ् धातु हो तो उसे पूर्वसवर्ण होता है। उद् + स्थानम् = उत्थानम्। उद् + स्तम्भनम् = उत्तम्भनम्।

नियम १२३—(झयो होऽन्यतरस्याम्) झय् (वर्ग के १,२,३,४) के बाद ह हो तो उसे विकल्प से पूर्वसवर्ण होता है । वाग् + हरिः = वाग्धरिः । तद् + हितः = तद्धितः ।

नियम १२४—(शक्छोऽटि) पदान्त झय् (वर्ग के १, २, ३, ४)के बाद श् हो तो उसे छ हो जाता है, यदि उस श् के बाद अट् (स्वर,ह,य,व,र) हो तो। नियम ११६ से छ के पूर्ववर्ती त् को च्। तत् + शिवः = तिच्छिवः। सत् + शिलः = सच्छीलः।

नियम १२ •— (खिर च) झलों (१, २, ३, ४) को चर् (१, उसी वर्ग के प्रथम अक्षर) होते हैं; बाद में खर् (१, २, श प स) हों तो । सद् + कारः = सत्कारः । तद् + परः = तत्परः । सद् + पुत्रः = सत्पुत्रः ।

नियम १२६—(मोऽनुरवारः) पदान्त म् के बाद हल् (व्यञ्जन) हो तो म् को अनुस्वार () हो जाता है। बाद से स्वर हो तो नहीं। कार्यम् + कुरु = कार्य कुरु। सत्यं वद। धर्म चर।

नियम १२९—(नश्चापदान्तस्य झिल) अपदान्त न् म् को अनुस्वार हो जाता है, बाद में झल् (१,२,३,४, ऊष्म) हो तो । यशान् + सि = यशांसि । पुम् + सु = पुंसु ।

नियम १२८—(अनुस्वारस्य यि परसवर्णः अनुस्वार के बाद यय् (ऊष्म को छोड़कर सभी व्यञ्जन) हो तो उसे परसवर्ण (अगले वर्ण का पंचम अक्षर) होता है। शां + तः = शान्तः। अं + कः = अङ्कः।

नियम १२९—(ङमो हस्वादिच ङमुण्नित्यम्) हस्व स्वर के बाद ङ् ण् न् हों और बाद में कोई स्वर हो तो बीच में एक ङ्ण् न् और लग जाता है। प्रत्यङ्ङात्मा। CC-O. DERamber निष्मकारिओं का सक्कालुक्क के अक्कालुक्क D\$). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संस्कृत बनाओ:—(क) (चतुर् शब्द) १. हम चार भाई ऋत्विज् हैं, युधिष्ठिर यजमान हैं और भगवान् कृष्ण कर्मोपदेष्टा हैं। २. चार अवस्थाएँ हैं - बाल्य, कौमार, यौवन और वार्धक। ३. ब्रह्मरूपी वृषभ के चार सींग और तीन पैर हैं। ४. होप चार महीने जैसे भी हो आँख बन्द करके विताओ । ५. आय के चौथे अंश से खर्च चलाचे। अधिक तेलवाला दीपक चिरकाल तक सुख देखता है। ६. गुरु-सेवा से विद्या मिलती है अथवा प्रचुर धन से या विद्या से विद्या प्राप्त होती है, अन्य चौथे किसी उपाय से नहीं। ७. हे युधिष्ठिर, मेरे चार प्रक्तों को बता। (याच् धातु) ८. राजा से धन माँगता है। ९. बलि से भूमि माँगता है। १०. पार्वती ने पिता से तपःसमाधि के लिए अरण्य-निवास की माँग की। ११. उसने पिता से माँग की कि उसे न छोड़ें। १२. तिनके से भी हलकी रूई होती है और रूई से भी हलका माँगनेवाला होता है। (ब्व) (लुङ्का प्रयोग करो) १. मैं सुख से सोया। २. उसने कहा कि बहुत दिन मेरी यहाँ रहने की इच्छा है। ३. वह बोली-में तुम्हारे कहने में हूँ। ४. वह तपस्या के लिए वन में गया। ५. वह घर से निकल पड़ा। ६. उसने चपरासी को अन्दर आता हुआ देखा। ७. उसने सामने से आते हुए एक शिष्य को देखा और पूछा तुम्हारे गुरु कहाँ हैं ? ८. वह सबेरे ही महल से निकल पड़ा और ढाई घण्टे घूमने के लिए गया। ९. उसने जागते हुए ही सारी रात बिताई। १०. हर्ष ने आँसू भरी दृष्टि स माँ से कहा—तुम मुझे क्यों छोड़ रही हो ? ११. यशोवती आँचल से मुँह ढककर साधारण स्त्री के तुल्य बहुत देर तक रोइं। १२. वह उसके पास ही चुप बंठा रहा। (ग) (दिकालवर्ग) १. चार दिशाएँ हैं, पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण। २. इस समय तुम्हारी घड़ी में क्या बजा है ? ३. एक घण्टे में साठ मिनट होते हैं और एक मिनट में साठ सेकण्ड । ४. इस स्टेशन पर एक डाक-गाड़ी सबेरे सवा दस बजे आती है और दूसरी शाम को पौने सात बजे। ५. राम सबेरे उठता है, दोपहर को खाना खाता है, तीसरे पहर फलाहार करता है, शाम को खेलता है, रात में सोता है और आधी रात में नहीं जागता। ६. आजकल परीक्षा के दिन हैं, वह दिन-रात पढ़ाई में लगा रहता है।

संकेतः—(क) १. ऋत्वजः। २. चतस्रः, बाल्यम् (बाल्य आदि चारों नपुं० हैं)। ३. चत्वारि शृक्षा (णि) त्रयोऽस्य पादाः। ४. मासान्, गमय लोचने मीलियत्वा। ५. आयाचतुर्थन्मागेन व्यवकर्म प्रवर्तयेत्। प्रभूततैलदीपो हि। ६. गुरुशुश्रूषया, पुष्कलेन, विद्यया, चतुर्थान्नोपन्लम्यते। ७. बृहि मे चतुरः प्रइतान्। ८. राजानम्। ९. बिलम्। १०. पितरम्, निवासम्। ११. पितरम्, अपरित्यागमथाचतात्मनः। १२. तृणादि लघुस्तूलस्तूलादिपं च याचकः। (ख) १. सुखमस्वाप्सम्। २. अवादित्, भूयसो दिवसान् स्थातुमभिलवित मे हृदयम्। ३. अवोचत्, १षास्मिते वचिसि स्थता। ४. वनमगात्। ५. निर्गात्। ६. लेखहारकं प्रविशन्तमद्राक्षोत्। ७. अभिमुखम् आपतन्तम्, अद्राक्षीत्, क्वास्ते। ८. निरयासीत्, सार्थहोराद्वयम्, अयासीत्। ९. जाग्रदेव, अनैषीत्। १०. बाष्पायमाणदृष्टमांतरम् अभ्यधात्। ११. पटान्तेन, आच्छाच, प्राकृतप्रमदेवाति-विरम् अरोदीत्। १२. तृष्णीं समवास्थित। (ग) २. का वेला। १. एकस्यां होरायां पष्टिः। ४.

शब्दकोष-४०० + २५ = ४२५] अभ्यास १७ (व्याकरण)

(क) सप्तसितः (पुं॰, सूर्य), सुधांग्रः (पुं॰, चन्द्रमा), गभितः (पुं॰, स्त्री॰, किरण), आतपः (धूप), ज्योत्स्ना (चाँदनी), नक्षत्रम् (नक्षत्र), नवप्रहाः (नवप्रह), द्वादश राश्यः (१२ राशियाँ), सप्ताहः (सप्ताह), राका (पूणिमा), दर्शः (अमावस्या), जीमृतः (मेघ), सौदामिनी (स्त्री॰, विद्युत्), करकाः (ओले), वृष्टिः, (स्त्री॰, वर्षा), आसारः (मूसलाधार वर्षा), अवप्रहः (अवृष्टि), इन्द्रायुधम् (इन्द्रधनुष्क), उत्तरायणम् (उत्तरायण), दक्षिणायनम् (दक्षिणायन), शीकरः (जल-कण), अवश्यायः (हिम, वर्षः), लक्ष्मन् (नपुं॰, चिह्न), वियत् (नपुं॰, आकाश), स्तिनतम् (गर्जन)। (२५) व्याकरण (पञ्चन् से दशन्, वहं, छट्, हल् और विसर्ग-सिन्ध)

१. पञ्चन से दशन तक के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० सं० ९३ से ९८)। त्रि से अष्टादशन (३ से १८) तक के रूप केवल बहुवचन में ही चलते हैं। तीनों लिंगों में वही रूप होंगे। एक से दश तक की संख्याओं के संख्येय (व्यक्ति या वस्तुबोधक क्रमवाचक विशेषण) शब्द क्रमशः ये हैं:—प्रथमः, द्वितीयः, तृतीयः, चतुर्थः, पञ्चमः, पष्टः, सतमः, अष्टमः, नवमः, दशमः। इनके रूप पुं० में रामवत्, स्त्री० में रमा या नदीवत्, नपुं० में गृहवत् चलेंगे।

२. वह् धातु के पूरे रूप स्मरण करो (देखो धातु० ३०)।

नियम १३०—(नश्डव्यप्रशान्) पदान्त न् को र (ः, स्) होता है, यदि छन् (च्, छ्, ट्, ट्, त्, थ्) बाद में हो और छन् के बाद अम् (स्वर, ह, अन्तःस्य, वर्ग का पंचम अक्षर) हो तो । प्रशान् शब्द में नियम नहीं लगेगा । इसके साथ कुछ अन्य नियम भी लगते हैं, अतः इस नियम का रूप होगा—न् + छन् = स्+ छन् या ँस् + छन् । रचुत्व नियम यदि प्राप्त होगा तो लगेगा । कस्मिन् + चित् = कस्मिश्चित् । अस्मिस्तरौ । तस्मिन् + तथा = तस्मिस्तथा ।

नियम १३१—(छे च, पदान्ताद्वा) ह्रस्व स्वर के बाद छ होगा तो छ से पूर्व त् (च्) लगेगा, पदान्त दीर्घ स्वर के बाद छ से पूर्व त् विकल्प से लगेगा। शिव + छाया = शिवच्छाया। वृक्षच्छाया। लताच्छविः। लक्ष्मीच्छाया, लक्ष्मीछाया।

नियम १३२—(विसर्जनीयस्य सः) विसर्ग को स् होता है, खर् (वर्ग के १, २, इ, ष, स) बाद में हो तो। (रुचुत्वसन्धि भी होगी)। हिर्रः + त्रायते = हिरस्त्रायते। कः + चित् = किश्चत्। रामः + तिष्ठति = रामस्तिष्ठति।

नियम १३३— (वा शरि) विसर्ग के बाद (श, ष, स) हो तो विसर्ग को : और स्दोनों होते हैं। नियम ११६, ११७ भी लगेंगे। हरिक्शेते। रामष्यष्टः।

नियम १३४—(ससजुषो ६:) पद के अन्तिम स् को ६ (र्याः) होता है, सजुष् को भी। जहाँ ६ को उया य नहीं होगा, वहाँ र् शेष रहेगा। अया आ के अतिरिक्त अन्य स्वरों के बाद र् शेष रहेगा, बाद में कोई स्वर या व्यंजन (३, ४, ५) हो तो। हरि: + अवदत् = हरिरवदत्। पितुः + इन्छा = पितुरिन्छा। लक्ष्मीरियम्।

नियम १३५—(अतो रोरप्छतादप्छते) हस्व अ के बाद र (: या र्) को उहोता है, बाद में हस्व अ हो तो। नियम १०१ से गुण और १०३ से पूर्वरूप।

अतः भः + अ = ओऽ । कः + अधि न्न (होईईई). bामोडिसम् प्राप्ता अवस्ति। Gyaan Kosha

संस्कृत बनाओ :—(क) (संख्याएँ) १. देवों, माता-पिता, मनुष्यों, भिक्षुकों और अतिथियों, इन पाँचों की ही पूजा करता हुआ मनुष्य यश को पाता है। २. मित्र, अमित्र, मध्यस्थ, आश्रित और आश्रयदाता, ये पाँचों जहाँ कहीं भी जाओगे, वहाँ तुम्हारे साथ जाएँगे। ३. ऐस्वर्य के चाहनेवाले मनुष्य को ये ६ दोष छोड़ देने चाहिएँ—निद्रा, तन्द्रा, भय, क्रोध, आलस्य और दीर्घस्त्रता । ४. ये ६ गुण मनुष्य को कभी नहीं छोड़ने चाहिएँ-सत्य, दान, अनालस्य, अनस्या, क्षमा और धृति । ५. क्लोक में पंचम अक्षर सदा लघु होता है, द्वितीय और चतुर्थ चरण में सप्तम लघु, षष्ठ सदा गुरु होता है। ६. जो पाँचवें या छठे दिन अपने घर साग पकाकर खा छेता है, परन्तु ऋणी और प्रवासी नहीं है तो वह सुखी रहता है। ७. ये आठ गुण मनुष्य को चमकाते हैं — बुद्धि, कुलीनता, जितेन्द्रियता, अध्ययन, पराक्रम, कम बोलना, यथाशक्ति दान और कृतज्ञता। ८. नित्य स्नान करनेवाले को दस गुण प्राप्त होते हैं — बल, रूप, स्वरशुद्धि, वर्णशुद्धि, सुस्पर्श, सुगन्ध, विशुद्धता, शोभा, सुकुमारता और सुन्दर प्रमदाएँ। (ख) (वह् धातु) १. निदयाँ परोपकार के लिए बहती हैं। २. हवा मन्द-मन्द बह रही है (वह्)। ३. ग्वाला बकरी को गाँव में ले जा रहा है। ४. गधे घोड़े की धुरा को नहीं ढो सकते। ५. राम ने सीता से विवाह किया (उद्वह्)। ६. इतनी आय से मेरा काम नहीं चल सकता है (निर्वह्)। ७. धेर्य धारण करो (आवह्)। ८. इतना वैभव मुझे मुख नहीं देता (आवहू)। ९. वह जैस-तैसे दिन बिता रहा है। १०. यमुना प्रयाग के समीप बहती है (प्रवह्ं)। (ग) (छुट्) १. मैं कल सबेरे जैसी स्थिति होगी वैसा बताऊँगा। २. जब तुम्हारी बुद्धि मोह के दलदल को पार कर लेगी, तब तुम्हें वैराग्य प्राप्त होगा। ३. मैं परसों घर जाऊँगा। ४. मैं कल प्रयाग से प्रस्थान करूँगा और परसों वाराणसी पहुँचूँगा और वहाँ मे एक मास बाद पटना चला जाऊँगा। (घ) (न्योमवर्ग) १. सूर्य उदय हो रहा है और चन्द्रमा अस्त हो रहा है। २. विविध अर्थों को लेकर सूर्य के नाम हैं— दिवाकर, विवस्वान्, हरिदश्व, उष्णरिश्म, तिग्मदीधिति, द्युमणि, तरणि, विभावसु, भानुमान्, सहस्रांशु । ३. चन्द्रमा के भी अर्थानुसार अनेक नाम हैं—इन्दु, सुधांशु, ओषधीश, निशाकर, कलानिधि, शीतगु, शशांक । ४. अब आकाश में बादल आ गए. बिजली चमकने लगी, बादलों का गरजना आरम्भ हुआ, ओले पड़ने लगे और फिर मूसलाधार वर्षा होने लगी। ५. इधर इन्द्रधनुष दिखाई पड़ रहा है। ६. उत्तरायण में दिन बड़ा हो जाता है और दक्षिणायन में छोटा । ७. बारह राशियाँ हैं - मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु (धन्वी), मकर, कुम्म, मीन। ८. नव प्रह हैं—रिव, सोम, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्ष, शनि, राहु और केतु। ९. एक सप्ताह में सात दिन होते हैं। १०. गर्मी में धूप कड़ी होती है और शरद् में चाँदनी शीतल।

संकेतः—(क) १. देवान्, पितन्, पूजयन्। २. मित्राणि, उपजीव्योपजीविनः, पञ्च त्वाऽनुगमिष्यन्ति। ३. भूतिमिच्छता, हातव्याः। ४. पुंसा। ५. प्रचमं लघु, द्विचतुर्थयोः। ६. पञ्चमेऽहिन षष्ठे वा शाकं पचित अनृणी चाप्रवामी च, मोदते। ७. दीपयन्ति, कौर्यं, दमः, श्रुतम्, अदहुभाषिता।(ख) ३. अजां ग्रामं वहित। ४. न वाजिधुरं वहिन्ति। ५. जानशीमुदवहत्। ६. एतावता, न मे कार्य निर्वहित। ७. धृतिमावह। ८. एतावान् विभवो, न मे सुखमावहिति। ९. कथमिप दिनान्यितवाहयितं। (ग) १. यथावस्थितम् आवेदयितास्मि। २. मोहकलिलम्, व्यितिरिष्यित, निर्वेदं गन्तासि। ३. गन्तासि। ४. प्रस्थाता, आसादयितासिम, मासात्परेण,

शब्दकोष-४२५ + २५ = ४५०] अभ्यास १८ (व्याकरण)

(क) स्वस् (स्त्री॰, विहन), आत्मजः (पुत्र), अग्रजः (वड़ा भाई), अनुजः (छोटा भाई), पितृव्यः (चाचा), मातुलः (मामा), पितृव्यस् (स्त्री॰, फूआ), मातृष्वस् (स्त्री॰, मौसी), भ्रात्रीयः (भतीजा), स्वस्तीयः (भानजा), आवृत्तः (जीजा), भ्रातृजाया (भाई की स्त्री, भाभी), स्तुपा (पुत्रवधू), पितृव्यपुत्रः (चचेरा भाई), पैतृष्वस्तीयः (फुफेरा भाई), मातृष्वस्त्रीयः (मौसेरा भाई), जामातृ (पु॰, जवाई), पौत्रः (जोता), नष्तृ (पुं॰ नाती), देवरः (देवर), ज्ञातिः (पुं॰ सम्यन्धी), सम्यन्धिन् (समधी), सम्यन्धिनी (स्त्री॰, समधिन), योपित् (स्त्री॰, स्त्री), पुरन्धः (स्त्री॰, सधवा स्त्री)। (२५)

डयाकरण (संख्या ११ से १००, नी, आशीर्लिङ्, लङ्, विसर्गसन्धि) १. नी धातु के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो धातु २७)

नियम १३६—(क) विंशतिः (२०) के बाद के सभी संख्यावाची शब्द केवल एकवचन में आते हैं:—'विंशत्याद्याः सदैकत्वे सर्वाः संख्येयसंख्ययोः'। (ख) एकादशन् से अष्टादशन् (११ से १८) तक के रूप दशन् के तुत्य बहु० में ही चलेंगे। (ग) एकोनविंशतिः (१९) से नवनवितः (९९) तक सारे शब्दों के रूप स्त्रीलिंग एक० में ही चलते हैं। इकारान्त विंशति, पिष्ट आदि के रूप मित (शब्द सं० ४२) के तुत्य और तकारान्त तिंशत् आदि के रूप सरित् (शब्द सं० ५४) के तुत्य चलेंगे। (घ) संख्येय (क्रमवाचक विशेषण) बनाने के नियम ये हैं—(१) एक से दश तक के संख्येय प्रथम, दितीय आदि है। (२) ११ से १८ तक के संख्येय शब्दों के अन्त में 'अ' लग जाता है। एकादशः (११वाँ), द्वादशः (१२वाँ) आदि। (३) १९ के आगे संख्येय शब्दों के अन्त में 'तम' लगता है। विंशतितमः (२०वाँ) आदि। (४) संख्येय शब्दों के रूप तीनों लिंगों में चलेंगे। पु० में रामवत्, स्त्रो० में रमा या नदीवत्, नपु० में गृहवत्।

नियम १३७ – (हिश च) हस्व अ के बाद रु (र्या:) को उही जाता है, बाद में हश् (३, ४, ५, ह. य, व, र, ल) हो तो। अ: + हश् = ओ + हश् | शिव: + वन्यः = शिवो वन्यः | रामो गच्छति | यालको हसति |

नियम १३८—(मोभगाअघोअपूर्वस्य योऽिश) मोः, भगोः, अघोः और अ या आ के बाद (र्याः) को य् होता है, बाद में अश् (स्वर, ह, अन्तःस्य, ३, ४, ५) हो तो।

नियम१३२—(हलि सर्वेषाम्, लोपः शाकल्यस्य) (१) नियम १३८ से हुए य् के बाद कोई व्यंजन होगा ता उसका लोप अवस्य होगा। (२) यदि बाद में स्वर होगा ता य् का लोप ऐच्छिक है। लोप होने पर संधि नहीं होगी। देवा गच्छन्ति। नरा हसन्ति। देवा इह, देवायिह।

नियम १४० —(रोऽसुपि) अहन् के न् को र् होता है, विभक्ति (सुप्) बाद में हो तो नहीं। अहन् + अहः = अहरहः। अहन् + गणः = अहर्गणः।

नियम १४१—(रो रि) र् के बाद र हो तो पहले र् का लोप हो जाता है। नियम १४२—(द्रलोपे पूर्वस्य दीघोंऽणः) ढ्या र् का लोप होने पर उससे पूर्ववर्ती अ, इ, उ को दीर्घ होता है। पुनर् + रमते = पुना रमते। हरी रम्यः।

नियम १४३—(एतत्तदोः मुलोपोऽकोरनञ्समासे हलि) सः और एषः के CC विसर्ग की लिए दिता है, बाद में व्यजन हो तो। सः + पटति = स पठति। एष वदति।

संस्कृत बनाओं:-(क) (संख्याएँ) १. इस कालेज में बी० ए० प्रथम वर्ष में ९०, द्वितीय वर्ष में ८०, एम० ए० प्रथम वर्ष में ७० और द्वितीय वर्ष में ५० विद्यार्थी हैं। २. इस सभा में १०० आदमी हैं। ३. उस जुलू स में एक हजार आदमी हैं। ४. वहाँ भीड़ में ५० आदमी घायल हुए और १५ मर गए। घायल और मृतों की संख्या ६५ है। (ख) (नी धातु) १. वह गाय को गाँव में ले जाता है। २. राम, तुम मुझे निःसंकोच अपने साथ वन में ले चलो । ३. उसने जागते हुए ही रात बिताई । ४. उसने उसके साथ दिन बिताया । ५. उसने अपने सचित्र से लोगों को अपने वश में कर लिया । ६. तुम अपने वचों, स्त्री, बहिनों और भाइयों को मेरे घर लाना (आ + नी)। ७. उसने गुरु को मनाया (अनु + नी)। ८. ईश्वर तुम्हारी तामसी वृत्ति को दूर करें । ९. मैं तुम्हारे घमण्ड को दूर कर दूँगा। १०. उसने दोनों हाथ जोड़कर गुरु को प्रणाम किया। ११. पुत्रवधू श्वसुर के सामने अपना मुँह फेर लेती है (वि + नी)। १२. गुरु शिष्य का उपनयन-संस्कार करता है। १३. राम ने सीता से विवाह किय (परि + नी) । १४. सुनने का अभिनय करके । १५. आप लोग ऋषियों के लिए फूल और फल लाकर दें । १६. न्यायाधीश विवाद का निर्णय करेगा (निर्णी) । १७. विश्वान् पुस्तक लिखेगा (प्रणी) । १८. दिलीप ने अपना शरीर शेर को समर्पण किया । १९. इसकी हँसी का अभिप्राय समझा जा सकता है। २० तुम अपने चरित्र से देश की कीति को ऊँचा उठाओं। (ग) (आशीलिङ्, लङ्) १. बीर सन्तानवाली हो। २. देत्र परिणाम को ग्रुभ बनावें। ३. तुम इन्द्राणी और सावित्री के तुल्य हो। ४. तुम्हारा मार्ग ग्रुभ हो। ५. यदि अच्छी वर्षा होती तो सुभिक्ष हुआ होता। ६. क्या अरुण अन्धकार को दूर कर सकता था, यदि उसे सूर्य अपनी धुरा में न बैठाता ? ७. यदि परमात्मा इस जोड़े को परस्पर न मिलाता तो उसका रूप-निर्माण का यत्न विफल होता । (घ) (सम्बन्धिवर्ग) १. मेरे घर में मेरे माता-पिता, चाचा-चाची, दादा-दादी, पुत्र-पुत्रियाँ और चचेरे-फुफेरें तथा मौसेरे भाई हैं। २. भानजे, पोते, पोतियों, नाती और नातिनों से प्रेम का व्यवहार करो। ३. मेरी बहिन के विवाह में मामा-मामी, नाना-नानी, जीजा और अन्य सम्बन्धी आए थे। ४. सघवा स्त्रियों का चित्त फूल के तुल्य सुकुमार होता है। ५. समधी से समधी और समधिन से समधिन प्रेम से मिले।

संकेत :-(क) १. नवतिः, अशीतिः, सप्ततिः, पन्नाशत्। २. शतं जनाः सन्ति। ३. जनयात्रायां सहस्रं जनाः सन्ति । ४. जनोघे, आहताः, हताः । हताहतानाम्, पञ्चषष्टिः । (ख) १. गां ग्रामम् । २. विस्रब्थम् । ३. निशामनैषीत् । ४. वासरं निनाय । ५. आत्मवशम् अनयत्। ६. जायाम्, स्वसृः, भ्रातृन्। ७. अन्वनैषीत्। ८. व्यपनयतु। ९. व्यपनेष्यामि ते गर्वम्। १०. हस्तौ समानीय । ११. विनयति, अपनयति । १२. उपनयते । १३. सीतां परिणिनाय । १४. श्रुतिमभिनीय। १५. ऋषिभ्यः, उपनयन्तु। १६. विवादं निर्णेष्यति। १७. प्रणेष्यति। १८. हरये उपानयत्। १९. परिहासस्य, उन्नेतुं शक्यते। २०. उन्नय। (ग) १. वीरप्रसविनी भूयाः। २. देवाः परिणतिं परमरमगोयां विधेयासुः। ३. सावित्रोसमा भूयाः। ४. शिवो भूयात्। ५. सुवृष्टिश्चेदभविष्यत् सुभिक्षमभिवष्यत्। ६. किं वाडभिविष्यदरुणस्तमसां विभेत्ता, तं चेत् सहस्रकिरणो धुरि नाकरिष्यत्। ७. द्वन्द्वं, न अयोजिथिष्यत्, विफलोऽभविष्यत्। (घ) रै. पितृन्या, पितामही। २. पौत्रोपु, नप्तृपु, नप्त्रोषु स्नेहेन वर्तेत। ४. मातुलः, मातुलानी,

शब्दकोष-४५० + २५ = ४७५] अभ्यास १९

(व्याकरण)

(क) कन्दुकः (गेंद), पादकन्दुकः (फुटबॉल), यष्टिकीडा (हॉकी का खेल), क्षेप-कन्दुकः (वॉली वॉल), पित्रकीडा (बैडमिण्टन), पित्रन् (चिड़िया), प्रक्षित-कन्दुक-क्रीडा (टेनिस का खेल), जालम् (नेट), काष्ट्रपरिष्करः (रैकेट), क्रीडाप्रतियोगिता (मैच), निर्णायकः (रेफरी), उपस्करः (फर्नीचर), आसन्दिका (कुर्सी), फलकम् (मेज), लेखन-पीठम् (डेस्क), काष्ठासनम् (बेंच), काष्ठमञ्जूषा (अलमारी), मञ्जूषा (मन्दूक), संवेशः (स्टूल),खट्वा (खाट), प्रत्यङ्कः, (पलंग), पर्यङ्कः (सोफा), निवारः (निवाड), पुस्तका-धानम् (बुक रैक), पर्पः (चारों ओर मुड़नेवाली कुर्सी)। (२५)

व्याकरण (सिख, ह धातु, अव्ययीभाव समास)

१. सखि राब्द के रूप स्मरण करो । (देखो राब्द० सं० ५)

२. हु धातु के दोनों पदों के रूप स्मरण करो । (देखो धातु० २८)

नियम १४४ — (समास) (१) एक या अधिक शब्दों के मिलाने या जोड़ने को समास कहते हैं। समास का अर्थ है संक्षेप। समास करने पर समास हुए शब्दों के बीच की विभक्ति (कारक) नहीं रहती । समस्त (समासयुक्त) शब्द एक शब्द हो जाता है, अतः अन्त में विभक्ति लगती है । समास के तोड़ने को 'विग्रह' कहते हैं । जैसे — राज्ञः पुरुष (राजा का पुरुष) विग्रह है, राजपुरुषः (राजपुरुष) समस्त पद है । बीच की षष्ठी का लोप है। (२) समास के ६ भेद हैं—१. अन्ययीमान, २. तत्पुरुष, ३. कर्म-धारय, ४. दिगु, ५. बहुत्रीहि, ६. द्वन्द ।

नियम १४' — (अव्ययीभाव) (अव्ययं विभक्ति॰) अव्ययीभाव समास की पहचान यह है कि इसमें पहला शब्द अव्यय (उपसर्ग या निपात) होगा और दूसरा संज्ञा-शब्द । अव्ययीभाव समासवाले अकारान्त शब्द नपुं॰ एक॰ में ही रहते हैं । अ-भिन्न स्वर अन्तवाले अन्ययीभाव अन्यय हो जाते हैं, अतः उनके रूप नहीं चलते। इन अथों में अन्ययीभाव समास होता है और ये अन्यय इन अथों में आते हैं—१. विभक्ति। सप्तमी के अर्थ में 'अधि'—हरौ> अधिहरि। २. समीप अर्थ में 'उप'—कृष्णस्य समीपे> उपकृष्णम् । इसी प्रकार उपगङ्गम् , उपयमुनम् । ३. समृद्धि अर्थ में 'सु'— मद्राणां समृद्धिः > सुमद्रम् । ४. व्यृद्धि (क्षय) अर्थ में 'दुर्'—यवनानां व्यृद्धिः > दुर्यवनम् । ५. अभाव अर्थ में 'निर्'—मक्षिकाणाम् अभावः > निर्मक्षिकम् । इसी प्रकार निर्जनम् , निर्विच्नम् , निर्द्वन्द्वम् । ६. अत्यय (नाश) अर्थ में 'अति'—हिमस्यात्ययः > अतिहिमम्। ७. असंप्रति (अनुचित) अर्थ में 'अति'—अतिनिद्रम्। ८. शब्द-प्रादुर्भाव (शब्द का प्रकाश) अर्थ में 'इति'—हरिशब्दस्य प्रकाशः > इतिहरि। ९. पश्चात् (पीछे) अर्थ में 'अनु'—रथस्य पंश्चात् > अनुरथम्। अनुहरि, अनुविण्णु। १०. यथा (योग्यता, प्रत्येक, अनुसार) के अर्थ में। अनु—रूपस्य योग्यम्> अनुरूपम्। प्रति—ग्रहं ग्रहं प्रति>प्रतिगृहम्। यथा — शक्तिमनितिकम्य > यथाशक्ति। ११० आनुपूर्व्य अर्थ में अनु — अनुज्येष्ठम्। १२० यौगपद्य अर्थ में सह (स) — चक्रेण सह > सचकम्। १३० साहस्य अर्थ में सह (स) — सहशः सख्या > ससित। १४० संपत्ति अर्थ में सह (स)—सक्षत्रम्। १५. साकत्य (सहित) अर्थ में सह (स)—सतृणम्। १६. अन्त अर्थ में सह (स)—साग्नि (अग्नि ग्रन्थतक)। १७. तक अर्थ में आ— сс-० आसमूद्रम् आञ्चालहरूम् लीर्जिक्ट अर्थ के के किन्न के सिक्त के सिक्त

संस्कृत बनाओ—(क) (सिख शब्द) १. तुम मेरे मित्र हो, जो चीज मेरी है, वह तुम्हारी हो गई। २. वह निकृष्ट मित्र है, जो राजा को ठीक शिक्षा नहीं देता। ३. वह नौकरों को प्रिय मित्रों के तुल्य मानता है। ४. मित्र वह है जो विपत्ति में साथ नहीं छोड़ता। (ख) (हु, धातु) १. वह गाँव में वकरी को ले जाता है। २. तुम मेरे सन्देश को ले जाओ (ह)। ३. बादल लोगों के ताप को हरता है (ह)। ४. मैं तुम्हारे मनोहर गीत के राग से बहुत आकृष्ट हो गया हूँ। ५. हथिनी की गति किसके मन को नहीं हरती। ६. विधि कुश पर ही प्रहार करता है (प्र + हु)। ७. वन से सिमधाएँ लाओ (आ + ह)। ८. अर्जुन ने कौरवों की बड़ी सेना का संहार किया (सं + हू)। ९. चन्द्रमा चाण्डाल के घर से अपनी चाँदनी को नहीं हटाता (सं + ह)। १०. ये वालक आवाज में माता से मिलते-जुलते हैं (अनु + ह)। ११. घोड़े पिता की चाल से चलते हैं और गाय माँ की चाल से (अनु + हु, आ०)। १२. वह प्रातः उद्यान में घुमता है (वि + ह) । १३. चोर धन चुराता है (अप + ह) । १४. अपने आप अपना उद्धार करो (उद् + ह)। १५. उसने बात कही (उदाहु)। १६. वह भात खाता है (अभ्यवह)। १७. वह लड़की को पुस्तक भेंट में देता है (उपह)। १८. राम ने रावण के शिर पर प्रहार किया (प्रहु)। (ग) (अव्ययीभाव) १. तुम प्रतिदिन कुश-शरीर हो रहे हो । २. प्रत्येक पात्र की देख-भाल करो । ३. इसकी उक्कण्ठा बहुत बढ़ गई है । ४. सुविधानुसार यह काम करना । ५. मैं पीछे-पीछे आ रहा हूँ । ६. अपनी इच्छानुसार करना । ७. आपने यहाँ से सबको भगा दिया । ८. महा माओं के लिए क्या परोक्ष है ? (घ) (क्रीडासनवर्ग) १. अंग्रेजी खेलों में हॉकी, फुटबॉल, वॉलीवॉल, बैडिमिण्टन और टेनिस के खेल अधिक प्रचलित और प्रसिद्ध हैं। २. हॉकी गेंद से, बैडिमिन्टन चिड़िया से और टेनिस गेंद से खेले जाते हैं। ३. बैडिमिन्टन का रैकेट हल्का और टेनिस का रैकेट भारी होता है। ४. खेल के मैदान में फुटबॉल का मैच हो रहा है। ५. कालेज की कक्षाओं में प्रायः यह फर्नीचर होता है, मेज, कुर्सियाँ, डेस्क और बेंच। ६. घरेल फर्नीचर में खाट, पलंग, सोफा, तिपाई, अलमारी, बुक रैक, डाइनिंग टेबुल, पढ़ाई की मेज, कुर्सी, आराम कुर्सी आदि होते हैं। ७. कुछ कार्यालयों में मुड़नेवाली कुर्सी और सेफ भी होते हैं। ८. पलग निवाड़ से बुनी जाती है।

संकेत—(क) १ वन्मम, तत्तवैव। २ किंसखा, साधु न द्रास्ति। ३ सखीनिव प्रीतियुजोऽनुजीविनो दर्शयते। (ख) १ प्रामम्, हरित। ३ लोकानाम्। ४ हारिणा, प्रसमं हतः। ८ कुरूणां महतीं चमूं समहाधींत्। ९ निहं संहरते। १० स्वरेण मातरमनुहरन्ति। ११ पैतृकमश्वा अनुहरन्ते, मातृकं गावः। १४ उद्धरेदात्मनात्मानम्। १५ वचनमुदाजहार। १६ भक्तमभ्यवहरित। (ग) १ अनुदिवस परिहोयसेऽङ्गैः। २ प्रतिपात्रमाधीयतां यत्नः। ३ अतिभूमिं गतोऽस्या रणरणकः। ४ यथावकाशम्। ५ अनुपदमागत एव। ६ यथामिलाषम्। ७ कृतं भवता निर्मक्षिकम्। ८ किमोश्वराणां परीक्षम्। (घ) १ आंग्लक्षीडासु। ३ लघुः, गुरुः। ४ क्रीडाक्षेत्रे। ६ गृहोपस्करेषु, त्रिपादिका, भोजनभलकम्, लेखनफलकम्, सुखासन्दिका। ७

लौहमञ्जूषा । ८. ऊयते । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शब्दकोष-४७५ + २५ = ५००]

(व्याकरण)

(क) अग्रजन्मन् (ब्राह्मण), अन्ववायः (वंश), चातुर्वर्ण्यम् (चारों वर्ण), विपश्चित् (विद्वान्), श्रोत्रियः (वेदपाटी), अन्चानः (सांगवेदज्ञ), समावृत्तः (स्नातक),
यज्वन् (यज्ञकर्ता), अन्तेवासिन् (शिष्य), सतीर्थ्यः (सहपाटी), अध्वरः (यज्ञ), समिति
(स्त्री॰, सभा), संसद् (स्त्री॰, लोकसभा), आस्थानम् (सभाग्रह, असेम्बली हॉल), सभामद्
(सदस्य), स्थिष्डलम् (चवृतरा), विश्राणनम् (देना), प्राधुणः (पाहुन, अतिथि), सपर्या
(पूजा), वाचंयमः (मुनि), इष्टापूर्तम् (धर्मार्थ यज्ञादि), मस्करिन् (संन्यासी), यमः
(यम), नियमः (नियम), पौर्णमासः (पूर्णिमा का यज्ञ)। (२५)

व्याकरण (पति, श्रु धातु, तत्पुरुष समास)

पित शब्द के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्द ॰ सं० ६)
 अ धात के दसों लकारों के रूप स्मरण करो । (देखो धातु ० सं० १६)

नियम १४६—(तत्पुरुष) तत्पुरुष समास उसे कहते हैं, जहाँ पर दो या अधिक शब्दों के बीच में से द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी या सप्तमी विभक्ति का लोप होता है। समास होने पर बीच की विभक्ति का लोप हो जाएगा। जिस विभक्ति का लोप होगा, उसी विभक्ति के नाम से वह तत्पुरुष कहा जायगा । जैसे-द्वितीया तत्पुरुष, षष्ठी तत्पुरुष आदि । (उत्तरपदार्थप्रधानस्तत्पुरुषः) इसमें बादवाले पद का अर्थ मुख्य होता है। (१) द्वितीया—(द्वितीया श्रितातीतपतित०)--कृष्णं श्रितः > कृष्णश्रितः । दुःखमतीतः > दुःखातीतः । दुःखं प्तितः > दुःखपिततः । शोकं गतः > शोकगतः । मेघम् अत्यस्तः > मेघात्यस्तः । भयं प्राप्तः > भयप्राप्तः । जीविकाम् आपनः > जीविकापन्नः । (२) तृतीया — (तृतीया तत्कृतार्थेन०) शङ्कुलया खण्डः > शङ्कुलाखण्डः । (कर्तृकरणेकृता ०) बाणेन आहतः > बाणाहतः। खड्गेन हतः > खड्ग-हतः । नखैभिन्नः > नखभिन्नः । हरिणा त्रातः > हरित्रातः । विद्यया हीनः > विद्याहीनः । (पूर्वसदश॰) मासेन पूर्वः > मासपूर्वः । मात्रा सदशः > मातृसदशः । पितृसमः । माषो-नम् । वाक्कल्हः । आचारनिपुणः । गुडमिर्श्रः । ज्ञानग्रून्यः । पितृतुल्यः । एकोनम् । (३) चतुर्थी-(चतुर्थी तदर्थार्थ॰) यूपाय दारु यूपदार । दिजाय इदम् हिजार्थम् । स्नानाय इदम्> स्नानार्थम् । भोजनार्थम् । भूताय बल्टिः> भूतबल्टिः । गर्वे हितम्> गोहितम्। गये सुखम् > गोसुखम्। गोरक्षितम्। (४) पंचमी — (पंचमी भयेन) चोराद् भयम् > चोरभयम् । शत्रुभयम् । राजभयम् । वृक्तभीतिः । (अपेतापोढ०) सुखाद् अपेतः > मुखापेतः । कल्पनापोढः । रोगाद् मुक्तः> रोगमुक्तः । पापात् मुक्तः> पापमुक्तः । प्रासादात् पतितः > प्रासादपतितः । वृक्षपतितः । अश्वपतितः । (५) पष्टी — (पष्टी) राज्ञः पुरुषः--राजपुरुषः । ईश्वरस्य भक्तः > ईश्वरभक्तः । शिवभक्तः । विष्णुभक्तः । देवपूजकः । मूर्त्याः पूजा≫ मूर्तिपूजा । देवपूजा । विद्याल्यः । देवाल्यः । देवमन्दिरम् । सुवर्णकुण्डलम् । (६) सप्तमी-(सप्तमी शौण्डैः) शास्त्रे निपुणः >शास्त्रनिपुणः । विद्या-

निपुणः । युद्धनिपुणः । कार्यदक्षः । कार्यचतुरः । जले लीनः > जल्लीनः । जल्मग्नः । CC-O. Presidev Tripathi Collection at Sarai (CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha अतिपशुष्कः | स्थालीपकः । चक्रबन्धः ।

संस्कृत बनाओ: -(क) (पति शब्द) १. स्त्री के लिए पति ही एक गति है। २. स्त्री का पति ही देवता है। ३. पति के साथ वैठकर यज्ञ करने के कारण स्त्री को पत्नी कहा जाता है। ४. चन्द्रमा के साथ चाँद्रनी चली जाती है, मेघ के साथ विद्युत् अदृष्ट हो जाती है। स्त्रियाँ पित के मार्ग पर चलती हैं, यह अचेतनों ने भी स्वीकार किया है। (ख) (श्रु धातु) १. जो बड़ों की निन्दा करता है, वही पापी नहीं होता, अपितु जो उससे सुनता है, वह भी पापी होता है। २. मेरी अधूरी बात को सुनो। ३. मित्र, सुनो. मेरी बात ठीक है या नहीं। ४. हे बादल, तुम बाद में मेरा सन्देश सुनोगे। ५. बारह वर्ष में व्याकरण पढ़ा जाता है। ६. मेंने भ्रमरों का गुंजन सुना। ७. अपने से बड़ों की सेवा करो । ८. निर्धन की पत्नी भी सेवा नहीं करती । ९. जो हित की बात नहीं सुनता वह नीच स्वामी है। १०. वह कहना नहीं सुनता। ११. वह विप्र को गाय देने की प्रतिज्ञा करता है। (ग) (तत्पुरुष०) १. समय पता चलाने के लिए मुझसे कहा गया है। २. यह माला देर तक रुकने वाली है। ३. इस पात्र को हाथ में हो। ४. यह चवृतरा अभी धुलने से शोभित है। ५. मेरे कुछ कहने की गुंजाइश नहीं है। ६. मेनका के कारण शकुन्तला मेरे देह के तुल्य-है। ७. भरत मेरे वंश की प्रतिष्ठा है। ८. सांसारिक विषय ऊपर से सुन्दर लगते हैं, पर अन्त में दुःखद होते हैं। ९. इस मृग को मैंने बहुत प्रयत्न से पाला-पोसा है। १०. वह मेरा विश्वासपात्र है। ११. इस प्रकार काम करे कि अपना स्वार्थ भी नष्ट न हो। १२. सब कुछ भाग्य के अधीन है। (घ) (ब्राह्मणवर्ग) १. ब्राह्मण, मुनि और संन्यासी ये पापों से मुक्त, रोगों से मुक्त, शास्त्र में निपुण, कार्य में चतुर और ब्रह्म में लीन होते हैं। २. विद्वान् ईश्वर के मक्त, देवों के पूजक, विद्या से युक्त और आचार में निपुण होते हैं। ३. अध्यापन, अध्ययन, यजन, याजन, दान देना और लेना, ये ब्राह्मणों के स्वाभाविक कर्म हैं। ४. लोकसभा के हॉल में विद्वान् संस्कृत के प्रचार और प्रसार के लिए भाषण देते हैं। ५. अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये यम हैं। ६. शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान ये नियम हैं। ७. मनु का कथन है कि यमों का अवस्य पालन करे, केवल नियमों का नहीं। ८. वेदज्ञ, वेद पाठी, स्नातक, होता, अध्वर्यु और उद्गाता यज्ञ में ऋग्, यजुः और साम के मन्त्रों का सस्वर उचारण कर रहे हैं।

संकेत—(क) १. स्त्रियाः । २. दैवतम् । ३. अभिधीयते, निगद्यते । ४. शशिना सह याति वौमुदी, प्रलीयते । प्रमदाः पतिमार्गगा इति प्रतिपन्नं हि विचेतनैरिष । (ख) १. न केवलं यो महतो-ऽपमापते, शृणोति तस्मादिष यः स पापभाक् । २. शृगु मे सावशेषं वचः । ३. मद्भचनं संगतार्थं न वेति । ४. तदनु । ५. द्वादशिमवेषः, श्रयते । ६. अश्रीपम् । ७. शुश्रपस्य गुरून् । ८. न शुश्रपते । ९ हितान्न यः संशृणुते स किप्रमुः । १० संशृणोति न चोक्तानि । ११. विप्राय गां प्रतिश्वगोति, आश्रणोति । (ग) १. वेलोपलक्षणार्थमादिष्टोऽस्मि । २. कालान्तरक्षमा । ३. हस्तसंनिहित कुरु । ४. अभिनवमार्जनस्थीकोऽलिन्दः । ५. न मे वचनावसरोऽस्ति । ६ मेनकासंवन्धेन शरारमृता मे शकुन्तला । ७. वंशप्रतिष्ठा । ८. आपातरम्या विषयाः पर्यन्तपरितापिनः । ९. प्रयत्नसंविधेत एषः । १० विश्वसमभूमिः , विश्वस्मभूमिः । ११. स्वार्थाविरोधेन वर्तेत । १२. सर्वं दैवायक्तम् । (घ) ३. दानं

CC-O. Di Ramdev Tripathi Collection at Sarai (CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शब्दकोष-५०० + २५ = ५२५] अभ्यास २१ (व्याकरण)

(क) अवनिपतिः (पुं॰, राजा), अमात्यः (मन्त्री), प्रधानमन्त्रिन् (पाइम मिनिस्टर), मुख्यमन्त्रिन् (चीफ मिनिस्टर), मन्त्रिपरिषद् (केबिनेट), सचिवः (सेकेटरी), शिक्षासचिवः (एजुकेशन सेकेटरी), प्राड्विवाकः (वकील), मुद्रा (सिका), टङ्कनम् (सिका ढालना), टङ्कशाला (टकसाल), नैष्किकः (टकसालाध्यक्ष), रक्षिन् (सिपाही), योधः (योद्धा), सेनापतिः (पुं॰, सेनापति), चमूः (स्त्री॰,सेना), प्रतीहारः (द्वारपाल, अर्दली), अरातिः (पुं॰, शत्रु), करः (टैक्स), शुल्कः (पीस, चुंगी), शुल्कशाला (चुंगीघर),शौल्किकः (चुंगी का अध्यक्ष), चारः (दूत), राजदूतः (राजदूत), आतपत्रम् (छत्र)। (२५)

व्याकरण (सुधी, स्वभू, कृ पर०, कर्मधारय, द्विगु समास) १. सुधी और स्वभू शब्दों के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० सं० ८,१०) २. कु धातु परस्मैपदी के दसों लकारों के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ९१)

त्यम १४७ — (तत्पुरुषः समानाधिकरणः कर्मधारयः) तत्पुरुष के दोनों पदों मं जय एक ही विभक्ति रहती है, तब उसे कर्मधारय समास कहते हैं। इसमें साधारणतया प्रथम पद विशेषण और दूसरा पद विशेषण होता है। इसके मुख्य नियम ये हैं—(१) विशेषण-पूर्वपद कर्मधारय—(क) (विशेषणं विशेषणं वहुल्म्) विशेषण-विशेष्य-समास—नील्म् उत्पल्म्>नीलोत्पल्म्। कृष्णः सर्पः>कृष्णसर्पः। इसी प्रकार नील-कमल्म्, रक्तोत्पल्म्। (ख) (कि क्षेपे) निग्दा अर्थ में किम्—कुत्सितः राजा किराजा। कुत्सितः सखा किंसखा। (त) (कुगतिपादयः) सुन्दर अर्थ में 'सु' और कुत्सित अर्थ में 'कु'— सुन्दरः पुरुषः> सुपुरुषः। सुपुत्रः, सुदेशः, सुदिनम्। कृत्सितः पुरुषः— कुपुरुषः। कुपुत्रः, कुदेशः, कृदिनम्, कुनारी। (त्र) (सन्महत्यरमो॰) सत्, महत्, परम आदि—सन् चासौ जनः> सजनः। महान् चासौ आत्मा > महात्मा। महादेशः। (२) उपमानपूर्वपद कर्मधारय—(उपमानानि सामान्यवचनैः) उपमान शब्द का गुणवोधक सामान्यधर्म के साथ—धन इव श्यामः> धनश्यामः। (३) उपमानोत्तरपद कर्मधारय — (उपमितं व्याघादिभिः०) उपमेय का उपमान के साथ समास—पुरुषः व्याघ इव > पुरुष्वयाधः। मुखं कमलमिव> मुखकमल्म्। यह 'एव' लगाकर भी हो सकता है—मुखमेव कमल्म्> मुखकमल्म्। नरसिंहः, हर्सिंहः, करकमल्म्, पादपन्नम्, पुरुष्पर्यः। (४) विशेषणोभयपद कर्मधारय—(क) (वर्णो वर्णेन) दोनों रगवाची हो—कृष्णश्चासौ श्वेतः> कृष्णश्चेतः। श्वेतरम्, कृष्णसारङः। (ख) (क्तेन नञ्०) कृतं चतत् अकृतं च > कृताकृतम्। (पूर्वकालैक०) स्नातश्च अनुलिमश्च > स्नातानुलितः। (५) उत्तरपदलोपी समास—(शाकपार्थिन्वादीनां सिद्धये०) शाकप्रियः पार्थवः> शाकपार्थिनः। चन्द्रसहश्च मुख्म् > चन्द्रमुखम्।

नियम १४८—(संख्यापूर्वो द्विगुः) जन कर्मधारय समास में प्रथम शब्द संख्या-वाचक होता है तो वह द्विगु समास होता है। अधिकतर यह समाहार (समूह) अर्थ में होता है और नपुं॰ या स्त्री॰ एक॰ होता है। (१) समाहार अर्थ में —पञ्चानां गवां समाहारः>पञ्चगवम।इसीप्रकार त्रिलोकम्, त्रिलोकी, त्रिभुवनम्, चतुर्युगम्, दशाब्दी, श्रताब्दी। (२) तद्धितार्थ में — षण्णां मातॄणाम् अपत्यम् >षाण्मातुरः। पञ्चकपालः।

संस्कृत वनाओ—(क) (मुधी, खभू) १. विद्वान् विद्वानों के साथ चलते हैं, मूर्ख मूर्खों के साथ । समान शील और व्यसनवालों में मित्रता होती है । २. विद्वान सर्वत्र आदर पाते हैं। ३. विद्वानों के संग से मूर्ख भी चतुर हो जाता है। ४. ब्रह्मा (स्वभू) से जगत् उत्पन्न होता है। ५. प्रलय के समय संसार ब्रह्म में ही लीन हो जाता है। (ख) (कु धातु) १. क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, बड़ी विपत्ति में पड़ा हूँ। २. हंसपदिका संगीत का अक्षराभ्यास कर रही है। ३. तुम अपनी ड्यूटी पर जाओ। ४. पिता, मैं क्या करूँ ? ५. राजा ने पुत्र को युवराज बनाया। ६. कुम्हार घड़ा बनाता है, शुद्र चटाई बनाता है। ७. घर बनाओ, सभा करो। ८. भिक्षा के लिए अंजलि करता है। ९. में तुम्हारा कहना मानूँगा। १०. वह रात्रि में स्त्री का रूप बनाकर घूमा । ११. उसने गले में हार डाल लिया । १२. राजा उन-उन कार्यों में अध्यक्षों को लगावे। १३. धनुष को हाथ में ले लो। १४. उसने नगर में जाने की इच्छा की । १५. इसने मेरे साथ अच्छा न्यवहार नहीं किया । (ग) (तत्पुरुष, कर्म०, द्विग्) १. यह मुझसे अपृथक् है। २. मैं तुम्हारे अधीन हूँ। ३. यह मामला आपके हाथ में है। ४. दिन लगभग ढल गया है। ५. बार-बार आग्रहपूर्वक पूछे जाने पर और जिद करने पर उसने सारी बात बताई। ६. इसके कथन से ही ऊँच-नीच का पता लग जायगा। ७. यदि आपको कोई विघ्न न हो तो मेरे साथ घूमने चलिए। ८. मित्र, मजाक की बात को सच न समझ छेना । ९. उसको अपने पद से हटा दिया गया है । १०. सजन महात्मा करकमल में रक्त कमल को लेकर सप्तर्षियों की अर्चना करता है। ११. कुपुत्र, कुपुरुष और कुनारी सुपुत्र, सुपुरुष और सुनारी की निन्दा करते हैं। १२. दुष्टों के संहारक घनक्याम का यश त्रिभुवन और चतुर्युगी में व्याप्त है। (घ) (क्षत्रिय-वर्ग) १. प्रधानमन्त्री श्री नेहरूजी मन्त्रिपरिषद् से मन्त्रणा करके संसद् में नवीन योजनाओं को स्तुत करते थे। २. प्रान्तों में मुख्यमन्त्री मन्त्रियों की सम्मिति से कार्य करते हैं। ३. शिक्षामन्त्री शिक्षा-सचिव के पास अपने आदेशों को भेजता है। ४. टकसाल का अध्यक्ष टकसाल में सोने और चाँदी के सिक्के ढलवाता है। ५. चुंगी का अध्यक्ष चुंगी के अधिकारी को चुंगी की आय का हिसाब प्रस्तुत करने का आदेश देता है।

संकेत—(क) १. सुधियः सुधीभः, समानश्रीलन्यसनेषु सख्यम्। ३. प्रवीणतां याति। ५. प्रलये प्रजीयते। (ख) १. किं करोमि वन गन्छामि, पतितो दुःखसागरे। २. वर्णपरिचयं करोति। ३. स्वनियोगमञ्जून्यं कुरु। ४. किं करवाणि १ ५. युवराजः कृतः। ६. कुम्मकारो घटं करोति, कटम्। ७. कुरु। ८. करोति। ९. करिष्यामि वचस्तव। १०. स्त्रोरूपं कृत्वा। ११. कण्ठे हारमकरोत्। १२. तेषु तेषु, कुर्यात्। १३. हस्ते कुरु। १४. गमनाय मितमकरोत्। १५. अनेन मिय नोचितं कृतम्। (ग) १. अन्यतिरिक्तोऽयमसमन्छरोरात्। २. त्वद्धीनः। ३. अयमर्थस्त्व-दायत्तः। ४. परिणतप्रायमहः। ५. निर्वन्थपृष्टः पुनः पुनश्चानुबध्यमानः। ६. अथरोत्तरव्यक्तिमं-विष्यति। ७. न चेदन्यकार्यातिपातः। ८. परिहासविजिपतं सखे परमार्थेन न गृह्यतां वचः। ९. न्युताधिकारः कृतोऽसौ। (घ) १. प्रास्तौत्। ३. प्रेषयित। २. रजतस्य, टक्क्यिते। ५. शुल्क-

माहिणम् , आयविवरणं प्रस्तोतुमादिश्चति । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha शब्दकोष-५२५ + २५ = ५५०] अभ्गास २२

(व्याकरण)

(क) आहवः (युद्ध), प्रहरणम् (शस्त्र), आयुधम् (शस्त्रास्त्र), आयुधागारम् (शस्त्रागार), वर्मन् (नपुं॰, कवच), कार्मुकम् (धनुष), निस्त्रिशः (खड्ग), कौक्षेयकः (कृपाण), विशिखः (बाण), त्णीरः (त्णीर), करवालिका (गुप्ती), शस्यम् (बर्छा), प्रासः (भाला), तोमरः (गँड़ासा), गदा (गदा), छुरिका (चाक्), धन्विन् (धनुर्धर), शरव्यम् (लक्ष्य), सांयुगीनः (रणकुशल), जिण्णुः (पुं॰, विजयी), कवन्धः (धड़), कारा (जेल), हिस्तपकः (हाथीवान), सादिन् (धुड़सवार), वैजयन्ती (स्त्री॰, पताका)। (२५)

व्याकरण (कर्नृ०, कृ आत्मने०, बहुवीहि समास) १. कर्नृ शब्द के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० सं० ११)

२. कृ धातु आत्मनेपदी के दसों लकारों के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ९१) नियम १४९—(अनेकमन्यपदार्थे) (अन्यपदार्थप्रधानो बहुवीहिः) जिस समास में अन्य पद के अर्थ की प्रधानता होती है, उसे बहुत्रीहि समास कहते हैं। बहुत्रीहि समास होने पर समस्त पद स्वतन्त्र रूप से अपना अर्थ नहीं बताते, अपितु वे विद्योषण के रूप में काम करते हैं और अन्य वस्तु का बोध विशेष्य के रूप में कराते हैं। बहुवीहि की पहचान है कि अर्थ करने पर जहाँ जिसको, जिसने, जिसका, जिसमें आदि अर्थ निकलें। बहुन्नीहि के पाँच भेद हैं-(१) समानाधिकरण, (२) व्यधिकरण, (३) सहार्थक, (४) कर्मव्यतिहार, (५) नञ् और उपसर्ग के साथ। (१) समानाधिकरण बहुवीहि—दोनों पदों में प्रथमा विभक्ति रहती है। अन्य पदार्थ कर्ता को छोड़कर कर्म, करण आदि कोई भी हो सकता है। जैसे—(क) कर्म-प्राप्तमुदकं यं सः >प्राप्तो-दकः। (ख) करण-ऊढः रथः येन सः> ऊढरथः (वैल)। हतशत्रुः (राजा), उत्तीर्ण-परीक्षः (छात्र), कृतकृत्यः (मनुष्य), जितेन्द्रियः (पुरुष), दत्तचित्तः (पुरुष)। (ग) सम्प्रदान—दत्तं भोजनं यस्मै सः > दत्तभोजनः (भिक्षुक)। उपहृतपशुः (रुद्र), दत्तधनः (पुरुष)। (घ) अपादान - उद्भृतम् ओदनं यस्मात् सा > उद्भृतौदना (स्थाली)। पतितं पर्णे यस्मात् सः > पिततपर्ण: (वृक्ष) । निर्गतं भयं यस्मात् सः > निर्भयः (पुरुष) । निर्वलः । (ङ) सम्बन्ध-पीतम् अम्दरं यस्य सः >पीताम्बरः (कृष्ण) । इसी प्रकार दशाननः (रावण), चतुराननः (ब्रह्मा), चतुर्भुखः, पद्मयोनिः, महाशयः, महाबाहुः, लम्बकर्णः, चित्रगुः । (च) अधिकरणः—वीराः पुरुषा यस्मिन् सः>वीरपुरुषः (ग्राम) । (२) व्यधिकरण बहुबीहि—इसमें दोनों पदों में विभक्तियाँ विभिन्न होती हैं। धनुः पाणौ यस्य सः > धनुष्पाणिः । चक्रपाणिः, कण्ठेकालः, चन्द्रशेखरः । (३) सहार्थक-(तेन सहेति तुल्ययोगे) साथ अर्थ से बहुत्रीहि । सह को स । पुत्रेण सहितः > सपुत्रः । इसी प्रकार सायजः, सानुजः, सवान्धवः, सविनयम्, सादरम् । (४) कर्मञ्यतिहार-(तत्र तेनेदमिति सरूपे) तृतीयान्त या सप्तम्यन्त का युद्ध होना अर्थ में समास । पूर्वपद को दीर्ब, अन्त में इ लगेगा और अन्यय होगा। केरोषु गृहीत्वा इदं युद्धं प्रवृ-त्तम् > केशाकेशि । दण्डेश्च दण्डेश्च प्रहत्य॰ > दण्डादण्डि । मृष्टीमुष्टि । (५) नञादि— CC-O. Dr. **उनविका**णामाप्रमुप्तं व्यक्षिता अञ्चलुप्तः अञ्चलुप्तः अञ्चलुप्तः अभितिक्षां स्वर्णे विकासित्वा स्वर्णे विभूवित

संस्कृत बनाओं:-(क) (कर्तृ शब्द) १. दिलीप ने विशिष्ट से वंश के चलानेवाले पुत्र को सुदक्षिणा में माँगा। २. पाणिनि अष्टाध्यायी का, पतंजलि महाभाष्य का और कालिदास रघुवंश का कर्ता है। ३. ऋण का करनेवाला पिता शत्र है। ४. वक्ता श्रोता को धर्म सिखा रहा है। ५. जगत् का कर्ता, धर्ता, भर्ता और हर्ता ईश्वर है । ६. विश्वनियन्ता पर श्रद्धा करो । (ख) (कृ धातु) १. उसने मन में यह सोचा । २. आप अपनी थकान दर कीजिये । ३. में तुम्हारा ओर अधिक क्या उपकार करूँ ? ४. ग्रीध्म समय के बारे में गाइए। ५. विदेशिया के वेष का अनुकरण मत करो (अनु + कृ) । सत्संगति पाप को दूर करती है (अपाकृ)। ७. देशभक्त नेता लोग लोगों का उपकार करते हैं (उपक्व) । ८. सो रुपये धमार्थ लगाता है। ९. वह गीता की कथा करता है (प्रकृ)। १० वह शतु को हराता है (अधिकृ)। ११. मैं मुनित्रय को नमस्कार करता हूँ (नमस्कु)। १२. कामभाव चित्त को विकृत करता है (विकृ)। १३. बुद्धिमान् का अपकार न करे (अपक्)। १४. सजन मेरे घर को अलंकत करें (अलक्)। १५. रुस देश चन्द्रमा तक जानेवाले विमानों का आविष्कार कर रहा है (आविष्कः)। १६. यदि वह चोरी नहीं छाड़ता है तो विरादरी से निकाल दिया जायगा (निराकः)। १७. वेदाध्ययन मन को पावित्र करता है (संस्कः)। १८. योद्धा धनुष, खड्ग और कृपाण को स्वीकार करता है (स्वीकृ)। १९. स्त्रियाँ अपने घरों को सजाती हैं (परिष्कृ)। २० निर्धन का तिरस्कार न करे (तिरस्कृ)। (ग) (बहुब्रीहि) १. राजाओं को उत्सव प्रिय होता है, वीरों को युद्ध और बालकों को मनोरंजन। २. सूर्य ने एक बार ही अपने घोड़े को जाता है, शेवनाग सदा भूमि का भार ढोता है, पष्टांशवृत्ति राजा का भी यही धर्म है। ३. शकुन्तला बाएँ हाथ पर मुँह रखे हुए बैठी है। ४. अच्छे प्रकार से धनुप पर चढ़ाए हुए वाण को उतार लीजिये। (घ) (आयुध-वर्ग)। १. उर्वशी इन्द्र का कोमल हथियार है। २. तुम्हारे अति रेक और किसी ने मेरे शस्त्र को नहीं सहा है। ३. रणकुशल विजयी वीर कवच पहनकर हाथों में धनुष, तलवार, बर्छी, भाले लेकर शत्रुआ को परास्त करते हैं आर अपनी विजय-वैजयन्ती को फहराते हैं। ४. प्राचीन समय में कुछ लोग घोड़ों पर, कुछ हाथियों पर और कुछ रथों पर बैठकर युद्ध करते थे।

संकेत:—(क) विशिष्ठं वंशस्य कर्तारं तनयं सुदक्षिणायां ययाचे। ४. श्रोतारं शास्ति। (स्त) १. एवमकरोत्। २. परिश्रमिवनोदं करोत्वार्यः। ३. किं ते भूयः प्रियमुपकरोमि। ४. समयम- धिकृत्य गीयताम्। ५. वेषं वेषस्य वा अनुकुर्याः। ६. अपाकरोति। ७. लोकानामुपकु ते। ८. शतं प्रकुरुते। १. गीतां प्रकुरुते। १०. अधिकुरुते। ११. मुनिश्रयम्। १२. विकरोति (एर०)। १३. वुद्धिमतः। १५. विधुगामीनि विमानानि। १६. स्तेयम्, जात्या निराकरिष्यते। १७. संस्करोति। १८. स्वीकरोति। १९. परिष्कुर्वन्ति। २०. निर्धनम्। (ग) १. उत्सवप्रिया राजानः, युद्धप्रिया वीराः, आमोदप्रिया बालाः। २. भानुः सकृषुक्ततुरंग एव, श्रेषः सदैवाहितभूमिभारः, षष्ठांशवृत्तेरिष धर्म एषः। ३. वामहस्तोपहितवदना तिष्ठति। ४. तत्साधुकृतसन्धानं प्रतिसंहर। (घ) १. सुकुमारं प्रहरणम्। २. न मे त्वदन्येन विसोटमायुषम्। ३. परिधाय, अभिगवन्ति, उत्तोलयन्ति। ४. रथान् प्रहरणम्। २. न मे त्वदन्येन विसोटमायुषम्। ३. परिधाय, अभिगवन्ति, उत्तोलयन्ति। ४. रथान्

आरुह्य, अधिष्ठाय वा।

शब्दकोष-५५० + २५ = ५७५] अभ्यास २३

(व्याकरण)

(क) भुशुण्डिः (स्नी॰, बन्दूक), लघुभुशुण्डिः (स्नी॰, पिस्तील), शतन्नी (स्नी॰, वोप), गुलिका (गोली), अग्निचूर्णम् (बारूद), आग्नेयास्त्रम् (वम), आग्नेयास्त्रक्षेपः (यम फेंकना), परभाष्वस्त्रम् (एटम बम). जलपरमाण्वस्त्रम् (हाइड्रोजन बम), धूमास्त्रम् (टीयर गैस), विमानम् (विमान), युद्धविमानम् (लड़ाई का विमान), पोतः (पानी का जहाज), युद्धपोतः (लड़ाई का जहाज), जलान्तरितपोतः (पनडुब्बी), एकपरिधानम् (एकवेषः, यूनिफार्म), सैन्यवेषः (वर्दी), रिक्षन् (सिपाही), सैनिकः (फोजी आदमी), भूसेनाध्यक्षः (भूसेनापति), वायुसेनाध्यक्षः (वायु-सेनापति), नौसेनाध्यक्षः (जल्सेनापति), शिरस्त्रम् (लोहे का टोप), पदातिः (पुं॰, पैदल-सेना)। (२४)। (ख) परिखया परिवेष्टय (मोरचा बाँधना)। (१)

व्याकरण (पितृ, तृ, अद् और शास् धातु, बहुवीहि समास)

१. पितृ और तृ शब्दों के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्द॰ सं॰ १२, १३) २. अद् और शास् धातु के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो धातु० ३१, ४२)

नियम १५०—(स्त्रिया: पुंबद्भाषित०) बहुवीहि समास में यदि पुंलिंग शब्द से बना हुआ स्त्रीलिंग शब्द प्रथम पद हों तो उसे पुंलिंग हो जाता है, ऊ को नहीं। (गोस्त्रियो:०) अन्तिम पद में गो को गु, आ को अ, ई को इ हो जाता है। रूपवती भार्या यस्य सः > रूपवद्भार्यः। चित्रा गावो यस्य सः > चित्रगुः। वामोरूभार्यः ही होगा।

नियम १५१ — बहुनीहि समास करने पर इन स्थानों पर अन्तिम पद में कुछ समासान्त प्रत्यय या परिवर्तन होते हैं—(१) (जायाया निङ्) जाया को जानि हो जाता है। युवतिः जाया यस्य सः> युवजानिः। भूजानिः, महीजानिः। (२) (धनुषश्च) गनुष् को धन्वन् हो जाता है। पुष्पाणि धनुः यस्य सः> पुष्पधन्वा (कामदेव)। शार्क्व- धन्वा, शतधन्वा। (३) (गन्धस्येदुत्०) उत्, पूति, सु, सुर्राभ के बाद गन्ध को गन्धि होता है। शोभनः गन्धो यस्य सः> सुगन्धिः। सुर्राभगन्धिः। (४) (पादस्य लोपो०) पाद को पाद् हो जाता है; कोई उपमान शब्द पहले हो तो, हस्ति आदि को छोड़कर। (संख्यासुपूर्वस्य) कोई संख्या या सु पहले हो तो पाद को पाद्। व्याघ्रपात्। द्विपात्। सुपात्। द्विपदी। सतपदी। स्त्री० में पाद् को पद्। (५) (प्रसंभ्यां जानुनो जुः) प्र, सम् और ऊर्ध्व के बाद जानु को जु होता है। प्रजुः, संजुः, ऊर्ध्व छः। (०) (इच्कर्मव्यतिहारे) कर्मव्यतिहार में अन्त में इ लग जायगा। वेशाकेशि, दण्डादण्डि, बाहूबाहिव। (९) (धर्मादनिच्०) धर्म शब्द को धर्मन् हो जाता है। कल्याणधर्मा, समानधर्मा। (८) (नित्यमसिच् प्रजामधर्योः) नञ्, दुः, सु के बाद प्रजा और मेधा में अस् लग जाता है। अप्रजाः, सुप्रजाः। अमेधाः, दुर्मेधाः। (९) (उपसर्गाच) उपसर्ग के बाद नासिका को नस। प्रणसः, उज्ञसः। (१०) (द्वित्रिभ्यां च मूर्प्नः) द्वि, त्रि के बाद मूर्धन् को मूर्ध। द्विमूर्धः, त्रिमूर्धः। (११) (अङ्गलेदांरुण) लकड़ी अर्थ के अङ्गलि को अङ्गल। पञ्चाङ्गलं दार । (१२) (बहुनीहौ०) अक्षि को अक्ष। जलजाक्षः, कमलाक्षी। (१३) (बहुनीहौ संख्येये०) त्रि को त्र, विश्वित को विश्व, दशन् को दश। द्वित्राः, द्विदशाः, आसन्तिशाः।

नियम १'-२ — इन स्थानों पर अन्त में क लगता है — (१) (उरः प्रभृतिभ्यः) अरम् आदि के बाद। व्युढोरस्कः, प्रियसपिंकः। (२) (इनः स्त्रियाम) इन्-प्रत्ययान्त के बाद। बहुदण्डिका नगरी। (३) (नयृतश्च) ई, ऊ, ऋ के बाद। सुश्रीकः, सुवधूकः,

संस्कृत वनाओ-(क) (पितृ, नृ) १. इससे बढ़कर और कोई धर्माचरण नहीं है, जितना पिता की सेवा और उनका कहना मानना । २. मैं जगत् के माता-पिता पार्वतीपरमेश्वर की वन्दना करता हूँ। ३. पार्वती ने पिता से अरण्य में निवास की माँग की । ४. पिता सौ आचार्यों से बढ़कर है और माता सौ पिताओं से। ५. मनुष्यों में तुम ही एक धन्य हो। ६. भगवन् , दीन मनुष्यों की रक्षा करो। (ख) (अद , शास्) १. मैं जिस जीव का मांस यहाँ खाता हूँ, वह परलोक में मुझे खाएगा। यह मांस का मांसत्व है (मां + स = मांस)। २. फल खाओ, साग खाओ और दूध-धी खाओ । ३. वह वालक को धर्म सिखाता है। ४. मैं तुम्हारा शिष्य हूँ, तुम्हारी शरण में आया हूँ, तुम मुझे शिक्षा दो। ५. अद्वितीय शासनवाली पृथ्वी का उसने शासन किया। ६. शिष्य को वेद-ज्ञान दिया। ७. धार्मिक राजा चोरों को दण्ड दे। (ग) (बहुबीहि) १. कृष्ण की भार्या रूपवती है और उसकी गार्ये चितकदरी हैं। २. अद्भुत गुणों से युक्त नल पृथ्वी का पति था। ३. दुष्टों में परस्पर बाल खींच कर, डण्डे मार कर, हाथा-पाई करके झगड़ा हुआ। ४. कामदेव का धनुष फूलों का है। (घ) (सैन्य-वर्ग) १. डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद भारत के राष्ट्रपति थे और डा. राधाकृष्णन् भा राष्ट्रपति थे। २. भू, वायु और जल सेना के कमाण्डर-इन-चीफों की एक बैठक सुरक्षामन्त्री के नेतृत्व में दिल्ली में हुई, जिसमें भारत की सुरक्षा के विषय में विचार-विनिमय हुआ। ३. सिपाही वदीं पहने पहरा दे रहे हैं। ४. फाजी लोगों ने विद्रोहियों को दबाने के लिए पहले टीयर गैस छोड़ी और बाद में बन्दूक, पिस्तौल आर तोपों का प्रयोग करके उनको भस्मसात् कर दिया। ५. गत महायुद्ध में अंग्रेजों का जंगी बेड़ा बहुत प्रसिद्ध था। ६. आजकल रूस और अमेरिका के पास एटम बम, हाइड्राजन बम और युद्ध के विमान सबसे अधिक हैं। ७. आजकल के युद्धों में परमागु बमां और युद्ध-विमानों का महत्त्व बढ़ गया है। ८. बम फेंककर हजारों लोगों का महार किया जा सकता है। ९. बारूद से मकानों को उड़ाया जा सकता है। १०. नगर की सुरक्षा का भार एस० पी० और डी॰ एस॰ पी॰ पर मुख्यतः होता है। ११. प्रत्येक प्रान्त में पुलिस के उच्च अधिकारी आई॰ जी॰ और डी॰ आई॰ जी॰ होते हैं। १२, लड़ाई में मोर्चाबन्दी की जाती है और उसमें लड़ाई के विमान, पोत, पनडुब्बियों आदि का उपयोग होता है।

संकेतः—(क) १. अतो महत्तरम्। पितरि शुश्रूषा, वचनिक्रया। २. पितरौ, वन्दे। ३. पितरम् अरण्यनिवासम् अयाचत। ४. आचार्याणां शतं पिता, पितृणां शतं माता, गौरवेणा-तिरिच्यते। ५. नृणाम्। ६. नृन् पाहि। (ख) १. मां स मक्षयिताऽमुत्र यस्य मांसिमिहाद्म्यहम्। पतन्मांसस्य मांसत्वम्। ३. शास्ति। ४. शिष्यस्तेऽइं, शाधि मां त्वां प्रपन्नम्। ५. अनन्य-रासनामुवीं शशास। ६. शिष्यायाशिषद् वेदम्। ७. चौरान् दण्डेन शिष्यात्। (ग) १. रूप-शासनामुवीं शशास। ६. शिष्यायाशिषद् वेदम्। ७. चौरान् दण्डेन शिष्यात्। (ग) १. रूप-शासनामुवीं शशास। २. नलः स भूजानिरभूद्गुणाद्भुतः। ३. केशकेशि, दण्डादण्डि, वद्मार्थः चित्रगुश्च कृष्णः। २. नलः स भूजानिरभूद्गुणाद्भुतः। ३. परिधाय पर्यटित । ४. बाह्यहिणां प्रश्नमनार्थम्, प्रहृतम्, प्रयुज्य। ५. नौतेना, विश्रता। ६. रूसदेशस्य। ७. आधु-विद्रोहिणां प्रश्नमनार्थम्, प्रहृतम्, प्रयुज्य। ५. नौतेना, विश्रता। ६. रूसदेशस्य। ७. आधु-विद्रोहिणां प्रश्नमनार्थम्, ९. विध्वंसियतुं शक्यन्ते। १० कोटपाले, उपकोटपाले। ११. रक्षिणाम्,

СС-О. **प्रशस्त्रकारक्षिरिनीक्षकाः** छास्प्रितिन रक्षिनित्रेक्षकाः । १२**.** परिख्या परिवेष्टनं क्रियते । СС-О. **प्रशस्त्रकारक्षिरिनीक्षकाः** छास्प्रितिका Saral (CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha शब्दकोष-५७५ + २५ = ६००] अभ्यास २४

(व्याकरण)

(क) विषक् (वैश्य), वृत्तिः (स्त्री०, जीविका), वाणिज्यम् (व्यापार), ऋणम् (कर्ज), उत्तमर्णः (कर्ज देनेवाला), अधमर्णः (कर्ज लेनेवाला), कुसीदम् (सूद), कुसी- दिकः (साहूकार), कुसीदवृत्तिः (स्त्री०, बैंकिंग, साहूकारा), पण्यम् (सामान, सादा), विपणिः (स्त्री०, वाजार), आपणः (दूकान), आपणिकः (दूकानदार), विकेतृ (पु०, वेचनेवाला), ग्राहकः (ग्राहक, लेनेवाला), विकयः (विक्री), विणक्पञ्जिका (ग्रही), दैनिकपञ्जिका (रोजनामचा, रोकड़), नामानुकमपञ्जिका (लेखा बही), आये (सप्तमी, आयमध्ये), नाम्नि (सप्तमी, उधारखाते), संख्यानम् (हिसाब), लेखकः (मुनीम), राशिः (पुं०, स्त्री०, धन, रकम)। (२४)। (ख) पण् (खरीदना)। (१)।

व्याकरण-(गो, अस् धातु, द्वन्द्व समास)

१. गो शब्द के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द सं० १४)

२. असु धातु के दसों लकारों के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ३२)

नियम १५३ -(चार्थे द्रन्दः) (उभयपदार्थप्रधानो द्रन्दः) जहाँ पर दो या अधिक शब्दों का इस प्रकार समास हो कि उसमें च (और) अर्थ छिपा हुआ हो तो वह द्वन्द्व समास होता है। द्वन्द्व समास में दोनों पदों का अर्थ मुख्य होता है। द्वन्द्व समाम की पहचान है कि जहाँ अर्थ करने पर बीच में 'और' अर्थ निकले । द्वन्द्व समास तीन प्रकार का होता है:-१. इतरेतर, २. समाहार, ३. एकशेष। (१) इतरेतर-नहाँ पर बीच में 'और' का अर्थ होता है तथा शब्दों की संख्या के अनुसार अन्त में वचन होता है अर्थात् दो वस्तुएँ हों तो द्विचन, बहुत हों तो बहुवचन । प्रत्येक शब्द के बाद विग्रह में च लगेगा। रामश्र कृष्णश्र >रामकृष्णौ। इसी प्रकार सीतारामौ. उंभारांकरो, रामलक्ष्मणौ, भीमार्जुनौ । पत्रं च पुष्पं च फलं च> पत्रपुष्पफलानि । राम-लक्ष्मगभरताः। (परविलिङ्गं द्वन्द्व०) द्वन्द्व में अन्तिम शब्द् के लिंग के अनुसार पूरे समास का लिंग होगा । मयूरी च बुक्कुटश्च > मयूरीकुक्कुटी । कुक्कुटश्च मयूरी च > कुक्कुटमयूर्यो। पहले में पुं० है, दूसरे में स्नो०। (२) समाहार—जहाँ पर कई शब्द अपना अर्थ बताते हुए समाहार (समूह) का अर्थ बताते हैं। इस समास में अन्त में नपुं० एक श रहता है। यह समास मुख्यतः इन स्थानों पर होता है: (क) (इन्द्रश्च प्राणितूर्य॰) मनुष्य के अंग, वाद्य के अंग, सेना के अंग में --पाणी च पादौ च > पाणिपादम् (हाथ-पैर)। मार्दङ्गिकपाणविकम्, रिथकाश्वारोहम्। (ख) (जाविर-प्राणिनाम्) निर्जीव जातिवाचक शब्द । यवाश्च चणकाश्च> यवचणकम् । व्रीहियवम् । (ग) (येवां च विरोधः०) जिनका जन्मसिद्ध वैर हो । अहिन्कुलम् , गोव्याघम् , काको-ल्कम्। (त्र) (विभाषा वृक्षमृग०) वृक्ष, मृग, पशु आदि मे विकल्प से। कुशकाशम्, शुक्रवकम्, गोमहिषम्, दिधवृतम्, पूर्वापरम्, अधरोत्तरम्। (ङ) (विप्रतिषिद्धं०) विरोधी चीजों में । शीतोष्णम् , सुखदुःखम् , पापपुण्यम् । (च) (द्व-द्वाच्चुदषहान्तात्०) अन्त में चवर्ग, द्, ष्, ह् होंगे ता अ अन्त में जुड़ेगा। वाक्त्वचम्। त्वक्सजम्।

CC-कामीटम्बन्ध्वर्थं नात्रवृत्त्विष्य्वर्थः क्रियोम्बन्ध्यं (पेऽ क्रियो निर्मारी प्रमुख्य प्

संस्कृत बनाओ: -(क) (गी शब्द) १. गोएँ दूधवाली हों। २. चरागाह से गाय को लाओं। ३. बाड़े में गाय को बन्द करो। ४. गायों को पालो। ५. गाय की महिमा अपार है। ६. गायों में काली गाय अधिक दृध देती है। ७. राम की बात सुनकर सीता वाली । (ख) (अस् धातु) १. जिसके पास स्वयं बुद्धि नहीं है, शास्त्र उसका क्या भला कर सकता है ? २. मेरे पास खाने को है। ३. जो मेरी चीज है, वह तुम ले लां। ४. उसके पास कुछ भी धन नहीं है। ५. वह चुप था। ६. अच्छा ऐसा ही सही। . सृष्टि के आदि में न असत्था और न सत्। ८. मैं पहले नहीं था, ऐसी बात नहीं है। ९. मैं जो चाहता हूँ, वह तुम्हें मिले। १०. शिव तुम्हं मुक्ति दे। ११. सज्जनों क कल्याण के लिए श्री और सरस्वती का मेल हो। १२. अन्य राजाओं का दिया हुआ मेरे साग और नमक भर को होगा। १३. जैसा मैं उसके प्रति सोचता हूँ, क्या वह भी मेरे प्रति वैसा ही सोचती है ? १ . सूर्य निकला। (ग) (इन्द्र) १. दुर्थोधन और भीम का गदा-युद्ध प्रारम्भ हुआ। २. अतिथि के लिए पत्र, पुष्प और फल लाओ । ३. राम, लक्ष्मण और भरत भ्रातृ-प्रेम की मूर्ति हैं । ४. मोरनी और मुर्गे वन में घूम रहे हैं। ५. मुनि मुख-दु:ख, पाप-पुण्य और सर्दी-गर्मी को समान मानता है। ६. धी दूध और जौ-चने खाओ। ७. पूर्वापर और ऊँच-नीच को सोचकर बोलो । ८. छाता-जूता लाओ । (घ) (वैश्यवर्ग) १. बनिया सःहूकारी का काम करता है, वह लोगों को रुपया उधार देता है और सूद वसूल करता है। २. आज बाजार में बहुत रोनक थी, दूक नें सजी हुई थीं, बनिए ग्राहकों को सामान बेच रहे थे और वे नगद खरीद रहे थे। ३. कर्ज लेनेवाला सदा ६:स्वी रहता है और कर्ज देनेवाला पनपता है। ४. वाणिज्य सुख का मूल और वैभव का कर्ता है। ५. बनियों की दुकानों पर मुनीम रहते है, वे दुकान की आय और व्यय का पूरा हिसाब बहियों में िखते हैं। जो आमरनी होती है, उसे आयमध्ये और जो उधार जाता है, उसे उधार खाते लिखते हैं। दैनिक आय-व्यय राजनामचा में लिखा जाता है और बाद में वही लेखा बही में वर्णानुक्रम सं प्रत्येक व्यक्ति के हिसाब में लिखा जाता है। ६. वर्निए रोज के रोज अपना हिसाय बहुत बारीकी स मिलात हैं।

संकेत—(क) १. क्षारिण्यः। २. इ. द्वलात्। ३. व्रजमवरुण द्धि गाम्। ४. पालय। ५. गोस्तु मात्रा न विद्यते। ६. कृष्णा हुर्षारा। ७. गां निशम्य। (ख) १. यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा, शास्त्र०। २. अस्ति मे भोक्तम्। ३. यन्ममास्ति। ४. नहि तस्यास्ति किंन्ति स्वम्। ५ तृष्णीम्।६. एवमेव स्यात्।७. नामदासीन्नो स्दासीक्त्रानीम्। ८. न त्वेवाहं जातु नामम्। ९. ते तहस्तु। १० निःश्रेयमायास्तु वः। ११. भूतये म् गतम्। १२. अन्येनृंपालैः परिदायमानं शाश्य वा स्थात् लवणाय वा स्थात्। १३. किं नु खलु यथा वयमस्याम्, एवमियमप्यस्मान् प्रति स्यात्। १४. प्रादुरासीत्। (ग) ४. मयूरीकुक्कुटाः। ५. शीतोष्णम्, मनुते। ७. अधरोक्तरम्। ८. छत्रोपानहम्। (घ) १ धनम् ऋणरूपेण यच्छति, गृह्णाति। २. अपूर्वा छटा, मुस्जिताः, वस्तुनि व्यक्षीणत्, मृत्वेन। ३. एधते। ४. मूलम्, कर्तृ। ५. आयः, ऋणरूपेण दीयते, लिख्यते, आयव्ययविवरणे। ६. प्रत्यहम्, अतिमुक्ष्मतया गणयन्ति।

CC-O. Dr. Ramgev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(व्याकरण) शब्दकोष-६०० + २५ = ६२५] अभ्यास २५

(क) अभिकर्तृ (पुं॰, एजेण्ट, आढ़ती), अभिकरणम् (एजेन्सी, आढ़त), शुल्कम् (कमीशन, दलाली), शुल्काजीवः (दलाल, कमीशन एजेण्ट), नुला (तराज्र), तोलनम् (तोलना), तोलः (तोल), तुलामानम् (वाट, बटखरा), अर्घः (भाव, रेट), मृत्यम् (मृत्य), मृत्येन (तृ॰, नगद), ऋणरूपेण (तृ॰, उधार), अद्यापिचितिः (स्त्री॰, भाव गिरना), अर्घोपचितिः (स्त्री॰, भाव चढ़ना), मन्दायनम् (मन्दी), मृलधनम् (पुँजी), विनिमयः (अदल-बदल), आयातः (वाहर से आना, इम्पोर्ट), निर्यातः (वाहर जाना, एक्सपोर्ट), करः (टैक्स), विक्रयकरः (सेत्स टैक्स), आयकरः (इन्कम-टैक्स), क्रयः (खरीद), आयात ग्रुल्कम् (आयात पर चुंगी), निर्यातग्रुल्कम् (निर्यात पर चुंगी) । (२५) ।

व्याकरण (प्राञ्च्, उदञ्च् ; ब्रू धातु, एकशेष, अलुक् समास)

१. प्राञ्च् , उदञ्च् शब्दों के पृरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्द ० सं० १६,१७)

२. ब्रू धातु के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ४७)

नियम १५४—(एकशेष) एकशेष मुख्यतः इन स्थानों पर होता है—(क) (सरूपाणाम्॰) द्विवचन और बहुवचन में एक शब्द शेष रहेगा, उसीसे विभक्ति होगी।
वृक्षश्च वृक्षश्च > वृक्षौ । वृक्षाः । (ख) (पिता मात्रा) पिता माता में पितृ शेष रहेगा, उससे द्वियचन होगा। माता च पिता च> पितरौ। (ग) (पुमान स्त्रिया) स्त्रीलिंग और पुंलिंग में पु॰ शेप रहेगा, उससे द्वियचन होगा। हंसी च हंसश्च> हसी।

नियम १५५—(एकशेष) (नपंसकमनपुंसकेन०) यदि एक वाक्य में पुंलिग और स्त्रिलिंग शब्द हैं तो सर्वनाम और किया पुं० होंगे। यदि पुं०, स्त्री०, नपुं० तीनों हैं तो सर्दनाम और क्रिया नपुंसक० होंगे। ग्रुक्टः पटः, ग्रुक्टा शाटी, ताविमो कीतौ।

नियम १५६—(एक्झेप) (त्यदादीनि०) कोई संज्ञा-झब्द और सर्वनाम होगा, तो सर्वनाम दोप रहेगा। कई सर्वनाम होंगे तो अन्तिम द्रोष रहेगा। स रामश्च >तो।

नियम १५८-(एकरोष) प्रथम, मध्यम, उत्तमपुरुष एकत्र हों तो किया इस प्रकार रेगी: - (क) प्रथम० + प्रथम० = क्रिया प्रथमपुरुष । वचन समृह के अनुसार ! रामः रमा च पटतः । (ख) प्रथमः + मध्यमः = क्रिया मध्यम पुः । वचन संख्या-नुसार । स त्वं च पटथः । ते यूयं च गच्छथ । (ग) यदि उत्तमपुरुष भी होगा तो उत्तम पुरुष शेष रहेगा । वचन संख्या के अनुसार होगा । स त्वम् अहं च पटामः ।

नियम १'१८—(नञ्समास) (नञ्, तस्मान्तुडचि) त्रपुरुष और बहुवीहि में नञ् समास होता है। नञ्का 'अ' शेष रहता है। बाद में कोई स्वर होगा तो अ को अन् हो जायगा । न ब्राह्मणः > अब्राह्मणः । न पुत्रः यस्य सः > अपुत्रः । उपस्थितः >अनुपस्थितः । अतिथिः, अज्ञः, अनुचितः, अनादरः, अनीश्चरवादी ।

नियम १५९-(अलुक् समास) जिन स्थानों पर बीच की विभक्ति का लोप नहीं होता है, उसे अछक् समास कहते हैं। विभक्ति लोप इन स्थानों पर नहीं होता है। परभ्मैपटम्, आत्मनेपद्, युधिष्टिरः, कण्टेकालः (शिव), अन्तेवासिन् (शिष्य), प्रयतोहरः (मुनार, डाकृ), देवानांवियः (मृर्ख), शुनःशेपः (नाम), दिवोदासः (नाम), खेचरः (देव आदि), सरसिजम् (कमल), मनसिजः (काम), पात्रेसमिताः (फाने के

संस्कृत वनाओं—(क) (प्राञ्च्, उदञ्च्) १. इस विषय में पूर्व, पश्चिम और उत्तर के वैयाकरणों में एकमत नहीं है। २. पूर्व पश्चिम और उत्तर के लोग अपने-अपने प्रदेश को अधिक मानते हैं। ३. पूर्व दिग्माग में सूर्य उदय होता है और पश्चिम में अस्त होता है। उत्तर में हिसालय शोभित होता है। ४. पूर्व दिशा में अब चन्द्रमा निकल रहा है और सूर्य पश्चिम में छिप रहा है। उत्तर में हिमालय है। (स्त्र) (ब्रू धात) १. में शकुन्तला के विषय में कह रहा हूँ। २. वह वच्चे को धर्म बता रहा है। ३. तुमसे क्या कहें ? ४. सब्जन कार्य से अपनी उपयोगिता बताते हैं, न कि मुँह से । ५. मेरे चार प्रश्नों का उत्तर दो । ६. दिलीप ने शेर को उत्तर दिया । ७. सत्य बोलो, प्रिय बोलो, अप्रिय सत्य न बोलो। ८. मैंने कहा कि चरित्र की उन्नति से देशोन्नति होती है। (ग) (एकदोष, अलुक्) १. माता-पिता की वन्दना करता हूँ। २. एक कापी, एक होल्डर और एक पुस्तक, ये तीन चीजें खरीदीं। ३. एक डंडा और एक साड़ी, ये दो समान खरीदे। ४. देवदत्त और तुम कव खेलने जाओगे ? ५. देवदत्त, तुम और हम सब आज घूमने चलेंगे। ६. कक्षा में अनुपिस्थित न हो, अनीखरवादी न हो. अतिथि का अनादर न करो, अनुदार मत हो। ७. अज्ञ अनुचित कार्य करते हैं। ८. सुनार देखते-देखते सोना चुरा लेता है। ९. आजकल अधिकांश मित्र खाने के साथी होते हैं, मौका पड़ने पर काम नहीं आते। १०. कुत्ता भी घर पर शेर होता है। (घ) (व्यापारीवर्ग) १. आढ़ती आढ़त करता है, दूसरे के लिए सामान मँगाता है और बेचता है। २. दलाल कमीशन लेकर एक का सामान दूसरे के हाथ बिकवाता है। ३. ग्राहक दूकानदार से वस्तुओं का भाव पूछता है। ४. दूकानदार तराज़ू पर बाट रखकर सामान तोलता है, डण्डी नहीं मारता है। ५. कुछ दुकानदार डंडी भी मारते हैं और कम तोल देते हैं। ६. सदा नगद लेना चाहिए। ७. उधार लेना और उधार देना दोनों ही अनुचित और हानिकारक हैं। ८. भाव कभी गिरता है, कभी चढ़ता है, कभी मन्दी भी आती है। ९. सरकार ने विक्री पर सेल्स-टैक्स, आयात पर आयात-कर, निर्यात पर निर्यात-कर और आमदनी पर इन्कम-टैक्स लगाए हुए हैं।

संकेत-(क) १. प्राचां प्रतीचामुदीचां "नैकमत्यम्। २. प्राञ्चः प्रत्यन्तः उदन्नः। रे प्राचि दिग्भागे, प्रतीचि, उदीचि। ४ प्राच्यां दिशि, प्रतीच्याम्, उदीच्याम्। (ख) १. इ कुन्तलामधिकृत्य ब्रवीमि । २. माणवकं धर्म ब्रते । ३. किं त्वां प्रति ब्र्महे । ४. ब्रुवते हि फलेन साधवी, न वण्ठेन निजोपयोगिताम्। ५. ब्रूहि मे चतुरः प्रश्नान्। ६. प्रत्यब्रवीत्। ७. सत्यं मृयात् , प्रियम् । ८. अवोचम् । (ग) १. पितरौ । २. एतानि त्रोणि वस्तूनि । ३. एतौ द्वौ पदार्थौ । ४. गमिष्यथः । ५. गमिष्यामः । ८. पद्रयतोहरः पद्रयत एव, मुण्णाति । ९. पात्रेसमिता भवन्ति, न तु कार्ये । १०. गेहेशूरः, गेहेनर्दी वा । (घ) १. आनाययति, विक्रीणीते । २. अपरस्य हस्ते, विक्राप-यते । ४. तोलयति, क्टमानं न कुरुते । ६. ग्रहीतन्यम् । ७. दानादानम् , द्वयमेव । ८. जातु अर्धा-

पचितिभविति । ९. सर्ववारेण, निर्धारितानि सन्ति ।

शब्दकोश—६२५ + २५ = ६५०] अ**¥यास २६**

(व्याकरण)

(क) अन्नम् (अन्न), शस्यम् (अन्न, खेत में विद्यमान), धान्यम् (धान, भूसी-सिंहत), तण्डुलः (चावल, भूसी-रिंहत), न्नीहिः (पुं०, चावल), गोधूमः गोहुँ), चणकः (चना), यवः (जा), मापः (उड़द), मुद्गः (मूँग), मसूरः (ममूर्), सर्पपः (सरमों), आढकी (स्त्री०, अरहर), दिदलम् (दाल), तिलः (तिल), कलायः (मटर), यवनालः (ज्वार), प्रियंगुः (पुं०, वाजरा), चूर्णम् (आटा), चणकचूर्णम् (वेसन), मिश्रचूर्णम् (मिस्सा आटा), अणुः (पु०, वासमता चावल), श्यामाकः (सावा, जंगली चावल), वनमुद्गः (लोभिया), रसवती (स्त्री०, रसोई)। (२५)

व्याकरण (पयामुच्, वणिज्; या, पा धातु, समासान्तपत्यय) १. पयोमुच्, वणिज् कं पूरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० १५, १८) २. या और पा धातु के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो धातु० ४०, ४१)

नियम १६०—(समासान्तप्रत्यय) निम्नलिखित स्थानों पर समास होने के बाद अन्त में कोई प्रत्यय हाता है। बहुत्रीहि के समासान्त प्रत्ययों के लिए देखो नियम १५१ और ६५२। द्वन्द्व क समासान्त प्रत्यय के लिए देखो नियम १५३ (च)। (१) (राजाह: सिखिभ्यष्टच्) टच् होकर समास के अन्त में राजन् को राज, अहन् को अह या अह, सिख को सख हा जाता है। महान् चासौ राजा > महाराजः। देवराजः। उत्तमम् अहः > उत्तमाहः । कृष्णस्य सखा > कृष्णसखः । (२) (अह्रोऽह्न एतेभ्यः) इन स्थानो पर अहन् का अह होता है। सर्वाह्नः, पूर्वाह्नः, मध्याह्नः, सायाह्नः, द्रयहः, अपराह्नः। (न संख्यादेः) संख्या पहले होगी तो समाहार में अहन का अहः ही होगा। एकाहः, द्वेचहः, त्र्यहः। (३) (आन्महतः ०) प्रथम पद के महत् को महा हो जाता है, कर्मधारय आर बहुत्रीहि में । महात्मा, महादेवः, महाशयः । (४) (अहः सर्वेकदेश०) अच् होकर रात्रि का रात्र हो जाता है, अहः सर्व आदि के बाद । अहोरात्रः, सर्वरात्रः, पूर्वरात्रः, द्विरात्रम्, नवरात्रम्, अतिरात्रः । ('१) (अनोऽश्मायः०) अनस्, अश्मन्, अयस् और सरम् के अन्त में टच् (अ) जुड़ जाता है, जाति या संज्ञा अर्थ में। उपानसम्, अमृताश्मः, कालायसम् , मण्डूकसरसम् । महानसम् (रसोई), पिण्डाश्मः, लोहितायसम् , जलसरसम् । (६) (ऋअपूरब्धृः०) समासान्त अ होकर ऋच् को ऋच, पुर को पुर, अप् को अप, धुर को धुरा, पथिन् को पथ हो जाता है। ऋचः अर्धम् > अर्धर्चः। विष्णोः पृः > विष्णुपुरम् । विमलापं सरः । राजधुरा । सुपथो देशः । (७) (द्वयन्तरुपसर्गेभ्यो०) इन स्थाना पर अन्तिम अप को ईप हो जाता है। द्वीपम्, अन्तरीपम्, प्रतीपम्, समीपम्। (८) (अच् प्रत्यत्वव॰) अच् होकर इन स्थानों पर लोमन् को लोम होता है। प्रति-लोमम्, अनुलोमम्, अवलोमम्। (९) (अचतुर०) निपातन से ये रूप बनते हैं। नक्तन्दिवम्, रात्रिन्दिवम्, अहर्दिवम्, निःश्रेयसम्, पुरुषायुषम्, ऋग्यजुषम्। (१०) (न पूजनात् , किमः क्षेपे, नञस्तत्पु न्षात्) पूजा तथा निन्दा अर्थ में और नञ्समास होने पर काई समासान्त नहीं होगा । सुराजा, किराजा, अराजा, असखा । (११) (अन्ययीभावे शरत्०)अन्ययीभाव में (क) शरद् आदि से टच् (अ) होगा । उपशरदम् , प्रतिविपाशम्। (ख) (प्रतिपर०) प्रति, पर, सम् , अनु के बाद अक्षि को अक्ष होगा। प्रत्यक्षम् , परोक्षम् , समक्षम् । (ग) (अनश्च) अन्नन्त से टच् (अ) और अन् का लोप होगा ।

संस्कृत बनाओ—(क) (पयोमुच्, विणिज) १. बादल गरजता है। २. बादल की बूँदों से सींची हुई वन-राजि शोभित हुई। ३. बादल की पंक्तियों में बिजली की तरह वह राजा चमक रहा था। ४. बादलों में विजली चमकती है। ५. सत्यवक्ता सदा निर्भय होते हैं । ६. बनियों का टका ही धर्म और टका ही कर्म है । ७. बनिया व्यापार में सर्वस्व लगा देता है तथा देश और विदेश में सर्वत्र ही व्यापारार्थ जाता है। , ८. राजा का (भूभुज्) दाहिना हाथ मन्त्री होता है। ९. वैद्यों की (भिषज्) परीक्षा सन्निपात रोग में होती है। १०. अग्नि (हुतभुज्) की लपटें उठ रही हैं। (ख) (या, पा धातु) १. भाग्य से ही धन आते हैं और जाते हैं। २. जवानी ढल जाती है। ३. विश्वासघातक सर्वत्र निन्दित होता है। ४. बचा दाई की अँगुली पकड़कर चला। ५. दिलीप गाय के पीछे चला। ६. अच्छा यह छोड़ो, ठीक बात पर आओ। ७. तुम्हारी बुद्धि मारी गयी है। ८. झूट बोलने से मनुष्य गिर जाता है। ९. बचा सोता है। १०. खिलाने से कौन वश में नहीं आ जाता ? ११. सूर्य उदय होता है और अस्त होता है। १२. नदी के पार जाता है। १३. गाय उस राजा से शोभित हुई (भा) । १४. तुम पिता की तरह प्रजा की रक्षा करते हो । १५. शिव तुम्हारी रक्षा करे । (ग) (समासान्त) १. वह महाराजा कृष्ण का सखा है। २. दिन-रात परिश्रम से काम करो | ३. तालाब का जल स्वच्छ है। ४. इस नगर की सड़कें अच्छी हैं। ५. अध्यात्म में मन लगाओ । (घ) १. बाजार में सभी दूकानों पर गेहूँ, जौ, चना, चावल, दाल, मटर, ज्वार, वाजरा विकते हैं। २. आजकल कई दालें चल रही हैं, अरहर की दाल, उड़द की दाल, मूँग की दाल और मस्र की दाल। ३. गेहूँ के आटे का भाव ४० रु० मन है। ४. गेहूँ का आटा और बेसन की रोटी जाड़े में अधिक स्वादिष्ट लगती हैं। ५. वासमती चावल का भात मीठा होता है। ६. भात और दालें अच्छी पक्षी होती हैं तो भोजन रुचिकर और पौष्टिक होता है। ७. आज रसोई में मीठे चावल, नमकीन चावल, अरहर, उड़द, मूँग और मसूर की दालें बनी हैं।

संकेत—(क) १ गर्जात। २ पृष्ठतैः सिक्ता। ३ पिङ्क्तपु वियुदिव व्यरुचत्। ४ जलमुक्षु, बोनते। ५ सत्यवानः। ६ विणजो त्रिक्तपर्माणो विक्तरमाण्य भवन्ति। ७ नियुङ्कते। ४ जलमुक्षु, बोनते। ५ सत्यवानः। ६ विणजो त्रिक्तपर्माणो विक्तरमाण्य भवन्ति। ७ भवन्ति ८ भूमुजाम्। ९ भिषजां सान्निपातिके०। १० द्वतभुनोऽर्चीषि उद्यान्ति। (ख) १ भवन्ति यान्ति। २ वोवनभवनित याति। ३ वाच्यतां याति। ४ धात्र्याः, अवलम्ब्य, ययौ। ५ गामन्यग् यान्ति। २ योत्तम् संधीयताम्। ७ यातस्तवापि च विवेतः। ८ लघुतां याति। ९ निद्रां याति। ययौ। ६ यातु, प्रकृतमनुसंधीयताम्। ७ यातस्तवापि च विवेतः। ८ लघुतां याति। ९ निद्रां याति। १० को न याति वशं लोके पिण्डेन पूरितः। ११ उदयं याति, अस्तं याति। १२ पारं याति। १३ को न याति वशं लोके पिण्डेन पूरितः। ११ उदयं याति, अस्तं याति। १० नक्तिन्वम्। १३ व्याप्ति। १४ प्रजाः पासि। १५ पातु वः। (ग) १ कृष्णसद्धः। २ नक्तिन्वम्। ३ विमलापं सरः। ४ सुपथं नगरम्। ५ अध्यात्मे, कुरु। (घ) १ विक्रीयन्ते। ५ भक्तम्। अव्यादिनम्, प्रवानि।

६. सुपक्वानि चेत् । ७. मिष्टोदनम् , लवणौदनम् , पक्वानि । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha शब्दकोष-६५० + २५ = ६७५] अभ्यास २७

(व्याकरण)

(क) रोटिका (रोटी), पूपला (फुलका), पूलिका (पूरी), शष्कुली (स्त्री॰, खस्ता पूरी), पिष्टिका (कचौड़ी), पूपिका (पराँटा), लिप्सका (हलुआ), पायसम् (खीर), स्त्रिका (सेवई), पक्कान्नम् (पक्वान), सूपः (दाल), शाकः (साग), राज्यक्तम् (रायता), क्षीरम् (दूध), आज्यम् (धी), नवनीतम् (मक्खन), तक्रम् (मट्टा), यवागः (स्त्री॰, लपसी, आटे का हलुआ), दाधिकम् (लस्सी), कृशरः (खिचड़ी), शर्करा (शकर, न्रूरा), सिता (चीनी), सन्धितम् (अचार), अवलेहः (चटनी), किलाटः (खोवा)। (२५)

ट्याकरण (भूमृत् शब्द; दुह्, लिह् धातु, स्त्रीप्रत्यय)

१. भूमृत् शब्द के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० सं० १९)

२. दुह् और लिह् धातु के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु॰ ३६, ३७)

नियम १६१—पुंलिंग शब्दों को स्त्रीलिंग बनाने के लिए जो प्रत्यय लगते हैं, उन्हें स्त्रीप्रत्यय कहते हैं। ये साधारणतया ३ हैं—१. टाप् (आ), २. डीप् (ई), ३. डीष् (ई)। इनके रूप रमावत् या नदीवत् चलेंगे। (क) टाप्—(१) (अजाद्यतष्टाप्) अज आदि और अकारान्त शब्दों के अन्त में टाप् (आ) लगता है। जैसे—अज > अजा, बाल > बाला। इसी प्रकार अश्वा, कोकिला, प्रथमा, द्वितीया, ज्येष्ठा, किनष्ठा। (२) (प्रत्ययस्थात्कात्०) यदि शब्द के अन्त में 'अक' होगा तो टाप् होने पर 'इका' हो जाएगा। कारक > कारिका। इसी प्रकार गायिका, अध्यापिका, मूषिका, बालिका।

नियम १६२—(ख) डीप्—(१) (उगितश्र) जिन प्रत्ययों में से उ या ऋ का लोप होता है, उनमें अन्त में डीप् (ई) लगेगा। जैसे —मतुप्, शतृ, कवतु, ईयसुन् प्रत्ययवाले शब्द। मतुप्—श्रीमत्>श्रीमती। बुद्धिमती, विद्यावती, भगवती। शतृ—पठत्> पठन्ती। लिखन्ती, हसन्ती, गच्छन्ती, कुर्वन्ती। क्तवतु—गतवती, पठितवती। ईयस्—श्रेयसी, गरीयसी, भ्यसी, ज्यायसी। (२) (ऋन्नेभ्यो डीप्) अन्त में ऋ या न् होगा तो डीप् (ई) लगेगा। कर्तृ>कर्त्री। हर्त्री, धर्त्री, भर्त्री, कवियत्री, अध्येत्री, विधात्री। दिष्डन्>दिष्डनी। मानिनी, मनोहारिणी, तपित्वनी, राज्ञी। (३) (टिड्-ढाणञ्०) टित्, ढ (एय), अण् (अ), अञ् (अ), ठक् (इक), ठञ् (इक) आदि प्रत्यय होने पर डीप् (ई) होगा। जैसे—टित्—नदी, पुरातनी, सनातनी। दैविकी, भौतिकी, आध्यात्मिकी। (४) (वयिस प्रथमे) बाल्य और युवा आयु में डीप् (ई)। कुमारी, किशोरी, तरुणी। (५) (द्विगोः) द्विगु समास में। त्रिलोकी, शताब्दी, चतुर्युगी।

नियम १६३—(ग) डीष —(१) (षिद्गौरादिम्यश्च) षित् और गौर आदि से डीष् (ई)। नर्तकी, गौरी, रजकी। (२) (पुंयोगादा०) पुंलिंग से स्त्रीत्व में। गोप की स्त्री>गोपी। शूदी। (३) (जातेरस्त्री०) जातिवाची शब्दों से। ब्राह्मण>ब्राह्मणी। हरिणी, मृगी, सिंही। परन्तु क्षत्रिया, वैश्या ही होगा। (४) (वोतो गुणवचनात्) गुणवाची से विकल्प से। मृद्धी, मृदुः। (५) (इन्द्रवरुणभव०) इन्द्र आदि में आनी लगेगा। इन्द्राणी, भव> भवानी, शर्व>शर्वाणी, मातुल> मातुलानी, उपाध्याय> उपाध्यायानी, आचार्य> आचार्याणी, आचार्य। यवन>यवनानी (लिप)।

नियम १६४—इन शब्दों के स्त्रीलिंग में ये रूप होते हैं—पति> पत्नी, युवन्> ८८-खुवतिद्गुअंखकुर्ञाक्ष्म्भूं, जिहल्कु किंकुमी; (क्षिन्) अशंभी; विस्टांविक्तिनी; कुवित्वार्क कुवित्वार्क किंकुमी; किंकिन्

संस्कृत बनाओ—(क) (भृभृत्) १. राजा (भूभृत्) की नीति का सर्वत्र आदर है, क्यों कि वह जनता को अपनी प्रजा के तुल्य मानता है। २. राजा (भूमृत्) में गुण हैं और पर्वत पर (भृभृत्) ओषियाँ हैं । ३. राजाओं (महीभृत्) का हित प्रजा के हित के साथ जुड़ा हुआ है। ४. राजा (महीक्षित) के धार्मिक होने पर प्रजा धार्मिक होती है। ५. चन्द्रमा (शशभृत्) की चाँदनी जगत् को आह्वादित करती है। ६. कौए (परभृत्) की आवाज कानों को अच्छी नहीं लगती है। ७. हवाएँ (मस्त्) सुखद बह रही थीं। ८. रघु ने विश्वजित् यज्ञ में समस्त खजाना दान में दे दिया था। (ख) (दुह्, लिह्) १. गाय से दूध दुहता है। २. दिलीप यज्ञ के लिए पृथ्वी से कर हेता था। ३. ग्वाले ने गाय को दुहा। ४. सत्य और प्रिय वाणी कामनाओं को पूर्ण करती है, अशोभा को दूर करती है और कीर्ति को देती है। ५. भौरे पद्मों से मधु पी रहे हैं। ६. गाय ने बछड़े को चाटा। ७. किसी मूर्ख ने बन्दर की छाती पर हार ढाला । बन्दर ने उसे चाटा, सूँघा और लपेट कर उस पर बैठ गया । (ग) (स्त्रीप्रत्यय) १. गायिका गाती है, अध्यापिका पढ़ाती है, बालिका पढ़ती है, तपस्विनी तप करती है, रानी शृंगार कर रही है, पत्नी खाना पकाती है, कवियत्री कविता करती है, नर्तकी नाचती है, युवती वस्त्रों को सीती है, धोबिन कपड़े धोती है। २. जननी और जन्म-भूमि स्वर्ग से भी बढ़कर हैं। ३. सास-ससुर, नर नारी, युवा-युवितयाँ, राजा-रानी, पित-पत्नी, विद्वान्-विदुषी, उपाध्याय-उपाध्यायानी, आचार्य-आचार्याणी प्रातःकाल उद्यान में घूमते हैं। ४. आचार्य की स्त्री आचार्याणी होती है और जो स्वयं पढ़ाती है वह आचार्या होती है। ५. यूनानी लिपि देवनागरी लिपि से भिन्न है। (घ) (भक्ष्यवर्ग) १. आज दिवाली का ग्रुम पर्व है। सभी घरों में स्त्रियाँ रसोई और चूल्हे को पोतकर पूरी, खस्तापूरी, कचौड़ी, हलुवा, खीर, सेवई आदि पकवान बना रही हैं। वे कुदुम्ब के लोगों को खाना परोसती हैं और पकवान के साथ साग, रायता, अचार, चटनी, पापड़, दही, चीनी और बूरा भी परोसती हैं। २. साधारणतया प्रतिदिन रोटी, फुलका, भात, दाल, साग, चटनी, अचार ही खाया जाता है। दाल-साग में घी डाला जाता है। २. कभी-कभी खिचड़ी, कड़ी और लपसी भी ननती है। ४. नास्ते में प्रायः चाय, महा, लस्सी, घुघुरी, पराँठा या दूध चलता है।

संकेतः (क) १. आद्रियते, प्रजाः प्रजाः स्वा इव। ३. समन्वतं वर्तते। ४. महीक्षिति संकेतः (क) १. आद्रियते, प्रजाः प्रजाः स्वा इव। ३. समन्वतं वर्तते। ४. महतो वद्यः सुखाः। धर्मिणि प्रजा धर्मिष्ठाः। ५. आहादयति। ६. परभृतो रवो न श्रुतिसुखदः। ७. महतो वद्यः सुखाः। ८. विद्वजिति अध्वरे निःशेषविश्राणितवोषजातः। (ख) १. गां प्यः। गां दुरोहः। ३. अधुक्षत्। ४. सृनृता वाक्, कामं दुर्धे, विप्रवः पंत्यलक्ष्मी कीर्ति च सृते। ५. लिहन्ति। ६. वत्समिलक्षित्। ४. सृनृता वाक्, कामं दुर्धे, विप्रवः पंत्रवेद्यलक्ष्मी कीर्ति च सृते। ५. लिहन्ति। ६. वत्समिलक्षत्। ७. हारं वक्षासि केनापि दत्तमग्नेन मर्कटः। लेढि जिन्नति सिक्षप्य करोत्युत्रतमासनम्। (ग) १. ७. हारं वक्षासि केनापि दत्तमग्नेन मर्कटः। लेढि जिन्नति, प्रकालयति। २. गरीयसी। ५. यवनानी, अध्यापयति, तपश्चरति, रच्यति, नृत्यति, सीव्यति, रच्चनित, कौटुन्तिकेभ्यो जनेभ्यः, परिवेषयन्ति, भिद्यते। (ध) १. पर्व, महानसं चुल्लि च विलिप्य, पचन्ति, कौटुन्तिकेभ्यो जनेभ्यः, परिवेषयन्ति, पर्पटान्, दिथ। २. मुज्यते अभ्यविह्यते वा, निक्षिप्यते। ३. तेमनम्। ४. वल्यवर्ते, चायम्,

शब्दकोष -६७५ + २५ = ७००] अभ्यास २८

(व्याकरण)

(क) मिष्टान्नम् (मिठाई), कान्दिवकः (हलवाई), मोदकः (लड्ड्र), पूपः (पूआ), अपूपः (मालपूआ), कुण्डली (स्त्री०, जलेवी), अमृती (स्त्री०, इमरती), हैमी (स्त्री० वर्षी), पिण्डः (पेड़ा), कौष्माण्डम् (पेठे की मिठाई), दुग्धपूपिका (गुलाव-जामुन), रसगोलः (रसगुल्ला), दार्करापालः (शक्करपारा), मधुमण्ठः (वाल्र्साही), संवावः (गुझिया), सन्तानिका (मलाई), कृर्चिका (रवड़ी), कलाकन्दः (कलाकन्द), पर्पटी (स्त्री०, पण्ड़ी), वृतपूरः (घेवर), मधुरीर्षः (खाजा), मिष्टपाकः (मुर्ब्या), वातादाः (वतादाा), मोहनभोगः (मोहनभोगः), गजकः (गजक)। (२५)

ट्याकरण (भगवंत्, धीमत् शब्द; रुद्, स्वप् धातु, कर्तृवाच्य, पदक्रम) १. भगवत् और धीमत् के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० २०, २१)

२. रुद् और स्वप् धातु के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो धातु० ३४, ३५)

नियम १६५— (कर्तृवाच्य) कर्तृवाच्य में कर्ता मुख्य होता है, कर्ता के अनुसार ही क्रिया का लिंग, वचन, विभक्ति या पुरुष होगा। कर्ता एक० होगा तो क्रिया एक०, द्वि० होगा तो द्वि०, वहु० होगा तो बहु०। बालकाः पुस्तकानि पठित-वन्तः, बालिकाः पठितवत्यः। कर्तृवाच्य में इन बातों का ध्यान रखें:—(१) यदि 'च' लगाकर कर्ता अनेक हों तो तदनुसार क्रिया द्वि० या बहु० होगी। रामः कृष्णक्च गच्छतः। नियम १५७ भी देखें। (२) यदि 'वा' लगा हो और प्रत्येक एक० हों तो क्रिया एक०, यदि अन्तिम बहु० हो तो क्रिया बहु०। रामः कृष्णो वा पठतु। (३) कर्ता और कर्म के विशेषणों में कर्ता और कर्म के लिंग, वचनादि लगेंगे। रूपवती स्त्री। (४) कभी 'च' लगने पर क्रिया अन्तिम कर्ता के अनुसार होती है। उद्देगः कलहः च वर्धते। (५) विशतिः, शतम्, सहस्रम् आदि निश्चित लिंग और निश्चित वचन हैं, इनमें अन्तर नहीं होगा। शतं जनाः, सहस्रं स्त्रियः, विशतिः छात्राः।

नियम १६६ — (सापेक्ष सर्वनाम) यत् और तत् सापेक्ष सर्वनाम हैं (जो वह)। जो यत् का लिंग, विभक्ति, वचन होगा, वहीतत् का होगा। बुद्धिर्यस्य बलंतस्य।

नियम १६७ — यदि प्रथम और द्वितीय वाक्य में लिंग-भेद होगा तो तत् शब्द का लिंग प्रायः द्वितीय वाक्यवत् होगा । शैत्यं हि यत् , सा प्रकृतिर्जलस्य ।

नियम १६८—'यत्' शब्द 'िक' अर्थ में भी आता है, तब वह नपुं० एक० ही रहेगा । यह सत्य है कि०—सत्यमेतद् यत् सम्पत् सम्पद्मनुबध्नातीति ।

नियम १६९—(पदक्रम) संस्कृत के वाक्यों में शब्दों के कम का कोई विशेष महत्त्व नहीं है। कर्ता कर्म किया आगे पीछे भी रखे जा सकते हैं। स पुस्तकं पटित, पुस्तकं पटित सः आदि। परन्तु साधारणतया नियम यह है कि :—(१) पहले कर्ता, फिर कर्म, बाद में किया। कर्ता और कर्म के विशेषण कर्ता और कर्म से पहले रखे जाएँगे। (२) सम्बोधन सबसे पहले रखा जाता है। (३) कर्मप्रवचनीय अनु प्रति आदि कर्म के बाद आते हैं। (४) सह, ऋते, विना आदि सम्बद्ध शब्द के बाद में आते हैं। (५) च, वा, तु, हि, चेत, ये प्रारम्भ में नहीं आते। (६) प्रश्नवाचक अपि, किम, कथम, कियत् आदि तथा विस्मयादिबोधक अन्यय—हो, हन्त आदि

प्रार्म में आते हैं | CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संस्कृत बनाओ—(क) (भगवत् , धीमत्) १. भगवान् काश्यप सकुशल तो हैं ? २. भगवन् ! में पराधीन हूँ । ३. सिद्धि-सम्पन्न महात्माओं की कुशलता अपने हाथ में होती है। ४. विद्वानों के लिए कोई भी चीज अज्ञात नहीं होती। ५. गुणवान् को कन्या देनी चाहिए, यह माता-पिता का मुख्य विचार होता है। ६. सूर्य (भानुमत्) जिस दिशा में उदय होता है, वहीं पूर्व दिशा होती है। सूर्य दिशा के अधीन होकर उदय नहीं होता। ७. पहाड़ (सानुमत्) की चोटी पर वर्फ दिखाई दे रही है। (ख) (स्ट्, स्वप्) १. मैं निराधार हूँ, कहो किसके सामने रोऊँ। २. सीता के वियोग में राम की दयनीय स्थिति को देखकर पत्थर भी रो पड़ते हैं और बच्च का भी हृदय फट जाता है। ३. यशोवती आँचल से मुँह ढककर खूब जोर से बहुत देर रोई । ४. हर्प पिता के पैर पकड़ंकर चीख-चीखकर बहुत देर रोया । ५. सभी अपने साथियों पर विश्वास करते हैं (विश्वस्)। ६. मुझे अँगूठी का विश्वास नहीं है। ७. हृदय धेर्य रख, धेर्य रख। (ग) (कर्तृवाच्य) १. जिसके पास पैसा होता है, उसके मित्र हो जाते हैं, उसके ही बन्धु हो जाते हैं। २. जिसके पास बुद्धि है, उसके पास बल है। ३. जो शीतलता है, वह जल का स्वभाव है। ४. जो दसरे के गुणों की असिहिष्णुता है, वह दुर्जनों का स्वभाव है। ५. जो जिसके योग्य हो, विद्वान् उसे उससे मिला दें। ६. यह कहावत सत्य है कि सम्पत्ति के पीछे सम्पत्ति चलती है और विपत्ति के पीछे विपत्ति । ७. सौ बालक, सौ स्त्रियाँ और एंक हजार लोग इस उत्सव में हैं। (घ) (मिष्टान्नवर्ग) होली का पवित्र पर्व है। सभी ओर आनन्द और उत्साह का संचार है। घरों में स्त्रियाँ लड्डू, पूए, मालपूए, रसगुल्ले, गुझिया, शकरपारे आदि मिठाइयाँ बना रही हैं। हलवाई अपनी दूकानों पर लड्डू, पेड़ा, जलेबी, इमरती, बर्फी, पेठे की मिटाई, गुलावजामुन, रसगुला, चमचम, बाल्झाही, रबड़ी, कलाकन्द, घेवर, मोहनभोग, सोहनभोग, गुझिया, बताशे और पपड़ी बेच रहे हैं। लोग अपने लिए और अपने मित्रों के लिए खरीद रहे हैं। वे मित्रों के घर मिठाइयाँ बैना के रूप में भेजते हैं।

संकेत—(क) १. अपि कुशली । २. परवानयं जनः । ३. स्वाधीनकुशलाः सिद्धिमन्तः । ४. न खलु धीमतां कश्चिदविषयो नाम । ५. गुणवते कन्या प्रतिपादनीयेत्ययं तावत् पित्रोः प्रथमः संकल्पः । ६. उदयित दिशि यस्यां भानुमान् सैव पूर्वा । न हि तरुणिरुदेति दिक्पराधीनवृत्तिः । ७. शिखरे हिमं दृश्यते । (ख) १. वस्य पुरतो रोग्नानि । २. अपि मात्रा रोदित्यपि दलति वजस्य हृदयम् । ३. पटान्तेन मुखं प्रच्छाद्य मुक्तकण्ठम् अतिचिरं प्रारोदीत् । ४. पादौ आदिलध्य विमुक्तारावः चिरं रुरोद । ५. सर्वः सगन्धेषु विद्वसिति । ६. नास्याङ् गुलीयकस्य विश्वसिमि । ७. समाश्विमिहि । (ग) १. यस्यार्थास्तस्य मित्राणि, यस्यार्थास्तस्य बान्धवाः । ४. परगुणासिहष्णुत्वं यत्, स दुर्जनानां स्वभावः । ५. यद्येन युज्यते लोके बुधस्तत्तेन योजयेत् । ६. सत्योऽयं जनप्रवादो यत् संपत् सम्पदमनुबध्नाति, विपद् विपदम् । ७. शतं बाल्क्याः, शतं स्त्रियः, सहस्रं लोकाः ।

शब्दकोश−७०० + २५ = ७२५] अभ्यास २९

(व्याकरण)

(क) चायम् (चाय, टी), जल्पानम् (जल्पान), चायपानम् (चायपानी), चायपात्रम् (टी-पॉट), कफची (स्त्री॰, कॉफी), कन्दुः (पुं॰, स्त्री॰, केतली), अम्यूषः (डवलरोटी), मृष्टापूपः (टोस्ट), पिष्टात्रम् (पेस्ट्री), पिष्टकः (बिस्कुट), गुल्यः (टॉफी, मीटी गोली), सपीतिः (स्त्री॰, टी पाटीं), सिधः (स्त्री॰, सहमोज), सहमोजः (लंच या डिनर पाटीं)। लवणात्रम् (नमकीन), अवदंशः (चाट), समोषः (समोसा), दालमुद्गः (दालमोट), स्त्रकः (नमकीन सेव), पक्वविटका (पकोडीं), दिधवटकः (दही बड़ा), पक्वालुः (पुं॰, कचालू, आल् की टिकिया), कृलपी (स्त्री॰, कुलपी), पुलाकः (पुल.व, ताहरी), त्यञ्चनम् (१. मसाला, २. मसालेदार पदार्थ)। (२५)

द्याकरण (महत्, भवत् शब्द; हन्, स्तु धातु, आत्मनेपद)

१. महत् और भवत् के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० २२, २३)

२. हन् और स्तु धातु के पूरे रूप समरण करो । (देखो धातु० ३८, ३९)

नियम १७० — (नेविशः) नि + विश् आत्मनेपदी होती है । निविशते ।

नियम १७१— (परिव्यवेभ्यः क्रियः) परि + क्री, वि + क्री, अव + क्री आत्म-नेपदी होती हैं। परिक्रीणीते, विक्रीणीते, अवक्रीणीते।

नियम १७२—(विपराभ्यां जेः) वि + जि, परा + जि आत्मनेपदी होती हैं।

विजयते, पराजयते।

नियम १७३—(आङो दोऽनास्यविहरणे) आ + दा आत्मनेपदी होती है, मुँह खोलना अर्थ न हो तो । विद्यामादत्ते । परन्तु मुखं व्याददाति (मुँह खोलता है) ।

नियम १७४—(क) (शिक्षेजिंज्ञासायाम्) जिज्ञासा अर्थ में शिक्ष् धातु आत्म-नेपदी है। धनुषि शिक्षते। (ख) (हरतेर्गतताच्छील्ये) गति के अनुकरण में हू धातु आत्मनेपदी है। पैतृकम् अस्वा अनुहरन्ते, मातृकं गावः। (ग) (किरतेर्हर्षजीविका-कुलायकरणेषु०) हर्ष, जीवका और आश्रयस्थान बनाने में कृ धातु आत्मनेपदी है। अप + कृ = अपस्कृ हो जाता है। अपस्किरते वृषो हुष्टः (भूमि खोदता है), कुक्कुटो भक्षार्थां, स्वा आश्रयार्थां। (घ) (आङ नुप्रच्छ्योः) आ + नु, आ + प्रच्छ् आत्मनेपदी होती हैं। आनुते। आपृच्छते (विदाई लेता है)।

नियम १७५—(क) (समवप्रविभ्यः स्थः) सम् + स्था, अव + स्था, प्र + स्था, वि + स्था आत्मनेपदी होती हैं। सन्तिष्ठते, अवितिष्ठते, प्रतिष्ठते, वितिष्ठते। (ख) (आङः प्रतिज्ञायाम्०) आ + स्था प्रतिज्ञा अर्थ में। शब्दं नित्यमातिष्ठते। (ग) (उदोऽनूर्ध्वंक-मंणि) उत् + स्था आत्मने०, उटना अर्थ न हो तो। मुक्तावुत्तिष्ठते (यत्न करता है)। परन्तु आसनादुत्तिष्ठति, ग्रामाच्छतमुत्तिष्ठति (गाँव से सौ ६० लगान मिलता है)। (घ) (उपाद् देवपूजा०) उप + स्था आत्मनेपदी होती है, देवपूजा, संगति करना, मित्र बनाना, मार्ग अर्थ में। आदित्यमुपतिष्ठते (पूजा करता है)। गङ्गा यमुनामुपतिष्ठते (मिलती है)। कृष्णमुपतिष्ठते (मित्र बनाता है)। पन्थाः प्रयागमुपतिष्ठते (रास्ता प्रयाग को जाता है)।

नियन १७६—(समो गम्यृन्छिभ्याम्) अकर्मक सम् + गम् आत्मनेपदी है । संगन्छते । (अर्तिश्रुदृशिभ्यश्च०) अकर्मक सम् + श्रु, सम् + दृश् आत्मनेपदी हैं । CC-Oस्मृगुनुनेmoleस्पृक्तिम्। Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संस्कृत वनाओ—(क)(महत्, भवत्) १. वह बड़ा वीर है। २. यहाँ बड़ा अँधेरा है। ३. मैंने एक बड़े शेर और बधेरे को देखा। ४. वहाँ सम्पत्ति का बड़ा ढेर है। ५. बड़े सबेरे बहे लियों के हल्ले से जगा दिया गया हूँ। ६. बड़ा आदमी बड़े पर हो ही अपना पराक्रम दिखाता है। ७. बड़ों की बात बड़ी है। ७. इस विषय में आपका क्या विचार है ? ९. आप ही रघुवंशियों की कुल श्थिति को जानते हैं। १०. आपके मित्र के बारे में कुछ पूछता हूँ। ११. आप आगे चिलिए, म पीछे-पीछे आ रहा हूँ । १२. आप से ही इस विषय का ओचित्य-अनौचित्य पूछता हूँ । १३. आपके बारे में उसका प्रेम कैसा है ? १४. आपकी यह प्रार्थना शिरोधार्य है। (ख) (हन, स्त) १. राजा शत्र को मारता है। २. शत्रुओं को मारो। ३. राम ने रावण को मारा। ४. हे निषाद, तेरा कभी भला नहीं होगा, तूने कौंच के जोड़े में से एक को मारा है। ५. देवदत्त राम की स्तुति करता है। ६. राम ने ईश्वर की स्तुति की। ७. रजिस्ट्रार प्रस्तावों को प्रस्तुत करता है (प्र + स्तु) । ८. मैं यह प्रस्ताव रखता हूँ कि छात्र-संघका प्रधान राम हो। (ग) (आत्मनेपद) १. इलवाई मिठाई और नमकीन बेचता है (विकी)। २. वह रातुओं को पराजित करता है (पराजि)। २. आपकी विजय हो (विजि)। ४, यदि कील की नोक पैर में चुभ जाती है (निविश्) तो कितना दर्द हो जाता है। ५. वह विद्या ग्रहण करता है (आदा)। ६. वह मुँह खोलता है (व्यादा)। ७. वह ध्नुष की शिक्षा पाता है (शिक्ष्)। ८. घोड़े पिता की चाल का अनुकरण करते हैं और गौएँ माँ की (अनुद्ध)। ९. वैर्ले प्रसन्न होकर जमीन खोदता है (अपकृ)। १०. तुम अपने सिन्न से विदाई हो (आपच्छ्)। ११. कृष्ण ने दिल्ली के लिए प्रस्थान किया (प्रस्था)। (घ) (पानादिवर्ग) १. आजकल चाय का बहुत रिवाज है। अंग्रेजी ढंग से चाय पीने वाले केतली में पानी उबालकर, टी पॉट में चाय डालकर, उस पर उबला हुआ पानी डाल देते हैं और पाँच मिनट बाद उसे छान लेते हैं। कुछ लोग कॉफी भी पीते हैं। उसके साथ ये डबल रोटी, मक्खन, टोस्ट, पेस्ट्री और बिस्कुट भी लेते हैं सहभोज और टी पार्टी में मिठाइयों के साथ समोसा, पकौड़ी, सेव, दालमोठ भी चलते हैं। २. आजकल विद्यार्थियों को चाट, दही-बड़ा, पकौड़ी, कुलफी और मसालेवाली चीजें अधिक अच्छी लगती हैं।

संकेतः—(क) १. महान् । २. महानन्धकारः । ३. महान्तम् , व्याघ्रम् । ४. महान् द्रव्यराशिः । ५. महित प्रत्यूषे शाकुनिककोलाहलेन प्रतिश्रेषितोऽस्मि । ६. महान् महत्स्वेव करोति
विक्रमम् । ७. अपूर्वं महतां वृत्तम् । ८. अथवा कथं भवान् मन्यते । ९. रघूणां, जानन्ति । १०.
मित्रगतं किमिष । ११. गच्छतु पुरो भवान् , अहमनुपदमागत एव । १२. भवन्तमेव गुरुलाघवं
पृच्छामि । १३. भवन्तमन्तरेण कीदशस्तस्या दृष्टरागः । (ख) २. जिह । ३. अवधीत् । ४.
मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शिथतीः समाः । एकमवधीः । ५. रामं स्तौति । ६. अस्तावीत् । ७.
प्रस्तोता प्रस्तावान् प्रस्तौति । ८. एतत् प्रस्तवीमि, भवेत् । (ग) १. विक्रीणीते । २. पराजयते ।
३. विजयतां भवान् । ४. निविशते यदि श्रूविशिखा पदे स्जित ताविदयं कियतीं व्यथाम् । १०.
आपृच्छस्व सहचरम् । ११. हरिईरिप्रस्थमथ प्रतस्थे । (घ) १. प्रचलनम् , आङ्ग्लपद्धत्या,

CC-O. काश्रक्षिम् क्रम् क्रिकाम्। ट्रकालवारित, क्रानवारित क्रानुम् केष्ठिति क्रिक्रम् अस्ति विश्व क्रिक्रम् (Gyaan Kosha

शब्दकोष-७२५ + २५ = ७५०] अभ्यास ३० (व्याकरण)

(क) करकः (लोटा), स्थालिका (थाली), कंसः (गिलास), काचकंसः (काँच का गिलास), काचपटी (स्त्री॰, जार), कटोरम् (कटोरा), कटोरा (कटोरी), घटः (घड़ा), उदञ्चनम् (बाल्टी), बारिधिः (पुं॰, कण्डाल), द्रोणिः (स्त्री॰, टब), स्थाली (स्त्री॰, पतीली), स्वदेनी (स्त्री॰, कड़ाईी), ऋजीषम् (तवा), पिष्टपचनम् (तई, जलेबी आदि पकाने की), इसन्ती (स्त्री॰, अँगीटी), उद्ध्मानम् (स्टोव), धिषणा (तसला), चमसः (चम्मच), दर्वी (स्त्री॰, चमचा, कल्छुल), चषकः (प्याला, कप), शरावः (प्लेट, तस्तरी), उखा (सास-पेन), इस्तधावनी (स्त्री॰, चिलमची), सन्दंशः (चीमटा)। (२५)

ट्याकरण (पठत् , यावत् शब्द; इ, विद् धातु, आत्मने० परस्मैपद)

१. पठत् और यावत् के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० २४, २५)

२. इ और विद् धातु के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो धातु॰ ३३, ४३)

नियम १७७ — (सर्घायामाङः) आ + हे आत्मने० है, शत्रु को आह्वान करना अर्थ में। शत्रुमाह्रयते।

नियम १७८—(उपपराभ्याम्)उप + क्रम् , परा + क्रम् आत्मने० हैं। उपक्रमते, पराक्रमते ॥(प्रोपाभ्यां समर्थाभ्यम्)प्र + क्रम् , उप + क्रम् प्रारम्भ अर्थ में आ०।प्रक्रमते।

नियम १७९ — (अपहृवे ज्ञः) मुकरना अर्थ में ज्ञा आत्मने० हैं। शतम् अप-जानीते (सौ ६० को मुकरता है)। (सम्प्रतिभ्याम्०) सम् + ज्ञा, प्रति + ज्ञा स्मरण अर्थ न हो तो आत्मनेपदी हैं। संजानीते, प्रतिजानीते।

नियम १८०—(उदश्ररः०) उत् + चर् आत्मने० है, सकर्मक हो तो । धर्ममु-च्चरते । (समस्तृतीया०) सम् + चर् तृतीया के साथ हो तो आत्मनेपदी । रथेन संचरते ।

नियम १८१—(ज्ञाश्रुस्मृदशां सनः) जिज्ञास, ग्रुश्रूष, सुस्मूर्ष और दिद्दक्ष ये आत्मनेपदी होती हैं। जिज्ञासते, ग्रुश्रूषते, सुस्मूर्षते, दिद्दक्षते।

नियम १८२—(प्रोपाभ्यां युजेः॰) प्र + युज्, उप + युज् आत्मनेपदी हैं। प्रयुङ्के, उपयुङ्के।

नियस १८३—(भुजोऽनवने) भुज् धातु खाना तथा उपभोग अर्थ में आत्मने-पदी है और रक्षा अर्थ में परस्मैपदी है। ओदनं भुङ्क्ते। परन्तु महीं भुनक्ति।

(परस्मैपद)

नियम १८४—(अनुपराभ्यां कृञः) अनु + कृ, परा + कृ परस्मैपदी हैं। अनुकरोति, पराकरोति।

नियम १८५—(अभिप्रत्यतिभ्यः क्षिपः) अभिक्षिप् परस्मैपदी है। अभिक्षिपति।

नियम १८६—(प्राद्वहः) प्र + वह् परस्मैपदी होती है। प्रवहति। नियम १८७—(व्याङ्परिभ्यो रमः) वि + रम् परस्मैपदी है। विरमति।

नियम १८८ - (बुधयुधनशजनेङ्०) बुध्, युध्, नश्, जन्, अधि + इ, प्रु, द्रु, स्रु धातुएँ णिच् प्रत्यय करने पर परस्मैपदी होती हैं। बोधयति पद्मम्। योधयति जनान्। नाशयति दुःखम्। जनयति सुखम्। अध्यापयति वेदम्। द्रावयति । स्रावयति ।

CC-O. Dr. Ramdey Tipani Collection at Saral CSDS Digitized by Siddhahta eGangotri Gyaan Kosha भातुएँ परस्मेपदी होती हैं । आश्यति, भीजयति । चल्यति, कम्पयति ।

संस्कृत बनाओ—(क) (पटत्, यावत्) १. पढ़ते हुए को पाप नहीं लगता। २. में जब पढ़ रहा था तब वह आया। ३. गाँव को जाता हुआ तिनके को छून है। ४. कर्मशील मनुष्य उत्तम फल पाता है। ५. सूर्य की शोभा को देखो, जो चल ा हुआ कभी नहीं रुकता। ६. जितने छात्र परीक्षा मे बैठे, सभी उत्तीर्ण हो गए। ७. वे युद्ध में जितने थे, उनको वह राजा उतने ही रूपों में दिखाई पड़ा । ८. जितना मिला उतना सब खा लिया। (ख) (इ, विद्) १. मूर्ख क्षय को पाता है। २. दरिइता से मनुष्य छजा को प्राप्त होता है। ३. चन्द्रमा को चाँरनी फिर मिल जाती है। ४. वे भरद्वाज मुनि के आश्रम पर पहुँचे। ५. पहले फूल आता है, फिर फल आता है। ६. सूर्य लाल ही उदय होता है और लाल ही अस्त होता है। ७. मुझे शिव का नौकर समझो (अव + इ)। ८. नीच, वहाँ से हट (अप + इ)। ९. तेरे हृदय से प्रत्याख्यान का दुःख दूर हो (अप + इ)। १०. उद्योगी पुरुष को छक्ष्मी प्राप्त होती है (39+ 2) ११. जो स्पर्धा करता हुआ सामने आवे (39+2), उसे नष्ट कर दो । १२. वह स य नहीं, जो छल से युक्त हो । १३. वह गुरु के पीछे जाता है (39+2)। १४. वह मुझ पर विश्वास करता है (प्रति + इ)। १५. जो जिसके गुण को नहीं जानता (विद्), वह उसकी सदा निन्दा करता है। १६. जो आत्मा को हन्ता समझता है, वह उस नहीं जानता। १७. मुझे ऋषियों के तुल्य समझो। १८. इस जीवन में आत्मा को जान लिया तो भला है, नहीं तो बड़ा नाश होगा। (ग) (परस्मैपद) १. राजा पृथ्वी का पालन करता है। २. वह भात लाता है। ३. पाप से रुको। ४. गंगा और यमुना बहती हैं (प्रवह्)। ५. विद्या दुःख का नष्ट करती है और सुख उत्पन्न करती है। (घ) (पात्रवर्ग) खाना-पीना जीवन की अनवायं आवश्यकता है। भूख और प्यास के निवारणार्थ दर्तनों की आवश्यकता होती है। पानी पीन और रखने के लिए घड़ा, कलश, गागर, गगरी, सुराही, जार, कमण्डलु, लोटा और काँच का गिलास, इन पात्रों की आवश्यकता होती है। पानी बाल्टी, कण्डाल और टब में रखा जाता है। खाना बनाने और खाने के लिए थाली, कटोरा, कटोरी पतीली, कड़ाही, कड़ाह, तवा, तई, तसला, चम्मच, चमचा और चिमटा, इनकी आवश्यकता होती है। खाना अंगीठी और स्टोव दोनों पर बनाया जा सकता है। सास-पैन शाकादि बनाने के लिए, प्लेट खाना रखने के लिए आर कप चाय पीने के लिए होते हैं।

संकेतः—(क) १. पठतो नास्ति पातवःम्। २. भिय पठित सित । ३. तृणे स्पृश्ति । ४. चरन् वै मधु विन्दति । ५. पश्य स्प्रंस्य श्रेभाणं यो न तन्द्रयते न्रस्न ६. यावन्तः अदुः, तावन्तः । ७ ते तु यावन्त एवाजी, तावांश्च दद्दशे स तैः । ८. यावन्त्र व्यं सुक्तम् । (स) १. निर्वृद्धिः क्षयमित । २. दारिद्रचाद् हिथमेति । ३. शश्चिन पुनरेति शर्वरी । ४. ईयुभरद्धा नमुननिकेतम् । ५. उदेति पूर्व कुसुमं ततः फलम् । ६. उदेति स्विना ताम्रस्ताम् एवास्तमेति च । ७. अवेहि मां किंकरमष्टमूर्तः । ८. अपेहि पापे । ९. हृदयात् प्रत्यादेश्च्यलीकमपेतु ते । १०. उद्योगिनं पुरुपसिहमुपैति लक्ष्मीः । ११. यः स्पर्धमानोऽभ्येति, तं जिह । १२. मत्यं न तद्यच्छलमभ्युपैति । १३. म गुरुमन्वेति । १४. स मिय प्रत्येति । १५. न वेत्ति यो यस्य गुण्प्रकर्षम् । १६. य एनं वेत्ति हन्ताग्म् । १७. विद्धि मामुषिभिस्तुत्यम् । १८. इत चेदवेदीद्रथ मत्यमस्ति, न चेदिहावेदीन्मन्ती विनष्टिः । (ग) १. भुनक्ति । २. भुङ्क्ते । ३. विरम । ४. प्रवहतः । ५. नाश्यित, जन्यित । (घ) पानाशने, अश्चनायोदन्ययोः (अश्चनायां न उदन्या), पात्राणाम्, कल्शः, गर्गरः, गर्गरी, भृगारः,

CC-वाकार सुरुप्ताचीका प्रमाणिक प्राप्त हो है है । Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शब्दकोश-७५० + २५ = ७७५] अभ्यास **३**१

(व्याकरण)

(क) अन्तयजः (য়ুद्र), चर्मकारः (चमार), संमार्जकः (मंगी), शाकुनिकः (बहेलिया), अजाजीयः (गडरिया), मायाकारः (जादूगर), शौण्डिकः (सुरा विकेता), कर्मकरः (नौकर), भारवाहः (कुली), मालाकारः (माली), कुलालः (कुम्हार), लेपकः (पुताईवाला), प्रैष्यः (चपरासी), वैर्तानकः (वेतन पर नियुक्त नौकर), तस्करः (चोर), पाटचरः (डाकू), ग्रन्थिमेदकः (गिरहकट), मृगयुः (पुं०, शिकारी), मृगया (शिकार), वागुरा (जाल), मार्जनी (स्त्री॰, झाड़्), चर्मप्रमेदिका (जुता सीनेकी सुई), उपानह्, त् (जूता, चूट), पादुका (चप्पल), अनुपदीना (गम वूट)। (२५)

व्याकरण (बुध्, आस्, कर्म-भाव-वाच्य) १. बुध् शब्द के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० २६) २. आस् धातु के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ४४)

नियम १९० - संस्कृत में तीन वाच्य होते हैं:-१. कर्तृवाच्य, २. कर्मवाच्य, ३. भाववाच्य । सकर्मक धातुओं के रूप कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य में चलते हैं। अकर्मक धातुओं के रूप कर्तृवाच्य और भाववाच्य में चलते हैं। अकर्मक की साधारण पहचान है कि जहाँ किम् (क्या, किसको) का प्रश्न न उठे। १. कर्तृवाच्य में कर्ता मुख्य होता है, किया कर्ता के अनुसार चलती है। कर्ता में प्रथमा, कर्म में द्वितीया, क्रिया कर्ता के अनुसार होगी। २. कर्मवाच्य में कर्म मुख्य होता है। कर्म के अनुसार ही किया के पुरुष, वचन, लिंग होंगे। कर्मवाच्य में कर्ता में तृ०, कर्म में प्र०, किया कर्म के अनुसार। ३. भाववाच्य में कर्ता में तृ०, कर्म नहीं, क्रिया में प्रथम पु० एक०।

नियम १९१—(सार्वधातुके यक्) कर्मवाच्य और भाववाच्य में सार्वधातुक लकारों (अर्थात् लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ्) में धातु के अन्त में य लगेगा। धातु का रूप आत्मनेपद में ही चलेगा, धातु चाहे किसी पद की हो। अन्य लकारों में य नहीं लगेगा। धातु के रूप में य लगाकर युध् (धातु० सं० ६६) के तुत्य चलेंगे। लट् में इष्यते या स्यते लगेगा । जैसे – गम्> गम्यते, गम्यताम् , अगम्यत, गम्येत, गमिष्यते ।

नियम १९२—(क) लिट् में द्वित्व करके आत्मनेपदी के तुल्य रूप होंगे । जैसे— गम् > जग्मे, भू > वभूवे, नी > निन्ये, लिख् > लिल्खे । सेव् लिट् के तुत्य रूप चलाओ। जिन धातुओं के अन्त में 'आम्' लगता है, उनमें आम् लगाकर कृ, भू, असु के रूप आत्मनेपद में चलेंगे । जैसे — कथयां चक्रे, कथयांवभूवे, कथयामासे । (ख) लुट्, लुट्, आशीलिङ् में भी सेव् (धातु० २०) के तुत्य रूप चलेंगे। सेट् धातु में इ लगेगा, अनिट् में नहीं । जैसे-भविता, भविष्यते, भविषीष्ट, अभविष्यत् ।

नियम १९३ - लुङ् प्र० पु० एक० में धातु के अन्त में इ लगेगा। बाद के त का लोप होगा। 'इ' से पूर्व धातु के अन्तिम इ, उ, ऋ को वृद्धि होगी, उपधा में अ होगा तो उसे आ और उपधा के इ, उ, ऋ को गुण होगा। जैसे—अकारि, अभावि, अपाचि, अयोजि। छुङ् में धातु के बाद प्रत्यय इस प्रकार होंगे। सेट् में इ लगेगा,

CC-O. मि बिद्धा में प्रदेश हैं होते हैं। ते पुरुव के प्रवास प्रकार के प्रवास के प्रवा

संस्कृत वनाओ-(क) (बुध् शब्द) १. विद्रानों की संगति से मूर्ख भी प्रवीण हो जाते हैं। २. विद्वानों के साथ श्रद्धापूर्वक व्यवहार करें (वृत्)। ३. विद्वानों के साथ ही उटे, बैटे, वाद और विवाद करे। (ख) (आस् धातु) १. आपको जहाँ अच्छा लगे, वहाँ वैठिए । २. आप इस आसन पर वैठिए । ३. वहाँ देवता रहते हैं । ४. उसने स्वागत-वचन से अतिथि का अभिनन्दन करके अपने आसन पर बैठने के लिए उसे निमन्त्रित किया। ५. बैठे हुए का ऐश्वर्य भी बैठा रहता है और खड़े हुए का ऐस्वर्य खड़ा हो जाता है। ६. राजा सिंहासन पर वैठा (अथ्यास्त)। ७. उस ईश्वर की दौव शिव नाम से उपासना करते हैं (उपासते)। ८. दोनों सखियों के द्वारा शकुन्तला की सेवा की जा रही है (अन्वास्यते)। (ग) (कर्मवाच्य) १. कल्याण के विषय में किसकी तृप्ति होती है ? २. क्या तुम्हारी आज्ञा टाली जा सकती है ? ३. मेरी ओर से सारिथ से कहना। ४. यह शकुन्तला पितगृह को जा रही है, सब स्वीकृति दें। ५. जाने के समय में देर हो रही है। ६. स्त्रियों में विना शिक्षा के भी पटुत्व देखा जाता है। ७. तुम्हारी प्रार्थना के योग्य ही कोई नहीं दीखता है। ८. तेजस्वियों की आयु नहीं देखी जाती है। ९. धर्म बृद्धों में आयु नहीं देखी जाती। १०. रत्न किसी को नहीं दूँ इता, वह स्वयं दूँ इा जाता है। ११. गेरुए वस्त्र पहनने की स्वीकृति से मुझे अनुगृहीत की जिए। १२. पुराने कर्म फलों को कौन उलट सकता है ? १३. किसको ताना दिया जा सकता है ? १४. दुभ ग्य ने ऐसा सर्वनाश किया कि विजय की आशा तो दूर रही, जीवन की आजा भी सन्दिग्ध दिखाई देती थी। १५. मेरे द्वारा तुम्हारा मुखकमल देखा गया। (घ) (श्द्रवर्ग) शूद्र समाज के योग्य सेवक होते हुए भी अपनी कुछ न्यूनताओं के कारण समाज की दृष्टि में नीच गिने जाते हैं। उनमें बहुतरे बहुत अच्छा काम करते हैं। जैसे —चमार जुता सीने की सूई से बूटों, चणलों आदि को सीता है और उनकी मरम्मत करता है, मंगी झाड़ू से मकानों और ऑगनों को साफ करता है, गडरिया वकरियों को पालता है, कुली भार ढोते हैं, माली फूलों से मालाएँ बनाता है, कुम्हार मिट्टी के बर्तन बनाता है, पुताईवाला कलई से मकानों को पोतता है, चपरासी संवादों को यथास्थान पहुँचाता है। कुछ बुरा काम करते हैं, अतः वे निन्दनीय हैं। जैसे – बहेलिया जाल डालकर पश्चियों को मारता है, सुराविकेता शराब पीता है, चोर चोरी करता है. डाकू दीवार में सेंच मारता है, गिरहकट जेब काटता है, शिकारी शिकार खेलता हुआ निरपराध जीवों की हत्या करता है।

संकेतः—(क) १. प्रावीण्यमुपयान्ति। २. मुन्सु। (ख) १ रोचते। २. एतदायनमास्यताम्। ३. आसते। ४. अभ्यागतमिनन्य स्वेनासनेन आध्यिति तिमन्त्रयांच ार।
५. आस्ते भग आसीनस्य, ऊर्ध्वं प्रिष्ठति निष्ठतः। (ग) १ श्रेयिति केन तृष्यते। २. वि. ल्यते। ३.
मद्वचनादुच्यतां सारियः। ४. सर्वेरनुद्वायताम्। परिहीयते गमनवेला। ६. स्त्राणामि क्षितपटुत्वं संहद्यते। ७. न हद्यते प्रार्थयितव्य एव ते। ८. तेजमां हि न वयः समीक्ष्यते। ९. धर्मवृद्धेषु।
१०. न रत्नमन्विष्यति मृग्यते हि तत्। ११. काषायम्रहणानुद्वया अनुगृह्यतामयं जनः। १२.
पुरातन्यः स्थितयः केन श्वयन्तेऽन्यथाः तुंम्। १३. कतम उपालभ्यते। १४. दैवहतकेन अकारि,
दूरे तावदास्नाम्। १५. अद्धि। (घ) गम्यन्ते, उपानहः सीव्यति, संद्रधाति ताः, अजिराणि,
मार्जयन्ति, भारं वहन्ति, स्रजः, पात्राणि, सुधाभिः, लिम्पति संस्करोति वा, प्रापयित, दुष्कर्माणि,

CC-O: Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शब्दकोष−७७५ + २५ = ८००] अभ्यास ३२

(व्याकरण)

(क) कारुः (पुं॰, शिल्पी), नापितः (नार्इ), रजकः (धोबी), निर्णेजकः (ड्राई-क्लीनर), रञ्जकः (रंगरेज), श्रेणिः (पुं०, स्त्री०. शिल्पि-संघ), कुल्किः (शिल्पि-संघ का अध्यक्ष), तन्तुवायः (जुलाहा), सौचिकः (दर्जा), चित्रकारः (चित्रकार, पेन्टर), लोह-कारः (लुहार), स्वर्णकारः (सुनार), शौब्विकः (ताँवे के वर्तन बनानेवाला), त्वष्ट (पुं॰, बढ़ई), स्थपतिः (पुं॰, मिस्त्री, राज), अश्मचूर्णम् (सीमेट), इष्टका (ईंट), स्यूतिः (स्त्री॰, सिलाई), यन्त्रम (मशीन), उपहासचित्रम (कार्टून), वतिका (हुश), कर्तरी (स्त्री॰, केंची), तक्षणी (स्त्री॰, वस्ला). अयोघनः (हथोड़ी), करपत्रम् (आरी)। (२५)

व्याकरण (आत्मन् , राजन् , शी, अधि + ई, कर्म-भाव-वाच्य)

१. आत्मन् और राजन् शब्द के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० २७, २८) २. ज्ञी और अधि + इ धातुओं के रूप स्मरण करो । (देखो धातु० ४५, ४६)

नियम १९४ - धातु से कर्मवाच्य या भाववाच्य बनाने के लिए ये नियम टीक स्मरण कर छैं। सार्वधातुक लकारों (लट्, लोट्, लङ्. विधिलिङ्) में ही ये नियम लगते हैं। (क) धातु के अन्त में 'य' लगेगा। आत्मनेपद ही होगा। धातु को गुण नहीं होगा । धातु मृलरूप में रहेगी । गच्छ् , पिव् , जिल्ल्आदि नहीं होगे । साधा-रणतया धात में अन्तर नहीं होता । जैसे - भृयते, पठ्यते. लिख्यते, गम्यते । (ख) (গ্রমান্সাবাত) आकारा त धातुओं में इनवे ही आ का ई होगाः — टा, धा, मा, स्था, गा, पा (पीना), हा (छोड़ना), सा। अन्यत्र आ ही रहगा। जैसं-ीयते, धीयते, मीयते, स्थीयते, गीयते, पीयते, हीयते, सीयते । (ग) (अकृत्सार्वधातुकयोः०) धातुओं के अन्त में इ को ई, उ को ऊ हा जाता है। जि> जीयते, चि>चीयते, ह> हुयते । किन्तु श्रि का सम्प्रसारण होने से शुयते होगा आर शी का शय्यते हप होगा । (ঘ) (रিভ্রাयग्लिङ्क्ष) हम्ब ऋ अन्तवाही धातुओं में ऋ के स्थान पर 'रि' हो जाएगा । जैसे - इ, ह, धू, भू, मू के कमशः क्रियते, ह्रियते, भ्रियते, भ्रियते, भ्रियते । किन्तु ऋ धातु को और संयुक्ताक्षर आदिवाली ऋकारान्त धातु को गुण होता है। (गुणोर्जात०)। जैमे ऋ > अयते। सम् > समयते। (ङ) (ऋत इद्धाताः, उदोध्य-प्वस्य) दार्थ ऋ अन्तयाली धातुओं के ऋ का इंर् होगा। यदि पर्का पहले होगा तो ऊर होगा। जैस-क्>कीर्यते, गू>गीर्यते, तू>तीर्यते, शू>दीर्यते। पू>पृयंत । (च) (विचिस्वपि०, ग्रहिज्या०) वच्, स्वप्, ग्रह्, यज्, वप्, वह्, वद्, वस्, प्रच्छ् आदि धातुओं को सम्प्रसारण हाता है, अथात् य् को इ, व् का उ, र् को ऋ। (वृ) वच् > उच्यते, स्वप् > सुप्यते, शह् > गृह्यते, यज् > इज्यते, वप् > उप्यते, वह् > उह्यते, वद् > उद्यते, वस् > उष्यते, प्रच्छ् > पृच्छचते । (छ) (आनदितां०) धातु के बीच के न्का प्रायः लोग हो जाता है। मन्थ् > मध्यते, बन्ध् > बध्यते, भ्रंश् > भ्रश्यते, संस् > सस्यते । इनमें न् रहेगा - वन्यते, चिन्न्यते, निन्यते । (ज) इन घातुओं के स्थान पर ये आदेश हो जाते हैं - ब्रू > वर्च, अस् > मू. अज् > वी। उच्यते, भ्यते, वीयते । (झ)जन्, सन्, खन् और तन् के दो रूप होते हैं, न्को

संस्कृत वनाओ—(क) (आत्मन्, राजन्) १. अपने आपको प्रकट करने का यह मौका है। २. तुम अपनी तरह ही सबको समझते हो। ३. यदि अपने आपको सँभाळ सका तो, यहाँ से जाऊँगा। ४. यहाँ बाह्य और अन्तःकरण के साथ मेरी अन्तरात्मा प्रसन्न हो रही है। ५. यह तो तुम्हारी अपनी इच्छा है। ६. यह तो अपने स्वभाव पर आ गया है। ७. आपने यहाँ आने का कष्ट क्यों उठाया ? ८., अति हर्ष उसके मन में नहीं समाया। ९. अपने में झूठे महत्त्व का आरोप करके राजा लोग देवताओं को प्रणाम नहीं करते हैं। १०. शिक्षितों को भी अपने ऊपर पूरा भरोसा नहीं होता। ११. जैसा राजा, वैसी प्रजा। १२. में राजा को कुछ नहीं समझता। १३. राजा से रहित देश में शान्ति नहीं होती। १४. राजा को जनहित की भी चिन्ता करनी चाहिए। १५. राजा को चाहिए कि आपत्तिग्रस्तों का दुःख दूर करे। (ख) (शी, अधि + इ) १. वह हाथ का तिकया लगाकर सोई। २. इधर मोर सो रहे हैं। ३. क्यों निःशंक सो रहे हो १ ४. उसने वेदों को पढ़ा। (ग) (कर्मवाच्य) १. चित्र में जो कुछ ठीक नहीं है, उसे ठीक कर रहा हूँ। २. पुरुष तभी तक है, जबतक वह मान से हीन नहीं होता। ३. सोने की स्वच्छता और कालिमा आग में ही दीखती है। ४. विकार का कारण विद्यमान होने पर भी जिनके चित्त विकृत नहीं होते, वे धीर हैं। ५. पर उपदेश कुशल बहुतेरे। ६. क्यों गोलमाल बात करते हो ? ७. गुणों से ही सर्वत्र स्थान बनाया जाता है । ८. इससे हमारा कुछ नहीं बिगड़ता:। ९. यह बात समाप्त करो । १०. आगे की बात समझ ली । ११. विपत्ति में भी उसका धैर्य नष्ट नहीं होता। १२. वह देवदत्त नाम से पुकारा जाता है। १३. बेकार कहाँ जा रहे हो ? १४. और कोई रास्ता नहीं दीखता है। (घ) (शिल्पिवर्ग) शिल्पि सघ शिल्पियों का संगठन करता है। उनको उचित कार्यों में नियुक्त करता है। घोबी वस्त्रों को घोता है। ड़ाईक्लीनर वस्त्रों को मशीन से धोता है और उन पर लोहा करता है। जुलाहा सूत से वस्त्रों को बुनता है। दर्जी टेलरचाक से कपड़ों पर निशान लगाता है और कैंची से काटकर उन्हें सिलाई की मशीन से सीता है। चित्रकार बुश से चित्र को रँगता है और कार्ट्न बनाता है। बढ़ई आरी से लकड़ी चीरता है, बस्ले से उसे छीलता है और हथाड़े से कीळों को ठोकता है। राज सीमेंट से ईंटों को जोड़कर मकान बनाता है।

संकेत — (क) १. अवसरोऽयमात्मानं प्रकाशियतुम् । २. आत्मनो हृदयानुमानेन पश्यिस । ३. यद्यातमनः प्रभविष्यामि । ४. सदाह्यान्तः वर्रणो ममान्तरात्मा प्रसीदित । ५. एष तवात्मगतो मनोरथः । ६. गत एवात्मनः प्रकृतिम् । ७. किमिति भवताऽऽत्मा अत्रागमनक्लेशस्य पदमुपनोतः । ८. गुरुः प्रहर्षः प्रवभूव नात्मिन । ९. आत्मन्यारोपितालीकाभिमानाः । १०. आत्मन्यप्रत्ययं चेतः । ११. यथा राजा । १२. राजेति का गणना मम । १३. अराजके जनपदे । १४. जनहितमपि चिन्तनीयम् । १५. आपन्नस्य जनस्यार्तिहरेण राज्ञा भवितव्यम् । (ख) १. अशेत सा बाहुलतोपथायिनी । ४. अध्येष्ट । (ग) १. क्रियते तत्तदन्यथा । २. यावन्मानान्न हीयते । ३. हेम्नः संलक्ष्यते ह्यन्नी विद्युद्धः स्यामिकाऽपि वा । ४. विकारहेतौ सित विक्रियन्ते येषां न चेतांसि त एव धीराः । ५. सुखम्पिरस्यते परस्य । ६. किमिति असंबद्धम् अनुसन्धीयते । ७. पदं हि सर्वत्र गुणैनिधीयते । ८. न नः किचित् भिद्यते । ९. संहियतामियं कथा । १०. परस्तादवगम्यते । ११. न हीयते । १२. आह्र्यते । १३. कानिर्दिष्टकारणं गम्यते । १४. नान्यच्छरणमालोक्यते । (घ) धावित, यन्त्रण नेनेक्ति, अयरकरोति, स्त्रैः, वयति, सौचिकवित्वया, चिह्नयति, कितित्वा, स्यूतियन्त्रण, रक्षयित, छिनित्त,

शब्दकोप-८०० + २५ = ८२५] अभ्यास ३३

(व्याकरण)

(क) क्षुरम् (उस्तरा), क्षुरकम् (ब्लेड), उपधुरम् (सेक्टी रेजर), कर्तनी (स्त्री०, वाल काटने की मशीन), शस्त्रमार्जः (धार धरनेवाला), तैलकारः (तेली), रसयन्त्रम् (कोल्हू), मिलः (मिल), अयस् (लोहा, आयरन), बृदचनः (छेनी), आविधः (वर्मा), यान्त्रिकः (मिस्त्री, मैकेनिक), स्त्रम् (धागा), स्चिका (स्ई), पादुरञ्जकः (पालिश), वेतनम् (वेतन), भ्राष्ट्रम् (भाड़), भृष्टकारः (भड़भूजा), भस्त्रा (धोंकनी), नीली (स्त्री॰, नील), शिल्पशाला (फैक्टरी)। (२१)। (ख) कृत् (काटना), अयस् + कृ (लोहा करना), मण्डा + कृ (कलफ करना), नीली + कृ (नील लगाना)। (४)।

ट्याकरण (श्रन्, युवन्, हु, भी, णिच् प्रत्यय)

१. धन् और युवन् शब्दों के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० २९, ३०) २. हु और भी धातुओं के रूप स्मरण करो । (देखो धातु० ४८, ४९)

नियस १९'-(हेतुमति च) प्रेरणार्थक धातु उसे कहते हैं, जहाँ कर्ता स्वयं काम न करके दूसरे से काम कराता है। जैसे—पट्ना>पट्वाना, लिखना> लिख-वाना, जाना > भेजना, करना > कराना । प्रेरणार्थक धातु में शुद्ध धातु के अन्त में णिच् (अर्थात् अय) लग जाता है। धातु के रूप दोनों पदों में चुर् धातु के तुल्य (देखो धातु॰ ९७) चलंगे। धातु के अन्तिम हस्व और दीर्घ इ, उ, ऋ को वृद्धि (अर्थात् क्रमशः ऐ, औ, आर) हो जाता है, वाद में अयादि सन्धि भी। उपधा (अर्थात् अन्तिम अक्षर से पूर्व अक्षर) में अको आ तथा इ, उ, ऋ को क्रमशः ए, ओ, अर् गुण हो जाता है । जैसे—कु> कारयति, नी>नाययति, मृ>भावयति, पट्>पाठयति, लिख्> लेखयति । गम् का गमयति ।

नियम १९६-प्रेरणार्थक धातुओं के साथ मूल धातु के कर्ता में तृतीया होती है और कर्म में पूर्ववत् द्वितीया ही रहती हैं। किया कर्ता के अनुसार होती है। जैसे-शिष्यः हेखं हिखति > गुरुः शिष्येण हेखं हेखयति । तृपः भृत्येन कार्यं कारयति ।

नियम १९७—(गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थ॰) इन अथोंवाली धातुओं के प्रेरणा-र्थक रूप के साथ मूल धातु के कर्ता में तृतीया न होकर द्वितीया होती है: — जाना, जानना, समझना, खाना (अट्, खाट्, मक्ष् को छोड़कर), पढ़ना, अकर्मक धातुएँ, बोलना, देखना (दश्), मुनना (श्रु), प्रवेश (प्रावश्), चढ़ना (आरुह्), तैरना (उत्तृ), ग्रहण (ग्रह्), प्राप्ति (प्राप्), पीना, ले जाना (ह), (नी और वह् को छोड़कर)। जैसे-वालः गृहं गच्छति > बालं गृहं गमयति । शिष्यः वेदम् अवगच्छति > शिष्यं वेदम् अवगमयति । पुत्रः अनं भुङ्क्रे माता पुत्रमन्नं भोजयति । शिष्यः शास्त्रं पठति > गुरुः शिष्यं शास्त्रं पठयति । पृथ्वी सिंहले आस्त> पृथ्वीं सिंहले आसयत् । (क) (नीवह्योर्न) नाययित वाहयित वा भारं भृत्येन । (ख) (नियन्तृकर्तृकस्य वहेरिनिषेधः) वाहयित रथं वाहान् स्तः । (ग) (आदिखाद्योर्न) आदयतिखादयति वाडनं वदुना । (घ) (भक्षेरिहंसा-

CC-O किर्फ्स को अध्यात्म बुद्धा । (ङ्क) (जल्पतिप्रभृतीनाम॰) जल्पयति भाषयति वा धर्म पुत्रं देवदत्तः। (च) (हरोश्च) दर्शयति हरिं भक्तान्। (छ) (शब्दायतेन) शब्दाययति देवदत्तेन।

संस्कृत वनाओ :--(क) (व्वन् , युवन्) १. कुत्ते को यदि राजा वना दिया जाता है तो क्या वह जूता नहीं चाटता है । २, पण्डित कुत्ते और चाण्डाल को समान मानते हैं। ३. काच मणि और कांचन को एक धारो में पिरो रही हो, हे वाले, यह उचित नहीं है । उसने कहा—सर्ववित् पाणिनि ने तो एक सूत्र में कुत्ता, युवक और इन्द्र तीनों को डाला है। ४. विद्वानों ने सेवा को स्वयृत्ति माना है। ५. युवक मुलक्कड़ होते हैं। ६. अति सुन्दर रमणी जिस प्रकार युवकों के मन को हरण करती है, उस प्रकार कुमारों के नहीं। ७. यौवन के प्रारम्भ में प्रायः युवकों की दृष्टि कलुपित हो जाती है। (ख) (हु, भी धातु), १. यहाँ पर अग्नि में हवन करो। २. उसने मन्त्रपूत शरीर को भी अभिन में हवन कर दिया। ३. हे बालक, त् मृत्यु से क्यों डरता है, वह भयभीत को भी नहीं छोड़ता। ४. मत डरो। ५. क्या करूँ, कहाँ जाऊँ कौन वेदों का उद्धार करेगा ? हे स्त्री, मत डरो, अभी पृथ्वी पर कुमारिल भट्ट जीवित है। (ग) (णिच् प्रत्यय) १. उसने विषय-सुखों से विरक्त हो जीवन बिताया। २. उन्होंने अपने काम को ठींक निभाया। ३. उसने अपनी प्रतिज्ञा का पालन किया। ४. दो 'नहीं' स्वीकृत-सूचक अर्थ बताते हैं। ५. पिता पुत्र से छेख लिखवाता है। ६. धनिक नौकर से काम करता है। ७. वह पुत्र को घर भेजता है। ८. वह पुत्र को वेद पढ़ाता है। ९. माता पुत्र को फल बिलाती है। १०. गुरु शिष्य को वेद पढ़ाता है। ११. उसने पुस्तक मेज पर रखवाई। १२.वह नौकर से भार दुछवाता है। १३. वह छात्रों को चित्र दिखाता है। १४. में यह पत्र उसके पास पहुँचा दूँगा। १५. बचा सिर हिला रहा है। (घ) (शिल्पिवर्ग) १. नाई वाल काटने की मशीन से बाल काटता है और उस्तरे से दाढ़ी बनाता है। आजकल अधिक लोग सेफ्टीरेजर से स्वयं ही दाड़ी वना लेते हैं। २. धोबी कपड़ों को धोकर, नील लगाता है, कलफ करता है और उन पर लोहा करता है। ३. फ़ैक्टरी में मिस्त्री मशीनों को ठीक करता है। ४. मिलों में मजदूर काम करते हैं। ५. तेली कोव्हू के द्वारा तिलों से तेल निकालता है, धार रखने वाला उस्तरे पर धार रखता है, वर्ट्ड छेनी से लोहे को काटता है, वर्मा से लकड़ी में छेद करता है और बुढ़िया सुई-धागे से वस्त्र सीती है।

संकेतः—(क) १. क्रियते, स किं नाइनात्युपानहम् । २. शुनि चेव इवपाके च पण्डिताः समर्दाश्नः । ३. काचं मणिः वाञ्चनमेवस्त्रे वरोषि थाले निह युक्तमेतत् । अशेपवित् पाणिनिरेकस्त्रे इवानं युवानं मध्वानमाह । ४. इववृत्ति विदुः । ५. युवानो विस्मरणशीलाः । ६. यथा यूनस्तद्वत् परमरमणीयापि रमणी, कुमाराणामन्तःकरणहर्णं नैव कुरुते । ७. कालुष्यमुपयाति । (ख) १. जुहुधीह पावकम् । २. यो मन्त्रपूतां तनुमप्यहोषीत् । ३. मृत्योविभेषि किं वाल, न सभीतं विमुञ्चित । ४. मा भेषोः । ५. किं करोमि, उद्धरिष्यति । मा विमेहि वरारोहे मष्टाचायोंऽस्ति भूतले । (ग) १. जीवितमत्यवाहयत् । २. साधु निरवाहयन् । ३. अभिसन्थाम् अपालयत् । ४. द्वौ नजौ प्रकृतार्थं गमयतः । ७. गमयति । ८. अवगमयति । ९. भोजयति । ११. आसयत् । १२. वाहयति । १३. दर्शयति । १४. तस्य हस्तं प्रापयिष्यामि । १५. मूर्थानं चालयति । (घ) १. वयति, कूर्चं मुण्डयति । २. धावित्वा । ३. संशोधयति । ४. श्रमिकाः । ५. निःसारयति, अरं

तीक्ष्णयति, कुन्तति, छिद्रयति, सीव्यति । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha शब्दकोष - ८२५ + २५ = ८५०] अभ्यास ३४

(व्याकरण)

(क) शाकम् (साग), आलुः (पुं॰, आलू), रक्ताङ्गः (टमाटर). गोजिह्वा (गोभी), कलायः (मटर), भण्टाकी (स्त्री॰, माँटा, वैंगन), वङ्गनः (वगन), भिण्डकः (भिंडी), टिण्डिशः (टिंडा), अलाबुः (स्त्री॰, लोकी), कृष्माण्डः (कट्टू), ग्रञ्जनम् (गाजर), मूलकम् (मूली), द्वेतकन्दः (शलगम), पालकी (स्त्री॰, पालक), वास्तुकम् (वथुआ), सिम्बा (सेम), मुसिम्बः (फरासबीन, फेंच बीन), जालिनी (स्त्री॰, तोर्र्ड), कुन्दरुः (पुं॰, कुन्दरु), पटोलः (परवल), कारवेल्लः (करेला), कर्कटी (स्त्री॰, ककड़ी), पनसम् (कटहल), शदः (सलाद)। (२५)

ट्याकरण (वृत्रहन् , मघवन् , हा, ही, णिच् प्रत्यय)

१. वृत्रहन् और मघवन् राव्दों के रूप स्मरण करो। (देखो राव्द० ३१, ३२) २. हा और ही धातुओं के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ५०, ५१)

नियम १९८-मूलधातु से प्रेरणार्थक धातु बनाने के लिए ये नियम टीक स्मरण कर लें। (क) धातु से णिच् (अय) प्रत्यय लगता है। नियम १९५ के अनुसार वृद्धि या गुण । (स्त्र) (मितां हस्वः) इन धातुओं की उपधा (उपान्त्य स्वर) के अ को आ नहीं होताः - गम्, रम्, कम्, नम्, शम्, दम्, जन्, त्वर्, घर्, व्यथ्, जृ। गमयित, रमयित, क्रमयित, नमयित, शमयित, दमयते, जनयित, त्वरयित, घटयित, व्यथयित, जरयित । अन्यत्र अ को आ होगा । पाठयित, कामयते, चामयित । (ग) (॰ आतां पुङ्णौ) आकारान्त धातुओं के अन्त में णिच् से पहले 'प्' और लग जाता है। जैसे—दा>दापयति, धा> धापयति, स्था> स्थापयति, या> यापयति, स्ना> स्नापयति । (घ) (शाच्छासाहा०) इन आकारान्त धातुओं में वीच में 'य्' लगेगा। शो (शा), छो (छा), सो (सा), ह्वे (ह्वा), व्ये (व्या), वे (वा) और पा (पीना)। जैसे— शाययति, ह्वाययति, पाययति (पिलाता है)। (पातेर्णौ छग्०) पा (रक्षा करना) का रूप पालयित होगा। (ङ) (क्रीङ्जीनां णौ) इनके ये रूप होते हैं - क्री > क्रापयित (खरीद-वाना), अधि + इ > अध्यापयति (पढ़ाना), जि > जापयति (जिताना)। (च) इन धातुओं के ये रूप हो जाते हैं : - बू > वाचयित (बाँचना), हन् > घातयित (वध कराना), दुष्> दूषयति (दोष देना), रुह्>रोपयति, रोहयति (उगाना), ऋ> अर्पयति (देना), ह्रेपयति (लजित करना), वि + ली> विलीनयति, विलाययति (पिघलाना), भी> भापयते, भीषयते (डर की वस्तु से डराना), भाययति (केवल डराना), वि + स्मि> विस्मापयते (किसी कारण से विरिमत करना), विस्माययति (केवल विस्मित करना), सिध्> साधयति (वनाना), सेधयति (निश्चय कराना), रेझ्> रञ्जयति (प्रसन्न करना), रजयित (शिकार खेलना), इ (जाना),> गमयित (भेजना), अधि + इ (जानना)>अधिगमयित (समझाना, याद दिलाना), प्रति + इ > प्रत्याययित (विश्वास दिलाना), गुह्> गृहयति (छिपाना), धू>धूनयति (हिलाना), प्री>प्रीणयति (प्रसन्न करना), मृज्>मार्जयति (साफ कराना), शद्>शातयति (गिराना), शादयति (भेजना)। (छ) चुरादिगण की धातुओं के रूप णिच् में वैसे ही रहते हैं। (ज) कर्म-

वाच्य और भाववाच्य में णिजन्त धातु के अन्तिम इ (अय) का लोप हो जाता है। CCजैसे Dr. पोड्यरेन, कार्यसे हे हर्ण्यसे हैं। ज्यार्थ से इस्ट्रिंग स्थाने हो अपने अपने हो जाता है।

संस्कृत वनाओ-(क) (वृत्रहन्, मघवन्) १. इन्द्र ने वृत्र का वध किया। २. मैं इन्द्र के सम्मान से अनुगृहीत हूँ । ३. इन्द्र का यश प्रत्येक घर में गाया जाता है। ४. इन्द्र का वज्र दैत्य सेना का संहार करता है (संह्र)। (ख) (हा, ही) १. हे अर्जुन, जब मनुष्य सभी मनोगत कामनाओं को छोड़ देता है और अपने आपमें सन्तुष्ट रहता है, तब वह स्थितप्रज्ञ कहा जाता है। २. तथ्णा को छोड़ दो। ३. तमने जो सीता को छोड़ दिया है, वह क्या तुम्हारे कुल के अनुकूल है ? ४. विपत्ति में भी उसका धेर्य क्षीण नहीं होता । ५. पुत्रवधू स्वसुर से शर्माती है । ६. आपके साथ गुरुजनों के समीप जाने में मुझे लजा अनुभव होती है। ७. हमें आपस में ही शर्म लगती है औरों के सामने तो कहना ही क्या ? (ग) (णिच् प्रत्यय) १. शरीर को शान्ति देनेवाली शरत्कालीन चाँदनी को कौन आँचल से रोकता है ? २. मैं महल पर रहूँगा, वहाँ आवाज दे लेना। ३. यह विवाद ही विश्वास दिलाता है कि तुम हुठ बोल रहे हो। ४. पार्वती ने अपनी करुण कथा सुनाकर अनेक बार सखियों को रुलाया। ५. वह मुझे पिता मानता है। ६. में किसके सिर दोष महूँ ? ७. वह फिर अपने काम में लग गया। ८. विद्या धन से बढ़कर है। ९. यह समाचार पत्र में िंख दो । १०. वह अभी तक अपने आपको नहीं सँभाल पाया । ११. होनहार विरवान के होत चीकने पात । १२. उसने किसी तरह आठ वर्ष विताए । १३. उसने दासी को रानी बना लिया। १४. मौका हाथ से न जाने दे। १५. सजानों का मेल शीघ्र ही विश्वास दिलाता है। १६. प्रतिष्ठा केवल उत्सुकता को शान्त करती है। १७. वड़े दुःख को भी आशा का बन्धन सहन करा देता है। १८. दिन चन्द्रमा को जितना दुःखित करता है, उतना कुमुदिनी को नहीं। (घ) (शाकादि-वर्ग) हरा साग और सलाद स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभप्रद हैं। अनेक साग हैं, किसी को कोई अच्छा लगता है, किसी को कोई। कुछ लोग बदल-बदलकर आलु, टमाटर, गोभी, मटर, बैगन, भिण्डी, टिण्डा, लौकी, कद्द, गाजर, मूली, शलगम, परवल, पालक, बथुआ, सेम, फरासबीन, करेला और कटहल का साग खाते हैं। कुछ लोग दो-तीन साग को मिलांकर बनाते हैं या एक ही समय दो-तीन साग बनाते हैं।

संकेत:-(क) २. संभावनया। (ख) १. प्रजहाति यदा कामान् , आत्मन्येवात्मना तुष्टः । २ - जहांहि । ३ - अहासीः, सदृशं कुलस्य । ४ - तस्य धैर्यं न हीयते । ५ - जिह्नेति । ६ - जिह्नेमि आर्यपुत्रेण सह गुरुसमीपं गन्तुम्। ७. अन्योन्यस्यापि जिह्नोमः, किं पुनरन्येषाम्। (ग) १. शरीरनिर्वापयित्रीम् , पटान्तेन वारयति । २. मां प्रासादे शब्दायय । ३. प्रत्याययति । ४. निशाम्य, अरोदयत् । ५. मां पितेति मानयति । ६. कं दोषपक्षे स्थापयानि । ७. मनो न्यवेशयत् । ८. अति-रिच्यते । ९. वृत्तं पत्रमारोपय । १०. स नाद्यापि पर्यवस्थापयति आत्मानम् । ११. आवेदयन्ति हि प्रत्यास्त्रमानन्दमग्रपातीनि शुभानि निमित्तानि । १२. तेनाष्टौ परिगमिताः समाः कथंचित । १३. महिषोपदं प्रापिता । १४. न कार्यकालमितपातयेत् । १५. विश्वासयत्याञ् सतां हि योगः । १६. औत्सुक्यमात्रमवसाययति । १७. आशाबन्धः साहयति । १८. ग्लपयति यथा । (घ) पर्यायशः,

शब्दकोप-८५० + २५ = ८७५] अभ्यास ३५

(व्याकरण)

(क) करमर्दकः (करोंदा), पलाण्डुः (पुं॰, प्याज), लग्जनम् (लहग्जन), तिन्तिडीकम् (इमली), आर्द्रकम् (अदरक्), व्यञ्जनम् (मसाला), मरीचम् (मिर्च), जीरकः (जीरा), धान्यकम् (धनिया), गुण्टी (स्त्री॰, सोंट), हिङ्गः (पुं॰, नपुं॰, हींग), हरिद्रा (हरदी), लवणम् (नमक), सैन्धवम् (सेंधा नमक), रोमकम् (सांभर नमक), पिष्पली (स्त्री॰, पीपर), एला (इलायची), मधुरा (सोंफ), लवङ्गम् (लोंग), दारुत्वचम् (दालचीनी), त्रिपुटा (छोटी इलायची), खादिरः (कत्था), चूर्णः (चूना), पृगम् (सुपारी), ताम्वूलम् (पान)। (२५)

च्याकरण—(करिन्, पथिन्, भृ, मा, सन् प्रत्यय)

१. करिन् और पिथन् शब्दों के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्द॰ ३३, ३४)२. भृ और मा धातुओं के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो धातु० ५२, ५३)

नियम १९९—(धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा) इच्छा करना या चाहना अर्थ में धातु से सन् (स) प्रत्यय लगता है। सन् के विषय में ये वातें स्मरण रखें —(क) इच्छा करनेवाला वही व्यक्ति हो, तभी सन् होगा। (स) सन् प्रत्यय ऐच्छिक है, अतः सन् न लगाना चाहें तो तुमुन् (तुम्) प्रत्यय करके इष् या अभिलप् आदि धातु का प्रयोग करें। जैसे - पठितुमिच्छति। (ग) इच्छा करनेवाली क्रिया कर्म के रूप में होनी चाहिए, अन्य कारक के रूप में नहीं। करण में होने से यहाँ नहीं होगा - अहमिच्छामि पठनेन मे ज्ञानं वर्धेत । (घ) सन् का स दोप रहता है । सन् प्रत्यय करने पर धातुओं को दित्व होता है, जैसे लिट् लकार में । सेट् धातुओं में स से पहले इ लगाकर 'इष' हो जाएगा। अनिट् में केवल 'स' लगेगा, यह स कहीं-कहीं पर सन्धि-नियमों के कारण प या क्ष हो जाता है। (ङ) धातुओं को दित्व करने पर अभ्यास अर्थात् प्रथम अंश में धातु में अ होगा तो उसे इ हो जाएगा। (च) धातुओं के रूप इस प्रकार चलेंगे:—(१) परस्मैपदी के रूप परस्मै० में और आत्मने० के आत्मने॰ में, उभयपदी के उभयपद में। (२) लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् में परस्मै॰ में रूप भवतिवत्, आत्मने० में सेव् के तुल्य।(३) लिट् लकार में धातु + आम् + कृ, भू या अस्। (४) छङ् में परस्मै० में ईत्, इष्टाम्, इपुः आदि और आत्मने० में इष्ट, इषाताम् , इपत आदि । (५) आशीर्लिङ् में पर० में यात् , यास्ताम् आदि; आत्मने० में इपीष्ट आदि । (६) अन्य लकारों में भू या सेव् के तुल्य । जैसे—गम्> जिगमिषति, जिगमिषतु, अजिगमिषत्, जिगमिषेत्, जिगमिषिष्यति, जिगमिषांचकार, जिगमिषिता, अजिगमिषीत्, जिगमिष्यात्, अजिगमिष्यत्। (छ) सन्नन्त प्रयोगवाली प्रचलित धातुएँ ये हैं:—ज्ञा> जिज्ञासते, दा> दित्सिति, धा > धित्सिति, पा> पिपासित, जि> जिगीपति, चि> चिचीपति, श्रु> ग्रुश्रूपते, ब्र्> विवक्षति, भ्> बुभ्पति, क्ः> चिकीर्षति, ह् > जिहीर्षति, मृ > सुमूर्षति, तॄ > तितीर्षति, मुच् > सुमुक्षते, प्रच्छ् > पिप्रच्छिषति, भुज् (आ॰)> बुमुक्षते, पट्> पिपठिषति, कित्> चिकित्सिति, पत्> पित्सिति, पिपतिषिति, अद्> जिघत्सति, पद्> पित्सते, विद्> विविदिषति, बुध्> बुबोधिषति, मान्> मीमांसते,

हन्> जिघांसति, आप्> ईप्सति, स्वप्> सुषुप्सति, रभ्>रिप्सते, लभ् > लिप्सते, गम् > CC-पंजन मिशति, et र्राष्ट्रिक्षित, tigget of the companies of

संस्कृत वनाओ—(क) (करिन्, पथिन्) १. हाथी ने इस पेड़ की छाल छील दी। २. साक्षी उपस्थित नहीं हुआ (साक्षिन्)। ३. अतिस्नेह में अनिष्ट की शंका वनी रहती है (पापशङ्किन्)। ४. अगले रविवार को आप हमसे मिलिएगा (आगामिन्)। ५. सहाध्यायियों से प्रेमपूर्वक व्यवहार करो (सहाध्यायिन्)। ६. शेर वादल की ध्वनि पर हुंकार करता है, गींदड़ों की आवाज पर नहीं (केसरिन्)। ७. कम से कम तीन गवाह होने चाहिएँ (साक्षित्)। ८. गुणवानों के गुण प्जा के योग्य हैं, चिह्न और आयु नहीं (गुणित्)। ९. रथी पैदल से युद्ध नहीं करते (रथित्)। १०. ऐसा परोपकारियों का स्वभाव ही होता है। ११. हाथी के मित्र गीदड़ नहीं होते (दन्तिन्)। १२. मानहीन मनुष्य की और तृण की समान गति होती है (जिन्मन्)। १३. वे मूर्ख तिरस्कार को प्राप्त होते हैं, जो धृतों से धृर्तता नहीं करते (मायाविन्)। १४. स्वाभिमानियों का स्वाभिमान ही धन होता है (मानिन्)। १५. तुम्हारा मार्ग ग्रुभ हो। १६. धीर लोग न्याय के मार्ग से जरा भी विचलित नहीं होते। (ख) (भृ, मा) १. अपना पेट कौन नहीं पालता ? २. उसने पृथ्वी की धुरा को धारण किया । ३. राजाओं के पास चुगलखोर रहते हैं । ४. सदा खच्छ वस्त्रों को धारण करो । ५. व्यापारी हाथ से कपड़े को नापता है (मा)। ६. लेखपाल ने जंजीर से खेत नापा। (ग) (सन् प्रत्यय) १. विद्यार्थी पाठ पढ़ना चाहता है, लेख लिखना चाहता है, धर्म जानना चाहता है, दान देना चाहता है, धर्म करना चाहता है, जल पीना चाहता है, शत्रु को जीतना चाहता है, फूल इकट्टा करना चाहता है (संचि), गुरुवचन सुनना चाहता है, कार्य करना चाहता है (कृ), पाप को छोड़ना चाहता है (हृ), प्रश्न पृछना चाहता है (प्रच्छ्), फल खाना चाहता है (भुज्), धन पाना चाहता है (लभ्) और मित्र को देखना चाहता है। २. गुरुओं की सेवा करो। ३. वह छोटी नोका से समुद्र को पार करना चाहता है। (घ) (शाकादि०) १. कुछ लोग साग और दाल में अधिक मसाला पसन्द करते हैं। वे दाल में हल्दी, धनिया, नमक के साथ ही प्याज, लहसून, इमली और लाल मिर्च भी डालते हैं। साग में भी मसाला डाला जाता है। २. कुछ लोग चाय में भी काली मिर्च, दालचीनी और सोंठ या अदरक डालते हैं। ३. पनवारी पान में चूना और कत्था लगाता है, बाद में छोटी इलायची और सुपारी डालकर देता है। पान खानेवाले पानदान में पान रखते हैं।

संकेत—(क) १. त्वगुन्मिथता। २. नोपतस्थौ। ३. अतिस्नेहः पापशङ्की। ४. आगामिनि, भवता द्रष्टव्या वयम्। ६. अनुहुंकुरुते घनध्विन निहं गोमायुरुतानि केसरी। ७. व्यवराः
साक्षिणो द्वेयाः। ८. गुणाः पूजास्थानं गुणिपु न च लिङ्गं न च वयः। ९. न रथिनः पादचारमिमयुअन्ति। १०. परोपकारिणाम्। ११. भवन्ति गोमायुसखा न दन्तिनः। १२. जन्मिनो मानहोनस्य तृणस्य च समा गितः। १३. व्रजनित ते मृढिधयः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः।
१४. स्वदाऽभिमानैकथना हि मानिनः। १५. शिवास्ते सन्तु पन्थानः। १६. न्याय्यात् पथः। (स)
१. विभिति। २. विभरावभूव। ३. पिशुनजनं खलु विश्वति क्षितीन्द्राः। ४. विभृयात्। ६. लेखपालः शृङ्खलाभिः, अमास्त। (ग) १. लिलिखिषति, विधित्सिति। २. शुश्रूषस्व। ३. उडुपेन,
तितीपति। (घ) १. सहैव, रक्तमरीचम, निक्षिपन्ति। शाकमिष उपस्क्रियते (उपस्कृ)। ३.

CC-O. br. Ramdev Phoalific direction at Sarai (CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शब्दकोप—८७५ + २५ = ९००] अभ्यास ३६ (ब्याकरण)

(क) कृषिः (स्त्री॰, खेती), कृषीवलः (किसान), वसुधा (पृथ्वी), मृत्तिका (मिट्टी), उर्वरा (उपझाऊ), ऊषरः (ऊसर), शाद्वलः (शस्य-स्यामल), क्षेत्रम् (खेत), सीता (ज्ञती भूमि), लाङ्गलम् (हल), पालः (हल की पाल), खनित्रम् (पावड़ा, कृदाल), दात्रम् (दगँती), लोष्टम् (ढेला), लोष्टमेदनः (१. मूँगरी, २. पटरा, ३. मेंडा), कोटिशः (धुमुंश), तोत्त्रम् (चावुक), कणिशः (अनाज की वाल), पलालः (पराल), बुसम् (मुस), तुपः (भूसी), खाद्यम् (खाद), खलम् (खिलहान), खनियन्त्रम् (ट्रैक्टर), कृषियन्त्रम् (खेती के आजार)। (२५)

व्याकरण (तादृश्, चन्द्रमस्, दा, यङ्, यङ्खुक्, नामधातु)

१. तादृश् और चन्द्रमस् के पृरे रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० ३५, ३८)

२. दा धातु के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो धातु० ५४)

नियस २००—(धातोरेकाचो हलादेः कियासमिमहारे यङ्) व्यंजन से प्रारम्भ होनेवाली एकाच् धातु से यङ् प्रत्यय होता है, बार-बार या अधिक करने अर्थ में । यङ् प्रत्यय के लिए ये नियम स्मरण रखें—(क) यङ् का य दोष रहता है । सभी धातुओं के रूप केवल आत्मनेपद में चलते हैं । (ख) (सन्यङोः) धातु को द्वित्व होता है । (ग) (गुणो यङ्खकोः, दीघोंऽिकतः) द्वित्व होने पर अभ्यास (पृवंपद) में अ को आ, इ ई को ए, उ ऊ को ओ होगा । नी> नेनीयते, भू>वोभ्यते, पट्—पापठ्यते । (घ) (नित्यं कौटिल्वे गतौ) गत्यर्थक धातुओं से कुटिलता अर्थ में ही यङ् होगा । वज्> वावज्यते (कुटिल चलता है) । (ङ) (रीगटुपधस्य च) धातु की उपधा में हस्व ऋ होगा तो उसके अभ्यास में 'री' और लगेगा । वत्> नरीवत्यते । (च) (ग्रुमास्था॰) दा, धा, स्था, गा, पा, हा, सा के आ को ई होगा । देदीयते, देधीयते, तेष्ठीयते, जेगीयते, पेपीयते, जेहीयते, सेपीयते । (छ) कुछ अन्य प्रसिद्ध यङन्त रूप ये हैं—कु> चेकीयते, दिव्> देदीव्यते, भ्रम्> वंभ्रम्यते, चर्> चंचूर्यते, वृत्> वरीवृत्यते, ग्रह्> जरीग्रह्यते ।

नियस २०१—(यङ छुक्) (यङोऽचि च) धातु के बाद य का लोप होगा। यङ छुक् के लिए ये नियम स्मरण रखें—(क) धातु को द्वित्व होगा। धातु के रूप परस्मैपद में ही चलेंगे। (ख) अभ्यास में अ को आ, इ ई को ए, उ क को ओ होगा। (ग) धातु के अन्त में ऋ होगा तो उसके अभ्यास में री या रि लगेगा। (घ) यङ्छुक् के प्रयोग साहित्य में बहुत कम मिलते हैं। (ङ) ति, सि, मि से पूर्व विकल्प से ई लगेगा। जैसे—भ्>वोभवीति, बोभोति। वृत्> बरीवर्ति, कृ> चरीकर्ति, गम्> जंगमीति।

नियम २०२—(नामधात) नामधात में ये प्रत्यय मुख्यतया होते हैं :—(क) (सुप आत्मनः क्यच्) अपने लिए चाहने अर्थ में क्यच् (य) प्रत्यय । परस्मैपद होगा । आत्मनः पुत्रमिच्छति > पुत्रीयति । कवीयति, अज्ञनायति, उदन्यति । (ख) (उपमाना-दाचारे) उसके तुल्य आचरण करने में क्यच् (य) । द्वाप्य को पुत्रवत् मानता है—पुत्रीयति छात्रम् । (ग) (काम्यच्) अपने लिए चाहने में 'काम्य' होता है । पुत्र-काम्यति । (घ) (कर्तुः क्यङ्०) उसके तुल्य आचरण करने में क्यङ् (य) प्रत्यय । आत्मनेपद होगा । कृष्णवत् आचरण करता है > कृष्णायते । ओजायते, अप्सरायते । СС-० (ह्न)वित्राहरू भेवित्राहरू के क्रियह के क्रियह के क्षियह अधिक्र के क्षियह अधिक्र के क्षियह का स्थानिक क्षियह अधिक्र किष्ट अधिक्र के क्षियह का स्थानिक क्षियह का स्थानिक क्षियह अधिक क्षियह का स्थानिक क्षा क्षा स्थानिक स्थानिक क्षा स्थानिक क्षा स्थानिक क्षा स्थानिक क्षा स्थानिक स्थानि

संस्कृत वनाओ—(क) (तादृश् , चन्द्रमस्) १. वैसे सुन्दर आकृतिवाले लोग सहदय ही होते हैं (सचेतस्) २. ऐसे वैसे लोग सभाओं में आ जाते हैं और रंग में भंग करते हैं। ३. पुत्र-स्नेह कितना प्रवल होगा, जब कि भ्रातृ-स्नेह इतना प्रवल होता है। ४. नक्षत्र, तारा और प्रहों से युक्त भी रात्रि चन्द्रमा से ही प्रकाशित होती है। ५. मुनिव्रतों से अतिकृश तुमको देखकर किस सहदय का मन दुःखित नहीं होगा (सचेतस्) १६. उसने उसके पास खड़े हुए एक वृद्ध पुरुप को देखा (प्रवयस्)। ७. यह दुर्वासा (दुर्वासस्) के शाप का ही प्रभाव है। ८. अच्छे चित्तवालों का (सुमनस्) भले और बुरों पर समान प्रोम होता है। (ख) (दा धातु) १, पढ़ाई पर ध्यान दों। २. भगवती पृथ्वी, मुझे अपने अन्दर समा लो। ३. क्या राजा ने तुम्हें यह अँगूटी इनाम में दी है ? ४. थोड़ा स्थान देना । ५. ये कन्याएँ पौधों को जल दे रही हैं (दा)। ६. उसने स्वामी के लिए प्राण दे दिए। ७. ऑस् चित्र में भी शकुन्तला को नहीं देखने देता। ८. वस्त्रों को धूप में सुखाता है। ९. गुरु शिष्य को आज्ञा देता है। १०. वह खेल में मन लगाता है। ११. उसने प्रत्युत्तर दिया। १२. उसने घर में आग लगा दी। १३. उसने यह वचन कहा। १४. हंस दुध को ले लेता है और उसमें मिले हुए जल को छोड़ देता है। १५. उसने सब लीगों का मन अपनी ओर खींच लिया (आदा)। १६. उसने निर्धनों को वस्त्र दिए (प्रदा)। (ग) (यङ्, नामधातु) १. वालक वार-वार हँसता है, रोता है, टेढ़ा चलता है, नाचता है, गाता है, खाना खाता है, पानी पीता है, काम करता है, घूमता है, प्रश्न पूछता है। २. (यङ्खुक्) वह बार-बार काम करता है, घर जाता है, विद्यालय में रहता है, साँप को मारता है और पुस्तक लेता है। ३. वह पत्नी-सहित तपस्या करता है। ४. वह अपने कुल को बदनाम करता है। ५. वह शिष्य को पुत्रवत् मानता है। ६. वह कृष्णवत् आचरण करता है। (घ) (कृषिवर्ग) भारत कृषि-प्रधान देश है। किसान उपजाऊ भृमि को हल से जोतता है, जुती हुई भूमि के ढेलों को मेडा चलाकर सम कर देता है, वाद में उसमें बीज बोता है, अंकुर आने के बाद निराई करता है और अनावश्यक घास आदि को निकाल देता है। खेती तैयार होने पर दराँती से वालों को काट छेते हैं या जड़ से ही काटते हैं। भुस और भूसी गायों-वैछों को दी जाती है। आजकल टैक्टरों से भी खेती की जाती है।

संकेत—(क) १. आकृतिविशेषाः, सचेतसः। २. याद्यस्तादशो जनाः, रङ्गभङ्गं विद्धति। ३. कीदम् तनयस्नेहः, ईदस्। ४. ०संकुलापि जयोतिष्मती चन्द्रमसैव रात्रः। ५. सचेतसः कस्य मनो न द्यते। ६. स्थितं प्रवयसम्। ७. दुर्वाससः शाप एप प्रभवति। ८. सुमनसां प्रीतिर्वाम-दक्षिणयोः समा। (स्व) १. अवधानम्। २. देहि मे विवरम्। ३. पारितोषिकम्। ४. अवकाशम्। ५. वालपादपेभ्यः। ६. प्राणान् अदात्। ७. वाष्पस्तु न ददात्येनां द्रष्टुं चित्रगतामपि। ८. आतपे ददाति। १२. पावकम् अदात्। १३. इति वाचमाददे। १४. हंसो हि क्षीर-मादत्ते तिन्धा वर्जयत्यपः। १५. मन आददे। (ग) १. वालकः जाहस्यते, रोरुवते, वाज्ञज्यते, नरीनृत्यते, जेगीयते, बोभुज्यते, पेपीयते, चेक्रीयते, वंश्वभ्यते, प्रदनं परीपृच्छ्यते। २. स कायं चरीकिति। जंगमीति, वरीवर्ति, जंधनीति, जाग्रहीति। ३. सपन्नीकः तपस्यति। ४. मलिनयति। (घ)कर्षति, संक्रास्य एमम्बन्धिकि विश्वकिति, स्वामिकि विश्वकिति स्वामिकि विश्वकिति स्वामिकिकि विश्वकिति स्वामिकि स्वाम

शब्दकोप--९०० + २५ = ९२५] अभ्यास ३७ (व्याकरण)

(घ) मुकृतिन् (भाग्यवान्), सहृदयः (सहृदय), निष्णातः (विद्वान्), प्रतीक्ष्यः (पूज्य), वदान्यः (दानी), हृष्टमानसः (प्रसन्नचित्त) विमनस् (दुःखित हृदय), उत्कः (उत्काण्टत), विश्रुतः (प्रसिद्ध), स्निग्धः (प्रेमी), आयत्तः (अधीन), आगृनः (पेटू), छुव्धः (होभी), विनीतः (नम्र), धृष्टः (हीट), प्रत्याख्यातः (छोड़ा हुआ), विप्रकृतः (तिरस्कृत), विप्रख्वधः (वंचित), आपन्नः (आपत्तिप्रस्त), दुर्गतः (दीन), कान्तम् (सुन्दर), अभीष्टम् (मनोहर), निकृष्टः (नीच), पृतम् (पवित्र) संख्यातम् (गिना हुआ)। (२५) ह्याकरण (विद्वस् , पुंस् , धा धातु, क्त प्रत्यय)

१. विद्वस् और पुंस् शब्द के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० ३६, ३७)

२. घा घातु के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो घातु॰ ५५)

नियम २०३—(क्तस्वत् निष्ठा, निष्ठा) मृतकाल अर्थ में धातु से क्त और क्वतु कृत् प्रत्यय होते हैं। दोनों का क्रमशः त और तवत् शेष रहता है। 'त' प्रत्यय कर्मवाच्य और भाववाच्य में होता है। तवत् प्रत्यय कर्तृवाच्य में होता है। 'त' प्रत्यय कर्तने पर सेट् (इ-वाली) धातुओं में इ लगेगा, अनिट् (इ-नहीं वाली) धातुओं में इ नहीं लगेगा। धातु को गुण या वृद्धि नहीं होती। संवसारण होता है।

नियस २०४—(क) क्त (त) प्रत्यय जब सकर्मक धातु से कर्मवाच्य में होगा तो कर्म में प्रथमा, कर्ता में हृतीया और क्रिया के लिंग, बचन और विभक्ति कर्म के अनुसार होंगे, कर्ता के अनुसार नहीं। (ख) अकर्मक धातु से क्त (त) प्रत्यय होगा तो कर्ता में तृतीया होगी। क्रिया में नपुंसक० एक० ही रहेगा। (ग) 'त'—प्रत्ययान्त क्रिया-शब्द कर्म के अनुसार पुलिंग होगा तो उसके रूप रामवत्, स्त्रीलिंग होगा तो रमावत्, नपुंसक० होगा तो ग्रह्वत् चलेंगे। जैसे—मया पुस्तकं पटितम्, पुस्तके पटितं, पुस्तकानि पटितानि। मया प्रन्थः पटितः, प्रन्थो पटितौ, प्रन्थाः पटिताः। मया वाला दृष्टा, वालाः दृष्टाः। तेन हसितम्।

नियत २०'र—(गन्यर्थाकर्मकरिलपशीङ्०) इन धातुओं से क्त प्रत्यय कर्तृवाच्य में भी होता है: —जाना चलना अर्थ की धातुओं, अकर्मक धातुओं तथा दिलप्, शी, स्था, आस्, वस्, जन्, रह्, चॄ धातुओं से। अतः कर्ता में प्रथम और कर्म में द्वितीया। जैसे—एहं गतः। स प्रामं प्राप्तः। स मृतः। हिरः रमामादिलष्टः। स शेषमधिशयितः। वैकुण्टमधिष्ठितः। शिवमुपासितः। अत्र उपितः। राममनुजातः। वृक्षमारूटः। स जीर्णः।

नियम २०६—(मतियुद्धिपूजार्थेभ्यस्च) मन् , बुध् , पूज् , तथा इन अथोंवाली अन्य धातुओं से क्त प्रत्यय वर्तमान काल अर्थ में होता है । इसके साथ पछी होगी । राजां मतः, बुद्धः, पृजितः (राजा के द्वारा सम्मानित या पृजित)।

नियम २०७—(नपुंसके भावे क्तः) कभी-कभी क्त प्रत्यय नपुंसकलिंग भाव-वाचक शब्द वनाने के लिए होता है। जैसे—जल्पितम् (कहना), श्रायितम् (सोना), CC-O. Dr. इस्त्रीलाक् (हांक्का) Çolक्ताक् (काञ्चना) ÇSD हिंभका क्षां (क्वका) Sludiक स्वे क्वा लिखे कि क्या

संस्कृत वनाओ—(क) (विद्रस् , पुंस्) १. विद्वान् ही विद्वानों के परिश्रम को समझता है। २. विद्वान् को भी तुष्ट लक्ष्मी दुर्जन बना देती है। ३. विद्वानी के मुँह से वात सहसा वाहर नहीं निकलती और जो निकल जाती है, वह फिर लोटती नहीं है। ४. जिसके पास पैसा है, वहीं संसार में एरुप है। ५. शत्रु भी जिसके नाम का अभिनन्दन करते हैं, वहीं पुरुष पुरुष है। ६. वह पुरुषों के द्वारा वन्दनीय है। ७. दुष्ट स्त्री पुरुप पर विस्वास नहीं करती (विश्वस्)। (ख) (धा धातु) १. सहसा काम न करो । २. मुझे श्रेष्ठ लक्ष्मी दो । ३. हे माता, तू दुर्जनों को भी पालती है । ४. काँच सुवर्ण के संग से मरकत की कान्ति को धारण करता है। ५. इवर ध्यान दो । ६. वह कान पर हाथ रखता है । ७. वह कानों को वन्द करता है (अपिधा) ८. खिड़की बन्द कर दो। ९. हे अर्जुन, इस शरीर को क्षेत्र कहा जाता है (अभिधा)। १०. आप इधर ध्यान दीजिए (अवधा)। ११. अपने से बलवान् शतु से सन्धि कर लो (संघा)। १२. उसने धनुष पर वाण रखा (संघा)। १३. नए कपड़ पहनो (परिघा)। १४. वह गुरु पर श्रद्धा करता है (श्रद्धा)। १५. वह बाँह का तकिया लगाकर सोता है (उपघा) । १६. शकुन्तला को ठगकर मुझे क्या मिलेगा (अभिसंघा) ? १७. वैदिक वाङ्मय का अनुसन्धान करो (अनुसंधा)। १८. प्रायः भाग्य ही सवका गुम और अग्रुम करता है (विधा)। १९. में धनुष पर विजय की आशा को रखता हूँ (निधा)। २०. मेज पर पुस्तक रख दो (निधा)। २१. जल ने भूमि पर धूल को द्वा दिया (निधा)। २२. मुझ में मन लगाओं (आधा)। २३. राक्षसों की छाया भय उत्पन्न करती हैं (आधा)। (ग) (विशेषण) १. भाग्यवान्, सहृदय, दानी और विद्वान् लोग तिरस्कृत, बंचित, आपत्तिग्रस्त और दीन को दुःख नहीं देते हैं। २. निकृष्ट व्यक्ति भी सुन्दर अभीष्ट वस्तुओं को पाकर प्रसन्नचित्त होता है और उन्हें न पाकर खिन्न होता है। ३. पेटू पराधीन होता है, नम्र प्रसिद्ध होता है, टीठ तिरस्कृत होता है, प्रेमी विनीत होता है और उत्कण्टित खिन्न होता है। (घ) (क्त प्रत्यय) १. मेंने खुवंश के चार सर्ग पढ़े। २. उसने बनी-ठनी स्त्री देखी। ३. वह आसन पर वैटा (अधिष्ठा)। ४. वह वृक्ष पर चढ़ा (आरुह्)। ५. यह किसका चित्र है ? ६. मुझे राजा मानते हैं। ७. यह अफवाह फैल गई। ८. उसका मन कहीं और है। ९. उसने यह शर्त लगाई। १०. उसने उस समय बहुत वीरता दिखाई।

संकेतः—(क) १. विद्वानेव विज्ञानाति विद्वजनपरिश्रमम् । २. अनायां, खर्लाकरोति । १. वदनाद् वाचः, याताश्चेन्न पराञ्चन्ति । ४. यस्यार्थाः स पुमान् लोके । ५. यस्य नामाभिनन्दिनि द्विपोऽापे स पुमान् पुमान् । ६. पुंसाम् । (ख) १. सहसा विद्यंति न क्रियाम् । २. मिथे थेहि । ३. दधासि । ४. धत्ते मारकतीं युतिम् । ५. धियं थेहि । ६. करं दधाति । ७. कणों पिधत्ते । ८. गवाक्षं पिधेहि । ९. क्षेत्रमित्यभिधीयते । १०. अवधत्ताम् । ११. वलीयसा रिपुणा संदध्यात् । १२. समधत्त । १३. परिधत्त । १४. श्रद्धाति । १५. वाहुमुपधाय । १६. अभिसंधाय कि लभ्यते मया । १७. अनुसंधत्त । १८. भवितव्यतैव, विद्धाति । १९. निदधे विज्ञयाद्यंसाम् । २०. सिललै- विद्वित्तं रजः क्षितौ । २२. आधरस्त्र । २३. भयमाद्धित । (घ) १. सर्गाः । २. स्वलंकृता । ६. अहं राग्नां मतः । ७. वार्तां प्रसृता । ८. स हृदयेनासंनिहितः । ९. इति तेन समयः कृतः । १०. СС सिक्तिसिम्म्विप् Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शब्दकोष-९२५ + २५ = ९५०] अभ्यास ३८

(घ) प्रौदम् (प्रौद्), ततम् (विस्तृत), ईरितम् (प्रोरत), उपचितः (मोटा), अपचितः (पतला), भुग्नम् (ट्र्टा हुआ), श्रातम् (तेज), पक्षम् (पका हुआ), ह्रीणः (लिजत), स्रुतम् (पिघला हुआ), अवगीतः (निन्दित), उद्घान्तम् (उगला हुआ), श्रान्तः (श्रान्त), दान्तः (जितेन्द्रिय), प्रच्छनः (दका हुआ), अवसितः (समाप्त), प्लुष्टम् (दग्ध), त्वष्टम् (छीला हुआ), निष्पन्नम् (तैयार), स्यूतम् (सिला हुआ), ल्यम् (कटा हुआ), आसादितम् (प्राप्त), उिद्यतम् (त्यक्त), अवगतम् (ज्ञात), जग्धम् (खाया हुआ)। (२५)

व्याकरण (श्रेयस् , अनडुह्, दिव् , नृत् , क्त प्रन्यय)

१. श्रेयस् और अनडुह् शब्दों के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० ३९, ४०) २. दिव और तृत् धातुओं के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ५६, ५७) नियम २०८—धातु से त, तवत् (तथा त्वा, क्तिन्) प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए ये नियम टीक स्मरण कर लें। (देखो परिशिष्ट में क्त प्रत्यय से बने रूप)। (क) घातु को गुण या वृद्धि नहीं होगी। सेट् में इ लगेगा, अनिट् में नहीं। संधि-कार्य होगा । जैसे — कृ > कृतः । हतः, धृतः, भृतः । पठितम् , लिखितम् । (ख) (रदाभ्यां निष्ठातो नः०) र् और ट् के बाद त को न होगा, धातु के ट् को भी न्। अर्थात् र् + त = र्ण। द् + त = न्न। दीर्घ ऋ को ईर्होता है, पॄ को पूर्। हू> शीर्ण, तू> तीर्ण, गू> गीर्ण, कॄ>कीर्ण, संकीर्ण, प्रकीर्ण, विकीर्ण। पू> पूर्ण। भिद्> भिन्न, छिद्> छिन्न, सद्> सन्न, प्रसन्न, विषण्ण, आसन्न आदि । (ग) (बुमास्थागापा०) गा, पा और हा के आ को ई होगा। गीतम्, पीतम् (पिया), हीनम् (छोड़ा)। (घ) (द्यतिस्यतिमास्थामित्ति किति) दो (दा), सो (सा), मा स्था, इनके आ को इ होता है। दित, अवस्ति, परिमित, स्थित। (ङ) (अनुदात्तोपदेश॰) यम् , रम् , नम् , गम् , हन् , मन् , वन् और तनादिगणी धातुओं के म् और न् का लोप होता है । यम्> यत, संयत, रम्>रत, विरत, नम्>नत, प्रणत, गम्> गत, आगत, हन्>हत, मन्> मत, संमत, तन् > तत, वितत्। (च) (अनिदितां हल०) उपधा के न्का लोप होगा, यदि धातु का इ हटा होगा तो नहीं। बन्ध् > बद्ध, ध्वंस् > ध्वस्त, संस् > स्रस्त, दंश् > दष्ट । (छ) (जनसनखनां०) जन्, सन्, खन् के न्को आ होगा। जात, सात, सात । (ज) (विचिस्विपियजादीनां०, प्रहिज्या०) वच् आदि को संप्रसारण होता है, अर्थात् य्> इ, व्> उ, र्>ऋ। ब्रूया वच्>उक्त, स्वप्> सुप्त, यज्> इष्ट, वप्>उप, वह्> ऊढ, वस् > उपित, प्रह् > गृहीत, व्यध् > विद्ध, प्रच्छ् > पृष्ट, आह्ने > आहूत, वद् > उदित। (झ) (संयोगादेरातो०) ग्ला, ग्ला आदि के बाद त को न। ग्लान, ग्लानू। (ज) (त्वोदिभ्यः) छ आदि २१ धातुओं के बाद त को न। छ> छन, स्तॄ>स्तीर्ण, विस्तीर्ण, ज्या > जीन, दु > दून । (ट) (ओदितश्च) जिन धातुओं में से ओ हटा हो, उनके बाद त को न। उड्डी> उड्डीनः, भञ्ज् > भग्न, भुज् > भुग्न, मस्ज् > मग्न, रुज् > रुग्ण, ली > लीन, उद्विज् > उद्विग्न, श्वि > शून, हा > हीन। (ठ) इन धातुओं के ये रूप होते हैं :-दा > दत्त, धा > हित, विहित, निहित, अस् > भूत, शुष् > शुष्क,

cc-o. of होता हिंग महिना लिसा है के प्रमित्र होता है के प्रमित्र है के प्रम

संस्कृत वनाओ—(क) (श्रेयस् , अनडुह्) १. अपना धर्म घटिया भी अच्छा है। २. कल्याण के विषय में किसकी तृप्ति होती है ? ३. सूर्य अनड्वान् (वैल) हैं, वह पृथ्वी को धारण करता हैं (घृ) । ४. वैलों से खेती की जाती है । (ख) (दिव् नृत् धातु) १. वह पाशों से जुआ खेलता है। २. नाचनेवाला युवतियों के साथ नाचता है। ३. वाण चंचल लक्ष्य पर भी लगते हैं (सिध्)। ४. एक के परिश्रम से ही घर-खर्च चल जाता है। (ग) (क्त प्रत्यय) १. अच्छी याद दिलाई। २. अच्छा, हमने ऐसा मान लिया । ३. व्यापारी नाव टूट जाने से मर गया । ४. आपकी घोषणा का लोगों ने स्वागत किया है। ५. यह क्या वात शुरू की ? ६. ऐसा अशुभ न हो। ७. राजा ने अनुचित किया। ८. शकुन्तला पेड़ों से ओझल हो गई। ९. उसको भाग्य पर छोड़ दिया । १०. उसकी प्रतिज्ञा सबको विदित हो गई । ११. वह दुःख के कारण अन्य-मनस्क है। १२. में व्यर्थ ही रोया। १३. वे दोनों एक दूसरे को मारने पर तुले हुए हैं। १४. सारी चीजें उलट-पलट हो गई हैं। १५. सीता का क्या हाल हुआ ? १६. होकापवाद मेरे लिए बलवान् है। १७. घर में आग लग गई। १८. घर में आग लगने पर कुँआ खोदना कहाँ तक उचित है ? १९. राजा होश में आया। २०. तुम्हारा तर्क उचित है। २१. तुमने स्वयं अपना सत्यानाश किया है। २२. अब मेरी हालत ठीक है। २३. वड़ी कठिनाई से जान छूटी। २४. वह सदा के लिए चला गया। २५. उन्होंने उसे अपराधी ठहराया। २६. वह बहुत प्रसन्न हुआ। २७. उसकी आँखों में ऑसू भर आए। २८. में पीछे-पीछे आ रहा हूँ। २९. तुमने देर कर दी। ३०. मैंने तुम्हारा कभी कुछ भी <mark>बुरा नहीं किया है। ३१. यह बात आपके कान तक पहुँची ही</mark> होगी। ३२. मैंने उसे कुछ मना लिया। (घ) (विशेषण) १. पके और कटे फल को खाओ । २. जरे हुए, खाए हुए और छोड़े हुए भोजन को न खाओ । ३. आदमी पतला हो या मोटा, उसे शान्त और दान्त होना चाहिए। ४. प्रौढ़ व्यक्ति का ज्ञान विस्तृत, सन्तुलित, परिपक्व, तीक्ष्ण और अनिन्दित होता है। ५. सिले हुए वस्न, तैयार भोजन, पिघले हुए घी, ढके हुए वर्तन और छीले हुए फल को यहाँ रखो।

संकेतः—(क) १. श्रेयान् स्वधमो विगुणः। २. श्रेयितः। ३. अनङ्वान् दाधार पृथ्वीम्। (ख) १. अक्षैः दोव्यितः। २. नर्तकः। ३. सिध्यन्ति। ४. व्ययः शुध्यितः। (ग) १. सम्यगनुदोधितोऽस्मि। २. अभ्युपगतं तावदस्माभिरेवम्। ३. सार्थवाहो नौव्यसने विपन्नः। ४. अभिनन्दितं
देवस्य शासनं जनैः। ५. किमिद्रमुपन्यस्तम्। ६. प्रतिहत्तममङ्गलम्। ७. अनुचितमाचिरितम्।
८. अन्तिईता वनराज्या। ९. स दैवाधीनः कृतः। १०. प्रकाशतां गता। ११. सन्तापेन अष्टहृदयः।
१२. अरण्ये मया रुदितम्। १३. परस्परवधायोद्यतौ तौ। १४. सर्वं विपर्यासं यातम्। १५. कि
वृत्तम्। १६. वलवान् मतो मे। १७. ज्वलनसुपगतं गेहम्। १८. सन्दीप्ते भवने तु कृपखननं
प्रत्युयमः कीदशः। १९. प्रकृतिमापन्नः। २०. उपपन्नः। २१. त्वया स्वहस्तेनाङ्गाराः कर्षिताः।
२२. लब्धं मया स्वास्थ्यम्। २३. कथं कथमि मुक्तः। २४. असंनिवृत्त्ये गतः। २५. स्थापितः।
२६. आनन्दस्य परां कोटिमधिगतः। २७. तस्या नयने उद्वाष्पे जाते। २८. अनुपदमागत एव।
२९. वेलातिक्रमः कृतः। ३०. विप्रियं न कृतम्। ३१. इदं भवतः श्रुतिविषयमापतितमेव। ३२.

शब्दकोप-९५० + २५ = ९७५] अभ्यास ३९

(व्याकरण) -

(क) अद्रिः (पुं०, पर्वत), प्रावन् (पुं०, पत्थर), शिला (चहान), श्रङ्गम् (चोटी), प्रपातः (झरना), उत्सः (सोता), निर्झरः (पहाड़ी नाला, बड़ा झरना), दरी (स्त्री०, दर्रा), अद्रिद्रोणी (स्त्री०, घाटी), गह्वरम् (गुफा), खिनः (स्त्री, खान), उपत्यका (तराई, भावर), अधित्यका (पटार), निक्कुझः (झाड़ी), हिमसरित् (स्त्री०, गलेशियर)। (१५)। (ख) कुध् (गुस्सा करना), दुह् (द्रोह करना), अम् (क्षमा रकना) दम् (दयाना), तुप् (सन्तुष्ट होना), दुप् (दूषित होना), व्यध् (बींधना), शुप् (स्लना), सिध् (सिद्ध होना), हुप् (प्रसन्न होना। (१०)।

व्याकरण (मति, नश् , भ्रम् , क्तवतु प्रत्यय)

१. मित शब्द के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० ४२)

२. नश् और भ्रम् धातुओं के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ५८, ५९)

नियम २०९ — क्तवतु प्रत्यय भृतकाल में होता है। इसका तवत् शेष रहता है। यह कर्तृवाच्य में होता है, अतः कर्ता के तुल्य क्रिया-शब्द के लिंग, विभक्ति और वचन होंगे। कर्ता में प्रथमा, कर्म में द्वितीया, क्रिया कर्ता के तुल्य। धातुओं के रूप क्र प्रत्यय के तुल्य ही बनेंगे। नियम २०८ पूरा इसमें भी लगेगा। क्त प्रत्यय लगाकर जो रूप बनता है, उसी में 'वत्' और जोड़ दें। जैसे—कु> कृतः, तवत् में कृतवत् होगा। तवत् प्रत्ययान्त के रूप पुंलिंग में भगवत् (शब्द० २०) के तुल्य चलेंगे, स्त्रीलिंग में ई लगा कर नदी के तुल्य और नपुंसक० में जगत् (शब्द० ६८) के तुल्य। क्त प्रत्यय लगाने पर कर्म के लिंग, वचन, विभक्ति पर ध्यान दिया जाता है, कर्ता के लिंग आदि पर नहीं। परन्तु क्तवतु प्रत्यय लगाने पर कर्ता के लिंग आदि पर प्यान दिया जाएगा, कर्म पर नहीं। जैसे—स पुस्तकम् अपटत् का क्तवतु में स पुस्तकं पटितवान्। ते पुस्तकानि पठितवन्तः। सा पुस्तकं पठितवाती।

नियम २१०—दीर्घ, गुण, वृद्धि, संप्रसारण आदि के लिए यह सारणी ठीक स्मरण कर लें। ऊपर मूल स्वर दिए गए हैं, उनके स्थान पर गुण, वृद्धि आदि कहने पर ऊपर के मूल स्वर के नीचे गुण आदि के सामने जो स्वर आदि दिए गए हैं, वे होंगे। आगे भी जहाँ गुण, वृद्धि, संप्रसारण आदि कहा जाए, वहाँ इस सारसी (टेनुल) के अनुसार कार्य करें। (रिक्त स्थानों पर वह कार्य नहीं होता।)

इ, ई अ, आ ल ए ऐ ओ औ १. खर उ, ऊ ऋ, ऋ २. दीर्घ द्ध आ ऊ 羽 ३. गुण अ U ओ अर अलए - ओ

CC-O. Dr. Ramdev Tipathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Sidding है eGangoth Gyaar Kosha ५. संप्रसारण—युको इ, व्को उ, र्को ऋ, लुको लु ।

संस्कृत वनाओं (क) (मित शब्द) १. विनाश के समय बुद्धि अष्ट हो जाती है। २. सबकी रुचि पृथक् होती है (रुचि)। ३. कुपथ पर वर्तमान मूर्ख को दोनों लोकों में दुःख देनेवाली आपित्त आती है (दुर्मिति)। ४. एकता से कार्य सिद्ध होते हैं (संहति)। ५. गुणों से गौरव प्राप्त होता है, न कि मोटापे से (संहति)। ६. ओह, इष्ट वस्तु की सिद्धि में विष्न आते हें (सिद्धि)। ७. चेष्टा के अनुकूल ही कामी जनों की मनोवृत्ति होती है (वृत्ति)। ८. अधिक पैसा हो तो बहुत-से सम्बन्धी हो जाते हैं (ज्ञाति)। ९. अत्युन्नति के बाद बड़ों का भी पतन होता है (अत्यारुटि)। १०. वह सदा चौकन्ना रहता है (प्रत्युत्पन्नमितिः)। ११. आप. क्या काम करते हें ? (वृत्ति)। १२ यह बात उस समय मुझे नहीं सूझी (बुद्धि)। १३. और कोई चारा नहीं है। १४. इस प्रकार की स्त्रियाँ गृहिणी होती हैं और इससे विपरीत कुछ के लिए दुःखद होती हैं (युवति, आधि)। १५. राम की बुद्धि तीक्ष्ण है और देवदत्त की मोटी। १६. वह देखने में सुन्दर हैं। १७. उसने शत्रुता का रुख अपनाया हुआ है। १८. वह आपाततः राम की बड़ाई कर रहा है, पर वस्तुतः बुराई कर रहा है। (ख) (नश्, भ्रम् धातु) १. देर करनेवाला नष्ट हो जाता है (विनश्)। २. संशयात्मा नष्ट हो जाता है (विनश्)। ३. मेरा मन अस्थिर घूम रहा है (भ्रम्)। ४. पेड़ के थांवले में जल चकर स्वा रहा है (भ्रम्)। ५. अधीनस्थ व्यक्ति बड़े कामों में जो सफल हो जाते हैं, वह बड़ों की कृपा ही समझनी चाहिए (सिघ्)। ६. सजन पापी पर कोध करता है (कुध्), दुर्जन से ड़ोह करता है (द्रुह्), निरपराध को क्षमा करता है (क्षम्)। ७. राम बाण से मृगों को बींधता है (व्यध्), शत्रुओं को दवाता है (दम्) और रावण को जीतने से प्रसन्न होता है (हुए)। ८. दुर्जन थोड़े से सन्तुष्ट होता है (तुष्)। ९. कुलमर्यादा के नाश से कुलीन स्त्रियाँ विगड़ जाती हैं (दुप्)। १०. ग्रीष्म ऋतु में तालाब सूख जाता है (ग्रुप्) । (ग) (क्तवतु) १. तुमने मेरा अभि-प्राय ठीक समझा । २. उसके खाना खा लेने पर में उसके पास गया । ३. पहाड़ दिखाई दिया । ४. पत्थर गिरे । (घ) (शैलवर्ग) १. पहाड़ की चोटी से झरना वहा । २. घाटी में सोते निकलते हैं और नाले वहते हैं । ३. पर्वत की गुफाओं में ऋषि तपस्या करते हैं। ४. पिण्डारी ग्लेशियर का दृश्य मनोरम है। ५. पठार की भूमि सम होती है, वहाँ वृक्षादि भी होते हैं। ६. दरें के मार्ग से यातायात होता है।

संकेतः—(क) १. भवत्यपाये परिमोहिनी मितः। २. भिन्नरुचिर्ह लोकः। ३. आप-देत्युभयलोकद्पणी वर्तमानमपथे हि दुर्मितम्। ४. संहितः वर्धांसाधिका। ५. गुरुतां नयन्ति हि गुणा न संहितः। ६. अहो, विध्नवत्यः प्राधितार्थसिद्धयः। ७. चेष्टाप्रतिरूपिका कामिजनमनो-वृत्तिः। ८. अतनुषु विभवेषु द्वातयः संभवन्ति। ९. अत्यारूद्धिभवित महतामप्यपन्रंशिनष्ठा। ११. कां वृत्तिमुपजीवत्यार्थः। १२. इति मम बुद्धौ नापतितम्। १३. नान्या गितः। १४. यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः। १५. तीक्ष्णमती रामः, स्थूलबुद्धिः। १६. शोभनाकृतिः। १७. विपक्षवृत्तितामाश्रयते। १८. स रामस्य व्याजस्तुतिमाचरित। (ख) १. दीर्धस्त्रो। ३. निष्ठा-शून्यम्। ४. वृक्षावते । ५. सिध्यन्ति कर्मसु महत्स्विष यन्नियोज्याः, संभावनागुणमवेहि तमीस्वराणाम्। ६. पापिने, दुर्जनाय दुद्धिति, क्षाम्यिति,। ७. विध्यिति, दाम्यिति, हृष्यिति। ८. तुष्यिति। ९. प्रदुष्यिति कुलक्षियः। १०. शुष्यिति कासारः। (ग) १. सम्यग निगृहीतवानिसः। २. भुक्तविति दिस्मिन्। ४. मावाणः ।

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शब्दकोष-९७५ + २५ = १०००] अभ्यास ४०

(व्याकरण)

(क) काननम् (वन), विटिषन् (वृक्ष), व्रतिः (स्त्री॰, लता), मूलम् (जड़), दार (नपुं॰, लकड़ी), इन्धनम् (इँधन), वल्लिः (स्त्री॰, वौर), पर्णम् (पत्ता), किसलयम् (कोंपल), वृन्तम् (इंटल), देवदारः (पुं॰, देवदार), भद्रदारः (पुं॰, चीड़), मिन्दूरः (वांझ का पेड़), सर्जः (सर्ज), सालः (साल का पेड़), तमालः (आवन्स), करीरः (करील, वव्ल), गुग्गुलः (गूगल), क्लेष्मातकः (लिसौड़ा), प्रियालः (प्याल)। (२०)। (स्त्र) ष्टिच् (यूकना), अस् (फंकना), पुष् (पुष्ट करना), गुष् (ग्रुद्ध होना), तृष् (तृप्त होना)। (५) ह्याकरण—(नदी, लक्ष्मी; श्रम्, सिव्, शतृ प्रत्यय)

१. नदी और रक्ष्मी शब्दों के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द ॰ ४३, ४४) २. श्रम् और सिव् धातुओं के रूप स्मरण करो । (देखो धातु ॰ ६०, ६१)

नियम २११—(लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे) (क) लट् के स्थान पर परस्मैपद में दातृ और आत्मनेपद में शानच् होता है। शतृ का अत् और शानच्का आन शेप रहता है। ये दोनों प्रत्यय किया की वर्तमानता को स्चित करते हैं। हिन्दी में इनका अर्थ 'रहा है, रहे हैं, रहा था, हुआ, हुए' आदि के द्वारा प्रकट किया जाता है। (ख) पाणिनि के नियमानुसार प्रथमा कारक में शतु, शानच् का प्रयोग नहीं करना चाहिए। जैसे-स पटन् अस्ति, न कहकर—स पटति ही कहना चाहिए। परन्तु प्रथमा में भी कुछ प्रयोग मिलते हैं, अतः प्रथमा में भी इनका प्रयोग प्रचलित है। (ग) शतृ और शानच्-प्रत्ययान्त शब्द विधेय या विशेषण के रूप में आते हैं। शतृ-प्रत्ययान्त के लिंग, वचन, कारक, कर्ता के तुल्य होते हैं। इसके रूप पुंलिंग में पठत् (शब्द० २४) के तुल्य चलेंगे। जुहोत्यादि० की धातुओं में न् नहीं लगेगा। जैसे—ददत् ददतौ ददतः। स्त्रीलिंग में ई लगाकर नदी के तुल्य । नपुंसक ॰ में जगत् (शब्द ॰ ६८) के तुल्य । जैसे पठन्तं रामं पश्य । पटते रामाय फलानि यच्छ । (घ) शतृ प्रत्यय में भी धातु से विकरण आदि होते हैं, अतः शतृ प्रत्यय लगाकर रूप वनाने का अति सरल प्रकार यह है कि उस धातु के लट् के प्रथम पु॰ बहुवचन के रूप में से अन्तिम इ और बीच के न को (यदि हो तो) हटा दें। इस प्रकार शतृ प्रत्ययवाला रूप वच जाता है। जैसे—भू> भवन्ति, शतृ-भवत्। अस्>सन्ति, सत्। गम्> गच्छन्ति, गच्छत्। कृ>कुर्वन्ति, कुर्वत्। दा> ददित, ददत्। (ङ) शतृप्रत्ययान्त के बाद अर्थ के अनुसार अस्, आस् या स्था धातु का प्रयोग होता है। वर्तमान आदि में अर्थानुसार लट्, लङ् आदि। गृहं गच्छन् आसीत्, भविष्यति वा । पश्नां वधं कुर्वन् आस्ते । तं प्रतिपालयन् तस्थौ, अतिष्ठत् वा । (च) शतृ-प्रत्ययान्त को स्त्रीलंग वनाने के लिए ये नियम स्मरण रखें:—(१) (उगितश्च) सभी जगह अन्त में डीप् (ई) लगेगा । (२) (शप्यनोर्नित्यम्) भ्वादि०, दिवादि० और चुरादि॰ की धातुओं में त् से पहले न् और लगेगा। जैसे-गच्छत्> गच्छन्ती, नृत्यत्> . तृत्यन्ती, कथयत् > कथयन्ती । (३) (आच्छीनद्योः ०) अदादि ० की आकारान्त धातुओं तथा तुदादि ० की धातुओं में वीच में न् विकल्प से लगेगा । भात् > भान्ती, भाती,

तुदत् >तुदन्ती, तुदती । (४) इसके अतिरिक्त क्षेष स्थानों पर न नहीं लगेगा, केवल ई CC क्रेन्टी ने स्थानी प्रकार हिल्ली, देखती, क्षेत्री के प्राचिती, क्षेत्री । (देखी पीरीका म हातृप्रत्यय) ।

संस्कृत वनाओ—(क) (नदी, लक्ष्मी) '१. नदियाँ स्वयं अपना जल नहीं पीतीं। २. नदियों में लोग तैरते हैं और उनमें मगर आदि भी रहते हैं। ३. लक्ष्मी वह है, जिससे दूसरों का उपकार होता है। ४. लक्ष्मी के प्रसाद से दोष भी गुण हो जाते हैं। ५. यह घर में लक्ष्मी है। ६. सधवा स्त्रियों का चित्त फूल के तुल्य कोमल होता है (पुरन्ध्री)। ७. जिन्होंने पुण्य कर्म नहीं किए हैं, उनकी वाणी स्वच्छ और गम्भीर पदोंवाली नहीं होती (सरस्वती)। (ख) (श्रम्, सिव्) १. वह कठिन परिश्रम करता है (अम्)। २. वह तीवर्गात से शत्रु की ओर चला (क्रम्)। ३. बिना कारण ही जो पक्षपात होता है, उसका प्रतिकार नहीं है। वह प्रेमरूपी तन्तु है, जो प्राणियों को अन्दर से सी रहा है। ४. अच्छी सिलाई के लिए सिलाई की मशीन से वस्त्रों को सीओ। ५. इधर-उधर मत थूको और न कूड़ा-करकट ही मनमाने फेंको (अस्)। ६. यज्ञ से वायु ग्रुद्ध होती है (ग्रुष्)। ७. आग लकड़ी से तृप्त नहीं होती (तृप्)। (ग) (शतृ प्रत्यय) १. वह बाण चढ़ाता हुआ दिखाई दिया। २. थोड़ी योग्यतावाला होने पर भी में रघुवंशियों का वर्णन करूँगा। ३. वह सिर-दर्द का बहाना बना कर घर चला गया । ४. सूर्य के तपते होने पर अन्धकार कैसे प्रकट होगा (आविर्भू) ? ५. नीचों से मित्रता की अपेक्षा महात्माओं से विरोध अच्छा है, क्योंकि वह ऐश्वर्य को उन्नत करता है। ६. सज्जनों के सन्देहास्पद विषयों में उनके अन्तःकरण की वृत्तियाँ ही प्रमाण हैं। (घ) (द्वितीया) १. तुम्हें लोग प्रकृति कहते हैं। २. वह यमुना के किनारे गया। ३. उसे बड़ा दुःख हुआ। ४. राजा का हितकर्ता लोगों में बुरा समझा जाता है। ५. वह तृप्त नहीं हुआ। ६. राम पहाड़ की चोटी पर चढ़ा। ७. पक्षी आकाश में उडा । ८. चन्द्रापीड शिलापट पर सोया । ९. दुष्यन्त इन्द्र के आधे आसन पर बैठा । १०. वह सन्मार्ग पर चलता है (अभिनिविश्)। ११. बदमाशों को धिकार। १२. नौकर राजा के चारों ओर खड़े हो गए। (ङ) (वन वर्ग) वन भूमि के रक्षक हैं, वे भूमि को रेगिस्तान होने से बचाते हैं। वृक्षों की उपयोगिता बहुत है। उनके पत्ते, जड़, लकड़ी, कोंपल, बौर, डण्टल, कलियाँ, फूल और फल सभी अनेक कामों में आते हैं। कुछ पेड़ फल देते हैं और उनके फल खाए जाते हैं। कुछ पेड़ों की लकड़ी ईंधन के रूप में काम आती है। पहाड़ों पर देवदार, चीड़, बाँझ, सर्ज और साल के पेड अधिक होते हैं। गूगल, लिसोड़ा और प्याल पर फल भी होते हैं। आबनूस की लकड़ी काली होती है और बंबूल की दात्नें अच्छी बनती हैं।

संकेत:—(क) ३. उपकुरुते यया परेषाम्। ६. पुरन्धीणां वित्तं कुसुमसुकुमारं हि भवित । ७. प्रवर्तते नाकृतपुण्यकर्मणां प्रसन्नगम्भीरपदा सरस्वती । (स्व) ३. अहेतुः, स हि स्नेहात्मकस्तन्तुरन्तर्भूतानि सीव्यति । ४. स्यूत्यर्थम् । ५. ष्ठीव्यत, अवकरिनकरम् , यथेच्छम् , अस्यत । ७. काष्ठानाम् । (ग) १. शरसन्धानं कुर्वन् । २. रघूणामन्वयं वक्ष्ये तनुवाग्विभवोऽपि सन् । ३. शिरःश्रूलस्पर्शनमपदिशन् । ४. धर्माशौ तपित । ५. समुन्नयन् भृतिमनार्थसंगमाद् वरं विरोधोऽपि समं महात्मिभः । ६. सतां हि सन्देहपदेषु वस्तुषु प्रमाणमन्तःकरणप्रवृत्तयः । (घ) १. प्रकृतिमामनित । २. कच्छमवतीणः । ३. परं विषादमगच्छत् । ४. द्वेष्यतां याति लोके । ५. न तृतिमाययौ । ६. शिखरमारुरोह । ७. दिवमुदपतत् । ८. ० पट्टमधिशिश्ये । ९. अर्थासनम् अधितष्ठौ । १०. अभिनिविशते सन्मार्गम् । ११. धिक् जाल्मान् । १२. परिजनः । (इ) मरुत्वात्,

ट्रिलकाः, उपयुज्यन्ते, दन्तधावनानि । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha शब्दकोष-१००० + २५ = १०२५] अभ्यास ४१ (व्याकरण)

(क) रसालः (आम), जम्बू: (स्नी०,जामुन), पलाशः (ढाक), प्लक्षः (पाकड़), अश्वत्थः (पीपल), न्यग्रोधः (बड़), नीपः (कदम्ब), शाल्मिलः (पुं०, सेमर), खदिरः (खैर), एरण्डः (एरंड), शिशपा (शीशम), तालः (ताड़), नारिकेलः (नारियल), निम्यः (नीम), मधूकः (महुआ), बिल्वः (बेल), फेनिलः (रीटा), आमलकी (स्त्री०, आँवला), विभीतकः (बहेड़ा), हरितकी (स्त्री०, हर्र), पनसः (कटहल), अपामार्गः (चिरचिटा), वेतसः (बेंत), अर्कः (आक), धत्तूरः (धत्रा)। (२५)

व्याकरण (स्त्री, श्री, सो, श्री, शतु, शानच् प्रत्यय)

१. स्त्री और श्री शब्दों के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द ४५, ४६) २. सो और शो धातुओं के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ६२, ६३)

नियम २१२—(लटः शतृशानचौ०) (क) आत्मनेपदी धातुओं के लट् के स्थान पर शानच् हो जाता है। शानच् का आन शेष रहेगा। शानच् होने पर शब्द के रूप पुंलिंग में रामवत्, स्त्रीलिंग में आ लगाकर रमावत्, नपुंसक में गृहवत् चलेंगे। शानच् प्रत्यान्त के लिंग, वचन और कारक कर्ता के तुल्य होंगे। (देखो परिशिष्ट में शानच् प्रत्यय)। (ख) शानच् प्रत्ययान्त के बाद अर्थ के अनुसार अस्, आस् या स्था का लट्, लङ् आदि का प्रयोग होगा। (ग) (आने मुक्) जिन धातुओं के अन्त में अ विकरण लगता है, वहाँ पर अ और आन के बीच में मू लग जायगा। अर्थात् अ + आन = मान। जैसे—यजते> यजमानः। वर्तते > वर्तमानः। (घ) (ईदासः) आस् धातु से शानच् होने पर आसीन रूप होता है। (ङ) अन्यत्र आन ही जुड़ेगा। शी> शयानः, कृ> कुर्वाणः, धा>दधानः।

नियम २१३—(क) (विदेः शतुर्वसुः) विद् के बाद शतृ को वस् विकल्प से होता है। विदन्, विद्वान्। विदुषी। (ख) द्विष् धातु से शतु अर्थ में और सु से यज्ञ में रस निचोड़ना अर्थ में शतृ होता है। द्विषन्, सुन्वन्। (ग) अर्ह् से योग्य होना अर्थ में शतृ होता है। द्विषन्, सुन्वन्। (ग) अर्ह् से योग्य होना अर्थ में शतृ। अर्हन्। (घ) (पूङ्यजोः०) पू और यज् के वर्तमान अर्थ में पवमानः, यजमानः रूप होते हैं। (ङ) (ताच्छीत्य०) स्वभाव आदि अर्थों में चानश् (आन) प्रत्यय होता है। मोगं भुझानः। कवचं विभ्राणः। शत्रुं निध्नानः।

नियम २१४—(क) शतृ और शानच् क्रिया की वर्तमानता को बताते हैं। इनसे 'जब कि' अर्थ भी निकलता है। अरण्यं चरन्—जब वह वन में घूम रहा था। विवाहकौतुकं बिभ्रत एव—जब कि वह विवाह का सूत्र पहने हुए था। (ख) (लक्षणहेत्वो: क्रियायाः) स्वभाव और कारण अर्थ बताने में शतृ और शानच् होते हैं। शयाना भुक्षते यवनाः (यवन लेटे-लेटे स्वाते हैं)। अर्जयन् वसति (धन कमाता हुआ रहता है)। (ग) (ताच्छील्य०)चानश् (आन), स्वभाव, आयु और शक्ति अर्थ का बोध कराता है। उदाहरण नियम २१३ (ङ) में हैं। (घ) शतृ और शानच् प्रत्ययान्त का सप्तमी में समय-सूचक अर्थ हो जाता है। जब वह रो रहा था—तस्मिन् स्दित सित। तस्मिन् पठित सित।

नियम २१५—(लटः सद्वा) करने जा रहा है या करनेवाला है, इस अर्थ में लट्ट को परस्मै॰ में शतृ और आत्मने॰ में शानच् होता है। लट् का रूप बनाकर शतृ СС-०यका साजाना हुए माहिंबीन टिनास्ति विनोष्टा जिल्हा हुए सम्बाद्ध महिन्य पान कि स्वाद्ध स्वाद्ध स्वाद्ध स्वाद्ध

संस्कृत वनाओ—(क) (स्त्री, श्री शब्द) १. स्त्रियाँ जन्म से ही चतुर होती हैं। २. लजा ही वस्तुतः स्त्रियों को सुशोभित करती है। ३. स्त्रियों में बिना शिक्षा के ही चतुरता देखी जाती है। ४. स्त्रियों का पति ही गति है। ५. स्त्रियों का भर्ता ही देवता है। ६. अथक परिश्रम ही श्री का मूल है। ७. साहस में श्री निवास करती है। ८. स्वाभिमान भी रहे और धन भी मिले, ऐसा नहीं होता। ९. सीता दशरथ के गृह में लक्ष्मी के सहश थी। (ख) (सो, शो धातु) १. वह शत्रु को मारता है (सो) । २. भीम ने दुर्योधन को मारा । ३. आधा काम समाप्त हो गया [अवसो] । ४. वह ऋषि नीलकमल के पत्ते की धार से शमी-लता को काटने का प्रयत्न करता है (त्यवसो) । ५. पेड़ों को जल दिये विना शकुन्तला जल नहीं पीना चाहती थी । ६. वह चाकू से आल् छीलता है [शो]।.७. उसने छुरी से पेन्सिल छीली।८. वह कुशा को काटता है (दो)। ९. वह लकड़ी काटता है (छो)। (ग) (शतृ, शानच्) १. पुत्र और शिष्य को बढ़ता हुआ, प्रसन्न होता हुआ और यत्न करता हुआ देखना चाहे। २. सर्योदय होने पर सोनेवाले को श्री छोड देती है। ३. मैं आराम से बैठा हूँ, आप भी आराम से वैठें । ४. विस्तर के पास में बेठे हुए पुत्र को राजा ने देखा । ५. वह कवच पहनता है, रातुओं को मारता है और भोगों को भोगता है। ६. मुसलमान लेटे-लेटे खाते हैं। ७. जब वह रो रहा था, तभी कौआ रोटी लेकर उड़ गया। ८. वन्य जन्तुओं को विनीत करने की इच्छा से मानो वह वन में घूमा। (घ) (द्वितीया) १. तुम्हारी दुष्टता की शिकायत मेंने आचार्य से कर दी है। २. आप के बारे में उसका प्रेम कैसा है ? ३. चार महीने वर्षा नहीं हुई।४. राम वालक से रास्ता पृछता है।५.पिता वालक को धर्म वताता है।६. वह देवदत्त से सो रुपया जीतता है(जि)। ७. चोर देवदत्त का सौ रुपया चुराता है। ८. विष्णु समुद्र से अमृत को मथते हैं।९.वह बकरी को गाँव में ले जाता है (नी,इ,कृप्)। १०. उसने राजा से कुशल पृछा । ११. शोक के वश में न होओ । १२. अपने साथी से विदाई छो । १३. समय ही बलावल को करता है । १४. सव अपना स्वार्थ देखते हैं । (ङ) (बृक्षवर्ग) उपवन में वृक्षों की सुन्दरता दर्शनीय है। वृक्षों की पंक्तियाँ लगी हुई हैं। आम, कलमी आम, जामुन, टाक, पाकड़, पीपल, बड़, कदम्य, सेम, खैर, एरंड, शीशम, ताड़, नारियल, नीम, महुआ, वेल और कटहल के वृक्ष पूलों और फलों से सुशोित हो रहे हैं। हर, बहेड़ा और आँवला त्रिफला कहा जाता है।

संकेत—(क) १. निसर्गादेव । २. स्फुटमिभ्यूषयित स्त्रियस्त्रपैव । ३. स्त्रीणामिशिक्षित-पटुत्वम् । ६. अनिवेदः । ८. न मानिता चास्ति, भवन्ति च श्रियः । ९. यथा श्रीः । (स्त्र) १. स्यित । ३. अर्थमविसतं वार्यस्य । ४. धारया छेत्तुं व्यवस्यित । ५. वृक्षेष्वपीतेषु, पातुं न व्यवस्यित । ६. इयित । ७. अञ्चात् । ८. कुञ्चान् चित । ९. छ्यित । (ग) १. वर्षमानम् , मोदमानम् , यतमानम् । २. शयानम् । ३. सुखासीनोऽहम् । ४. शयनान्तिके आसीनम् । ५. विश्राणः, निव्नानः, मुक्षानः । ८. विनेष्यन्तिव । (घ) १. तवाविनयमन्तरेण परिगृहीतार्थः कृत आचार्यः । २. भवन्त-मन्तरेण । ३. चतुरो मासान् न ववर्ष । ४. बालकं पन्थानम् । ५. ब्रूते । ६. देवदत्तं शतम् । ७. मुष्णाति । ८. सुधां क्षीरिनिधं मध्नाति । ९. अजां ग्रामम् । ११. वशं मा गमः । १२. आपृच्छस्व शब्दकोष-१०२५ + २५ = १०५०] अभ्यास ४२

(व्याकरण)

(क) बकुलः (मौल्सरी), बुचल्यम् (नील्कमल), इन्दीवरम् (नील्कमल), कुमुद्रम् (क्वेतकमल), पुण्डरीकम् (सफेद कमल), कोकनदम् (लाल कमल), कह्लारम् (सफेद कमल), कुमुद्रनी (स्त्री०, कुमुद्र की लता), निल्नी (स्त्री०, पद्म-समूह), शेपा-लिका (हार-सिंगार), यूथिका (जूही), चम्पकः (चम्पा), मालती (स्त्री०, चमेली), मिल्लका (बेला), गन्धपुष्पम् (गेंदा), केतकी (स्त्री०, केवड़ा), कणिकारः (कनेर), बन्धूकः (दुपहरिया), कुन्दम् (कुन्द), स्थलपद्मम् (गुलाव), स्तबकः (गुलदस्ता), प्रस्नम् (फूल), मकरन्दः (पराग), जपापुष्पम् (जवाकुसुम) नवमाल्किता (नेवारी)। (२५)

च्याकरण (धेनु, वधू, कुप्, पद्, तुमुन् प्रत्यय)

१. धेनु और वधू शब्दों के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० ४७, ४८) २. कुप् और पद् धातुओं के रूप स्मरण करो । (देखो धातु० ६४, ६५)

नियम २१६—(क) (तुमुन्खुलो क्रियायां क्रियार्थायाम्) को, के लिए अर्थ को प्रकट करने के लिए धातु से तुमुन् प्रत्यय होता है। ऐसे स्थानों पर दूसरी क्रिया के लिए कोई क्रिया की जाती है। तुमुन् का तुम् शेष रहता है। यह अव्यय होता है, अतः इसका रूप नहीं चलेगा। पिठतुं लेखितुं कीडितुं च विद्यालयं याति। (ख) (समानकर्तृकेषु तुमुन्) इच्छार्थक धातुओं के साथ तुमुन् होता है। पिठतुं भोक्तुं वा इच्छित। श्रोतुमिच्छामि। (ग) (शकधृपज्ञा०) शक्, ज्ञा, रम्, लम्, अर्ह्, अस् आदि के साथ तुमुन् होता है। भोक्तुं शक्नाति, पिठतुं जानाति, भोक्तुमारभते। (घ) (पर्याति-वचनेषु०) पर्यात अर्थ में तुमुन्। भोक्तुं पर्यातः प्रवीणः कुशलो वा। (ङ) (कालसमयवेलामु०) समयवाचक शब्दों के साथ तुमुन् होता है। कालः समयो वेला वा भोक्तुम्।

नियम २१७—तुमुन् (तुम्) प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए ये नियम सारण कर लें। ये नियम तृच् (तृ), तब्यत् (तब्य) में भी लगेंगे। (क) धातु को गुण होता है, अर्थात् अन्तिम इ ई > ए, उ ऊ > ओ, ऋ ऋ > अर् तथा उपधा (उपान्त्य) के इ, उ, ऋ को कमशः ए, ओ, अर् होता है। जैसे—जि > जेतुम्, भू > भवितुम्, कृ > कर्तुम्। हर्तुम्। धर्तुम्। (ख) सेट् धातुओं में बीच में इ लगेगा, अनिट् में नहीं। उदाहरण उपर्युक्त हैं। (ग) सिन्ध-नियमों के अनुसार धातु के अन्तिम च् और ज् को क्, द् को त्, ध् को द् और म् को ब् होता है। पच्-पक्तुम्, मुज्-भोक्तुम्, छिद्-छेतुम्, रुध्-रोद्धुम्, लम्-लब्धुम्। (घ) (व्रश्चभ्रस्जस्जमुज्ञ०) धातु के अन्तिम च्छ् और श् को ष् होता है और इन धातुओं के च् या ज् को भी ष् होता है:—वश्च्, भ्रस्ज्, सज्, मुज्, यज्, राज्, भ्राज्। ष् होकर इनके प्रुम् वाले रूप बनेंगे। प्रच्छ-प्रप्रुम्, प्रविश-प्रवेष्टुम्। सप्टुम्, यप्टुम्। (ङ) (आदेच०) धातुओं के अन्तिम ए और ऐ को आ हो जाता है। आहे-आहातुम्, गै-गातुम्, त्रै-त्रातुम्। (च) धातु के अन्तिम ए और ऐ को आ हो जाता है। गम् गन्तुम्, रम-रन्तुम्। (छ) धातु के अन्तिम ए और ऐ को आ हो जाता है। गम् गन्तुम्, रम-रन्तुम्। (छ) धातु के अन्तिम ह को घ् या द होकर ग्रुम् या दुम् वाला रूप बनता है। दह्-दग्रुम्, दुह्-द्रोग्रुम्, दुह्-द्रोग्रुम्, लिह्-लेदुम्। वह्-वोद्रम्। (ज) इन धातुओं के ये रूप होते हैं:— सह-सोद्रम्, स्व्-विन्तिन्ति, स्व-विन्तिन्ति, स्व-विन्तिन्ति, स्व-विन्तिन्ति, स्व-विन्तिन्ति, स्व-विन्तिन्ति, स्व-विन्तिन्ति, स्व-विन्तिनि, स्व-विन्तिनि, स्व-विन्तिनि, स्व-विन्तिनि, स्व-विन्तिनि, स्व-विन्तिनि, सह-विन्तिनि, स

नियम २१८— (तुं काममनसोरपि) तुम् के म् का लोप होता है, वाद में काम СС-О Dr. स्वास िहम्लार्थक किल्डा कीं बादे बे बाल सामामा प्राथमन मिन्नी किल्डा किल्डा की किल्डा की बाद की काम

संस्कृत वनाओ—(क) (धेनु, वधू) १. गाय को माता माना जाता है, यह उचित है, परन्तु इतना ही पर्याप्त नहीं है। इसकी सुरक्षा और पालन-पोपण का यह जायत ६, तरे प्रदेश हो तथात नहीं है। इस्ता जुरता जार पालन पाय की भी पूरा प्रवन्ध होना चाहिए। २. यह दुवला द्यारा (तनु) कठिन परिश्रम के योग्य नहीं है। ३. कोआ चोंच से (चञ्चु) दाने चुगता है और वच्चों को खिलाता है। ४. तन्दूर में (कन्दु) पकी रोटियाँ जल्दी हजम होती हैं। ५. वधू श्वमुर से द्यमाती है। ६. जामुन (जम्बू) मीठी होती है। ७. कुप्पी (कुत्) मं तेल भर दो। ८. यह चप्पल (पादू) मेरे पैर में ठीक आता है। (ख) (कुप्, पद् धातु) १. राजा लोग हितवादी पर कोध करते हैं (कुप्)। २. गुरु शिष्य पर बहुत अधिक कुद्ध हुआ। ३. रक्त के दूपित होने पर शरीर में दोष कुपित हो जाते हैं। ४. उसने विदर्भ का आधिपत्य पाया (पद्)। ५. वे अपने धर्म का पालन करते हैं (पद्)। ६. लोकाचार का पालन करो (प्रतिपद्)। ७. मनुष्य क्षुत्र्य होने पर प्रायः अपने महत्त्व को प्राप्त करता है (प्रतिपद्)। ८. समय मिलने पर आपका काम पूरा करूँगा (संपादि)। ९. इधर चलो । १०. कौन तुम्हारा अनुकरण कर सकता है (प्रतिपद्) ? ११. वह यौवन को प्राप्त हुआ (प्रपट्)। १२. धूल कीचड़ हो गई (प्रपट्)। १३. कोई मुझ जैसा पैदा होगा (उत्पट्)। १४. जो पाप करेगा, वह दुःखी होगा (विपट्)। १५. यह तुम्हारे योग्य नहीं है (उपपद्)। १६. पाँच को तीन से गुणा करने पर पनदह हो जाते हैं (संपद्)। १७. इस शब्द का यह रूप बनता है (निष्पद्)। (ग) (तृतीया) १. चन्द्रमा के साथ चाँदनी चली जाती है और बादल के साथ बिजली। २. सजनों का सजानों से मिलन वड़े भाग्य से होता है। ३. मृग मृगों के साथ घूमते हैं, गाएँ गायों के साथ, घोड़े घोड़ों के साथ, मूर्ख मूर्खों के साथ, विद्वान् विद्वानों के साथ। समान स्वभाव और आदतवालों की मित्रता होती है। ४. वह आँख से काणा, कान से बहरा, सिर से गंजा, पैर से लॅगड़ा और पीठ से कुबड़ा है। ५. चोटी से हिन्दू और दाढ़ी से मुसलमान जाने जाते हैं। (घ) (तुमुन्) १. आग के अतिरिक्त और कौन जला सकता है ? २. यह इस काम को कर सकता है। ३. वह घर जाने को उतावला हो रहा था। ४. दो-तीन दिन प्रतीक्षा करो। ५. मेरे प्रेम को मत दुकराओ । ६. तुम कुछ कहना चाहते हो। ७. मैं कुछ पूछना चाहता हूँ। (ङ) (पुष्पवर्ग) उपवन फूलों से सुरभित है। तालाव में नीले लाल और सफेद कमल खिले हुए हैं। रंग-बिरंगे फूल खिले हैं। हारसिंगार, ज़्ही, चम्पा, चमेली, वेला, जवाकुसुम, नेवारी, गुलाब, गेंदा, दुपहरिया, केवड़ा, कनेर और कुन्द के फूल शोभित हो रहे हैं।

संकेतः—(क) १. मन्यते । २. इयम् , अक्षमा कठिनश्रमस्य । ३. कणान् चिनुते । ४. वन्दौ, सुपचा भवन्ति । ७. पूर्य । ८. पादप्रमिता वर्तते । (ख) १. हितवादिने । २. भृशम्, । ३. प्रकुप्यन्ति । ४. अपचत । ५. पचन्ते । ६. आचारं प्रतिपचस्व । ७. क्षोमात् । ८. लब्धावकाशः, प्रमुप्यन्ति । १. पन्थानं प्रतिपचस्व । १०. अनुकृतिः प्रतिपत्स्यते । ११. प्रेपदे । १२. पङ्कमावं प्रपेदे । १३. उत्पत्स्यते च मम कोपि समानधर्मा । १४. विपत्स्यते । १५. नैतत्त्वय्युपपचते । १६. त्रयाहताः पञ्च पञ्चदश्च संपचन्ते । १७. निष्यचन्ते । (ग) १. सह मेघेन तिहत् प्रलीयते । २. सतां सिद्धः सङ्गः कथमपि हि पुण्येन भवति । ३. मृगा मृगैः सङ्गमनुव्रजन्ति । समानशीलव्यसनेषु सख्यम् । ४. खल्वाटः, पृष्ठेन कुब्जः । (घ) १. कोऽन्यो हुतवहाद् दग्धं प्रभवति । २. साधियतुमलम् । ३. उदतान्यत् । ४. द्वित्राण्यहानि सोद्धमर्वसि । ५. नार्वसि मे प्रणयं विहन्तुम् । ६. ववतुकामोऽसि । उदतान्यत् । ४. द्वित्राण्यहानि सोद्धमर्वसि । ५. नार्वसि मे प्रणयं विहन्तुम् । ६. ववतुकामोऽसि ।

(न्याकरण)

शब्दकोश-१०५० + २५ = १०७५] अभ्यास ४३

(क) मृद्वीका (अंगूर), द्राक्षा (अंगूर), सेवम् (सेव), आम्रम् (आम), जम्बुः (जामुन), कदलीपलम् (केला), नारङ्गम् (नारंगी, संतरा), आम्रलम् (अमरूद),दाडिमम् (अनार), जम्बीरम् (नीवू),जम्बीरकम् (कागजी नींवू),वीजपूरः (विजौरा नींवू),उदुम्बरम् (गूलर), कर्कन्धुः (वेर), श्रीपणिका(कापल), अमृतपलम् (नाशपाती), क्षुमानी (खुमानी), आलुकम् (आलुबुखारा), तूतम् (शहतूत), मातुलुङ्गः (मुसम्मी), क्षीरिका (खिरनी), स्वर्णक्षीरी (मक्षेय), नारिकेलम् (नारियल), लीचिका (लीची), अञ्जीरम् (अंजीर)। (२५)

व्याकरण (स्वस, मातृ, युध्, जन्, क्त्वा प्रत्यय)

१. स्वस और मातृ शब्दों के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० ४९, ५०)

२. युध् और जन् धातुओं के रूप स्मरण करो । (देखो धातु० ६६, ६७)

नियम २१९—(क) (समानकर्तृकयोः पूर्वकाले) पढ़कर, लिखकर आदि 'कर' या 'करके' अर्थ में क्ला प्रत्यय होता है। क्ला का त्वा दोप रहता है। क्रिया का कर्ता एक ही होना चाहिए। त्वा प्रत्यय अव्यय होता है, अतः इमका रूप नहीं चलता। जैसे—भोजनं खादित्वा विद्यालयं गच्छित। (ख) (अलंखत्वोः प्रतिपेधयोः०) निपेधार्थक अलम् और खल्ज के साथ धातु से क्ला प्रत्यय होता है। जैसे—अलं दत्त्वा (मत दो)। पीत्वा खल्ज (मत पीओ)। अलं हसित्वा (मत हँसो)। (देखो अभ्यास ४४ भी)। (ग) कुछ क्ला और त्यप् प्रत्ययान्त कर्मप्रवचनीय के तुल्य व्यवहार में आते हैं। जैसे—उिद्य, अधिकृत्य, मुक्त्वा। किमुद्दिश्य (किसलिए), धर्ममिधिकृत्य (धर्म के बारे में)।

नियम २२० — कत्वा (त्वा) प्रत्यय लगाकर रूप बनाने का सरल उपाय यह है कि क्त प्रत्यय से बने रूप में से त या न हटाकर त्वा लगा दो। क्त प्रत्ययवाले सभी नियम यहाँ भी लगते हैं — जैसे पट्रपटितम्, त्वा में पटित्वा। इसी प्रकार लिखित > लिखित्वा,गत > गत्वा,उक्त > उक्त्वा,कृत > कृत्वा। संक्षेप में नियम ये हैं: — (क) नियम २०८ (क) देखो। धातु को गुण या दृद्धि नहीं होगी। सेट् में इ लगेगा, अनिट् में नहीं। पटित्वा, लिखित्वा। कृत्वा, हृत्वा, धृत्वा। (ख) नियम २०८ (ग) देखो। गीत्वा, पीत्वा। (ग) नियम २०८ (घ)। दित्वा, सित्वा, मित्वा, स्थित्वा। (घ) २०८ (ङ)। यत्वा, रत्वा, नत्वा, गत्वा, हत्वा, मत्वा। (ङ) नियम २०८ (च)। वद्ध्वा, सस्त्वा, दृष्ट्वा। (च) नियम २०८ (ज)। उक्त्वा, सुप्त्वा, दृष्ट्वा, उपित्वा, पृहीत्वा, पृष्ट्वा। (छ) नियम २१७ (ग) यहाँ भी लगेगा। पक्त्वा, मुक्त्वा, छित्वा, रह्द्वा, लब्धा। (ज) नियम २१७ (ग) यहाँ भी लगेगा। च्छ्र, श्, ज् को प्। पच्छ-पृष्ट्वा, ह्य-हृष्ट्वा, सज्व-हृष्ट्वा, सज्व-हृष्ट्वा, स्व-हृष्ट्वा। (ज) नियम २१७ (छ) यहाँ भी लगेगा। च्छ्र, श्, ज् को प्। पच्छ-पृष्ट्वा, ह्य-हृष्ट्वा, सज्व-हृष्ट्वा, सज्व-हृष्ट्वा। (ज) नियम २१७ (छ)। ह् का ग्य्वा या ट्वा वाला रूप। दह्-तुग्वा, तुह-दुग्वा, लिह-लीद्वा। (ज) दीर्घ को ईर होगा, पृ को पृर होगा। तृ-तीर्त्वा, क्य-कीर्त्वा, पृ-पृत्वा। (ट) (उदितो वा) जिन धातुओं में से मूलरूप में उहटा है, वहाँ बीच में इ विकल्प से होगा। अतः दो रूप बनेगे। नियम २०८ (छ) लगेगा, जिनत्वा-जात्वा, सनित्वा-सात्वा, खनित्वा-सात्वा। (ठ) (अनुनासिकस्य क्विझलोः०) कम्, कम्, कम्, चम्, दम्, भ्रम्, श्रम् के दो रूप होते हैं। एक इ लगाकर, दूसरा अम् को आन् बनाकर। जैसे—कमित्वा-

संस्कृत वनाओ—(क) (स्वस, मातृ शब्द) १. वह अपनी बहन (स्वस्) को लेकर घर आया। २. माता गौरव में सौ पिताओं से भी बढ़कर है। ३. पुत्र कुपुत्र भले ही हो जाए, पर माता कुमाता नहीं होती। ४. बहू की ननद (ननान्द) से नहीं पटती है, पर देवरानी (यातृ) से अच्छी पटती है। ५. मैं मौसी (मातृष्वस्) और फूआ (पितृप्वस्) के घर गया था। ६. लड़की विवाह के बाद दूर भेजी जाती है, अतः उस दुहिता कहते हैं। (ख) (युध्, जन् धातु) १. पदाति पदातियों से लड़ते हैं और घुड़सवार घुड़सवारों से (सादिन्)। २. ब्रह्मा से प्रजा उत्पन्न होती है। ३. विषयों का ध्यान करने वालों की उनमें आसक्ति उत्पन्न होती है, आसक्ति से काम और काम से कोध होता है। ४. उसमें कोई गुण नहीं है (विद्)। ५. दुर्जन मित्रों से वियुक्त हो जाता है (वियुज्)। ६. हम अपने काम में लगते हैं (अभियुज्)। ७. ऐसा मेरा विश्वास है (मन्)। ८. वह तुमको बहुत मानता है (मन्)। ९. मैं जब तक जीवित हूँ, लड़ूँगा। (ग) (क्वा प्रत्यय) १. जो जन्म लेकर, पढ़कर, लिखकर, सुनकर और मनन करके (मनु) भी ईश्वरभक्ति नहीं करता, उसका जीवन असार है। २. बालक प्रातः उटकर, मुँह धोकर, खाना खाकर, पानी पीकर, पाठ याद करके (स्ट्र), लेख लिखकर और वस्ते में (प्रसेवः)पुस्तकें रखकर विद्यालय को जाता है। ३. वह घर आकर, खेलकर, कृदकर, हँसकर, उठकर, बैठकर, कुछ देकर, कुछ लेकर, गाकर और नाचकर मनोरंजन करता है। ४. कुल मिलाकर हम सात आदमी हैं। ५. आप इसको उलटा न समझें। ६. समुद्र को छोड़कर महानदी कहाँ उतरती है ? ७. वह भी चढ़ाकर और बनावटी झगड़ा करके बोला। ८. इसका अर्थ ठीक समझकर अपना कर्तव्य निश्चित करूँगा। (घ) (तृतीया) १. इधर-उधर की मत हाँकिए, सीधी बात कहिए। २. चापल्रसी न करिए। ३. वस इतने ही फूल रहने दो। ४. बहुत कष्ट न कीजिए। ५. ऐसे प्राण और पुरुपार्थ से क्या लाभ, जो आपत्तिग्रस्तों को न बचा सकें। ६. कुद्ध सर्प क्या खून की इच्छा से कुचलनेवाले को काटता है ? ७. उद्यम से ही कार्य सिंद्धे होते हैं, मनोरथों से नहीं। ८. उद्यम के विना मनोरथ सिंद्ध नहीं होते। ९. उपाय से जो चीज सम्भव है, वह पराक्रम से सम्भव नहीं। (ङ) (फलवर्ग) फल स्वास्थ्य और बुद्धि को बढ़ाते हैं। शारीरिक और बौद्धिक उन्नति के लिए फलों का सेवन अनिवार्य है। यह आवश्यक नहीं है कि महँगे फल ही खाए जायँ, सस्ते फल भी उतना ही लाभ देते हैं। अपनी स्थिति के अनुसार फल खावे। ऋतु के अनुसार अंगूर, अनार, सेव, नासपाती, खुमानी, आम, केला, सन्तरा, अमरूद, जामुन, वेर, काफल, आल् बुखारा, शहत्त, मुसम्मी, नारियल, लीची, अंजीर, खिरनी और मकीय खावे।

संकेतः—(क) २. पितृणां द्यतं माता गौरवेणातिरिच्यते । ३. कुपुत्रो जायेत । ४.वधूर्मनान्द्रा न संगच्छते, संजानीते । ६. दुहिता दूरे हिता भवति । (ख) १. सादिनश्च सादिभिः । ३.
ध्यायतो विषयान् , उपजायते, संगात् , संजायते । ४. गुणास्तावत्तस्य नैव विद्यन्ते । ५. वियुज्यते ।
६. अभियुज्यामहे । ७. इति दृढं मन्ये । ९. यावदृहं ध्रिये । (ग) २. प्रतेवे । ४. सर्वे मिलित्वा ।
५. अलमन्यथा संभाव्य । ६. उज्जित्वा, अवतरित । ७. भूमङ्गं कृत्वा, कृतवकलहम् । ८. परि५. अलमन्यथा संभाव्य । ६. उज्जित्वा, अवतरित । ७. भूमङ्गं कृत्वा, कृतवकलहम् । ८. परिगृहोतार्थो मृत्वा, निश्चेष्यामि । (घ) १. अलमप्रासङ्गिकेन, प्रकृतमेवानुसंधीयताम् । २. अलं
स्नेह्मणितेन । ३. अलमेताविद्धः कुसुमैः । ४. कृतमत्यायासेन । ५. आपन्नत्राणविक्तलैः किं प्राणैः
स्नेह्मणितेन । ३. अमर्षणः शोणितकाङ क्षया किं पदा स्पृशन्तं दशित द्विजिह्नः । ९. यच्छन्यम् । (इ)

शब्दकोष−१०७५ + २५ = ११००] अ**⊁यास ४४**

(व्याकरण)

(क) आर्द्रालुः(पु॰,आड़्),सीताफलम् (शरीफा), पुनागम् (फालसा), आम्रात-कम् (१. ऑवड़ा, २. अमावट), आम्रचूर्णम् (अमचूर), कर्कटिका (ककड़ी),मधुकर्कटी (स्त्री॰, चकोतरा), खर्बुजम् (खरबूजा), काल्न्दम् (तरबूज),कर्मरक्षम् (कमरख), खर्जूरम् (खजरू), लकुचम् (बड़हल), शृङ्गाटकम् (सिंघाड़ा), निर्वीजम् (१. विदाना अंगूर, २. बिदाना अनार), गुष्कपलम् (मेवा), वातादम् (बादाम), अक्षोटम् (अखरोट), अङ्कोलम् (पिस्ता), काजवम् (काजू), ग्रुष्कद्राक्षा (किशमिश), मधुरिका (मुनक्का), क्षुधाहरम् (छुहारा), मखान्नम् (मखाना), प्रियालम् (चिरौंजी), पौष्टिकम् (पोस्ता)। (२५)

व्याकरण (नौ, वाच्, आप्, शक्, त्यप्, णमुल् प्रत्यय) १. नौ और वाच् शब्दों के रूप सारण करो। (देखो शब्द० ५१, ५२) २. आप् और शक् धातुओं के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ६८, ६९)

नियम २२१—(समासेऽनञ्पूर्वे क्त्वो त्यप्) धातु से पूर्व कोई अन्यय, उपसर्ग या चि प्रत्यय हो तो क्ला के स्थान पर ल्यप् हो जाता है। ल्यप् का य होष रहता है। धातु से पहले नञ् (अ) होगा तो ल्यप् नहीं होगा। ल्यप् अल्यय होता है, अतः इसके रूप नहीं चलते। जैसे—आलिख्य, संपठ्य, स्वीकृत्य। परन्तु अकृत्वा, अगत्वा।

नियम २२२ - ल्यप् प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए ये नियम स्मरण कर लें:—(क)साधारणतया धातु अपने मूल रूप में रहती है। गुण या वृद्धि नहीं होती है। इ भी बीच में नहीं लगता । जैसे—विलिख्य, आनीय, विहस्य । (ख) (अन्तरङ्गानिष विधीन्०) त्यप् होने पर धातु को कोई भी आदेश आदि नहीं होगा। जैसे—प्रदाय, विधाय, प्रखन्य, प्रस्थाय, प्रक्रम्य, आपृच्छय, प्रदीव्य, प्रपठ्य । इन स्थानों पर दत्, हि, दीर्घ, इ आदि नहीं हुए । (ग) (न ल्यपि) दा, धा, मा, स्था, गा, पा, हा, सा के आ को ई नहीं होगा। प्रदाय, प्रधाय, प्रगाय, प्रपाय, विहाय आदि। (घ) (वा स्यपि) गम् आदि के म् का लोप विकल्प से होता है, हन् आदि के न् का लोप नित्य। (लोप होने पर बीच में अगले नियम से त्) आगम्य> आगत्य, प्रणम्य> प्रणत्य । आहत्य, वितत्य, अनुमत्य। (ङ)(हस्वत्य पिति कृति तुक्) हस्व अ, इ, उ, ऋ के बाद ल्यप् से पहले त् लग जाता है। अर्थात् त्य होता है। आगत्य, अधीत्य, विजित्य, संश्रुत्य, प्रहत्य, प्रकृत्य। (च) दीर्घ ऋ को ईर्, पृ को पूर होगा। उत्तीर्य, विकीर्य, प्रपूर्य। (छ) (वचिस्विपि०, ग्रहिज्या०) वच् आदि को संप्रसारण होगा। वच्>प्रोच्य, वद्> अनूद्र, वस् >अध्युष्य, स्वप् >प्रमुप्य, ह्वे > आहू्य, प्रह् > संगृह्य, प्रच्छ > आपृच्छेय । (ज)(णेरिनिटि)णिजन्त धातुओं के 'इ' का लोप हो जाता है। विचारि>विचार्य। (झ) (ल्यपि लघुपूर्वात्) धातु की उपधा में हस्त अक्षर हो तो इ को अय् होगा। विगणय्य, प्रणमय्य, विरचय्य । (ञ) इनके ये रूप होते हैं - क्षि > प्रक्षीय, प्रापि > प्राप्य, प्रापय्य, वे>प्रवाय,ज्या>प्रज्याय,व्ये> उपव्याय । मी या मि> प्रमाय । ली>विलीय,विलाय ।

नियम २२३—(क) (आमीक्ष्ये णमुल्च, नित्यवीप्सयोः) 'बार-बार करना' अर्थ में क्ला और णमुल् दोनों होते हैं। इन प्रत्ययों के होने पर शब्द को दो बार पढ़ा जाएगा। स्मृ>स्मारं स्मारम्, स्मृत्वा, स्मृत्वा (याद करके)। पायं पायम्, पीत्वा

संस्कृत बनाओ—(क) (नौ, वाच् शब्द) १. वड़े पुण्यरूपी मूल्य से तुमने यह शरीररूपी नौका खरीदी है। २. वह नौका से तीव वेगवाली नदी को पार करता है (उत्त)। ३. चित्त, वाणी और क्रिया में सजनों की एकरूपता होती है। ४. वाणी उसके पीछे अधीनस्थ के तुल्य चलती है। ५. लौकिक सजनों की वाणी अर्थ के पीछे चलती है, किन्तु आदिकालीन ऋषियों की वाणी के पीछे अर्थ चलता है। ६. यह बात सिद्ध है कि ब्राह्मणों की वाणी में बल होता है और क्षत्रियों के बाहुओं में बल होता है। ७. वे लोग विद्वानों में सभ्यतम गिने जाते हैं, जो मनोगत बात को वाणी से प्रकट कर सकते हैं। (ख) (आप्, शक् धातु) १. इससे क्या लाभ होगा १२. इससे यह निष्कर्ष निकलता है। ३. तुम चक्रवर्ती पुत्र को प्राप्त करो (आप्)। ४. ईश्वर जगत् में व्यात है (व्याप्)। ५. परीक्षा समाप्त हुई (समाप्)। ६. कौन इस दुष्कर काम को कर सकता है ? ७. राम ही रावण को मार सका। (ग) (त्यप, णमुल्) १. तुम किसलिए हम पर दोषारोपण कर रहे हो ? २. सत्य विषय पर गांधीजी ने लेख लिखे हैं। ३. यदि युद्ध को त्यागकर मृत्यु का भय न हो तो युद्ध को छोड़कर जाना उचित है। ४. कन्या को पति-गृह भेजकर मेरी अन्तरात्मा प्रसन्न हो गई है। ५. इस पर अधिक विचार मत करो । ६. सब लोग इष्ट वस्तु को पाकर सुखी हो जाते हैं। ७. कान बन्द करके, ऐसा न हो। ८. सारी बात पत्र में लिखकर दो। ९. वह हाथ जोड़कर बोला । १०. उसने लम्बी साँस लेकर और पृथ्वी पर घुटने टेककर अपनी करुण कथा कही। ११. मेरी बात काटकर क्यों बोलते हो ? १२. सजन औरों का सत्कार करके, उनकी प्रार्थना स्वीकार करके और उन्हें पुरस्कृत करके सुखी होते हैं। १३. दुर्जन दुर्भाव को मन में रखकर, छिपकर, एकत्र होकर, तिरस्कार करके और दुःख देकर मुख का अनुभव करते हैं। (घ) (चतुर्थी)। १. इससे काम चल जायगा। २. उसने चावलों को धूप में डाला। ३. उन्होंने लड़ाई के लिए कमर कस ली है। ४. मैं उनको कुछ नहीं समझता । ५. जो आपको रुचे (रुच्) वह की जिए । ६. पापियों का नाम भी न लो, उससे अमंगल होगा। (ङ) (फलवर्ग) डाक्टर और वैद्य फलों का बहुत महत्त्व बताते हैं। फल रक्त को गुद्ध करके लाल बनाता है। भोजन के बाद या तीसरे पहर फल खावे। आड़ू, शरीफा, फालसा, ककड़ी, खरबूजा, तरबूज, कमरख, सिंघाड़ा और विदाना सभी लाभप्रद हैं। मेवा भी पौष्टिक और रक्तवर्धक है। बादाम, अखरोट, पिस्ता, काजू, किशमिश, मुनका, छुहारा, मखाना, चिरौंजी और पोस्ता का भी सेवन करो।

संकेत—(क) १. पुण्यपण्येन, कायनौः । ३. वाचि । ४. तं वाग् वश्येवानुवर्तते । ५. अर्थं वागनुवर्तते । ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमथोंऽनुभावित । ६. वाचि वीर्यं द्विजानाम् । वाह्वोवीर्यं यत्त तत् क्षत्रियाणाम् । ७. भवन्ति ते सभ्यतमा विपश्चितां .मनोगतं वाचि निवेशयन्ति ये । (ख) १. अतः किं प्राप्यते । २. प्राप्नोति । ३. आप्नुहि । ५. समापत् । ७. हन्तुमशकत् । (ग) १. किमुिह्स्य । २. सत्यमधिकृत्य । ३. यदि समरमपास्य । ४. संप्रेष्य । ५. अलं विचार्य । ६. सर्वः प्रार्थितमर्थमधिगम्य । ७. पिधाय, शान्तं पापम् । ८. वृत्तं पत्रमारोप्य । ९. समानीय । १०. दीर्घं निःश्वस्य, जानुभ्यामवनौ पतित्वा । ११. मद्वचनमाक्षिप्य । १२. सत्कृत्य, उररीकृत्य, पुरस्कृत्य । १३. मनिसकृत्य, तिरोभूय, संहत्य, तिरस्कृत्य, प्रपोद्ध्य । (घ) १. इदं मे इष्टसिद्धये वृत्यो । २. आत्रे अज्ञ्वतवती । ३. युद्धाय बद्धपरिकरास्ते । ४. तृणाय मन्ये । ६. कथाऽपि खलु पापानामलम् स्रियो सन्तः । (क) शिष्यवयाः अपराहणे ।

श्रेयसे यतः । (ङ) भिषरवराः, अपराहणे । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha शब्दकोप-११०० + २५ = ११२५] अभ्यास ४५

(व्याकरण)

(क) केसरिन् (शेर), द्वीपिन् (व्याघ्र, बघेरा), तरक्षुः (पुं॰, तेंदुआ), भल्द्रकः (भाल्र्), शाखामृगः (बन्दर), गोमायुः (पुं॰, गीदड़), वराहः (स्अर), श्रह्यः (सेंह्), वृकः (भेड़िया), कुरङ्गः (मृग), उक्षन् (बैल), लोमशा (लोमड़ी), मिह्पः (भेंसा), मिहपी (स्त्री॰, भेंस), अजः (बकरा), मेषः (भेड़), कौलेयकः (कुत्ता), सरमा (कुतिया), खरः (गदहा), मार्जारी (स्त्री॰, बिल्ली), वृश्चिकः (विच्छू), गोधा (गोह्), गृहगोधिका (छिपकली), दता (मकड़ी), कर्णजलीका (१. कानस्वजूरा, २. गोजर)। (२५)

ह्याकरण — (सज्, सरित्, चि, अश्, तत्य, अनीय, केल्टिमर्) १. सज् और सरित् शब्दों के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० ५३, ५४) २. चि और अश् धातुओं के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ७०, ७१)

नियम २२४—(कृत्य प्रत्यय) (क) (तव्यत्तव्यानीयरः) 'चाहिए' अर्थ में धात से तव्य, तव्यत् और अनीयर् प्रत्यय होते हैं। तव्यत् का तव्य और अनीयर् का अनीय शेष रहता है। तव्य और तव्यत् में कोई अन्तर नहीं है। वेद में तव्यत् वाला शब्द स्वरित होगा, तव्य वाला नहीं। (ख) (तयोरेव कृत्यक्त०) कृत्य प्रत्यय अर्थात् तव्य, अनीय आदि भाववाच्य और कर्मवाच्य में होते हैं। (१) जब ये कर्मवाच्य में होंगे तो कर्म के अनुसार इनके लिंग, वचन और विभक्ति होंगे। कर्ता में तृतीया, कर्म में प्रथमा और किया कर्म के अनुसार। जैसे—तेन त्वया मया अस्माभिः वा पुस्तकानि पठितव्यानि, पठनीयानि वा। (२) जब तव्य और अनीय भाववाच्य में होंगे तो इनमें नपुंसक० एकवचन ही रहेगा, कर्ता में तृतीया होगी। जैसे—तेन हस्तिव्यम्, इसनीयं वा। (३) तव्य और अनीय प्रत्ययान्त के रूप पुं० में रामवत्, स्त्रीलंग में रमावत् और नपुं० में एहवत् चलेंगे।

नियम २२५— 'तन्य' प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए देखो नियम २१७। वह नियम पूरा लगेगा। 'तन्य' प्रत्यय लगाकर रूप बनाने का सरल उपाय यह है कि तुमुन-प्रत्ययान्त धातु-रूप में तुम् के स्थान पर तन्य लगा दो। जैसे—कर्तुम्—कर्तन्य, पठितुम्—पठितन्य। लेखितन्यम्, हर्तन्यम्।

नियस २२६—'अनीय' प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए ये नियम स्मरण कर लें। त्युट् (अन), अच् (अ), अप् (अ) में भी ये नियम लगेंगे। (क) साधारण-तया धातु में कोई अन्तर नहीं होंता। धातु मूलरूप में रहती है। बीच में इ नहीं लगेगा। गम्>गमनीय। हसनीय, पटनीय। पा>पानीय। दानीय, स्नानीय। (ख) धातु के अन्तिम इ ई को ए, उ ऊ को ओ, ऋ ऋ को अर् गुण होगा। उपधा के इ, उ, ऋ को भी क्रमशः ए, ओ, अर् गुण होगा। जैसे—जि> जयनीय, नी>नयनीय, श्रु> श्रवणीय, भ्> भवनीय, कु> करणीय। लेखनीय, शोचनीय, कर्षणीय। (ग) धातु के अन्तिम ए और ऐ को आ होगा। आह्रे> आह्रानीय, गै>गानीय।

नियम २२७—(केलिमर उपसंख्यानम्) चाहिए अर्थ में केलिमर् प्रत्यय भी होता है। इसका एलिम दोप रहता है। पचेलिमा भाषाः (पकाने योग्य उड़द)। ८९१-१८ जिमाः सालामा बोहिन्छे। स्रोतानी इत्रोहाल्क्ष्म) di Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संस्कृत वनाओ—(क) (सज् , सरित् श्व्द) १. यदि यह माला प्राणघातक है तो मेरे हृदय पर रखी हुई मुझे क्यों नहीं मारती ? २. अन्धा सिर पर डाली हुई माला को साँप समझकर फेंक देता है। ३. रोग (फज्) से पीड़ित को शान्ति नहीं मिलती। ४. ग्रीष्म में निदयों का जल कम हो जाता है और वर्षा में बढ़ जाता है। ५. लक्ष्मी विजली (विद्युत्) की तरह चपला है। ६. स्त्रियाँ (योषित्) अपने बचों के लिए क्या कष्ट नहीं उठातीं ? (ख) (चि, अश् धातु) १. बालिका लता से फूलों को चुनती है (चि)। २. जो धन को इकट्टा करता है (संचि), पर उसका उपभोग नहीं करता (उपभुज्), उसका वह धन व्यर्थ है। ३. व्यायामिप्रिय का शरीर पुष्ट होता है (प्रचि)। ४. राजहंस, तेरी वही क्वेतता है, न बढ़ती है और न घटती है। ५. में परिचित हूँ (परिचि) कि वह जो कहता है, वही करता है। ६. व्यापार से धन बढ़ता है (उपचि) और अपव्यय से घटता है (अपचि)। ७. वह अपने कर्तव्य का निश्रय करता है (निश्चि) और उसका पालन करता है। ८. माली माला बनाने के लिए फूलों को इकट्टा करता है (समुचि)। ९. अर्थ को जाननेवाला ही पूर्ण कुशलता प्राप्त करता है। १०. अत्युत्कट पाप पुण्यों का फल यहीं मिलता है (अश्)। (ग) (कृत्यप्रत्यय) १. रात्रि में भी पूरा सोना नहीं मिलता। २. गुरुओं की आज्ञा अनुल्लंघनीय होती है। २. इच्छानुसार काम करना चाहिए, निन्दा कहाँ नहीं मिलती। ४. जलाशय तक प्रेमी के साथ जाए। ५. कभी भी रजन शोक के अधीन नहीं होते। ६. भवि-तव्यता बलवती होती है। ७. होनहार के सर्वत्र द्वार हो जाते हैं। ८. मित्र के वाक्य का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। ".. परस्त्री को नहीं देखना चाहिए। १०. जो सुनना था सुन लिया, जो जानना था जान लिया, जो करना था कर लिया। ११ ऐसी स्थिति में हमें क्या करना चाहिए ? १२. पूज्य का अपमान नहीं करना चाहिए। (घ) (चतुर्थी) १. युद्ध के लिए तैयारी करता है। २. देवदत्त को पूआ पसन्द है। ३. यज्ञदत्त राम का सौ रुपये ऋणी है (धारि)। ४. वह विद्या की इच्छा करता है (स्पृह्)। ५. मैं इस दुलारे शिशु को चाहता हूँ (स्पृह्)। ६. यह लकड़ी खंभे के लिए है, यह सोना कुण्डल के लिए है और यह ऊखल कूटने के लिए है। (ङ) (पशु-वर्ग) सनुष्य के तुल्य पशु भी द्या के पात्र हैं। पशु हत्या पृणित कार्य है। पशु भी मन्त्र्य के उपकार को मानते हैं। अकारण ही शेर, बधेरा, तेंदुआ, भाळू, बन्दर, गीदड़, सुअर, मेड़िया, मृग, गाय, वैल, बछड़ा, भैंसा, भैंस, कुत्ता, बिल्ली, वकरा, साँप या बिच्छू को नहीं मारना चाहिए।

संकेत—(क) १. स्निग्यं यदि जीवितापहा, निहिता। २. स्नजमि शिरस्यन्थः क्षिप्तां धुनोत्यिहिशङ्कवा। ४. क्षीयते। ६. सहन्ते। (ख) २. नोपभुङ्कते। ३. गात्राणि प्रचीयन्ते। ४. चीयते, न चापचीयते। ५. पिरिचिनोमि। ६. उपचीयते, अपचीयते। ७. निश्चिनोति। ९. अर्थं इत्सक्तं भद्रमहन्ते। १०. पापपुण्यैरिहैव फलमइनुते। (ग) १. निकामं शियतव्यं नास्ति। २. अविचारणीया। ३. सर्वथा व्यवहर्तव्यं कुतो ह्यवचनीयता। ४. ओदकान्तं स्निग्धो जनोऽनुगन्तव्यः। ५. शोकवास्तव्याः। ७. भवितव्यानाम्। ८. अनतिक्रमणीयम्। ९. अनिर्वर्णनीयं परकलत्रम्। १०. श्रुतं श्रोतव्यं, ज्ञात ज्ञातव्यम्, कृतं कर्तव्यम्। ११. इत्थंगते। १२. अनतिक्रमणीयानि श्रेयांति। (च) १. संनह्यते। २. स्वदतेऽपूषः। ५. दुर्लितायास्मै। ६. यूपाय, अवहननाय

शब्दकोष-११२५ + २५ = ११५०] अभ्यास ४६

(व्याकरण)

(क) पारावतः (कब्तर), चटका (चिड़िया), परभृतः (कोयल), मरालः (हंस), वकः (वगुला), सारसः (सारस), वर्तकः (वतख), कीरः (तोता), सारिका (मैना), खाङ्क्षः (कौआ), चिल्लः (चील), गृद्धः (गिद्ध), स्थेनः (याज), कौशिकः (उल्लू), खञ्जनः (खंजन), चापः (नीलकट), दावाधाटः (कटफोड़ा), चातकः (चातक), चक्रवाकः (चकवा), वहिन् (मोर), पट्पदः (भौरा), शलभः(१.पतंगा, २.टिड्डी), सरधा (मधुमक्खी), वरटा (१.हंसी, २. भिरङ, ततैया, वर्र), कुलायः (धोंसला)। (२५)

च्याकरण (समिध्, अप्, सु धातु, यत्, ण्यत्, क्यप्)

१. समिध् और अप् शब्दों के पूरे रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० ५५, ५६)

२. सु धातु के पूरे रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ७२)

नियम २२८—(यत् प्रत्यय) (अचो यत्) चाहिए या योग्य अर्थ में आ, इ, ई, उ, ऊ अन्तवाली धातुओं से यत् अत्यय होता है। यत् का य शेष रहता है। यत् प्रत्यय कर्मवाच्य और भाववाच्य में होता है। कर्मवाच्य में कर्म के तुल्य लिंग, विभक्ति और वचन होंगे। कर्ता में तृतीया, कर्म में प्रथमा, क्रिया कर्मवत्। भाववाच्य में कर्ता में तृतीया, क्रिया में नपुं० एकवचन। मया अस्माभिः वा जलं पेयम्, दानं देयम्, फलानि चेयानि। मया स्थेयम्।

नियम २२९—यत् प्रत्यय लगाने पर धातु में ये अन्तर होते हैं :—(१) (ईद्यति) आ को ई होकर ए हो जायगा। आ>ए। दा> देयम्, गा> गेयम्, पा> पेयम्, स्था> स्थेयम्, हा> हेयम्।(२) इ और ई को गुण होकर ए हो जाएगा। चि> चेयम्, जि> जेयम्, नी> नेयम्।(३) उ और ऊ को गुण ओ होकर अव् हो जाएगा। श्रु> श्रव्यम्, हु> हत्यम्, सु> सत्यम्।

नियम २३०— इन स्थानों पर भी यत् (य) होता है :—(१) (पोरदुपधात्) पवर्गान्त और उपधा में अ वाली धातुओं से यत् । शप्यम्, लभ्यम् । (२) (हनो वा यद्०) हन् से यत् और हन् को वध। हन् > बध्यः । (३) (शिकसहोश्च) शक् और सह धातु से यत् । शक्यम्, सह्यम् । (४) (गदमः चर०) गद् मद् चर् और यम् धातु सेयत् । गद्यम्, मद्यम्, चर्यम्, यम्यम् । (५) (अवद्यपण्यवर्या०) अवद्यम् (नीच), पण्यम् (विक्रेय), वर्या (वरणयोग्य स्त्री) ये रूप वनते हैं ।

नियम २३१—(ष्यत् प्रत्यय) (१) (ऋहलोर्ष्यत्) ऋकारान्त और हलन्त धातुओं से ष्यत् (य) होगा । अन्तिम ऋ को आर् वृद्धि और उपधा के इ उ ऋ को गुण । कृ>कार्यम् । हार्यम् । धार्यम् । मृज् + ष्यत् = मार्ग्यः होगा । भुज् + ष्यत् = भोज्यम् (भक्ष्य), अन्यत्र भोग्यम् होगा । (२) (त्यजेश्च) त्यज् + ष्यत् = त्याज्यम् होगा । (३) (ओरावश्यके) उकारान्त से अवश्य अर्थ में । छ् > लाव्यम् , पू> पाव्यम् ।

नियम २३२—(क्यप् प्रत्यय) (१) (एतिस्तुशास्०) इन धातुओं से क्यप् (य) होगा और ये रूप वनेंगे—इ>इत्यः, स्तु>स्तुत्यः, शास्>शिष्यः, वृ>वृत्यः, आह>आहत्यः, जुप्>जुष्यः। (२) (मृंजेविभाषा) मृज्>मृज्यः। (३) (मृञोऽस्तंश्याम्) भृ>भृत्यः (नौकर)। (४) (विभाषा कृत्रुपोः) कृ>कृत्यम्, वृष्>वृष्यम्। कृ से ण्यत् होकर कार्यम् भी वनेगा।

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संस्कृत बनाओ-(क) (समिध्, अप् शब्द) १. समिधाओं से अग्नि प्रदीस होती है (समिन्धु)। २. हम समिधा लाने के लिए जा रहे हैं। ३. जल हमारे सुख और इष्ट-प्राप्ति के लिए हो। ४. जल में ओषधि के गुण हैं। ५. जल सुखप्रद है। (ख) (सु धातु) १. उसने गिलोय का रस निचोड़ा (सु)। २. प्राचीन काल में यहाँ में सोमलता का रस निचोड़ा जाता था। ३. मूर्खता दोषों को छिपा लेती है (संवृ)। ४. रक्षारूपी योग से यह भी प्रतिदिन तप का संचय करता है (संचि)। ५. वह मन के लड्डू खाता है (चि)। (ग) (कृत्य प्रत्यय) १. अतः परीक्षा करके गुप्त प्रेम करना चाहिए। २. मुशिप्य को दी हुई विद्या के तुल्य तुम अशोचनीय हो गई हो। ३. सारी अवस्थाओं में सुन्दर व्यक्ति रमणीय होते हैं। ४. इसको अँगृठी कैसे मिली, इस पर विचार करना चहिए। ५. भूख मुझे खा जाएगी। ६. ब्राह्मण को निःस्वार्थभाव से पडङ्ग वेदों को पढ़ना चाहिए और जानना चाहिए। ७. उसके एक अंश का अभिनय किया गया। ८. मूर्ख की बुद्धि दूसरे के विश्वास पर चलती है। ९. वह नींद के अधीन हो गया । १०. स्विहतपरायण नहीं होना चाहिए । ११. ऐसे लोग सभी की हँसी के पात्र होते हैं। १२. अतिथि-विशेष का सम्मान करना चाहिए। १३. पापी निन्दा को प्राप्त होता है। १४. वह कायर है, इसलिए निन्दा को प्राप्त हुआ। १५. तुम मेरी ओर से राजा से कहना। (घ) (पंचमी) १. वह आय से अधिक व्यय करता है। २. मैंने तुम्हारे विश्वास पर और हित समझकर ऐसा किया है। ३. लाचार होकर मैंने चोरी की । ४. यह मेरे शरीर से अपृथक् है । ५. झगड़ालू झगड़े से बाज नहीं आता । ६. अतिपरिचय से तिरस्कार होता है, निरन्तर किसी के घर जाने से अनादर होता है। ७. वह रास्ता भूल गया। ८. कहने से करना अच्छा है। ९. कठिन समय में भी धैर्य नहीं छोड़ना चाहिए। (ङ) (पक्षिवर्ग) पक्षियों की मधुर ध्वनि किसके मन को बलात् नहीं हर लेती। वनों और उपवनों में पक्षी मधुर संगीत करते हैं। कबूतर, कोयल, हंस, बगुले, बतख, तोता, मैना, कौबे, चील, गिद्ध, बाज, खंजन, नीलकंठ, कठफोड़ा, चातक, चकवा, चकवी ये सभी आकाश में उड़ते हैं और मनोरंजन करते हैं। पक्षी वृक्षों में धोंसले बनाकर रहते हैं। भौरे और मधुमवस्त्री पुष्पों का पराग ले लेते हैं। मधुमक्खियाँ शहद तैयार करती हैं।

संकेतः—(क) १. सिमध्यते । ३. रान्नो देवीरिमष्टये आपः । ४. अप्सु भेषजम् । ५. आपो हि ष्ठा मयोभुवः । (ख) १. अमृतवत्लरीम् । २. स्यते सम । ३. संवृणीति खलु दोषमज्ञता । ४. रक्षायोगात् । ५. गगनकुसुमानि चिनोति । (ग) १. अतः परीक्ष्य कर्तन्यं विशेषात् संगतं रहः । ३. रमणीयत्वमाकृतिविशेषाणाम् । ४. अङ्गुलीयकदर्शनमस्य विमर्शयितन्यम् । ५. बुमुक्षया खादित्वयोऽस्म । ६. ब्राह्मणेन निष्कारणः षडङ्गो वेदोऽध्येयो श्रेयश्च । ७. एकदेशोऽभिनेयार्थः कृतः । ८. मृद्धः परप्रत्ययनयुद्धः । ९. निद्राविधेयतां गतः । १०. भाव्यम् । ११. उपहास्यतासुपयान्ति । १२. संमान्यः । १३. वाच्यतां याति । १४. कातरः । १५. मद्वचनात् । (घ) २. त्वत्प्रत्ययात् , अवेद्द्य । ३. गत्यन्तराभावात् । ४. अव्यतिरिक्तः । ५. कलहवामः कलहान्न निवर्तते । ६. अवशा,

CC-B-ततामानात । १ मार्गात अष्ट: । ८. बाचः कर्मातिरिच्यते । ९. त्याज्यम् । CC-B-ततामानात । १ मार्गात अष्ट: । ८. बाचः कर्मातिरिच्यते । ९. त्याज्यम् । शब्दकोष-११५० + २५ = ११७५] अभ्यास ४७

(व्याकरण)

(क) अर्णवः(समुद्र), आपगा(नदी),सरस् (नपुं०, तालाव),सरसी(स्त्री०, झील), हदः (वड़ी झील), आहावः (१. हौज, २. टैंक), तोयम् (जल), वीचिः (स्त्री०, तरंग), आवर्तः (भँवर), कृतम् (तट), सैकतम् (रेतीला किनाग), कर्दमः (कीचड़), नौः (नाव), पोतः (पानी का जहाज), कर्णधारः (नाविक, खेदैया), शीनः (मछली), कुलीरः (केकड़ा), कन्छपः (कछुआ), नकः (मगर), भेकः (मेंटक)। (२०)। (ख) विद् (पाना), लिप् (लीपना), सिच् (सींचना), कृत् (काटना), सुज् (वनाना)। (५)।

च्याकरण (गिर्, पुर्, इष् , प्रच्छ् , घञ् प्रत्ययं)

१. गिर् और पुर् शब्दों के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द ० ५७, ५८)

२. इष् और प्रच्छ धातुओं के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ७३, ७४)

नियस २३३—(१. भावे, २. अकर्तार च कारके०) धातु का अर्थ वताने में तथा कर्ता को छोड़कर अन्य कारक का अर्थ दताने के लिए घज् प्रत्यय होता है। घञ् का अ शेष रहता है। घञन्त शब्द पुंलिंग होता है। जैसे—हस > हासः (हँसी), पाकः (पकना)। घञन्त के साथ कर्म में पठी होती है। भोजनस्य पाकः, रामस्य हासः।

नियस २३४- घज (अ) प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए ये नियम स्मरण कर हैं:-(१) धातु के अन्तिम इ ई, उ ज और ऋ ऋ को वृद्धि होकर क्रमशः ऐ, औ, आर होंगे। धातु की उपधा के अ को आ, इ को ए, उ को ओ और ऋ को अर होगा। चि>कायः, नी>नायः, प्रस्तु>प्रस्तावः, भृ>भावः, कृ>कारः, विकारः, प्रकारः, उपकारः आदि, संस्क्ष> संस्कारः, अवतॄ > अवतारः । पट्> पाटः, ल्लिय्>लेखः, रुष्>रोधः, विरोधः आदि । (२) (चर्जाः कु घिण्यतोः) च्को क् और ज् को ग् होगा । पच्> पाकः, शुच्> होकः, सिच्> सेकः, त्यज> त्यागः, भज्> भागः, भुज्> भोगः, मृज्> मार्गः, यज्> यागः, युज्> योगः, रुज्> रोगः। (३) इन धातुओं के ये रूप होते हैं—(क) (घाञ च भाव०) भाव और करण में रज्ज के न् का लोप। रञ्ज्>रागः। अन्यत्र रङ्ग। (ख) (निवासचिति०) चि के चुको कृ होगा निवास, समृह, शरीर और टेर अर्थ में । चि>कायः । निकायः, गोमयनिकायः । (ग) (मुजेर्वृद्धिः) मृज् >मार्गः । अपामार्गः । (घ) (उपसर्गस्य घनि०) उपसर्गों को विकल्प से दीर्घ होता है। प्रतीहारः, परीहारः, अपामार्गः। (ङ) (नोदात्तोपदेशस्य०) म् अन्तवाली धातुओं को प्रायः वृद्धि नहीं होगी। शमः, दमः, विश्रमः। (अनाचिमि०) आचम्, कम्, वम को वृद्धि होगी। आचामः, कामः, वामः। रम् का रामः होगा। विश्राम शब्द अपाणिनीय है।

नियम २३५—इन स्थानों पर घज् होता है—(१) (इङश्च) इ धातु से।
उप + अधि + इ(आ०)> उपाध्यायः। (२)(उपसर्गे स्वः) उपसर्गपहले हो तो रु धातु से।
से। संरावः। अन्यत्र रवः। (३) (श्रिणीभुवो०) उपसर्गर्राहत श्रि नी और मू धातु से।
श्रायः, नायः, भावः। अन्यत्र प्रश्रयः, प्रणयः, प्रभवः। (४) (प्रे दुस्तुस्रवः) प्रपूर्वक
दु स्तु सु धातु से। प्रद्रावः, प्रस्तावः, प्रस्रावः। (५) (उन्न्योर्प्यः) उत् और नि पूर्वक
गृ धातु से। उद्गारः, निगारः। (६) (परिन्योनींणोः०) परिणी और नि + इ(पर०)धातु
से द्यतु और उन्वतु अर्थ में। परिणायाः उस्तिः। Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संस्कृत वनाओ—(क) (गिर्, पुर् शब्द) १. भगवान्, अपने कोध को रोको, इस प्रकार जबतक देवों की वाणी आकाश में फेटी, तवतक शिव के नेत्रों से उत्पन्न अग्नि ने मदन को भस्मसात् कर दिया। २. आप लोगों की प्रिय वाणी से ही मेरा आतिथ्य हो गया । ३. उस वात के समाप्त होने पर वे यह वचन बोले । ४. यह नगरी (पुर्) देवभूमि के तुल्य है। ५. राजा भोज की नगरी में सभी संस्कृतज्ञ विद्वान रहते थे। वहाँ न चोर थे, न जुआरी, न दाराबी, न कवावी। (ख) (इष्, प्रच्छ्) १. में चाहता हूँ कि आपकी कुछ सेवा कर सकूँ और आप मुझे स्मरण करें। २. ब्राह्मण से कुशल पूछे और क्षत्रिय से अनामय। ३. अपने साथी से विदाई हो (आप्रच्छ्)। ४. बछड़ा सहस्रों गायों में भी अपनी माँ को हूँढ़ लेता है (विद्)। ५. अन्धकार शरीर पर लिप्त-सा हो रहा है (लिप्)। ६. कन्याएँ पौधों को सींच रही हैं (सिंच्)। ७. चाकू से पेन्सिल को काटता है। ८. मकड़ी अपने शरीर से ही धागे को उत्पन्न करती है (सुज्)। ९. कौन मला उष्ण जल से नवमालिका को सींचता है (सिच्) ? १०. रोगी से पूछो, सुख से सोया या नहीं ? ११. तुमने घोर अन्धकार दूर किया (नुद्)। १२. घोर अन्धकार में मेरी अन्तरात्मा डूब-सी रही है (मस्ज्)। १३. भड़भूजा भाड़ में चने भूनता है (भ्रस्ज्)। (ग) (घज् प्रत्यय) १. प्रसंग के अनुकूल ही कहना चाहिए। २. उर्वशी लक्ष्मी को भी मात करती है। ३. वह कहानी समाप्त हुई। ४. इसका प्रेम बहुत गहरा हो गया है। ५. तूने पिता के द्वारा दिए हुए पैसे को कैसे खर्च किया ? ६. वह सदा के लिए सो गई। ७. सन्तान न होने से वह बहुत दुःखित हुआ। ८. हिम्मत न हारना वैभव का मूल है। ९. तुम्हारे दुःख का क्या कारण है ? १०. जब आँखें चार होती हैं, मुहब्बत हो ही जाती है। ११. तालाब में पानी बढ़ जाए तो उसको निकाल देना ही उसका प्रतिकार है। हृदय शोक से क्षुब्ध होने पर विलाप से ही सँभलता है। (घ) (पंचमी) १. कीचड़ को धोने से न छूना ही अच्छा है। २. चोर अपमानसहित नगर से निकाला गया। ३. उपदेश देने की अपेक्षा स्वयं करना अच्छा है। ४. तेजोमय ज्योति पृथ्वी से नहीं निकलती। (ङ) (वारिवर्ग) जल जीवन है। तालाब हो या झील, नदी हो या समुद्र, सर्वत्र जल का महत्त्व है। समुद्र का जल ही भाप बनकर बादल और मानसून का रूप प्रहण करता है और वरसता है। मगर, कछुए, मछली, मेढक, केकड़े आदि जल में मुख से विचरण करते हैं। जल में तरंग, भँवर और कीचड़ भी होते हैं। नाविक नौका और जहाजों को जल में चलाते हैं।

संकेत—(क) १. संहर, यावद् गिरः खे मरुतां चरिन्त । २. स्नृतया । ३. अविसते, गिरमुज्जगार । ५. बूतकाराः, मांसाशिनः। (ख) १. कार्यलवोपपादनोपयोगेन स्मारियतुमात्मानम् । २. ब्राह्मणम् । ३. आपृच्छस्व सहचरम् । ४. धेनुसहस्रेषु, विन्दति । ५. लिम्पतीव तमोऽङ्गानि । ६. सिन्चन्ति । ७. कृन्ति । ८. तन्तुनाभः, तन्तून् सृजति । १०. रुग्णं सुखशयितं पृच्छ । ११. अदस्त्वया नुन्नमनुत्तमं तमः । १२. मज्जतीव । १३. आप्ट्रिमिन्धो आष्ट्रे, मृज्जति । (ग) १. प्रस्तावसद्यम् । २. प्रत्यादेशः श्रियः । ३. विच्छेदमाप । ४. अतिभूमिं गतः । ५. द्रव्यस्य वर्धं विनियोगः कृतः । ६. अप्रवोधाय । ७. सन्ततिविच्छेटात् । ८. अनिवंदः । ९. किनिमित्तं ते सन्तापः । १०. तारामैत्रकं चक्षुरागः । ११. पूरोत्पीडे तडागस्य परीवाहः प्रतिक्रिया । शोकक्षोमे च हृदयं प्रलापैरेव धार्यते । (घ) १. प्रक्षालनाद् हि पङ्कस्य दूरादस्पर्शनं वरम् । २. सनिकारं निर्वास्तिः । ३.शासनात् करणं श्रेयः । ४. न प्रभातरलं ज्योतिरुदेति वसुधातलात् । (ङ) वाष्ट्रपेण परिणम्य,

शब्दकोष--११७५ + २५ = १२००] अभ्यास ४८

(व्याकरण)

[क] गात्रम् (शरीर), शिरस् (नपुं०, शिर), शिरोस्हः (वाल), शिखा (चोटी), पिलतम् (सफेद वाल), ललाटम् (माथा), लोचनम् (नेत्र), प्राणम् (नाक), आस्यम् (मुँह), रसना (जीभ), रदनः (दाँत), श्रोत्रम् (कान), कण्टः (गला), ग्रीवा (गर्दन), स्कन्धः (कंधा), जत्रु (नपुं०, कंधे की हड्डी), कूर्चम् (दाढ़ी), रमश्रु (नपुं० मूँछ), कपोलः (गाल), ओष्टः (ओट), अधरः (नीचे का होट), भूः (स्नी०, भौं), पक्ष्मन् (नपुं०, पलक), वक्षस् (नपुं०, छाती), कुक्षिः (पुं०, पेट)। (२५)

व्याकरण—(दिश्, उपानह्, लिख्, स्पृश्, तृच्, अच्, अप्) १. दिश् और उपानह् शब्दों के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० ५९,६०) १. लिख् और स्पृश् धातुओं के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ७५, ७६)

नियम २३६—(ण्वल हची) धात से 'वाला' (कर्ता) अर्थ में तृच् प्रत्यय होता है। तृच् का 'तृ' शेष रहता है। जैसे—कृ>कर्तृ (करनेवाला), ह् हर्तृ (हरनेवाला)। कर्ता के अनुसार इसके लिंग, विभक्ति और वचन होते हैं। पुंलिंग में इसके रूप कर्तृ शब्द (शब्द एं। ११) के हत्य चलेंगे। स्त्रीलिंग में अन्त में 'ई' लगाकर नदी (शब्द १३) के तुल्य और नपुं। में कर्तृ (शब्द ६७) के तुल्य रूप चलेंगे। प्रायः सभी धातुओं से तृच् प्रत्यय लगता है। तृच् प्रत्ययान्त के साथ कर्म में षष्ठी होती है। पुस्तकस्य कर्ता, धर्ता, हर्ता वा। धातु को गुण होता है।

नियम २३७ - तृच् प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए ये नियम स्मरण कर लें। रूप बनाने का सरल उपाय यह है कि धातु के तुमुन्-प्रत्ययान्त रूप में से तुम् के स्थान पर तृ लगाने से तृच् प्रत्ययान्त रूप बन जाता है। तृच् का प्र०१ में ता होता है। नियम २१७ (क) से (ज) पूरा लगेगा। (क) धातु को गुण होगा। कु कर्तुम् = कर्तृ। हर्ता, धर्ता, भर्ता। जेता, चेता, भविता। (ख) सेट् में इ लगेगा, अनिट् में नहीं। पठिता, लेखिता, रोदिता। (ग) पक्ता, भोक्ता, छेता। (घ) प्रष्टा, प्रवेष्टा, स्रष्टा। (ङ) आह्वाता, गाता। (च) गन्ता, रन्ता। (छ) दग्धा, द्रोग्धा, दोग्धा, लेढा, वोढा। (ज) सोढा, वोढा, स्रष्टा, द्रष्टा, आरोढा, प्रहीता प्र० एक० में।

नियम २३८—(१)(पचाद्यच्) पच् आदि धातुओं से अच् प्रत्यय होता है। अच् का अ शेष रहता है। अच् लगाने से संज्ञाशब्द बन जाते हैं। धातु को गुण होता है। पुंलिंग होता है। रामवत् रूप होंगे। पच्>पचः। इसी प्रकार नदः, चोरः, देवः, चरः, चलः, पतः, वदः, मरः, क्षमः, कोपः, वणः, सर्पः, दर्पः आदि। (२)(एरच) इ या ई अन्तवाली धातुओं से अच् (अ) प्रत्यय होता है। गुण ए होकर अय् आदेश। चि> चयः, जि> जयः, नी> नयः। आश्रि>आश्रयः। इसी प्रकार प्रश्रयः, विनयः, प्रणयः।

नियम २३९—(ऋदोरप्) दीर्घ ऋ, उ या ऊ अन्तवाली धातुओं से अप् (अ) प्रत्यय होता है। गुण होता है, पुंलिंग होगा। क्>करः, ग्>गरः। यु> यवः, CC-O सु-प्रकारणाणून्यपदिशीक्ष्मुंक क्षेत्रकृष्टि (CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संस्कृत बनाओ-(क) (दिश्, उपानह् शब्द) १. दिशाएँ स्वच्छ हो गई और हवा सुखद बहने लगी। २. वायु प्रत्येक दिशा में मकरन्द को फैला रही है (क) । ३. दक्षिण दिशा में सूर्य का भी तेज मन्द हो जाता है । ४. कुत्ते को यदि राजा बना दिया जाता है तो क्या वह जूता नहीं चाटता ? ५. जूता पैर में हो तो सारी पृथ्वी चमड़े से ढकी-सी दीखती है। (ख) (लिख्, सृश् धातु) १. अरिसकों को कविता सुनाना मेरे भाग्य में मत लिखना। २. रात्रि ने तारे रूपी अक्षरों से आकाश में अन्धकार की प्रशस्ति लिखी है। ३. उसने शिर, बाल, ऑख, नाक, कान और पेट को छुआ । ४. हाथी छुता हुआ भी मार डालता है। ५. वह सोलह वर्ष का हो गया। ६. बिना धन के भी वीर बहुत सस्मानवाले उन्नति के पद को पाता है। ७. किसपर दोष डालूँ (निक्षिप्) ? (ग) (तृच् आदि प्रत्यय) १. कौन शरीर को शान्ति देनेवाली शरत्कालीन चाँदनी को वस्त्र से रोकता है ? २. विषय ऊपर से मनोहर लगते हैं. पर उनका अन्त दु:खद होता है। ३. विद्वानों के लिए कुछ भी अज्ञात नहीं है। ४. विनय सजानों को प्रिय क्यों न हो, क्योंकि वह योगियों को मुक्ति देता है। ५. कता ही नहीं रही तो फूल कहाँ ? ६. जिसको तुम आग समझते थे, वह स्पर्श के योग्य रत्न है। (घ) (घष्ठी) १. ऋषियों के लिए क्या परोक्ष है ? २. वीरों का निश्चय कठोर कर्मीवाला होता है, वह प्रेम-मार्ग को छोड़ देता है। ३. उसमें ईर्घ्या नाममात्र को नहीं है। ४. उसे खाना खाए आज तीसरा दिन है। ५. तुम्हारी बात सत्य-सी प्रतीत होती है। ६. वर्षा हुए दो सप्ताह हो गए। ७. भूकम्प आए एक महीना हो गया। ८. उसका मुँह हर्ष से खिल गया। ९. उसका मुख कमल की शोभा को धारण करता है। १०. उसका सौन्दर्य अवर्णनीय है। (ङ) (श्रीरवर्ग) शरीर ही मुख्यतः धर्म का साधन है। शरीर को स्वस्थ रखना प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है। स्वच्छ वायु में अमण और व्यायाम से शरीर स्वस्थ और हुष्ट-पुष्ट रहता है। निर्यामत रूप से स्नान करें और शिर, हाथ, नाक, आँख, कान, गर्दन, कन्धा, छाती, पेट, जाँघ, पैर और मुँह को जल से या साबुन से धोवे। शिरमें तेल डाले, माथे पर तिलक लगावे, आँख में अंजन लगावे। दाढ़ी को उस्तरे से साफ करे, मूँछ को साफ रखे, नाख्नों को नेल-कटर (नहरनी) से काटे। अंगुष्ठ तर्जनी मध्यमा अनामिका और किनष्ठा, इन पाँचों अंगुलियों को पुष्ट रखे।

संकेतः—(क) १. प्रसेदुः, मरुतो ववुः सुखाः । २. दिशि दिशि, किरित । ३. दिक्षणस्यां, मन्दायते । ४. क्रियते, नाश्चनत्युपानहम् । ५. उपानदगृद्धपादस्य सर्वा चर्मावृतेव भृः । (ख) १. अरिसकेषु कित्विनिवेदनं शिरिति मा लिख । २. ताराक्षरैः, तमःप्रशस्तिम् । ४. स्पृश्चन्निष गजो हिन्त । ५. षोडशवर्षवयोऽवस्थामस्पृशत् । ६. स्पृशित ब्हुमानोन्नितपःम् । (ग) १. शरीरिनिर्वापित्रीं, वारयित । २. आपातरम्या विषयाः पर्यन्तपरितापिनः । ३. धीमताम्, अविषयः । ४. योगिनां परिणमन् विमुक्तये, केन नास्तु विनयः सतां प्रियः । ५. लतायां पूर्वलूनायां प्रसवस्योद्भवः कृतः । ६. आशङ्कते यदिनम् । (घ) १. किमृषीणाम् । २. वीराणां समयो हि दारुणरसः स्नेहक्रमं वाधते । ३. अदत्ताववाशो मत्सरस्य । ४. कृताहारस्य तस्य । ५. सत्यिमव प्रतिभाति । ६. सप्ताहद्वयं वृष्टस्य देवस्य । ७. मांसैकं मुवः किम्पतायाः । ८. हर्षोत्फुल्लं वभौ । ९. उद्वहित । १०. श्रीर्वचनानामिवषया । (ङ) शरीरमाद्यम्, फेनिलेन प्रमार्जयत्, निक्षिपेत्, दद्यात्, कृन्तेत्, नखनिकृन्तनेन, कृन्तेत् ।

शब्दकोष-१२०० + २५ = १२२५] अभ्यास ४९

(व्याकरण)

(क)—पृष्ठम् (पीठ), श्रोणिः (स्त्री॰, कमर), ऊरुः (पुं॰, जंघा), जानुः (पुं॰, घुटना), गुल्फः (टखना, पैरके जोड़की हड्डी), बाहुः, (बाँह्), कफोणिः (स्त्री०, कोहनी), मणिवन्धः (कलाई), चपेटः (चपत), मुष्टिः (स्त्री॰, मुद्दी), करमः (कलाई से कनी अँगुलि तक हाथ का वाहरी भाग), नाडिः (स्त्री॰, नाड़ी), शिरा (स्त्री॰, नस), फुप्फुसम् (फेफड़ा), हृदयम् (हृदय), यकृत् (नपुं॰, जिगर), प्लीहा (तिल्ली), अन्त्रम् (आँत), पृष्ठास्थि (नपुं॰, रीढ़), शुक्रम् (वीर्य), रजम् (रज), रुधिरम् (खून), आमिषम् (मांस), वसा (चर्वी), मजा (हड्डी के अन्दर की चर्बी)। (२५)

व्याकरण (वारि, दिध, कृ, गृ, त्युट्, ण्वुल्, ट प्रत्यय।) १. वारि और दिध शब्दों के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० ६२, ६३) २. कृ और ग धातुओं के रूप स्मरण करो । (देखा धातु० ७७, ७८)

नियम २४०—(ल्युट् प्रत्यय) (१) (ल्युट् च) भाववाचक राब्द बनाने के लिए धातु से ल्युट् प्रत्यय होता है। ल्युट् के यु को 'अन' हो जाता है। अन प्रत्ययान्त शब्द नपुं॰ होते हैं। धातु को गुण होता है। ल्युट् (अन) प्रत्यय में भी वही नियम लगते हैं. जो अनीय प्रत्यय में लगते हैं। देखो नियम २२६। गम्>गमनम् (जाना)। इसी प्रकार पठनम् , लेखनम् , जयनम् , पूजनम् । क् > करणम् । हरणम् , भरणम् , भरणम् , रोदनम् । (२) (करणाधिकरणयोश्च) करण और अधिकरण अर्थों में भी ल्युट् (अन) होता है। यानम् (जिससे जाते हैं, सवारी), स्थानम् (जहाँ वैठते हैं), उपकरणम् (जिससे काम करते हैं, साधन), आवरणम् (जिससे टकते हैं)।(३) (कर्मणि च येन०) कर्ता को सुख मिले तो कर्म पहले होने पर धातु से ल्युट् (अन) । नित्य समास होगा । पयःपानं सुखम् ।(४)(नित्दिप्रहि॰)नन्द् आदि से ल्यु(अन)होता है। नन्दनः, जनार्दनः, मधुसूदनः।

नियम २४१—(ण्वुल्तृचौ) करनेवाला (कर्ता) अर्थ में धातु से ण्वुल् प्रत्यय होता है। ण्वुल् के वु को 'अक' हो जाता है। नियम २३४ के तुल्य वृद्धि होगी। कर्ता के तुल्य इसके लिंग होंगे। पुं॰ में रामवत्, स्त्रीलिंग में 'इका' अन्त में होगा और रमावत्, नपुं॰ में ज्ञानवत् । कृ>कारकः (करनेवाला), कारिका, कारकम् । पाठकः, लेखकः, हारकः, उपकारकः, सेवकः। (१) (आतो युक्०) आकारान्त धातु में बीच में य् लगेगा । दा> दायकः, धा> धायकः, पा>पायकः । (२) (नोदात्तोपदेशस्य०) इनमें वृद्धि नहीं होगी। शमकः, दमकः, गमकः, यमकः। जन् को भी वृद्धि नहीं होती है। जनकः। (३) इन धातुओं के ये रूप होते हैं - हन् घातकः, वध् > वधकः, रन्ध् > रन्धकः, रभ्>रम्भकः, लभ्>लम्भकः।

नियम २४२—(ट प्रत्यय) इन स्थानों पर ट (अ) होता है—(१) (चरेष्टः) अधिकरण पहले होने पर चर् धातु से। कुरुचरः। (२) (भिक्षासेना॰) भिक्षा आदि पहले हों, तो चर् धातु से। भिक्षाचरः, सेनाचरः, आदायचरः। (३) (पुरोऽप्रतो०)पुरः आदि पहले हों तो सु धातु से। पुरस्सरः, अग्रतस्सरः, अग्रेसरः, अग्रसरः। (४) (कृञो हेतु॰) कृ धातु से हेतु, स्वभाव और अनुकूल अर्थ में। यशस्करी विद्या, श्राद्धकरः, वचनकरः। (५) (दिवाविभानिशाप्रभा॰) दिवा आदि पहले हो तो कृ धातु से।

संस्कृत वनाओ-(क) (वारि, दिध शब्द) १. जिस प्रकार फावड़े से खोदकर मनुष्य जल पा लेता है, उसी प्रकार सेवा से गुरुगत विद्या को प्राप्त कर लेता है। २. एक बार चन्द्रमा ने समुद्र के विमल (शुचि) जल में पड़े हुए अपने प्रतिविम्ब को देखा और उसने खेदपूर्वक तारा के मुख का स्मरण किया। ३. दूध दही के रूप में परिणत होता है। ४. दही मीठा है, मधु मधुर है, अंगूर मीठे हैं, चीनी भी मीठी है। जिसका मन जिसमें लग गया, उसके लिए वहीं मीठा है। (ख) (कृ, गृधातु) १. यह कोई वीर वालक सेनाओं के ऊपर बाणरूपी हिम को डाल रहा है (कृ)। २. हवा प्रत्येक दिशा में पराग को फैला रही है (कृ)। ३. हरिचरणों में यह फूलों की अंजलि डाल दी है (प्रकृ)। ४. घोड़े खुरों से धूलि को उठा रहे हैं (उत्कृ)। ५. तेरी तलवार शतुओं के अंगों को दुकड़े-दुकड़े कर दे (विकृ)। ६. वैल प्रसन्नचित्त हो मिट्टी खोदता है, अन्नार्थी मुर्गा कूड़े को खोदता है, कुत्ता सोने के लिए मिट्टी खोदता है (अपस्कृ, आ०)। ७. रोगी दवा की गोली को निगलता है (गृ)। राजा ने वचन कहा (उद्गृ)। ९. साँप विष को उगलता है (उद्गृ)। १०. बालक अन्न के ग्रास को निगलता है (निगृ)। ११. वह शब्द को नित्य मानता है (संगृ, आ०)। (ग) (त्युट् आदि) १. उसने राष्ट्रपतिजी से भेंट की। २. में राष्ट्रपतिजी से मिलना चाहता हूँ। ३. मधुर आकृतिवालों के लिए क्या मण्डन नहीं है ? ४. जीवन में हँसना, रोना, मरना, जीना, उत्थान, पतन लगा ही रहता है। ५. विद्या यशस्करी है। ६. अधिक खेलने के कारण मुझे बहुत ताना सहना पड़ा है। (घ) (षष्ठी) १. वह मेरा निःस्वार्थ वन्धु है। २. वह मेरा विश्वासपात्र है। ३. राजा के पास जाता हूँ। ४. वह सत्कार मेरे मनोरथों से भी परे था। ५. लक्ष्मण तुम्हारी याद करता है। ६. वह शिशु पर दया करता है। ७. यदि अपने आपको सँभाल सका तो विदेश जाऊँगा। ८. आपका शिष्यों पर पूरा अधिकार है। ९. पाणिनि वैयाकरणों में श्रेष्ठ हैं। १०. वह साहसियों में धुरीण और विद्वानों में अग्रणी है। ११. क्या तुम पित को याद करती हो ? (ङ) (शरीरवर्ग) शरीर की सुरक्षा के लिए प्राणायाम अनिवार्य है। प्राणायाम से फेफड़ों की सफाई होती है। प्राणायाम से शरीर के प्रत्येक अंग में शुद्ध वायु पहुँ चती है। पीठ, कमर, घुटना; टखना, कोहनी, कलाई, मुटी, हृदय, आँत, नसें, नाड़ियाँ, सभी को प्राणायाम से लाभ होता है। वैद्यक के अनुसार वात, पित्त और कफ के विकार से ही शरीर में सभी रोगों की उत्पत्ति होती है। ठीक आहार और विहार से शरीर नीरोग रहता है।

संकेत—(क) १. खनन् खनित्रेण, अधिगच्छति । २. शुचिनि, संक्रान्तम् , सस्मार । ३. दिधिमावेन । ४. सिता, तस्य तदेव हि मधुरम् । (ख) १. शरतुषारं किरति । ३. प्रकीणंः । ४. उत्किरन्ति । ५. छवशो विकिरतु । ६. अपस्किरते । ७. गोलिकाम् । ८. उज्जगार । ९. उद्गिरति । १०. निगिरति । ११. शब्दं नित्यं संगिरते । (ग) १. राष्ट्रपतिदर्शनं लेभे । २. राष्ट्रपतिदर्शनानुम्रहमिच्छामि । ३. किमिन हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् । ४. वरीवर्ति । ६. क्रीडातिशय-मन्तरेण महदुपालम्भनं गतोऽस्मि । (घ) १. निष्कारणः । २. विश्वम्भभूमिः । ३. उपैमि । ४. मनोर-थानाम्प्यभूमिः । ५. अध्येति तव । ६. शिशोः दयते । ७. आत्मनः प्रमविष्यामि । ८. प्रभवत्यार्थः

शिष्यजनस्य । १०. धौरेयः साइसिकानामग्रणीर्विदग्धानाम् । ११. किन्वद्भर्तुः स्मरसि । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha शब्दकोष-१२२५ + २५ = १२५०] **अभ्यास ५०**

(व्याकरण)

(क) कञ्चुकः (कुर्ता), कञ्चुलिका (ब्लाउज), अधोवस्त्रम् (धोती), शाटिका (साड़ी), पादयामः (पायजामा), प्रावारः (कोट), प्रावारकम् (शेरवानी), वृहतिका (ओवरकोट), आप्रपदीनम् (पैंट), अन्तरीयम् (पेटीकोट), अधींक्कम् (अण्डरवीयर, जाँघया), नक्तकम् (नाइट ड्रेस), प्रच्छदपटः (ओढ़नी, चुन्नी), स्यूतवरः (सल्वार), रल्लकः (लोई), नीशारः (रजाई), त्लसंस्तरः (गहा), आस्तरणम् (दरी), प्रच्छदः (चादर), उपधानम् (तिकया), ऊर्णावरकम् (स्वेटर)। (२१)।(घ) कार्पासम् (स्ती), कौशेयम् (रेशमी), राङ्कवम् (ऊनी), नवलीनकम् (नाइलोन का)। (४)

ट्याकरण (अक्षि, अस्थि, क्षिप् , मृ, क, खल् , णिनि प्रत्यय)

१. अक्षि और अस्य शब्दों के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० ६४, ६५)

२. क्षिप् और मृ धातुओं के रूप स्मरण करो (देखो धातु० ७९, ८०)

नियम २४३—(क प्रत्यय) इन स्थानों पर क (अ) प्रत्यय होता है। क का 'अ' शेष रहता है। धातु को गुण नहीं होगा। धातु के अन्तिम आ का लोप होता है। 'वाला' (कर्ता) अर्थ में क प्रत्यय होता है। (१) (इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः) जिन धातुओं की उपधा में इ, उ, ऋ हो उनसे तथा ज्ञा, प्री, कृ धातु से क प्रत्यय। लिख् > लिखः (लेखक), बुध् > बुधः (विद्वान्), कृश् > कृशः (निर्वल), ज्ञा > ज्ञः, प्री > प्रियः (प्रिय), कृ > किरः (बखेरनेवाला)। (२) (आतश्चोपसर्गे) उपसर्ग पहले हो तो आकारान्त धातु से क (अ)। क होने पर आ का लोप होता है। प्र + ज्ञा > प्रज्ञः। विज्ञः, सुज्ञः, अभिज्ञः, अ + ह्वा > आहः, प्रहः। (३) (आतोऽनुपसर्गे कः) उपसर्ग-भिन्न कोई कर्म पहले हो तो आकारान्त धातु से क। दा > सुखदः, दुःखदः, गोदः। त्रा > आतपत्रम्, गोत्रम्, पुत्रः, क्षत्रः। पा > द्विपः, गोपः, महीपः, पादपः। (४) (सुपि स्थः) कोई शब्द पहले हो तो आकारान्त और स्था धातु से क। पा > द्विपः। स्था > समस्थः, विषमस्थः। (५) (मूलविभुजादिभ्यः कः) मूलविभुज आदि में क होता है। मूलविभुजः, महीघः, कुष्रः। (६) (गेहे कः) ग्रह् धातु से ग्रह अर्थ में क। ग्रह् > गृहम्।

नियम २४४—(खल् प्रत्यय) (ईषद्दु:सुषु०) ईषत्, दुर् या सु पहले हो तो धातु से खल् (अ) प्रत्यय ही होता है, कठिन या सरल अर्थ में। धातु को गुण होगा। ईषत्करः, दुष्करः, सुकरः।दुर्लभः, सुलभः,दुर्गमः, सुगमः,दुर्जयः, सुजयः, दुःसहः, सुसहः।

नियम २४५—(णिनि प्रत्यय) इन स्थानों पर णिनि (इन्) प्रत्यय होता है। नियम २३४ (१) के तुत्य वृद्धि या गुण। पुं० में करिन् के तुत्य, स्त्री० में ई लगाकर नदीवत्, नपुं० में वारिवत्। (१) (नित्दिप्रहि०) प्रह् आदि धातुओं से णिनि (इन्)। प्रह्>ग्राही। स्थायी, मन्त्री। (२) (सुप्यजातौ णिनिः०) जाति-भिन्न कोई शब्द पहले हो तो धातु से णिनि होगा, स्वभाव अर्थ में। भुज् >उष्णभोजी, आमिषभोजी, निरामिषभोजी। शाकाहारी, मांसाहारी, मिश्यावादी, मित्रद्रोही, मनोहारी। वस्> निवासी, प्रवासी। क्र >उपकारी, अपकारी, अधिकारी। (३) (साधुकारिणि) अच्छा करने अर्थ में। साधुदायी। (४) (कर्तश्रुपमाने) उपमान अर्थ में। उद्गकोशी, ध्वाङ्करावी। (५) (वते)

्मत में। स्विप्तिल्यायो । (६) (मनः आहमसाने खुन्ते को समझने अर्थ में मन Kosha धातु से णिनि और खर् (अ) । शब्द के अन्त में म् लगेगा । पण्डितमानी, पण्डितमन्यः ।

संस्कृत बनाओ-(क) (अधि, अस्य ग्रन्द) १. वह आँख से काणा है। २. उसकी आँख में तिनका गिर गया (पत्)। ३. उसे जागते ही रात बीती। ४. कुत्ता हड्डी चाटता है। ५. हड्डियों में फासफोरस भी होता है। (ख) (क्षिप् , मृ धातु) १. नौकर पर दोष लगाता है (क्षिप्)। २. हे नूर्ख सुनार, तू मुझे बार-बार आग में क्यों डालता है (क्षिप्) ? जलने पर मेरे अन्दर गुण और बढ़ जाते हैं और मैं खरा सोना हो जाता हूँ। ३. जल में पत्थर फेंकता है (क्षिप्)। ४. उसने सूक्ष्म वस्त्र फेंककर (अवक्षिप्) मुनिवस्त्र पहने। ५. उसने कृष्ण की निन्दा की (अविक्षिप्)। ६. अरे मूर्च, क्यों इस प्रकार अपमान कर रहा है (आक्षिप्)। ७. बालक ने ढेला जपर फेंका (उत्क्षिप्)। ८. वह स्त्री अपना आभूषण सुनार के पास घरोहर रखती है (निक्षिप्)। ९. राजा ने उस पर करू दृष्टि डास्टी (निक्षिप्)। १०. जल्हे पर नमक डालता है (प्रक्षिप्)। ११. गन्दी चीजें आग में न डालो (प्रक्षिप्)। १२. उसने अपना निवन्ध संक्षिप्त करके लिखा (संक्षिप्)। १३. आत्मा न उत्पन्न होता है (जन्) और न सरता है (मृ)। १४. परमात्मा न कभी मरा, न वृद्ध हुआ। (ग) (क, खल् आदि) १. विज्ञ सुखद वचन ही कहता है, दुःखद नहीं । २. यह काम शीघ्र करना तो सुकर है, पर गुप्त रूप से करना कठिन है। ३. आंधी में भी पहाड़ निष्कम्प रहते हैं। ४. सबके मन की रुचिकर बात कहना अति कठिन है। ५. प्रिय के प्रवास से उत्पन्न दुःख स्त्रियों के लिए अति दुःसह होते हैं। ६. संसार में सुन्दरता सुलभ है, गुणार्जन कठिन है। ७. तुम्हारे लिए मृग पकड़ना कठिन नहीं होगा। ८. बड़ों की इच्छा ऊँची होती है। ९. बन्धुजनों के वियोग सन्तापकारी होते हैं। १०. छिद्रान्वेषी छोग दोषों को ही देखते हैं। ११. उसने पृथ्वी उसके हाथों में दे दी। (घ) (सप्तमी) १. चौदहवें दिन खूब जोर से वर्षा हुई थी । २. पति के कहने में रहना (स्था)। ३. सपत्नीजन पर प्रिय-सखी का व्यवहार करना । ४. ऐसा होने पर क्या करना चाहिए १ ५. सर्वनाश प्राप्त होने पर विद्वान् व्यक्ति आधा छोड़ देता है। ६. रण में जयश्री उत्कर्ष पर निर्भर है। (ङ) (वस्त्रवर्ग) वस्त्र शरीर को ढकने के लिए हैं। स्वच्छ और धुले हुए वस्त्र पहनने चाहिए (धारि)। प्राचीन पद्धति को अपनानेवाले लोग कुर्ता, धोती पहनते हैं। पाश्चात्त्य पद्धति को अपनानेवाले लोग कोट, पैंट या पायजामा, शेरवानी पहनते हैं। स्त्रियाँ साड़ी, ब्लाउज, पेटीकोट पहनती हैं। कुर्ता, सलवार और ओदनी का पंजाब में अधिक प्रचलन है। आजकल सूती, रेशमी, ऊनी और नाइलोन के कपड़े अधिक चलते हैं। विस्तर में दरी, गद्दा, चादर, तिकया, रजाई, लोई, कम्बल, दुतई काम आते हैं।

संकेत—(क) ३. तस्याक्षणोः प्रभातमासीत्। ४. लेढि। ५. मास्वरम्। (स्व) १. दोषान् क्षिपति। २. दग्धे पुनर्भिय भवन्ति गुणातिरेकाः, विशुद्धम्। ४. अवक्षिप्य, अवस्त। ५. कृष्णमवा-क्षिपत। ६. आक्षिपसि। ७. उदक्षिपत्। ८. हस्ते निक्षिपति। ९. निचिक्षेप। १०. क्षारं क्षते प्रक्षिपति। ११. अमेध्यम्। १२. संक्षिप्य। १४. न ममार न जीर्यति। (ग) २. शिष्रमिति सुकरम्, निभृतमिति दुष्करम्। ३. प्रवातेऽपि। ४. सुदुर्लभाः सर्वमनोरमा गिरः। ६. सुलमा रम्यता लोके दुर्लमं हि गुणार्जनम्। ७. मृगो दुरासदः। ८. उत्सपिणी। १०. छिद्रान्वेषिणः। ११. हस्तगामिनीमकरोत्। (स) १. चतुर्दशे दिवसे धारासारैरवर्षद् देवः। २. शासने। ३. वृत्तिम्। ४. पवं गते सति। ५. समुत्पन्ने। ६. प्रकर्षतन्त्रा। (ङ) स्वीकुर्वाणाः, प्रचलन्ति, शय्यायाम्, कम्बलः, द्वितयी, उपयुज्यन्ते।

शब्दकोष-१२५० + २५ = १२७५] अभ्यास ५१

(व्याकरण)

(क) आभरणम् (आभूषण), मूर्घाभरणम् (वेणी), ल्लाटाभरणम् (टिकुली), नासाभरणम् (१. नथ, २. बुलाक), नासापुष्पम् (नाक का फूल), कर्णपूरः (कनफूल), कुण्डलम् (कान की वाली), कण्ठाभरणम् (कण्ठा), ग्रैवेयकम् (हसुली), हारः (मोती का हार), एकावली (एक लड़ का हार), मुक्तावली (मोती की माला), स्रज् (पुष्प-माला), केयूरम्(बाजूबन्द, ब्रेसलेट),कङ्कणम्(कंगन),काचवलयम् (चूड़ी),अङ्गुलीयकम्(अंगूठी), कटकः (सोने का कड़ा), त्रौटकम् (हाथ का तोड़ा), मेखला (करधन), नूपुरम् (पाजेब), पादाभरणम्(लच्छे),मुकुटम् (मुकुट),मुद्रिका(नामांकित अँगूठी),किंकिणी (बुँघरू)। (२५)

व्याकरण (मधु, कर्तृ, तुद्, मुच्, क्तिन्, अण्, किप्)

१. मधु और कर्तृ शब्दों के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द० ६६, ६७) २. तुद् और मुच् धातुओं के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ८१, ८२)

नियम २४६—(किन् प्रत्यय) (१) (स्त्रियां किन्) धातुओं से स्त्रीलिंग में क्तिन् प्रत्यय होता है। क्तिन् का 'ति' रोष रहता है। 'ति' प्रत्ययान्त राब्द स्त्रीलिंग ही होते हैं। गुण या वृद्धि नहीं होगी। सम्प्रसारण होगा। ति प्रत्यय से भाववाचक संज्ञा-शब्द बनते हैं। जैसे-कु>कृतिः, धृतिः, स्तुतिः, भृतिः। 'ति' प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के लिए देखो नियम २०८ (क), (ग) से (झ)। साधारणतया क्त-प्रत्ययान्त रूप में त के स्थान पर ति लगाने से ति-प्रत्ययान्त रूप बन जाते हैं। जैसे—गा> गीत > गीति, गम् > गत > गित, वच् > उक्त > उक्ति । (क) कृति, हृति, धृति । (ग) गीति, पीति। (घ) उपमिति, स्थिति। (ङ) गति, मति, निर्त। (छ) जाति, खाति। (ज) उक्ति, इष्टि, सुप्ति। (झ) ग्लानि, ग्लानि। (२) (स्थागापापचो भावे) इनसे भावार्थ में किन्। उपस्थितिः, गीतिः, संपीतिः, पिक्तः। (३) (ऊतियृति०) ये रूप बनते हैं—ऊतिः, हेतिः, कीर्तिः। (४) (संपदादिभ्यः०)संपद् आदि से किन्। संपित्तः, विपित्तः। नियम २४७—(अण् प्रत्यय) (कर्मण्यण्) कोई कर्मवाचक शब्द पहले हो तो

धातु से अण् (अ)प्रत्यय होता है। धातुं को वृद्धि होती है। कुम्भं करोतीति> कुम्भकारः।

नियम २४८—(किप् प्रत्यय) इन स्थानों पर किप् प्रत्यय होता है। किप् का पूरा लोप हो जाएगा, कुछ शेष नहीं रहेगा। (१) (सत्सूद्विष०) उपसर्ग या अन्य कोई शब्द पहले हो तो सद् सूद्विष् दुह् विद् आदि से क्विप्। उपनिषत्। प्रसू:। मित्रद्विर्। गोवुक्। वेदवित्। (२) (किप् च) धातुओं से किप् होता है। उखास्तत्, पर्णध्वत्, वाहभ्रद्। (३) (ब्रह्मभ्रूणवृत्रेषु किप्) ब्रह्म आदि पहले हो तो भूत अर्थ में हन् धातु से किए। ब्रह्महा, भूणहा, वृत्रहा। (४) (सुकर्मपापमन्त्रपुण्येषु कुञः)सु कर्म आदि पहले हों तो कु घातु से किए। त् अन्त में जुड़ जाएगा। सुकृत्, कर्मकृत्, पापकृत्, मन्त्रकृत्, पुष्पकृत्। भूभृत् के तुल्य रूप चलेंगे। (५) (भ्राजभास०) भ्राज् , भास् , धुर्व , द्युत् , ऊर्ज, पुर् आदि से किप् होता है। विभ्राट्, माः, धूः, विद्युत्, ऊर्क्, पूः।

नियम २४९—(कनिप् प्रत्यय) इन स्थानों पर कनिप् होता है। इसका 'वन्' शेष रहता है। गुण नहीं होगा। रूप आत्मन् के तुत्य। (१) (हशेः कनिप्) हश धातु से कनिप्। पारहश्चा। (२) (राजनि युधिकृञः) राजन् पहले हो तो युध् और कृ धातु से कनिप्। राजयुध्वा, राजकृत्वा। (३) (सहे च) सह पहले हो तो युघ् और कृ धातु से। सहयुध्वा, सहकृत्वा। (४) (अन्येभ्योऽपि०) अन्य धातुओं से भी कनिप्। ६००. इस्त्राहुअप्रकारित्वाविभावीत्वाव्येष्ट्रम् सम्बन्ध् (QSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संस्कृत बनाओ-(क) (मधु, कर्तृ शब्द) १. भौरे कमलों से मधु को पीते हैं । २. दुर्जनों के जिह्वाग्र पर मधु रहता है और हृदय में घोर विष । ३. भोजन पकाने के लिए लकड़ियाँ (दार) लाओ और कुएँ से जल (अम्बु) लाओ । ४. पहाड़ की चोटी पर (सानु) ऋषि मुनि रहते हैं। ५. आग पर राँगा (त्रपु) और लाख (जतु) पिघलाओ। ६. ऑसू (अश्र) मत गिराओ, धैर्य रखो। ७. प्रातः सेफ्टी-रेजर से दाढ़ी (समश्र) बनाओ। ८. ब्रह्म जगत का कर्ता, धर्ता और संहर्ता है। (ख) (तुद, मुच्) १. दुर्जन वाणीरूपी बाण से सज्जनों को दुःख देते हैं (तुद्)। २. भीम ने गदा से शत्रु को चोट मारी (तुद्) । ३. रात्रि बीत गई, बिस्तर छोड़ो (मुच्) । ४. मृगों पर बाण छोड़ता है (मुच्)। ५. सत्यवादी सब पापों से मुक्त हो जाता है। ६. मारो या छोड़ो, यह आपकी इच्छा पर है। (ग) (क्तिन् आदि प्रत्यय) १. मनोरथ के लिए कुछ भी अगम्य नहीं है। २. मरना मनुष्यों का स्वभाव है, इसका उल्टा जीवन है। ३. अविवेक बड़ी आपत्तियों का घर है। ४. विपत्ति में (विपद्) धैर्य और वैभव में क्षमा, यह महात्माओं में ही होता है। ५. विपत्ति में धैर्य धारण करके रहना चाहिए। ६. जन्म छेने-वालों पर विपत्ति आती ही है। ७. विपत्ति के पीछे विपत्ति और संपत्ति के पीछे संपत्ति चलती है। ८. संपत्तियाँ अच्छे आचरणवालों को भी विचलित कर देती हैं। ९. यह वचन मर्मवेधी है। १०. प्राणियों की इस असारता को धिकार है। (घ) (सप्तमी) १. भन्यों पर पक्षपात होता ही है। २. सब अपने साथियों पर विश्वास करते हैं। ३. प्रायः ऐश्वर्य से उन्मत्तों में ये विकार बढ़ते हैं। ४. प्रजा राजा पर बहुत अनुरक्त है। ५. साहस में श्री रहती है। ६. उसने चावलों को धूप में डाला। ७. पढ़ाई शुरू करने के समय क्यों खेल रहे हो ? ८. प्रसन्नता के स्थान पर दुःख न करो। ९. वर्षा रुकने पर वह घर गया । १०. यह बात मेरी समझ के बाहर है। ११. आप मेरे पिता की जगह पर हैं। १२, मेरी आवाज की पहुँच के अन्दर रहना। १३. सिपाही के आते ही चोर भाग गए। १४. तुम्हारे रहते हुए कौन दीनों को दुःख दे सकता है ? २५. यज्ञ करने पर वर्षा हुई। १६. आए हुए बच्चों को मिठाई दो। (ङ) (आभूषणवर्ग) अलंकार शरीर को अलंकृत करते हैं। सधवा स्त्रियाँ सिर पर वेणी, माथे पर मुकुट और टिकुली, नाक में नथ और नाक का फूल, कान में कनफूल और बाली, गले में हँसुली, कण्ठा, मोती का हार और फूल-माला, बाँह में बाजूबन्द, कलाई में कंगन और चूड़ी, अँगुलियों में अँगूठी, कमर में करधन, पैरों में पाजेब, लच्छे और बुँखुरू पहनती हैं।

संकेतः—(क) २. हालाहलम्। ५. द्रावय। ६. पातय। ८. कर्त्, धर्त् संहर्त्। (ख) १. वाग्वाणेन। २. तुतोद। ३. शय्यां मुद्ध। (ग) १. अगितः। २. मरणं प्रकृतिः शरीरिणां विकृतिर्जीवितमुच्यते बुधैः। ३. अविवेकः परमापदां पदम्। ५. अवलम्ब्य। ६. विपदुत्पत्तिमता-मुपस्थिता। ७. विषद् विपदमनुबध्नाति संपत् संपदम्। ८. साधुवृत्तानिप विक्षिपन्ति। ९. मर्मिन्छद्। १०. धिगमां देहमृतामसारताम् (घ) २. सर्वः सगन्धेषु विश्विति। ३. मूर्च्छंन्ति। ६. सूर्यातपे दत्तवती। ७. अध्यने प्रारूब्धव्ये। ८. हर्षस्थाने अलं विषादेन। ९. शान्ते पानीयवर्षे। १०. ममिथः पथि न वर्तते। ११. पितृस्थाने वर्तते। १२. श्रवणगोचरे तिष्ठ। १३. प्रविष्टमात्र पत्र रक्षिणि।

शब्दकोष-१२७५ + २५ = १३०० अभ्यास ५२

(व्याकरण)

(क) सिन्दूरम् (सिन्दूर), चूर्णकम् (पाउडर), बिन्दुः (बिन्दी), ललाटिका (टीका), तिलकम् (तिलक), पत्रलेखा (पत्रलेखा), कजलम् (काजल), गन्धतैलम् (इत्र), हैमम् (स्नो), शरः (क्रीम), दर्पणः (शीशा), प्रसाधनी (कंघी), ओष्ठरञ्जनम् (लिपिस्टिक), कपोलरञ्जनम् (रूज), नलरञ्जनम् (नेल पालिश), फीनलम् (साबुन), शृङ्गारफलकम् (ङ्रेसिंग टेबुल), रोममार्जनी (ब्रुश), दन्तधावनम् (१. दाँत का ब्रुश, २. दात्न), दन्त-पिष्टकम् (दूथ पेस्ट), दन्तचूर्णम् (१. दूथ पाउडर, २. मंजन), मेन्धिका (मेहदी), अलक्तकः (लाक्षारस, महावर), उद्वर्तनम् (उबटन), शृङ्गारधानम् (सिंगारदान)। (२५)

व्याकरण (जगत्, छिद्, भिद्, इष्णु, खश् आदि प्रत्यय)

१. जगत् शब्द के रूप स्मरण करो (देखो शब्द० ६८)

२. छिद् और भिद् धातुओं के रूप स्मरण करो । (देखी धातु॰ ८३, ८४)

नियम २५०—(इणुच् प्रत्यय) (अलंकुञ्निराकुञ्०) अलंकु, निराक आदि धातुओं से इणुच् प्रत्यय होता है। इणु शेष रहता है। धातु को गुण, गुरुवत् रूप। अलंक-रिष्णुः । निराकरिष्णुः । उत्पतिष्णुः । उन्मदिष्णुः । रोचिष्णुः । वर्धिष्णुः । सहिष्णुः । चरिष्णुः ।

नियम २५१—(खरा प्रत्यय) इन स्थानों पर खरा होता है। इसका अ रोष रहता है। (अरुर्द्विषदं) खरा होने पर पहले अजन्त शब्द के अन्त में 'म्' जुड़ जाएगा। गुण होगा। (१) (एजेः खरा्) एजि धातु से खरा् (अ)। जनमेजयतीति जनमेजयः। (२) इन स्थानों पर लश् होता है—स्तनन्धयः, अभ्रेलिहो वायुः, मितम्पचः, विधुन्तुदः, अरुन्तुदः, असूर्यप्पस्या, ललाटन्तपः। (३) (आत्ममाने खश्च) अपने आपको समझने अर्थ में खरा । पण्डितंमन्यः । कालिंमन्या । स्त्रियंमन्यः । नरंमन्यः ।

नियम २५२—(खच् प्रत्यय) खच् का अ शेष रहता है। पूर्वपद में म् जुड़ेगा।
गुण होगा। (१) (प्रियवशे वदः खच्) प्रिय, वश पहले हों तो वद् से खच्। प्रियंवदः। वशंवदः। (२) (गमेः सुपि, विहायसो विहः) गम् धातु से खच्। भुजंगमः, भुजंगः। विहंगमः, विहंगः। (३) (द्विषत्परयोस्तापेः) द्विषत् या पर पहले हों तो तापि से खच्। द्विषन्तपः, परन्तपः। (४) इन स्थानी पर खच् होता है-वाचंयमः, पुरन्दरः, सर्वेसहः, कूलंकषा नदी, भयंकरः, अभयंकरः, भद्रंकरः, विश्वंभरः, पतिंवरा कन्या, अरिन्दमः ।

नियम २५३—(अथुच्) अथुच् का अथु शेष रहता है। गुण होगा। (ट्वितो-ऽथुच्) जिन धातुओं में से दु हटों है, वहाँ अथुच् होगा । वेप्> वेपथुः, श्वि> श्वयथुः ।

नियम २५४-(ष्ट्रन्) (दाम्नीशस्०)दा, नी, शस्, स्तु आदि से ष्ट्रन् होता है। इसका त्र शेष रहता है। गुण होगा। दात्रम्, नेत्रम्, शस्त्रम्। पत्>पत्रम्। दंश्> दंष्ट्रा।

नियम २५५—(इत्र) (अर्तिल्रधूस्खन०) ऋ, ल्, धू, स्, लन, सह, चर् धातुओं से इत्र प्रत्यय होता है। गुण होगा। अरित्रम्, लवित्रम्, खनित्रम्, चरित्रम्।

नियम २५६—(उ) (सनाशंसभिक्ष उः) सन् प्रत्यय जिनके अन्त में हो उनसे,

आशंस् और भिक्ष् धातु से उ प्रत्यय होता है। चिकीर्षः, आशंसुः, भिक्षुः।

नियम २५७—(ड) ड का अ शेष रहता है। टि का लोप होगा। (१) (सतम्यां जनेर्डः) सतम्यन्त शब्द पहले हो तो जन् धातु से ड। सरसिजम्, सरोजम्। (२) इन स्थानों पर भी ड होता है—प्रजा, अजः, द्विजः।

नियम २५८-(अ) (अ प्रत्ययात्) प्रत्ययान्त धातु से स्त्रीलिंग में अ । बाद

में टाप्। चिकीर्घा।

नियम २५९—(युच्) (प्यासभ्रन्थो॰) प्यन्त से युच् (अन) होता है। कारि CC कारमवर्गा devरमाठ्यां चिर्णाल्यां on at Sarai (CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संस्कृत बनाओ: -(क) (जगत् शब्द) १. सूर्य जंगम और स्थावर का आतमा है। २. जगत् के माता-पिता पार्वती और शिव की वन्दना करता हूँ। ३. यह सारा संसार ही नश्वर है, इसमें भी यह शरीर और अधिक नश्वर है। ४. यदि एक ही काम से संसार को वश में करना चाहते हो तो पर-निन्दा से वाणी को रोको। ५. पत्नी के वियोग में यह सारा संसार वनवत् हो जाता है। ६. पत्नी के स्वर्गवास होने पर संसार जीर्ण अरण्यवत् हो जाता है। ७. मृग ऊँची छलांग के कारण आकाश में अधिक और भूमि पर कम चल रहा है (वियत्)। ८. वृक्ष से पत्ते गिर रहे हैं (पतत्)। ९. लता से फूल गिरे (पतितवत्)। (ख) (छिद्, भिद् धातु) १. इस आत्मा को रास्त्र नहीं काटते हैं (छिट्)। २. हमारे बन्धनों को काटो (छिट्)। ३. तृष्णा को नष्ट करो (छिट्)। ४. मेरे इस संशय को दूर करो (छिट्)। ५. इससे हमारा कुछ नहीं विगड़ता (छिट्)। ६. घड़ा फोड़कर, कपड़ा फाड़कर, गर्घे की सवारी करके, जिस किसी प्रकार हो मनुष्य प्रसिद्धि प्राप्त करें। ७. ठण्डा जल भी क्या पहाड़ को नहीं तोड़ देता है (भिद्) १ ५. शत्रु ने सन्धि को तोड़ा (भिद्)। ९. गुप्त बात छः कानों में पड़ते ही समाप्त हो जाती है। १०: उड़द को पीसता है (पिष्)। ११. वह व्यर्थ ही पिष्टपेषण करता है। (ग) (इष्णु आदि) १. बन-ठनकर रहने वाले लोग वालों में तेल और इत्र डालते हैं, कंघी से वालों को सँवारते हैं, मुँह पर स्नो और श्रीम लगाते हैं। दाँत के बुश पर टूथ पेस्ट लेकर दाँत साफ करते हैं। जूतों पर पालिश कराते हैं और वस्त्रों पर लोहा कराते हैं। २. बड़े आदमी मर्मवेधी वचन कभी नहीं कहते.। ३. कमल शेवाल से विरा हुआ भी मनोहर होता है। ४. सजन प्रियवादी, शिष्य आज्ञाकारी, दुर्जन भयंकर, सत्पुरुष अभयंकर, मुनि वाक्संयमी, राजा शत्रुनाशी, महल गगनचुम्बी, राहु चन्द्र-पीडक, सूर्य ललाटतापी और कृपण मितभक्षी है। (घ) (प्रसाधनवर्ग) स्त्रियाँ प्रायः शृंगार-प्रिय होती हैं। वे सज-धज कर रहना चाहती हैं। वे सिर में सिन्दूर लगाती हैं, माथे पर टीका और वेंदी लगाती हैं, आँखों में काजल, देह में उबटन, नाखूनों पर नेल पालिश, गालों पर रूज, ओठों पर लिपस्टिक, मुँह पर स्नो और कीम, पैरों में महावर और हाथों पर मेंहदी लगाती हैं। ड्रेसिंग टेबुल पर सिंगारदान और शृंगार का सामान रखती हैं। कुछ स्त्रियाँ जुड़ा बाँधती हैं, कुछ जुड़े में जाली लगाती हैं और कुछ बालों में काँटा लगाती हैं।

संकेतः—(क) १.जगतस्तस्थुषश्च । २. पितरी । ३. निखिलं जगदेव नश्वरम् , नितराम् । ४. यदीच्छिसि वशीकर्तुम् , परापवादात् , निवारय । ५. प्रियानाशे कृत्स्नं किल जगदरण्यं हि भवित । ६. जगजीणरिण्यं भवित च कलत्रे ध्परते । ७. उदग्रज्ञुतत्वाद् वियति । ८. पतिन्त सन्ति । ९. पतितवन्ति । (ख) २. पाशान् । ४. हिन्ध । ५. न नः विचिद् हिद्यते । ६. भित्ता, हित्त्वा, कृत्वा गर्वभरोहणम् । येन केन प्रकारेण प्रसिद्धः पुरुषो भवेत् । ८. अभिनत् । ९. षट्कणो भिद्यते मन्त्रः । १०. माषपेषं पिनष्टि । (ग) १. अलंकरिष्णवः , प्रसाधयन्ति, पाद्र्रज्जनं योजयन्ति, अयस्का-रयन्ति । २. अरुनुदत्वं महतां ह्याोचरः । ३. सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यम् । ४. प्रयंवदः, वशंवदः, वाचंयमः, अरिन्दमः, अभ्रंलिहः, विधुन्तुदः, ललाटन्तपः, मितंपचः । (घ) अलंकरिष्णवो भवन्ति । वेणीवन्धं बध्निन्त, वेणीजालं युज्जन्ति, केश्चूक्तन् ।

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शब्दकोष-१३०० + २५ = १३२५] अभ्यास ५३

(व्याकरण)

(क) ग्रामः (गाँव), नगरी (कस्बा), नगरम् (शहर), कुटी (कुटिया), भवनम् (मकान), प्रासादः (महल), मार्गः (सड़क), राजमार्गः (मुख्य सड़क), मृन्मार्गः (कची सड़क), हढमार्गः (पक्की सड़क), रथ्या (चीड़ी सड़क), वीथिका (१. गली, २. गेल्री), पड़का, ६६ मार्गः (पक्षा सड़का), रय्या (चाड़ा सड़का), वायका (र. गला, र. गलरा), नगरपालिका (म्युनिसिपलिटी), निगमः (कापीरेशन), नगराध्यक्षः (म्युनिसिपल चेयरमैन), निगमाध्यक्षः (मेयर), चतुष्यथः (१. चौक, २. चौराहा), पुरोद्यानम् (पार्क), रक्षिस्थानम् (थाना), कोटपालिका (कोतवाली), जनमार्गः (आम रास्ता), उपवेशग्रहम् (ड्राइंग रूस), भोजनग्रहम् (डाइनिंग रूम), स्नानागारम् (वाथ रूम), भाण्डागारम् (स्टोर रूम)। (२५)

च्याकरण (नामन्, शर्मन्, हिंस्, भञ्ज्, अपत्यार्थक प्रत्यय)

१. नामन् और शर्मन् शब्दों के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द ० ६९, ७०)

२. हिंस् और भञ्ज् धातुओं के रूप स्मरण करो । (देखो धातु० ८५, ८६)

नियम २६० - सारे तद्धित के लिए यह नियम मुख्यतया स्मरण कर लें। (तद्धितेष्वचामादेः, किति च) जिस तद्धित प्रत्यय में से ण्, ञ्या क् हटा होगा, वहाँ पर शब्द के प्रथम स्वर को वृद्धि हो जायगी। (१) ज् हटेवाले प्रत्यय। जैसे — अज्, इज्, दज्, ठञ्। (२) ण् हटेवाले प्रत्यय—अण्, छण्, ण्य। (३) क् हटेवाले = टक्, ढक्।

नियम २६१—(अण् प्रत्यय) अपत्य अर्थात् पुत्र या पुत्री के अर्थ में इन स्थानों पर अण् प्रत्यय होगा। अण् का अ रोष रहेगा। राब्द के प्रथम अक्षर को वृद्धि। (यस्येति च) शब्द के अन्तिम अ, आ, इ और ई का लोप हो जायगा। (१) (तस्या-पत्यम्) अपत्य अर्थ में अण् (अ) होगा । वसुदेवस्यापत्यम्> वासुदेवः । उपगुं >औप-गवः। (२) (अश्वपत्यादिभ्यश्च) अश्वपति आदि से अपत्य अर्थ में अण्। अश्वपति > आश्वपतम् । गणपति > गाणपतम् । (३) (शिवादिभ्योऽण्) शिव आदि से अण् । शिव-स्यापत्यम्> शैवः । गङ्गा > गाङ्गः । (४)(ऋष्यन्धकवृष्णि०) ऋषि, अन्धकवंशी, वृष्णिवंशी और कुरुवंशी से अपत्यार्थ में अण् । वसिष्ठ> वासिष्ठः । विश्वामित्र > वैश्वामित्रः । अनिरुद्ध आनिरुद्धः । नकुल > नाकुलः । सहदेव > साहदेवः । (५) (मातुरुत्संख्या०) कोई संख्या, सम् या भद्र पहले होगा तो भातृ शब्द से अपत्यार्थ में अण् । मातृ को मातुर् हो जायगा । द्विमातु> द्वैमातुरः । षण्मातृ> षाण्मातुरः । संमातृ> सांमातुरः ।

नियम २६२-(इज्प्रत्यय) अपत्य अर्थ में इन स्थानों पर इज् प्रत्यय होगा । इञ्का इ शेष रहेगा। शब्द के प्रथम अक्षर को वृद्धि। हरिवत् रूप चलेंगे। (१) (अत इञ्) अकारान्त शब्दों से इञ्। दशरथ>दाशरथिः (राम)। दक्ष>दाक्षिः। समित्रा> सौमित्रिः (लक्ष्मण)। द्रोण> द्रौणिः (अश्वत्थामा)। (२) बाह्वादिभ्यश्च) बाहु आदि से इज्। उ की गुण ओ होकर अव् हो जाएगा। बाहुः> बाहिवः।

नियम २६३-(ढक् प्रत्यय) नत्य अर्थ में इन स्थानों पर ढक् होगा। ढ को एय हो जायगा। प्रथम स्वर को दृदि। (१) (स्त्रीभ्यो ढक्) स्त्रीलिंग शब्दों में ढक् (एय)। विनता > वैनतेयः। भगिनी > भागिनेथः। (२) (इयचः) दो स्वरवाले स्त्रीलिंग शब्दों से ढक्। कुन्ती > कौन्तेयः, माद्री > माद्रेयः, राधा > राधेयः, गङ्का > गाङ्गेयः।

नियम २६४—(ण्य प्रत्यय) अपत्यार्थ में ण्य । य शेष रहेगा । प्रथम स्वर को वृद्धि । (१)(दित्यदित्या०) दिति, अदिति, आदित्य, पति अन्तवाले शब्दों से ण्य। दिति> दैत्यः, अदिति > आदित्यः, आदित्यं > आदित्यः, प्रजापति > प्राजापत्यः । (२)

CC-(श्रुप्रजना क्रिकेसरे प्राव) । कु द्वांबिराक्षी कानकावारिक एके एका वांबिस्क By की व्यवका विक्रिया एक निकारका Kosha

संस्कृत वनाओ—(क) (नामन्, शर्मन् शब्द) १. उसने अपने पुत्र का नाम रघु रखा। २. मानी लोग प्राणों और सुख को सरलता से छोड़ देते हैं। ३. अपने किये कर्म को कौन नहीं भोगता (कर्मन्) ? ४. वह स्थलमार्ग से चल पड़ा (वर्त्मन्)। ५. वे सन्मार्ग से जरा भी नहीं हटे (सद्वर्त्मन्)। ६. उसने मन, वचन, शरीर और कर्म से देशसेवा की। ७. उस वचन ने उस पर पुरा असर किया (मर्मन्)। (ख) (हिंस्, भञ्ज् धातु) १. जो निस्पराध जीवों की हिंसा करता है, वह पापी होता है (हिंस्)। २. शुभ कर्म पापों को नष्ट करता है (हिंस्)। ३. किसी भी जीव को न मारो । ४. बन्दर वगीचे को तोड़-फोड़ रहा है (भझ्)। ५. राम ने धनुष को तोड़ दिया (भञ्जू)। ६. कुलमर्यादाओं को न तोड़े। ७. यह सुन्दर भाषण उसकी वाग्मिता को व्यक्त करता है (वि + अञ्जु)। (ग) (अपत्यार्थक) १. दाशरिय राम ने जामदग्न्य राम को निर्भीकता से उत्तर दिया। २. वासुदेव ने कुन्ती के पुत्र अर्जुन का सारिथ होना स्वीकार किया। ३. पृथा के पुत्र भीम ने धतराष्ट्र के पुत्र दुःशासन को मार दिया। ४. राधा के पुत्र कर्ण ने द्रोण-पुत्र अश्वत्थामा से कहा — में सारिथ हो ऊँ या सार्राथ-पुत्र, अथवा जो कुछ भी होऊँ, इससे क्या ? सत्कुल में जन्म होना भाग्याधीन है, पर पुरुषार्थ करना मेरे हाथ में है। ५. माद्री के पुत्र नकुल और सहदेव युधिष्ठिर के साथ ही वन में गए। ६. सुमित्रा के पुत्र लक्ष्मण ने कभी भी राम का साथ नहीं छोड़ा। (घं) (पुरवर्ग) नगर में सजन, दुर्जन, विद्वान्, अविद्वान्, धनिक, निर्धन, बड़े-छोटे, हिन्दू, सुसलमान, ईसाई सभी रहते हैं। नगर की उन्नति सभी नागरिकों का कर्तव्य है। सत्य, अहिंसा, प्रेम, सद्भाव और सहानुभृति से जन-जीवन सखमय होता है। अतः इन गुणों को अपनाना और इनका उपयोग करना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है। प्रत्येक देश में गाँव, करने और नगर होते हैं। गाँवों में झोपड़ियाँ और कुटिया होती हैं, परन्तु नगरों में मकान और महल अधिक होते हैं। शहरों में पक्की सड़कें, चौड़ी सड़कें, मेन रोड और गलियाँ भी होती हैं। वहाँ पार्क, बचों के पार्क बिजलीघर वाटर-वर्क्स. थाना. कोतवाली भी होते हैं। छोटे शहरों में म्युनिसिपलिटी होती है और उसका अध्यक्ष म्युनिसिपल-चेयरमैन होता है। बड़े शहरों में कार्पोरेशन होता है और उसका अध्यक्ष मेयर होता है। इनका काम होता है कि नगर की सरक्षा करें और नगर की उन्नति के लिए सभी साधनों को अपनावें। नगरों में प्रत्येक घर में साधारणतया ड्राइंग्रूम, डाइनिंग रूम, बाथरूम, स्टोर रूम, रसोई, सोने का कमरा, रहने का कमरा, शौचालय, मूत्रालय और अतिथिगृह होते हैं। कुछ मकानों में यज्ञाला और बगीचे भी होते हैं।

संकेतः—(क) १. नाम्ना रघुं चकार । २. अस्न् शर्म च । ३. कर्म कः स्वकृतमत्र न मुक्क । ४. प्रतस्थे स्थलवत्मंना । ५. सद्वर्तमंनो रेखामात्रमपि न व्यतीयुः । ६. मनीवाक्काय-कर्मभिः । ७. तस्य हृदयमर्मास्पशत् । (ख) २. दुष्कृतानि हिनस्ति । ४. भनक्ति । ७. व्यनक्ति । (ग) ३. पार्थः धार्तराष्ट्रम् । ४. स्तो वा स्तपुत्रो वा । दैवायत्तं कुले जनम मदायत्तं तु पौरुषम् । ६. मानिध्यम् । (घ) ज्येष्ठाः, कनिष्ठाः, यवनाः, ईसुमतानुयायिनः, धारणम् , उटजाः, वालोबानानि,

CC-O. Dr. Kamolev Tripathi Collection at Sarai (CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शब्दकोष-१३२५ + २५ = १३५०] अभ्यास ५४

(व्याकरण)

(क) आपणः (दूकान), विपणिः (स्त्री॰, वाजार), महाइष्टः (मंडी), प्राकारः (परकोटा), वृतिः (स्त्री॰, वाड़, घेरा), भित्तिः (स्त्री॰, दीवार), द्विभूमिकः (दुमंजिला), त्रिभूमिकः (तिमंजिला), चतुःशालम् (चारों ओर मकान, बीच में ऑगन), उटजः (झोपड़ी), मण्डपः (१. मंडा, २. टेन्ट), अन्तःपुरम् (रनवास), देहली (देहली), प्रपा (प्याऊ), पथिकालयः (मुसाफिरखाना), अट्टः (अटारी, बुर्जा), वलमी (छजा), गोपुरम् (मुख्य द्वार),वेदिका (वेदी), द्वारम् (द्वार), चत्वरम् (चबूतरा), अलिन्दः (घर के बाहर का चबूतरा), अजिरम् (ऑगन), निश्रेणिः (सीढ़ी, काठ आदि की), सोपानम् (सीढ़ी)। (२५)

व्याकरण (ब्रह्मन् , अहन् , रुध् , मुज् , चातुर्राथिक प्रत्यय)

१. ब्रह्मन् और अहन् शब्दों के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० ७१, ७२)

२. रुध् और भुन् धातुओं के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ८७, ८८)

नियम २६५—(रक्तार्थक) रंग आदि से रँगने अर्थ में ये प्रत्यय होते हैं—(१) (तेन रक्तं रागात्) जिससे रंगा जाए, उससे अग् (अ) प्रत्यय । प्रथम स्वर को वृद्धि । कषाय > काषायम् (गेरु से रँगा हुआ वस्त्र) । माञ्जिष्टम् (मँजीठ से रँगा हुआ) । (२) (नील्या अन्) नीली शब्द से अन् (अ)। नीली> नीलम् (नील से रँगा हुआ)। (३) (पीतात्कन्) पीत से कन् (क)। पीतकम् (पीले रंग से रँगा हुआ)। (४) (इस्द्रा०) हरिद्रा से अञ् (अ)। हारिद्रम् (हल्दी से रँगा हुआ)।

नियम २६६—(कालार्थक) किसी नक्षत्र से युक्त समय या पूर्णिमा होगी तो ये प्रत्यय होंगे। (१) (नक्षत्रेण युक्तः कालः) नक्षत्र से अण् (अ)। पुष्य>पौषम् अहः, पौषी रात्रिः (पुष्य से युक्त दिन या रात)। (२) (सास्मिन्०) नक्षत्र से युक्त पूर्णिमा होने पर मास का वह नाम पड़ता है। अण् (अ) प्रत्यय। पुष्य से युक्त मास-पौषः। चित्रा > चैत्रः । विशाखा > वैशाखः । ज्येष्ठा > ज्येष्ठः । अषाढा > आषाढः ।

नियम २६७—(देवतार्थक) देवता अर्थ में ये प्रत्यय होते हैं। (१) (सास्य देवता) देवता अर्थ में अण् (अ)। इन्द्र> ऐन्द्रं हविः (इन्द्र है देवता जिसका)। पशुपति> पाञ्चपतम्। (२) (सोमाट् ट्यण्) सोम से ट्यण् (य)। सोम >सौम्यम्। (३) (वाय्वृतु॰) वायु आदि से यत् (य) । वायु > वायव्यम् । पितृ > पित्र्यम् । (४) (अग्नेर्टक्) अग्नि से दक्। द को एय। अग्नि > आग्नेयम्।

नियम २६८—(समूहार्थक) समूह अर्थ में ये प्रत्यय होते हैं:—(१) (तस्य समूहः) समूह अर्थ में अण् (अ)। काक>काकम् (काक-समूह)। बक> बाकम्। (२) (भिक्षादिभ्योऽण्) भिक्षा आदि से अण् (अ)। भिक्षा>भैक्षम्। युवति>यौवनम् (स्त्री-समृह)। (३) (ग्रामजनवन्धुभ्यस्तल्) ग्राम आदि से तल् (ता)। ग्रामता, जन> जनता (जनसमूह) । बन्धु > बन्धुता । (४) (अनुदात्तादेरम्) इनसे अम् (अ) होगा । कपोत > कापोतम् । मयूर > मायूरम् (मयूर-समूह) ।

नियम २६९-(अध्ययनार्थक) पढ़ने या जानने अर्थ में ये प्रत्यय होते हैं:-(१) (तदधीते तद्वेद) पढ़ने या जानने अर्थ में अण् (अ)। (न खाम्यां) संयुक्ताक्षरों में यू से पहले ऐ, व् से पहले औ लगेगा। व्याकरण>वैयाकरणः (व्याकरण पढ़ने या जाननेवाला)। न्याय> नैयायिकः। (२) (हमादिभ्यो बुन्) हम आदि से बुन् (अक)

CC-ऐ कि मिक्रामां का प्रमास्त्रका के Sarai (CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संस्कृत बनाओ—(क) (ब्रह्मन् , अहन् शब्द) १. ब्रह्म नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त-स्वभाव सर्वज्ञ और सर्वशितियुक्त है। २. सभी दानों में विद्या-दान श्रेष्ट है। ३. जो ब्रह्म को जानता है, वह ब्राह्मण होता है। ४. वह वेद में (ब्रह्मन्) निष्णात है। ५. चन्द्रमा चाण्डाल के घर से (वेश्मन्) चाँदनी को नहीं हटाता । ६. कवच (वर्मन्) धारण करो, त्यौहार (पर्वन्) मनाओ, वेद (ब्रह्मन्) पढ़ो, वर में (सद्मन्) सुख से रहो, ग्रुभ लक्षण (लक्ष्मन्) धारण करो । ७. दिन ज्योति का प्रतीक है और रात्रि अन्धकार की । ८. दिन में ऐसा काम न करो, जिससे रात्रि दुःखद प्रतीत हो । ९. दिन प्रायः बीत गया है। (ख) (रुध्, भुज्धातु) १. वह बाड़े में गायों को रोकता है। २. प्राण और अपान की गति को रोककर प्राणायाम करे (रुध्)। ३. आशा का बन्धन ही स्त्रियों के अतिकोमल हृदय को वियोग के समय रोकता है (रुष्)। ४. बिस्तरे पर बैठकर न खावे (भुज्)। ५. पापी आदमी सैकड़ों दुःखों को भोगता है। ६. उसने राज्य का धरोहर की तरह पालन किया (भुज् , पर०)। ७. यह अकेला ही सम्पूर्ण पृथ्वी का पालन करता है (भुज्)। (ग) (चातुर्शिक प्रत्यय) १. संन्यासी गेठआ वस्त्र पहनते हैं। कुछ लोग नील से रॅंगे हुए वस्त्रों को पहनते हैं, कुछ पीले रंग से रॅंगे हुए और कुछ हल्दी से रॅंगे हुए वस्त्रों को । २. संस्कृत में महीनों के नाम नक्षत्रों के नामों से पड़े हैं। पूर्णिमा के दिन जो नक्षत्र होता है, उसके नाम से ही वह मास बोला जाता है। जैसे — चित्रा नक्षत्र से युक्त पूर्णिमा होने पर चैत्र मास, विशाखा से वैशाख, ज्येष्ठा से ज्येष्ठ, अषाढा से आषाढ, श्रावणा से श्रावण, भद्रपदा से भाद्रपद, अश्विनी से आश्विन, कृत्तिका से कार्तिक, मृगशिरा से मार्गशीर्ष, पुष्य से पौष, मघा से माघ और फलानी से फालगुन नाम पड़े हैं। ३. प्राचीन समय में बहुत से अद्भुत गुणोंवाले अस्त्र थे। जैसे — आग्नेय, वारुण, वायव्य, पाशुपत आदि। ४. जनता में प्रेम और बन्धुता होनी चाहिए। ५. काक-समूह, बक समूह, कपोत-समूह और मयूर समूह, ये अपने समूह के साथ ही रहते, उड़ते और बैठते हैं। ६. वैयाकरण व्याकरण पढ़ता है, नैयायिक न्याय को, मीमांसक मीमांसा को और वेदान्ती वेदान्त को। (घ) (पुरवर्ग) बड़े शहरों में बाजार, मंडी और दूकानें होती हैं, जहाँ से नगरनिवासी सामान लाकर अपना आवश्यक कार्य करते हैं। शहरों में दुमंजिले, तिमंजिले, चौमंजिले और आठ मंजिले मकान भी होते हैं। सीढ़ी के द्वारा ऊपर की मंजिलों पर पहुँचते हैं। आजकल बम्बई, कलकत्ता आदि बड़े शहरों में लिफ्ट के द्वारा ऊपर की मंजिल पर सरलता से पहुँच जाते हैं और उससे ही उतर आते हैं। प्राचीन नगरों के चारों ओर परकोटा या बाड़ होती थी। मकानों में अटारी, छजा, द्वार, मुख्यद्वार, आँगन, सीढ़ी, दीवार, चबूतरा, देहली, रनवास, मंडप भी होते थे। नगरों में प्याऊ, मुसाफिरखाने आदि भी होते थे।

संकेत (क) २. ब्रह्मदानं विशिष्यते । ५. वेश्मनः । ६. विधिवत् संपादय । ९. परिणत-प्रायमहः । (ख) १. ब्रजम् । ३. आशावन्धः । ४. शयनस्थो न भुक्जीत । ५. भुङ्कः । ६. न्यास-मिवाभुनक् । ७. भुनक्ति । (घ) चतुर्भूमिकाः, अष्टभूमिकाः प्रसादाः, उत्थापनयन्त्रेण,

जर्ध्वभू मिम् , अवतरित ।

शब्दकोष-१३५० + २५ = १३७५] अभ्यास ५५

(व्याकरण)

(क) गवाक्षः (खिड़की), छिदः (स्त्री०, छत), पटलगवाक्षः (स्काई लाइट), वरण्डः (बरामदा), प्रकोष्ठः (पोर्टिको), कुष्टिम्म् (फर्रा), कपाटम् (किवाड़), अगलम् (अगला, किवाड़ के पीछे का डंडा), कीलः (चटकनी), नागदन्तकः (खूँटी), कक्षः (कमरा), महाकक्षः (हॉल), लघुकक्षः (कोटरी), स्तम्भः (खंबा), दारु (नपु०, लकड़ी), काचः (काँच), अश्मचूर्णम् (सीमेट), प्रलेपः (फ्रास्टर), तृणम् (फूँस), त्रपु (नपु०, टीन), त्रपुफलकम् (टीन की चहर), लौहफलकम् (लोहे की चहर), प्रणालिका (नाली), खर्परः (खपड़ा)। (२४)। (घ) खर्ररावृतम् (खपड़ेल का)। (१)

च्याकरण (हविष् , धनुष् , युज् , तन् , शैषिक प्रत्यय)

१. हविष् और धनुष् शब्दों के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० ७३, ७४)

२. युज् और तन् धातुओं के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ८९, ९०)

नियम २७०—(तत्र जातः, तत्र भवः) सप्तम्यन्त शब्दों से उत्पन्न होना आदि अर्थों में शैषिक प्रत्यय अण् आदि होते हैं। मुख्य प्रत्यय ये हैं — (१) (शेषे) अपत्य आदि से शेष अर्थों में अण् आदि होते हैं। चक्षुष्>चाक्षुषं रूपम् (आँख से देखने योग्य), श्रवण>श्रावणः शब्दः । (२) (राष्ट्रावारपाराद्०) राष्ट्र शब्द से घ (इय) और अवारपार से ख (ईन) होते हैं। राष्ट्रे जातः> राष्ट्रियः। अवारपार> अवारपारीणः। (३) (ग्रामाद्यक्त्री) ग्राम से य और खर्ञ् (ईन) होते हैं। ग्राम्यः, ग्रामीणः। (४) (दक्षिणापश्चात्॰) दक्षिणा आदि से त्यक् (त्य) होता है। दक्षिणा> दाक्षिणात्यः। पश्चात् >पाश्चात्त्यः । पुरस् >पौरस्त्यः (५) (द्युप्रागपागुदक् ०) दिव् , प्राच् , अपाच् , उदच् और प्रतीच् से यत् (य) होता है । दिव्यम् , प्राच्यम् , अपाच्यम् , उदीच्यम् , प्रतीच्यम् । (६) (अमेहकतिसेत्रेभ्य॰) अमां, इह, क, तः और त्र प्रत्ययान्त से त्यप् (त्य) होता है। अमात्यः, इहत्यः, कत्यः, ततस्त्यः तत्रत्यः। (७) (त्यदादीनि च) त्यद् आदि सर्वनामों की वृद्ध संज्ञा होने से छ (ईय) प्रत्यय। तदीयः। यदीयः। (८) (बृद्धाच्छः) शब्द का प्रथम अक्षर दीर्घ हो तो छ (ईय) प्रत्यय । शाला > शालीयः। मालीयः। (९) (भवतष्ठक्छसौ) भवत् शब्द से ठक् (क) और छस् (ईय) होते हैं। भावत्कः, भवदीयः। (१०) (युष्मदस्मदो०) युष्मद्, अस्मद् शब्द के ये रूप बनते हैं-युष्मदीयः (तुम्हारा), यौष्माकीणः, यौष्माकः, तांवकीनः (तेरा), तावकः, त्वदीयः । अस्मदीयः, आस्माकीनः, आस्माकः, मामकीनः, मामकः, मदीयः। (११) (कालाहुञ्) काल्वाचकों से ठञ् (इक)। मास> मासिकम्। वार्षिकम्। (१२) (सायंचिरं०) सायंचिरं आदि के अन्त में तन लग जाता है। सायन्तनम्, चिरन्तनम्, पुरातनम्, सनातनम्।

नियम २७१—(प्रभवति) उत्पन्नः होना अर्थ में अण् (अ)। हिमवत्> हैमवती गङ्गा।

नियम २७२—(अधिकृत्य कृते॰) जिस विषय को लेकर ग्रन्थ बनाया जाए, वहाँ अण् आदि। शकुन्तला > शाकुन्तलम्। कहानी आदि में प्रत्यय का लोप। वासवदत्ता।

नियम २७३—(तेन प्रोक्तम्) कृति अर्थ में अण आदि । पाणिनि >पाणिनीयम् । नियम २७४—इन अर्थों में भी अण् (अ) या इक लगता है । (१) (तद्-गच्छति॰) रास्ता या दूत का जाना । सुध्न >स्त्रीध्नः । (२) (सोऽस्य निवासः) निवास

अर्थ में अण् । सीच्नः । (३) (तस्येदम्) इसका यह है अर्थ में अण् । शरद् > शारदम् ।

संस्कृत वनाओ—(क) (हविष् , धनुष् शब्द) १. अग्नि विधिपूर्वक हुत हवि को देवों को पहुँचाता है। २. वह सामग्री और धी से हवन करता है। ३. अग्नि पर घी को (सर्पिष्) पिघलाओं। ४. आकाश में तारों (ज्योतिष्) की ज्योति (रोचिष्) चमक रही है। ५. उसने धनुष पर अमोघ बाण रखा। ६. आँख से (चक्षुष्) देखकर आगे पैर रखो। ७. यह शरीर विना कृत्रिमता के ही सुन्दर है (वपुष्)। ८. इसका शरीर हर्ष से रोमांचित है। ९. आयु मर्मस्थलों की रक्षा करती है (आयुप)। १०. प्राण ही जीवों की आयु है। (ख) (युज् , तन् धातु०) १. वे सुख के अर्थ में विषय शब्द का प्रयोग नहीं करते हैं। २. आत्मा को परमात्मा में लगाओ। ३. उसने आशीर्वाद दिया। ४. कल नाटक खेला जाएगा (प्रयुज्)। ५. ऋषि असाधुदर्शी हैं, जो इस शकुन्तला को आश्रम के कार्यों में लगाते हैं (नियुज्)। ६. उन्मत्त मनुष्य को मूर्वता भी नहीं छोड़ती है (वियुज्)। ७. सौभाग्य से उसकी जान नहीं गई (वियुज्)। ८. विद्या का सत्कार्य में उपयोग करें (उपयुज्)। ९. मलिन भी चन्द्रमा का चिह्न शोभा को करता है (तन्)। १०. सज्जनों की संगति क्या मंगल नहीं क है (आतन्)? ११. सत्संगति दिशाओं में कीर्ति को फैलाती है (तन्)। १२. नौकरों ने शामियाना फैलाया (वितन्)। (ग) (शैषिक प्रत्यय) १. पौरस्त्य और पाश्चात्त्य संस्कृतियों में भेद होते हुए भी पर्याप्त समानता है। दोनों ही मौलिक सिद्धान्तों को मानते और अपनाते हैं। पुरातन हो या नूतन, सभी संस्कृतियों ने विश्व को लाभ पहुँचाया है। २. हे गोविन्द, तुम्हारी वस्तु तुम्हें भेंट करते हैं। ३. पाणिनीय अष्टाध्यायीसारे व्याकरणों का सार है और विद्वत्ता की पराकाष्ठा है। ४. विद्यालयों और महाविद्यालयों में पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक, पाण्मासिक और वार्षिक परीक्षाएँ भी होती हैं। ५. कन्या पराई संपत्ति है। (ध) (गृहवर्ग) निवास के लिए घरों की आवश्यकता सदा रहती है और सदा रहेगी । समयानुसार इनकी निर्माण-विधि में अन्तर होता रहा है। प्राचीन समय में ग्रामों में मकान फूँस के या खपड़ैल के होते थे। आजकल भी ग्रामों में अधिक मकान फॅस और खपड़ैल के हैं। नगरों में अधिकांश मकान पक्की ईंगों के होते हैं। उनमें पक्की ईंटों की छते होती हैं। खिड़कियाँ, स्काईलाइट, बरामदा, फर्श, किवाड़, चटकनी, खूँटी आदि भी होती हैं। मकानों में सीमेंट का प्लास्टर होता है। कुछ मकानों पर टीन या लोहे की चहरें भी लगाई जाती हैं। पहाड़ में मकानों में लकड़ी और काँच अधिक लगाया जाता है, जिससे खिड़की आदि वन्द होने पर भी प्रकाश अन्दर आ सके और कमरों में अधिरा न हो।

संकेतः—(क) १. वहति । २. हिवषा, जुहोति । ३. सिर्पः द्रावय । ४. रोचीषि द्योतन्ते । ५. समधत्त । ७. इदं किलाच्याजमनोहरं वपुः । ९. आयुर्ममाणि रक्षति । १० प्राणो हि भूताना मायुः (ख) १. मुखार्थे विषयशब्दं न प्रयुक्तते । ३. आशिषं युयुजे । ४. प्रयोक्ष्यते । ५. आश्रमधर्मे नियुक्ते । ६. वियुक्ते । ७. प्राणेर्न व्ययुज्यत । ८. उपयुक्तीत । ९. लक्ष्म लक्ष्मी तनोति । १०. सङ्गः सतां किमु न मङ्गलमातनोति । १२. चन्द्रातपं व्यतानिषुः । (ग) २. तुभ्यमेव समर्पये । ४. पाक्षिक्यः, वाधिक्यः । ५. अथौं हि कन्या परकीय एव । (घ) पक्षेष्टकानिमितानि, अवस्द्धेष्वि ।

शब्दकोष-१३७५ + २५ = १४००] अभ्यास ५६ (व्याकरण)

(ग) अङ्ग (१. संबोधन, २. आदरार्थमें), अथ (१. मंगलार्थक, २. प्रारम्भ में, ३. बाद में, ४.प्रकार्थक), अथांकम् (१. और क्या, २. हाँ), अधिकृत्य (बारे में), अपि (१. भी, २. प्रकार्थक, ३. संराय), आम् (हाँ), इति (१. कथनोद्धरण में, २. अतएव), इव (१. सहरा, २. मानो), कचित् (आशा करता हूँ कि), क्षः कि (बहुत अन्तर-सूचक), कामम् (मले ही), किमृत (क्या मला), किल (१. वस्तुतः, २. ऐसा कहते हैं, ३. आशा अर्थ में), खल्ल (१. वस्तुतः, २. प्रार्थनासूचक, ३. निषेधार्थक, ४. क्योंकि), ततः (१. इसिल्ए, २. तो, ३. वहाँ से, ४. आगे), तथा (१. वैसा, २. और भी, ३. हाँ), तावत् (१. तो, २. तव तक, ३. अभी, ४. वस्तुतः), दिष्ट्या (१. माग्य से, २. वधाई देना), नः न (अवस्य), न न (१. अवस्य, २. कप्या, ३. क्या, ४. चूँकि), वत (खेद, हर्ष), यथा तथा (१. जैसा-वैसा, २. इस प्रकार कि, ३. चूँकिः इसिल्ए, ४. यदि तो, ५. जितना उतना), यावत् त्वावत् (१. उतना ही जितना, २. सब, ३. जवतकः त्वावक, ४. ज्योंही त्योंही), वर न (अञ्छा है न कि), स्थाने (उचित है)। (२५)

ट्याकरण (पयस्, मनस्, ज्ञा धातु, मत्वर्थक प्रत्यय)

१. पयम् और मनस् शब्दों के रूप स्मरण करो । (देखो शब्द॰ ७५, ७६)

२. ज्ञा धातु के रूप स्मरण करो । (देखो धातु० ९६)

नियस २७५—(१) (तदस्यास्त्यस्मिनिति मतुप्) इसके पास है या इसमें है, इन अथों में मतुप् प्रत्यय होता है। इसका मत् शेष रहता है। पुं॰ में भगवत् के तुल्य रूप चलेंगे, स्त्री॰ ई लगाकर नदीवत्, नपुं॰ में जगत् के तुल्य। (२) (मादुप-धायाश्च॰) शब्द के अन्त में या उपधा में अ, आ या म्हो तो मत् के म को व होता है, अर्थात् मत् > वत्। धन > ६नवान् (धनयुक्त)। गुणवान्, विद्यावान्, धीमान्, श्रीमान्, बुद्धिमान्। यव आदि के वाद म को व नहीं होगा। यवमान्, भूमिमान्। (३) (झयः) वर्ग के १ से ४ के वाद मत् को वत् होगा। विद्युत् > विद्युत्वान्। (४) (रसादिभ्यश्च) रस आदि से मतुप प्रत्यय होता है। रसवान्, रूपवान्।

नियम २७६—(अत इनिटनौ) अकारान्त शब्दों से युक्त या वाला अर्थ में इनि (इन्) और टन् (इफ) प्रत्यय होते हैं। दण्ड> दण्डी, दण्डिक: (दण्डवाला)। धन>६नी, धनिकः। इन-प्रत्ययान्त के रूपं पुं० में करिन् के तुल्य, स्त्री में ई लगा-कर नदीवत्, नपुं० में मनोहारिन् के तुल्य।

नियम २७८—(लोमादिपामादि०) (१) लोमन् आदि से श प्रत्यय । लोमन्>लोमशः (लोमर्क्त)। रोमन्>रोमशः। (२) पामन् आदि से न प्रत्यय । पामन्>पामनः (खाजवाला), अङ्ग> अङ्गना (स्त्री), लक्ष्मी> लक्ष्मणः (लक्ष्मीयुक्त)। (३) पिच्छ आदि से इलच् (इल)। पिच्छ>पिच्छिलः। उरस्> उरसिलः।

नियम २७८—(तदस्य संजातं०) युक्त अर्थ में तारका आदि शब्दों से इतच् (इत) प्रत्यय होगा। तारका > तारिकतं नभः। पुष्पितः, कुसुमितः, दुःखितः,अङ्कुरितः,क्षुधितः।

संस्कृत बनाओ-(क) (पयस् , मनस् शब्द) १. माता शिशु को दूध पिला रही है। २. साँप को दूध पिलाना केवल उसका विष बढ़ाना है। ३. महारमाओं के मन वचन (वचस्) और कर्म में एकरूपता होती है, पर दुरात्माओं के मन वचन और कर्म में अन्तर होता है। ४. मैंने मन से भी कभी आज तक तम्हारा बरा नहीं किया है। ५. मेरा मन सन्देह में ही पड़ा है। ६. दृढ़ निश्चयवाले मन को और नीचे की ओर बहते हुए पानी को कौन रोक सकता है ? ७. हितकारी और मनोहर वचन दुर्लभ है। ८. यशस्वी को शत्रुओं से अपने यश की रक्षा करनी चाहिए। ९. विमल और कलुपित होता हुआ चित्त बता देता है कि कौन उसका हितैषी है और कौन शत्रु है (चेतस्)। १०. उसकी बात पर दुर्भाव का आरोप न लगाओ। (ख) (ज्ञा धातु) १. मैं तपस्या के बल को जानता हूँ। २. जानता हुआ भी मेधावी संसार में जड़ के तृत्य आचरण करे । ३. हमें घर जाने के लिए आज्ञा दीजिए (अनुज्ञा) । ४. मैं करूँगा, यह प्रतिज्ञा करता हूँ, राम दुवारा नहीं कहता (प्रतिज्ञा)। ५. निर्धनों का अपमान न करो (अवज्ञा) । ६. सौ रुपया लिया है, इस बात से मुकरता है (अपज्ञा) । ७. बहू की सास से पटती है (संज्ञा)। (ग) (मत्वर्थक प्रत्यय) १. बलवान्, धनवान्, गुणवान्, बुद्धिमान्, रूपवान् और श्रीमान् सभी को अपनी विशेषता का अभिमान होता है। र. दण्डी, धनी, दानी, मानी, ज्ञानी और गुणी, ये अपने गुणों से दूसरों को उपकृत करते हैं। ३. यशस्वी, तेजस्वी, वर्चस्वी, मेधावी और वाग्मी अपने ज्ञान और तेज से दूसरों का पथप्रदर्शन करते हैं। (घ) (अव्ययवर्ग) १. श्रीमन् (अङ्ग), बच्चे को पढ़ा दीजिए । २. अव (अथ) राब्दानुशासन प्रारम्भ होता है । ३. क्या यह काम कर सकते हैं ? ४. अब मैं ग्रीष्म ऋतु के बारे में गाऊँगा । ५. क्या यह चोर तो नहीं है ? ६. मैं विदेशी हूँ, अतः पूछता हूँ। ७. वह कृष्ण की हँसी-सा कर रहा था। ८. आशा करता हूँ कि आप स्वकुशल हैं। ९. कहाँ तपस्या और कहाँ तुम्हारा कोमल शरीर। १०. भले ही वह मेरे सामने न वैठे। ११. मुझ पर यम भी प्रहार नहीं कर सकता है, अन्य हिंसकों का तो कहना ही क्या ? १२. भाग्य से विपत्ति रल गई। १३. महाराज आपको विजय के लिए बधाई है। १४. वैसा करना, जिससे राजा की कृपा का पात्र हो जाऊँ । १५. मुझे भार उतना दुःख नहीं दे रहा है, जितना बाधित-प्रयोग । १६. जितना पाया, उतना खा लिया। १७. जबतक एक दुःख समाप्त नहीं होता, तबतक दूसरा उपस्थित हो जाता है। १८. प्राणत्याग अच्छा है, पर मूखों का साथ नहीं।

संकेत:—(क) १. पाययित । २. पयःपानम् । ३. महात्मनाम् , मनस्येकं, मनस्यन्यद् । ४. न ते विप्रिय कृतपूर्वम् । ५. संशयमेव गाहते । ६. क ईप्सितार्थस्थिरिनश्चयं मनः पयश्च निम्नाभिमुख प्रतीपयेत् । ८. यशस्तु रक्ष्यं परतो यथोधनः । ९. विमलं कलुषीभवच्च चेतः कथयत्येव हितैषणं रिपुं वा । १०. तस्य वचित दुराशयं मा आरोपय । (ख) ३. अनुजानीहि । ४. प्रतिजाने, रामो द्विनीभभाषते । ५. नावजानीत । ६. शतमपजानीते । ७. श्वश्वा संजानीते । (घ) ३. अथ । ४. ऋतुमधिकृत्य । ५. अपि चौरो भवेत् । ६. इति । ७. जहासेव । ८. किच्चत् कुशली । ९. ववः व्या १०. कामम् । ११. किमुतान्यहिसाः । १२. दिष्ट्या प्रतिहतं दुर्जातम् । १३. दिष्ट्या महाराजो विजयेन वर्षते । १४. तथा यथा । १५. तथा यथा बाषित बाधते । १६. यावत् ।

तावत् । १७• यावत् ''तावत् । १८• वरं '''न । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha शब्दकोष-१४०० + २५ = १४२५] अभ्यास ५७

(व्याकरण)

(ख) पीड् (उ०, दु:ख देना), पॄ (उ०, पूरा करना), तड् (उ०, चोट मारना), खण्ड् (उ०, तोड़ना), क्षल् (उ०, घोना), तुल् (उ०, तोलना), पाल् (उ०, रक्षा करना), तिज् (उ०, तेज करना), कॄत् (उ०, गुणगान करना), तन्त्र् (आ०, शासन करना, पालन करना), मन्त्र् (आ०, मंत्रणा करना), तुट् (आ०, तोड़ना), तर्ज् (आ० भमकाना), अर्थ् (आ०, प्रार्थना करना), कुत्स् (आ०, दोष लगाना), मर्त्स् (आ०, डाँटना), टङ्क् (उ०, खोदना, लगाना), पश् (उ०, बाँधना), धृ (उ०, धारण करना), मृष् (उ०, ध्रमा करना), लङ्य् (उ०, उल्लंधन करना), धृष् (उ०, घोषणा करना), ईर् (उ०, प्रेरणा देना), प्री (उ०, प्रसन्न करना), गवेष् (उ०, गवेषणा करना)। (२५)। सूचना—इन सबके रूप चुर् के तुल्य चलेंगे।

व्याकरण-(पाद, दन्त, बन्ध्, मन्थ्, विभक्तयर्थं प्रत्यय)

१. पाद और दन्त के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द० २)।

२. बन्ध् और मन्थ् धातुओं के रूप स्मरण करो । (देखो धातु० ९२, ९३)

नियम २८०—(तः प्रत्यय) (१) (पञ्चम्यास्तिस्ल्) पंचमी विभक्ति के स्थान पर तिसल् (तः) प्रत्यय होता है। यस्मात् >यतः। ततः, इतः, अतः, अग्रतः, सर्वतः, उभयतः। त्वतः, मत्तः, अस्मतः, युष्मत्तः। (२) (कु तिहोः) किम् को कु हो जाएगा। कस्मात् > कुतः। (३) (पर्यभिभ्यां च) परि और अभि से तः प्रत्यय। परितः, अभितः।

नियम २८१—(त्र प्रत्यय) (१) (सप्तम्यास्त्रल्) सप्तमी के स्थान पर त्रल् (त्र) प्रत्यय होता है। कुत्र, यत्र, तत्र, सर्वत्र, उभयत्र, अत्र, अन्यत्र, बहुत्र। (२) (किमोऽत्, क्वाति) किम् के क और कुत्र दोनों रूप होते हैं। (३) (इदमो हः) इदम् का इह (यहाँ) भी रूप बनता है। (४) (इतराभ्योऽपि०) पंचमी और सप्तमी के अति-रिक्त भी तः और त्र होते हैं। स भवान्>तत्रभवान्, ततोभवान् (पूज्य आप)। अयं भवान्> अत्रभवान् (पूज्य आप)। अत्रभवती (पूज्य स्त्री)।

नियम २८२—(१) (सर्वेकान्यिकंयत्तदः काले दा) सर्व आदि से समय अर्थ में 'दा' प्रत्यय होता है। सर्वदा, एकदा, अन्यदा, िकम् कदा, यदा, तदा। (२) (सर्वस्य सो०) सर्व को स भी हो जाता है। सदा। (३) (अधुना) इदम् को अधुना हो जाता है। अधुना (अब)। (४) (दानीं च) इदम् से दानीम् प्रत्यय भी होता है। इदा-नीम् (अब)। (५) (तदो दा च) तद् से दानीम् भी होता है। तदानीम् (तब)।

नियम २८३— (१) (प्रकारवचने थाल्) 'प्रकार' अर्थ में किम् आदि से थाल् (था) प्रत्यय होगा। तेन प्रकारेण > तथा। इसी प्रकार—यथा, सर्वथा, उभयथा (दोनों प्रकारसे), अन्यथा। (२) (इदमस्थमुः) इदम् से था की जगह थम् होगा। इदम् > इत्यम्। (३) (किमश्च) किम् से भी था को थम्। किम् > कथम् (कैसे)।

नियम २८४—(संख्याया विधार्थे घा) संख्यावाची शब्दों से प्रकार अर्थ में 'घा' प्रत्यय होता है। एकधा, द्विधा, त्रिधा, चतुर्धा, पञ्चधा। बहुधा, शतधा, सहस्रधा।

नियम २८'-(प्रमाण आदि अर्थ में) (१) (प्रमाणे द्वयसच्०) प्रमाण अर्थात् नाप-तोल आदि अर्थ में द्वयस, दघ्न और मात्र प्रत्यय हाते हैं। जाँघ तक— ऊरुद्वय-सम्, ऊरुद्दम्, ऊरुमात्रम्। हस्तमात्रम्, मुष्टिमात्रम्, कटिमात्रम्। (२) (यत्तदे-तेभ्यः०) यत् आदि से परिमाण अर्थ में वत् प्रत्यय। यावान्, तावान्, एतावान्।

किम् का कियान् , इदम् का इयान् होता है । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संस्कृत बनाओ—(क) (पाद, दन्त, मनस् शब्द) १. उसने गुरु के पैर छुए। २. अपराधी ने राजा के पैर हूकर क्षमा माँगी। ३. मनुष्य द्विपाद् और पशु चतुष्पाद् होते हैं। ४. इस पुस्तक का मूल्य सवा रूपया है। ५. दाँतों को बुश से साफ करो और दाँतों में कोई तिनका फँसा हो तो दाँत सफा करने की सींक से उसे निकाल दो। ६. उसके वचन (वचस्) से मेरा हृदय द्रवित हो गया। ७. उसकी बात (वचस्) मेरे हृद्य पर असर कर गई। ८. उसके हृद्य (चेतस्) पर उपदेश का प्रभाव नहीं पड़ा। ९. मेरा मन सन्देह में पड़ा है। १०. ये विचार मेरे मन में उत्पन्न हुए (प्रादुर्भू) । ११. आज हवा बन्द है। १२. यहाँ घोर अँधेरा है। १३. वृद्धावस्था में इसे तृष्णा लगी हुई है। १४. यह उसकी बात (वचस्) का निष्कर्ष है। १५. मैं तुम्हारी बात का समर्थन नहीं करता । १६. मेरी पूरी बात सुनो । १७. उसके हृदय (चेतस्) में कुत् हलता उत्पन्न हुई। १८. उसका मन नरम हो गया। १९. तेज तेज में (तेजस्) शान्त होता है। (ख) (बन्ध्, मन्य् धातु) १. उसने उससे प्रीति लगाई (बन्ध्)। २. अपने वालों को ठीक वाँधो (बन्ध्)। ३. पुण्यात्मा कर्मों से बद्ध नहीं होता । ४. चूडामणि पैर में नहीं पहना जाता । ५. चित्रकृट मेरी दृष्टि को आकृष्ट कर रहा है। ६. क्या यह क्लोक तुमने बनाया है (बन्ध्) ? ७. उसने बाहुयुद्ध के लिए कसर कस ली। ८. में हाथ जोड़कर तुम्हारी प्रार्थना करता हूँ (प्रार्थ)। ९. इसको बीच में सत टोको। १०. उसने फिर अपने काम में मन लगाया। ११. देवों ने समुद्र से अमृत को सथकर निकाला (सन्ध्)। १२. मैं युद्ध में सौ कौरवों को नष्ट करूँगा (मन्य्) ! (ग) (विभक्तयर्थ प्रत्यय) १. कण्व को आश्रम के वृक्ष तुझसे भी अधिक प्रिय हैं, ऐसा में सोचता हूँ। २. तीर्थ का जल और अग्नि ये अन्य वस्तु से शुद्धि के योग्य नहीं हैं । ३. इस विषय में मैं पूज्य आपको प्रमाण मानता हूँ । ४. वह वंश आठ भागों में विभक्त होकर फैला (प्रस्)। ५. यहाँ वहाँ नहीं कहीं से भी छात्र आवें, उन्हें विद्यादान दो । ६. जब-तब मुझे पत्र लिखते रहना । ७. कहाँ कैसे व्यवहार करें ? यहाँ इस प्रकार से और वहाँ उस प्रकार से बरतें। ८. वहाँ कितना जल है ? कहीं कमर भर. कहीं घुटने अर, कहीं जाँघ भर। (घ) (क्रियावर्ग) १. जो दुःख दे, चोट मारे, डराये, धमकावे, डाँटे, बत को तोड़े, मर्यादा का उल्लंघन करे और दोष लगावे, उसके साथ न रहे और न उससे मित्रता करे। २. छात्र अपनी प्रतिशा पूरी करता है; नौकर बर्तन धोता है; बनिया चीनी तोलता है; राजा प्रजा की रक्षा करता है (पाल्); धार धरने वाला शस्त्रों और अस्त्रों को तेज करता है; कवि राजा का गुणगान करता है; राजा प्रजा पर शासन करता है; राजा मित्रयों से मंत्रणा करता है और सजनों को प्रेरित करता है।

संकेतः—(क) १. परपर्श। २. पादयोनिपत्य क्षमां ययाचे। ४. सपादरूप्यकम्। ५. निविष्टं चेत्, दन्तरोधन्या। ६. द्रवीभूतम्। ७. हृदयमर्मास्पृशत्। ८. लेभेऽन्तरं चेतिस नोपदेशः। १. संशयमेव गाहते। ११. निर्वातं नभः। १२. सूचीभेषं तमः। १३. परिणतवयित, पोडयति। १५. वचो नाभिनन्दामि। १६. सावशेषम्। १७. कुतृहलेन कृतं पदम्। १८. मादवीमभजतः। १९. शाम्यति। (ख) १. तस्यां, बबन्ध। ३. न बध्यते। ४. बध्यते। ५. वधनाति। ६. बद्धः। ७. परिकरं बबन्ध। ८. अञ्जलि बद्ध्वा, प्रार्थये। ९. मैनमन्तरा प्रतिवधान। १०. वबन्ध। (ग) १. त्वत्तः, तर्कयामि। २. नान्यतः शुद्धिमर्हतः। ३. अत्रभवन्तं प्रमाणीकरोमि। ४. भिन्नोऽष्टधा विप्रससार। ६. यदा कृदा। ८. कृदिद्धनम्, जानुद्धनम्, जरुमात्रम्। (घ) १. पीडयेत्, भाययेत्। २. पार्यित, प्रक्षालयित, तोलयित, तेजयित, तन्त्रयते, मन्त्रयते, प्रेरयित।

शब्दकोष १४२५ + २५ = १४५०] अभ्यास ५८

(व्याकरण)

(क) कार्तस्वरम् (सुवर्ण, सोना), रजतम् (चाँदी), चन्द्रलौहम् (जर्मन सिलवर), आयसम् (लोहा), निष्कलङ्कायसम् (स्टेनलेस स्टील), ताम्रकम् (तांबा),पीतलम् (पीतल), कांस्यम् (कांसा, फूल), कांस्यक्टः (कसक्ट), मौक्तिकम् (मोती), इन्द्रनीलः (नीलम), वैदूर्यम् (लहसुनिया), हीरकः (हीरा), प्रवालम् (मूँगा), पुष्परागः (पुखराग), मरकतम् (पन्ना), माणिक्यम् (चुन्नी), अभ्रकम् (अभ्रक), पीतकम् (इरताल), गन्धकः (गन्धक), तुत्थाञ्जनम्(त्तिया),पारदः(पारा),यशदम्(जस्त),सीसम्(सीसा),स्फटिका(फिटकिरी)(२५)

व्याकरण (गोपा, विश्वपा, क्री, ग्रह्, भावार्थक प्रत्यय) १. गोपा शब्द के रूप स्मरण करो। (देखो शब्द०३)। विश्वपा गोपा के तुल्य।

२. क्री और ग्रह् धातुओं के रूप स्मरण करो । (देखो धातु० ९४, ९५)

नियम २८६—(तस्य भावस्त्वतलों) भाव (हिन्दी 'पन') अर्थ में शब्द के अन्त में त्व और ता लगते हैं। त्व-प्रत्ययान्त के रूप नपुं॰ में ही चलेंगे, गृहवत्। ता-प्रत्ययान्त के रूप रमावत्। लघु > लघुत्वम्, लघुता (हल्कापन)। गुरु > गुरुत्वम्, गुरुता। ब्राह्मणत्व, क्षत्रियत्व, विद्वस् > विद्वत्त्वम्, विद्वत्ता। महत् > महत्त्वम्, महत्ता।

नियम २८७— (ध्यञ्पत्यय) (१) (वर्णहढादिभ्यः ध्यञ् च) वर्णवाचकों और हढ आदि शब्दों से ध्यञ् (य) प्रत्यय होगा। प्रथम स्वर को वृद्धि। शुक्ल > शौक्त्यम् (सफेदी)। कृष्ण > काष्ण्यम् (कालापन)। हढ > दार्ढ्यम् (हढता)। (२) (गुणवचन- ब्राह्मणादिभ्यः ०) गुणवाचक और ब्राह्मण आदि शब्दों से ध्यञ् (य)। शूर > शौर्यम्। सुन्दर > सौन्दर्यम्। धीर > धैर्यम्। सुल > सौष्यम्। कवि > काव्यम्। (३) (चतुर्वर्णा-दीनां स्वार्थे ०) चतुर्वर्णं आदि से स्वार्थं में ध्यञ् (य)। चातुर्वर्ण्यम्। चातुराश्रम्यम्। पद्युण > षाड्गुण्यम्। सेना > सैन्यम्। समीप > सामीप्यम्। त्रिलोक > त्रैलोक्यम्।

नियम २८८—(इमनिच् प्रत्यय) (पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा) पृथु आदि से भाव अर्थ में इम्मिच् (इमन्) प्रत्यय होता है। टि (अन्तिम स्वर-सहित अंश) का लोप होगा। (र ऋतो०) शब्द के ऋ को र होगा। पृथु >प्रथिमा। लघु > लियमा, गुरु > गिरमा, अणु > अणिमा, महत् > महिमा, मृदु > मृदिमा।

नियम २८९—भावार्थक युछ अन्य प्रत्यय ये हैं—(१) (इगन्ताच लघुपूर्वात्) शब्द के अन्त में इ, उ या ऋ हो और उससे पहले हस्व स्वर हो तो शब्द से अण् (अ) होगा। शुचि> शौचम् (स्वच्छता), मुनि> मौनम् (मौन), पृथु> पार्थवम् (मोटापा)। (२) (सख्युर्यः) सिल से य प्रत्यय होगा। सिल >सख्यम् (मित्रता)। (३) (पत्यन्त०) पित अन्तवाले शब्दों, पुरोहित आदि और राजन् से यक् (य) होगा। प्रथम स्वर को वृद्धि। सेनापिति >सैनापत्यम्। पौरोहित्यम्। गजन् >राज्यम्। (४) (प्राणभृजाति०) प्राणी, जातिवाचक और आयु-वाचक से अञ् (अ)। अश्व > आश्वम्। कुमार > कौमा-रम्। कैशोरम्। (५) (हायनान्त०) हायन अन्तवाले और युवन् आदि से अण् (अ)। देहायनम् (२ वर्ष का)। युवन्> यौवनम्।

नियम २९०—(वत्, क) (१) (तेन तुल्यं क्रिया चेद् वितः) तृतीयान्त से तुल्य अर्थ में वित (वत्), क्रियासाम्य में। ब्राह्मणेन तुल्यं >ब्राह्मणवत् अधीते। (२) (तत्र तस्येव) सप्तम्यन्त और षष्ट्यन्त से तुल्य अर्थ में वत्। मथुरायामिव > मथुरावत्। क्रिल्यं क्

संस्कृत बनाओ-(क) (गोपा, विश्वपा शब्द) १. ग्वाला गायों को चराता है, उनकी सेवा करता है और उनकी रक्षा करता है। २. ईश्वर विश्वपा है, वह विश्व का पालन करता है। २. शंख बजानेवाला (शंखध्मा) शंख बजाता है। ४. धूम्रपान करनेवाले (धूम्रपा) बीड़ी, सिगरेट और हुक्का पीते हैं। ५. सोमपान करनेवाला (सोमपा) सोम पीता है। (ख) (क्री, ग्रह् धातु) १. प्राणों के सूल्य से यश खरीदो । २. बनिया सामान खरीदता है और ग्रहकों को बेचता है (विक्री)। ३. वर वधु का हाथ पकड़ता है (ग्रहु)। ४. प्रजा के कल्याण के लिए ही उसने प्रजा से कर लिया (प्रह्)। ५. राजा चोरों को पकड़े (प्रह्) और उन्हें जेल में डाल दे। ६. लोभी को धन से जीतो (ग्रह्)। ७. मुझ मूर्खबुद्धि ने भी वैसा ही समझ लिया (ग्रह)। ८. लोग ऐसा समझते हैं (ग्रहु)। ९. पापी का नाम भी न ले (ग्रह्)। १०. तुमने यह पुस्तक कितने मूल्य में खरीदी (ग्रहू)। ११. मनुष्य पुराने कपड़ों को उतारकर नवीन वस्त्रों को पहनता है (प्रहू)। १२. बलवान् के साथ लड़ाई न करे (विग्रहू)। १३. आप मुझे विद्यादान से अनुगृहीत करें (अनुग्रहू)। १४. राजा पापियों और चोरों को दण्ड दे (निग्रह्)। १५. इस आतिथ्य-सत्कार को स्वीकार कीजिए (प्रतिप्रह्)। १६. इन्द्रियों को संयम में रखो (निग्रह्)। १७. माली फूलों को इकट्ठा करके (संग्रह्) लाया और उनसे उसने मालाएँ बनाई । १८. इस विषय में मुनि बुरा नहीं मानेंगे। १९. क्या कारण है कि गुरुजी अभी तक खुश नहीं हुए ? (ग) (भावार्थक) १. प्रतिष्ठा उत्सुकतामात्र को नष्ट करती है। २. ढीठ, क्यों स्वच्छन्द हो रही है। ३. इस विषय में उन सबकी एक राय है। ४. नम्बर से लड़कों को मिठाई बाँटो (वितृ)। ५. महान् राज्य भी मुझे सुख नहीं देता। ६. संसार में मनुष्य के अपने कर्म ही उसे गौरव या हीनता देते हैं। ७. त्रुटि करना मानव-सुलभ है। ८. दुष्टों पर सिधाई दिखाना नीति नहीं है। ९. सन्तान-हीनता दुःखद है। १०. क्षण-क्षण में जो नवीनता को प्राप्त हो, वहीं सौन्दर्य है। (घ) (धातुवर्ग) संसार में धातुओं का बहुत महत्त्व है। घातुओं से ही सभी उपयोगी वस्तुएँ बनती हैं। सोना, चाँदी, मोती, नीलम, लहसुनिया, हीरा, मूँगा, पुखराग, पन्ना और चुन्नी ये बहुमूल्य धातुएँ हैं और आभूषणों आदि में इनका उपयोग होता है। जर्मन सिलवर, लोहा, स्टेनलेस स्टील, ताँबा, पीतल, काँसा, कसकुट, जस्ता और शीशे के विविध प्रकार के बर्तन आदि बनते हैं। संकेत:-(क) ३. धमति (ध्मा) । ४. तमाखुवीटिकाम् , तमाखुवतिकाम् , धूम्रनिलकाम् ।

संकेतः—(क) ३. धमति (ध्मा) । ४. तमासुवीटिकाम्, तमासुवातकाम्, धूम्रनालकाम्। (स्व) १. प्राणमूल्यैः । २. पण्यान्, विक्रीणीते । ३. पाणि गृह्णाति । ५. गृह्णीयात्, कारायां निक्षिपेत् । ७. गृह्णीतम् । १०. कियता मृल्येन गृह्णीतम् । ११. विहाय, गृह्णाति । १२. न विगृह्णीयात् । १३. अनुगृह्णातु । १५. प्रतिगृष्णातामातिशेयः सत्कारः । १७. संगृष्ण । १८. न दोषं ग्रह्णीच्यति । १९. नाद्यापि प्रसादं गृह्णाति । (ग) (भावार्थक) १. औत्सुक्यमात्रमव-साययति । २. पुरोभागे, कि स्वातन्त्र्यमवलम्बसे । ३. ऐक्सित्यम् । ४. आनुपूर्वेण । ५. न सौस्यमावहृति । ६. लोके गुरुत्वं विपरीततां वा स्वचेष्टितान्येव नरं नयन्ति । ७. लिवमा । ५. आर्जवं हि कुटिलेषु । ९. अनपत्यता । १०. नवतामुपैति, तदेव रूपं रमणीयतायाः ।

शब्दकोष-१४५० + २५ = १४७५] अभ्यास ५९

(व्याकरण)

(क) नव रसाः (नौ रस), सप्त स्वराः (सात स्वर), मन्द्रः (कोमल स्वर), मध्यः (मध्यम स्वर), तारः (तीव स्वर), आरोहः (चढ़ाव), अवरोहः (उतार), वीणा (सितार), मुरली (स्त्री०, बाँसुरी), मनोहारिवाद्यम् (हारमोनियम), सारङ्गी (स्त्री०, १. वायोल्डिन, २. सारंगी), तन्त्रीकवाद्यम् (पियानो), तानपूरः (तानपूरा), जलतरङ्गः (जलतरंग), मुरजः (तवला), ढौलकः (ढोलक), मझीरम् (मंजीरा), दुन्दुमिः (पुं०, स्त्री०, नगाड़ा), पटहः (ढोल), तूर्यम् (तुरही, सहनाई), डिण्डिमः (ढिंढोरा), वादित्रगणः (बैण्ड), वीणावाद्यम् (बीनवाजा, नफीरी), संज्ञाशङ्खः (विगुल), कोणः (मिजराव)। (२५)।

व्याकरण (कति, चुर्, चिन्त्, तर, तम, ईयस्, इष्ठ)

१. कित शब्द के रूप स्मरण करो । (दे० शब्द० ९९)।

२. चुर् और चिन्त् धातुओं के रूप स्मरण करो। (देखो धातु० ९७, ९८)

नियम २९१—(द्विचनविभज्योपपदे तरबीयसुनौ) दो की तुलना में विशेषण शब्द से तरप् (तर) और ईयसुन् (ईयस्) प्रत्यय होते हैं। तर प्रत्यय लगने पर पुं॰ में रामवत्, स्त्री॰ में रामवत् और नपुं॰ में रामवत् होते हैं। तर प्रत्य लगने पर पुं॰ में श्रमवत्, स्त्री॰ में रामवत् और नपुं॰ में अन्त में ई लगाकर नदीवत् और नपुं॰ में अनस् के तुल्य रूप चलेंगे। जिससे विशेषता दिखाई जाती है, उसमें पंचमी होगी। रामः श्यामात् पटुतरः, पटीयान् वा।

नियम २९२—(अतिशायने तमबिष्ठनों) बहुतों में से एक की विशेषता बताने अर्थ में तमप् (तम) और इष्ठन् (इष्ठ) प्रत्यय होते हैं। दोनों के रूप पुं० में रामवत्, स्त्री० में रमावत्, नपुं० में गृहवत् चलेंगे। जिससे विशेषता बताई जाती है, उसमें षष्ठी या सप्तमी होगी। छात्राणां छात्रेषु वा रामः पदुतमः पटिष्ठः वा।

नियम २९३—ईयस् और इष्ठ के बारे में ये बातें स्मरण रखें—(१) (अजादी गुणवचनादेव) ईयस् और इष्ठ गुणवाचकों से ही लगेंगे; अन्य से नहीं। तर, तम सर्वत्र लगते हैं। (२) (टे:) ईयस् या इष्ठ बाद में होगा तो टि (अन्तिम स्वर-सहित अंश) का लोप होगा। (३) (र ऋतो०) शब्द के ऋ को र होगा। (४) (स्थूल-दूर०) स्थूल दूर आदि के अन्तिम र, ल या व का लोप होगा, ईयस् या इष्ठ बाद में होगा तो। (५) (प्रियस्थिर०) प्रिय, स्थिर आदि को प्र, स्थ आदि होते हैं। विशेष प्रसिद्ध रूप ये हैं। कोष्ठगत शब्द शेप रहता है। इन शब्दों मे तर तम भी लगते हैं।

प्रशस्य (भ्र) श्रेयान् गुरु (गर्) गरीयान् श्रेष्ठः वृद्ध, प्रशस्य (ज्य) दीर्घ (द्राघ्) ज्यायान् ज्येष्ठः द्राघीयान द्राघिष्ठः अन्तिक (नेद्) नेदीयान् नेदिष्ठः बहु (भू) भूयिष्ठः भूयान् बाढ (साध्) साधीयान् साधिष्ठः युवन् (कन्) कनीयान् कनिष्ठः स्थूल (स्थू) स्यवीयान स्यविष्ठः पटु (पट्) पटीयान् पटिष्ठः दूर (दू) दवीयान् दविष्ठः लघु (लघ्) लघीयान लिघष्ठः प्रिय (प्र) प्रयान महीयान् प्रेष्ठः महत् (महु) महिष्ठः स्थिर (स्थ) स्थेयान् मृदु (मृदु) स्थेष्ठः म्रदीयान् म्रदिष्ठः

CC-O. हे Aamse Tripathi Cतारियान at SalaresDs). हासित्र (हर्ष्डा dhan विक्रमान otri Gyalaresosha

संस्कृत बनाओ-(क) (कित शब्द) १. कितनी अग्नियाँ हैं और कितने सूर्य हैं ? २. मन, तू स्मरण कर कि तूने कितने पाप किए हैं और कितने पुण्य । ३. कुछ ही पैर चलकर वह तन्वी रुक गईं। ४. उस पर्वत पर उसने कुछ महीने बिताए (नी)। ५. कदस्ब पर कुछ फूल खिले हैं। ६. कुछ दिन बीतने पर वह घर लौटा। (ख) (चुर, चिन्तु) १. चोर ने तिजोरी तोड़कर तीन एक हजार रुपये के, दस एक सौ के, पचास दंस रुपए के और अरसी पाँच रुपए के नोट चुराए। २. नारद ने चन्द्रमा की शोभा को चुराया । ३. सोचो, किस बहाने से हम आश्रम में जावें । ४. सजन की हानि को मन से भी न सोचे (चिन्त्)। ५. पिता तुम्हारी देख-भाल करेंगे (चिन्त्)। ६. पाखण्डियों और कुकर्भियों की वाणी से भी वृजा न करे (अर्च्)। ७. ऐसी वाणी न कहे (उदीर्), जिससे दूसरे के हृदय कों दु:ख पहुँचे । ८. कार्य पूरा करने का इच्छुक मनस्वी न दुःख की परवाह करता है और न सुख की। ९. धर्म की प्राचीन मान्यताओं का पता चलाओं (गवेष्)। १०. वह मुँह पर घूँघट काइती है। ११. भारतीय सरकार ने गोहत्या-निरोध की घोषणा की (घुष्)। १२. चित्रकार कपड़े पर नेहरूजी का चित्र बनाता है (चित्र्)। १३. में दुर्योधन की जंघा को चूर-चूर कर दूँगा (चूर्ण्)। १४. वह आभूषणों से अपने शरीर को अलंकृत कर रही है (अवतंस्)। १५. विद्या और धन को बड़े परिश्रम से एकत्र करें (अर्ज्)। (ग) (तर, तम आदि) १. यशोधनों के लिए यश बड़ी चीज है (गुरु)। २. बड़े लोग स्वभाव से ही कम बोलते हैं। ३. बड़ों की सहायता से क्षुद्र भी सफल हो जाता है। ४. जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर है (गुरु)। ५. स्वध्म परध्म से बढ़कर है। ६. राम स्याम से अधिक, बढ़ा (प्रशस्य), अच्छा (बाढ), प्रिय, विशाल (उरु), भारी (गुरु), लम्बा (दीर्घ), चतुर (पदु), महान् और बलवान् (बलिन्) है और श्याम राम से हलका (लघु) छोटा (युवन्), कोमल (मृदु) और कृश है। ७. कृष्ण सबसे अधिक बड़ा, अच्छा, प्रिय, विशाल, भारी, लम्बा, चतुर, महान् और बलवान् है और यहदत्त सबसे अधिक हलका, छोटा, कोमल और कृश है। (ध) (नाट्यवर्ग) विभाव, अनुभाव और संचारिभावों के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है। शृंगार, बीर आदि नौ रस हैं और उनके रित उत्साह आदि नौ स्थायिभाव हैं। निषाद, ऋषभ, गान्धार, षड्ल, मध्यम, धैवत और पंचम ये सात स्वर हैं। इनके प्रथम अक्षरों को लेकर सरे ग म आदि सरगम बना है। संगीत में कोमल, मध्यम और तीव स्वरों के तीन सप्तक होते हैं। स्वरों का आरोह और अवरोह होता है। प्राचीन वाद्यों में से सितार, बाँसुरी, सारंगी, तानपूरा, तबला, ढोलक, मजीरा, नगाड़ा, ढोल, तुरही, ढिंटोरा इनका प्रचलन अभी तक है। नवीन वाद्यों में हारमोनियम, वायोलिन, पियानो, जलतरंग, वेंड, बीनवाजा और विगुल का अधिक प्रचलन हैं। संगीत जीवन को सरस और मधुर बनाता है।

संकेतः—(क) ३. कितिचिदेव । ४. कितिचित् । ५. कितिपयकुसुमोद्गमः कदम्बः । ६. कितिपयदिवसापगमे । (त) १. लौहमञ्जूषां विदार्य, सहस्र रूपकनाणकानि, नाणकानि । २. अच्चुत्त् । ३. अपदेश्चन । ५. त्वां चिन्तियिष्यिति । ६. पाषण्डिनो विकर्मस्थान् वाङ मात्रेणापि नार्चयेत् । ७. उदीरयेत् । ८. मनस्वी कार्यार्थीं गणयित न दुःखं न च सुखम् । ९. गवेषय । १०. सुखमवगुण्ठयिति । ११. सर्वकारः, अधोषयत् । १२. चित्रयिति । १३. संचूर्णयिष्यामि । १४. अवतं-स्यिति । १५. अर्जयेत् । (ग) १. यशोधनानां हि यशो गरीयः । २. महीयांसः, मितमाषिणः । ३. वृहत्सहायः कार्यान्तं क्षोदीयानिष गच्छिति । ४. गरीयसी । ५. श्रे यान् । ६. ज्यायान्, साधीयान् ।

शब्दकोष-१४७५ + २५ = १५००] अभ्यास ६०

(न्याकरण)

(क) कासः (खाँसी), प्रतिश्यायः (जुकाम), ज्वरः (बुखार), विषमज्वरः (मलेरिया), शीतज्वरः (इन्प्लुएन्जा, 'प्लु), प्रलापकज्वरः (निमोनिया), संनिपातज्वरः (टाइ-फाइड), राजयक्ष्मन् (पुं०, तपेदिक, टी०बी०), शीतला (चेचक), मन्थरज्वरः (मोतीझरा), अतिसारः (दस्त), प्रवाहिका (पेचिश, संग्रहणी), वमथुः (पुं०, के), विष्विचका (हैजा), रक्तचापः (ब्लडप्रेसर), पिटकः (फोड़ा), पिटिका (फुंसी), अर्शस् (नपुं०, बवासीर), प्रमेहः (प्रमेह), मधुमेहः (बहुमूत्र, डाएविटीज), पाण्डुः (पुं०, पीलिया), अजीर्णम् (कब्ज), उपदंशः (गरमी, सिफलिस), विद्रिधः (पुं०, विषवणम्, केन्सर), पक्षाघातः (लकवा मारना)। (२५)

नियम २९४—(विकारार्थक) विकार अर्थ में ये प्रत्यय होते हैं—(१) (तस्य विकारः) विकार अर्थ में अण् (अ)। भरमन्> भारमनः। (२) (मयड्वैतयो०) विकार और अवयव अर्थ में मय प्रत्यय। अश्मन्> अश्ममयम्। (३)(गोश्च पुरीषे) गोबर अर्थ में मय। गो> गोमय। (४)(गोपयसोर्यत्) गो और पयस् से यत्(य)। गव्यम्। पयस्यम्।

नियम २९५—(टक्) इन अथों में टक् (इक) होता है। प्रथम स्वर को वृद्धि। (१) (तेन दीव्यति॰) जुआ खेलना आदि अथों में। अक्ष> आक्षिकः। (२) (संस्कृतम्) बनाने अर्थ में। दिष्ठं दाधिकम्। (३) (तरित) तैरने अर्थ में। उडुप> औडुपिकः (नाव से पार करनेवाला)। (४) (चरित) सवारी करना अर्थ में। हित्तन्> हास्तिकः। (५) (रक्षिति) रक्षा अर्थ में। समाज> सामाजिकः।

नियम २९६—(यत्) इन स्थानों पर यत् (य) होता है:—(१) (तद्वहति॰) होने अर्थ में यत्। रथ>रथ्यः। (२) (धुरो यङ्ढकौ) धुर् से य और ढक् (एय)। धुर्>धुर्यः, धौरेयः।(३) (नौवयोधर्म॰) नौ आदि से। नौ >नाव्यम्।(४)(तत्र साधुः) शिष्ट अर्थ में यत्। शरण> शरण्यः। (५) (समाया यः) समा से य प्रत्यय। सम्यः। (६) (पथ्यतिथि॰) पथिन् आदि से ढञ् (एय)। पथिन् >पाथेयम्। अतिथि>आतिथेयम्।

नियम २९७—(छ, यत्) छ का ईय, यत् का य रहता है। (१) (उगवा-दिभ्यो०) हित अर्थ में उकारान्त और गो आदि से यत्। शङ्कु> शङ्कव्यम्। गो> गव्यम्। (२) (तस्मै हितम्) हित अर्थ में छ (ईय)। वत्स> वत्सीयः। (३) (शरीरा-वयवाद्यत्) शरीरावयवों से यत् (य)। दन्त्यम्, कण्ठ्यम्। (४) (आत्मन्विश्वजन०) आत्मन् आदि से हित अर्थ में ख(ईन)। आत्मन्> आत्मनीनम्। विश्वजन > विश्वजनीनम्।

नियम २९८—(ठञ्) ट को इक । (१) (तेन क्रीतम्) खरीदने अर्थ में ठञ् (इक)। सप्तति > साप्ततिकम्। (२) (तदर्हति) योग्य होने अर्थ में ठञ् (इक)। श्वेतछत्र > श्वेतछत्रिकः। (३) (दण्डादिभ्यो यत्) दण्ड आदि से यत् (य)। दण्ड > दण्ड्यः।

नियम २९९—(स्वार्थिक) (१) (प्रज्ञादिभ्यश्च) प्रज्ञ आदि से स्वार्थ में अण् (अ)। प्रज्ञ>प्राज्ञः, देवता > दैवतः, बन्धु > बान्धवः। (२) (अल्पे, हस्वे) अल्प और छोटा अर्थ में कन् (क)। तैल > तैलकम्, वृक्ष > वृक्षकः।

नियम २००—(१) (कृम्बिस्तियोगे०) वैसा हो जाना अर्थ में च्वि प्रत्यय होता है। च्वि का कुछ नहीं शेष रहता है। वाद में कु, भू, अस् का प्रयोग होता है। च्वि होने पर शब्द के अ को ई, इ और उ को दीर्घ होगा। शुक्ल> शुक्लीकरोति, कृष्णी-करोति। (२) (विभाषा साति०) सम्पूर्ण अर्थ में साति (सात्)। भस्मप्तात्, अग्निसात्। (३) (नित्यवीप्सयोः) बार-बार और द्विरुक्ति अर्थ में पद को द्वित्व होता है। भुक्त्वा भुक्त्वा। वृक्षं वृक्षं सिञ्चति। (४) (ईषदसमाप्ती०) कुछ कम अर्थ में कल्प, देश्य, СС-0. Dदेशीक्ष सिङ्गक्ष होते हैं। लक्ष्मभावक्षेत्र स्वाप्तिकार का स्वाप्तिकार सिक्ति होता है। स्वर्वा

संस्कृत बनाओ:-(क) (कथ्, भक्ष् धातु) १. उन दोनों की संपत्ति का क्या कहना ? २. उन्होंने जनक से कहा कि राम धनुष को देखना चाहते हैं। ३. कथा के बहाने से यहाँ नीति ही कही गई है। ४. दूसरे का उच्छिष्ट न खावे। ५. गुरु आज्ञा देते हैं (आज्ञापि) कि पापों को छोड़ो । ६. स्त्री अलंकारों से अपने शरीर को विभूषित करती है (भूष्)। ७. बालक मिठाई का स्वाद लेता है (आस्वद्)। ८. वह बर्तनों को माँजता है (मृज्), शत्रुओं को तपाता है (तप्), सजनों को तृप्त करता है (तृप्), मान्यों का मान करता है (मान्) और दुष्टों को दबाता है (धृष्)। (ख) (तद्धित प्रत्यय) १, शारीरिक पृष्टि के लिए पंचगव्य का सेवन करना चाहिए। २. जुआड़ी पासों से जुआ खेलता है (दिव्)। ३. सभ्य अपने-अपने स्थानों को छौट गए। ४. अहिंसा का सिद्धान्त अपनी भलाई और विश्व की भलाई दोनों के लिए है। ५. राम लगभग अठारह वर्ष का है। ६. अब लगभग दोपहर का समय है। ७. वह लगभग मरा हुआ है। ८. आग सब वस्तुओं को भस्मसात् कर देती है। ९. नेहरूजी का कथन था कि श्रमिकों की गन्दी बस्तियों को जला दो और उनके लिए साफ मकान बनाओ । १०. एकचित्त होकर देशोद्धार में लगो (प्रवृत्) । ११. कुल मिलाकर मुझे बीस रुपए दो । १२. यह बात मुझको ही संकेत करती है । १३. मकान जलकर राख हो गए। १४. यह बात सर्वत्र फैल गई है। (ग) (रोगवर्ग) १. मुझे बढ़ा शिरदर्द है। २. यह फोड़े पर फोड़ा निकला है। ३. उसके रोग का शीघ्र इलाज करो। ४. आज मेरी तबीयत पहले से ठीक है। ५. रोग को ठीक जाने बिना उसका इलाज नहीं करना चाहिए। ६. इसका रोग बहुत बढ़ गया है। ७. रोगी की जान खतरे में है। ८. उसका रोग असाध्य है। (घ) (रोगवर्ग) शरीर व्याधियों का घर है। अतः कहा गया है कि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का सर्वोत्तम मूल आरोग्य है। अतः सदा स्वस्थ रहने का प्रयत्न करना चाहिए। सान्धिक भोजन, उचित आहार-विहार, दैनिक व्यायाम, भ्रमण, योगासन और प्राणायाम से शरीर नीरोग रहता है। इन नियमों पर ध्यान न देने से ही खाँसी, जुकाम, बुखार, मलेरिया, इन्पलुएन्जा, निमोनिया, टाइफाइड, तपेदिक, चेचक, मोतीझरा, दस्त, पेचिश, संग्रहणी, हैजा, फोड़ा, फुंसी, बवासीर, प्रमेह, मधुमेह, कब्ज आदि रोग होते हैं। केन्सर, लकवा मारना, तपेदिक और दिल के रोग, ये घातक रोग हैं। विशेषज्ञों का कथन है कि रोगों का कारण जीवन की अनियमितता है। जीवन को नियमित बनावें और वेद के शब्दों में नीरोग होकर सौ वर्ष जीवें । सब सुखी हों, सब नीरोग हों, सब सुख देखें और कोई दु:खी न हो ।

संकेतः—(क) १. किं वध्यते श्रीरुभयस्य तस्य। २. मैथिलाय कथयांवभूव। ३. छलेन। ५. वर्जयं। ६. भूषयति। ७. आस्वादयति। ८. मार्जयति, तापयति, तर्पयति, मानयति, धर्षयति। ५. वर्जयं। ६. भूषयति। ७. आस्वाद्रयति। ४. आत्मनीनो विश्वजनीनद्रच वर्तते। ५. अष्टादरा-वर्षद्रशीयः। ६. मध्याह्वकल्पः। ७. मृतप्रायः। ९. शीर्णान्यावासस्थानानि अग्निसात् कुरुत। १०. एवःचित्तीभूय। ११. पिण्डीकृत्य। १२. कथा, लक्ष्यीकरोति। १३. मस्मीभूतानि। १४. वृत्तं बहुलीभृतम्। (त) १. वलवती शिरोवेदना मां वाधते। २. गण्डस्योपरि पिटिका संवृत्ता। ३. विवारो विलम्बाक्षमः। ४. अस्ति मे विशेषोऽद्य। ५. विवारं खलु परमार्थतोऽशात्वाऽनारमः प्रतीवारस्य। ६. अतिभूमि गतः। ७. आतुरो जीवितसंशये वर्तते। (घ) हृद्रोगाः। जीवेम शरदः शतम्।

रुवे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः । सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्। CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

व्याकरण

आवश्यक-निर्देश

- १. शब्दरूप-संग्रह में उन सभी शब्दों (१०० शब्दों) का संग्रह किया गया है, जो अधिक प्रचल्ति हैं। जिन शब्दों का प्रयोग बहुत कम होता है या सर्वथा नहीं होता है, उनका समावेश इसमें नहीं किया गया है।
- २. शब्दों और धातुओं के रूप के साथ अभ्यासों की संस्याएँ दी गई हैं। उसका भाव यह है कि उस शब्द या धातु का प्रयोग उस अभ्यास में हुआ है और उस प्रकार से चलनेवाले शब्द या धातु भी उस अभ्यास में दिए गए हैं। अनुवाद-वाले प्रकरण में उस शब्द या धातु के अभ्यास में उसी प्रकार चलनेवाले शब्द या धातु के अभ्यास में उसी प्रकार चलनेवाले शब्द या धातु यथास्थान कोष्ठ में दिए गए हैं, उनके रूप भी निर्दिष्ट शब्द या धातु के तुस्य चलावें।
 - ३. संक्षेप के लिए निम्नलिखित संवेतों का उपयोग किया गया है:--
- (क) शब्दरूपों में प्रथमा आदि के लिए उनके प्रथम अक्षर रखे गए हैं। जैसे—प्र० = प्रथमा, द्वि० = द्वितीया, तृ० = तृतीया, च० = चतुर्थी, पं० = पंचमी, ष० = षष्ठी, स० = सप्तमी, सं० = संबोधन।
- (ख) पुं० = पुंलिंग, स्त्री० = स्त्रीलिंग, नपुं० = नपुंसक लिंग। एक० = एकवचन, द्वि० = द्विवचन, बहु० = बहुतचन। दे० अ० = देखो अभ्यास, अ० = अभ्यास। प्रत्येक शब्द या धातु के रूप में ऊपर से नीचे की ओर प्रथम पंक्ति एकवचन की है, दूसरी द्विवचन की और तीसरी बहुवचन की। जो शब्द किसी विशेष वचन में ही चलते हैं, उनमें उसी वचन के रूप हैं।
- (ग) धातुरूपों में प्र॰ पु॰ या प्र॰ प्रथम पुरुष (अन्य पुरुष), म॰ पु॰ या म॰ = मध्यम पुरुष, उ॰ पु॰ या उ॰ = उत्तम पुरुष। पर॰ या प॰ = प्रस्मैपद, आत्मने॰ या आ॰ = आत्मनेपद, उभय॰ या उ॰ = उभयपद।
- ४. सर्वनाम शब्दों का संबोधन नहीं होता, अतः उनके रूप संबोधन में नहीं दिए गए हैं।
- ५. शब्दरूपों के लिए ये नियम स्मरण कर लें—(१) (अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि) र और ष् के बाद न को ण होता है, यदि अट् (स्वर, ह, य, व, र),
 कवर्ग, पवर्ग, आ, न् बीच में हों तो भी न् को ण् होगा। ऋ वाले शब्दों में भी यह
 नियम लगेगा। अतः र, ऋ और ष् वाले शब्दों में इस नियम के अनुसार न् को
 ण् करें, अन्यत्र न् ही रहेगा। (२) (इण्कोः, आदेशप्रत्यययोः) अ को छोड़कर अन्य
 स्वरों के बाद तथा कवर्ग के बाद प्रत्यय के स् को ष् हो जाता है। धातुओं में भी यह

 CC-O पिन्यक्ष क्षेत्रां प्राप्तिक्ष विद्या के हिन्दुं (Capa), Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(१) शब्दरूप-संग्रह (क) अजन्त पंलिंग शब्द

(क) अजन्त पुलिग शब्द							
(१) राम (राम) (देखो अभ्यास १) (२)पाद (पैर) (देखो अभ्यास ५७)							
रामः	रामौ	रामाः	प्र॰	पादः	पादौ	पादाः	
रामम्	,,	रामान्	द्वि०	पादम्	,,	पद:	
रामेण ं	रामाभ्याम्	रामै:	तृ॰	पदा	पद्भ्याम्	पद्भिः	
रामाय	,,	रामेभ्यः	च॰	पदे	,,	पद्भ्यः	
रामात्	,,	,,	фo	पद:	,,	,,	
रामस्य	रामयोः	रामाणाम्	ष०	पद:	पदोः	पदाम्	
रामे	"	रामेषु	स०	पदि	"	पत्सु	
हे राम	हे रामौ	हे रामाः	सं०	हे पाद	हे पादौ		
			सूचना	-पाद के	पूरे रूप राम	के तस्य भी	
	*				दि के तुल्य ई		
				के द्वितीय	ा बहु० आ	दि में दतः,	
- 98		1995			द्भ्याम् आदि		
	(ग्वाला) (दे			(४) हिंग	(विष्णु) (देखो अ० ४)	
गोपाः	गोपौ	गोपाः	प्र०	इरिः	हरी	ह रयः	
गोपाम्	"	गोपः	द्वि०	इरिम्	"	हरीन्	
गोपा	गोपाभ्याम्	गोपाभिः	तृ॰	हरिणा	हरिभ्याम्	हरिभि:	
गोपे	"	गोपाभ्यः	च०	हरये	,,	इरिभ्यः	
गोपः	"	"	पं॰ •	हरे:	"	,,	
37	गोपोः	गोपाम्	do	,,	हर्योः	हरीणाम्	
गोपि	"	गोपासु	स०	हरौ	"	हरिषु	
हे गोपाः	हे गोपौ	हे गोपाः	सं०	हे हरे	हे इरी	हे हरयः	
	-				_		
(५) संखि	(मित्र) (दे०	अ०१९)		(६) पा	ते (पति) (व	१० अ० २०)	
सवा	सस्वायौ	सखायः	प्र॰	पतिः	पती	पतयः	
सखायम्	"	सखीन्	द्धि ०	पतिम्	"	पतीन्	
संख्या	सिखभ्याम्	स खिभिः	तृ॰	पत्या	पतिभ्याम्	पतिभिः	
सख्ये	,,	संखिभ्यः	च०	पत्ये	"	पतिभ्यः	
सख्युः	,,	"	पं०	पत्युः	"	"	
,,	स ख्योः	सखीनाम्	ष०	"	पत्योः	पतीनाम्	
संख्यौ	,,	संखिषु	स॰	पत्यौ	,,	पतिषु	
हे सखे	हे सखायौ	हे सखायः	सं०	हे पते	हे पती	हे पतयः	
	-स्त्रीलिंग में सख				-		

(७) भूपति (राजा) (हरिवत्) (दे०अ० ४) (८) सुधी (विद्वान्) (दे० अ० २१) सुधीः सुधियौ सुधिय: प्र॰ भूपतिः भृपती भूपतयः भूपतीन् सुधियम् भूपतिम् द्वि० ,, ,, सुधिया सुधीभ्याम् सुधीभिः भूपतिभ्याम् भूपतिभिः भूपतिना तृ० सुधिये सुधीभ्यः भूपतये भूपतिभ्यः च० ,, ,, सुधिय: भूपतेः पं० ,, ,, ,, सुधियो: भूपतीनाम् सुधियाम् भूपत्योः ष० भूपतौ सुधीषु सुधिय भूपतिषु स० ,, " हे सुधियौ हे सुधियः हे भूपतयः सं० हे सुधीः हे भूपती हे भूपते

(९) गुरु (गुरु) (दे॰ अ॰ ५)				(१०) स्वभू (ब्रह्मा) (दे० अ० २१)			
गुरुः	गुरू	गुरवः	प्र॰	स्वभूः	स्वभुवौ	स्वभुवः	
गुरुम्	"	गुरून्	द्वि॰	स्वभुवम्	,,	,,	
गुरुणा	गुरुभ्याम्	गुरुभिः	तृ०	स्वभुवा	स्वभूभ्याम्	स्वभूभिः	
गुरवे	"	गुरुभ्यः	च॰	स्वभुवे	,,	स्वभूभ्यः	
गुरोः	"	,,	पं०	स्वभुवः	,,	"	
,,	गुर्वोः	गुरूणाम्	ष०	,,	स्वभुवोः	स्वभुवाम्	
गुरौ	"	गुरुषु	ぜ०	स्वभुवि	,,	स्वभूषु	
हे गुरो	हे गुरू	हे गुरवः	सं∘	हे स्वभू:	हे स्वभुवौ	हे स्वभुवः	

(११) कर्त् (करनेवाला) (दे० अ० २२)				(१२) पित (पिता) (दे॰ अ॰ २३)			
कर्ता	कर्तारौ	कर्तारः	प्र॰	पिता	पितरौ	पितर:	
कर्तारम्	"	कतृंन्	द्धि॰	पितरम्	,,	पितॄन्	
कर्त्रा	कर्तृभ्याम्	कर्तृभिः	तृ॰	पित्रा	पितृभ्याम्	पितृभिः	
कर्त्रे	"	कर्तृभ्यः	च०	पित्रे	,,	पितृभ्यः	
कर्तुः	"	,,	पं०	पितुः	"	,,	
"	कर्त्रोः	कतृंणाम्	ष०	"	पित्रोः	पितॄणाम्	
कर्तरि	"	कर्तृषु	स•	पितरि	"	पितृषु	
3 = 5.	£2== £.	3		20	4-26		

(१३) नृ (मनुष्य) (पितृवत्)			(88)	(१४) गो (बैल या गाय) पुं॰, स्त्री॰,			
(ह	रे॰ अ॰ २३)			(दे० अ० २४)			
ना	नरौ	नरः	प्र॰	गौः	गावौ	गावः	
नरम्	"	नृन्	द्वि०	गाम्	,,	गाः .	
त्रा	नृभ्याम्	नृभिः	तृ•	गवा	गोभ्याम्	गोभिः	
त्रे	,,	नृभ्यः	च०	गवे	,,	गोभ्यः	
नुः	,,	• • • • • • • • • • • • • • • • • • • •	पं०	गोः	"	"	
"	त्रोः	नृणाम्, नृष	गाम्ष॰	"	गवोः	गवाम्	
नरि	"	नृषु	स०	गवि	"	गोषु	
हे नः	हे नरौ	हे नरः	सं०	हे गौः	, हे गावौ	हे गावः	
	_			-			

(ख) हलन्त पुंलिंग शब्द

(१५) पयोमुच् (बादल) (दे० अ० २६)				(१६) प्राञ्च् (पूर्वी) (दे० अ० २५)		
पयोमुक्	पयोमुचौ	पयोमुचः	प्र॰	प्राङ्	प्राञ्चौ	प्राञ्चः
पयोमुचम्	,,	"	द्वि०	प्राञ्चम्	"	प्राचः
पयोमुचा	पयोमुग्भ्याम्	पयोमुग्भिः	तृ॰	प्राचा	प्राग्न्याम्	प्राग्भिः
पयोमुचे	"	पयोमुग्भ्य	: च॰	प्राचे	"	प्राग्भ्यः
पयोमुचः	,,,	"	पं०	प्राचः	"	"
1)	पयोमुचोः	पयोमुचाम	प्ष०	"	प्राचोः	प्राचाम्
पयोमुचि	"	पयोमुक्षु	ぜ。	प्राचि	"	प्राक्षु
हे पयामुक्		हे पयोमुच	: सं०	हे प्राङ्	हे प्राञ्जी	हे प्राञ्चः
					_	

(१७) उदञ्च् (उत्तरी) (दे० अ० २५) (१८) वणिज् (बनिया) (दे० अ० २६)

उदङ्	उदञ्जौ	उदञ्चः प्र॰	वणिक् वणिजौ	वणिजः
उदञ्चम्	,,	उदीचः द्वि॰	वणिजम् "	11
उदीचा	उदग्भ्याम्	उदिग्भः तृ०	वणिजा वणिगभ्याम्	वणिग्भिः
उदीचे	,,	उदग्भ्यः च॰	वणिजे ,,	वणिग्भ्यः
उदीचः	"	,, पं०	वणिजः ,,	,,
"	उदीचोः	उदीचाम् ष॰	,, वणिजोः	वणिजाम्
उदीचि		उद्धु स॰	वणिजि ,,	वणिक्षु
हे उदङ्	" हे उदञ्जी	हे उदञ्चः सं०	हे वणिक् हे वणिजौ	हे वणिजः

(१९) भूभृत् (राजा, पर्वत)

(२०) भगवत् (भगवान्)

(दे० अ० २७)

(दे० अ० २८)

भूभृत्	भृभृतौ	भूभृतः	प्र०	भगवान्	भगवन्तौ	भगवन्तः
भूभृतम्	"	"	द्वि०	भगवन्तम्	"	भगवत:
भूभृता	भूभृद्भ्याम्	भूभृद्धिः	तृ०	भगवता	भगवद्भ्याः	म् भगवद्भिः
भूभृते	,,	भूभृद्भ्यः	च०	भगवते	,,	भगवद्भ्य:
भूभृतः	,,	,,	पं०	भगवतः	,,	"
"	भूभृतोः	भूभृताम्	ष०	,,	भगवतोः	भगवताम्
भूभृति		भूभृत्सु	स०	भगवति	"	भगवत्सु
हे भूभृत्	हे भूभृतौ .	हे भूभृतः	सं०	हे भगवन्	हे भगवन्तौ	हे भगवन्तः

(२१) धीमत् (बुद्धिमान्)

धीमता

धीमते

धीमतः

(२२) महत् (महान्) (दे० अ० २९)

(दे० अ० २८)

धीमान् धीमन्तौ धीमन्तः महान्तौ प्र० महान् महान्तः धीमन्तम् धीमतः द्वि० महान्तम् " ,, मइत: धीमद्भ्याम् धीमद्भिः तृ० महता महद्भ्याम् महद्भिः धीमद्भ्यः च० महते ,, महद्भ्यः पं० महतः ,,

धीमतोः धीमताम् 90 महतोः ं ,, " महताम् धीमति धीमत्सु महति स० महत्सु ,, हे धीमन् हे धीमन्तौ हे धीमन्तः सं० हे महन् हे महान्तौ हे महान्तः

(२३) भवत् (आप) (दे॰ अ॰ २९) (२४) पठत् (पढ़ता हुआ) (दे॰ अ॰ ३०)

भवन्तौ भवान भवन्तः Пo पठन् पठन्तौ पठन्तः भवन्तम् द्वि० भवतः पठन्तम् पउत: ,, भवता भवद्भ्याम् भवद्भिः तृ० पठता पठद्भ्याम् पठद्भिः भवते भवद्भ्यः ব৹ पठते " पठद्भ्यः ,, भवतः y'o ,, पठतः " ,, ,, भवतोः भवताम् " ष० पठतोः पठताम् " भवति भवत्सु 35 पठित の野 पठत्सु हे भवन् हे भवन्तौ हे भवन्तः सं० हे पठन् हे पठन्तौ हे पठन्तः

(২५) यावत् (जितना) (दे० अ० ३०) (२६) बुध् (विद्वान्) (दे० अ० ३१)

यावान्	यावन्तौ	यावन्तः	प्र०	भुत्	बुधौ	बुध:
यावन्तम्	"	यावतः	द्वि०	बुधम्	,,	,,
यावता	यावद्भ्याम्	यावद्भिः	तृ०	बुधा	भुद्भ्याम्	भुद्भिः
यावते	"	यावद्भ्यः	च०	बुधे	"	भुद्भ्यः
यावतः	"	"	पं०	बुधः	,,	,,
"	यावतोः	यावताम्	व०	,,	बुधोः	बुधाम्
यावति	"	यावत्सु	●●	बुधि	"	भुत्सु
हे यावत्	हे यावन्तौ	हे यावन्तः	सं०	हे भुत्	हे बुधौ	हे बुधः

(২৩) आत्मन् (आत्मा) (दे० अ० ३२) (২८) राजन् (राजा) (दे० अ० ३२)

आत्मा	आत्मानौ	आत्मानः	प्र॰	राजा	राजानी	राजानः
आत्मानम्	"	आत्मनः	द्वि०	राजानम्	"	राज्ञ:
,आत्मना	आत्मभ्याम्	आत्मभिः	तृ०	राज्ञा	राजभ्याम्	राजभिः
आत्मने	,,	आत्मभ्यः	च०	राज्ञे	,,	राजभ्यः
आत्मनः	"	"	पं०	राज्ञ:	"	"
"	आत्मनोः	आत्मनाम्	ष०	,,	राज्ञोः	राज्ञाम्
आत्मनि	,,	आत्मसु	ぜ。	राज्ञि,राजि	ने ,,	राजसु
हे आत्मन्	हे आत्मानौ	हे आत्मानः	सं०	हे राजन्	हे राजानौ	हे राजानः

(२९) इवन् (कुत्ता) (दे० अ० ३३) (३०) युवन् (युवक) (दे० अ० ३३)

শ্বা	श्वानौ	श्वानः	प्र०	युवा	युवानौ	युवानः
श्वानम्	"	शुनः	द्वि०	युवानम्	"	यूनः
शुना	श्वभ्याम्	श्वभिः	तृ०	यूना	युवभ्याम्	युवभिः
ग्रुने	"	श्वभ्यः	च॰	यूने	,,	युवम्यः
ग्र नः	"	"	qo	यूनः	,,	"
"	शुनोः	शुनाम्	do	"	यूनोः	यूनाम्
गुनि	,,	श्वसु	せ。	यूनि	"	युवसु
हे श्वन्	हे श्वानौ	हे श्वानः	OF	हे युवन्	हे युवानौ	हे युवानः

१२८ प्रौढ-रचनानुवादकौमुदी (बृत्रहन् , मघवन् , करिन् , पथिन् , तादश् , विद्वस्)

(३२) मघवन् (इन्द्र) (दे० अ० ३४) (३१) वृत्रहन् (इन्द्र) (दे० अ० ३४) मघवानौ मघवानः प्र० मघवा वृत्रहणौ वृत्रहणः वृत्रहा मघोनः मघवानम् ,, द्वि० वृत्रघ्नः वृत्रहणम् " मघवभ्याम् मघवभिः वृत्रहभि: मघोना तृ० वृत्रहभ्याम् वृत्रय्ना मघोने मघवभ्यः च० वृत्रहभ्यः वृत्रघ्ने ,, मघोनः पं० वृत्रघ्नः ,, ,, मघोनोः ष० वृत्रघ्नोः वृत्रघ्नाम् ,, वृत्रिच वृत्राध्न } मघोनि मघवसु स० वृत्रहसु ,, हे मघवानौ हे मघवानः हे मघवन् हे वृत्रहणौ हे वृत्रहणः सं० हे वृत्रहन् सूचना—इसका ही मधवत् शब्द बनाकर भगवत् (शब्द ०२०) के तुल्य भी रूप चलावें।

(३४) पथिन् (प्रार्ग) (दे० अ० ३५) (३३) करिन् (हाथी) (दे० अ० ३५) पन्थानौ पन्थानः करिणः पन्थाः करिणौ करी प्र० पथ: पन्थानम् द्वि० करिणम् ,, " पथिभ्याम् पथिभिः करिभिः पथा करिणा करिभ्याम तृ० पथिभ्यः पथे करिभ्यः च० करिणे ,, पथ: करिणः 40 33 ,, ,, 33 पथाम् पथोः करिणोः. करिणाम् ष० ,, " करिष् पथि पथिषु करिणि स० 99 हे पन्थानौ हे पन्थानः हे करिणौ हे करिणः सं० हे पन्थाः हे करिन्

(३५) तादश (वैसा) (दे० अ० ३६) (३६) विद्वस् (विद्वान्) (दे० अ० ३७) विद्वांसौ विद्वांस: ताहशौ विद्वान् प्र॰ तादक् तादशः विद्वांसम् विदुषः द्वि० तादशम् ,, " विद्वद्भ्याम् विद्वद्भिः तादृग्भिः विदुषा तादशा ताहग्भ्याम् तृ० विदुषे विद्वदुभ्यः तादशे च० ताहग्भ्यः " ,, पं० विदुषः तादशः " 55 विदुषोः विदुषाम् ताहशोः तादशाम् ष० ,, विदुषि विद्रत्स तादृशि तादक्ष स० " CC-O. Dहे त्याहरू Trip के त्याहरू tion at है व्याहरू SDS). Bigitized Bहे डीवर्ज का है विद्वांसी है विद्वांस

(३७) पुंस् (पुरुष) (दे॰ अ॰ ३७) (३८) चन्द्रमस् (चन्द्रमा) (दे॰ अ॰ ३६)

पुमान्	पुमांसौ	पुमांस:	No	चन्द्रमाः	चन्द्रमसौ	चन्द्रमसः
पुमांसम्	,,	पुंस:	द्वि०	चन्द्रमसम्	"	"
पुंसा	पुंभ्याम्	पुंभि:	तृ०	चन्द्रमसा	चन्द्रमोभ्याम्	चन्द्रमोिमः
पुंसे	"	पुंभ्यः	च०	चन्द्रमसे	3)	चन्द्रमोभ्यः
पुंसः	"	,,	पं०	चन्द्रमसः	"	. 33
"	पुंसोः	पुंसाम्	do	,,	चन्द्रमसोः	चन्द्रमसाम्
पुंसि	"	पुंसु	の野	चन्द्रमसि	"	चन्द्रमस्सु
हे पुमन्	हे पुमांसौ	हे पुमांसः	सं०	हे चन्द्रमः	हे चन्द्रमसौ	हे चन्द्रमसः

(३९) श्रेयस् (अधिक प्रशंसनीय)

(**४०) अन**हुड् (बैस्र) (दे॰ अ॰ ३८)

(दे० अ० ३८)

श्रेयांसौ श्रेयांसः अनड्वान् अनड्वाहौ श्रेयान् प्र० अनड्वाहम् श्रेयसः द्धि० श्रेयांसम् अन्डुह: श्रेयोभिः श्रेयोभ्याम् अनडुहा अनडुद्भ्याम् अनडुद्भिः श्रेयसा तृ० श्रेयोभ्यः अनडुहे श्रेयसे च॰ अनडुद्भ्यः श्रेयसः qo अनडुहः ,, श्रेयसो: श्रेयसाम् अनडुहोः ष० अनडुहाम् 99 अनडुहि श्रेयस्य श्रेयसि स० अनुदुत्सु हे अनड्वन् हे अनड्वाही हे अनड्वाहः हे श्रेयांसः हे श्रेयन् हे श्रेयांसौ सं०

(ग) स्त्रीलिंग शब्द

(४१) रमा (लक्ष्मी) (दे० अ० ३)				(४२) मति (बुद्धि) (दे॰ अ॰ ३९)			
रमा	रमे	रमाः	प्र॰	मतिः	मती	मतयः	
रमाम्	"	,,	द्धि०	मतिम्	"	मतीः	
रमया	रमाम्याम्	रमाभिः	तृ०	मत्या	मतिभ्याम्	मतिभि:	
रमायै	"	रमाभ्यः	च॰	मत्यै, मतये	3 7	मतिम्यः .	
रमायाः	"	,,	φo	मत्याः, मतेः	"	"	
"	रमयोः	रमाणाम्	ष०	,, ,,	मत्योः	मतीनाम्	
रमायाम्	"	रमासु	स०	मत्याम्, मतौ	,,	मतिषु	
हे रमे	हे रमे	हे रमाः	सं०	हे मते	हे मती	हे मतयः	

(४३) नदी (नदी) (दे० अ० ४०)				(४४) लक्ष्मी (लक्ष्मी) (दे० अ० ४०)			
नदीं	नद्यौ	नद्यः	प्र॰	लक्ष्मीः	लक्ष्म्यौ	लक्ष्म्यः	
नदीम्	,,	नदीः	द्वि॰	लक्ष्मीम्	,,	लक्ष्मीः	
नद्या	नदीभ्याम्	नदीभिः	तृ•	लक्ष्म्या	लक्ष्मीभ्याम्	लक्ष्मीभिः	
नद्यै	,,	नदीभ्यः	च॰	लक्ष्मयै	,,	लक्ष्मीभ्यः	
नद्याः	,,	"	पं०	लक्ष्म्याः	"	,,	
,,	नद्योः	नदीनाम्	ष०	,,	लक्ष्म्योः	लक्ष्मीणाम्	
नद्याम्	"	नदीषु	स०	लक्ष्म्याम्	,,	लक्ष्मीषु	
हे नदि	हे नद्यौ	हे नद्यः	सं०	हे लक्ष्म	हे लक्ष्म्यौ	हे लक्ष्म्यः	

(৪५) स्त्री (स्त्री) (दे॰ अ॰ ४१) (৪६) श्री (लक्ष्मी) (दे॰ अ॰ ४१)

श्री: श्रियौ स्त्रियौ स्त्रियः श्रिय: प्र० स्त्रियम्, स्त्रीम् " स्त्रियः,स्त्रीःद्वि० श्रियम् ,, ,, श्रीभ्याम् स्त्रीभ्याम् स्त्रीभिः तृ० श्रिया स्त्रिया च॰ श्रियै, श्रिये ,, स्त्रिये स्त्रीभ्यः श्रीभ्यः ,, श्रियाः, श्रियः,, पं० स्त्रियाः " ,, ,, श्रियोः श्रीणाम्, श्रियाम् स्त्रियोः स्त्रीणाम् ष० श्रीषु स्त्रीषु श्रियाम्, श्रियि ,, स्त्रियाम् स० ,, हे श्रीः हे श्रियौ हे श्रियः हे स्त्रियों हे स्त्रियः हे स्त्रि सं०

धेनुः धेनू धेनवः वधूः वध्वौ प्र॰ वध्वः द्वि० धेनुम् धेनूः वधूम् वधुः ,, धेनुभ्याम् धेनुभिः धेन्वा तृ० वध्भ्याम् वधूभिः वध्वा धेन्वै, धेनवे च॰ वध्वै धेनुभ्यः वध्भ्यः ,, " धेन्वाः, धेनोः ,, पं० वध्वाः 99 " धेन्वोः धेनूनाम् ष० वध्वोः वधुनाम् "

(४७) घेनु (गाय) (दे॰ अ॰ ४२)

धेन्वाम् , धेनौ ,,

हे धेनो

हे धेनू

धेनुषु

हे धेनवः

(४८) वधू (बहू) (दे॰ अ॰ ४२)

हे वध्वौ

स०

सं०

वध्वाम्

हे वधु

(४९) स्वस् (बहिन) (दे० अ० ४३)	(५०) मात (माता) (दे० अ० ४३)
-------------------------------	-----------------------------

स्वसा	स्वसारी	स्वसार:	प्र॰	माता	मातरौ	मातरः
स्वसारम्	"	स्वसॄ:	द्वि०	मातरम्	,,	मातृ:
स्वस्रा	स्वस्थाम्	स्वस्भिः	तृ ०	मात्रा	मातृभ्याम्	मातृभिः
स्वस्रे	"	स्वसृभ्य:	च०	मात्रे	,,	मातृभ्यः
स्वसु:	"	,,	पं०	मातुः	"	,,
"	स्वस्रोः	स्वसॄणाम्	ष०	"	मात्रोः	मातृणाम्
स्वसरि	"	स्वसृषु	その	मातरि	,,	मातृषु
हे स्वसः	हे स्वसारौ	हे स्वसारः	सं०	हे मातः	हे मातरौ	हे मातरः

(५१) नौ (नाव) (दे० अ० ४४) (५२) वाच् (वाणी) (दे० अ० ४४) नौः नावौ नावः प्र० वाक्,-ग् वाचौ वाचः नावम् द्वि॰ वाचम् " नौभ्याम् " नौभिः 99 नावा तृ० वाचा वाग्भ्याम् वाग्भिः नावे नौभ्यः वाचे マつ वाग्भ्यः नावः पं० वाचः " 53 नावोः नावाम् वाचोः ष० 99 वाचाम् नावि. नौषु वाचि स० वाक्षु हे नावौ हे नौः हे नावः सं० हे वाक्,-ग्वाचौ हे वाचः

(५३) स्नज् (माला) (दे॰ अ॰ ४५) (५४) सरित् (नदी) (दे॰ अ॰ ४५)

सक्	स्रनौ	स्रजः	До	सरित्	सरितौ	सरितः
स्रजम्	"	"	द्वि०	सरितम्	,,	,,
स्रना	स्रग्याम्	स्राग्भः	तृ०	सरिता	सरिद्भ्याम्	सरिद्भिः
स्रजे	"	स्रग्भ्य:	च०	सरिते	,,	सरिद्भ्यः
स्रजः	"	"	фo	सरितः	"	,,
"	स्रजो:	स्रनाम्	ष०	,,	सरितोः ं	सरिताम्
स्रजि	,,	स्रक्षु	40	सरिति	"	सरित्सु
हे सक्	हे सजी	स्रजः	सं०	हे सरित्	हे सरितौ	हे सरितः

द्वि० अपः समिधम् समिद्भिः अद्भिः समिद्भ्याम् तृ० समिधा समिद्भ्यः च० अद्भ्यः समिधे ,, фo समिधः " ,, " समिधोः समिधाम् ष० अपाम् समित्सु समिधि स० अप्सु ,, हे समिधः हे समिधौ सं० हे आपः हे समित्

> सूचना-अप् के रूप केवल बहुवचन में ही चलते हैं।

(५७) गिर् (वाणी) (दे० अ० ४७) (५८) पुर् (नगर) (दे० अ० ४७) पुरौ गिरौ गिर: गीः पूः पुरः प्र० द्वि० पुरम् गिरम् गीर्भिः पूर्श्याम् पूर्भिः गीभ्याम् गिरा तृ० पुरा गीर्भ्यः पुरे पूर्भ्यः गिरे च० ,, ,, पं० गिरः पुरः ,, " गिराम् गिरोः पुरोः पुराम् ष० " ,, गीर्ष पुरि पूर्षु गिरि स० 99 " हे गिरौ हे गिरः हें पुरौ Ġ0 हे पूः हे पुरः हे गीः

(५९) दिश् (दिशा) (दे० अ० ४८) (६०) उपानह् (जूता) (दे० अ० ४८)

दिक्	दिशौ	दिश:	प्र॰	उपानत्	उपानहौ	उपानहः
दिशम्	"	"	द्वि०	उपानहम्	"	,,
दिशा	दिग्भ्याम्	दिग्भिः	तृ०	उपानहा	उपानद्भ्याम	ऱ् उपानद्भिः
दिशे	"	दिगभ्यः	च॰	उपानहे	"	उपानद्भ्यः
दिश:	"	"	पं०	उपानहः	,,	"
,,	दिशोः	दिशाम्	ष०	"	उपानहोः	उपानहाम्
दिशि	"	दिक्षु	ぜ。	उपानहि	,,	उपानत्सु
हे दिक	हे दिशी	हे दिशः	सं०	हे उपानत	हे उपानही	हे उपानहः

(घ) नपुंसकिंग शब्द

(६१) गृह	(घर) (दे॰ अ	10 7)		(६२) व	ारि (जल) (दे	० अ० ४९)
गृहम्	गृहे	गृहाणि	प्र॰	वारि	वारिणी	वारीणि
"	,,	"	द्वि०	"	,,	"
गृहेण	गृहाभ्याम्	गृहै:	तृ०	वारिणा	वारिभ्याम्	वारिभिः
गृहाय	,,	गृहेभ्यः	च०	वारिणे	"	वारिभ्यः
गृहात्	,,	,,	पं०	वारिणः	"	"
गृहस्य	गृहयोः	गृहाणाम्	ष०	,,	वारिणोः	वारीणाम्
गृहे	,,	गृहेषु	せ。	वारिणि	"	वारिषु
हे गृह	हे गृहे	हे गृहाणि	सं०	हे वारि, वा	रे हे वारिणी	हे वारीणि
		₹	्चना-	—मनोहारिन्	आदि इन्	अन्तवालों के
			रूप	वारि के तुल	य चलेंगे। दे	स्थानों पर
			अन	त्तर होगा।	षष्ठी बहु॰ में '	इनाम्' अन्त
		,	में :	रहेगा और सं	० एक० में 'इन	(1)
					The same of the sa	

(६३) द्धि दिध	प्र (दही) (दे० दिधनी	अ० ४९) दधीनि	त्र) (६४)	अक्षि (आँख) अक्षि	(दिधवत्) (दे अक्षिणी	० अ० ५०) अक्षीणि
" दध्ना दध्ने	" दिधम्याम्	" दिधिभिः दिधिभ्यः	द्वि० तृ० च०	,, अक्ष्णा अक्ष्णे	" अक्षिम्याम्	'' अक्षिभिः अक्षिभ्यः
दध्नः ,, दध्न,दधि हे दधि, द	" दुध्नोः ने भ	,, दध्नाम् दिधषु हे दधीनि	पं॰ प॰ स॰ सं॰	अक्ष्णः ,, अक्ष्णि, अक्षपि हे अक्षि, अक्षे	" अक्ष्णोः ग ,,	" अक्ष्णाम् अक्षिषु हे अक्षीणि

(६५) अस्थि	(हड़ी) (दिधवत	्र)(दे०अ०५	0)	(६६) मधु	(शहद) (दे॰	अ० ५१)
अस्थि	अस्थिनी	अस्थीनि	प्र०	मधु	मधुनी	मधूनि
"	"	"	द्वि०	,,	"	"
अस्पना	अस्थिभ्याम्	अस्थिभिः	तृ०	मधुना	मधुम्याम्	मधुभिः
अस्प्ने	"	अस्थिभ्यः	च॰	मधुने	"	मधुभ्यः
अस्प्नः	"	,,	पं०	मधुनः	,,	33
"	अस्थ्नोः	अस्प्नाम्	ष०	"	मधुनोः	मधूनाम्
अस्प्नि,अस्यनि	i ,,	अस्यिषु	स०	मधुनि	,,	मधुषु
हे अस्यि, अस्		हे अस्थीनि	सं०	हे मधु, म	ाधो हे मधुनी	हे मधूनि

स्चना — कर्तृ के तृतीया एक से सप्तमी बहु तक कर्तृ पुं (शब्द ११) के तुल्य भी रूप चलेंगे।

(६९) नाम	न् (नाम) (दे॰	अ० ५३)	(७०) शर्भन् (सुख) (दे॰ अ॰ ५३)			
नाम	नाम्नी, नामर्न	नामानि	प्र॰	शर्म	शर्मणी	शर्माणि
25	" "	. ,,	द्वि०	"	"	" शर्मभिः
नाम्ना	नामभ्याम्	नामभिः	तृ॰	शर्मणा	शर्मभ्याम्	
नाम्ने	"	नामभ्यः	च॰	शर्मणे	"	शर्मभ्यः
नाम्नः	"	55	фo	शर्मणः	"	" शर्मणाम्
"	नाम्नोः	नाम्नाम्	No	"	शर्मणोः	शसंणाम्
नाम्नि,नामनि	Ι,,	नामसु	ぜ。	शर्मणि	"	शर्मसु
हे नाम, नाम	न् नाम्नी, नामन	री नामानि	सं०	हे शर्म, श	र्मन् हे शर्मणी	हे शर्माणि

(७२) अहन् (दिन) (दे० अ० ५४) (७१) ब्रह्मन् (ब्रह्म, वेद) (दे० अ० ५४) अही, अहनी अहानि ब्रह्मणी ब्रह्माणि अहः प्रव ब्रह्म द्वि० " 37 " ब्रह्मभिः अहोभिः अह्ना ब्रह्मणा ब्रह्मभ्याम तृ० अहोभ्याम् ब्रह्मणे अह अहोभ्यः च० ब्रह्मभ्यः ,, ,, ब्रह्मणः अहः y0 ,, ,, " ब्रह्मणोः ब्रह्मणाम् अह्नोः ष० अहाम् ,, ब्रह्मणि ब्रह्मसु स० हे ब्रह्म, ब्रह्मन् हे ब्रह्मणी हे ब्रह्माणि हे अही, अहनी हे अहानि हे अहः सं०

(७३) हविष	् (हचि) (दे॰	अ० ५५)		(७४) धनुष्	(धनुष) (दे	अ० ५५)
हविः	हविषी	हवींषि	प्र॰	धनुः	धनुषी	धनूंषि
"	,,	"	द्धि०	,,	,,	"
हविषा	हविर्म्याम्	हविभिः	तृ॰	धनुषा	धनुर्भ्याम्	धनुर्भिः
हविषे	,,	हविभ्यः	च०	धनुषे	"	धनुर्म्यः
हविष:	,,	"	पं०	धनुषः	"	,,
,,	हविषो:	हविषाम्	ष०	"	धनुषोः	धनुषाम्
हविषि	"	हविःषु,-ष्षु	स•	धनुषि	,,	धनुःषु,-ष्यु
हे हविः	हे हिवषी	हवींषि	सं०	हे धनुः	हे धनुषी	हे धनूंषि
	San Trans					
(७५) पयस्	(दूध, जल)	(दे० अ०	५६)	(७६) मनस	म् (मन) (दे	० अ० ५६)
पयः	पयसी	पयांसि	प्र॰	मनः	मनसी	मनांसि
,,	,,	,,	द्वि०	,,	,,	"
पयसा	पयोभ्याम्	पयोभिः	तृ०	मनसा	मनोभ्याम	न् मनोभिः
पयसे	,,	पयोभ्यः	च०	मनसे	,,	मनोभ्यः
पयसः	"	"	do	मनसः	"	,,
,,	पयसोः	प्यसाम्	ष०	"	मनसोः	मनसाम्
पयसि	,,	पयःसु,-स	सुस०	मनसि	,,	
हे पयः	हे पयसी	हे पयांसि	सं•	हे मनः	हे मनसी	हे मनासि
ter a		(多) 和	पर्व ना	प शब्द		
(७७) (क)स	र्वि (सब)पुं हिं			७७) (ग) सर्व (स्त्रीहिंग) (दे॰ अ॰ ८)
सर्वः	सर्वो	सर्वे		खर्वा	सर्वे	
सर्वम्	,,	सर्वान्	हि०	सर्वाम्	,,	,,
सर्वेण	सर्वाभ्याम्		तृ•	सर्वया		सर्वाभिः
सर्वस्मै	,,	सर्वेभ्यः	च॰	सर्वस्यै	"	सर्वाभ्यः
सर्वस्मात्	"	"	पं०	सर्वस्याः	"	"
सर्वस्य	" सर्वयोः	सर्वेषाम्	ष०	"	सर्वयोः	सर्वासाम्
सर्वस्मिन्	,,	सर्वेषु	स०	सर्वस्याम्	"	सर्वासु
	"					

(৩৩) (ख) सर्व (नपुंसकछिंग) (दे॰ अ॰ ७) सर्वाणि सर्वम् सर्वे प्र० द्वि० शेष पुंलिंग के तुल्य (दे० ७७, क)

```
(७८)(क)विश्व(सब)पुं लिंग(दे०अ०६)(७९)(क)पूर्व(पहला) पुं लिंग(दे०अ०६)
                                                                           पूर्वी
                                                                                        पूर्वे, पूर्वाः
                                                          पूर्व:
                     ਰਿਸ਼ੀ
                                  विश्वे
                                                  प्र०
        विश्वः
                                                                                       पूर्वान्
                                                          पूर्वम्
                                                 द्वि०
                                  विश्वान्
        विश्वम्
                                                                                       पूर्वै:
                                                                           पूर्वाभ्याम्
                                                          पूर्वेण
                     विश्वाभ्याम् विश्वैः
        विश्वेन
                                                  तृ०
                                                                                        पूर्वेभ्यः
                                                          पुर्वस्मै
                                  विश्वेभ्यः
        विश्वस्मै
                                                 च०
                                                                           ,,
                                                          पूर्वस्मात्
        विश्वस्मात्
                                                  प०
                                                                           ,,
                                  "
                                                          पूर्वात्
                                                                          पूर्वयोः
                                                                                         पूर्वेषाम्
                                 विश्वेषाम्
                                                          पूर्वस्य
                      विश्वयोः
                                                  No
        विश्वस्य
                                                          पूर्वस्मिन् , पूर्वे
                                                                                         पूर्वेषु
                                  विश्वेषु
        विश्वस्मिन्
                                                  स०
         (৩८)(ख)विश्व(नपुंसकछिंग)(दे०अ०७)(७९)(ख)पूर्व(नपुंसकछिंग)(दे०अ०७)
                                                                                         पूर्वाणि
                                                           पूर्वम्
                                                                           पूर्वे
                                     विश्वानि
                      विश्वे
        विश्वम
                                                    प्र०
                                                    द्धि०
                                                            (शेष पुंलिंग के तुल्य (देखो ७९, क)
        शेष पुंलिंग के तुल्य (दे० अ० ७८, क)
                                                       (৩९) (ম) पूर्व (स्त्रीलिंग) (दे०अ०८)
        (७८) (ग) विश्व(स्त्रीलिंग)(दे०अ०८)
                                                          पूर्वा
                                                                           पूर्वे
                                    विश्वा:
        विश्वा
                     विश्वे
                                                  प्र०
                                                           पूर्वाम्
        विश्वाम्
                                                 द्वि०
                                                                            ,,
                                                                                          पूर्वाभि:
                                                           पूर्वयां
                    विश्वाभ्याम
                                    विश्वाभिः
                                                                            पूर्वाभ्याम्
        विश्वया
                                                  तृ०
                                                                                         पूर्वाभ्यः
                                                           पूर्वस्यै
        विश्वस्यै
                                    विश्वाभ्यः
                                                  च०
                                                                            ,,
                                                           पूर्वस्याः
        विश्वस्याः
                                                   पं०
                                                                            ,,
                                                                                         ,,
                                                                                         पूर्वासाम्
                                                                           पूर्वयोः
                     विश्वयो:
                                    विश्वासाम्
                                                   Q0
        ,,
                                                                                         पूर्वासु
        विश्वस्याम्
                                                           पूर्वस्याम्
                                    विश्वासु
                                                  स०
        (८०)(क)अन्य(दूसरा)पुं लिंग(दे०अ० ६) (८०)(ग)अन्य(स्त्रीलिंग)(दे० अ०८)
                      अन्यौ
        अन्यः
                                     अन्ये
                                                   प्र०
                                                          अन्या
                                                                         अन्ये
                                                                                       अन्याः
        अन्यम्
                                                  द्वि०
                                     अन्यान
                                                          अन्याम
        अन्येन
                                     अन्यैः
                      अन्याभ्याम्
                                                  तृ०
                                                          अन्यया
                                                                        अन्याभ्याम्
                                                                                       अन्याभिः
        अन्यस्मै
                                     अन्येभ्य:
                                                          अन्यस्यै
                                                  च०
                                                                                       अन्याभ्यः
                                                                         ,,
        अन्यस्मात्
                                                   पं०
                                                          अन्यस्याः
                                     ,,
                                                                         99
                                     अन्येषाम्
                       अन्ययो:
        अन्यस्य
                                                   ष०
                                                                         अन्ययोः
                                                                                       अन्यासाम्
                                                          ,,
        अन्य सिन्
                                     अन्येषु
                                                   स०
                                                          अन्यस्याम्
                                                                                        अन्यासु
                                                                         5,
        (८०)(ख)अन्य(नपु'सकलिंग)(दे॰ अ॰ ৬)
                       अन्ये
                                     अन्यानि
       अन्यत
                                                   प्र०
                                                  द्वि०
CC-O. ऒ्रिक्संस्टिंग केpaसाट(स्टेस्टो०८३,ऽक्र)(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha
```

```
(८१)(क)तत्(वह)पुंछिंग (दे०अ० ६) (८२)(क)यत् (जो)पुंछिंग (दे०अ० ६)
                 तौ
                                                               यौ
                               ते
                                                                           ये
                                           प्र०
                                                     यः
     सः
                              तान्
                                          द्वि०
                                                    यम्
                                                                           यान्
     तम्
                                                               ,,
                  ,,
                              तैः
                                                                          यै:
                                                    येन
     तेन
                                           त्र
                                                               याभ्याम्
                  ताभ्याम्
                                                    यस्मै
                                                                           येभ्यः
     तस्मै
                               तेभ्यः
                                           च०
                                                               ,,
                  ,,
                                           qo
                                                    यस्मात्
     तस्मात्
                  ,,
                                                    यस्य
                                                                ययोः
                                                                           येषाम्
                              तेषाम्
                                           ष०
                  तयोः
     तस्य
                                                    यस्मिन्
                                                                           येषु
                              तेषु
     तस्मिन्
                                           स०
     (८१)(ख)तत्(नपु सकर्छिग)(दे०अ०७)(८२)(ख)यत्(नपु सकर्छिग)(दे०अ०७)
                                                                           यानि
                                                                ये
                               तानि
                                           प्र॰
                                                     यत्
     तत्
                                           द्वि०
                                                    शेष पुंलिंग के तुल्य (देखो ८२, क)
     शेष पुंलिंग के तुल्य (देखो ८१, क)
                                                  (८२)(ग)यत्(स्त्रीलिंग)(दे॰ अ॰ ८)
      (८१) (ग)तत्(स्त्रीलिंग)(दे॰ अ॰ ८)
                                                                            याः
                                           प्र०
                                                     या
                               ताः
     सा
                                           द्वि०
                                                     याम्
      ताम्
                               ,,
                                                                            याभिः
                                                                 याभ्याम्
                                                     यया
                               ताभिः
                                           तृ०
                   ताभ्याम्
      तया
                                                     यस्यै
                                                                            याभ्यः
      तस्यै
                               ताभ्यः
                                           च०
                   ,,
                                          · To
                                                     यस्थाः
      तस्याः
                               ,,
                   "
                                                                 ययोः
                                                                             यासाम्
                               तासाम्
                                            ष०
                   तयोः
                                                      53
      ,,
                                                     यस्याम्
                                                                            यासु
                                            स०
                                तासु
      तस्याम्
                    "
                                                    (८४) (क) किम् (क्या) पुंछिंग
      (८३) (क) एतत् (यह) पुंछिंग
                                                              (तत् के तुल्य)
                 (तत् के तुल्य)
                                                                  कौ
                                                                               के
                    एतौ
                                 एते
                                            प्र०
                                                      कः
      एषः
                                           द्वि०
                                                      कम
                                                                               कान
                                 एतान्
      एतम्
                                                     शेष तत् पुंलिंग (८१, क) के तुल्य।
      शेष तत् पुंलिंग (८१, क) के तुल्य।
                                                       (८४) (ख) किम् (नपुंसक०)
      (८३) (ख) एतत् (नपुं सकछिंग)
                                                                    के
                                                                             कानि
                                                       किम
                                 एतानि
                                             प्र॰
                    एते
      एतत्
                                            द्वि०
                                                      शेष तत् नपुं ० (८१, ख) के तुल्य।
      शेष तत् नपुं० (८१, ख) के तुल्य।
                                                         (८४) (ग) किम् (स्त्रीलिंग)
      (८३) (ग) एतत् (स्त्रीिंहंग)
                                              प्र
                                                       का
                                                                              काः
                    एते
      एषा
                                  एताः
                                             द्वि०
                                                        काम्
      एताम्
      शेष तत् स्त्रीलिंग (८१, ग) के तुल्य।
                                                     शेष तत् स्त्रीलिंग (८१, ग) के तुल्य।
CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha
```

```
प्रौढ-रचनानुवादकौमुदी (युष्मद्, असाद्, इदम्, अदस्)
      936
                                                (८६) अस्मद् (मैं) (दे० अ० १२)
      (८५) युप्मद् (तू) (दे० अ० ११)
                                                            आवाम्
                                                                          वयम्
                                           प्र०
                                                 अहम्
                   युवाम्
      त्वम्
                                                                         अस्मान्
      त्वाम्
      त्वा
                   वाम्
                                                                          अस्माभिः
                                                            आवाभ्याम्
                                युष्माभिः
                                          तृ०
      त्वया
                   युवाभ्याम्
                                               ∫ मह्मम्
मे
                                                                          अस्मभ्यम्
      तुभ्यम्
ते
                   ,,
                                                                          नः
                   वाम्
                                                            आवाभ्याम्
                                                                          अस्मत्
                                                  मत्
                   युवाभ्याम्
                               युष्मत्
      त्वत्
                                                            आवयोः
नौ
                                                                          अस्माकम्
                   युवयोः
      तव
                               युष्माकम्
                                                                          नः
      ते
                   वाम
                                                 मिय
                                                            आवयोः
      त्विय
                                                                          अस्मासु
                   युवयो:
                                          स०
                               युष्मासु
                                                 (८८) (क) अदस् (वह) पुंछिग
      (८७) (क) इदम् (यह) पुंछिंग
                                                          (दे० अ० १०)
             (दे॰ अ॰ ९)
                                                                           अमी
                   इमौ
                                                असौ
                                                              अमू
                                इमे
     अयम्
                                          प्र०
                                          द्वि०
                                इमान्
                                                अमुम्
                                                                           अमृन्
     इमम्
                                                              99
                                                                           अमीभिः
                                एभिः
     अनेन
                   आभ्याम्
                                                              अम्भ्याम्
                                          तृ०
                                                 अमुना
                                                अमुष्मै
                                                                           अमीभ्यः
     अस्मै
                                          च०
                                एभ्यः
                                                              "
                   ,,
                                          qo
                                                अमुष्मात्
     अस्मात्
                   ,,
                                ,,
                                                              "
                                                              अमुयोः
                                                                           अभीषाम्
                   अनयोः
                                                अमुख
     अस्य
                                एषाम्
                                          प्र
                                                अमुष्मिन्
                                                                          अमीषु
     अस्मिन्
                                एषु
                                          स०
                                                              "
                   "
     (८७) (ख) इदम् (नपु सक०)
                                                  (८८) (ख) अदस् (नपु'सक०)
                  इमे
                              इमानि
                                                                          अमूनि
                                                             अमू
                                               अदः
     इदम्
                                         प्र०
                                        द्वि०
     शेष पुंलिंग के तुल्य (देखो ८७, क)
                                                शेष पुंलिंग के तुल्य (देखो ८८, क)
    (८७) (ग) इदम् (स्त्रीलिंग)
                                                (८८) (ग) अदस् (स्त्रीलिंग)
                                               असौ
    इयम्
                  इमे
                              इमाः
                                         प्र॰
                                                             अमू
                                                                          अम्ः
    इमाम्
                                        द्वि०
                                               अमूम्
                   "
                                                                          अमूभिः
    अनया
                  आभ्याम्
                              आभिः
                                               अमुया
                                         तृ०
                                                             अमुभ्याम्
    अस्यै
                              आभ्यः
                                               अमुष्यै
                                         च०
                                                                          अमूभ्यः
                  "
                                                             33
    अस्याः
                                         पं०
                                               अमुष्याः
                  "
                              "
                                                             "
CC-C. Dr. Ramdev Tripath Collection at Sarai (CSDS). Digitized By Siddla Gangotr Cycle Kosha
```

स०

अमुष्याम्

अम्षु

. आसु.

अस्याम्

"

```
(९०) द्वि (दो) (दे० अ० १४)
       (८९) एक (एक) (दे० अ० १३)
       पुं लिंग
                                         स्त्रीलिंग
                                                          पुं लिग
                                                                          नपुं०, स्त्रीलिंग
                       नपुंसक
                                                           द्रौ
                                                    प्र०
                                         एका
       एक:
                       एकम्
                                                   द्वि०
                                         एकाम्
       एकम्
                                                           99
                                                                          ,,
       एकेन
                       एकेन
                                         एकया
                                                    तृ०
                                                          द्राभ्याम्
                                                                          द्राभ्याम्
                                        एकस्यै
       एकस्मै
                       एकस्मै
                                                    ব৽
                                                                           ,,
                                                    90
                       एकस्मात्
                                         एकस्याः
       एकस्मात्
                                                           ,,
                                                           द्वयोः
                                                                           द्वयोः
                       एकस्य
                                                    No
       एकस्य
                                         99
       एकस्मिन्
                       एकस्मिन्
                                         एकस्याम् स०
                                                           ,,
       सूचना-एक के केवल एक० में रूप चलते हैं। सूचना-द्वि के द्वि० में ही रूप चलेंगे।
                                                      (९२) चतुर् (चार) (दे० अ० १६)
       (९१) (त्रि) तीन) (दे० अ०१५)
                                                      षुं०
                                                                                     स्त्री०
                                                                     नपुं०
                                      स्त्री०
       पुं
                     नपु ०
                                                                     चत्वारि
                                                                                     चतस्रः
                      त्रीणि
                                      तिस्रः
                                                      चत्वारः
                                               प्र०
       त्रयः
                                              द्वि०
                                                     चतुरः
       त्रीन्
                      99
                                                                                  चतस्भिः
                                                                     चतुर्भृः
                                      तिस्भिः तृ०
                                                     चतुभिः
                      त्रिभि:
       त्रिभिः
                                                                     चतुर्भ्यः
                                                     चतुर्भ्यः
                                                                                  चतसभ्यः
       त्रिभ्यः
                      त्रिभ्यः
                                      तिसभ्यः च०
                                               90
                      99
                                                     चतुर्णाम्
                                                                    चतुर्णाम्
                                                                                  चतस्णाम्
                                      तिसुणाम् ष॰
       त्रयाणाम्
                      त्रयाणाम्
                                                                    चतुष्
                                      तिसृष
                                                     चतुष्
                                                                                  चतसृष्
                      त्रिषु
                                              स०
       त्रिषु
       सूचना-त्रि के बहु० में ही रूप चलते हैं। सूचना-चतुर् के बहु० में ही रूप चलते हैं।
                                         (९४) वव (छः)
                                                                      (९५) सप्तन् (सात)
       (९३) पश्चन् (पाँच)
                                         षट्, षड् प्र॰
                                                                      सप्त
       पञ्च
                                                    द्वि०
                                                                      33
       99
                                                                      सप्तभिः
                                          षड्भिः
                                                    तृ०
       पञ्चभिः
                                                                       सप्तभ्यः
                                                    च०
                                         षड्भ्यः
       पञ्चभ्यः
                                                     Yo
                                                                       99
                                          "
                                                                       सप्तानाम्
                                          बण्णाम्
                                                     ष०
        पञ्चानाम्
                                                                       सप्तसु
                                          षट्सु
                                                     स०
        पञ्चसु
टC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha
```

१४० प्रौढ-रचनानुवादकौमुदी (अष्टन् , नवन् , दशन् , कति, उभ)

(९६) अष्टन् (आठ)		(९७) ন	वन् (नौ)	(९८) दशन् (दश)
अष्ट	अष्टौ	प्र॰	नव	दश
"	,,	द्वि०	"	,,
अष्टिम:	अष्टाभिः	तृ ०	नवभिः	दशभिः
अष्टभ्यः	अष्टाभ्यः	च०	नवभ्यः	दशभ्यः
"	,,	पं०	>>.	,,
अष्टानाम्	अष्टानाम्	व०	नवानाम्	दशानाम्
अष्टसु	अष्टासु	स०	नवसु	दशसु

सूचना-अष्टन्, नवन्, दशन् के रूप बहुवचन में ही चलते हैं।

(९९) कति (कितने) (र	दे० अ० ५९)	(१००) उम (दोनों) (दे॰ अ॰ ६०)			
10 10 10 10 10		पुं॰	नपुं०, स्त्री०		
कति	у.	उभौ	उमे		
,,	द्वि०	"	,,		
कतिभिः	तृ ०	उभाभ्याम्	उभाभ्याम्		
कतिभ्यः	ৰ ০	"	,,		
"	Чo	"	"		
कतीनाम्	ष०	उभयोः	उभयोः -		
कतिषु	स०	"	,,		
सूचना-कति के रूप बर्	हु० में ही	सूचना-उभ वे	ह रूप तीनों लिंगों में		
चलते हैं।		केवल 1	द्विवचन में ही चलते हैं।		

(२) संख्याएँ

१ एकः, एकम्, एका	२९ नवविंशतिः	५३ त्रिपञ्चाशत्
२ द्वौ, द्वे, द्वे	एकोनत्रिंशत्	त्रयःपञ्चारात्
३ त्रयः, त्रीणि, तिस्रः	३० त्रिंशत्	५४ चतुःपञ्चारात्
४ चत्वारः, चत्वारि,	३१ एकत्रिंशत्	५५ पञ्चपञ्चाशत्
चतस्रः	३२ द्वात्रिंशत्	५६ षट्पञ्चाशत्
५ पञ्च	३३ त्रयस्त्रिशत्	५७ सप्तपञ्चारात्
६ षट्	३४ चतुस्त्रिशत्	५८ अष्टपञ्चारात्
७ सप्त	३५ पञ्चत्रिंशत्	अष्टापञ्चाशत्
८ अष्ट, अष्टी	३६ षट्त्रिंशत्	५९ नवपञ्चाशत्
९ नव	३७ सप्तत्रिंशत्	एकोनषष्टिः
१० दश	३८ अष्टात्रिंशत्	६० षष्टिः
११ एकादश	३९ नवत्रिंशत्	६१ एकषष्टिः
१२ द्वादश	एकोनचत्वारिंशत्	६२ द्विषष्टिः, द्वाषष्टिः
१३ त्रयोदश	४० चत्वारिंशत्	६३ त्रिषष्टिः
१४ चतुर्दश	४१ एकचत्वारिंशत्	त्रयःषष्टिः
१५ पञ्चदश	४२ द्विचत्वारिंशत्	६४ चतुःषष्टिः
१६ घोडश	द्वाचत्व।रिशत्	६५ पञ्चषष्टिः
१७ सप्तदश	४३ त्रिचत्व।रिंशत्	६६ षट्षष्टिः
	त्रयश्चत्वारिंशत्	६७ सप्तषष्टिः
१८ अष्टादश	४४ चतुश्रत्वारिंशत्	६८ अष्टषष्टिः
१९ नवदश	४५ पञ्चचत्वारिंशत्	अष्टाषष्टिः
एकोनविंशतिः	४६ षट्चत्वारिंशत्	६९ नवषष्टिः
२० विंशतिः	४७ सप्तचत्वारिंशत्	एकोनसप्ततिः
२१ एकविंशतिः	४८ अष्टचत्वारिंशत्	७० सप्ततिः
२२ द्वाविंशतिः	अष्टाचत्वारिंशत्	७१ एकसप्ततिः
२३ त्रयोविंशतिः	४९ नवचत्वारिंशत्	७२ द्विसप्ततिः
२४ चतुर्विशतिः	एकोनपञ्चाशत्	द्वासप्तिः
	५० पञ्चाशत्	७३ त्रिसप्ततिः
२५ पञ्चविंशतिः		त्रयःसप्ततिः
२६ षड्विंशतिः	५१ एकपञ्चारात्	
२७ सप्तविंशतिः	५२ द्विपञ्चाशत्	७४ चतुःसप्ततिः
		ार्थः तत्त्वसंचिः

८५ पञ्चाशीतिः	त्रयोनवतिः
८६ षडशीतिः	९४ चतुर्नवतिः
८७ सप्ताशीतिः	९५ पञ्चनवतिः
८८ अष्टाशीतिः	९६ ष्रण्णवतिः
८९ नवाशीतिः	९७ सप्तनवतिः
ं एकोननवतिः	९८ अष्टनवतिः
९० नवतिः	अष्टानवतिः
९१ एकनवतिः	९९ नवनवतिः
९२ द्विनवतिः	एकोनशतम्
द्वानवतिः	१०० शतम्।
९३ त्रिनवतिः	
	८६ षडशीतिः ८७ सप्ताशीतिः ८८ अष्टाशीतिः ८९ नवाशीतिः एकोननवतिः ९० नवतिः ९१ एकनवतिः ९२ द्विनवतिः द्वानवतिः

१ इजार—सहस्रम् । १० हजार—अयुतम् । १ लाख—लक्षम् । १० लाख—नियुतम् , प्रयुतम् । १ करोड़—कोटिः । १० करोड़—दशकोटिः । १ अरब—अर्बुदम् । १० अरब—दशार्बुदम् । १ खरब—खर्वम् । १० खरब—दशखर्वम् । १ नील— नीलम् । १० नील—दशनीलम् । १ पद्म—पद्मम् । १० पद्म—दशपद्मम् । १ शंख — शंखम् । १० शंख—दशशंखम् । १ महाशंख—महाशंखम् ।

सूचना—१. (क) १०१ आदि संख्याओं के लिए अधिक शब्द लगाकर संख्या-शब्द बनावें। जैसे—१०१ एकाधिकं शतम्। १०२ द्वयधिकं शतम् आदि। (ख) २०० आदि के लिए दो आदि संख्यात्राचक शब्द पहले रखकर बाद में 'शती' रखें, या शत पहले रखकर द्वयम्, त्रयम् आदि रखें। जैसे—२००, द्विशती, शतद्वयम्। ३०० त्रिशती, शतत्रयम्, ४०० चतुःशती, ५०० पञ्चशती, ६०० षट्शती, ७०० सप्तशती (हिन्दी सतसई), ८०० अष्टशती, ९०० नवशती आदि।

- २. त्रि ३ से लेकर १८ (अष्टादशन्) तक सारे शब्दों के रूप केवल बहु-बचन में चलते हैं। दशन् से अष्टादशन् तक दशन् के तुल्य।
- ३. एकोनविंशति से नवविंशति तक सारे शब्द एकवचनान्त स्त्रीलिंग हैं। इनके रूप एकवचन में ही चलते हैं। इकारान्त विंशति, सप्तति, अशीति, नवति तथा जिनके अन्त में ये हों, उनके रूप मित के तुल्य चलेंगे। तकारान्त त्रिंशत्, चल्वारिंशत्, पञ्चाशत् के रूप सरित् के तुल्य (शब्द सं० ५४) चलेंगे।
- ४. शतम्, सहस्रम्, अयुतम्, लक्षम्, नियुतम्, प्रयुतम् आदि शब्द सदा एकवचनान्त नपुंसक हैं। गृहवत् एकवचन में रूप चलेंगे। कोटि के मतिवत्। शत, सहस्र आदि शब्द काव्यों में अनन्त संख्या के अर्थ में भी प्रयुक्त होते हैं। 'शतं सहस्रमयुतं सर्वमानन्त्यवाचकम्'।
- ५. संख्येय शब्द (प्रथम, द्वितीय आदि) बनाने के लिए अथ्यास १८ का CC-Oत्याकर्णाक्स्तागुवthi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(३) धातुरूप-संग्रह

आवश्यक-निर्देश

१. संस्कृत में सारी धातुओं को १० विभागों में बाँटा गया है। उन्हें 'गण' कहते हैं, अतः १० गण हैं। धातु और तिङ् (ति, तः आदि) प्रत्यय के बीच में होनेवाले अ, उ, नु आदि को 'विकरण' कहते हैं। इनके अन्तर के आधार पर ही ये गण बनाए गए हैं। ये 'विकरण' लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् में ही होते हैं, अन्य ६ लकारों में नहीं होते, यह स्मरण रखें। प्रत्येक गण में तीनों प्रकार की धातुएँ होती हैं, परस्मैपदी (ति, तः, अन्ति आदिवाली), आत्मनेपदी (ते, एते, अन्ते आदिवाली) और उमयपदी (पूर्वोक्त दोनों प्रकार के रूपवाली)। प्रत्येक गण की विशेषताएँ आगे प्रत्येक गण के विवरण में दी गई हैं। यहाँ अधिक प्रसिद्ध १०० धातुओं के रूप दिए गए हैं।

२. प्रत्येक गण के विवरण में उस गण में आनेवाली धातुओं के अन्त में क्या संक्षित-रूप लगेंगे, इसका विवरण दिया गया है। उस गण की धातुओं के अन्त में उन लकारों में निर्दिष्ट संक्षित-रूप लगावें।

३. गणों के अन्तर के कारण लट्, लुट्, आशीर्लिङ्, लङ्, लिट् और लुङ् में कोई अन्तर नहीं होता। अतः सभी गणों में इन लकारों में एक से ही रूप चलेंगे। इन लकारों के संक्षित-रूप आगे दिए हैं, उन्हें समरण कर लें। सभी गणों में उन्हीं संक्षित-रूपों को लगावें। अतएव धातु रूपों में लट्, लुट्, आशीर्लिङ् और लङ् के प्रारम्भिक रूप ही संकेतमात्र दिए गए हैं। सभी धातुओं के लिट् और लुङ् के पूरे रूप दिए गए हैं।

४. दसों गणों के विकरण और मुख्य कार्य ये हैं-

गण	विकरण	कार्य
(१) भ्वादिगण	अ	लट् आदि में धातु को गुण होगा।
(२) अदादिगण	×	लट् आदि के एक ॰ में धातु को गुण होगा।
(३) जुहोत्यादिगण	×	लट् आदि में घातु को दित्व और एक॰ में
		गुण।
(४) दिवादिगण	य	लट् आदि में धातु को गुण नहीं होगा।
(५) स्वादिगण	नु (नो)	लट् आदि में घातु को गुण नहीं होगा।
(६) तुदादिगण	अ	"
(७) रुधादिगण	न (न्)	37 27
(८) तनादिगण	उ (ओ)	लट् आदि में घातु को पर० में गुण होगा।
(९) ऋ्यादिगण	ना (नी)	लट् आदि में धातु को गुण नहीं होगा।

CC-O. (१ ८) म्लुक्एक्सिया ni Collection क्षेत्रका rai(CSDS). कार्द्धा आहे, में त्यात तही स्प्रण या वृद्धि होगी।

(क) लकारों के संक्षिप्त-रूप

(क) लकारा के साक्षम-रूप							
परस्मैप	द	लट्		आत्मने	पद		लर्
ति	तः	अन्ति	प्र॰	ते			अन्ते (अते)
सि	थः	थ	म०	से		(आथे)	
मि	वः	मः	उ॰	इ (ए)	वहे		महे
	लोंट्				लोट्		
द्र		अन्तु	प्र॰	ताम् इ	ताम् (आ	ताम्) अन्त	ाम् (अताम्)
	तम्	त	म०	स्व इः	याम् (आ	थाम्) ध्वम्	- 12 to
	आव	आम	उ०	ऐ	आवहै	आम	2
	लङ् (धातु		अ यां आ	r) 7	लंड् (धा	तु से पहले	अ या आ)
त्			प्र॰				अन्त (अत)
A	तम्	त	म०	थाः	इथाम्	(आथाम्)	ध्वम्
अम्							
	विधि	लिङ्			विधि	लेङ	
ईत्	ईताम् ईयुः	यात्	याताम्	युः प्रव	र् ईत	ईयाताम्	ईरन्
ई:	ईतम् ईत	याः	यातम्	यात म	ईथाः	ईयाथाम्	ईध्वम्
ईयम् १	ईव ईम	याम्	याव	याम उ	ईय	ईविह	ईमहि
	लट्				ल	Ę	
(इ) स्यति		स्यन्ति	न प्र॰	(इ) स्य		स्येते	स्यन्ते
	स्यथः				ासे		स्यध्वे
स्यामि	स्यावः	स्यामः	: उ॰	स्ये	ì	स्यावहे	स्यामहे
	लुट्				ल	Ę	
(इ) ता	तारौ	तारः	प्र०	(इ) ता		तारौ	तारः
तासि	तास्थः		म०			तासाथे	
तासि	तास्वः	तास्मः			हे	तास्वहे	
	आशी	र्लिङ			आशीर्		
(X) यात्	यास्ताम्		प्र॰	(ह) सी		७७् सीयास्ताम्	सीरन्
	यास्तम्					सीयास्थाम्	
यासम्		यास्म				सीवहि	
	बातु से पहले						
(इ) स्यत्	स्यताम्	स्यन्	月 0	The same of the sa		ो पहले अ त	
	स्यतम्	स्यत	म०	(इ) स्यत		येताम्	स्यन्त
						त्येथाम् -	
Ramdey T	ripathi Collect	ion at Sau	rai(CSDS)	Digitized	By Siddh	anta eGango	स्यामहि tri Gyaan Kosh भी लगेगा ।
	4,04,		1 150, 4	सद् स स	० रूप स	पहल इ	Al Codell 1

	परस्मैप	द-लिट्			आत्मनेप	द-लिट	
	अ	अतुः	ਤ:	प्र॰ पु॰		आते इं	
	(इ)थ	अथु:	अ	म० पु०		आथे (इ)ध	
,		(इ)व		उ० पु०		(इ)वहे (इ)स	
		. स्-लोप			लुङ् (१	. स-लोप व	ाला भेद)
	त्		उः (अन्)		सूचना-यह		
	:	तम्	त	म॰ पु॰	होता । लुङ्	के ७ भेद होते	हैं। आगे
	अम्	व	म	उ॰ पु॰	रूपों में छ	ङ्के आगे	संख्या से
					इसका निर्दे	श होगा।	
	(2. अ-	वाला भेद)			. (२. अ-वाला	भेद)
		अताम्	अन्	प्र० पुर	अत	एताम्	अन्त
	अः	अतम्	अव	म० पु॰	अथाः	एथाम्	अध्वम्
	अम्	आव	आम	उ० पु०	· · · · · · · ·	आवहि	आमहि
	(३. वि	त्व-चाला भे	इ)		(३.	द्वित्व-वाला	भेद)
		अताम्		yo yo	अत	एताम्	अन्त
	अ:	अतम्	अत	म॰ पु॰	अथाः	एथाम्	अध्वम्
	अम्	आव	आम	उ० पु०	Ų	आवहि	आमहि
	(४. स्-	वाला भेद)		(४. स् -वा ला	भेद)
	सीत्	स्ताम्	सुः	य॰ ये॰	स्त	साताम्	सत
	सीः	स्तम्	裙	म॰ पु॰	स्थाः	साथाम्	ध्वम्
	सम्	स्व	स	ड० पु०	सि	स्विह	स्महि
	(५. ब्रुव	्-वाला भेद	()		(५. इष्-वाल	ा भेद)
	ईत्	इष्टाम्	इबुः	प्र० पु०	इंड	इषाताम्	इषत
	ई:	इष्टम्	इष्ट	य० पु०	इष्टाः		इध्वम्-द्वम्
	इषम्	इध्व	इष्म	ड॰ पु॰	इषि	इच्चिह	इष्मिई
	(६. €	ख्-वाला भे	वि)			. सिष्-वार	
	सीत्	सिष्टाम्	सिषु:	य० य०	स्वना-	-आत्मनेपद	में यह भेद
	सी:	सिष्टम्	सिष्ट	स० पु०	नहीं है	ोवा ।	
	सिषम्	सिष्व	सिष्म	उ० पु०	S WH		
	(७. स	चाला भेव)			(७. स-वार	हा भेद)
	सत् '	सताम्	सन्	प्र॰ पु॰	सत	साताम्	सन्त
	सः	सतम्	सत	म॰ पु॰	सथाः	साथाम्	सध्वम्
CCO	सम् Dr. Ramo	साव dev Tripathi C	साम ollection at S	o go go	सि Digitized By Sidd	सावहि banta eGango	सामहि dri Gyaan Kosh
00-0	. Dr. Maille	Ro Tipatii C	oncollon at o	arai(OODO). L	Jigitized by Oldu	' ' '	ur Gyddir Rosii

CC-C

(१) भ्वादिगण

- (१) म्वादिगण की प्रथम धातु भू है, अतः इसका नाम म्वादिगण पड़ा। दसों गणों में यह गण सबसे मुख्य है। सबसे अधिक धातुएँ इसी गण में हैं। चुरादिगण तक धातुपाठ में वर्णित धातुओं की संख्या १९४४ है, तथा कण्ड्वादि को लेकर धातुसंख्या १९९३ है। इसमें से म्वादिगण की धातुओं की संख्या १०१० है। अतः ज्ञात होता है कि सम्पूर्ण धातुपाठ की आधे से अधिक धातुएँ म्वादिगण में हैं।
- (२) भ्वादिगण की विशेषताएँ ये हैं—(क) (कर्तारे शप्) धातु और प्रत्यय के बीच में शप् (अ) विकरण लगता है। इसलिए धातु के अन्त में अति, अतः, अन्ति सादि लगेंगे। मूल प्रत्यय ति, तः आदि हैं। (ख) धातु के अन्तिम स्वर इ ई, उ क, ऋ ऋ को तथा उपधा (अन्तिम अक्षर से पूर्व) के इ, उ, ऋ को क्रमशः ए, ओ, अर् गुण हो जाता है। बाद में गुण के ए को अय् और ओ को अव् हो जाता है। जैसे—भू> भवति, जि>जयति, ह् > हरति, शुच्> शोचित, मुद्> मोदते।
- (३) लट् आदि में धातु के अन्त में संक्षिप्तरूप निम्नलिखित लगेंगे। लट्, खुट्, आशीर्लिङ् और लङ् में पृष्ठ १४४ पर निर्दिष्ट संक्षिप्तरूप ही लगेंगे।

परस्मैप	4	लट्		आत्मनेपद	लट्		
अति	अतः	अन्ति	- प्र॰	अते	एते	अन्ते	
असि	अथ:	अथ	म०	असे	एथे	अध्वे	
आमि	आवः	आमः	उ॰	ए	आवहे	आमहे	
	छोट्				लोट्	1	
अतु	अताम्	अन्तु	प्र॰	अताम्	एताम्	अन्ताम्	
अ	अतम्	अत	म०	अस्व	एथाम्	अध्वम्	
आनि	आव	आम	उ॰	ऐ	आवहै	आमहै	
छङ्	्(धातु से पूर	र्वे अया आ)	छङ् (धा	तु से पूर्व अ	या आ)	
अत्	अताम्	अन्	प्र०	अत	एताम्	अन्त	
अः	अतम्	अत	म०	अथाः	एथाम्	अध्वम्	
अम्	आव	आम	उ॰	ए	आविह	आमहि	
	विधि	छेङ्			विधिलि	ङ्	
एत्	एताम्	एयुः	प्र०	एत	एतायाम्	एरन्	
एः	एतम्	एत	म०	एथा:	एथायाम्	एखम्	
एयम् Ramd	ev Tripathi Co	ollection at S	arai(CSDS)	Digitized By S	iddhanta eGa	ngotri Gyzan k	os

(१) भ्वादिगण (परस्मैपदी धातुएँ)

(१)	भू (होना) ल	हर् (वर्तमान)	(दे. अ.	. १)	लोट् (आज्ञा	अर्थ)	
भवति	भवतः	भवन्ति	प्र॰पु॰	भवतु	भवताम्	भवन्तु	
भवसि	भवथ:	भवथ	म०पु०	भव	भवतम्	भवत	
भवामि	भवावः	भवामः	उ०पु० :	भवानि	भवाव	भवाम	
हरू (भूतकाल, अन	ाचतन)	विा	धिलिङ् (अ	ाज्ञा या चाहिए	र अर्थ)	
अभवत्	अभवताम्	अभवन्	प्र॰पु॰	भवेत्	भवेताम्	भवेयुः	
अभवः	अभवतम्	अभवत	म॰पु॰	भवेः	भवेतम्	भवेत	
अभवम्	अभवाव	अभवाम	उ०पु०	भवेयम्	भवेव	भवेम	
ऌट् ((भविष्यत्)			छुट्	(अनद्यतन भा	वेष्यत्)	
भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति	प्र०पु०	भविता	भवितारौ	भवितारः	
भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ			भवितास्यः		
भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः	उ०पु०	भवितास्मि	भवितास्वः	भवितासाः	
আ হা	हिंङ् (आशीव	र्वि)	लृङ् (हेतुहेतुमद् भविष्यत्)				
भूयात्	भूयास्ताम्	भृयासुः			अभविष्यताम		
	भृयास्तम्		म॰पु॰	अभविष्यः	अभविष्यतम्	अभिवष्यत	
भूयासम्	भूयास्व		उ०पु०	अभविष्यम्	् अभविष्याव	अभविष्याम	
लिट्	(परोक्ष भृत)			खङ्	(१)(सामान्य	भूत)	
बभूव	बभूवतुः	बभ्वुः	प्र०पु०	अभूत्	अभृताम्	अभूवन्	
	बभूवथुः	बभ्व	म॰पु॰	अभूः	अभूतम्	अभूत	
बभूव	_	बभूविम	<u> २०</u> पु०	अभूवम्	अभूव	अभूम	

सूचना—(१) लड़, लुड़् और लड़् में धातु से पहले 'अ' लगता है। यदि धातु का प्रथम अक्षर खर होगा तो घातु से पहले 'आ' लगेगा और सन्धिकार्य मी होगा।

(२) छुङ् के आगे दी हुई संख्याएँ इस बात का निर्देश करती हैं कि पृष्ठ १४५ पर दिए हुए छुङ् के ७ मेदों में से कौन-सा मेद वहाँ पर है। जिस मेद का निर्देश हो, उसी मेद के संक्षिप्त-रूप पृष्ठ १४५ के अनुसार धातु के अन्त में लगावें। सम्पूर्ण धातुरूप

के लिए यह निर्देश स्मरण रखें । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अ

(२) ह	(२) हस् (हँसना) (भू के तुल्य) (३) षठ् (पढ़ना) (भू के तुल्य)						
	(दे० अ० १)		(द०	अ०२)		
	लर्				लट्		
हसति	इसतः	हसन्ति	प्र० पु०	पठित	पठतः	पठन्ति	
हससि	हसथः	हसथ	म॰ पु॰	पठिस	पठथः	पठथ	
हसामि	हसावः	हसामः	उ० पु०	पठामि	पठावः	पठामः	
	छोट्				लोट्		
हसतु	हसताम्	हसन्तु	प्र० पु०	पठतु	पठताम्	पठन्तु	
हस	हसतम्	हसत	म॰ पु॰	पठ	पठतम्	पठत	
हसानि	हसाव		go yo	पठानि	पठाव		
	छङ्				लङ्		
अहसत्	अहसताम्	अहसन्	प्र० पु०	अपठत्	अपठताम्	अपठन्	
अहस:		अहसत	म० पु०	अपठः	अपठतम्	अपठत	
अहसम्			उ॰ पु॰	अपठम्	अपठाव	अपठाम	
	विधिलि				विधिलिष	5	
हसेत्		Contract of the Contract of th	प्र॰ पु॰	पठेत्	पठेताम्	पठेयुः	
इसे:	हसेतम्		म॰ पु॰	पठेः	पठेतम्	पठेत	
हसेयम्	हसेव	इसेम	उ॰ पु॰	पठेयम्	पठेव	पठेम	
	_				_		
इसि ष्यति	इसिष्यतः	इसिष्यन्ति	लट्	पठिष्यति	पठिष्यतः	पठिष्यन्ति	
इसिता	The state of the s	इसितारः	छुट्	पठिता	पठितारौ	पठितारः	
इस्यात्		इस्यासुः	आ० लिङ्	पठ्यात्	पठ्यास्ताम्	पठ्यासुः	
अइसिष्यत		म् अहसिष्यन्		अपठिष्यत्	अपठिष्यताम्	अपठिष्यन्	
	लिट्				लिट्		
जहास		जहसुः	प्र॰ पु॰	पपाठ	पेठतुः	पेठु:	
जइसिथ	जहसथु:	जहस	म॰ पु॰	पेठिथ		पेठ	
नहास. जह	स जहसिव	जहसिम	उ० पु०	पपाठ,पपठ	पेठिव	पेठिम	
	लुङ् (५)				बुङ (५)		
अहसीत	अहसिष्टाम्	अहसिषु:	प्र॰ ते॰		अपाठिष्टाम्	A COUNTY OF THE PARTY OF THE PA	
	अहसिष्टम्		म॰ पु॰		अपाठिष्टम्		
ग्रहसिषम	अहसिष्व	अहसिष्म	उ० पु०		अपाठिष्व		
			सूच	तापठ्के	छुङ् में अपट	ति आदि	
				प होते हैं।			
Dr Domd	ov Trinothi Call	action at Carai	(CCDC) Digitiz	ON By Ciddha	eta oCanaatri	Cycon Koch	

(४) रक्ष्	(४) रस् (रक्षा करना) (भू के तुल्य)			(५) वद् (बोलना) (भू के तुल्य)		
	(दे० अ० २)				(दे० अ० ३)
	लर्				लट्	
रक्षति	रक्षतः	रक्षन्ति	प्र० पुरु	वदति	बदतः	वदन्ति -
रक्षसि	रक्षथः	रक्षथ	म॰ पु॰	वदसि	वदथः	वद्य
रक्षामि	रक्षावः	रक्षाम:	उ० पु०	बदामि	वदावः	वदामः
	लोट्				लोट्	
रक्षतु	रक्षताम्	रक्षन्तु	प्र० पु०	वदतु	वदताम्	
रक्ष	रक्षतम्	रक्षत	म॰ पु॰		वदतम्	
रक्षाणि	रक्षाव	रक्षाम	उ० पु०	वदानि	वदाव	वदाम
	लङ्				छङ्	
अरक्षत्	अरक्षताम्	अरक्षन्	प्र० पुर	अवदत्	अवदताम्	
अरक्षः			म॰ पु॰	अवद:	अवदतम्	
अरक्षम्	अरक्षाव	अरक्षाम	उ॰ पु॰	अवदम्	अवदाव	अवदाम
	विधिलिङ	5			विधिलिङ	F
रक्षेत्	रक्षेताम्	रक्षेयुः	प्र॰ पु	० वदेत्	वदेताम्	वदेयुः
रक्षे:	रक्षेतम्	रक्षेत	म॰ पु	० वदेः	वदेतम्	वदेत
रक्षेयम्	रक्षेव	रक्षेम	उ॰ पु	० वदेयम्	वदेव	वदेम
	_				-	
रक्षिष्यति	रक्षिप्यतः	रक्षिष्यन्ति	लट्	वदिष्यति	वदिष्यतः	बदिष्यन्ति
रक्षिता			छुट्	वदिता	4	वदितारः
रक्ष्यात्		् रक्ष्यासुः		लेङ् उद्यात्	उद्यास्ताम	् उद्यासुः
		म् अरक्षिप्यन		अवदिष्य		ताम् अवदिष्यन्
	लिट्				लिट्	
ररक्ष	ररक्षतुः	ररक्षः	प्र॰ पु	० उवाद	ऊ दतुः	अदुः
ररक्षिथ	ररक्षथुः	ररक्ष		० उवदिय	ऊद थुः	
ररक्ष	ररक्षिव	ररक्षिम	उ० पु	० उवाद,	उवद ऊदिव	. अ दिम
					लुङ् (५	
	लुङ् (५	7		. अज्ञानीन		, ष्टाम् अवादिषुः
अरक्षीत्	अराक्षष्टा	म् अराक्षषुः	No S	ु॰ अवादी त		ष्ट्रम् अवादिष्ट
अरक्षीः	अरक्षिष्टम्	् अरक्षिष्ट	Ho (पु॰ अवादीः क्रांस्ट अक्टाहर	मा अग्रह	Gotri Gyaan Rosi
े जिस्सिष	म् । अर्ध्यस्य	HECHOPI & SANTA	hi(Casta)	Programme and and and	diama e Gar	igotii Gyaari Kosi

(७) दश् (देखना) (भू के तुल्य) (६)गम् (जाना) (भू के तुल्य) (दे॰ अ॰ ४) (दे॰ अ॰ ३) सूचना - लट् आदि में गम् को गच्छ् होगा। सूचना-लट् आदि में दश् को पश्य होगा। लर् पश्यति गच्छन्ति पश्यन्ति गच्छति प्र० पु० पश्यतः गच्छतः पश्यसि म० पु० पश्यथः पश्यथ गच्छिंस गच्छथः गच्छथ पश्यामि उ० पु० पश्यावः पश्यामः गच्छामि गच्छावः गन्छामः लोट् लोट् गच्छताम् प्र० पु० पश्यतु पश्यताम् पश्यन्त गच्छन्तु गच्छतु म० पु० पश्य गच्छतम् पश्यतम् पश्यत गच्छ गच्छत पश्यानि गच्छानि उ० पु० पश्याव पश्यास गच्छाव गच्छाम लङ् लङ् प्र० पु० अपश्यताम् अपश्यन् अगच्छत् अगच्छताम् अगच्छन् अपश्यत् अगच्छत म० पु० अपश्यः अपश्यतम् अपश्यत अगच्छ: अगच्छतम् उ० पु० अपश्यम् अपश्याव अगच्छम् अगच्छाव अगच्छाम अपश्याम विधिलिङ् विधिलिङ् गच्छेत् गच्छेताम् गच्छेयुः पश्येत् पश्येताम् पश्येयुः प्र० पु० पश्येत पश्येः पश्येतम् गच्छेः गच्छेत गच्छेतम् म० पु० गच्छेयम् गच्छेव गच्छेम उ० पु० पश्येयम् पश्येव पश्येम गमिष्यति गमिष्यतः गमिष्यन्ति द्रक्ष्यति द्रक्ष्यन्ति द्रक्ष्यतः लुट् द्रष्टारौ गन्तारौ छुट् गन्ता गन्तारः द्रष्टा द्रष्टारः गम्यात् गम्यासुः आ० लिङ् गम्यास्ताम् द्यात् दश्यास्ताम् **दश्या**सुः अगमिष्यताम् अगमिष्यन् लङ् अगमिष्यत् अद्रक्ष्यत् अद्रक्ष्यताम् अद्रक्ष्यन् लिट् लिट् ददर्श प्र० पु० ददशतुः जगाम जग्मतुः जग्मु: दहशुः जिम्मथ, जगन्थ जग्मथुः ददर्शिथ, दद्रष्ठ दहशथुः म० पु० दहश जग्म जग्मिम जगाम, जगम जिमव उ० पु० ददशं ददृशिव दहशिम **लुङ**् (२), (४) **लुङ**् (२) (क) अदर्शत् अदर्शताम् अदर्शन् अगमत् अगमताम् अगमन् प्र० पु॰ अदर्शतम् अदर्शत अदर्शः अगमः अगमतम् म॰ पु॰ अगमत अदर्शम् अदर्शाव अदर्शाम अगमम् अगमाव अगमाम उ० पु०

(ख) अद्राक्षीत् अद्राष्टाम् अद्राक्षुः

(८) पा (पीना) (भू के तुल्य) (दे.अ.५) (९) स्था (रुकना) (भू के तुल्य) (दे.अ.९) सूचना—लट् आदि में पा को पिव् होगा। सूचना—लट् आदि में स्था को तिष्ठ् होगा।

	लट्				लट्	
पिबति	पिबतः	पिबन्ति	प्र॰ पु॰	तिष्ठति	तिष्टतः ा	तेष्ठन्ति
पिबसि	पिवथः	पिबथ	म॰ पु॰	तिष्ठसि	तिष्ठथः	तिष्ठथ
पिबा मि	पिबावः	पिबाम:	उ० पु०	तिष्ठामि	तिष्ठावः	तिष्ठामः
1441141	लोट्				लोट्	
पिबतु	णिव् पिवताम्	पिबन्तु	प्र० पु०	तिष्ठतु	तिष्ठताम्	<u> </u>
पिब	पिबतम्	पिबत	म॰ पु॰	নিষ্ঠ	तिष्ठतम्	तिष्ठत
पिया नि -	पिबाव	पिबाम	उ० पु०	तिष्ठानि	तिष्ठाव	तिष्ठाम
144/1-1	लङ्				लङ्	
अपिबत्	अपिबताम्	अपिबन्	प्र० पु०	अतिष्ठत्	अतिष्ठताम्	अतिष्ठन्
अपिबः	अपिबतम्	अपिवत	म॰ पु॰	अतिष्ठः	अतिष्ठतम्	अतिष्ठत
अपिबम्	अपिबाव	अपिबाम	उ० पु०	अतिष्ठम्	अतिष्ठाव	अतिष्ठाम
MITTEL	विधिलिङ्				विधिलिङ	Ę .
पिबेत्	पिबेताम्	पिबेयुः	प्र॰ पु॰	तिष्ठेत्	तिष्ठेताम्	तिष्ठेयुः
ापबत् पिवेः	पिवेतम्	पिबेत	म॰ पु॰	तिष्ठेः	तिष्ठेतम्	' तिष्ठेत
पि बे यम्	पिवेव	पिवेम	उ० पु०	तिष्ठेयम्	तिष्ठेव	विष्ठेम
।पषपन्					_	
		पास्यन्ति	लट्	स्थास्यति	स्थास्यतः	स्थास्यन्ति
पास्यति	पास्यतः		खुट् स्ट	स्थाता	स्थातारौ	स्थातारः
पाता	पातारौ	पातारः	আ০ লিভ্		स्थेयास्ताम्	
पेयात्	पेयास्ताम्			अस्थास्यत्		म् अस्थास्यन्
अपास्यत		म् अपार्षण्	180		लिट्	
	लिट्			तस्थौ	तस्थतुः	तस्थुः
पपौ	पपतुः	पपुः 🦠	प्र॰ पु॰			तस्थ
	पाथ पपथुः	पप	म॰ पु॰		तिस्थिव	तस्थिम
पपौ	पपिव	पपिम	उ॰ पु॰	तस्थौ		
	छङ् (१)			छुङ् (१	
अपात्	अपाता		प्र॰ पु॰	अस्थात्	अस्थाताम्	अस्थुः
अपाः	अपातम	् अपात	म॰ पु॰	अस्थाः	अस्थातम्	अस्थात
अपाम्	अपाव	अपाम	उ० पु०	अस्थाम्	अस्थाव	अस्थाम
					1	

(१०) ब्रा (सूँ घना) (भू के तुल्य) (११) (११)					स द् (बैटना) (व (दे० अ० ५)	भू के तुल्य)
	द० अ० १२) -लट् आदि में	प्राची कि		-	(६० अ० ५) -लट् आदि में स	य को भीन
सूचन।-	होगा।	मा का ।जम्		सूचना-	-लट्जाद म र होगा।	व् का हाद्
	लट्				लट्	
निघति	जिघतः	निघन्ति	प्र॰ पु॰	सीदति	सीदतः	सीदन्ति
जिम्नारा जिम्नस <u>ि</u>	जिघ्यः	निष्ठथ	म॰ पु॰	सीदसि	सीदथः	सीदथ
जिल्लाम	जिप्रावः	जिघामः	उ० पु०		सीदाव:	सीदामः
ाजभाग	लोट्	INNIA	00 30	वादाान	होट् होट्	वादामः
<u> </u>	जिघताम्	जिघनतु	по по	सीदतु	सीदता म्	-0
। জিঘ	जिम्नताम् जिम्नतम्	जिम न तु जिमत	प्र॰ पु॰	सादछ	सीदतम्	सीदन्तु
জিঘ্ <u>রা</u> णি	ाजवतम् जि <u>घा</u> व	जिल्लाम	म॰ पु॰			सीदत
ाजमाण		जिल्लाम	उ॰ पु॰	सीदानि	सीदाव	सीदाम
अजिघत्	लङ्	21600			लङ्	0
अजिमः	अजिघताम् अजिघतम्	अजिघन् अजिघत			असीदताम् असीदतम्	असीदन् असीदत
अनिव्रम्	अनिघाव	अनिघाम		असीदम्	असीदाव	असीदाम
	विधिलिङ्		,	The line	विधिलिङ्	
जिघेत्	जिघेता म्	जिघेयु:	प्र॰ पु॰	सीदेत्	सीदेताम्	सीदेयुः
जिघे:	जि ष्टेतम्	जिघेत	म॰ पु॰	सीदे:	सीदेतम्	सीदेत
निघेयम्	जिन्नेव	जि घ्रेम	उ० पु०	सीदेयम्	सीदेव	सीदेम
घास्यति	<u> </u>	SHIP				
व्याता । वाता	व्यातारी वातारी	घास्यन्ति घातारः	लर् खर्	सत्स्यति सत्ता	सत्स्यतः सत्तारौ	सत्स्यन्ति
घेयात्	घेयास्ताम्	घेयासुः]	354	ddi	उतारा	सत्तारः
घायात्	घायास्ताम्	घायासुः ।	आ०िल	र् सचात्	सद्यास्ताम्	सद्यासुः
अघास्यत्	अघास्यताम्	अघास्यन्	लुङ्	असत्स्यत्	असत्स्यताम्	असत्स्यन्
4	लिट्				लिट्	
जघी	जव्रतुः	जघु:	प्र० पु०	ससाद	सेदतुः	सेदुः
जिंघ्य, जिंघा जिंघी	य जम्रथुः जिंघव '	जघ जिंघम	म० पु०	संदिथ, स	सत्य सेद्धुः	सेद
	इ (क) (१)	णाञ्च	उ॰ पु॰	ससाद, स	सद सेदिव	सेदिम
		DIEL			छङ् (२)	
अमात् अमाः	अघाताम् अघातम्		म० पु०	असदत्	असदताम्	असदन्
अघाम्	अघाव		उ० पु०	असद: असदम्	असदतम् असदाव	असदत असदाम
	छुङ् (ख) (६)		9		710417	नाववान
अघासीत्	अघासिष्टाम्	अघासिष्	4: чо			
अघासीः 🕒	अघासिष्टम्	अघासिष्ट				

CC-अभारिश्वम्dev अस्त्रात्ति Gollection अम्हरिकार State). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(१२)	पच् (प	काना) (भू	के तुल्य)		(१३) नम् (नमस्कार करना)		
		दे० अ० ११	_		(दे॰ अ॰ ११)	
	ल	ह्				लट्	
पचति	C	ाचतः	पचन्ति	प्र० प्र०	नमति	नमतः	नमन्ति
पचिस	τ	। चथः	पचथ	म॰ पु॰	नमसि	नमयः	नमथ
पचारि	À t	ग्चावः	पचामः	उ॰ पु॰	नमामि 💮	नमावः	नमामः
	5	जेंट्				होट्	
पचतु	Ţ	ाचताम् <u></u>	पचन्तु	प्र॰ पु॰	नमतु	नमताम्	नमन्तु
पच	Ţ	ग्चतम्	पचत	म॰ पु॰	नम	नमतम्	नमत
पचारि	ने प	ग्चाव	पचाम	उ॰ पु॰	नमानि	नमाव =	नमाम
	5	तङ्				लङ्	
अपच	त् ः	अपचताम्	अपचन्	प्र० पु०	अनमत्	अनमताम्	अनमन्
अपच	ı: :	अपचतम्	अपचत	म॰ पु॰	अनमः	अनमतम्	अनमत
अपच	म्	अपचाव	अपचाम	उ॰ पु॰	अनमम्	अनमाव र	अनमाम
		विधिलिङ्				विधिलिङ्	
पचेत		पचेताम्	पचेयुः	प्र॰ पु॰	नमेत्	नमेताम्	नमेयुः
पचेः		पचेतम्	पचेत	म॰ पु॰	नमे:	नमेतम्	नमेत ।
पचेय	ाम्	पचेव	पचेम	उ० पु०	नमेयम्	नमेव	नमेम
		_					
पक्ष्य	ति	पक्ष्यतः	पक्ष्यन्ति	लर्	नंस्यति	नंस्यतः	नंस्यन्ति
पक्त		पक्तारौ	पक्तारः	छर्	नन्ता .	नन्तारौ	
पच्य	ात्	पच्यास्ताम्	पच्यासुः	आ०लिङ्	नम्यात्	नम्यास्ताम्	
अप	स्यत्	अपक्ष्यताम्	अपक्ष्यन	लुङ्	अनंस्यत्	अनंस्यताम्	अनस्यन्
		लिट्				लिट्	
पपा	च	पेचतुः	पेचुः	प्र॰ पु॰	ननाम	नेमतुः	नेमुः
पेचि		पेचथुः	पेच	म॰ पु॰	नेमिथ,	नेमथुः	नेम
पपव					ननन्थ		
	च, पपथ	पेचिव	पेचिम	उ॰ पु॰	े ननाम, नन	म नेमिव	नेमिम
		लुङ् (४)				लुङ् (६)	
अप	गक्षीत्	अपाक्ताम्	अपाक्षुः	प्र० पु०	अनंसीत्		(अनंसिषुः
	गक्षीः	अपाक्तम्	अपाक्त	म॰ पु॰	अनंसीः	अनंसिष्टम्	
	गक्षम्	अपाक्ष्व	अपाक्ष		.0	अनंसिष्व	अनंसिष्म
					itized By Siddha	anta eGangotri	Gyaan Kosha

(१४) स्मृ (स्मरण करना) (दें० अ० १२) (१५) जि (जीतना) (दे० अ० १२)

	01					
	लट्				लट्	
स्मरति	स्मरतः	स्मरन्ति	प्र० पु०	जयति	जयतः	जयन्ति
स्मरसि	स्मरथः	स्मरथ	म० पु०	जयसि	जयथः	जयथ
स्मरामि	स्मरावः	स्मरामः	उ० पु०	जयामि	जयावः	जयामः
	लोट्				लोट्	
स्मरतु	स्मरताम्	स्मरन्तु	प्र पु॰	जयतु	जयताम्	जयन्तु
स्मर	स्मरतम्	स्मरत	म॰ पु॰	जय	जयतम्	जयत
स्मराणि	स्मराव	स्मराम	उ॰ पु॰	जयानि	जयाव	जयाम
	लङ्				लङ्	
अस्मरत्	अस्मरताम	र् अस्मरन्	प्र० पु०	अजयत्	अजयताम्	अजयन्
अस्मरः	अस्मरतम्	अस्मरत	म० ५०	अजय:	अजयतम्	अजयत
अस्मरम्	अस्मराव	अस्मराम	उ० पु०	अजयम्	अजयाव	अजयाम
	विधिलिड	7			विधिछिङ्	
स्मरेत्	स्मरेताम्	स्मरेयुः	प्र॰ पु॰	जयेत्	जयेताम्	जयेयु:
स्मरेः	स्मरेतम्	स्मरेत	म० पु०	जये:	जयेतम्	जयेत
स्मरेयम्	स्मरेव	स्मरेम	उ० पु०	जयेयम्	जयेव	जयेम
	_				_	
स्मरिष्यति	स्मरिष्यतः	स्मरिष्यन्ति	लट्	जेप्यति	जेष्यतः	जेष्यन्ति
स्मर्ता	स्मर्तारौ	स्मर्तारः	<u>ख</u> ट्	जेता	जेतारौ	जेतारः
स्मर्यात्	स्मर्यास्ताम्	स्मर्यासुः अ	भा० लिङ्	जीयात्	जीयास्ताम्	जीयासुः
अस्मरिष्यत्	अस्मरिष्यता	म् असमिरष्य	न् लङ्	अजेष्यत्	अजेष्यताम्	अजेष्यन्
	लिट्				िलंट्	
ससार	सस्मरतुः	सस्मरः	प्र॰ पु॰	जिगाय	जिग्यतुः	जिग्यु:
संसर्थ	सस्मरथुः	सस्मर	म० पु०	जिगयिथ,	जिग्यथु:	. जिग्य
				जिरोध		
ससार,	ससारिव	सस्मरिम	उ॰ पु॰	जिगाय,	जिग्यिव	जिग्यिम
ससर				जिगय		
	खुङ् (४)				लुङ् (४)	
असार्षीत्	असार्धाम्	अस्मार्षुः	प्र• पु॰	अजैपीत्	अजैष्टाम्	अजैषुः
अस्मार्थीः	असार्धम्		मं॰ पु॰	अजैषी:	अजैष्टम्	अजैष्ट
असार्धम्	असार्ष र		उ० पु०		अजैष्व	अजैध्म
	_					•

	(१६) अ (सुनना) (दे.	अ. २०)		(१७) कृष् (जोतना) (दे. अ. १४)			
		लट् (श्रु को				लट्		
	शृणोति	श्रृणुतः	शृष्वन्ति	प्र० पु०	कर्षति	कर्षतः	कर्षन्ति	
	श्रुणोघि	शृणुय:	शृणुथ	म॰ पु॰	कर्षसि	कर्षथः	कर्षथ	
	शृणोमि	शृणुवः,-ण्वः	शृणुमः-ण्म	: उ॰ पु॰	कर्षामि	कर्षावः	कर्षामः	
		लोट् (श्रु को	যু)			लट्		
	श्रणोतु	श्रुणुताम्	शृष्वन्तु	प्र॰ पु॰	कर्षतु	कर्षताम्	कर्षन्तु	
	शृणु	श्रणुतम्	शृणुत	म॰ पु॰	कर्ष	कर्षतम्	कर्षत	
	श्रुणवानि	शृणवाव	शृणवाम	उ० पु०	कर्षाणि	कर्षाव	कर्षाम	
		लङ् (श्रु को	शू)			लङ्		
	अशृणोत्	अशृणुताम्		प्र॰ पु॰	अकर्षत्	अकर्षताम्		
	अशृणोः	अशृणुतम्	अश्रुणुत	म॰ पु॰	अकर्षः	अंकर्षतम्		
	अशृणवम्	अशृणुव,-ण्व		म उ०पु०	अकर्षम्	अकर्षाव	अकर्षाम	1
		विधिलिङ् (श्रु को शृ)			विधिलिङ्		
	श्रणुयात्	शृणुयाताम्	शृणुयु:	प्र॰ पु॰	कर्षेत्	कर्षेताम्	कर्षेयुः	
	श्रुणयाः	शृणुयातम्		म॰ पु॰	कर्षे:	कर्षेतम्	कर्षेत	
	शृणुयाम्	शृणुयाव		उ० पु०	कर्षेयम्	कर्षेव	कर्षेम	1
		_				-		
	श्रोष्यति	श्रोध्यतः	श्रोष्यन्ति	लट्	र्भक्ष्यति कर्स्यति	क्र स्य तः	क्र क्ष्यन्ति	
					र् कक्ष्येति	कर्स्यतः		
	श्रोता	श्रोतारौ		ख र्	क्रष्टा,		ों प्रकार से)	
	श्रूयात्	श्रूयास्ताम्	श्र्यासुः	आ० लिङ्			् कृष्यासुः	
	अश्रोष्यत्	अश्रोप्यताम्	अश्रोष्यन्	लङ्	अन्नक्ष्यत्,	अकस्यत्(दा	नोंप्रकार से)	
		लिट्				लिट्		
	शुश्राव	शुश्रुवतुः	गुश्रुवुः	प्र॰ पु॰	चकर्ष	चकृषतुः	चकृषुः	
,	शुश्रोथ	शुश्रुवथुः	गुश्रुव	म॰ पु॰	चकषिंथ	चकृषथुः	चकुष	
	शुश्राव, शुश्र		गुश्र <u>ु</u> म	उ० पु०	चकर्ष	चकृषिव	चकृषिम	
		लुङ् (४)				छङ् (४)		
	अलीवीज	अश्रीष्टाम्	अश्रौषुः	प्र॰ पु॰	अकार्क्षांत्	अकार्षाम्	अकार्धुः	
	अश्रापात्	अश्राष्ट्राम्	अथायुः	но По	अकाक्षीः	अकार्षम्	अकार्ष	
	अश्रीवाः ।	अश्रीहरू	अश्रीधा	उ० प०	अकार्श्वम्	अकार्स्व	अकार्स्म	
	जन्नावम्	প্রাণ্	अश्राज्य	2 3 .		अवस्थात श	ोर अक्राक्षीत	
सूचना — लट् आदि में श्रु को श्र होगा । सूचना — छुङ् में अकृक्षत् और अक्राक्षीत् भी रूप बनेंगे । दृश् (७) के छुङ् के तुत्य रूप चलावें ।								
CC	O Dr Pand	av Trinathi Cal						neha
CC.	O. Dr. Kanide	ev Tripatili Col	icolion at 3a	rai(GGDG). L	Digitized By Sid	unania eGal	igotii Gyaaii Ki	Jolla

```
(१८) वस् (रहना) (दे. अ. १४)
                                               (१९) त्यज (छोड़ना) (दे. अ. १५)
              लर्
 वसति
                                                त्यनति
                           वसन्ति
                                      प्र० पु०
                                                                          त्यजन्ति
              वसतः
                                                             त्यजतः
  वससि
                                                त्यनिस
                                      म० पु०
              वसथः
                           वसथ
                                                             त्यजथः
                                                                          त्यजथ
  वसामि
                                                त्यजामि
                                     उ० पु०
              वसावः
                           वसामः
                                                             त्यजावः
                                                                          त्यजामः
              लोट्
                                                              लोट्
  वसतु
              वसताम्
                           वसन्तु
                                     प्र० पुर
                                                             त्यजताम्
                                                त्यजतु
                                                                          त्यजन्तु
  वस
              वसतम्
                           वसत
                                     म० पु०
                                                त्यज
                                                             त्यजतम्
                                                                         त्यजत
  वसानि
              वसाव
                                      उ० पु०
                                                त्यजानि
                                                             त्यजाव
                           वसाम
                                                                          त्यजाम
                                                              लङ्
  अवसत्
               अवसताम्
                          अवसन्
                                     प्र० पु०
                                                अत्यजत्
                                                             अत्यजताम्
                                                                          अत्यजन्
  अवसः
              अक्सतम्
                           अवसत
                                     म० पु०
                                                अत्यजः
                                                            अत्यजतम्
                                                                          अत्यजत
  अवसम्
               अवसाव
                                     उ० पु०
                           अवसाम
                                                अत्यजम्
                                                            अत्यजाव
                                                                         अत्यजाम
              विधिलिङ्
                                                              विधिलिङ्
 वसेत्
              वसेताम्
                          वसेयुः
                                                           त्यजेताम्
                                                                        त्यजेयुः
                                               त्यजेत्
                                    प्र० प्र०
 वसेः
             वसेतम्
                          वसेत
                                    म० पु०
                                               त्यजेः
                                                          त्यजेतम्
                                                                        त्यजेत
 वसेयम्
             वसेव
                         वसेम
                                                          त्यजेव
                                    उ० पु०
                                               त्यजेयम्
                                                                        त्यजेम
वत्स्यति
             वत्स्यतः
                         वत्स्यन्ति
                                              त्यध्यति
                                    लुट्
                                                          त्यक्ष्यतः
                                                                        त्यक्ष्यन्ति
             वस्तारौ
                                                          त्यकारौ
वस्ता
                         वस्तारः
                                    ल्ट्
                                              त्यक्ता
                                                                        त्यक्तारः
उष्यात्
             उप्यास्ताम् उष्यासुः आ० लिङ्
                                               त्यज्यात्
                                                          त्यच्यास्ताम्
                                                                        त्यच्यामुः
अवत्स्यत्
            अवत्स्यताम् अवत्स्यन्
                                       लुङ्
                                              अत्यक्ष्यत्
                                                          अत्यश्यताम्
                                                                        अत्यक्ष्यन्
             लिट्
                                                              लिट्
उवास
            ऊषतुः
                        ऊषुः
                                   प्र० पु०
                                              तत्याज
                                                          तत्यजतुः
                                                                        तत्यजुः
उवसिथ, उवस्थ उष्धुः
                                              तत्यजिथ, तत्यक्थ तत्यज्थुः तत्यज
                         ऊष
                                    म० पु०
उवास, उवस ऊषिव
                        ऊषिम
                                              तत्याज, तत्यज तत्यजिव
                                                                         त्यजिम
                                   उ० पु०
             डुङ् (४)
                                                             लुङ् (४)
अवात्सीत्
             अवात्ताम् अवात्सुः
                                   प्र॰ पु॰
                                             अत्याक्षीत् अत्याक्ताम्
                                                                         अत्याक्षुः
अवात्सी:
             अवात्तम्
                       अवात्त
                                  म० पु०
                                             अत्याक्षीः
                                                         अत्याक्तम्
                                                                         अत्याक्त
```

अवात्सम् अवात्स्व अवात्स्म उ० पु० अत्याक्षम् अत्याक्ष्म CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भ्वादिगण (आत्मनेपदी घातुएँ)

(२०) सेव् (सेवा करना) (दे० अ० ६)

	लट्				छोट्
सेवते	सेवेते	सेवन्ते	प्र॰ पु॰	सेवताम्	सेवेताम् - सेवन्ताम्
सेवसे	सेवेथे	सेवध्वे	म॰ पु॰	सेवस्व	सेवेथाम् सेवध्वम्
सेवे	सेवावहे	सेवामहे	उ॰ पु॰	सेवै	सेवावहै सेवामहै
	_				-
	लङ				विधिलिङ्
असेवत	असेवेताम्	असेवन्त	प्र० पु०	सेवेत	सेवेयाताम् सेवेरन्
असेवथाः		असेवध्वम्	म० पु०	सेवेथाः	सेवेयाथाम् सेवेध्वम्
असेवे		असेवामहि	उ० पु०	सेवेय	सेवेवहि सेवेमहि
					_
	लट्				लुट्
सेविष्यते	सेविष्येते	सेविष्यन्ते	प्र॰ पु॰	सेविता	सेवितारौ सेवितारः
सेविष्यसे	सेविष्येथे	सेविष्यध्वे	म॰ पु॰	सेवितासे	ं सेवितासाथे सेविताध्वे
सेविष्ये		सेविष्यामहे	उ॰ पु॰	सेविताहे	सेवितास्वहे सेवितास्महे
014-4					

आशीर्लंङ्

लङ्

सेविषीष्ट सेविषीयास्ताम् सेविषीरन् प्र० पु० असेविष्यत असेविष्येताम् असेविष्यन्त सेविषीष्ठाः सेविषीयास्थाम् सेविषीध्वम् म०पु० असेविष्यथाः असेविष्येथाम् असेविष्यध्वम् सेविषीय सेविषीविह सेविषीमिह उ०पु० असेविष्ये असेविष्याविह असेविष्यामिह

लिट लुङ् (५)

सिषेवे सिषेवाते सिषेविरे प्र० पु० असेविष्ट असेविषाताम् असेविषत सिषेविषे सिषेवाथे सिषेविष्वे म० पु० असेविष्ठाः असेविषाथाम् असेविष्वम् सिषेवे सिषेविवहे सिपेविमहे उ० पु० असेविषि असेविष्वहि असेविष्महि

सूचना — लङ्, लुङ् और लङ् नें धातु से पहले 'अ' लगता है। यदि धातु का प्रथम अक्षर स्वर होगा तो धातु से पहले 'आ' लगेगा और सन्धि-कार्य भी होगा।

	भ् (पाना) (से	व् के तुल्य)	(२२) व	हुध् (बढ़ना) (
((देखो अ० ९)				(देखो अ०	v)
	लट्				लर्	
लभते	ल्भेते		प्र० प्		वर्षेते	वर्धन्ते
लभसे	लमेथे	लभध्वे			वर्धेथे	वर्धध्वे
लभे	लभावहे	लभामहे	उ॰ र	यु० वर्षे	वर्धावहे	वर्धामहे
	लोट्				लोट्	
लभताम्	लभेताम्	लभन्ताम्	प्र०पु	७ वर्धता	म् वर्धेताम्	वर्धन्ताम्
लभस्व	ल भेथाम्	लभध्वम्	स० पु	ु० वर्धस्ट	वर्षेथाम्	
ल भै	लभावहै	लभामहै	उ० !	पु० वधै	वर्धावहै	
	छङ्				लङ्	,
अलभत	अल्भेताम्	अल्भन्त	प्रवा	पु॰ अवर्ध	ति अवर्धेताम	अवर्धन्त
अलभथाः	अलभेथाम्	अलभध्वम			थाः अवर्धेथाम्	
अलभे	अलभावहि	अलभामहि			अवर्धावहि	
	विधिलि	ङ्			विधिलिङ्	
ल भेत			प्रवा	पु॰ वर्षेत	वर्षेयाताम्	वर्धेरन
लभेथाः	लभेयाथाम्					वर्षेष्वम्
लभेय	लभेविं				वर्षेवहि	
लप्स्यते	लप्स्येते	लप्स्यन्ते	लट् वि	वष्यते, वल	र्धित (दोन	ों प्रकार से)
स्टबा	लब्धारी				तारौ व	
लप्सीष्ट	ल्प्सीया स्ताम्	लप्सीरन् अ	ा० लिङ्	वर्धिषीष्ट वर्षि	धंषीयास्ताम् व	र्धिषीरन
अल्प्यत	अल्प्येताम्	अलप्यन्त	लङ्	अवर्धिष्यत.	अवर्त्स्यत् (दोन	ों प्रकार से)
	लिट्				लिट्	
लेभे	लेभाते	लेभिरे	чо чо	ववृधे	ववृधाते	ववधिरे
लेमिषे	लेभाथे त	हेभिध्वे	म॰ पु॰			वृधिष्वे
लेमे			उ० पु०			वृधिमहे
	लुङ् (४)			लुङ् (क		121.1.16
अलब्ध	अल्पाताम् अ	गलप्सत ।	प० पु०	अवधिष्	्र ५७ अवर्षिषाताम्	अवधिष्रत
अलब्धाः	अलप्साथाम् अ				अवर्धिषाथाम्	
अलप्स	अलप्वहि व				अविधिष्वहि	
			9		(ख) (२)	न सन्याष्ट्
		1.		अवृधत्		अवृधन्
				अवृधः		अवृधत

(२३) मुद् (प्रसन्त होना) (सेव् के तुल्य) (२४) सह (सहना) (सेव् के तुल्य) (देखो अ०१०)

	लट्				लट्	
मोदते	मोदेते	मोदन्ते	प्र॰	सहते	सहेते	सहन्ते
मोदसे	मोदेथे	मोदध्वे	म०	सहसे	सहेथे	सहध्वे
मोदे	मोदावहे	मोदामहे	उ०	सह	सहावहे	सहामहे
	लोट्				लोट्	
मोदताम्	मोदेताम्	मोदन्ताम्	प्र॰	सहताम्	सहेताम्	सहन्ताम्
मोदस्व -	मोदेथाम्	मोदध्वम्	म०	सहस्व	सहेथाम्	सहध्वम्
मोदै	मोदावहै	मोदामहै	उ॰	सहे	सहावहै	सहामहै
	लङ्				लङ्	
अमोदत	अमोदेताम्	अमोदन्त	प्र०	असहत	असहेताम्	असहन्त
अमोदथाः	अमोदेथाम्	अमोदध्वम्	म०	असहथाः	असहेथाम्	असहध्वम्
अमोदे	अमोदावहि	अमोदामहि	30	असह	असहावहि	असहामहि
	विधिलिड			वि	धिलिङ्	
मोदेत	मोदेयाताम्	मोदेरन्	प्र॰	सहेत	सहेयाताम	प् सहरन्
मोदेथाः	मोदेयाथाम्	मोदेध्वम्	म०	सहेथाः	सहयाथाय	म् सहेध्वम्
मोदेय	मोदेवहिं	मोदेमहि	उ०	सहेय	सहेवहि	सहेमहि
	_					
मोदिष्यते	मोदिष्येते	मोदिध्यन्ते	लट्	सहिष्यते	सहिष्येते	सहिष्यन्ते
मोदिता	मोदितारौ	मोदितारः	छर्	{ सहिता सोढा		सहिता रः सोढारः
मोदिषीष्ट	मोदिषीयास्ता	व मोहिषीम्ब	आ० लि		सहिषीया	
	अमोदिष्येताम			असहिष्य		
	िछट्				लिट्	
		मुमुदिरे	प्र॰	सेहे	सेहाते	सेहिरे
मुमुदे	मुमुदाते -	मुमुदिध्वे .	म०	सेहिषे	सेहाथे	सेहिध्वे
मुमुदिषे	मुमुदाथे	मुमुदिमहे	उ॰	सेहे	सेहिवहे	सेहिमहे
मुमुदे	मुमुदिवहें					
	लुङ् (५)				बुङ् (५)	
अमोदिष्ट	अमोदिषाताम्		प्र॰			ाम् असहिषत
	अमोदिषाथाम					थाम् असिहध्वम्
	अमोदिष्वहि	अमोदिष्महि				हे असहिष्महि
CC-O. Dr. Ramdev	Tripathi Collecti	on at Sarai(CS	SDS). Digit	tized By Sidd	hanta eGan	gotri Gyaan Kosha

	((होना) (सेव (देखो अ० ६)	म् के तुल्य)		(२६) ईक्ष	(देखना) (से (देखो अ० ७	
	लट्				(दला जण	
वर्तते	वर्तेते	वर्तन्ते	प्र॰	ईक्षते	ईक्षेते	ईक्षन्ते
वर्तसे	वर्तेथे	वर्तध्वे	म॰	ईक्षसे	ईक्षेथे	ईक्षध्वे
वर्ते	वर्तावहे	वर्तामहे		ईक्षे	ईक्षावहे	ईक्षामहे
	लोट				लोट्	
वर्तताम्	वर्तेताम्	वर्तन्ताम्	प्र॰	ईक्षताम्		ईक्षन्ताम्
वर्तस्व	वर्तेथाम्	वर्तध्वम्	म०	ईक्षत्व	ईक्षेथाम्	ईक्षप्वम्
वर्ते	वर्तावहै	वर्तामहै	उ०	ईक्षै	ईक्षावहै	ईक्षामहै
	लङ्				लङ्	
अवर्तत	अवर्तेताम्	अवर्तन्त	प्र॰	ऐक्षत	ऐक्षेताम्	ऐक्षन्त
अवर्तथाः	अवर्तेथाम्	अवर्तध्वम्	Ho	ऐक्षथाः	ऐक्षेथाम्	ऐक्षध्वस्
अवर्ते	अवर्तावहि	अवर्तामहि	उ॰	ऐक्षे	ऐक्षाविं	ऐक्षामहि
	विधिलि	ङ्		वि	विछिङ्	
वर्तेत	वर्तेयाताम्	वर्तेरन्		ईक्षेत	ईक्षेयाताम्	
वर्तेथाः	वर्तेयायाम्	वर्तेध्वम्	म०	ईक्षेथाः	ईक्षेयाथाम्	
वर्तेय	वर्तेविह	वर्तेमहि	उ॰	ईक्षेय	ईक्षेविह	ईक्षेमहि
-6-3-		- 11		. 22		2 2
	वर्त्स्यति (दोनों			ईक्षिष्यते		
वर्तिता वर्तिषीष्ट	वर्तितारौ		छुट्	ईक्षिता		ईक्षितारः
	वर्तिषीयास्ता	म्॰ आ॰	े लिङ्			
अवर्तिष्यत,	, अवत्स्यत् (द	नों प्रकार से)	लङ्	ऐक्षिभ्यत	ऐक्षिष्येवाम	(0
ववृते	लिट्			2 . ~	िलंद	22
	ववृताते		प्र॰	ईक्षांचके		
ववृतिषे ववृते	ववृताथे	ववृतिध्वे	म॰	ईक्षांचकृषे		
पपृत	ववृतिहे		उ॰	ईक्षांचके		इसा
27-6	लुङ् (क) (26	लुङ् (५)	n) forma
अवर्तिष्ट अवर्तिष्ठाः	अवर्तिषाताम्		प्र॰	ऐक्षिष्ट	ऐक्षिषाताम्	ऐक्षिषत ऐक्षिष्वम्
अवर्तिषि	अवर्तिषाथाम्		म०	ऐक्षिष्ठाः	ऐक्षिषाथा म्	ऐक्षिष्महि
अवाताव	अवर्तिष्वहि		उ॰	ऐक्षिष	ऐक्षिवहि	दाकानार
20722	लुङ् (स) (По		PRINCIPAL	
अवृतत्	अवृतताम्	अवृतन्	प्र॰			
अवृत:	अवृततम्	अवृतत	म०			

भ्वादिगण (उभयपदी धातुएँ)

म्माप्याय (ठमप्यप् वातुए)								
(२७) नी	(छे जाना) प	परस्मैपद		आ	त्मनेपद (दे.	अ. १८)		
	लट्				लट्			
नयति	नयतः	नयन्ति	प्र॰	नयते	नयेते	नयन्ते		
नयसि	नयथः	नयथ	म०	नयसे	नयेथे	नयध्वे		
नयामि	नयावः	नयामः	उ॰	नये	नयावहे	नयामहे		
	लोट्			-	लोट्			
नयतु	नयताम्	नयन्तु '	У о	नयताम्	नयेताम्	नयन्ताम्		
नय	नयतम्	नयत	म०	नयस्व	नयेथाम्	नयध्वम्		
नयानि	नयाव	नयाम	उ॰	नयै	नयावहै	नयामहै		
	लङ्				लङ्			
अनयत्	अनयताम्	अनयन्	प्र०	अनयत	अनयेताम्	अनयन्त		
अनयः	अनयतम्	अनयत	म०	अनयथाः	अनयेथाम्	अनयध्वम्		
अनयम्	अनयाव	अनयाम	उ॰	अनये	अनयावहि	अनयामहि		
	विधिलिङ्				विधिलिङ्			
नयेत्	नयेताम्	नयेयुः	प्र॰	नयेत	नयेयाताम्	नयेरन्		
नयेः	नयेतम्	नयेत	म०	नयेथाः	नयेयाथाम्	नयेध्वम्		
नयेयम्	नयेव	नयेम	उ॰	नयेय	नयेवहि	नयेमहि		
	-				-			
नेष्यति	नेष्यतः	नेष्यन्ति	लट्	नेष्यते	नेष्येते	नेष्यन्ते		
नेता	नेतारौ	नेतारः	खर्	नेता	नेतारौ	नेतारः		
ीयात्	नीयास्ताम्	नीयासुः आ	लिङ्	नेषीष्ट	नेषीयास्ताम्	नेषीरन्		
ेत्	अनेष्यताम्	अनेष्यन्	लुङ्	अनेष्यत	अनेष्येताम्	अनेष्यन्त		
J	लिट्				लिट			
निनौय	निन्यतुः	निन्युः	у.	निन्ये	निन्याते	निन्यिरे		
ननयिथ,नि	निथ निन्यथुः	निन्य	म०	निन्यिषे	निन्याथे	निन्यिष्वे		
निनाय,नि	नय निन्यिव	निन्थिम	उ०	निन्ये	निन्यिवहे	निन्यमहे		
	छ ङ् (४)				लुङ् (४)			
अनैषीत्	अनैष्टाम्	अनैषुः	प्र॰			अनेषत		
अनैषीः	अनैष्टम्	अनैष्ट						
अनेषम् -O. D. Ramd	ev Tribalhi Col	lection at Sarai(CSTS) Die	aiti अने शि Sid	अनेष्वहि dhanta e Gango	अनेधाहि tri Gyaan Kosh		
	5							

CC-

(२८) ह (हरना) परस्मैपद आत्मनेपद (दे. अ. १९)							
लट्				हर			
हरति	इरतः	हरन्ति	प्र॰	हरते	हरेते	हरन्ते	
इरसि	इरथः	हर्थ	म०	हरसे	हरेथे	हरध्वे	
इरामि	इरावः	हराम:	30	हरे	हरावहें		
	स्रोट्			30 JA	लोट्		
हरतु	हरताम्	हरन्तु	प्र०	हरताम्	हरेताम्		
हर	हरतम्	हरत	和。	हरस्व	हरेथाम्	हरध्वम्	
इराणि	हराव	हराम	उ०	हरै	हरावहै	हरामहै	
	लङ्			- 30	लङ्	64.16	
अहरत्	अहरता म्	अहरन्	प्र॰	अहरत	अहरेताम्	अहरन्त	
अहर:	अहरतम्	अहरत	म०	अहरथा:	अहरेथाम्		
अहरम्	अहराव	अहराम	उ०	अहरे	अहरावहि		
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	7.00 (b)	
इरेत्	हरेताम्	हरेयु:	प्र॰	हरेत	इरेयाताम्	हरेरन्	
हरे:	इरेतम्	हरेत	म०	हरेथाः	हरेयाथाम्	हरेष्वम्	
हरेयम्	हरेव	हरेम	उ०	हरेय	हरेविह	इरेम िं	
	-				-	46	
इरिष्यति	हरिष्यतः	हरिष्यन्ति	लट्	इरिष्यते	हरिष्येते	इरिष्यन्ते	
इर्वा	इर्तारौ	हर्तार:	छ ट्		हर्तारौ	इर्तार:	
हियात्	हियास्ताम्	हियासुः आ	०लिङ्				
अइरिष्यत्	अहरिष्यताम	म् अहरिष्यन्	लङ्	अहरिष्यत	अहरिष्येताम्	अहरिष्यन्त	
लिट् .					लिट्		
जहार	नहतुः	जहु:	प्र॰	जह	जहाते	जहिरे	
न्हर्थ	जह्युः	जह	म०	जहिषे	जहाथे	जहिंध्वे	
नहार, नहर	जिह्नव	जिहम	उ॰	जहे	जहिवहे	बहिमहे	
खुर्ड (४) खुर्ड (४)							
अहा षींत्	अहार्षाम् अ	भहार्षुः	प्र॰	अहत		STANCE	
अहार्षीः	0	महार्ष्ट	म०	अह्याः	अह्षाताम् अट्यागाम्		
				अद्रषि	अह्षाथाम् ः	अहृद्वम् सुद्धारमञ्जूषका Kosha	
CC-O. Dr. Rame	dev Tripathi Col	llection at Sar	rai(CSDS).	Digitized By S	id mantere Gan	igori Oyaan Kosha	

(२९) याच	् (माँगना) व	गरस्मैपद	आत्मनेपद (दे॰ अ॰ १६)				
	लट्			लट्			
याचित	याचतः	याचित	До	याचते		याचन्ते	
याचिस	याचथः	याचथ	Ho	याचसे	याचेथे	याचध्वे	
याचामि	याचावः	याचामः	उ०	याचे	याचावहे	याचामहे	
	होट्				लोट्		
याचतु	याचताम्	याचन्तु	प्र॰	याचताम्	याचेताम्	याचन्ताम्	
याच	याचतम्	याचत	म०	याचस्व	याचेथाम्	याचध्वम्	
याचानि	याचाव	याचामं	30	याचै	याचावहै	याचामहै	
	लङ्				लङ्		
अयाचत्	अयाचताम्	अयाचन्	Дo	अयाचत	अयाचेताम्	अयाचन्त	
अयाचः	अयाचतम्	अयाचत	म०	अयाचथाः	अयाचेथाम्	अयाचध्वम्	
अयाचम्	अयाचाव	अयाचाम	उ०	अयाचे	अयाचावहि	अयाचामहि	
	विधिलिङ्				विधिलिङ्		
याचेत्	याचेताम्	याचेयुः	प्र०	याचेत	याचेयाताम्	याचेरन्	
याचे:	याचेतम्		म०	याचेथाः	याचेयाथाम		
याचेयम्	याचेव	याचेम	30		याचेवहि	याचेमहि	
	_						
याचिष्यति	ਗਾ ਕਿਲਾੜ•	याचिष्यन्ति	ल र	याचिष्यते	यानिधोते	याचिष्यन्ते	
याचिता	याचितारौ		लुट्			याचितारः	
याच्यात्		याच्यासुः अ	and the second		याचिषीयास		
				अयाचिष्यत			
	लिट्				लिट्		
ययाच	ययाचतुः	ययाचुः	प्र०	ययाचे	ययाचाते	ययाचिरे	
ययाचिथ	ययाचथुः	ययाच	म०	ययाचिषे	ययाचाये		
ययाच	ययाचिव	ययाचिम	उ०	ययाचे	ययाचिवहे	ययाचिमहे	
	छुङ् (५)				छङ्र(५)		
अयाचीत्	अयाचिष्टाम्		प्र॰	अयाचिष्ट		म् अयाचिषत	
अयाचीः	अयाचिष्टम्	अयाचिष्ट	Ho	अयाचिष्ठाः	अयाचिषाय	म् अयाचिष्वम्	
अयाचिषम्	अयाचिष्व	अयाचिष्म	उ॰	अयाचिषि	अयाचिष्वहि	अयाचिष्महि	
CC-O. Dr. Ramde	v Tripathi Coll	ection at Sara	i(CSDS	S). Digitized By	Siddhanta eG	Sangotri Gyaan Kosha	

(২০) বা	ह् (ढोना) पर	स्मैपद	आत्मनेपद (दे॰ अ॰ १७)						
	लट्			लट्					
वहति	वहतः	वहन्ति	Яo	वहते	वहेते	वहन्ते			
वहसि	वह्थः	वहथ	म०	वहसे	वहेथे	वहध्वे			
वहामि	वहावः	वहामः	उ॰ '	वहे	वहावहे	वहामहे			
	लोट्				लोट्				
वहतु	वहताम्	वहन्तु	Дo	वहताम्	वहेताम्	वहन्ताम्			
वह	वहतम्	वहत	भ०						
वहानि	वहाव	वहाम	30	वहै	वहावहै	वहामहै			
	लङ्				लङ्				
अवहत्	अवहताम्	अवहन्	No	अवहत	अवहेताम्	अवहन्त			
	अवहतम्		य०	अवह्याः	अवहेथाम्	अवहष्तम्			
अवहम्	अवहाव		30	अवहे	अवहावहि	अवहामहि			
	विधिलिङ्				विधिलिङ	٤			
वहेत्	वहेवाम्	वहेयुः	yo.	वहेत	वहेयाताम्	वहेरन्			
वहे:	वहेतम्		Ho	वहेथाः	वहेयाथाम्	वहेध्वम्			
वहेयम्	वहेव	वहेम	₹•	वहेय	वहेवहि	वहेमहि			
	_				_				
वक्ष्यति	वक्ष्यतः	वक्ष्यन्ति	उठ	वक्ष्यते	वक्ष्येते	वक्ष्यन्ते			
वोढा		वोढारः		बोढा	वोढारौ				
	उह्यास्ताम्								
अवस्यत्	अवध्यताम्	अवस्यन्	लङ्	अवस्थत	अवश्येताम्				
	लिट् .				लिट्				
उवाह	ऊहतुः	अहु :	प्र॰	ऊहे	जहाते	ऊ हिरे			
उवहिंग,उव		जह		ऊहिषे	ऊहाथे	ऊ हिष्वे			
- उवाह, उव		ऊहिम	उ॰	अहे	ऊहिवहे	ऊहिमहे			
	ন্ত্ৰ (ধ)				खु ङ ्(४)				
अवाक्षीत्	अवोढाम्	अवाधुः	प्र॰	अवोढ	अवक्षाताम्	अवक्षत			
अवाक्षीः	अवोदम्			अवोदाः		अवोद्वम्			
						अवस्मिहि ngotri Gyaan Kosha			

(२) अदादिगण

- (१) इस गण की प्रथम धातु अद् (खाना) है, अतः गण का नाम अदादिगण पड़ा। (अदिप्रभृतिभ्यः शपः) अदादिगण की धातुओं में लट्, लोट्, लङ् और विधि-लिङ् में धातु और प्रत्यय के बीच में कोई विकरण नहीं लगता है (शप् का लोप होता है)। धातु के अन्त में केवल ति, तः आदि लगते हैं। उपर्युक्त लकारों में धातु को एकवचन में गुण होता है, अन्यत्र नहीं।
 - (२) इस गण में ७२ धातुएँ हैं।
- (३) लट् आदि में धातु के अन्त में संक्षिप्त-रूप निम्नलिखित लगेंगे। लट्, लुट्, आशीर्लिङ् और लङ् में १ष्ठ १४४ पर निर्दिष्ट संक्षिप्त-रूप ही लगेंगे। लुट् आदि में सेट् (इ वाली) धातुओं में संक्षिप्त-रूप से पहले इ भी लगता है, अनिट् (इ-नहीं वाली) धातुओं में केवल संक्षिप्त-रूप ही लगेंगे।

पुरस्	गैपद (सं०	रूप)		आत्मनेपद (सं॰ रूप)				
	लट्				लट्			
ति	तः	अन्ति	До	ते	आते	अते		
सि	য:	य	म०	से	आर्थ	ध्वे		
मि	वः	मः	उ॰	ए	वहे	महे		
	लोट्				लोट्			
त्र	ताम्	अन्तु	प्र॰	ताम्	आताम्	अताम्		
हि	तम्	त	म०	स्व	आथाम्	ध्वम्		
आनि	आव	आम	उ॰	ऐ	आवहै	आमहै		
	ल्ङ ् (धार्	तु से पूर्व अ	या आ)	रुङ्	ल्ड् (धातु से पूर्व अ या आ)			
त्	ताम्	अन्	प्र॰	त	आताम्	अत		
:	तम्	त	म॰	थाः	आथाम्	ध्वम्		
अम् ै	व	म	उ॰	£	वहि	महि		
	विधिलिङ्				विधिलि	ङ्		
यात्	याताम्	युः	স ৹	ईत	ईयाताम्	ईरन्		
याः	यातम्	यात	म॰	ईयाः	ईयाथाम्	ईध्वम्		
याम्	याव	याम	30	ईय	ईवहि	ईमहि		

अदादिगण (परस्मैपदी धातुएँ)

(३१) अद् (खाना) (दे० अ० २३)

(३१) अद्	(खाना) (५	० ज ० (२)				
	लट्				लोट्	
अंति	अत्तः	अदन्ति	प्र॰	अत्तु	अत्ताम्	अदन्तु
अत्सि	अत्थः	अत्थ	म०	अद्धि	अत्तम्	अत्त
अद्मि	अद्र:	अद्म:	30	अदानि	अदाव	अदाम
					_	
	सङ्				विधिलिङ्	
आदत्	आत्ताम्	आदन्	प्र॰	अद्यात्	अद्याताम्	अयुः
आदः	आत्तम्	आत्त	म०	अद्याः	अद्यातम्	अद्यात
आदम्	आद	आद्म	उ॰	अद्याम्	अद्याव	अद्याम
	<u> </u>					
	लृट्				खुर्	
अत्स्यति	अत्स्यतः	अत्स्यनि	उ प्र	अत्ता	अत्तारौ	अत्तारः
अत्स्यसि	अत्स्यथः	अत्स्यथ	म॰	अत्तासि	अत्तास्थः	अत्तास्थ
अत्यामि	अत्स्याव	: अत्स्याग	मः उ०	अत्तोस्मि	अत्तास्वः	अत्तास्मः
	_				-	
	आशीर्लंङ्				लङ्	
				्राप्तास्य		शास्त्रज्ञ
	अद्यास्ता		प्र॰		आत्स्यताम्	
अद्याः		(अद्यास्त	म॰		आत्स्यतम्	
अद्यासम्	अद्यास्व	अद्यास	उ॰	आत्र्यभ्	आत्स्याव	आत्याम
	_				_	
	लिट् (क)			लुङ्	(२) (अद्	को घस्)
आद	आदतुः	आदुः	प्र॰	अघसत्	अघसताम्	अघसन्
आदिथ	आदथुः	आद	म०	अघसः	अघसतम्	अघसत
आद	आदिव	आदिम	उ॰	अघसम्	अघसाव	अघसाम
	लिट् (ख)	(अद् को घर	()			
जघास	जक्षतुः	्र जक्षुः	До			
जघसिथ	जक्षयुः	जक्ष	म॰			
जघास, जह	ास जक्षिव Tripathi Colle	जक्षिम ection at Sara	₹°	Digitized By Sig	ddhanta eGan	gotri Gvaan K

(३२) अस् (होना) (दे. अ. २४) (३३) इ (जाना) (दे. अ. ३०) स्चना - लिट्, छङ् आदि में अस् को भू होगा। सूचना - इ को छङ् में गा होगा। लर् लर् अस्ति सन्ति एति यन्ति स्तः प्र० इत: असि एषि स्थः स्थ म० इथ: इथ अस्मि एमि स्व: स्मः उ० इव: इम: लोट् लोट् स्ताम् अस्त सन्तु प्र० एतु इताम् यन्तु एधि इहि म० इतम् इत स्तम् स्त अयानि अयाम असानि असाव उ० अयाव असाम लङ् लङ् आसीत् ऐत् ऐताम् आस्ताम् आयन् आसन् प्र० आसीः ऐ: ऐतम् ऐव आस्तम् आस्त म० ऐम ऐव आयम् आसम् आस्व आस्म उ० विधिलिङ् विधिलिङ इयाताम् इयुः स्यात् स्याताम् स्युः प्र० इयात् म० इयाः इयातम् इयात स्याः स्यातम् स्यात इयाम् इयाम इयाव स्याम् स्याव स्याम ভ৽ एप्यन्ति एष्यति भविष्यतः (भू के तुल्य)लृट् एप्यतः भविष्यति एतारौ एतार: **ख्ट**ू एता भवितारौ० (,,)भविता ईयास्ताम् ईयासुः ईयात् (,,) আ ০ ভিঙ্ भूयास्ताम्० भ्यात् ऐप्यताम् ऐप्यन् अभविष्यताम् (,,) लङ् ऐष्यत् अभविष्यत लिट् लिट् (भू के तुल्य) ईयु: इयाय ईयतुः बभ्वः प्र० बभूव दभूवतुः इययिथ, इयेथ ईयथुः ईय म० बभूविथ बभूव बभूवथुः ईयिम इयाय,इयय ईयिव बभूविम उ० बभूविव बभूव

अगाताम् अगुः अभ्वन् प्र० अगात् अभृत् अभूताम् अगातम् अगात अगाः म० अभूत अभूः अभूतम् अगाव अगाम अगाम् अभम उ०

लुङ्(१) (भूके तुल्य)

अभूवम् अभूव अभूम उ० आगम् अगाप CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लुङ् (१) (इ को गा)

	140							
	(३४) रुद	(रोना) (दे॰	अ० २८)	(३५) खप् (सोना) (दे॰ अ॰ २८)				
	1	लट्	erre,			लर्		
	रोदिति	रुदित:	रुद न्ति	प्र०	स्विपति	स्वपितः	स्वपन्ति	
1	रोदिषि	रुदिथ:	रुदिथ	म०	स्विपिषि	स्विपथः	स्विपथ	
	रोदिमि	रुदिवः	रुदिम:	उ॰	स्विपिमि	स्विपवः	स्वपिमः	
1	राष्ट्राज	लोट्				लोट्		
	रोदितु	रु दिताम्	ब् दन्तु	प्र॰	स्वपितु	स्विपताम्	स्वपन्तु	
	र ।।५0	र िदतम्	रु दित	म०	स्वपिहि	स्विपतम्	स्वपित	
			रोदाम	उ०	स्वपानि	स्वपाव	स्वपाम	
	रोदानि	रोदान	रायाण		VI III-2	लङ्		
		लङ्	בענות	प्र॰	अस्वपीत्,	अस्विपताम्	अस्वपन	
		अरुदिताम्	अस्दन्	A.		C1(-11 1-11 -		
	अरोदत्				अस्वपत् अस्वपीः,	अस्विपतम्	ചച്ചിവു	
	अरोदीः,	अरुदितम्	अरुदित	म०		अस्यानतन्त्र	બલામા	
	अरोदः	300			अखपः		अस्वपिम	
	अरोदम्	अरुदिव	अरुदिम	उ॰	अस्वपम्		अस्वापन	
		विधिलिङ्				विधिलिङ्		
	रुद्यात्	रुद्याताम्	ब् युः	Дo	स्वप्यात्	खप्याताम्		
	रुद्याः	रुद्यातम्	रुद्यात	म०	स्वप्याः	खप्यातम्		
	रुद्याम्	रुद्याव	रुद्याम	30	खप्याम्	स्वप्याव	खप्याम	
		_	200					
	रोदिष्यति	रोदिष्यतः	रोदिष्यन्ति	लुट्	स्वप्स्यति	स्वप्स्यतः स्वप्तारौ	स्वप्स्यन्ति स्वप्नारः	
	रोदिता	रोदितारी	रोदितारः रुद्यासुः आ	खुर् ० लिङ	स्वप्ता सुप्यात्	सुप्यास्ताम्		
	रुचात् अरोदिष्यत्	स्द्यास्ताम् अरोदिष्यता	प्रथापुर जा	लङ्	अस्वप्स्यत्	अस्वप्स्यताम्		
	जसाय नार	हिट्		हिट्				
	-)-		xx2.	प्र॰	सुष्वाप	सुषुपतुः	सुषुपु:	
	रुरोद रुरोदिथ	रुरदुः रुरदुः	रुरु: रुरु	म०	सुष्वपिथ,	सुषुपश्चः	सुबुप	
	पराज्य	4443.	,		सुष्वप्य	33.3		
	ब्रोद	ब रुदिव	रुर्दिम	उ॰	सुध्वाप,सुष्व	प सुषुपिव	सुषुपिम	
		लुङ् (क) (२)				लुङ् (४)		
	अरदत्	अरुदताम्	अरुदन्	प्र॰	अस्वाप्सीत्		अखाप्सुः	
	अरुदः	अरुदतम्	अरुदत	Ho	अस्वाप्सीः			
	अरुदम्	अरुदाव	अरुदाम	ਤ∘	अस्वाप्सम्			
		छुङ् (ख) (५)				-		
	अरोदीत्	अरोदिष्टाम्	अरोदिषुः	प्र॰				
	अरोदीः	अरोदिष्टम्	अरोदिष्ट	म०				
CC-O.	[©] अरी दिषम्	ा असि दिल् llect	ion अरो स्थि	SDS Dig	gitized By Siddh	anta eGango	otri Gyaan Kosha	

(३६) दुह् (दुहना) (दे॰ अ॰ २७) (३७) लिह् (चाटना) (दे॰ अ॰ २७) सूचना—केवल परस्मैपद के रूप दिए हैं। सूचना—केवल परस्मै॰ के रूप दिए हैं।

						/
	लट्				लट्	
दोग्धि	दुग्धः	दुइन्ति	प्र॰	लेडि	लीदः	लिइन्ति
घोक्षि	दुग्धः	. दुग्ध	म०	लेक्षि	लीद:	लीड
दोह्य	दुह्न:	दुहाः	उ०	लेहि।	लिह्न:	लिहा:
	लोट्	-			लोट्	
दोग्धु	दुग्धाम्	दुहन्तु	प्र॰	लेंद्र	लीढाम्	लिइन्तु
दुग्धि	दुग्धम्	दुग्ध	म०	लीढि	लीढम्	लीद
दोहानि	दोहाव	दोहाम	उ०	लेहानि	लेहाव	लेहाम
	लङ्				लङ्	
अधोक्,-	ग् अदुग्धाम्	अदुहन्	प्र॰	अलेट्,-ड्	अलीढाम्	अल्हिन्
	ग् अदुग्धम्	अदुग्ध	म०	,, ,,	अलीढम्	अलीढ
अदोइम्	अदुह	अदुह्म	उ॰	अलेहम्	अलिह	अलिहा
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	SPAN
दुह्यात्	दुह्याताम्	दुह्यः	Дo	िह्यात्	लिह्याताम्	रिह्यः
दुद्धाः	दुह्यातम्	दुह्यात	म०	लिह्याः	लिह्यातम्	लिह्यात
दुह्याम्	दुह्याव	दुह्याम	उ०	ल्ह्याम्	लिह्याव	लिह्याम
	_				-	
घोक्ष्यति	धोध्यतः	भोक्ष्यन्ति	लट्	लेक्ष्यति	लेक्ष्यतः	लेक्यन्ति
दोग्धा	दोग्धारी	दोग्धारः	खुट्	लेढा	लेढारौ	लेढारः
दुह्यात्	दुह्यास्ताम्	दुह्यासुः अ	।। ० लिङ्	् लिह्यात्	लिह्यास्ताम्	ल्हिं ह्यासुः
अधोक्यत्	अधोक्ष्यताम्	अधोक्ष्यन्	लङ्	अलेक्यत्	अलेक्ष्यताम्	0
	लिट्				लिट्	
दुदोह	दुदुहतुः	दुदुह:	प्र॰	लिलेइ	लिलिहतुः	लिलिहु:
दुदोहिय	दुदुह्थुः	दुदुइ	म०	त्रिले हिय	लिलिह्थुः	लिलिइ
दुदोह	दुदुहिव	दुदुहिम	उ॰	ल्लिह	लिलिहिव	लिलिहिम
	बुङ् (७)				लुङ् (७)	
अधुक्षत्	अधुक्षताम्	अधुक्षन्	प्र॰	अल्क्षित्	अलिक्षताम	(अलिक्षन्
अधुक्षः	अधुक्षतम्	अधुक्षत	Ho.	अल्क्षिः	अज्ञिक्षतम्	अलिक्षत
अधुक्षम्	अधुक्षाव	अधुक्षाम	उ॰	अलिक्षम्	अलिक्षाव	अलिक्षाम

(६० ०० १)										
(३८) हन् (मारना) (दे॰ अ॰ २९) (३९) स्तु (स्तुति करना) (दे॰ अ॰ २९)										
इन्हें पुरु स्ताति, खुरा										
हान्त र स्तवीति										
हत्सि हथः हथ म० स्तौषि, स्तवीषि स्तथः स्तुथ										
हत्सः उ० स्तीम, स्तवाम राष										
लोट लोट										
हताम धननु प्र० स्तीतु, स्तवातु स्तुताम् अपन्य										
हत हतम हत म॰ स्तुहि स्तुतम् स्तुत										
हनानि हनाव हनाम उ० स्तवानि स्तवाव स्तवाम	1									
लङ										
अहन् अहताम् अध्नन् प्र॰ अस्तौत्, अस्तुताम् अस्तुवन	Ţ									
अस्तवीत्										
अहन् अहतम् अहत म॰ अस्तौः, अस्तुतम् अस्तुत										
अस्तवीः										
अहनम् अहन्व अहन्म उ॰ अस्तवम् अस्तुव अस्तुम										
विधिलिङ् विधिलिङ्										
हन्यात् हन्याताम् हन्युः प्र० स्तुयात् स्तुयाताम् स्तुयुः										
इन्याः हन्यातम् इन्यात म० स्तुयाः स्तुयातम् स्तुयात										
इन्याम् इन्याव इन्याम उ० स्तुयाम् स्तुयाव स्तुयाम										
हनिष्यति हनिष्यतः हनिष्यन्ति लृट् स्तोष्यति स्तोप्यतः स्तोष्य	े त									
हन्ता हन्तारौ हन्तारः छुट् स्तोता स्तोतारौ स्तोता	₹:									
वध्यात् वध्यास्ताम् वध्यासुः आ०लिङ् स्त्यात् स्त्यास्ताम् स्त्यासु	j:									
अहनिष्यत् अहनिष्यताम् ० लङ् अस्तोष्यत् अस्तोष्यताम् ०										
लिट्										
ज्ञान जम्नुः जम्नुः प्र० तृष्टाव टुष्टुवतुः तुष्टुवुः										
লঘনিথ, লংনখু: লংন										
जघन्य										
ज्ञान, जम्निव जम्निम उ॰ तुष्टाव, तुष्टव तुःदुव तुःदुम										
-जधन										
लुङ् (५) (हन् को वध) लुङ् (५)	£									
अवधीत् अवधिष्टाम् अवधिषुः प्र॰ अस्तावीत् अस्ताविष्टाम् अस्ता										
अवधीः अवधिष्टम् अवधिष्ट म० अस्तावीः अस्ताविष्टम् अस्ता										
CC-O. Dr. Rangelettjipatki किस्टिकां करिने क्षिक्षां कि SDS b. Digitizen किएकां ddhanta pagotri आरखा	neko sha									

(४०) या (जाना) (दे॰ अ॰ २६)				(४१) पा (रक्षा करना) (दे० अ० २६)				
	लट्				लट्			
याति	यातः	यान्ति	प्र॰	पाति . •	पातः	पान्ति		
यासि	याथः	याथ	म०	पासि	पाथः	पाथ		
यामि	यावः	यामः	उ०	पामि	पावः	पामः		
	लोट्				लोट्			
यातु	याताम्	यान्तु	प्र॰	पातु	पाताम्	पान्तु		
याहि	यातम्	यात	म०	पाहि	वातम्	पात		
यानि	याव	याम	उ॰	पानि	पाव	पाम		
	लङ्				लङ्			
अयात्	अयाताम्	अयुः,	प्र॰	अपात्	अपाताम्	अपुः,		
		अयान्				अपान्		
अयाः	अयातम्	अयात	म०	अपाः	अपातम्	अपात		
अयाम्	अयाव	अयाम	उ॰	अपाम्	अपाव	अपाम		
	विधिलिङ्				विधिलिङ्			
यायात्	यायाताम्	यायुः	प्र॰	पायात्	पायाताम्	पायुः		
यायाः	यायातम्	यायात	म०	पायाः	पायातम्	पायात		
यायाम्	यायाव	यायाम	उ॰	पायाम्	पायाव	पायाम		
	_			_				
यास्यति	यास्यतः	यास्यन्ति	लृट्	पास्यति	पास्यतः	पास्यन्ति		
याता	यातारौ	यातारः	लुट्	पाता	पातारौ	पातारः		
यायात्	यायास्ताम्	यायासुः आ		पायात्	पायास्ताम्	पायासुः		
अयास्यत्	अयास्यताम्		लङ्		अपास्यताम्	अपास्यन्		
	लिट्				िट्			
ययौ	ययतुः	ययुः	प्र॰	पपौ	पपतुः	पपुः		
ययिथ,	ययथुः	यय	म॰	पपिथ,	पपथु:	पप		
ययार्थ				पपाथ				
ययौ	ययिव	ययिम	उ०	पपौ	पपिव	पपिम		
	लुङ् (६)				छङ् (६)	100		
अयासीत्	अयासिष्टाम्	अया सिषु:	प्र॰	अपासीत्	अपासिप्टाम	अपासिषुः		
अयासीः	अयासिष्टम्		म०	अपासीः	अपासिष्टम्			
अयासिषम		अयासिष्म	उ॰	अपासिषम्	अपासिष्व	अपासिष्म		

(४२) शास् (शिक्षा देना) (दे० अ० २३) (४३) विद् (जानना) (दे० अ० ३०)

(४२) शास् (शिक्षा देना) (दे० अ० ५२) (०२) (५५ (आर्था) (
	लट्				लट्					
शास्ति	शिष्टः	शासति	प्र०	वेत्ति	वित्तः	विदन्ति				
शास्सि	হািছ:	হিছে ।	म०	वेत्सि	वित्थः	वित्थ				
शास्मि	शिष्वः	शिष्मः	उ॰	वेद्मि	विद्वः	विद्यः				
and,	लोट्				लोट्					
शास्तु	शिष्टाम्	शासतु	प्र०	वेत्तु	वित्ताम्	विदन्तु				
शाधि	शिष्टम्	शिष्ट	म०	विद्धि	वित्तम्	वित्त				
शासानि	शासाव	शासाम	उ०	वेदानि	वेदाव	वेदाम				
सावाम	लङ्				लङ्					
PATE 2	अशिष्टाम्	अशासुः	प्र०	अवेत्	अवित्ताम्	अविदुः				
अशात्	ात् अशिष्टम्	अशिष्ट	म०		न् अवित्तम्	अवित्त				
	अशिष्व	अशिष्म	उ०	अवेदम्	अविद्व	अविद्य				
अशासम्		जाराना	0.	-1144	विधिलिङ्					
	विधिलिङ्	£	TT.	विद्यात्	विद्याताम्	बिद्युः				
शिप्यात्	शिष्याताम्	शिष्युः	प्र॰			विद्यात				
शिष्याः	शिष्यातम्	शिष्यात	म०	विद्याः	विद्यातम्					
शिष्याम्	शिष्याव	शिष्याम	उ•	विद्याम्	विद्याव	विद्याम				
		- Marie		-		20 0				
शासिष्यति		शासिष्यन्ति	लृट्	वेदिप्यति	वेदिष्यतः	वेदिष्यन्ति				
शासिता	शासितारौ	शासितारः	खर्		वेदितारौ	वेदितारः				
शिष्यात्	शिष्यास्ताम्	शिष्यासुः अ	०लिङ्	विद्यात्	विद्यास्ताम्	विद्यासुः				
अशासिष्य	त् अशासिष्यता	म् ०	लङ्	अवेदिष्यत्	अवेदिप्यताम	0				
	लिट्				लिट्					
शशास	शशासतुः	शशासुः	प्र०	विवेद	विविदतुः	विविदुः				
शशासिथ	शशासथुः	शशास	Ho	विवेदिथ	विविद्युः	विविद				
शशास	शशासिव	शशासिम	उ०	विवेद	विविदिवं	विविदिम				
1110			10.2							
	लुङ् (२)		_	>-	छङ् (५)	-30-				
अशिषत्	अशिषताम्	अशिषन्	प्र॰	अवेदीत्	अवेदिष्टाम्	अवेदिषुः				
अशिषः	अशिषतम्	अशिषत	म०	अवेदी:	अवेदिष्टम्	अवेदिष्ट				
अहि प्	अशिषाव	अशिषाम	उ०	अवेदिषम्	अवेदिष्व	अवेदिष्म				

स्वना—(१) लट् में वेद विदतुः विदुः, वेत्थ विदशुः विद, वेद विद्व विद्य, भी रूप होते हैं।

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Salai (टिन्ट्र और ज़िर्में) किसीता के बादि भी रूप होते हैं ।

अदादिगण-आत्मनेपदी धातुएँ

(४४) आस् (बैठना) (दे॰ अ॰ ३१)

	लट्				लोट्	
आस्ते	आसाते	आसते	प्र॰	आस्ताम्	आसाताम्	आसताम्
आस्से	आसाथे	आध्वे	म०	आस्स्व	आसाथाम्	आध्वम्
आसे	आस्वहे	आस्महे	उ॰	आसै	आसावहै	आसामहै
-	_					
	लङ्				विधिलिङ्	
आस्त	आसाताम्	आसत	प्र॰	आसीत	आसीयाताम्	आसीरन्
आस्याः	आसाथाम्	आध्वम्	म०	आसीयाः	आसीयाथाम्	आसीध्वम्
आसि	आस्वहि	आसाहि	उ०	आसीय	आसीवहि	आसीमहि
	लट्				लृट्	

आसिता आसिष्यते आसिष्येते आसिष्यन्ते प्र॰ आसितारौ आसितारः आसिष्यसे आसिष्येथे आसिष्यध्वे म० आसितासे आसितासाथे आसिताध्वे आसिताहे आसिष्यावहे आसिष्यामहे उ० आसितास्वहे आसितास्महे आसिष्ये

आशीर्लंङ्

लङ्

आसिषीच्य आसिषीयास्ताम् आसिषीरन् प्र॰ आसिष्यत् आसिष्येताम् आसिष्यन्त आसिषीष्ठाः आसिषीयास्थाम् आसिषीच्यम् म॰ आसिष्ययाः आसिष्येयाम् आसिष्यच्य आसिषीय आसिषीवहि आसिषीमहि उ॰ आसिष्ये आसिष्यावहि आसिष्यामहि

आसांचक्रे आसांचक्राते आसांचिक्रिरे प्र॰ आसिष्ट आसिषाताम् आसिष्यत

—चकुषे —चक्राये —चकुढ्वे म॰ आसिष्टाः आसिषायाम् आसिष्वम्

—चक्रे —चकुवहे —चकुमहे उ॰ आसिषि आसिष्वहि आसिष्महि

	१७४ प्राट-रचनानुवादकासुर (तर्भार										
	(४५) शी	(सोना) (दे॰	अ० ३२)	(88) अधि + इ	इ (पढ़ना) (दे	अ० ३२)				
	(-)	लट्				लट्					
	शेते	शयाते	शेरते	प्र॰	अधीते	अधीयाते	अधीयते				
	दोप <u>े</u>	शयाथे	शेध्वे	Ho	अधीषे	अधीयाथे	अधीध्वे				
	शये	शेवहे	शेमहे	उ०	अधीये	अधीवहे	अधीमहे				
1	-	लोट्				लोट्					
	शेताम्	शयाताम्	शेरताम्	प्र०	अधीताम्	अधीयाताम्	अधीयताम्				
	शेष्व	शयाथाम्	शेध्वम्	म०	अधीष्व	अधीयाथाम्	अधीध्वम्				
	शय शय	शयावहै		- उ०	अध्ययै	अध्ययावहै	अध्ययामहै				
	राप	लङ्				लङ्					
	अशेत	अशयाताम्	अद्योरत	प्र॰	अध्यैत	अध्यैयाताम्	अध्यैयत				
	अशेषाः	अशयायाम्	अशेष्तम्	Ho	अध्यैथाः						
	अश्वाय	अशेवहि	अशेमहि	उ०	अध्यैयि						
	બચાવ	विधिलिङ्	Oldinid			विधिलिङ्					
	0-		शयीरन्	По	अधीयीत		न् अधीयीरन्				
	शयीत	श्यीयाताम्	श्यारम्			अधीयीयाथाम्					
	शयीथाः	शयीयाथाम्									
	शयीय	शयीवहि	शयीमहि	30	अधीयीय	अधीयीवहि	अधायामाह				
		 श्रायिष्येते	रागिकाः ने		20-20-20-2		अध्येष्यन्ते				
	श्यिष्यते										
	श्यिता		शयितारः		अध्येता		अध्येतारः				
	शयिषीष्ट										
	अशायष्यत	अश्विष्येताम्		लङ्	ङ् अध्यैष्यत, अध्यगीष्यत (दोनों प्रकार से)						
		लिट्				लिट् (इ को	गा)				
	शिश्ये	शिश्याते	शिश्यिरे	ДO	अधिनगे	अधिजगाते	अधिजगिरे				
	शिश्यिषे	शिश्याथे	शिश्यिध्वे	म०	अधिजगिषे	अधिजगाथे	अधिजगिध्वे				
	शिश्ये	शिश्यिवहे	शिदियमहे	उ॰	अधिजगे	अधिजगिवहे	अधिजगिमहे				
X-3		लुङ् (५)				छ ङ् (क) (४)					
1	अशयिष्ट	अशिषाताम्	अशयिषत	प्रं०	अध्यैष्ट	अध्यैषाताम	अध्येषत				
	अश्यिष्ठाः	अशयिषायाम्	अश्यिध्वम्	中。	अध्येष्ठाः	अध्यैषाथाम्	अध्येदवम				
	अशयिषि	अशयिष्वहि	अशयिष्महि	उ०			अध्यैष्महि				
						छङ् (ख) (४)					
122					अध्यगीष्ट	अध्यगीषाताम्					
						ज्यानाताताच्य	्अल्यगायत				
CC-O.	Dr. Ramdev	Tripathi Collect	ion at Sarai(CSDS)	Digitized By	अध्यगीषाथाम् Siddhanta eGai अध्यगीष्वहि	ngotri Gyaan Ko	sha			
760					ગામામ	अन्त्रशान्त्राह	अव्यंगाः माह				

			4		-> 0 21)			
		कहना) परसं			आत्मनेपद (दे॰ अ॰ २५)			
	स्चना-	लट् आदि में ब	मू की वच् हो	गा ।	स्चना-	लट् आदि में ह	ूको वन्।	
	4 7 7 8	लर्				लट्		
	ब्रवीति }	ब्र्तः }	ब्रुवन्ति }	До	ब्रुते	ब्रुवाते	ब्रुवते	
	आह ∫	आहतुः ∫	आहुः ∫					
	व्रवीषि }	ब्र्यः }	ब्र्थ	म०	ब्षे	ब्रुवाथे	ब्र्ध्वे	
	व्रवीमि	ब्र्वः	ब्रूम:	उ०	ब्रुवे	ब्रवहे	ब्र्महे	
		लोट्			None	लोट्		
	ब्रवीतु		ब्रुवन्तु	प्र॰	ब्रुताम्	बुवाताम्	बुवताम्	
	ब्र्हि	ब्रूतम्	ब्रूत	म०	ब्रूच	बुवाथाम्	ब्रध्वम्	
	व्रवाणि	ब्रवाव	ब्रवाम	उ०	ब्रूच्व ब्रवे	ब्रवावहै	ब्रवामहै	
		लङ्				लङ्		
	अब्रवीत्	अब्रुताम्	अब्रुवन्	प्र॰	अब्रूत	अबुवाताम्	अब्रुवत	
	अब्रवीः	अब्रूतम्	अब्रूत	म०	अब्र्थाः	अब्रुवाथाम्	अब्रूध्वम्	
	अब्रवम्	अब्र्व	अब्रूम	उ॰	अबुवि	अब्र्विह	अब्रुमहि	
		विधिलिङ्				विधिलिङ्		
	ब्र्यात्	ब्र्याताम्	ब्र्युः	प्र॰	ब्रुवीत	ब्रुवीयाताम्	ब्रुवीरन्	
	ब्र्याः	ब्र्यातम्	ब्र्यात	म०	ब्रुवीथाः	ब्रुवीयाथाम्	ब्रुवीध्वम्	
	ब्र्याम्	ब्र्याव	ब्र्याम	उ॰	ब्रुवीय	ब्रुवीविं	ब्रुवीमहि	
		_	e is su			37.16-3		
paC	वक्ष्यति	वक्ष्यतः	वक्ष्यन्ति	लृट्	बक्ष्यते	वक्ष्येते	वक्ष्यन्ते	
	वक्ता	वक्तारौ	वक्तारः	खुट्	वक्ता	वक्तारौ	वक्तारः	
	उच्यात्	उच्यास्ताम्	उच्यासुः व	भा ० लि	ङ्वक्षीष्ट	वक्षीयास्ताम्	वक्षीरन्	
	अवध्यत्	अवस्थताम्	अवध्यन्	लङ्	अवक्ष्यत	अवक्ष्येताम्	अवध्यन्त	
		लिट्				लिट्		
	उवाच	जचतुः	ऊ चुः	प्र॰	ऊचे	ऊचाते	अचिरे	
	उवन्विथ,	ऊच थुः	ज च	स०	ऊ चिषे	ऊचाथे	ऊचिध्वे	
	उवक्थ							
>	उवाच,	ऊचिव	ऊचिम	उ०	ऊचे	ऊचिवहे	ऊचिमहे	
	उवच					1-1		
		लुङ् (२)			198	छङ् (२)		
	अबोचत्		(अवोचन्		अवोचत		A STATE OF THE PARTY OF THE PAR	
	अवोचः	अवोचतम्	अवोचत					
CC-O	. Dr. सबोच्चम्	Tripath Collect	ion at Sarail	SDS)	<mark>अवो</mark> चे Digitized By S	अवोचावहि iddhanta eGand	अवोचामहि otri Gyaan Kosha	
							TO THE REAL PROPERTY.	

(३) जुहोत्यादिगण

- (१) इस गण की प्रथम धातु हु (हवन करना) है। उसके रूप जुहोति आदि होते हैं, अतः गण का नाम जुहोत्यादिगण पड़ा। जुहोत्यादिगण में भी अदादिगण के तुल्य धातु और प्रत्यय के बीच में लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् में कोई विवरण नहीं लगता है। (जुहोत्यादिभ्यः खुः, ख़ी) उक्त लकारों में धातु को द्वित्व होता है अर्थात् धातु को दो बार पढ़ा जाता है और द्वित्व के प्रथम भाग में कुछ परिवर्तन भी होते हैं। उक्त लकारों में धातु को एकवचन में गुण होता है, अन्यत्र नहीं।
 - (२) इस गण में २४ धातुएँ हैं।
- (३) लट् आदि में धातु के अन्त में संक्षित-रूप निम्नलिखित लगेंगे। लट्, खुट्, आश्रीलिंड् और लड़् में पृष्ठ १४४ पर निर्दिष्ट संक्षितरूप ही लगेंगे। लट् आदि में सेट् धातुओं में संक्षितरूप से पहले इ भी लगेगा, अनिट् में नहीं।

	परस्मैपद	(सं॰ रूप)		आत्मनेपद (सं० रूप)				
	लट्							
ति	तः	अति	प्र॰	ते	आते	अते		
सि	थ:	थ	म०	से	आथे	ध्वे		
मि	वः	मः	उ॰	ए	वहे	महे		
	छोट्				लोट्			
तु	ताम्	अतु	До	ताम्	आताम्	अताम्		
हि	तम्	व	म०	स्व	अथाम्	ध्वम्		
आनि	आव	आम	उ॰	प्रे	आवहै	आमहै		
	लङ् (धातु	से पूर्व अ य	ा आ)	लड	् (धातु से पूर्व	अया आ)		
त्	ताम्	उ:	प्र॰	त	आताम्	अत		
:	तम्	त	म०	थाः	आथाम्	ध्वम्		
अम्	a	म	30	इ	विह	महि		
	विधिलिङ्			विधिलिङ्				
यात्	याताम्	युः	प्र॰	ईत	ईयाताम्	ईरन्		
याः	यातम्	यात	म०	ईथाः	ईयाथाम्	ईध्वम्		
याम्	याव	याम	30	ईय *	ईवहि	ईमहि		

(४८) हु (हवन करना) परस्मैपदी	(दे० अ०	₹₹)	(૪૬) મં	ी (डरना) (दे परस्मैपर्द	
	लट्				लर्	
जुहोति		जुह्वति	प्र॰	बिभेति	बिभीतः	बिभ्यति
जुहोषि	जुहुथ:	जुहुथ	म०	विभेषि	विभीथः	बिभीय
जुहोमि	जुहुव:	जुहुम:	उ०	विभेमि	विभीवः	विभीम:
	लोट्				लोट्	
जुहोतु		जुह्वतु	प्र॰	बिभेतु	बिभीताम्	बिभ्यतु
जुहुधि	जुहुतम्	जुहुत	म०	बिभीहि	बिभीतम्	बिभीत
जुहवानि	जुहवाव	जुहवाम	उ०	बिभयानि	बिभयाव	बिभयाम
	लङ्				लङ्	
अजुहोत्	अजुहुताम्	अजुहवु:	प्र॰	अबिभेत्	अविभीताम्	अबिभयुः
अजुहो:	अजुहुतम्	अजुहुत	म०	अबिभेः	अबिभीतम्	अबिभीत
अजुहवम्	अजुहुव	अजुहुम	उ०	अबिभयम्	अबिभीव	अबिभीम
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
जुहुयात्	जुहुयाताम्	जुहुयुः	प्र॰	बिभीयात्	बिभीयाताम्	बिभीयुः
जुहुयाः	जुहुयातम्	जुहुयात	म०	बिभीयाः	बिभीयातम्	बिभीयात
जुहुयाम्	जुहुयाव	जुहुयाम	उ॰	बिभीयाम्	बिभीयाव	बिभीयाम
होध्यति	होष्यतः	होध्यन्ति	लट्	भेष्यति	भेष्यतः	भेष्यन्ति
होता	होतारौ	होतारः	छुट्	भेता	भेतारी	भेतारः
हूयात्	हूयास्ताम्	हूयासुः आ	०लिङ्	भीयात्	भीयास्ताम्	भीयासुः
अहोष्यत्	अहोष्यताम्		लङ्		अभेष्यताम्	अमेष्यन्
	लिट् (क)				लिट् (क)	
जुहाव	जुहुवतुः	जुहुवु:	प्र॰	बिभाय	बिम्यतुः	बिभ्युः
	होथ जुहुवथुः	जुहुव	म०	बिभियथ, वि	वेभेथ विभ्यथुः	बिभ्य
	व जुहुविव	जुहुविम	उ०		नय बिभियव	बिभ्यम
3617,36	लिट (ख)	(जुहवां + क्र)			लिट् (ख) (f	बेभयां + कृ)
जन्तांज्ञका		–चक्रुः	प्र॰	बिभयांचव	नार -चन्नतुः	–चक्रुः
	—चक्रथुः		म०	–चकर्थ	—चक्रथुः	- चक्र
		-चकुम	उ०		कर-चकुव	-चकुम
—વવા ર , વ	लुङ् (४)			The same	लुङ् (४)	
अहौषीत	अरोध्याम	अहौषुः	प्र॰	अभैषीत्	अमैष्टाम्	अमैषुः
Auferc	्राजीहरू	्यहीच्य	Ho	अभैषीः	अभष्टम्	अमैष्ट
	-	अनीवा	70	अभैषम	अभैष्व	अभैष्म ingotri Gyaan Kos

(५०) हा	(छोड़ना) (व	२० अ० ३४)	(4	१) ही (लिज	तत होना) (दे	० अ० ३४)
(10) 81	रस्मैपदी				परस्मैपदी	
	लट्				लर्	
जहाति	जहीत:	जहति	प्र॰	जिहे ति	जिह्रीतः	जिह्नियति
नहासि	जहीथः	जहीथ	म०	जिह्नेषि	जिह्नीथ:	जिह्रीथ
जहां मि	जहीव:	जहीम:	उ०	जिहेमि ।	जिहीव:	जिह्रीम:
अहारम	लोट्				लोट्	
नहातु	जहीताम्	नहतु	प्र॰	जिहेतु	जिहीताम्	जिह्नियतु
	हि जहीतम्	नहीत	म०	जिह्नीहि	जिह्रीतम्	जिहीत
जहानि	जहाव	जहाम	उ०	जिह्नयाणि	जिह्नयाव	जिह्नयाम
	लङ्				लङ्	
अजहात्	अजहीताम्	अजहुः	प्र०	अजिहेत्	अजिहीताम्	अजिह्युः
अनहाः	अजहीतम्	अजहीत	म॰	अजिहे:	अजिह्रीतम्	अनिहीत
अनहाम्	अजहीव	अजहीम	उ०	अजिहयम्	अजिहीव	अजिहीम
	विधिलिङ्	·			विधिलिङ्	
जह्यात्	जह्याताम्	जह्यु:	प्र॰	जिह्रीयात्	जिहीयाताम्	जिह्रीयु:
जह्याः	जह्यातम्	जह्यात	म०	जिहीयाः	जिहीयातम्	जिह्रीयात
जह्याम्	जह्याव	जह्याम	उ०	जिहीयाम्	जिह्रीयाव	जिहीयाम
764					-	
हास्यति	हास्यतः	हास्यन्ति	लट्	हेष्यति	हेष्यतः	हेध्यन्ति
हाता	हातारौ	हातारः	लुट्	हेता	हेतारौ	हेतार:
हेयात्	हेयास्ताम्	हेयासुः आ	COLUMN TO SERVICE		हीयास्ताम्	हीयासुः
अहास्यत्	अहास्यताम्		लङ्	अहेष्यत्	अहेष्यताम्	अहेष्यन्
	लिट्				लिट्	
जहाै	जहतुः	जहुः	प्र॰	जिहाय	जिह्नियतुः	जिह्नियु:
जहिथ,जहा		जह	म०		हेथ जिह्नियथुः	जिह्निय
जहाँ	जहिव	जहिम :	उ०	जिहाय, जिहर		जिहियिम
	लुङ् (६)				छङ् (४)	
अहासीत्	अहासिष्टाम्	अहा सिष:	प्र॰	अहैषीत्	अहैष्टाम्	अहैषुः
अहासी:	अहासिष्टम	अहासिष्ट	म०	अहेषीः	अहैष्टम्	अहैष्ट
अहासिषम्		अहासिष्म	उ०	अहैषम्	अहैष्व अहैष्व	अहैष्म
				-161.7	9 5 C 2	26.4

सूचना—ही के लिट् में जिह्नयां + कृ अर्थात् जिह्नयांचकार आदि भी रूप

(५२)भृ (पालन करना) (दे०अ० ३५) (५३) मा (तोलना, नापना) (दे०अ०३५) उभयपदी

सूचना - केवल परसमैपद के रूप दिए हैं।

		लर्				लट्	
	विभर्ति	बिभृतः	विभ्रति	प्र०	मिमीते	मिमाते	मिमते
	विभर्षि	बिभृथ:	बिभृथ	म०	मिमीषे	मिमा थे	मिमीध्वे
	विभर्मि	बिभृवः	बिभृमः	उ०	मिमे	मिमीवहे	मिमीमहे
		लोट्				लोट्	
	विभर्तु	विभृताम्	बिभ्रतु	प्र०	मिमीताम्	मिमाताम्	मिमताम्
	बिभृहि	बिभृतम्	विभृत	म०	मिमीष्व	मिमाथाम्	मिमी ध्वम्
	विभराणि	विभराव	विभराम	उ०	मिमै	मिमा वहै	मिमामहै
		लङ्				लङ्	
	अविभः	अबिभृताम्	अविभरुः	प्र०	अमिमीत	अमिमाताम्	अमिमत
	अबिभः	अविभृतम्	अविभृत	म०	अमिमीथाः	अमिमाथाम्	अमिमीध्वम्
	अबिभरम्		अविभृम	उ०	अमिमि	अमिमीवहि	अभिमीमहि
	Market	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
	बिभृयात्	बिभृयाताम्	विभृयुः	प्र०	मिमीत	मिमीयाताम्	मिमीरन्
	विभृयाः	बिभृयातम्	बिभृयात	म०	मिमीथाः	मिमीयाथाम्	
	विभृयाम्	बिभृयाव	बिभृयाम	उ०	मिमीय	मिमीवहि	मिमीम हि
	विश्वतान्					_	
	भरिष्यतिं	भरिष्यतः	भरिष्यन्ति	लुट	मास्यते	मास्येते	मास्यन्ते
	भती	भर्तारौ	भर्तारः		माता	मातारौ	मातारः
		भियास्ताम्	-		ङ् मासीष्ट	मासीयास्ताम्	मासीरन्
	भ्रियात् अभरिष्यत				् अमास्यत	अमास्येताम्	अमास्यन्त
	अमारव्यत	् अमार्ज्यता लिट्	म् जनारन	7 10-		लिट्	
			an.T.	प्र०	ममे	ममाते	ममिरे
	वभार	बभ्रतुः	बभुः	म०	ममिषे	ममाथे	ममिध्वे
	बमर्थ	बभ्रथुः	बभ	उ०	ममे	ममिवहे	ममिमहे
	बभार,बभ		बभृम	90	VIV.		
		लुङ् (४)				खुङ् (४)	
	अभाषींत्	The second line will be a second line with the second line will be a		प्र॰	अमास्त	अमासाताम्	
	अभाषीः	अभार्षम्	अभार्ष	म०	-	अमासाथाम्	
	अभार्षम्		अभाष्मी	उ०	अमासि	अमास्विह	अमासाहि
	सूचना-	—लिट् में बिभ	रां + कु अर्था	त्			
CC-C	Dr. Ran	श्रीसंकार आह	द्रांभी बस्का वासे	(capapa)	Digitized By S	Siddhanta eGan	gotri Gyaan Kosha

(७५) हा	(हेना)	परसीपद	

आत्मनेपद (दे. अ. ३६)

	(५४) दा	(देना) परस	मपद		आसम्बद्ध (राजा १२)			
		लट्				लट्		
	ददाति	दत्तः	ददति	प्र॰	दत्ते	ददाते	ददते	
	ददासि	दत्थः	दत्थ	म०	दत्से	ददाथे	दद्ध्वे	
	ददामि	दद्रः	दद्भः	उ॰	ददे	दद्वहे	दद्महे	
		लोट्				लोट्		
	ददातु	दत्ताम्	ददतु	प्र॰	दत्ताम्	ददाताम्	ददताम्	
	देहि	दत्तम्	दत्त	म०	दत्स्व	ददाथाम्	दद्ध्वम्	
	ददानि	ददाव	ददाम	उ॰	ददै ॥	ददावहै	ददामहै	
		लङ्			A PROPERTY.	लङ्		
	अददात्	अदत्ताम्	अददुः	प्र॰	अदत्त	अददाताम्	अददत	
	अददाः	अदत्तम्	अदत्त	म०	अदत्थाः	अददाथाम्	अदद्ध्वम्	
	अददाम्	अदद	अदद्म	उ•	अददि	अदद्विह	अदद्मिह	
		विधिलिङ्				विधिलिङ्		
	दद्यात्	दद्याताम्	दद्युः	प्र०	ददीत	ददीयाताम्	ददीरन्	
	दद्याः	दद्यातम्	दद्यात	म०	ददीथाः	ददीयाथाम्	ददीध्वम्	
	दद्याम्	दद्याव	दद्याम	उ॰	ददीय	ददीवहि	ददीमहि	
		_				-		
	दास्यति	दास्यतः	दास्यन्ति	लट्	दास्यते	दास्येते	दास्यन्ते	
	दाता	दातारी	दातार:	छुट्	दाता	दातारौ	दातारः	
	देयात्	देयास्ताम्			दासीष्ट	दासीयास्ताम		
	अदास्यत्	अदास्यताम्	अदास्यन् त	ल्ड ्	अदास्यत	अदास्येताम्		
		लिट्				लिट्		
	ददौ	ददतुः	ददुः	. yo	ददे	ददाते	दिदरे	
	द्रदिथ, ददाः	यदद्युः	दद	म०	दिविषे		ददिघ्वे	
	ददी	ददिव	ददिम	30	ददे	ददिवहे	ददिमहे	
		ड्र ङ् (१)						
	अदात्	अदाताम्	अदुः	प्र॰	and-	<u>ब</u> र्ड (४)		
	अदाः	अदातम्	अदात		अदित	अदिषाताम्		
CC-C				स० (GSDS). Di	<mark>अदिथाः</mark> igiti zee By Side	अदिषायाम् dhanta eGang	अदिध्वम् otri Gyaan Kosha अदिष्मीह	
			14147	(30-1). 5	आदाष ,	आंदष्वाह "	आद्षाह	

(५५) धा	(५५) धा (धारण करना) परस्मैपद आत्मनेपद (दे० अ० ३७)								
	लट्				लट्				
दघाति	धत्तः	दधति	प्र॰	धत्ते	दधाते	दधते			
दधासि	धत्थः	धत्थ	म०	धत्से	दघाते	धद् ध्वे			
दधामि	दध्वः	दधाः	उ॰	दधे	दध्वहे	दध्महे			
	लोट्				लोट्				
दघातु	धत्ताम्	दधतु	प्र०	धत्ताम्	दघाताम्	दधताम्			
धेहि	धत्तम्	धत्त	म०	धत्स्व	दधाथाम्	धद्ध्वम्			
दधानि	दधाव	दधाम	90 8	दधै	दधावहै	दधामहै			
	लङ्				ल ङ्				
अदधात्	अधत्ताम्	अद्धुः	Дo	अधत्त	अदधाताम्	अद्धत			
अदधाः	अधत्तम्	अधत्त	म०	अधत्याः	अद्धायाम्	अधद्ध्वम्			
अदधाम्	अदध्व	अदध्म	उ॰	अद्धि	अदध्वहि	अदध्महि			
	विधिलिङ्				विधिलिङ				
दध्यात्	दध्याताम्	दध्युः	प्र॰	दधीत	दधीयाताम्	दधीरन्			
दध्याः	दध्यातम्	दध्यात	म०	दधीयाः	दधीयाथाम्	दधीध्वम्			
दध्याम्	दध्याव	दध्याम	उ॰	दधीय	दधीवहि	दधीमहि			
	_ 88				- 30				
धास्यति	धास्यतः	धास्यन्ति	लुट्	धास्यते	धास्येते	धास्यन्ते			
भाता	धातारौ				धातारौ	धातारः			
धेयात्	धेयास्ताम्			् धासीष्ट	धासीयास्ताम	धासीरन्			
अधास्यत्	अधास्यता			अ धास्य	त अधास्येताम्	अधास्यन्त			
	-				िलट्				
	लिट्					-6-3			
दधौ	दधतुः	दधुः	प्र॰	The state of the s	दधाते	द्धिरे			
दिध, दधा		दघ	म०	दिधिषे	दघाये	दिधिष्वे			
दधौ	दिधव	दिधम	उ•	द्धे	दिधवहे	दिधमहे			
	छुङ् (१)				ब्रह्र्(४)				
अधात्	अधाताम्	अधुः	प्र॰	अधित	अधिषाताम				
अधाः	अधातम्	अधात	म०			् अधिष्वम्			
O. Dr. Ramdev	Tripathi Colle	ction et Sprai(CSDS	Digital for Digital Police	/ Siddha何aleum	otri स्मिक्सन्मिह्ह sha			

(४) दिवादिगण

- (१) इस गण की प्रथम धातु दिव् (चमकना आदि) है, अतः गण का नाम दिवादिगण पड़ा। (दिवादिभ्यः स्यन्) दिवादिगण की धातुओं में धातु और प्रत्यय के बीच में लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् में स्यन् (य) विकरण लगता है और धातु को गुण नहीं होता। इस गण की धातुओं के रूप चलाने का सरल उपाय यह है कि धातु के अन्त में 'य' लगाकर परस्मैपद में भू धातु के तुल्य और आत्मनेपद में सेव् धातु के तुल्य रूप चलावें।
 - (२) इस गण में १४१ धातुएँ हैं।
- (३) लट् आदि में धातु के अन्त में संक्षिप्तरूप निम्नलिखित लगेंगे। लट् छट्, आशीर्लिङ् और लङ् में पृष्ठ १४४ पर निर्दिष्ट संक्षिप्तरूप ही लगेंगे।

लट् आदि में सेट् धातुओं में संक्षितरूप से पहले इ भी लगेगा, अनिट् में नहीं।

	परस्मैपद (सं॰	रूप)	आत्मनेपद (सं० रूप)			
	लट्				लट्	
यति	यतः	यन्ति	प्र॰	यते	येते	यन्ते
यसि	यथ:	यथ	म०	यसे	येथे	यध्वे
यामि	यावः	याम	उ०	ये	यावहे	यामहे
	लोट्				लोट्	
यतु	यताम्	यन्तु	प्र॰	यताम्	येताम्	यन्ताम्
य	यतम्	यत	म०	यस्व	येथाम्	यध्वम्
यानि	याव	याम	उ॰	यै	यावहै	यामहै
लङ् (धातु से पूर्व अ या आ)					लङ् (भातु से पूर्व	अ या आ)
यत्	यताम्	यन्	प्र॰	यत	येताम्	यन्त
यः	यतम्	यत	Ho	यथाः	येथाम्	यध्वम्
यम्	याव	याम	उ॰	ये	याविह	यामहि
	विधिलिङ				विधिलिङ्	
येत्	येताम्	येयुः	प्र०	येत	येयाताम्	येरन्
येः	येतम्	येत	म०	येथाः	येयाथाम्	येध्वम्
येयम्	येव	येम	उ॰	येय	येविह	येमहि

दिवादिगण-परस्मैपदी धातुएँ

(५६) दिव् (चमकना आदि) (दे०अ० ३८) (५७) नृत् (नाचना) (दे०अ० ३८)

	लट्				लट्	
दीव्यति	दीव्यतः	दीव्यन्ति	प्र॰	नृत्यति /	नृत्यतः	नृ त्यन्ति
दीव्यसि	दीव्यथः	दीव्यथ	म०	नृत्यसि	नृत्यथः	नृत्यथ
दीव्यामि	दीव्यावः	दीव्यामः	उ०	नृत्यामि	नृत्यावः	नृत्यामः
	लोट्			F 155	लोट्	
दीव्यतु	दीव्यताम्	दीव्यन्तु	प्र०	नृत्यतु ं	नृत्यताम्	नृत्यन्तु
दीव्य	दीव्यतम्	दीव्यत	म॰	नृत्य	नृत्यतम्	नृत्यत
दीव्यानि	दीव्याव	दीव्याम	उ॰	नृत्यानि	नृत्याव	नृत्याम
	लङ्				लङ्	
अदीव्यत्	अदीव्यताम	र् अदीव्यन्	प्र॰	अनृत्यत्	अनृत्यताम्	अनृत्यन्
अदीव्यः	अदीव्यतम्	अदीव्यत	म०	अनृत्यः	अनृत्यतम्	अनृत्यत
अदीव्यम्	अदीव्याव	अदीव्याम	। उ॰	अनृत्यम्	अनृत्याव	अनृत्याम
-	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
दीव्येत्	दीव्येताम्	दीव्येयुः	प्र०	नृत्येत्	नृत्येताम्	नृत्येयुः
दीव्येः	दीव्येतम्	दीव्येत		नृ त्येः	नृत्येतम्	नृ त्येत
दीव्येयम्	दीव्येव	दीव्येम	उ०	नृत्येयम्	नृत्येव	• नृत्येम
district				63.52	-	
देविष्यति	देविष्यतः	देविष्यन्ति	त ल्ह	् नर्तिष्यति,	नत्स्यीति (दोनों प्रकार से)
	देवितारौ		-	, 00	नतिंतारौ	नर्तितारः
देविता	दीव्यास्त			लिङ् नृत्यात्	नृत्यास्ताम	् नृत्यासुः
दीव्यात् अदेविष्यत				ङ् अनर्तिध्य <u>ा</u>	त् अनस्र्यत्	(दोनों प्रकार से)
	लिट्				लिट्	
दिदेव	दिदिवतु	: दिदिवुः	प्र॰	ननर्त	ननृततुः	ननृतुः
दिदेविथ	दिदिवधु			ननर्तिथ	ननृतथुः	ननृत
दिदेव	दिदिवि			ननर्त	ननृतिव	ननृतिम
1441	लुङ् (५)				छुङ् (५)	
> 0-			यः प्र	अनर्तीत्	अनर्तिष्टाम	अनर्तिषुः
अदेवीत्	अदेविष्टा			20	अनितृष्टम्	
अदेवीः	अदेविष्टम					अनितिष्म angotri Gyaan Kosh
D. D. PARLANDE	Tripath Coffe	ection at Sarai(CSDS)	. Digitized By	Siddhanta eGa	angotri Gyaan Kosh

CC-O

					, , , , ,	
(44) =	नश् (नष्ट होन	ा) (दे॰ अ॰	₹९)	(५९) इ	म् (घूमना) (दे० अ० ३९)
	लट्				लट्	
नश्यति	नश्यतः	नस्यन्ति	प्र॰	भ्राम्यति	भ्राग्यतः	भ्राम्यन्ति
नश्यसि	नश्यथः	नश्यथ	म०	भ्राम्यसि	भ्राम्यथः	भ्राम्यथ
नश्यामि	नश्यावः	नश्यामः	उ॰	भ्राम्यामि	भ्राम्यावः	भ्राम्यामः
	लोट्				लोट्	
नश्यतु	नश्यताम्	नश्यन्तु	प्र॰	भ्राम्यतु	भ्राम्यताम्	भ्राम्यन्तु
नश्य	नश्यतम्	नश्यत	म०	भ्राम्य	भ्राम्यतम्	भ्राम्यत
नश्यानि	नश्याव	नश्याम	उ०	भ्राम्याणि	भ्राम्याव	भ्राम्याम
	लङ्				लङ्	
अनश्यत्	अनश्यताम्	अनश्यन्	Яo	अभ्राम्यत्	अभ्राम्यताम्	अभ्राम्यन्
अनश्यः	अनश्यतम्	अनश्यत	म०	अभ्राम्यः	अभ्राम्यतम्	
अनश्यम्	अनश्याव	अनश्याम	उ०	अभ्राम्यम्	अभ्राग्याव	अभ्राम्याम
	विधिलिङ्				विधिल्ङि	41211
नश्येत्	नश्येताम्	नश्येयुः	प्र०	भ्राम्येत्	भ्राम्येताम्	भ्राम्येयुः
नश्ये:	नश्येतम्	नश्येत	म०	भ्राम्येः	भ्राम्येतम्	भ्राम्येत भ्राम्येत
नश्येयम्	नश्येव	नश्येम	उ॰	भ्राम्येयम्	भ्राम्येव	
-2-2	-					भ्राम्येम
नाशब्यात,	नङ्क्ष्यति (दो	नों प्रकार से)	लट्	भ्रमिष्यति	भ्रमिष्यतः	भ्रमिष्यन्ति
नाराता, न	ष्टा (दाना प्रव	गर से)	लुट्	भ्रमिता	भ्रमितारौ	भ्रमितारः
नश्यात्	नश्यास्ताम्	नश्यासुःआ	०लिङ्	भ्रम्यात्	भ्रम्यास्ताम्	भ्रम्यासुः
अनाशष्यत्	, अनङ्क्यत् (दोनों प्रकार रं	है) लह	अभ्रमिष्यत	अभ्रमिष्यताम्	
	लिट्			- Signature	लिट्	
ननाश	नेशतुः	नेजा.	T- 5	बभ्राम	बभ्रमतुः	बभ्रमु:
		नेशुः	म∘ {			भ्रेमुः
नेशिथ }	नेशथुः	नेश	Ho S	बभ्रमिथ	बभ्रमथः	बभ्रम
			ن کی۔	बभ्रमिथ भ्रेमिथ	भ्रेम थुः	भ्रेम
ननाश ननश	नेशिव नेश्व	नेशिम }	उ० ∫ ब	भ्राम	बभ्रमिव	बभ्रमिम
		नश्म)	िब	भ्रम	भ्रेमिव	भ्रेमिम
अनशत्	छङ् (२)				खङ _् (२)	
अनशत् अनशः	अनशताम्		प्र० ३	अभ्रमत्		अभ्रमन्
	अनशतम्			अभ्रम:	-	अभ्रमत
अनशम्	अनशाव	अनशाम		अभ्रमम्	अभ्रमाव	अभ्रमाम
			सूर	वना—भ्रम्	भ्वादिगणी भी	है अवः
				अमात, भ्र	मत्. अभ्रमतः	भ्रमेत् वाले
				रूप भी बने	गे।	

(६०)श्रम् (परिश्रम करना) (दे० अ० ४०) (६१) सिव् (सीना)(दे० अ० ३०)

		लट्				लट्	
	श्राम्यति	श्राम्यतः	श्राम्यन्ति	प 0	सीव्यति	सीव्यतः	सीव्यन्ति
	श्राम्यसि	श्राम्यथः	श्राम्यथ	म०	सीव्यसि	सीव्यथः	सीव्यथ
	श्राम्यामि	श्राम्यावः	श्राम्यामः	उ०	सीव्यामि	सीव्यावः	सीव्यामः
			201.4140	3.	Giralia		्राज्यामः जन्मामः
	5	होट्				लोट्	
	श्राम्यतु	श्राम्यताम्	श्राम्यन्तु	प्र॰	सीव्यतु	सीव्यताम्	सीव्यन्तु
	श्राम्य	श्राम्यतम्	श्राम्यत	म०	सीव्य	सीव्यतम्	सीव्यत
	श्राम्याणि	श्राम्याव	श्राम्याम	उ॰	सीव्यानि	सीव्याव	सीव्याम
	7	रङ्				लङ्	
	अश्राम्यत्	अश्राम्यताम्	अश्राम्यन्	प्र॰	असीव्यत्	असीव्यताम	्असीव्यन्
	अश्राम्यः	अश्राम्यतम्	अश्राम्यत	म०	असीव्यः	असीव्यतम्	
	अश्राम्यम्	अश्राम्याव	अश्राम्याम	उ॰	असीव्यम्	असीव्याव	असीव्याम
	1	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
	श्राम्येत्	श्राम्येताम्	श्राम्येयुः	प्र॰	सीव्येत्	सीव्येताम्	सीव्येयः
	श्राम्येः	श्राम्येतम्	श्राम्येत	Ho	सीव्येः	सीव्येतम्	सीव्येत
	श्राम्येयम्	श्राम्येव	श्राम्येम	उ॰	सीव्येयम्	सीव्येव	सीव्येम
						-	
	श्रमिष्यति	श्रमिष्यतः	श्रमिष्यन्ति	लुट	सेविष्यति	सेविष्यतः	सेविष्यन्ति
	श्रमिता	श्रमितारौ	श्रमितारः	लुट्	सेविता	सेवितारौ	सेवितारः
	श्रम्यात्	श्रम्यास्ताम्	श्रम्यासुः अ		सीव्यात्		
	अश्रमिष्यत्			लङ्	असेविष्यत्		म् ०
		लिट्				लिट्	
	शश्राम	शश्रमतुः	शश्रमुः	Дo	सिषेव	सिषिवतुः	सिषिवु:
	शश्रमिथ	शश्रमथुः	शश्रम	Ho.	सिषेविय	सिषिवथु:	सिषिव
	शश्राम,शश्र		शश्रमिम	30	सिषेव	सिषिविव	सिषिविम
		छ ङ् (२)				छङ् (५)	
	अश्रमत्	अश्रमताम्	अश्रमन्	प्र॰	असेवीत्	असेविष्टाम्	असेविषुः
	अश्रमः	अश्रमतम्	अश्रमत	म०	असेवीः	असेविष्टम्	असेविष्ट
CCC	अश्रमम्	अश्रमाव Tripathi Collecti	अश्रमाम	30	असेविषम्	असेविष्व	असेविष्म
00-0	J. Dr. Karnuev	Tripatili Collecti	ion at Garai(C	obo). bigi	inzed by Siddi	ianta eGango	our Gyaan Rosii

(६२) स	तो (नष्ट होना)) (दे॰ अ॰ भ	४१)	(६३) शो (छीलना) (देव	अ० ४१)
	लट्				लट्	
स्यति	स्यतः	स्यग्ति	प्र०	इ यति	इयतः	स्यन्ति
स्यसि	स्यथः	स्यथ	म०	इयसि	स्यथः	इयथ
स्यामि	स्यावः	स्थामः	उ०	३ यामि	स्यावः	श्यामः
	लोट्				लोट्	
स्यतु	स्यताम्	स्यन्तु	प्र॰	इयतु	इयताम्	श्यन्तु
स्य	स्यतम्	स्यत	म०	३ य	इयतम्	इयत
स्यानि	स्याव	स्याम	उ०	श्यानि	श्याव	स्याम
	लङ्				लड	
अस्यत्	अस्यताम्	अस्यन्	प्र॰	अस्यत्	अस्यताम्	अश्यन्
अस्यः	अस्यतम्	अस्यत	Ho	अस्य:	अश्यतम्	अश्यत
अस्यम्	अस्याव	अस्याम	उ॰	अस्यम्	अस्याव	अश्याम
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	- TOTAL
स्येत्	स्येताम्	स्येयुः	प्र०	इयेत्	श्येताम्	इयेयु:
स्येः	स्येतम्	स्येत	म०	इये:	इयेतम्	इयेत
स्येयम्	स्येव	स्येम	उ०	इयेयम्	इयेव	इयेम
	_					
सास्यति	सास्यतः	सास्यन्ति	लुट्	शास्यति	शास्यतः	शास्यन्ति
साता	सातारौ	सातारः	<u>ड</u> ुट्	शाता	शातारौ	ग्रातारः
सेयात्	सेयास्ताम्	सेयासुः अ	ग०लिङ्	शायात्	शायास्ताम्	शायासुः
असास्यत्	असास्यताम्	असास्यन्	लुङ्	अशास्यत्	अशास्यताम्	अशास्यन्
	लिट्				लिट्	
ससौ	ससतुः	ससुः	प्र०	शशौ	शशतुः	হায়ু:
ससिथ,ससा	थ ससथुः	सस	Ho	शशिथ,शर	।।थ राराथुः	হাহা
ससौ	ससिव	ससिम	30	शशौ	राशिव	शशिम
	छङ् (क) (१	?)		लु	ङ्(क) (१)	
असात्	असाताम्	असुः	प्र॰	अशात्	अशाताम्	अशु:
असाः	असातम्	असात	म०	अशाः	अशातम्	अशात
असाम्	असाव	असाम	उ०	अशाम्	अशाव	अशाम
असासीत्	छङ् (ख) (६) असासिष्टाम्	असासिषु:	प्र॰	अशासीत्	अशासिष्टाम्	अशासिषुः
असासीः	असासिष्टम्	असासिष्ट	म०	अशासीः	अशासिष्टम्	अशासिष्ट
असिस्स	असामिता Coll	स्थारा सिम्स	₹ © SDS).	□ अव्यक्तिवर्	अक्रमासि खिक्क	g ानाविज्ञान Kosl

(६४) कुप्	(दे. अ. ४	(६५) पद् (जाना) (दे. अ. ४२) आत्मनेपदी				
	लट्				लट्	
<u>क</u> ुप्यति	कुप्यतः	कु प्यन्ति	प्र०	पद्यते		` पद्यन्ते
	कुप्यथः	<u>कु</u> प्यथ	Ho	पद्यसे	पद्यथे	पद्यध्वे
बु प्यामि	कुप्यावः	कुप्यामः	उ॰	पद्ये	पद्यावहे	पद्मामहे
	लोट्				लोट्	
कु .प्यतु	कुप्यताम्	<u>कु</u> प्यन्तु	प्र०	पद्यताम्	पद्येताम्	पद्यन्ताम्
कु प्य	कु प्यतम्	बु ,प्यत	म०	पद्यस्व	पद्येथाम्	पद्यध्वम्
कुप्यानि	कु प्याव	कु प्याम	उ०	पद्यै	पद्यावहै	पद्यामहै
	लङ्				लड	Ę
अकुप्यत्	अकुप्यताम्	अकुप्यन्	प्र॰	अपद्यत	अपद्येताम्	अपद्यन्त
अकुप्यः	अकुप्यतम्	अकुप्यत	Ho Ho	अपद्यथाः	अपद्येथाम्	अपद्यध्वम्
अकुप्यम्	अकुप्याव	अकुप्याम	उ०	अपद्ये	अपद्यावहि	अपद्यामहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
कुप्येत्	<u>कु</u> प्येताम्	कुप्येयुः	प्र०	पद्येत	पद्येयाताम्	पद्येरन्
कुप्ये:	कु प्येतम्	कुप्येत	म०	पद्येथाः	पद्येयाथाम्	पद्येध्वम्
The state of the s	कुप्येव	कु प्येम	उ०	पद्येय	पद्येवहि	पद्येमहि
	<u>_</u> ,				_	
कोपिष्यति	कोपिष्यतः	कोपिष्यन्ति	लुट्	पत्स्यते	पत्स्येते	पत्स्यन्ते
कोपिता		कोपितारः		पत्ता	पत्तारौ	पत्तारः
कुप्यात्				ङ् पत्सीष्ट	पत्सीयास्त	ाम् पत्सीरन्
अकोपिष्यत्			लङ्	अपत्स्यत	अपत्स्येता	म्०
	ल्टिं				लि	Ę
चुकोप	चुकु,पतुः	चुकुपुः	प्र॰	वेदे	पेदाते	पेदिरे
चुकोपिथ	चुकुपथुः	चुकुप	Ho	पेदिषे	पेदाथे	पेदिध्वे
चुकोप	चुकुपिव	चुकुपिम	ड॰	पेदे	पेदिवहे	पेदिमहे
	छुङ् (२)				बुङ् (४)
अकुपत्	अकुपताम्	अकुपन्	प्र॰	अपादि	अपत्सात	ाम् अपत्सतं
अकुपः	अकुपतम्		म०	अपत्थाः	अपत्साथ	ाम् अपद्ध्वम्
अकुपम्	अकुपाव	अकुपाम	30	अपत्सि	अपत्स्वि	हे अपस्मिह
	THE RESERVE AND ADDRESS OF THE PARTY OF THE		(CSDS). E	Digitized By S	iddhanta eGa	ngotri Gyaan Kosha

आत्मनेपदी—धातुएँ

(६६) युध् (लड़ना) (दे. अ. ४३) (६७) जन् (उत्पन्न होना) (दे. अ. ४३) सूचना—लट् आदि में जन् को जा होगा।

			सून	बना—लट् अ	।द म जन् क	ा जा हागा।
	लट्			लट्	(जन् को जा)	
युध्यते	युध्येते	युध्यन्ते	प्र०	जायते	नायेते	जायन्ते
युध्यसे	युध्येथे	युध्यध्वे	म॰		जायेथे	
युध्ये	युध्यावहे	युध्यामहे	उ॰	जाये	जायावहे	जायामहे
	लोट्			,	होट् (जन् को	जा)
युध्यताम्	युध्येताम्	युध्यन्ताम्	प्र०	जायताम्	जायेताम्	् जायन्ताम्
	युध्येथाम्	युध्यध्वम्	म०	जायस्व	जायेथाम्	् जायध्वम्
युध्यै	युध्यावहै	युध्यामहै	उ॰	जायै	जायाव है	जाया महै
	लङ्			रुः	ड् (जन् को ज	T)
अयुध्यत	अयुध्येताम्	अयुध्यन्त	प्र०	अजायत	अजायेताम्	अजायन्त
अयुध्यथाः		अयुध्यध्व	म् म०		: अजायेथाम्	
अयुध्ये	अयुध्याविह	अयुध्यामा	हे उ०	अजाये	अजायावहि	अनायामहि
	विधिलिङ्			विधिति	ण्ड् (जन् को व	जा)
युध्येत -	युध्येयाताम्	युध्येरन्	प्र॰	जायेत	जायेयाताम्	जायेरन्
युध्येथाः	युध्येयाथाम्	युध्येध्वम्	म०	जायेथाः		
युध्येय	युःयेवहि	युध्येमहि	उ॰	जायेय	जायेवहि	
					_	
योत्स्यते	योत्स्येते	योत्स्यन्ते	लृट्	जनिष्यते	जनिष्येते	जनिष्यन्ते
योद्धा	योद्धारौ	योद्धारः	लुट्	जनिता		
युत्सीष्ट	युत्सीयास्ताम्) अ	ा ०लिङ	जनिषीष्ट		
अयोत्स्यत	अयोत्स्येताम्		लङ्		अनिष्येताम	
	लिट्				लिट्	
युयुधे	युयुधाते	युयुधिरे	У0	जरो	जज्ञाते	
युयुधिषे	युयुघाथे	युयुधिध्वे		जित्रघे	जज्ञाथे	
युयुधे	युयुधिवहे	युयुधिमहे	उ०	जरो	जि्वहे	
	खुङ् (४)					
अयुद्ध		अयुत्सत	Ч о	∫ अर्जान	लुङ् (४)	
				अजिमष्ट	अर्जानषाताम्	अणानपत
अयुद्धाः	अयुत्साथाम्	अयुद्ध्वम्	म०	अजनिष्ठाः	अजनिषाथाम्	अजनिध्वम
अयुत्सि	अयुत्स्विं	अयुत्स्मिह	उ•	अनिषि	अनिष्कृहि	

(५) खादिगण

- (१) इस गण की प्रथम धातु सु (रस निकालना) है, अतः गण का नाम स्वादिगण पड़ा। (स्वादिभ्यः श्नुः) स्वादिगण की धातुओं में धातु और प्रत्यय के बीच में लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् में श्नु (नु) विकरण लगता है और धातु को गुण नहीं होता।
- (२) (क) 'नु' को परस्मैपद में लट् ,लोट् (म॰पु॰एक॰ को छोड़कर) और लड़् में एकवचन में गुण होता है। (ख) (लोपश्चान्यतरस्यां म्वोः) यदि कोई व्यंजन पहले न हो तो नु के उ का लोप विकल्प से होता है, बाद में व्या म् हो तो। अतः लट् आदि में उ॰ पु॰ द्विचन और बहुवचन में दो रूप बनेंगे।
 - (३) इस गण में ३४ धातुएँ हैं।
- (४) लट् आदि में धातु के अन्त में संक्षिप्तरूप निम्नलिखित लगेंगे। लट्, छट्, आशीलिंड और लड़् में पृष्ठ १४४ पर निर्दिष्ट संक्षिप्तरूप ही लगेंगे। लट् आदि में सेट् धातुओं में संक्षिप्तरूप से पहले इ भी लगेगा, अनिट् में नहीं।

परसमेपद (सं० रूप)	आत्मनेपद (सं० रूप)				
लट्		लट्			
नोति नुतः न्वन्ति, नुवन्ति	प्र॰	नुते नुवाते, न्वाते नुवते, न्वते			
नोषि नुथः नुथ	Ho	नुषे नुवाथे, न्वाथे नुध्वे			
नोमि नुवः,न्वः नुमः, न्मः	उ०	न्वे, नुवे नुवहे, न्वहे, नुमहे, न्महे			
लोट्		लोट्			
नोतु नुताम् न्वन्तु, नुवन्तु	प्र॰	नुताम् नुवाताम्, न्वाताम् नुवताम्, न्वताम्			
नु, नुहि नुतम् नुत	म०	नुष्वं नुवाथाम्, न्वाथाम् नुष्वम्			
नवानि नवाक नवाम	उ॰	नवै नवावहै नवामहै			
छङ् (भातु से पूर्व अ या आ)		लङ् (धातु से पूर्व अ या आ)			
नोत् नुताम् न्वन्, नुवन्	प्र॰	नुत नुवाताम्, न्वाताम् नुवत, न्वत			
नोः नुतम् नुत	Ho	नुथाः नुवाथाम्, न्वाथाम् नुध्वम्			
नवम् नुव, न्व नुम, न्म	उ०	नुवि, न्वि नुविह, न्विह नुमहि, न्मिहि			
विधिलिङ		विधिलिङ्			
नुयात् नुयाताम् नुयुः	प्र॰	न्वीत न्वीयाताम् न्वीरन्			
नुयाः नुयातम् नुयात	म०	न्वीयाः न्वीयायाम् न्वीध्वम्			
नुयाम् नुयाव नुयाम	उ•	न्वीय न्वीवहि न्वीमहि			
सूचना-जहाँ दो सं० रूप	दिए है	है, उनमें से एक या दोनों रूप होना धातु			

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पर निर्भर है।

स्वादिगण-परसमैपदी धातुएँ

(६८) आप् (पाना) (दे॰ अ॰ ४४) (६९) शक् (सकना) (दे॰ उ	
and the second s	
इंट्र	_
	शक्नुवन्ति
आप्नोषि आप्नुथः आप्नुथ म० शक्नोषि शक्नुथः	
आप्नोमि आप्नुवः आप्नुमः उ० शक्नोमि शक्नुवः	शक्नुमः
लोट्	
आप्नोतु आप्नुताम् आप्नुवन्तु प्र॰ शक्नोतु शक्नुताम्	शक्नुवन्तु
आप्नुहि आप्नुतम् आप्नुत म० शक्नुहि शक्नुतम्	शक्नुत
आप्नवानि आप्नवाम आप्नवाम उ० शक्नवानि शक्नवाव	शक्नवाम
ल ङ्	
आप्नोत् आप्नुताम् आप्नुवन् प्र० अशक्नोत् अशक्नुताम् अ	भशक्नुवन्
	अशक् त
	मशक्तुम
विधिलिङ ् विधिलिङ	
आप्नुयात् आप्नुयाताम् आप्नुयुः प्र० शक्नुयात् शक्नुयाताम् ः	शक्नुयुः
आप्नुयाः आप्नुयातम् आप्नुयात म० शक्नुयाः शक्नुयातम् ः	
	शक्नुयाम
आप्स्यति आप्स्यतः आप्स्यन्ति लृट् शक्ष्यति शक्ष्यतः	शस्यन्ति
	शक्तारः
आप्यात् आप्यास्ताम् आप्यासुः आ० लिङ् शक्यात् शक्यास्ताम्	शक्यासुः
आप्स्यत् आप्स्यताम् आप्स्यन् लङ् अशक्ष्यत् अशक्ष्यताम्	
लिट् लिट्	
आप आपतुः आपुः प्र० शशाक शेकतुः	शेकुः
आपिथ आपथुः आप म० दोकिथ, दादाक्थ दोकथुः	शेक
आप आपिव आपिम उ० शशाक, शशक शेकिव	शेकिम
खुङ् (२) खुङ् (२)	
आपत् आपताम् आपन् प्र॰ अशकत् अशकताम्	अशकन्
आपः आपतम् आपत म॰ अशकः अशकतम्	अशकत
SILIA SILIA SILIA	अशकाम

(७०) चि (इकट्ठा करना) (दे०अ० ४५) (७१) अश् (व्याप्त होना)(दे०अ० ४५) सूचना—उभय० है, केवल परस्मै० के रूप दिए हैं। आत्मनेपदी

लर् लट् चिनुतः चिनोति चिन्वन्ति अश्नुते अश्नुवाते अश्नुवते प्र० चिनोषि चिनुथः अश्नुपे अरनुवाथे अरनुध्वे चिन्थ म० चिनोमि चिनुवः, न्वः चिनुमः, -न्मः उ० अश्नुवहे अश्नुवे अरनुमहे लोट लोट्

चिनोत चिन्ताम् चिन्वन्तु अश्नुताम् अश्नुवाताम् अश्नुवताम् प्र० चिन्तम् चिनु चिन्त अश्नुवाथाम् अश्नुध्वम् HO अश्नुष्व चिनव। नि अरनवै अश्नवावहै अश्नवामहै चिनवाव चिनवाम उ०

लङ् लड

अचिनुताम् अचिन्वन् अचिनोत आरनुत आरनुवाताम् आरनुवत JO अचिनुतम् अचिनोः अचिनुत आरनुथाः आरनुवाथाम् आरनुष्वम् म० अचिनुव अचिनुम अचिनवंस आश्नुवि आश्नुविह आश्नुमहि उ०

विधिलिङ् विधिलिङ्

चिनुयात् चिनुयाताम् चिनुयुः प्र० अश्नुवीत अश्नुवीयाताम् अश्नुवीरन् चिनुयाः चिनुयातम् चिनुयात म० अश्नुवीयाः अश्नुवीयाथाम् अश्नुवीध्वम् चिनुयाम् चिनुयाव चिनुयाम उ० अश्नुवीय अश्नुवीविह अश्नुवीमिह

चेष्यति चेष्यतः चेष्यन्ति ऌट् अशिष्यते, अक्ष्यते (दोनीं प्रकार से) चेता चेतारौ चेतारः ऌट् अशिता, अष्टा (,,) चीयात् चीयास्ताम् चीयासुः आ०लिङ् अशिषीष्ट, अक्षीष्ट (,,)

अचेष्यत् अचेष्यताम् अचेष्यन् ऌङ् आशिष्यत, आक्ष्यत (,,

लिट् लिट् (क) चिच्यतः चिच्यः आनशे आनशाते आनिशिरे प्र० चिचयिय,चिचेथ चिच्यथुः चिच्य आनशिषे आनशिष्वे आनशाथे Ho चिचाय,चिचय चिच्यिव चिच्यिम आनशिवहे आनशिमहे आनशे 30 (ख) चिकाय चिक्यतुः० आदि ।

हुङ_्(४) हुङ््(क) (५)

आशिष्ट अचैष्टाम् अचेषुः आशिषाताम् आशिषत अचैषीत् प्र॰ अचैष्ट आशिष्ठाः आशिषायाम् आशिष्वम् अचैष्टम अचैषी: म० आशिष्वहि आशिपाहि अचैषम अचैष्व आशिषि उ०

स्चना—आत्मने० में सु (७२) आ० के तुत्य । (ख) आष्ट, आक्षाताम् इत्यादि । CC-O-Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उभयपदी धातु

उमयपदा वातु								
	(७२) सु	(रसं निकार	छना) (दे० व	अ० ४६)				
		पग्समैपद-लट्			3	भात्मनेपद-ल	हर्	
	सुनोति	सुनुत:	सुन्वन्ति	प्र०	मुनुते	सुन्वाते	सुन्वते	
	सुनोषि	सुनुथ:	सुनुथ	म०	सुनुषे	सुन्वाथे	सुनुध्वे	
1	सुनोमि	सुनुव:	सुनुम:	उ॰	"सुन्वे	सुनुवहे	सुनुमहे	
		लोट्				लोट्		
	सुनोतु	सुनुताम्	सुन्वन्तु	प्र०	सुनुताम्	सुन्वाताम्	सुन्वताम्	
	सुनु		सुनुत	म०	सुनुष्व	सुन्वाथाम्	सुनुध्वम्	
	सुनवानि				सुनवै	सुनवावहै	सुनवामहै	
		लङ				लङ्		
	असुनोत्	असुनुताम्	असुन्वन्	До	असुनुत	असुन्वाताम्	असुन्वत	
		असुनुतम्			असुनुथा	असुन्वाथाम्	असुनुध्वम्	
		असुनुव			असुन्वि	असुनुवहि	असुनुमहि	
		विधिलिङ्	t.			विधिलिड	7	
	सुनुयात्	सुनुयाताम्	सुनुयुः	प्र॰	सुन्वीत	सुन्वीयाताम्	सुन्वीरन्	
		सुनुयातम्			सुन्वीथाः	सुःवीयाथाम्	सुन्वीध्वम्	
	सुनुयाम्	सुनुयाव	सुनुयाम	उ॰	सुन्वीय	सुन्वीवहि	सुन्वीमहि	
		_				_		
	सोध्यति	सोष्यतः	सोध्यन्ति	ल्र	सोध्यते	सोष्येते	सोध्यन्ते	
	सोता	सोतारौ	सोतारः	ड ट्	सोता	सोतारौ	सोतारः	
	सूयात्			आ० हिङ	सोषीष्ट	सोषीयास्ताम्		
	असोप्यत्	असोप्यताम्॰		लङ्	असोप्यत	असोध्येताम्		
		लिट्			1	लिट्		
	सुषाव	सुषुवतुः	सुषुवु:	प्र०	सुषुवे	सुषुवाते	सुषुविरे	
		ोथ सुषुवथुः	सुषुव		सुष्विषे		सुषुविध्वे	
	सुषाव, सुष	व सुषुविव	सुषुविम	उ०	सुषुवे	सुषुविवहे	सुषुविमहे	
		छङ ्(५)				लुङ् (४)		
				Дo	असोष्ट	असोषाताम् अ	असोषत	
	असावीः		असाविष्ट	Ho	असोष्ठाः	असोषायाम	असोदवम	
CC-O.	असाविषम् Dr. Ramdev	असाविष्व Tripathi Collect	असाविष्म ion at Sarai(0	CSDS). Dig	itized by Sid	d आयोश्विह an	असोखाई n Ko	sha

(६) तुदादिगण

- (१) इस गण की प्रथम धातु तुद् (दुःख देना) है, अतः गण का नाम तुदादि-गण पड़ा। (तुदादिभ्यः द्यः) तुदादिगण की धातुओं में लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् में श (अ) विकरण लगता है। भ्वादिगण में भी 'अ' विकरण लगता है। अन्तर यह है कि भ्वादिगण में लट् आदि में धातु को गुण होता है, परन्तु तुदादि० में धातु को गुण नहीं होगा।
- (२) (क) लट् आदि में धातु के अन्तिम इ और ई को इय् होगा, उ और क को उव्, ऋ को रिय् और ऋ को ईर् होगा। जैसे—रि> रियात, स्> सुवति, म्> श्रियते, गॄ> गिरति। (ख) (शे मुचादीनाम्) मुच् आदि धातुओं में बीच में न् लग जाता है। मुच्> मुञ्जति, विद्ं> विन्दति, लिप्> लिम्पति, सिच्> सिञ्जति, इत्> इन्ति।
 - (३) इस गण में १५७ धातुएँ हैं।
- (४) लट् आदि में संक्षितरूप निम्नलिखित लगेंगे। परस्मैपद में भू के तुल्य और आत्मनेपद में सेव् के तुल्य रूप चलावें। लट्, लुट्, आशीलिंड और लड़् में पृष्ठ १४४ पर निर्दिष्ट सं०रूप ही लगेंगे। सेट् में लट् आदि में सं०रूप से पहले इ भी लगेगा।

	परस्मैपद (र	वं० रूप)			आत्मनेपद् (संव	रूप)
	लट्				लट्	
अति	अतः	अन्ति	प्र॰	अते	एते	अन्ते
असि	अथ:	अथ	म०	असे	एथे	अध्वे
आमि	आवः	आमः	उ०	ए	आवहे	आमहे
	लोट्				लोट्	
अतु	अताम्	अन्तु	प्र॰	अताम्	एताम्	अन्ताम्
अ	अतम्	अत	म०	अस्व	एथाम्	अध्वम्
आनि	आव	आम	उ०	ऐ	आवहै	आमहै
	लङ् (धातु सं	ते पूर्व अया अ	п)	लड	् (धातु से पूर्व अ	या आ)
अत्	अताम्	अन्	प्र०	अत	एताम्	अन्त
अः	अतम्	अत	म०	अथाः	एथाम्	अध्वम्
अम्	आव	आम	उ०	ए	आवहि	आमहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
एत्	एताम्	एयुः	प्र॰	एत	एयाताम्	एरन्
ए:	एतम्	एत	म०	एथाः	एयाथाम्	एध्वम्

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai (CSDS): Digitized By Sidesanta eGangoin Gyaan Kosha

परस्मैपदी-धातुएँ

(७३) इष् (चाहना) (दे० अ० ४७) (७४) प्रच्छ् (पूछना) (दे० अ० ४७) सूचना—लट् आदि में इष् को इच्छ् होगा। सूचना—लट् आदि में प्रच्छ् को पृच्छ्।

सूचन।-	-लट् जााद ग	47	1			
	लट्				लट्	-6-
इच्छति	इच्छतः	इच्छन्ति	प्र॰	पृच्छति	पृच्छतः	पृच्छन्ति
इच्छसि,	इच्छथः	इच्छथ	म०	पृच्छसि	वृच्छथ:	पृच्छथ
इच्छामि	इच्छावः	इच्छामः	उ०	पृच्छामि	पृच्छावः	पृच्छामः
इच्छाम					लोट्	
	होट्		т.	पृच्छतु	पृच्छताम्	पृच्छन्तुँ
इच्छतु	इच्छताम्	इच्छन्तु	प्र॰		पृच्छतम् -	पृच्छत
इच्छ	इच्छतम्	इच्छत	H 0	पृच्छ	पृच्छा व	पृच्छाम
इच्छानि	इच्छाव	इच्छाम	उ०	पृच्छानि		2 01.
	लङ्				लङ्	
ऐच्छत्	ऐच्छताम्	ऐच्छन्	प्र॰	अपृच्छत्	अपृच्छताम्	
ऐच्छ:	ऐच्छतम्	ऐच्छत	中o	अपृच्छः	अपृच्छतम्	अपृच्छत
ऐच्छम्	ऐच्छाव	ऐच्छाम	उ०	अपृच्छम्	अपृच्छाव	अपृच्छाम
	विधिलिङ			वि	धिलिङ्	
इच्छेत्	इच्छेताम्	इच्छेयु:	प्र॰	पृच्छेत्	पृ च्छेताम्	वृच्छेयु:
इच्छे:	इच्छेतम्	इच्छेत	म०		<u>पृच्छेतम्</u>	पृच्छेत
इच्छेयम्	इच्छेव	इच्छेम	उ०	पृच्छेयम्	पृ च्छेव	पृच्छेम
इण्डपम्	2-04					
एषिष्यति	एषिष्यतः	एषिष्यन्ति	लट	प्रक्ष्यति	प्रक्ष्यतः	प्रध्यन्ति
	एषा (दोनों प्रव			সন্থা	प्रष्टारौ	प्रष्टार:
इष्यात्	इध्यास्ताम्				पृच्छयास्ताम्	
ऐषिष्यत्					अप्रश्यताम्०	
राग-गर्			,,,,		लिट्	
>	लिट्	÷.	-	-		missa.
इयेष	ईपतु	ईषुः	प्र॰	पप्रच्छ	पप्रच्छतुः	पप्रच्छुः
इयेषिथ	र्इषथु:	ईष	म०	पप्रच्छिथ,	पप्रच्छथुः	पप्रच्छ
	00			पप्रष्ठ		
इयेष	ईषिव	ईिषम	उ०	पप्रच्छ	पप्रच्छिव	पप्रच्छिम
	छङ् (५)				छ ङ् (४)	
ऐषीत्	ऐषिष्टाम्	ऐषिषुः	प्र॰	अप्राक्षीत्	अप्राष्ट्राम्	अप्राक्षुः
ऐषी:	ऐषिष्टम्	ऐषिष्ट	म०	अप्राक्षीः	अप्राष्ट्रम्	अप्राष्ट
-12-	20	25				

CC-O. प्रोक्तिक्रम्dev ऐक्तिका Collectिविक्ता Sarai(दु SDS) अप्रमुख्यू By अव्याख्या eGangari (दु प्रकार Kosha

(৬৬) छिख् (छिखना) (दे० अ० ४८) (৬६) स्पृश् (छूना) (दे० अ० ४८)							
	लर्				लर् '		
लिखति	लिखतः	लिखन्ति	प्र०	स्रृश्ति	स्पृशतः	स्पृशन्ति	
लिखसि	लिखथः	लिखथ	म०	स्पृशसि	स्पृश्यः	स्पृश्य	
ल्स्या मि	लिखावः	लिखामः	उ०	स्पृशामि	स्पृशाव:	स्पृशामः	
	लोट्			,	लोट्		
लिखतु	लिखताम्	लिखन्तु	प्र॰	स्पृशतु	स्पृशताम्	स्पृशन्तु	
लिख	लिखतम्	लिखत	म०	स्पृश	स्पृशतम्	स्पृशत	
लिखानि	ल्खािव	लिखाम	उ०	स्पृशानि	स्पृशाव	स्पृशाम	
	लङ्			7	रङ्		
अलिखत्	अलिखताम्	अल्खिन्	प्र०	अस्पृशत्	अस्पृशताम्	अस्पृशन्	
अलिखः	अलिखतम्	अल्खित	म०	अस्पृशः	अस्पृशतम्	अस्पृशत	
अल्खिम्	अलिखाव	अलिखाम	उ०	अस्पृशम्	अस्पृशाव	अस्पृशाम	
	विधिलिङ्				विधिलिङ		
लिखेत्	लिखेताम् —	लिखेयुः	प्र०	स्पृशेत्	स्रृशेताम्	स्पृशेयु:	
लिखे:	लिखेतम्	लिखेत	म०	स्पृशेः	स्रृशेतम्	स्पृशेत	
ल्खियम्	लिखेव	लिखेम	उ०	स्पृशेयम्	स्पृशेव	स्पृशेम	
लेखिष्यति	— लेखिष्यतः	लेखिष्यन्ति	लुट्	स्पर्स्यति	स्प्रक्ष्यति (दोः	नों प्रकार से)	
लेखिता	लेखितारौ	लेखितारः	लुट्	•		,, ,,	
लिख्यात्	लिख्यास्ताम्		The second second				
अलेखिष्यत्	अलेखिष्यता	म् •	लङ्	अस्पर्स्यत् अ	स्प्रक्ष्यत् (दोः	नों प्रकार से)	
	लिट्				लेट्		
लिलेख -	लिलिखतुः	लिलिखुः	प्र०	पस्पर्श	पस्पृशतुः	पस्पृज्ञः	
ल्लेखि य	ल्लिख्युः	लिलिख	म०	पस्पर्शिथ	पस्पृश्यु:	पस्पृश	
लिलेख	लिलिखिव	लिलिखिम	उ०	पस्पर्श	पस्पृशिव	पस्पृशिम	
	लुङ् (५)			2	ड्र (क) (४)		
	अलेखिष्टाम्			अस्पार्क्षीत्	अस्पार्षाम्	अस्पार्क्षः	
अलेखीः	अलेखिष्टम्	अलेखिष्ट	म०	अस्पार्क्षीः	अस्पार्ष्टम्	अस्पार्ष	
अलेखिषम्	अलेखिष्व	अलेखिध्म	उ०	अस्पार्क्षम्	अस्पार्स्व	अस्पार्क्म	
	-	लुङ् (ख	(8)	अस्प्राक्षीत्	अस्प्राष्ट्राम्०	(पूर्ववत्)	
		छुङ् (ग	(0)	अस्पृक्षत्	अस्पृक्षताम्	अस्पृक्षन्	
			0050	अस्पृक्षः	अस्पृक्षतम्	अस्पृक्षत	
-O. Dr. Ramde	ev Tripathi Colle	ction at Sarai(CSDS).	Digitized By	Siddhanta eGa	angotri Gyaan K	

१९६		316-K	यना सुना	434		
(७७) क	(फैलाना) (दे	० अ० ४९)	(७८) मृ (१	निगलना) (दे	० अ० ४९)
, , ,	लट्				लय्	
किरति	किरतः	किरन्ति	प्र॰	गिरति	गिरतः	गिरन्ति
किरसि	किरथः	किरथ	म०	गिरसि	गिरथः	गिरथ
किरामि	किरावः	किरामः	उ०	गिरामि	गिरावः	गिरामः
	लोट्				लोट्	
किरत	किरताम्	किरन्तु	प्र०	गिरतु	गिरताम्	गिरन्तु
	किरतम्	किरत	म०	गिर	गिरतम्	गिरत
किराणि	किराव	किराम	उ०	गिराणि	गिराव	गिराम
	लङ्				लङ्	
अकिरत्	अकिरताम्	अकिरन्	До	अगिरत्	अगिरताम्	अगिरन्
अकिरः	अकिरतम्			अगिरः	अगिरतम्	र्थागरत
अकिरम्	अकिराव	अकिराम	उ०	अगिरम्	अगिराव	अगिराम्
	विधिलिङ्			i	विधिलिङ्	
किरेत्	किरेताम्	किरेयुः	प्र॰	गिरेत्	गिरेताम्	गिरेयुः
किरे:	किरेतम्	किरेत	म०	गिरे:	गिरेतम्	गिरेत
किरेयम्	किरेव	किरेम	उ०	गिरेयम्	गिरेव	गिरेम
	_				_	
करिष्यति,	करीष्यति (व	तेनों प्रकार	से) लट्	गरिष्यति	गरीष्यति (दो	नों प्रकार से)
करिता, करी	ोता	(,,) छर्	गरिता, गरी	ता	(,,)
कीर्यात्					गीर्यास्ताम्	
अकरिष्यत्	अकरीष्यत् (दोनों प्रका	र से)लङ्	्अगरिष्यत्	अगरीष्यत् (दी	नों प्रकार से)
	लिट्				लिट्	
चकार	चकरतुः	चकरः	प्र॰	जगार	जगरतुः	जगरु:
चकरिथ	चकरथुः	चकर	Ho	जगरिथ	जगरथु:	जगर
चकार, चकः	र चकरिव	चकरिम	उ०	जगार, जगर	जगरिव	जगरिम
5	ब्र ङ् (५)				छङ् (५)	
अकारीत्	अकारिष्टाम्	अकारिषुः	у о	अगारीत्	अगारिष्टाम्	अगारिषुः
अकारीः	अकारिष्टम्	अकारिष्ट	म०	अगारी:	अगारिष्टम्	अगारिष्ट
अकारिषम्	अकारिष्व	अकारिष्म	उ॰	अगारिषम्	अगारिष्व	अगारिष्म
सूच	ना—(अचि	विभाषा) गृ	धातु वे	इ को ल्हे	ोता है, स्वर बा	द में हो तो।

स्चना—(अचि विभाषा) गृधात के र्को ल्होता है, स्वर बाद में हो तो।

cc-अन्नः साम्रीलिङ्क्को छोड्डार्क् सर्वे ब्राह्में इत्राहिष्ठा छोड्डार्क स्वर्ध के स्वर्ध व व ने गे । जैसे - Kosha गिलति, गिलत्, अगिलत्, गिलेत्, गिलेत्, गिलेत्, गिलेत्, गिलेत्, गिलेत्, गिलेत्, गिलेत्, गिलेत्।

(७९) क्षिप् (फेंकना) (दे० अ० ५०) स्यूचना — धातु उभयपदी है। यहाँ परस्मैपद के ही रूप दिए हैं। आत्मनेपद में तुद् (८१) के तुल्य।

(८०) मृ (मरना) (दे० अ० ५०) सूचना—यह लट्, लट्, लङ् और लिट् में परस्मै० है, अन्यत्र आरमनेपदी।

	लट्				लट्	
क्षिपति	क्षिपतः	क्षिपन्ति	प्र०	म्रियते	म्रियेते	म्रियन्ते
क्षिपसि	क्षिपथ:	क्षिपथ	म०	म्रियसे	म्रियेथे	म्रियध्वे
क्षिपामि	क्षिपाव:	क्षिपामः	उ०	म्रिये	म्रियावहे	म्रियामहे
100	लोट्			*	लोट्	
क्षिपतु	क्षिपताम्	क्षिपन्तु	प्र॰	म्रियताम्	म्रियेताम्	म्रियन्ताम्
क्षिप	क्षिपतम्	क्षिपत	म०	म्रियस्व	म्रियेथाम्	म्रियध्वम्
क्षिपाणि	क्षिपाव	क्षिपाम	उ०	म्रियै	मियाव है	म्रियाम है
	लङ्				ਲਵ-	
अक्षिपत्	अक्षिपताम्	अक्षिपन्	प्र॰	अम्रियत	अम्रियेताम्	अम्रियन्त
अक्षिपः	अक्षिपतम्	अक्षिपत	Ho	अम्रियथाः	अम्रियेथाम्	अम्रियध्वम्
अक्षिपम्	अक्षिपाव	अक्षिपाम	उ०	अम्रिये	अम्रियावहि	अभ्रियामहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
क्षिपेत्	क्षिपेताम्	क्षिपेयु:	До	म्रियेत	म्रियेयाताम्	म्रियेरन्
क्षिपे:	क्षिपेतम्	क्षिपेत	म०	म्रियेथाः	म्रियेयाथाम्	म्रियेध्वम्
क्षिपेयम्	क्षिपेव	क्षिपेम	उ०	म्रियेय	म्रियेवहि	म्रियेमहि
	-					
क्षेप्स्यति	क्षेप्स्यतः	क्षेप्स्यन्ति	लर्	मरिष्यति	मरिष्यतः	मरिष्यन्ति.
क्षेता	क्षेतारौ	क्षेप्तारः	ख ट्	मर्ता	मर्तारौ	मर्तारः
क्षिप्यात्	क्षिप्यास्ताम्	क्षिप्यासुः	आर्ग	लेङ् मृषीष्ट	मृषीयास्ताम्	0
अक्षेप्स्यत्	अक्षेप्स्यताम्	अक्षेप्स्य	न् लङ्	अमरिष्यत्	अमरिष्यताम्	0
	लिट्				लिट्	
चिक्षेप	चिक्षिपतुः	चिक्षिपुः	प्र॰	समार	मम्रतुः	मम्रुः
चिक्षेपिथ	चिक्षिपथु:	चिक्षिप	म०	ममर्थ	मम्रथुः	मम्र
चिक्षेप	चिक्षिप्व	चिक्षिपिम	130	ममार, ममर	(मम्रिव	मम्रिम
	खुङ _ू (४)				खुङ् (४)	
अक्षैप्सीत्	अक्षैप्ताम्	अक्षैप्सुः	प्र॰	अमृत	अमृषाताम्	अमृषत
अक्षैप्सीः	अक्षेत्रम्	अक्षैप्त	Ho	अमृथाः	अमृपाथाम्	अमृद्वम

CC-ठा के स्मा mdev अक्रीक्षन Collect स्मा है बार्बा (CSD अम्मा है) प्राचित्र and a Galifford है year Kosha

तुदादिगण, उभयपदी धातुएँ

(८१) तुद् (दुःख देना) (दे० अ० ५१)

(८१) तुव	(दुःख देना)	(द० अ० ५	<i>(</i>)			
. 4	रस्मैपद-लट्				आत्मनेपद	
तुदति	तुदतः	तुदन्ति	प्र॰	तुदते	तुदेते	तुदन्ते
तुदसि	तुद्धः	तुदथ	Ho	तुदसे	तुदेथे	तुदध्ये
तुदामि	तुदावः	तुदामः.	उ॰	तुदे	तुदावहे	तुदामहे
/	लोट्				लोट्	
तुदतु	तुदताम्	तुदन्तु	प्र॰	तुदताम्	तुदेताम्	तुदन्ताम्
तुद	तुदतम्	तुदत	Ho	तुदस्व	तुदेथाम्	तुदध्वम्
तुदानि	तुदाव	तुदाम	उ०	तुदै	तुदावहै	तुदाम है
	लङ्				लङ्	
अतुदत्	अतुदताम्	अतुदन्	До	अतुद्त	अतुदेताम्	अतुदन्त
अतुदः	अतुदतम्	अतुदत	म०	अतुद्धाः	अतुदेथाम्	अतुद्ध्वम्
अतुदम्	अतुदाव	अतुदाम	उ०	अतुदे '	अतुदावहि	अतुदायमहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
तुदेत्	तुदेताम्	तुदेयुः	प्र॰	तुदेत	तुदेयाताम्	तुदेरन्
तुदेः	तुदेतम्	तुदेत	Ho	तुदेथाः	तुदेयाथाम्	तुदेध्वम्
तुदेयम्	तुदेव	तुदेम	उ०	तुदेय	तुदेवहि	तुदेमहि
	_				_	
तोत्स्यृति	तोत्स्यतः	तोत्स्यन्ति	लृट्	तोत्स्यते	तोत्स्येते	तोत्स्यन्ते
तोत्ता	तोत्तारौ	तोत्तारः	छुट्	तोत्ता	तोत्तारौ	तोत्तारः
तुद्यात्	तुद्यास्ताम्			् तुत्सीष्ट	तुत्सीयास्ताम्	
अतोत्स्यत्	अतोत्स्यताम्	0	लुङ्	अतोत्स्यत	अतोत्स्येताम	[0
	लिट्				लिट्	
तुतोद	तुतुदतुः	तुतुदुः	प्र०	तुतुदे	तुतुदाते	<u>तुतु</u> दिरे
<u>तुतो</u> दिथ	तुतुद्थुः	तुतुद		तुतुदिषे	तुतुदाथे	तुतुदि ध्वे
तुतोद	तुतुंदिव	तुतुदिम	30	तुतुदे	<u>तुतु</u> दिवहे	तुतु दि महे
	छुङ् (४)				खुङ् (४)	
अतौत्सीत्	अतौत्ताम्	अतौत्सुः	प्र॰	अतुत्त	अतुत्साताम्	अतुत्सत
अतौत्सीः	अतौत्तम् v Tripathi Collecti	्राञ्चतौत्त्व ।	CSDS)	अतुत्थाः हर	Sid अंत्रत्युध्यम्	अतुर्ध्वम् तामानुष्ट्यम्
अतौत्सम्	अतौत्स्व	अतौत्स्म	उ०	अतुत्सि	अतुत्स्विह	going हु स्वाम् अतुत्स्महि

(८२) मुच् (छोड़ना) (दे० अ० ५१)

(04) 30	(८२) मुच् (छाड़गा) (२० ग० ११)							
परसं	गैपद-लट्				आत्मनेपद-	–लट्		
मुञ्जति 📑	मुञ्चतः	मुञ्चन्ति	प्र॰	मुञ्जते	मुञ्जेते	मुञ्चन्ते		
मुञ्जसि	मुञ्जय:	मुञ्जय	Ho	मुञ्जसे	मुञ्जेथे	मुञ्चध्वे		
मुञ्जामि	मुश्चावः	मुञ्जामः	उ॰	मुख्ये	मुञ्चावहे	मुख्यामहे		
	लोट्				लोट्			
मुञ्जतु	मुख्रताम्	मुञ्चन्तु	प्र॰	मुख्रताम्	मुञ्जेताम्	मुञ्चन्ताम्		
मुञ्ज	मुञ्चतम्	मुञ्चत	Ho	मुञ्चख	मुञ्जेथाम्	मुञ्जध्वम्		
मुञ्चानि	मुञ्जाव	मुञ्जाम	उ०	मुञ्जे	मुञ्जावहै	मुख्रामहै		
	लङ्				लङ्			
अमुञ्चत्	अमुञ्चताम्	अमुञ्चन्	प्र॰	अमुञ्चत	अमुञ्चेताम्	अमुञ्चन्त		
अमुञ्चः	अमुञ्चतम्	अमुञ्चत	म०	अमुञ्चथाः	अमुञ्जेथाम्	अमुञ्चध्वम्		
अमुञ्चम्	अमुञ्चाव	अमुख्राम	उ०	अमुञ्चे	अमुञ्चावहि	अमुञ्जामहि		
	विधिलिङ	विधिलिङ						
मुञ्चेत्	मुञ्जेताम्	मुञ्जेयुः	प्र॰	मुञ्जेत '	मुख्चेयाताम्	मुञ्चेरन्		
मुख्चेः	मुञ्चेतम्	मुञ्जेत	म०	मुञ्जेथाः	मुञ्जेयाथाम्	मुञ्जेध्वम्		
मुञ्जेयम्	मुञ्जेव	मुख्चेम	उ०	मुञ्चेय	मुञ्जेवहि	मुख्चेमहि		
	-				-			
मोक्ष्यति	मोक्ष्यतः	मोक्ष्यन्ति	लुट्	मोक्ष्यते	मोक्ष्येते	मोक्ष्यन्ते		
मोक्ता	मोक्तारौ	मोक्तारः	खुट्	मोक्ता	मोक्तारौ	मोक्तारः		
मुच्यात्	मुच्यास्ताम्	मुच्यासुः ३			मुक्षीयास्ताम्			
अमोक्ष्यत्	अमोक्ष्यताम्	अमोक्ष्यन्	लङ्	अमोक्ष्यत	अमोक्ष्येताम्	0		
	लिट्				लिट्			
मुमोच	मुमुचतुः	मुमुचु:	प्र॰	मुमुचे	मुमुचाते	मुमुचिरे		
मुमोचिथ	मुमुचथुः	मुमुच	म०	मुमुचिषे	मुमुचाथे	मुमुचिध्वे		
मुमोच	मुमुचिव	मुमुचिम	उ॰	मुमुचे	मुमुचिवहे	मुमुचिमहे		
	छुङ् (२)				द्धहर्(४)			
अमुचत्	अमुचताम्	अमुचन्	प्र॰	अमुक्त.	अमुक्षाताम्	अमुक्षत		
अमुचः			म०	अमुक्थाः	अमुक्षाताम्			
अमुचम्			उ०	अमुक्षि	अमुक्ष्विह	अमुक्ष्महि		

(७) रुधादिगण

- (१) इस गण की प्रथम धातु रुध् (रोकना) है, अतः गण का नाम रुधादिगण पड़ा। (रुधादिम्यः रनम्) रुधादिगण की धातुओं में लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् में धातु के प्रथम स्वर के बाद रनम् (न) विकरण लगता है। वह कभी न् हो जाता है। लट् आदि में धातु को गुण नहीं होता।
- (२) (क) सन्धि-नियमों के अनुसार यथास्थान धातु के ध्को द्या त्, द्को त्, ज्को क्या ग्होते हैं। (ख) विकरण के न को परस्मैपद केलट्, लोट् (म०१ को छोड़कर) और लङ्के एकवचन में प्रायः न रहेगा, अन्यत्र न होगा। (ग) विकरण के न को सन्धि नियमानुसार ङ्और ञ्भी होता है। "न" का विशेष विवरण संक स्प से समझें।
 - (३) इस गण में २५ धातुएँ हैं।
- (४) लट् आदि में संक्षितरूप निम्नलिखित लगेंगे। न या न् धातु के प्रथम स्वर के बाद लगावें। लट्, छट्, आशीर्लिङ् और लङ् में पृष्ठ १४४ पर निर्दिष्ट संक्षितरूप ही लगेंगे। सेट् में लट् आदि में सं० रूप से पहले इ भी लगेगा, अनिट् के नहीं।

क नहा।							
	परस्मैपद (सं॰ रूप)			आत्मनेपद (सं० रूप)			
	लट् .				लट्		
(न) ति	(न्) तः	(न्) अन्ति	प्र०	(न्) ते	(न्) आते	(न्) अते	
(न) सि	(न्) थः	(न्) थ	Ho	(न्) से	(न्) आथे	(न्) ध्वे	
(न) मि	(न्) वः	(न्) मः	उ०	(न्) ए	(न्) वहे	(न्) महे	
	लोट्				लोट्		
(न) तु	(न्) ताम्	(न्) अन्तु	प्र॰	(न्) ताम्	(न्) आताम्	(न्) अताम्	
(न) हि	(न्) तम्	(न्) त	म०	(न्) स्व	(न्) आथाम्		
(न) आनि	न (न) आव	(न) आम	उ०	(न) ऐ	(न) आवहै	(न) आमहै	
लङ्	(धातु से पूर्व	अ या आ)		लङ् (धातु से पूर्व अ या आ)			
(न) त्	(न्) ताम्	(न्) अन्	प्र॰	(न्) तं	(न्) आताम्	(न्) अत	
(न):	(न्) तम्	(न्) त	म०	(न्) थाः	(न) आथाम्		
(न) अम्	(न्) व	(न्) म	उ०	(न्) इ			
	विधिलिङ				विधिलिङ	₹.	
(न्) यात्	(न्) याताम्	(न्) युः	प्र॰	(न्) ईत	(न्) ईयाताम्	(न्) ईरन्	
(न्) याः	(न्) यातम्	(न्) यात	Ho		(न) ईयाथाम्		

CC-O(हर) त्यानीक (निश्वेशन हैollection at समिवं(टिकेड) किंगुओं रहेंग है किंगुओं के स्विते के स्विति के स्वति के स्वति

			(4114.14)	। १६७५	, ।मद् वातु		504
			दे० अ० ५२ के रूप दिए		(८४) भिव सूचना—के	र् (तोड़ना) (दे वल परस्मै० के र	• अ• ५२) ज्य दिए हैं।
	लट्					लट्	
छिनत्ति	छिन्त	r: , f	छिन्द न्ति	प्र॰	भिनत्ति	भिन्तः	भिन्दन्ति
छिनत्सि	छिन्त	थ:	छिन्त्थ	म०	भिनत्सि	भिन्त्थः	भिन्त्थ
छिनद्मि	<u> </u>	:	छिन्द्राः	30	भिनद्मि	भिन्द्रः	भिन्दाः
	लोट्					लीट्	
छिनत्तु	छिन्त	ाम्	छिन्दन्तु	प्र॰	भिनत्तु	भिन्ताम्	भिन्दन्तु
छिन्दि	छिन्त	ाम् ।	छिन्त	म०	भिन्द्र		भिन्त
छिनदार्ग	ने छिन	दाव	छिनदाम 🌎	उ०	भिनदानि		भिनदाम
	लङ्					लङ्	
अच्छिन	त् आं	च्छन्ताम्	् अच्छिन्दन्	प्र॰	अभिनत्	अभिन्ताम्	अभिन्दन्
अच्छिन	: ১ আ	च्छन्तम्	अच्छिन्त	म॰	अभिनः	अभिन्तम्	अभिन्त
अच्छिन	दम् आ	च्छन्द्व	अच्छिन्द्म	उ०	अभिनदम्	अभिन्द	अभिन्द्र
	विधिति	हर्			f	विधिलिङ्	
					भिन्द्यात्		
छिन्द्याः		and the second	छिन्द्यात		भिन्द्याः	भिन्द्यातम्	भिन्द्यात
छिन्द्याम्	্ ভিন	ग्राव	छिन्द्या म	उ०	भिन्द्याम्	भिन्द्याव	भिन्द्याम
	_					_	
छेत्स्यति	छेत्स	यतः	छेत्स्यन्ति	लट्	भेत्स्यति	भेत्स्यतः	भेत्स्यन्ति
छेता					भेत्ता		
छिद्यात्						भिद्यास्ताम्	भिद्यासुः
अच्छेत्स	यत् अच	डे त्स्यता र	म् ०	लङ्	अभेत्स्यत्	अभेत्स्यताम्	0.
	लिट्					लिट्	
चिच्छेद					बिभेद		विभिदुः
			चिच्छिद				विभिद
चिच्छेद	चि	च्छिदिव	चिच्छिदिम	उ०	ब्रिभेद	बिभिदिव	विभिदिम
		क) (४)				छङ् (क) (४)	
अच्छैर्त्स	ोत् अच	छैत्ताम्	अच्छैत्सुः	प्र०	अभैत्सीत्	अभैत्ताम्	अभैत्सुः
अच्छैर्त्स	ोः अच	छैत्तम्	अच्छैत्त	म॰	अभैत्सीः	अभैत्तम्	. अमैत्त
						अमैत्स्व	
CC-(उत्रा)r.(म	a)ndeस्रातिह	ब्र्ल् Coll	अञ्जिदताम	्म ति	(83) (BB) (E8)	क्ष भित्तत्व अधिक	त्रामुल्सिस्त्रेबोn Kosha

(८५) हिंस (हिंसा करना)(दे॰ अ॰ ५३) (८६) भञ्ज् (तोड़ना) (दे॰ अ॰ ५३)

स् (ाहसा कर	ना)(द० अ	0 44)	(CA) Mari		
परस्मैपदी				परस्मैपदी	
लट्				लट्	
हिंस्तः	हिंसन्ति	प्र०	भनक्ति	भङ्कः	भञ्जन्ति
	हिंस्थ	म०	भनक्षि	भङ्क्थः	भङ्कथ
	हिंसाः	उ०	भनिष्म	भञ्ज्वः	भञ्ज्यः
लोट्				लोट्	
हिंस्ताम्	हिंसन्तु	प्र०	भनक्तु	भङ्काम्	भञ्जन्तु
	हिंस्त	म०	भङ्गिध	,भङ्कम्	भङ्क
हिनसाव	हिनसाम	उ०	भनजानि	भनजाव	भनजाम
लङ्				लङ्	
अहिंस्ताम्	अहिंसन्	प्र॰	अभनक्	अभङ्काम्	अभञ्जन्
		Ho	अभनक्	अभङ्क्तम्	अभङ्क
अहिंस्व	अहिंसा	उ०	अभनजम्	अभञ्ज्व	अभञ्ज्म
विधिलिङ्				विधिलिङ्	
हिंस्याताम्	हिंस्युः	प्र॰	भञ्ज्यात्	भञ्ज्याताम्	भञ्ज्युः
हिंस्यातम्	हिंस्यात	Ho	भञ्ज्याः	भञ्ज्यातम्	भञ्ज्यात
हिंस्याव	हिंस्याम्	उ०	भञ्ज्याम्	भञ्ज्याव	भञ्ज्याम
- 8755				_	
हिंसिष्यतः	हिंसिष्यन्ति	त लट्	भङ्क्ष्यति '	भङ्क्ष्यतः	भङ्ध्यन्ति
हिंसितारौ					
हिंस्यास्ताम्				भज्यास्ताम्	भज्यासुः
अहिंसिष्यता	म् ॰	लुङ्	अभङ् क्ष्यत्	अभङ् ्स्यत	ाम् ०
लिट्				ं लिट्	
	जिहिंसु:	प्र॰	बभञ्ज	बभञ्जतुः	बभञ्जुः
	जिहिंस	Ho	बंभिञ्जिथ,व्भङ्	म्य बभञ्जथुः	बभञ्ज
जिहिंसिव	जिहिंसिम	उ०	बभञ्ज	बभिञ्जिव	वभिञ्जम
छङ् (५)				छङ् (४)	
अहिंसिष्टाम्	अहिंसिषु:	प्र॰	अभाङ् क्षीत्		अभाङ्धुः
	परसमेपदी लट् हिंस्तः हिंस्यः हिंस्यः हिंस्यः हिंस्यः हिंस्तम् हिंस्तम् हिंस्तम् अहिंस्तम् अहिंस्तम् अहिंस्याताम् हिंस्याताम् हिंस्यास्ताम् अहिंसिच्यताः लिट् जिहिंसथुः जिहिंसथुः जिहिंसवः	णरस्मेपदी लट् हिंसाः हिंसितः हिंस्थः हिंस्थः हिंस्थः हिंस्थः हिंस्वः हिंसाः लोट् हिंसाम् हिंसनु हिंसतम् हिंसतः हिनसाव हिनसाम लङ् अहिंसतम् अहिंसतः अहिंसत अहिंसतः अहिंसताम् हिंस्याता हिंस्याताम् हिंस्याता हिंस्याताम् हिंस्याता हिंस्याताम् हिंस्याता हिंस्यातम् हिंस्याता हिंस्याताम् हिंस्याता छहंसिष्यताम् ० लिट् जिहिंसवः जिहिंसम छङ् (५)	णरस्मैपदी लट् हिंसाः हिंसन्ति प्र० हिंस्थः हिंस्थ म० हिंस्वः हिंस्थः प्र० हिंस्ताम् हिंसन्तु प्र० लङ् अहिंस्ताम् अहिंसन् प्र० अहिंस्ताम् अहिंसन् प्र० अहिंस्ताम् हिंस्यात म० हिंस्याताम् हिंस्यात म० हिंस्यातम् हिंस्याम् उ० — हिंस्यातम् हिंस्याम् उ० — हिंस्यातम् हिंस्याम् उ० — हिंस्यातम् हिंस्याम् उ० हिंस्यासाम् हिंस्यामुः आ०ि अहिंसिष्यताम् ० लुङ् लिट् जिहिंसवुः जिहिंसुः प० जिहिंसवुः जिहिंस म० जिहिंसवाः जिहिंसम् उ० छङ् (५)	एरस्मैपदी लट् हिंसाः हिंसन्त प्र० मनिक्तः हिंस्थः हिंस्थ म० मनिक्तः हिंस्थः हिंस्थ म० मनिक्तः हिंस्यः हिंस्यः उ० मनिक्तः लोट् हिंस्ताम् हिंसन्तु प्र० मनक्तुः हिंस्तम् हिंस्त म० मङ्ग्धिः हिनसाव हिनसाम उ० मनजानि लङ् अहिंस्ताम् अहिंसन् प्र० अभनक् अहिंस्तम् अहिंस्त म० अभनक् अहिंस्तम् अहिंस्त म० अभनक् अहिंस्तम् अहिंस्त म० अभनक् अहिंस्तम् अहिंस्त म० अभनक् अहिंस्ताम् हिंस्थाः प्र० भञ्ज्यात् हिंस्याताम् हिंस्यात म० भञ्ज्याः हिंस्यातम् हिंस्याम् उ० भञ्ज्याम् हिंस्यातम् हिंस्याम् उ० भञ्ज्याम् हिंस्यातम् हिंस्यासः आ०लिङ् भज्यात् अहिंसिच्यताम् ० लुङ् अभङ्श्यत् लिट् जिहिंसवुः जिहिंसुः प्र० वभञ्ज जिहिंसवुः जिहिंसा उ० वभञ्ज जिहिंसवः जिहिंसा उ० वभञ्ज जिहिंसवः जिहिंसा उ० वभञ्ज जिहिंसवः जिहिंसा उ० वभञ्ज	हिंसाः हिंसन्ति प्र० मनिक्त मङ्काः हिंस्थः हिंस्थ म० मनिक्ष मङ्काः हिंस्थः हिंस्थ म० मनिक्ष मङ्कथः हिंस्यः हिंस्यः हिंस्यः उ० मनिज्म मञ्ज्वः लोट् लोट् हिंसाम् हिंसन्तु प्र० मनक्तु मङ्काम् हिंस्तम् हिंस्त म० मङ्गिष मञ्जान सनजान हिंनसाम उ० मनजानि मनजान लङ्

अहिंसी: अहिंसिष्टम् अहिंसिष्ट् म् अभाङ्क्षीत् अभाङ्काम् अभाङ्कुः अहिंसी: अहिंसिष्टम् अहिंसिष्ट् म् अभाङ्क्षीः अभाङ्क्तम् अभाङ्क् CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized क्षेप्रे Siddhanta e Sangotri Gyaan Kosha अहिंसिषम् अहिंसिष्व अहिंसिष्य उ० अभाङ्क्षम् अभाङ्क्

रुधादिगण । उभयपदी धातुएँ (८७) रुध् (रोकना, ढकना) (दे॰ अ॰ ५४)

प	रस्मैपद-ल्य				आत्मनेपद-लट	
च णद्धि		रुन्धन्ति	प्र॰	रुन्धे	रुन्धाते	
रुणितस	रुन्धः	रुन्ध	म०	इ न्त्से	रुन्धार्थ	रुन्ध्वे
रुणिधम	रुन्ध्वः	रुन्ध्मः	उ०	रुन्धे	रुन्ध्वहे	रुन्ध्महे
	लोट्				लोट्	
रुणदु	रुन्धाम्	रुन्धन्तु	प्र०	रुन्धाम्	रुन्धाताम्	रुन्धताम्
रुन्धि	रुन्धम्	रुन्ध	म०	रुन्त्स्व	रुन्धाथाम्	रुन्ध्वम्
रुणधानि	रुणधाव	रुणधाम	०	रुणधै	रुणधावहै	रुणधामहै
	लङ्				लङ्	
अरुणत्	अरुन्धाम्	अरुन्धन्	प्र॰	अरुन्ध	अरुन्धाताम्	अरुन्धत
अरुण:	अरुन्धम्	अरुन्ध	म०	अरुन्धाः	अरुन्धाथाम्	अरुन्ध्वम्
अरुणधम्	अरुन्ध्व	अरुन्धा	उ०	अरुन्धि	अरुन्ध्वहि	अरुन्ध्महि
	विधिलिङ्				विधिलिङ	
रुन्ध्यात्	कन्ध्याता म	म् रुन्ध्युः	प्र०	रुन्धीत	रुन्धीयाताम्	रुन्धीरन्
रुन्ध्याः	रुन्ध्यातम्	रुन्ध्यात	म०	रुन्धीथाः	रुन्धीयाथाम्	रुन्धीध्वम्
रुन्ध्याम्	रुन्ध्याव	रुम्ध्याम	उ०	रुन्धीय	रुन्धीवहि	रुन्धीमहि
	_	2-6-	-	2-2		
रोत्स्यति	रोत्स्यतः		100000	रोत्स्यते		
रोद्धा	रोद्धारौ			रोद्धा	.रोद्धारौ	
रुध्यात्		म् रुध्यासुः इ			रुत्सीयास्ताम ———————	
अरोत्स्यत्	अरोत्स्यत	ाम् ०	लुङ्	अरात्स्यत	अरोत्स्येताम्	•
	लिट्				लिट्	
ररोध	रुरुधतुः	रु र्घ	: प्र॰		रुरुधाते	
र रोधिथ	रुस्थथुः	रुरुध	म०		रुरुधाथे	
रुरोध	रुरु धिव	रुरुधि	म उ॰	रुरुधे	रुरुधिवहे	रुरुधिमहे
	लुङ् (क)	(8)			खुङ्र्(४)
अरौत्सीत्	अरौद्धाः	म् अरौत	सुः प्र॰	अरुद	अरुत्साताम्	अरुत्सत
अरौत्सीः	अरौद्धम्	् अरौड	म ०	अरुद्धाः	अरुत्साथाम्	अरुद्ध्वम्
अरौत्सम	अरौत्स्व	अरौत	स उ॰	अरुत्सि	अरुत्स्विह	अरुत्स्महि
(ख) (२)	अरुधत् अर	व्धताम् अरुध	न् प्र॰			
		वधतम् अरुध		. 1000		
		हधाव अरुध				

(८८) भुज् (पालन करना) (दे० अ० ५४) (८८) भुज् (खाना) (दे० अ० ५४) े सूचना—पालन करना अर्थ में परस्मै-सूचना — खाना और उपभोग करना अर्थ में आत्मनेपदी है। पदी है। आत्मनेपद—लट् परसमैपद-लट् भुझाते भुञ्जते भुङ् तो भुञ्जन्ति भुनक्ति प्र० भुङ्कः . भुझाथे भुङ्क्षे भुङ् गध्वे भुनक्षि भुङ्क्थः म० भुङ ्क्थ भुञ्जे भुञ्जमहे भुनिषम भुञ्ज्वहे भुञ्ज्वः भुञ्ज्मः उ० लोट् लोट् भुञ्जाताम् भुञ्जताम् भुनक्तु भुङ्काम् भुझन्तु प्र॰ भुङ ्काम् भुङ् गिध भुङ क्तम् भुङ ध्व भुञ्जाथाम् भुङ् गध्वम् भुङ्क्त Ho भुनजै भुनजानि भुनजावहै भुनजामहै भुनजाम भुनजाव उ० लङ् लङ् अभुनक् अभुङ्काम् अभुञ्जन् अभुङ्क अभुञ्जाताम् अभुञ्जत प्र० अभुनक् अभुङ्कम् अभुङ्क अभुङ्क्थाः अभुजाथाम् अभुङ्ग्ध्वम् म० अभुङ्जि अभुञ्ज्वहि अभुञ्ज्मिह अभुनजम् अभुञ्ज्म अभुञ्ज्व उ० विधिलिङ् विधिलिङ भुञ्जीत भुञ्जीयाताम् भुञ्जीरन् भुञ्ज्यात् भुञ्ज्याताम् भुञ्ज्युः प्र० भुञ्ज्याः भुञ्ज्यातम् भुञ्ज्यात भुझीथाः भुझीयाथाम् भुझीध्वम् म० भुञ्ज्याव " भुञ्ज्याम् भुञ्ज्याम भुञ्जीय भुञ्जीवहि भुञ्जीमहि उ० भोक्ष्यति भोध्यतः भोक्ष्यन्ति भाक्ष्यते भोक्ष्येते भोक्ष्यन्ते लुट् भोक्ता भोक्तारौ भोक्तारः भोक्ता भोक्तारौ भोक्तारः लुट् भुज्यात् भुज्यास्ताम् भुज्यासुः आ० लिङ् भुक्षीष्ट **भुक्षीयास्ताम्** अभोक्ष्यत् अभोक्ष्यताम् लङ् अभोक्ष्यत अभोक्ष्येताम् ० 0 लिट् लिट् बुभोज बुभुजतुः बुभुजुः बुभुजे बुभुजाते बुभुजिरे प्र० बुभोजिथ बुभुजथुः बुभुजिषे बुभुज 刊o बुभुजाये बुभुजिध्वे बुभोज. बुभुजिव बुभुजिम बुभुजे बुभुजिवहे उ० बुभुजिमहे

अभौक्षीत् अभौक्ताम् अभौक्षुः प्र॰ अभुक्त अभुक्षाताम् अभुक्षत अभौक्षी: अभौक्तम् . अभौक्त म० अभुक्थाः अभुक्षाथाम् अभुग्ध्वम् अभौक्षम

लुङ् (४)

लुङ् (४)

	स्वाप्ताया । उन्नयपदा युण् वातु १०५								
(८९)	युज् (लगन	ा, जोड़ना,	मिलान	ा, नियुक्त व	तरना) (दे० अ	० ५५)			
	परस्मैपद-	-लट्			आत्मनेपद-	-लट्			
युनिक	युङ्कः	युञ्जन्ति	प्र॰	युङ्क्ते	युञ्जाते	युञ्जते			
युनक्षि	युङ्क्थः	युङ्क्थ	म०	युङ्क्षे	युझाथे	युङ्गध्वे			
युनिंग	युञ्ज्वः	युञ्जमः	उ॰	युञ्जे	युञ्ज्बहे	युञ्जमहे			
	लोट्			7	होट्				
युनक्तु	युङ्काम्	युञ्जन्तु	प्र॰	युङ्काम्	युञ्जाताम्	युञ्जताम्			
युङ्गिध	युङ्कम्	युङ्क	म०	युङ्क्व	युञ्जाथाम्	युङ्ग्ध्वम्			
युनजानि	युनजाव	युनजाम	उ॰	युनजै	युनजावहै	युनजामहै			
	ਲङ्				लङ् .				
अयुनक्	अयुङ्काम्	अयुञ्जन्	प्र॰	अयुङ्क	अयुञ्जाताम्	अयुञ्जत			
	अयुङ्कम्	अयुङ्क	म०	अयुङ्क्थाः	अयुज्जाथाम् अ	युङ्ग्ध्वम्			
अयुनजम्	अयुञ्ज्व	अयुञ्ज्म	उ०	अयुङ्जि	अयुञ्ज्वहि उ	भयुञ्जमहि			
विधिलिङ ् विधिलिङ्									
युञ्ज्यात्	युञ्ज्याताम्	युञ्ज्यु:	प्र०	युङ्जीत	युङ्जीयाताम् र	यु ञ्जीरन्			
युञ्ज्याः	युञ्ज्यातम्	युञ्ज्यात	म०	युञ्जीथाः	युङ्जीयाथाम् स	युज्जीध्वम्			
युञ्ज्याम्	युञ्ज्याव	युञ्ज्याम	उ॰	युङ्जीय	युञ्जावहि	युङ्जीमहि			
	-								
योक्ष्यति	योक्ष्यतः	योध्यन्ति				योक्ष्यन्ते			
योक्ता	योक्तारौ		<u>खर्</u>		योक्तारौ				
युज्यात्					युक्षीयास्ताम्०				
अयोध्यत्	्अयोक्ष्यताम्॰		लङ्	अयोक्ष्यत	अयोक्ष्येताम्०				
	लिट्	-			लिट्				
युयोज	युयुजतुः	युयुजुः	प्र०		युयुजाते	युयुजिरे			
युयोजिथ	युयुजथुः	युयुज	म०	युक्षिपे	युयुजाथे				
युयोज	युयुजिव	. युयुजिम	· 30	युयुजे	युयुजिवहे	युयुजिमहे			
	लुङ् (क) (5)			छङ्र(४)				
अयौक्षीत्	अयौक्ताम्	अयौक्षुः	प्र॰	अयुक्त	अयुक्षाताम्	अयुक्षत			
अयौक्षीः	अयौक्तम्		म०	अयुक्थाः	अयुक्षाथाम्				
	अयौध्व	अयौक्ष्म	उ०		अयुक्ष्वहि	अयुक्ष्महि			
	A THE PARTY OF THE								

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लुङ्(ख) (२)

अयुजत्

अयुजताम् अयुजन् आदि ।

(८) तनादिगण

- (१) इस गण की प्रथम धातु तन् (फैलाना) है, अतः गण का नाम तनादि-गण पड़ा । (तनादिकृञ्भ्य उः) तनादिगण की धातुओं में लट्, लोट्, लङ्और विधिलिङ में धातु और प्रत्यय के बीच में 'उ' विकरण लगता है।
- (२) (क) धातुओं की उपधा के उ और ऋ को लट् आदि में विकल्प से गुण होता है। अतः उनके लट् आदि में दो रूप वनेंगे। क्षिण् > क्षिणोति, क्षेणोति। (स्त्र) (अत उत्सार्वधातुके) कृ धातु के ऋ को उर् हो जाता है, कित् और ङित् वाले स्थानों पर । अतः परस्मैपद में लट् , लोट् , लङ् और विधिलिङ् में द्वियन और बहुवचन में ऋ को उर्होता है। आत्मनेपद में लट् आदि में सर्वत्र उर्। लोट् उत्तमपुरुष में दोनों पदों में गुण ही होता है। (ग) उ विकरण को परस्मै० लट् आदि के एक० में गुण होता है। परस्मै॰ विधिलिङ् और आत्मने॰ में उ ही रहता है। लोट् उ॰ पु॰ में गुण होगा ।
 - (३) इस गण में १० धातुएँ हैं।
- (४) लट् आदि में संक्षित्र निम्नलिखित लगेंगे। लट्, लुट्, आशीर्लिङ् और लुङ् में पृ० १४४ पर निर्दिष्ट संक्षिप्त रूप ही लगेंगे।

	परसमैपद (सं॰ रूप)			आत्मनेपद (सं॰ रूप)				
	लट्				लट्			
ओति	उतः	वन्ति	प्र॰	उते	वाते	वते		
ओषि	उथ:	उथ	म०	उषे	वाथे	उध्वे		
ओमि	उवः, वः	उमः, मः	उ०.	वे	उवहे, वहे	उम़हे, महे		
	छोट्				लोट्			
ओतु	उताम्	वन्तु	प्र०	उताम्	वाताम्	वताम्		
उ	उतम्	उत	tio	उष्व	वाथाम्	उध्वम्		
अवानि	अवाव	अवाम	उ०	अवै	अवावहै	अवामहै		
	लङ् (धातु से प्	र्व अ या अ	T)	लङ् (ध	लङ् (धातु से पूर्व अ या आ)			
ओत्	उताम्	वन्	प्र॰	उ त	वाताम्	वत		
ओः	उतम्	उत	म०	उथाः	वाथाम्	उध्वम्		
अवम्	लव, व	उम, म	€0	वि	उवहि, वहि	हे उमहि,महि		
	विधिलिङ्				विधिलिङ्			
उयात्	उयाताम्	उयु:	प्र०	वीत	वीयाताम्	वीरन्		
उयाः	उयातम्	उयात	म०	वीथाः	वीयाथाम्	वीध्वम्		
उयाम्	उयाव	उयाम	उ॰	वीय	वीवहि	वीमहि		

तनादिगण। उभयपदी धातुएँ

(९०) तन् (फैलाना) (दे० अ० ५५)

	(money (
	स्मैपद-लट्				त्मनेपद—लव	
तनोति	तनुतः	तन्वन्ति	प्र॰	तनुते	तन्वाते	
तनोषि	तनुथ:	तनुथ	म०	तनुषे	तन्वाथे	तनुध्वे
तनोभि	तनुवः	तनुमः	उ०	तन्वे	तनुवहे	तनुमहे
	लोट्				लोट	Į.
तनोतु	तनुताम्	तन्वन्तु	प्र॰	तनुताम्	तन्वाताम्	तन्वताम्
तनु	तनुतम्	तनुत	म०	तनुष्व	तन्वाथाम्	
तनवानि	तनवाव	तनवाम	उ०	तनवै	तनवावहै	तनवामहै
	लङ्				लड	Ę.
अतनोत्	अतनुताम्	अतन्वन्	प्र॰	अतनुत	अतन्वाताम्	अतन्वत
अतनोः	अतनुतम्	अतनुत	म०	अतनुथाः		अतनुध्वम्
अतनवम्	अतनुव	अतनुम	उ॰	अतन्वि		अतनुमहि
	विधिलिङ्				विधिलिड	1
तनुयात्	े तनुयाताम्	तनुयुः	प्र०	तन्वीत	तन्वीयाताम्	्तन्वीरन्
तनुयाः	तनुयातम्	तनुयात	म०	तन्वीथाः	तन्वीयाथाम्	तन्वीध्वम्
तनुयाम्	तनुयाव	तनुयाम	उ०	तन्वीय	तन्वीवहि	तन्वीमहि
					_	
तनिष्यति	तनिष्यतः	तनिष्यन्ति	लट्	तनिष्यते	तनिष्येते	तनिष्यन्ते
तनिता	तनितारौ			तनिता		तनितारः
तन्यात्	तन्यास्ताम्	तन्यासुः अ	ग० लिंड	ः ्तनिषीष्ट	तनिषीयास्त	
अतिनिष्यत्	अतनिष्यत	ाम् ॰	लङ्	अतनिष्यत	अतनिष्येता	म् ॰
	लिट्				लिट्	
ततान	तेनतुः	तेनुः	प्र०	तेने	तेनाते	तेनिरे
तेनिथ	तेनथुः	तेन	म॰	तेनिषे	तेनाथे	तेनिध्वे
ततान,ततन	तेनिव	तेनिम	30	तेने	तेनिवहे	तेनिमहे
	लुङ् (क)	(4)			छङ् (५)	
अतनीत्	अतिष्टाम	अतनिषः	प्र॰ अ	तत, अतनि	य अतनिषाता	
अतनीः	अतनिष्टम्	अतनिष्ट	म० अ	तथाः,अतनिष्ठ	ष्ठाः अतनिषाथा	म् अतनिध्वम्
अतनिषम्	अतनिष्व				अर्तानप्वहि	
	छङ ्(स) (प	7				

(९१) कृ	(करना)	(दे०	अ०	२१-२२)		
- प	रसमैपद-लट			अ	ात्मनेपद्—लट्	
करोति	कु.स्तः	<u> कु</u> र्वन्ति	प्र०			कुर्वते
करोषि	कुस्थः		Ho.	कुरुपे	कुर्वाथे	कुरुध्वे 💮
करोमि	कुर्वः	कुर्मः	30	कुर्वे	कुर्व हे	कु र्महे
1	लोट्				लोट्	
करोतु	कुरुताम्	कुर्वन्तु	प्र०	कुरताम्	कुर्वाताम्	कुर्वताम्
. कुरु	कुरुतम्	कु.स्त		. कुरुष	कुवांथा म्	कुरु ध्वम्
करवाणि	करवाव	करवाम	उ०	करवै	करवावहै	
	लङ्				लङ्	
अकरोत्	अकुरुताम्	अकुर्वन्	प्र०	अकुरत	अकुर्वाताम्	अकुर्वत
अकरोः	अकुरतम्			अकुरुथाः	अकुर्वाथाम्	अकुरुध्वम्
अकरवम्	अकुर्व	अकुर्म	उ०	अकुर्वि	अकुर्वहि	
	विधिलिङ्				विधिलिङ	
कुर्यात्	कुर्याताम्	कुर्युः	प्र०	कुर्वात	<u> </u> अुर्वीयाताम्	कुवींरन्
कुर्याः	<u> यु</u> .यांतम्	कुर्यात े	म०	कुर्वाथाः	कु वीं या था म्	
<u>क</u> ुर्याम्	कुर्याव	कुर्याम	उ०	कुर्वीय	कुर्वीव हि	
	-					
करिष्यति	करिष्यतः	करिष्यन्ति	लुट	करिष्यते	करिष्येते	करिष्यन्ते
	कर्तारी	कर्तारः	छुट्			कर्तारः
क्रियात्	क्रियास्ताम्	क्रियासुः अ	।। ०लिड	ह कृषीष्ट	कृषीयास्ताम्	
अकरिष्यत्	अकरिष्यताम्			अकरिप्यत	अकरिप्येताम	
	लिट्				स्टिं	
चकार	चक्रतुः	चकुः	प्र॰	चक्रे		चक्रिरे
चकर्थ	चक्रथुः	चक	Ho	चकुपे		
चकार,चकर	चकृव	चकुम	उ०	चक्रे		ब्रह्द्वे ब्रह्महे
	खुङ् (४)					12016
	अकार्षाम्	अकार्षुः	Uc	21377	दुङ् (४)	
अकार्षीः	अकार्षम्	अकार्ष	Ho	अकृत	अकृषाताम्	अङ्गपत
अकार्यम्	अकुर्ष्व.	அன்வி	Hear.	अकृथाः	अकृषाथाम्	अञ्चर्वम् an द्भृम् द्भि क्तिn Kosha
-O. Dr. Ramde	ev Tripathi Colle	ection at Sar	ancsD	Sylghtized	म्ह्रम्ब्याक्ताव eGa	ang प्रमुक्ता Kosha

(९) क्यादिगण

ेश. इस गण की प्रथम धातु की (मोल लेना) है, अतः गण का नाम क्यादिगण पड़ा। (क्यादिभ्यः इना) क्यादिगण की धातुओं से लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् में धातु और प्रत्यय के बीच में श्रा (ना) विकरण होता है।

२. (क) लट् आदि में धातु को गुण नहीं होता। (ख) 'ना' विकरण परस्मैं के लट्, लोट्, लड़् के एक के ना रहता है। दोनों पदों में लोट् उ० पु० में ना रहेगा। अन्यत्र ना को नी होता है। जहाँ बाद में खर होता है, वहाँ ना का न् रहता है। परस्मैं लोट् म० पु० एक कों ना को नी होता है या आन होता है। (म) धातु की उपधा में न् होगा तो लट् आदि में न् का लोप हो जाएगा। (घ) (हल: अः शानज्झों) व्यंजनान्त धातुओं के बाद परस्मैं लोट् म० पु० एक कों ना को आन हो जायगा और हि का लोप होगा। अतः 'आन' शेष रहेगा। बन्ध्> वधान, मह्> एहाण। (ङ) (प्वादीनां हस्वः) प् आदि धातुओं को लट् आदि में हस्व होगा। प्> पुनाति। धू> धुनाति। (च) (प्रहोऽलिटि दीर्घः) प्रह धातु के बाद इ को ई हो जाएगा, लिट् को छोड़कर। प्रहीध्यति, प्रहीता।

३. इस गण में ६१ धातुएँ हैं।

४. लट् आदि में धातु के बाद ये संक्षिप्तरूप लगेंगे। लट्, खुट्, आशीर्लिङ् और लड् में पृष्ठ १४४ पर निर्दिष्ट सं० रूप ही लगेंगे।

τ	परसमैपद (सं० रूप)				आत्मनेपद (सं० ऋप)			
	लट्				लंद			
नाति	नीतः	नन्ति	प्र०	नीते	नाते	नते		
नासि	नीथः	नीथ	Ho	नीपे	नाथे	नीध्वे		
नामि	नीवः	नीमः	_ उ०	ने	नीवहे	नीमहे		
	लोट्				लोट्			
नातु	नीताम्	नन्तु	До	नीताम्	नाताम्	नताम्		
नीहि (आन) नीतम् नीत			Ho	नीध्व	नाथाम्	नीध्वम्		
नानि	नाव	नाम	उ०	नै	नावहै	नामहै		
लङ्	(धातु से पूर्व	अ या आ))	लङ् (धांतु से पूर्व अ या आ)				
नात्	नीताम्	नन्	प्र०	नीत	नाताम्	नत		
नाः	नीतम्	नीत	Ho	नीयाः	नाथाम्	नीध्वम्		
नाम्	नीव	नीम	उ०	नि	नीवहि	नीमहि		
	विधिलिड				विधिलिङ			
नीयात्	नीयाताम्	नीयुः	प्र॰	नीत	नीयाताम्	नीरन्		
नीयाः	नीयातम्	नीयात	Ho	नीथाः	नीवाथाम	नीध्वम्		

क्यादिगण । परस्मैपदी धातुएँ

(९२) वन	(९२) वन्ध् (बाँधना) (दे० अ० ५७) (९३) मन्थ् (मथना) (दे० अ० ५७)							
(.,,					लट्			
	लट् बध्नीतः	वध्नन्ति	प्र०	मथ्नाति	मध्नीतः	मथ्नन्ति		
बध्नाति बध्नासि	बध्नीथः	बध्नीथ	Ho	मथ्नासि	मथ्नीथः	मथ्नीथ		
वध्नामि	बध्नीवः	दध्नीमः	उ०	मध्नामि	मथ्नीवः	मथ्नीमः		
4-11111	ह्रोट्				लोट्			
बध्नातु	बध्नीताम्	बध्नन्तु	प्र॰	मध्नातु	मथ्नीताम्	मथ्नन्तु		
बधान	बध्नीतम्	बध्नीत	म०	मथान	मथ्नीतम्	मथ्नीत		
वध्नानि	बध्नाव	बध्नाम	उ॰	मथ्नानि	मथ्नाव	मथ्नाम		
	ਲ ङ੍				लङ्			
अबध्नात्	अवध्नीताम्	अबध्नन्	प्र०	अमध्नात्	अमध्नीताम्	अमध्नन्		
अवध्नाः	अवध्नीतम्	अवध्नीत	म०	अमथ्नाः	अमध्नीतम्	अमथ्नीत		
अवध्नाम्	अबध्नीव	अवध्नीम	उ०	अमथ्नाम्	अमथ्नीव	अमथ्नीम		
	विधिलिङ्				विधिलिङ्			
बध्नीयात्	बध्नीयाताम्	बध्नीयुः	प्र॰	मथ्नीयात्	मथ्नीयाताम्	मथ्नीयुः		
बध्नीयाः	बध्नीयातम्	वध्नीयात	म०	मथ्नीयाः	मध्नीयातम्	मध्नीयात		
बध्नीयाम्	वध्नीयाव	वध्नीयाम	उ॰	मध्नीयाम्	मथ्नीयाव	मथ्नीयाम		
	-			-	-			
भन्त्स्यति	भन्तस्यतः	भन्स्यन्ति	लट्	•मन्थिष्यति	मन्थिष्यतः	मन्थिष्यन्ति		
बन्द्रा	वन्द्वारौ	बन्द्वारः	खर्	मन्थिता	मन्थितारौ	मन्थितारः		
बध्यात्	बध्यास्ताम्				मथ्यास्ताम्	मध्यासुः		
अभन्त्स्यत्	अभन्त्स्यताम्	0 .	लङ्	अमन्थिष्यत्	अमन्थिष्यता	म्०		
	लिट्				लिट्			
ववन्ध	वबन्धतुः	बबन्धुः	प्र॰	मयन्थ	ममन्थतुः	ममन्थुः		
वबन्धिथ	बबन्धथु:	वबन्ध	म०	समन्थिथ	ममन्थथु:	समन्थ		
बबंन्ध	वबन्धिव	वबन्धिम	उ॰	ममन्थ	ममन्थिव	समन्थिम .		
	बुङ् (४)				छङ् (५)			
		अभान्तमुः	प्र॰	अमन्थीत्	अमन्थिष्टाम्	अमन्थिषुः		
अभान्त्सीः	अवान्द्रम्	अबान्द्	म०	अमन्थीः	अमन्थिष्टम्	अमन्थिष्ट		
STATE THE .	STOTES			65 0:				

CC-O. Dr. अर्धान्तवस्त् Tripath Dottaction a क्षाना सम्प्र D3) Digiti स्वर्धिक पूर्वित विकास राज्य कि विकास रा

(९४) क्र	ों (मोल लेना) (दे॰ अ॰	46)			- min (
परः	हमैपद—लट्				आत्मनेपद—	लट्	
क्रीणाति	क्रीणीतः	क्रीणन्ति	уο	क्रीणीते	क्रीणाते	क्रीणते	1
क्रीणासि	क्रीणीथः	क्रीणीथ	HО	क्रीणीषे	क्रीणाथे	क्रीणीध्वे	
क्रीणासि	क्रीणीवः	क्रीणीभः	उ०	क्रीणे	क्रीणीवहे	क्रीणीमहे	
	लोट्				लोट्		
क्रीणातु	कीणीताम्	क्रीणन्तु	प्र॰	क्रीणीताम्	क्रीणाताम्	क्रीणताम्	
क्रीणीहि	कीणीतम्	क्रीणीत	म०	क्रीणीध्व	क्रीणाथाम्	क्रीणीध्वम्	
क्रीणानि	क्रीणाव	क्रीणाम	उ०	क्रीणै	क्रीणावहै	क्रीणामहै	
	लङ्				लङ्		
अक्रीणात्	अक्रीणीताम्	अक्रीणन्	प्र॰	अक्रीणीत	अश्रीणाताम	प् अक्रीणत	
अक्रीणाः	अक्रीणीतम्	अक्रीणीत	म०	अक्रीणीथाः	अक्रीणाथाम	(अक्रीणीध्वम्	
अक्रीणाम्		अक्रीणीम	30	अक्रीणि	अक्रीणीवहि	अक्रीणीमहि	
	विधिलिङ्				विधिलिड		
क्रीणीयात्			प्र०	क्रीणीत	कीणीयाताम	र् कीणीरन्	
क्रीणीयाः	क्रीणीयातम्	क्रीणयात	म०	क्रीणीथाः	क्रीणीयाथाय	न् क्रीणीध्वम्	
क्रीणीयाम्	क्रीणीयाव	क्रीणीयाम	उ०	क्रीणीय	क्रीणीवहि	क्रीणीमहि	
				1000000	-		
क्रेष्यति	क्रेष्यतः	क्रेष्यन्ति	लट्		क्रेध्येते	क्रेष्यन्ते	
क्रेता	क्रेतारी	क्रेतारः	छर्	न्नेता	क्रेतारी	क्रेतारः	
क्रीयात्	क्रीयास्ताम्	क्रीयासुः आ	०लिङ्		केषीयास्ताम्		
अक्रेष्यत्	अक्रेष्यताम्०		लङ्	अकेष्यत	अक्रेष्येताम्		
	लिट्				लिट्		
चिकाय	चिक्रियतुः	चिक्रियुः	प्र०	चिकिये	चिक्रियाते	चिक्रियिरे	
चिक्रयिथ,	चिक्रियधुः	चिक्रिय	म॰	चिक्रियिषे	चिक्रियाथे	चिक्रियिध्वे	
चिक्रेथ							
चिक्राय,	चिक्रियिव	चिकियिस	उ०	चिक्रिये	चिक्रियिवहे	चिक्रियंसहे	
चिक्रय							
	दुइं (४)				छङ् (४)		
अक्रैषीत्	अकैष्टाम्	अक्रैषुः	प्रव	अक्रेष्ट	अक्रेषाताम्	अक्रेषत	
	अकैष्टम्	अकैष्ट	अ०	अक्रेष्ठाः	अक्रेषाथाम्	अक्रेड्वम्	
अक्रैषम्		अकैष्म	उ०	अक्रेषि	अक्रेष्वि	अक्रेप्पहि	
CC-O. Dr. Rai	mdev Tripathi C	collection at Sa	arai(CSE	S). Digitized	By Siddhanta e	Gangotri Gyaan Kosha	a

CC-O. Dr

(९५) ग्रह् (पकड़ना) (दे॰ अ॰ ५८) सूचना—लट् आदि में ग्रह् को ग्रह् होगा। सूचना—लट् आदि में ग्रह् को ग्रह्।

सूचना	लड् जातर					
	परसमैप	द—लट्		अ	ात्मनेपद्—लट	
ं गृह्णाति	गृह्णीतः	गृह्णन्ति	प्र॰	गृह्णीते	गृह् णाते	गृह्णते
गृह्णासि		गृह्णीथ	म०	गृह्णीपे	गृह्णाथे	गृह्णीध्वे
गृह्णामि	गृह्णीवः ,	गृह्णीम:	उ०	गृह्णे	गृह्णीवहे	गृह् णीमहे
	लोट्				लोट्	
गृह्णातु	गृह्णीताम्	गृह्णन्तु	До	गृह्णीता	म् गृह्णाताम्	गृह्णताम्
गृहाण	गृह्णीतम्	गृह्णीत	म०	गृह्णीष्व	गृह्णाथाम्	गृह्णीध्वम्
गृह्णानि	गृह्णाव	गृह्णाम	उ॰	गृह्णै	गृह्णा वहै	गृह्णामहै
	लङ्				लङ्	
अगृह्णात्	अगृह्णीताम्	र् अगृह्णन्	प्र०	अगृह्णी	त अगृह्णाताम्	् अगृह्णत
	अगृह्णीतम्	अगृह्णीत	Ho	अगृह्णीथ	याः अगृह्णाथाम्	अगृह्णी ध्वम्
अगृह्णाम्	अगृह्णीव	अगृह्णीम	उ॰	अगृह्णि	अगृह्णीवहि	अगृह्णीमहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
	गृह्णीयाताम	र् गृह्णीयुः	प्र०	गृह्णीत	गृह्णीयाताम्	गृहणीरन
	गृह्णीयातम्	गृह्णीयात	Ho	गृह्णीथाः		
गृह्णीयाम्	गृह्णीयाव	गृह्णीयाम	उ०	गृह्णीय	गृह्णीवहि	
	-					ALC: N
	महीष्यतः	ग्रहीष्यन्ति	लट्	ग्रहीष्यते	ग्रहीध्येते	ग्रहीष्यन्ते
	यहीतारौ	ग्रहीतारः	ख ट्			ग्र हीतारः
	एह्यास्ताम्	गृह्यासुः आ	० लिङ्	महीषीष्ट	ग्रहीषीयास्ताम् य	
अग्रहीष्यत् उ	अग्रहीष्यताम् (0		अग्रहीष्यत	अग्रहीष्येताम्०	
	लिट्				लिट्	
	ग्यहतुः	जगृहु:	प्र॰	नगृहे		जगृहिरे
जमहिथ. च		जगृह	म०	जगृहिषे		जगृहिध्वे
जग्राह, जग्रह	जगृहिव	जगृहिम	उ०			जगृहिमहे
	छङ् (५)				लुङ् (५)	
	भग्रहीष्टाम्	अग्रहीषु:	प्र०	अग्रहीष्ट ः		अग्रहीषत
	भग्रहीष्टम्	अग्रहीष्ट				अग्रहायत अग्रहीध्वम्
अग्रहीषम् अ	ग्रहीष्व ः	अग्रहीष्म				अत्रहाय्यम् अत्रहीष्महि
r. Ramdev T	ripathi Collec	ction at Sarai(C			siddhanta eGang	राज्ञा है otri Gyaan Kosh

(९६) ज्ञा (जानना) (दे० अ० ५६)

स्चना-लट् आदि में ज्ञा को 'जा' होगा। सूचना-लट् आदि में ज्ञा को जा होगा।

	1	परस्मैपद्-ल	इं		अ	ात्मनेपद्—ल्	Ę
	जानाति	जानीतः	जानन्ति	प्र०	जानीते	जानाते	जानते
	जानासि	जानीथः	जानीथ	Ho	जानीपे	जानाथे	जानीध्ये 🗸
	जानामि	जानीवः	जानीमः	उ०	जाने	जानीवहे	जानीमहे
		लोट्				लोट्	
	जानातु	जानीताम्	जानन्तु	प्र०	जानीताम्	जानाताम्	जानताम्
	जानीहि	जानीतम्	जानीत	Ho.	जानीध्व	जानाथाम्	जानीध्वम्
	जानानि	जानाव ं	जानाम	उ०	जानै	जानावहै	जानामहै \
		लङ्				लङ्	
	अजानात्	अजानीताम्	अजानन्		अजानीत	अजानाताम्	
	अजानाः	अजानीतम्	अजानीत		अजानीथाः	अजानाथाम्	
	अजानाम्	अजानीव	अजानीम	उ०	अजानि	अजानीवहि	अजानीमहि
		विधिलिङ्				विधिलिङ्	
	जानीयात्	जानीयाताम्	जानीयुः		जानीत	जानीयाताम्	
	जानीयाः	जानीयातम्	जानीयात		जानीथाः	जानीयाथाम्	
	जानीयाम्	जानीयाव	जानीयाम	। उ०	जानीय	जानीवहि	जानीमहि
		_					
	ज्ञास्यति	ज्ञास्यतः		ल्ट्	् ज्ञास्यते		ज्ञास्यन्ते
	ज्ञाता	ज्ञातारौ	ज्ञातारः			ज्ञातारौ	ज्ञातारः
	ज्ञायात्,	ज्ञेयात् (दोनों	प्रकार से)	आ०लि	ङ् ज्ञासीष्ट	ज्ञासीयास्ताम	
	अज्ञास्यत्	अज्ञास्यताम्	0	लुङ्	अज्ञास्यत	अंज्ञास्येताम्	0
		लिट्				लिट्	
	जज़ी	जज्ञतुः	जज्ञ:	प्र॰	जज़े	जज्ञाते	जज़िरे
	जज्ञिथ े						
	जज्ञाथ ∫	जज्ञथुः	जश	म०	ज र् चिषे	जज्ञाथे	जित्रध्वे
	जज्ञौ	जित्रव			जर्श	जित्रवहे	जित्रमहे
		लुङ् (६)				खुङ् (४)	
	अज्ञासीत्	अज्ञासिष्टाम्	अज्ञासिषु	: प्र॰	अज्ञास्त	अज्ञासाताम्	
	अज्ञासीः	अज्ञासिष्टम्	अज्ञा सिष्ट	Ho	अज्ञास्थाः	अज्ञासाथाम्	
	अज्ञासिषम्	अज्ञासिष्व	अज्ञासिष		अज्ञासि	अज्ञास्वहि	अज्ञास्महि
CC-0	D. Dr. Ramde	/ Tripathi Collect	ion at Sarai(CSDS)). Digitized By	Siddhanta eGan	gotri Gyaan Kosha

(१०) चुरादिगण

- (१) इस गण की प्रथम धातु चुर् (चुराना) है, अतः गण का नाम चुरादिगण पड़ा। (सत्याप : चुरादिभ्यो णिच्) चुरादिगण में दसों लकारों में धातु से णिच् (अय्) प्रत्यय होता है। लट् आदि में शप् (अ) और लग जाने से धातु और प्रत्यय के बीच में 'अय' विकरण हो जाता है।
- (२) सूचना-प्रेरणार्थक धातुओं में भी 'हेतुमति च' सूत्र से णिच् प्रत्यय करने पर चुरादिगण की धातुओं के तुल्य ही दसों लकारों में रूप चलेंगे।
- (३) (का) णिच् (अय्) करने पर धातु के अन्तिम इई, उऊ, ऋ ऋ को क्रमशः ऐ, औ, आर् वृद्धि होगी। प्>पारयति, चि> चाययति। (ख) उपधा में अ, इ, उ, ऋ हों तो उन्हें क्रमशः आ, ए, ओ, अर होगा। कथ्, गण्, रच् आदि कुछ धातुओं में अ को आ नहीं होता है। (ग) लुट् में परस्मै॰ में इप्यति लगेगा और आत्मने॰ में इप्यते आदि । (घ) (अर्तिही' 'आतां पुरुणों) आकारान्त धातुओं में आ के बाद प और लग जाता है। आ + ज्ञा > आज्ञापयित ।
 - (४) इस गण में ४१० धातुएँ हैं। चुरादिगण तक पूरी धातुसंख्या १९४४ है।
- (५) चुरादिगणी धातुओं के रूप चलाने का सरल उपाय यह है कि धातु के अन्त में 'अय' लगाकर परस्मैं में भू के तुल्य और आत्मने में सेव् के तुल्य रूप चलावें। लट्, लुट्, आशीलिंङ् और लङ् में पृष्ठ १४४ पर निर्दिष्ट सं० रूप ही लगेंगे।

	परस्थैपद	(सं० रूप)		3	आत्म नेपद (सं० रूप)		
	लट् (धातु +	अय्)			लट् (धातु +	अय्)	
अति	अतः	अन्ति	प्र॰	अते	एते	अन्ते	
असि	अथ:	अथ	Ho	असे	एथे	अध्वे	
आमि	आवः	आमः	उ०	ए	आवहे	आमहे	
	लोट् (धातु +	अय्)			लोट् (धातु +		
अतु	अताम्	अन्तु	प्र०	अताम्	एताम्	अन्ताम्	
अ	अतम्	अत	म०	अस्व	एथाम्	अध्वम्	
आनि	आव	आम	उ०	ऐ		आमहै	
	लङ् (धातु + अय्) (धातु से	पहले उ	अया आ)	ल्रङ (धात ∔ः	अय)	
अत्	अताम्	अन्	प्र०	अत	एताम्	अन्त	
अ:	अतम्	अत	Ho	अथाः	एथाम्	अध्वम्	
अम्	आव	आम	उ॰	ए	आवहि	आमहि	
	विधिलिङ् (धातु				ङ् (धातु + अय्		
एत्		एयुः	ЯО	एत			
ए:		एत	म०	एथा:	एयाताम्	एरन्	
एयम्	एव	एम	उ०		एवहि	एध्वम्	
Dr Pam	doy Tripathi Collect	ion at Carai	(Cene	Digitized F	Siddhonto oc	mastri Cuan I	

चुरादिगण। उभयपदी धातुएँ

(९७) चुर् (चुराना) (दे० अ० ५९)

परसमैपद-लट् आत्मनेपद्-लट् चोरयति चोखतः चोरयन्ति चोरयेते चोरयते चोरयन्ते प्र० चोरयेथे चोरयसि चोरयसे चोरयथः चोरयथ चोरयध्वे म० चोरयामि चोरयावः चोरयामः चोरये चोरयावहे चोरयामहे उ० लोर लोट चोरयेताम् चोरयताम् चोरयन्त चोरयताम् चोरयन्ताम् चोरयत प्र० चोरयेथाम् चोरयस्व चोरयतम् चोरयत चोरयध्वम चोरय Ho चोरयै चोरयावहै चोरयामहै चोरयाणि चोरयाव चोरयाम उ० अचोरयत् अचोरयताम् अचोरयन् अचोरयत अचोरयेताम् अचोरयन्त प्र० अचोरयतम् अचोरयत अचोरयेथाम् अचोरयध्वम् अचोरयथाः अचोरयः म० अचोरयावहि अचोरयामहि अचोरये अचोरयम् अचोरयाव अचोरयाम उ० विधिलिङ विधिलिङ चोरयेताम् चोरयेयाताम् चोरयेरन् चोरयेत् चोरयेयुः चोरयेत प्र० चोरयेः चोरयेतम चोरयेथाः चोरयेयाथाम् चोरयेध्वम् चोरयेत Ho चोरयेमहि चोरयेयम् चोरयेव चोरयेम चोरयेय चोरयेवहि उ०

चोरियष्यित चोरियष्यतः चोरियष्यित्त लृट् चोरियष्यते चोरियष्येते ० चोरियता चोरियतारौ चोरियतारः लुट् चोरियता चोरियतारौं ० चोर्यात् चोर्यास्ताम् चोर्यासुः आ०लिङ् चोरियपीष्ट चोरियपीयास्ताम् ० अचोरियष्यत् अचोरियष्यताम् ० लुङ् अचोरियष्यत अचोरियष्येताम् ०

लिट् (क) (चोरयां + कृ) लिट् (क) (चोरयां + कृ) चोरयांचकार -चक्रतुः -चक्रुः प्र० चोरयांचक्रे -चक्राते -चित्रिरे -चकुषे -चक्राथे -चकर्थ -चक्रथुः 一चक म० —चकुवहे -चक्रे उ० -चकार, चकर-चक्रव -चक्रम (ख) (चोरयां + भू) चोरयांवभूव आदि । (ख) (चोरयां + भू) चोरयांबभुव आदि (ग) (चोरयाम् + अस्)चोरयामास आदि । (ग) (चोरयाम् + अस्) चोरयामास आदि

लुङ् (३) अचूचुरत् अचूचुरताम् अचूचुरन् प्र॰ अचूचुरत अचूचुरेताम् अचूचुरन्त अचूचुरः अचूचुरतम् अचूचुरत् म॰ अचूचुरथाः अचूचुरेथाम् अचृचुरध्वम् CC-O. Dr. Ramdev Tripalm Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGapgotti Gyaftankesha अचूचुरम् अचूचुराव अचूचुराम उ॰ अचूचुरे अचूचुराविधि

			1			
(९८) चि	त् (सोचना)) (दे० अ० ध	(3)	(दोने	ं पदीं में चुर् वे	ह तुरुष)
परसं	पैपद-लट्			आत्र	पनेपद—लट्	
चिन्तयति	चिन्तयतः	चिन्तयन्ति	प्र॰	चिन्तयते	चिन्तयेते	चिन्तयन्ते
चिन्तयसि	चिन्तयथः	चिन्तयथ	म०	चिन्तयसे	चिन्तयेथे	चिन्तयध्ये
चिन्तयामि	चिन्तयावः	चिन्तयामः	उ०	चिन्तये	चिन्तयावहे	चिन्तयामहे
	लोट्				लोट्	
चिन्तयतु	चिन्तयताम्	चिन्तयन्तु	प्रव	चिन्तयताम्	चिन्तयेताम्	चिन्तयन्ताम्
चिन्तय	चिन्तयतम्	चिन्तयत	म०	चिन्तयस्व	चिन्तयेथाम्	चिन्तयध्वम्
चिन्तयानि	चिन्तयाव	चिन्तयाम	उ०	चिन्तयै	चिन्तयावहै	चिन्तयामहै
	लङ्				लङ्	
	अचिन्तयताम		प्र॰	अचिन्तयत	अचिन्तयेताम् अ	मचिन्तयन्त
	अचिन्तयतम्			अचिन्तयथाः	अचिन्तयेथाम्	अचिन्तयध्वम
अचिन्तयम्	अचिन्तयाव	अचिन्तयाम	उ०	अचिन्तये अ	।चिन्तयावहि अ	मचिन्तयामहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
चिन्तयेत्	चिन्तयेताम्	चिन्तयेयुः	प्र	चिन्तयेत	चिन्तयेयाताम्	चिन्तयेरन्
चिन्तयेः	चिन्तयेतम्	चिन्तयेत	म०		चिन्तयेयाथाम्	
चिन्तयेयम्	चिन्तयेव	चिन्तयेम	उ०		चिन्तयेवहि	
2						
	चिन्तयिष्यतः				ने चिन्तयिष्येते	
	चिन्तयितारौ		खुट्	चिन्तयिता	चिन्तयितारौ	Ö
।चन्त्यात् अस्ति अस्ति	ाचन्त्यास्ताम् ।) आ॰			चिन्तयिषीयास	
जाचन्तायध्य	त् अचिन्तयिष्य				त अचिन्तयिष्ये	The second second
		(चिन्तयां + वृ	5)	हिर ्	(क) (चिन्तय	i + 事)
चिन्तयांचका		–चक्रुः	प्र०	चिन्तयांचक्रे	-चक्राते •	-चिकरे
–चकर्थ	-चक्रथुः	—चक्र	Ho -	-चक्रपे	-चक्राथे -	चकुढ्वे
-चकार,चक		-चकुम	उ० -	चक्रे	-चकवहे -	-चक्रमहे
(ख) (चिन्त	यां + भू) चिन्त	तयांवभ्व आ।	दे। (र	व) (चिन्तयां	+ भू) चिन्तयां	वभूव आदि
(ग)(चिन्तय	ाम् + अस्) नि	वन्तयामास अ	ादि।(ग)(चिन्तयाम्	(+ अस्)चिन्त	यामास आदि
3	ड ङ् (३)			ਲਵ	5 (3)	
अचिचिन्तत्	अचिचिन्तताम्	(अचिचिन्तन्	प्र०३	अचिचित्तत अ	किञ्चित्रेताम व	मचिचिन्तन्त
अचिचिन्तः	अचिचिन्ततम्	अचिचिन्तत	म० इ	अचिचिन्तथाः	अचिचिन्तेथा	ų ,
					. आ	नेनिन्दध्या
अन्त्राञ्चन्त्रम्	आन्यान्त्रतात्र	अस्ति चिन्सामा	TE SING	Emilanti ortifica	Siddhanta eGe	nostri Gyaan K

cc-ठ चिन्हिन्तम् अन्तिक्वित्तरम् अन्तिक्वित्तरम् अस्तिक्वित्तरम् । अस्ति विद्यास्य । एट । अधिक विद्यास्य । उप । अधिक विद्यास्य । अधिक विद्यास्य

(९९) कथ् (कहना) (दे० अ० ६०) सूचना—दोनों पदों में पूरे रूप चुर के तुल्य।

(१००) भक्ष (खाना) (दे० अ०६०) सूचना—दोनों पदों में पृरे रूप चुर् के तुस्य।

परस्मैपद-लट्

परसमैपद-लट्

कथयति कथयतः कथयन्ति प्र भक्षयति भक्षयतः भक्षयन्ति कथयसि क्थयथः कथयथ भुक्षयसि Ho भक्षयथः भक्षयथ कथयामि कथयावः कथयामः भक्षयामि उ० भक्षयावः मक्षयामः

कथयताम् लोट् भक्षयतु भक्षयताम् कथयतु कथयन्तु भक्षयन्त् अकथयताम् अकथयन् लङ् अभक्षयत् अभक्षयताम् अकथयत् अभक्षयन् कथयेत् कथयेताम् कथयेयुः वि०लिङ् भक्षयेत् भक्षयेताम् भक्षयेयुः कथयिष्यति कथयिष्यतः० लुट् भक्षयिष्यति भक्षयिष्यतः ० कथयिता कथयितारी लुट् भक्षयिता **भक्षियतारौ**० कथ्यात् कथ्यास्ताम् आ • लिङ् भश्यात् भक्षास्ताम्० अकथयिष्यत् अकथयिष्यताम् ० लङ् अभक्षयिष्यत् अभक्षयिष्यताम् ० (क) कथयांचकार—चक्रतु:-चक्रः लिट् (क) भक्षयांचकार -चक्रतुः -चक्रुः (ख) कथयांवभ्व (ग) कथयामास (ख) भक्षयांवभृव (ग) भक्षयामास अचकथत् अचकथताम् ० छुङ् अवभक्षत् अबभक्षताम्०

आत्मनेपद

आत्मनेपद

कथयेते भक्षयते भक्षयेते कथयते कथयन्ते लर् भक्षयन्ते । कथयताम् कथयेताम् कथयन्ताम् भक्षयेताम् लोट् भक्षयताम् भक्षयन्ताम् अमक्षयेताम् अमक्षयन्त अकथयेताम् अकथयन्त अकथयत अभक्षयत लङ् कथयेयाताम् कथयेरन् वि० लिङ भक्षयेत भक्षयेयाताम् भक्षयेरन् कथयेत कथयिष्यते कथयिष्येते कथयिष्यन्ते लुट भक्षयिष्यते भक्षयिष्येते० कथयिता **लुट्** भक्षयिता **भक्षियतारौ**० कथयितारी ० कथयिषीयास्ताम् आ । लिङ् भक्षयिषीयास्ताम् ० भक्षयिषीष्ट कथयिषीष्ट अकथयिष्यत अकथयिष्येताम् ० अभक्षयिष्यत अभक्षयिष्येताम् लुङ् (क) कथयांचक्रे -चकाते -चिकरे लिट् (क) भक्षयांचके -चकाते -चिकरे (ख) भक्षयांबभूव (ग) भक्षयामास (ख) कथयांवभूव (ग) कथयामास " अचकथत अचकथेताम्॰ अबभक्षेताम्॰ अवभक्षत लुङ्

(क) णिजन्त (प्रेरणार्थक) धातु

(१०१) कारि (करवाना) (व्याकरणादि के लिए देखो अभ्यास ३३-३४) सूचना—परहमै० और आत्मने० दोनों पदों में रूप चुर् (९७) धातु के तुल्य चलेंगे।

4001						
	परसमैपव	—लट्			आत्मनेपद	लट्
कारयति	कारयतः	कारयन्ति	प्र०	कारयते	कारयेते	कारयन्ते
कारयसि	कारयथः	कारयथ	म०	कारयसे	कारयेथे	कारयध्वे
कारयामि	कारयावः	कारयामः	उ०	कारये	कारयावहे	कारयामहे
	लोट्				लोट्	
कारयंतु	कारयताम्	कारयन्तु	प्र॰	कारयताम्	कारयेताम्	कारयन्ताम्
कारय	कारयतम्	कारयत	म०	कारयस्व	कारयेथाम्	कारयध्वम्
कारयाणि	कारयाव	कारयाम	उ०	कारयै	कारयावहै	कारयामहै
	लङ्				लङ्	
अकारयत्	अकारयताम	(अकारयन्	口。	अकारयत	अकारयेताग	म् अकारयन्त
अकारयः	अकारयतम्	अकारयत	म०	अकारयथा	: अकारयेथा	म् अकारयध्वम्
अकारयम्	अकारयाव	अकारयाम	उ॰	अकारये	अकारयावि	इं अकारयामहि
	विधिलिङ्				विधिलिङ्	
कारवेत्	कारयेताम्	कारयेयुः	प्र॰	कारयेत	कारयेयाताम	म् कारयेरन्
कारयेः	कारयेतम्	कारयेत	Hо	कारयेथाः	कारयेयाथाम	(कारयेध्वम्
कारयेयम्	कारयेव	कारयेम	उ०	कारयेय	कारयेवहि	कारयेमहि
- ਜ਼ਰੂਰਿਸ਼ਤੀਜ਼	— कारयिष्यतः					
	कार्ययवतः कार्ययतारौ		लुट्		कारियष्येते०	
			छर्		कारयितारौ	
कार्यात्	कार्यास्ताम्		०लिङ्			
अकारिययत्			लङ्		ा अकारियण्येत	
	(क) (कारय	(十至)			्(क) (कारयां	+ कृ)
कारयांचकार	-चक्रतुः	-चक्रुः	प्र॰	कारयांचके	-चकाते	-चिक्रिरे
-चकर्थ -	चक्रथुः	-चक्र	Ho	-चकृपे	-चकाथे	-चकृढ्वे
चकार,चकर	-चकृव	-चकुम	OE	-चक्रे	-चकुवहे	चकुमहे
(ख) (कारयां -	+ भृ) कारयां	वभृव आदि	1(四)	(कारयां +	भृ) कारयांवभृ	
						(यामास आदि
	ह् (३)				छुड् (३)	
मचीकरत् अच	शिकरताम् उ	ाचीकर न्	प्र०	अचीकरत उ	अचीकरेताम् ः	
				0	0 1	

```
(ख) सन्नन्त (इच्छार्थक) धातुएँ
                                                              (देखो अभ्यास ३५)
    (१०२) पिप्ठिप् (पर् + सन् ) (पढ़ना चाहना) (१०३) जिज्ञासा (ज्ञा + सन् )
                                                           (जिज्ञासा करना)
                                                 स्चना-आत्मने० में सेव् के तुल्य
    स्चना-परसमै० में भू के तुल्य।
               परसमैपद-लट्
                                                          आत्मनेपद्-लट्
    पिपठिषति पिपठिषतः
                           पिपठिपन्ति
                                                        जिज्ञासेते जिज्ञासन्ते
                                              जिज्ञासते
                                        प्र
                                                        जिजासेथे
                                                                   जिज्ञासध्ये
    पिपटिषसि पिपठिपथः
                           पिपठिपथ
                                              जिज्ञाससे
                                        田o
                                                        जिज्ञासावहे जिज्ञासामहे
                                              जिजासे
    पिपटिपामि पिपठिषावः
                          पिपठिपामः
                                        उ०
                                                            लोट्
               लोट
                                              जिज्ञासताम् जिज्ञासेवाम् जिज्ञासन्ताम्
               विविष्ठिपताम् विविष्ठिषन्तु
    पिपठिपत
                                        प्र
                                                        जिज्ञासेथाम् जिज्ञासध्वम्
               पिपठिषतम् पिपठिषत
    पिपटिष
                                              जिज्ञासस्व
                                        Ho
                                                        जिज्ञासावहै जिज्ञासामहै
    पिपठिपाणि पिपठिपाव
                                               जिजासै
                            पिपटिषाम
                                        उ०
                                              अजिज्ञासत —सेताम
    अविपठिषत् अविपठिषताम् अविपठिपन् प्र॰
    अपिपठिषः अपिपठिषतम् अपिपठिषत म॰
                                                        —संथाम्
                                               -सथाः
                                                        —सावहि —सामहि
    अपिपटिपम् अपिपटिपाव अपिपठिपाम उ०
                                                          विधिलिङ
               विधिलिङ
                                                        —सेयाताम् —सेरन्
               पिपठिपेताम पिपठिपेयुः
                                              जिज्ञासेत
    पिपिटिपेत
                                        Jo
               पिपिटिपेतम् पिपिटिपेत
                                                        - सेयाथाम् - सेध्वम्
    पिपिडिपे:
                                        HO
    पिपठिपेयम् पिपठिपेव पिपठिपेम
                                                        —सेवहि —सेमहि
                                        उ०
                                              जिजासिष्यते जिज्ञासिष्येते०
     पिपठिविष्यति विपठिविष्यतः०
                                       लुट्
                                              जिज्ञासिता जिज्ञासितारी०
              पिपितिवितारी०
    विविक्षिता
                                       लुट
                                    आ०लिङ् जिज्ञासिषीष्ट जिज्ञासिषीयास्ताम्०
    पिपठिष्यात पिपठिष्यास्ताम
                                              अजिज्ञासिष्यत अजिज्ञासिष्येताम्॰
     अपिपठिपिष्यत् अपिपठिषिष्यताम् ०
                                       लुङ्
     लिट (पिपिटिप् + आम् + क्र, भू, अस्)
                                             लिट (जिज्ञास + आम + क, भू, अस्)
                                             (क) जिज्ञासांचके — चकाते
     (क) पिपटिपांचकार —चकतुः आदि
                                             (ख) जिज्ञासांवभूव — वभूवतुः
     (ख) पिपठिषांत्रभ्व — बभ्वतुः आदि
                                             (ग) जिज्ञासामास—आसतुः
     (ग) पिपठिषामास —आसतुः आसुः प्र॰
                                                        —आसथः —आस
                                             —आसिथ
     —आसिथ —आसथुः —आस
                                                         —आसिवं —आसिम
                 -- आसिव -- आसिम उ॰
                                             --आस
                                                              लुङ् (५)
                 लुङ् (५)
                                             अजिज्ञासिष्ट —सिपाताम् —सिपत
     अपिपिटपीन् —िठिषिष्टाम् —िटिषिपुः प्र॰
— टिषी: — टिषिष्टम् — टिषिष्ट् म० — मिणाः — मिणाथाम् — सिष्वम्
CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangorti Gyean Kosha
— टिषिषम् — टिषिष्वं — टिषिषम् उ० — । सीप् — सिन्दोह्
```

(ग) भाव-कर्म-वाच्य

(१०४) कृ (करना) (दे० अ० ३१-३२) (१०५) दा (देना) (दे० अ० ३१-३२) सूचना—भाववाच्य में प्र० पु० एक० ही रहेगा। सूचना—भाववाच्य में प्र० पु० एक० ही रहेगा।

	कर्मवाच्य-ल	ध्ट्		कर्मव	ाच्य-लट्	
क्रियते	क्रियेते	क्रियन्ते	प्र०	दीयते	दीयेते	दीयन्ते
क्रियसे	क्रियेथे	क्रियध्वे	म०	दीयसे	दीयेथे	दीयध्वे
क्रिये	क्रियावहे	क्रियामहे	उ०	दीये	दीयावहें	दीयामहे
	लोट				लोट्	
क्रियताम्	क्रियेताम्	क्रियन्ताम्	प्र०	दीयताम्		दीयन्ताम्
क्रियस्व		क्रियध्वम्	म०	दीयस्व	दीयेथाम्	दीयध्वम्
क्रियै		क्रिया महै		दीयै	दीयावहै	दीयामहै
	लङ्				लङ्	
अक्रियत		अक्रियन्त	ЯО	अदीयत	अदीयेताम्	अदीयन्त
अक्रियथा		अक्रियध्वम्			अदीयेथाम्	अदीयध्वम्
अक्रिये	अक्रियावहि	अक्रियामहि	उ०	अदीये	अदीयावहि	अदीयामहि।
	विधिलिङ				विधिलिङ्	
क्रियेत	क्रियेयाताम्	कि. येरन्	प्र०	दीयेत		दीयेरन्
कियेथाः	क्रियेयाथाम्	क्रियेध्वम्	Ho	दीयेथाः	दीयेयाथाम्	
क्रियेय	कियेवहि	कियेमहि	उ०	दीयेय	दीयेवहि	दीयेमहि
	_				-	
करिष्यते,	कारिध्यते (द	तेनों प्रकार से) लट्	॰ दास्यते,	दायिष्यते (दं	ोनों प्रकार से)
कर्ता,	कारिता (छुट्	दाता,	दायिता (,, ,,)
कृषीष्ट,	कारिपीष्ट (,, ,,)3	ग०िल	ङ्दासीष्ट,		,, ,,)
अकरिष्यत	, अकारिष्यत(,	, ,,)	लङ्	अदास्यत	, अदायिष्यत(,, ,,)
	लिट्				लिट्	
चक्रे	चकाते	चित्ररे	प्र॰	द्रदे	ददाते	दिदिरे
चकुपे	चक्राथे	चकृद्वे	म०	ददिपे	ददाथे	दिद्ध्वे
चक्रे		चकृ महे	30	ददे	द्दिवहे	दिमहे
	लुङ् (५)				दुङ ्(५)	
अकारि	अकारिषाताम्	अकारिषत	प्र॰	अदायि	अदायिपाताम <u></u>	अदायिपत

CC-O. Dr. Ramdev Inpathi Cohection at Sarai(CSDS). Digitized By Stothanha eGangotti Gyaan Kosha अकारिषि अकारिष्विह अकारिष्मिह उ० अदायिषि अदायिष्विह अदायिष्मिह

(४) धातुरूप-कोष (सिद्धान्तकौमुदी की सभी प्रसिद्ध धातुओं के रूपों का संब्रह) आवश्यक निर्देश

- १. सिद्धान्तकोमुदी में जितनी भी प्रसिद्ध धातुएँ हैं और जिनका संस्कृत-साहित्य में विशेषलप से प्रयोग हुआ है, उन सभी धातुओं का यहाँ पर अकारादिकम से संप्रह किया गया है। प्रत्येक धातु के पूरे १० लकारों के प्रारम्भिक रूप (प्र०पु० एकवचन) यहाँ पर दिए गए हैं। साथ ही प्रत्येक धातु के णिच् प्रत्यय और कर्मवाच्य के रूप भी दिए गए हैं। इस कोष में ४६५ धातुएँ दी गई हैं।
- २. जो धातु जिस गण की है, उस धातु के रूप उस गण की धातुओं के तुल्य ही चलेंगे। धातुरूप-संग्रह में प्रत्येक गण के प्रारम्भ में उस गण की विशेषताएँ दी हुई हैं और साथ ही संक्षित-रूप भी दिए हुए हैं। जो धातु जिस गण की हो और जिस पद (परस्मै॰, आत्मने॰ या उभयपद) की हो, उसके रूप उस गण में निर्दिष्ट संक्षित-रूप लगाकर वनावें। जो उभयपदी धातुएँ परस्मैपद में ही अधिक प्रचलित हैं, उनके परस्मैपद के ही रूप यहाँ दिए गए हैं। जिनके दोनों पदों में रूप प्रचलित हैं, उनके दोनों पदों के रूप दिए हैं। जिन उभयपदी धातुओं के रूप यहाँ आत्मनेपद में नहीं दिए हैं, उनके आत्मनेपद के रूप उस गण की अन्य आत्मनेपदी धातुओं के तुल्य चलावें।
- ३. सिद्धान्तकौमुदी के लकारों का प्रामाणिक क्रम निम्नलिखित है। इसी क्रम से यहाँ धातुओं के रूप दिए गए हैं। लट्, लिट्, लट्, लट्, लोट्, लड्, विधिलिङ्, आशीर्लिङ्, लुङ्, लुङ्, लुङ्, अन्त में णिच् प्रत्यय और भावकर्मवाच्य का प्र० पु० एक० का रूप दिया गया है। प्रत्येक पृष्ठ पर ऊपर लकारों के नाम दिए गए हैं। उनके नीचे प्रत्येक पंक्ति में उस लकार के रूप दिए गए हैं। रूप दाएँ और वाएँ दोनों पृष्ठों पर फैले हुए हैं, अतः उस धातु के सामने के दोनों पृष्ठ देखें।

४. प्रत्येक धातु के बाद कोष्ठ में निर्देश कर दिया गया है कि वह किस गण की है और किस पद में उसके रूप चलते हैं। साथ ही धातु का हिन्दी में अर्थ भी दिया गया है। धातुओं के एक या दो ही अर्थ दिए गए हैं। संक्षेप के लिए कहीं-कहीं पर 'करना' के लिए ० (शून्य) दिया गया है।

५. संक्षेप के लिए निम्नलिखित संकेतों का प्रयोग किया गया है: — प० = परस्मैपदी । आ० = आत्मनेपदी । उ० = उभयपदी । १ = म्वादिगण । २ = अदादिगण । ३ = जुहोत्यादिगण । ४ = दिवादिगण । ५ = स्वादिगण । ६ = तुदादिगण । ७ = रुधादिगण । ८ = तनादिगण । १० = चुरादिगण । ११ = कण्डवादिगण ।

द. लङ्, लुङ् और लङ् में अ या आ शुद्ध धातु से ही पहले लगता है, उपसर्ग से पूर्व कभी नहीं। अतः उपसर्गयुक्त धातुओं में लङ् आदि में धातु से पहले अ या आ लगाकर उपसर्ग से मिलावें। सन्धिकार्य प्राप्त हो तो उसे भी करें। स्वर आदिवाली

लोट् लर लिट् लुट अर्थ लट् धातु अष् (१० उ०, पाप करना) अधयति-ते अधयांचकार अधयिता अधयिष्यति अधयतु अङ्कयति-ते अङ्कयांचकार अङ्कयिता अङ्कयिष्यति अङ्कयतु अङक् (१० उ०, चिह्न०) अञ्जिता अञ्जिष्यति अनक्ति अनक्तु अझ् (७ प०, स्वच्छ०) आनञ्ज अरिता अटिष्यति अट् (१ प०, घूमना) अरति अरतु आट अतिष्यति अत् (१ प०, सदा घूमना) अतित अतिता अतुत् आत अद् (२ प॰, खाना) अत्ति आद, जघास अत्ता अत्स्यति अत्तु अनित अनिता अनिष्यति अन् (२ प०, जीवित रहना)प्र + अनिति आन अयु (१ आ०, जाना) परा + अयते अयांचक्रे अयिता अयिष्यते अयताम् अर्चति आनर्च अर्चिता अचिष्यति अर्चत अर्च (१ प०, पूजना) अर्ज (१ प०, संग्रह्०) अर्जित अर्जत आनर्ज अजिता अर्जिष्यति अर्ह (१ प०, योग्य होना) अहीत आनर्ह अहिंता अर्हिष्यति अहंत अव् (१ प०, रक्षा०) अवति अविता अविष्यति आव अवतु अश् (५ आ०, व्याप्त०) अश्नुते आनशे अशिता अशिष्यते अश्नुताम् अश् (९ प०, खाना) अशिता अशिष्यति अश्नाति आश अश्नातु अस् (२ प०, होना) अस्ति वभृव भविष्यति भविता अस्तु अस् (४ प०, फेंकना) अस्यति असिष्यति आस असिता अस्यतु असू (११ प०, द्रोह०) असूयांचकार असूयिता असूयिष्यति असूयतु असूयति आन्दोल (१० उ०, हिलना)अन्दोल-अन्दोलयां-आन्दोल- आन्दोलयि- अन्दोल-यति यिता प्यति चकार यतु आप् (५ प०, पाना) आप्नोति आप आप्स्यति आप्नोत आप्ता आप् (१० उ०, पहुँचना) आपयति-ते आपयांचकार आपयिता आपयित आपयत आस् (२ आ०, बैठना) आस्ते आसांचके आसिता आसिष्यते आस्ताम् इ (२ प०, जाना) एति एष्यति इयाय एता एत् इ(अधि +,२आ०, पढ्ना)अधीते अधिजगे अध्येता अध्येष्यते अधीताम इष् (४ प०, जाना)अनु + इष्यति इयेष एषिता एषिष्यति इष्यत इष् (६ प०, चाहना) इच्छति एषिष्यति इयेष एषिता इच्छतु ईक्ष (१ आ०, देखना) ईक्षांचके ईक्षिष्यते ईक्षिता ईक्षताम् ईरु (१० उ०, प्रेरणा०)प्र + ईरयति-ते ईरयांचकार ईरियता ईरयिष्यति ईरयत ईर्घ्य (१ प०, ईर्घ्या०) ईर्धित ईर्ष्योचकार ईध्यिता ईर्ष्यिष्यति ईर्घत ईह् (१ आ०, चाहना) ईहते ईहांचक्रे ईहिता ईहिष्यते ईहताम् CC-O. <u>Dr. Rappdey Tripathi Callection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha</u> उण्हा (६ प॰, छोड़ना) उण्हाति उण्हाचकार उण्हाता उण्हाता

ळङ्	विधिलिङ्	आशीर्छिङ्	लु ङ्	लङ्	णिच्	कर्मवाच्य
आघयत्	अघयेत्	अध्यात्	आजिघत्	आघयिष्यत्	अघयति	अध्यते
आङ्कयत्	अङ्कयेत्	अङ्क्यात्	आञ्चिकत्	आङ्कयिष्यत्	अङ्कयति	अङ्क्यते
आनक्	अञ्ज्यात्	अज्यात्	आञ्जीत्	आञ्जिष्यत्	आञ्जयति	अज्यते
आटत्	अटेत्	अट्यात्		आरिष्यत्	आटयति	
आतत्	अतेत्	अत्यात्	आतीत्	आतिष्यत्	आतयति	
	अद्यात् ं	अद्यात्	अघसत्	आत्स्यत्	आदयदि	
आनत्	अन्यात्	अन्यात्	आनीत्		आनयति	
आयत	अयेत	अयिषीष्ट	आयिष्ट		आययते	
आर्चत्		अर्च्यात्	आचींत्		अर्चयति	
	अर्जेत्	अर्ज्यात्		आर्जिध्यत्		
आईत्	अहेत्	अर्ह्यात्	आहींत्		अईयति	
आवत्	अवेत्	अव्यात्	आवीत्		आवयति	
	अश्नुवीत	अহািषীष्ट	आহিছে	आशिष्यत		
	अश्नीयात्		आशीत्	आशिष्यत	आशयति	
	स्यात्	भूयात्	अभृत्		भावयति	
	अस्येत्	अस्यात्	आस्रात्	Contract of the Contract of th	आसयति	
आस्यत्	अस्येत्	अस्यात्	आस्यीत्			
	आन्दालयत्	आन्दोल्यात्	आन्दुदालत	र् आन्दालाय- ष्यत्	लयति	आन्दाल्यत
ल्यत्						
आप्नोत्	आप्नुयात्	आप्यात्	आपत्	आप्स्यत्	आपयति	
आपयत्	आपयेत्	आप्यात्	आपिपत्	आपयिष्यत्	आपयति	आप्यत
आस्त	आसीत	आसिषीष्ट	आसिष्ट	आसिष्यत	आसयति	आस्यते
ऐत्	इयात्	ईयात्	अगात्	ऐप्यत्	गमयति	ईयते
अध्यैत	अधीयीत	अध्येषीष्ट	अध्यैष्ट	अध्यैष्यत	अध्यापयरि	ते अधीयते
ऐष्यत्	इध्येत्	इष्यात्	ऐषीत्	ऐषिष्यत्	एषयति	इष्यते
ऐच्छत्		इष्यात्	ऐषीत्	ऐषिष्यत्	एषयति	इ्ष्यते
ऐक्षत	ईक्षेत	ईक्षिषीष्ट	ऐक्षिष्ट	ऐक्षिष्यत	ईक्षयति	ईक्ष्यते
ऐरयत्	ईरयेत्	ईर्यात्	ऐरिरत्	ऐर्याययत्	ई्रयति	ईर्यते
ऐर्ध्वत्	ईर्धेत्	ईर्प्यात्	ऐर्धीत्	ऐर्ध्यिष्यत्	ईर्ध्ययति	ईर्घ्यते
ऐहत	ईहेत	ईहिषीष्ट	ऐहिष्ट	ऐहिप्यत	र्द्दयति	र्द्द्यते
				2	् उज्झयति Siddhanta (उण्झ्यते eGangotri Gyaan Kosha

अर्थ लिय् लोट् लट् लुर् धातु लर् उन्दांचकार उन्दिता उन्दिष्यति उन्द् (७ प०, भिगोना) उनित उनत्तु ऊहिता **अहिप्यते अहां चक्र** ऊहते **अह** (१ आ०, तर्ब०) ऊहताम् ऋच्छिप्यति ऋच्छ (६ प०, जाना) ऋच्छति आनच्छ ऋच्छिता ऋच्छत् एज् (१ प०, काँपना) एजिता एजिध्यति एजात एजांचकार एजतु एधिष्यते एध् (१ आ०, बढ़ना) एधते एधिता एधांचक्र एधताम् कण्ड्यति-ते कण्ड्यांचकार कण्ड्यिता कण्ड्यित कण्ड्यतु कण्डू (११ उ०, खुजाना) कथ् (१० उ०, कहना) प० कथयति कथयांचकार कथायता कथायण्यति कथयतु कथयते कथयिता कथयिष्यते कथयांचके आ० कथयताम् कम् (१ आ०, चाहना) कामयते कामयांचके कार्मायता कार्मायष्यते कामयताम् कम्प् (१ आ०, काँपना) कम्पते चक्रमपे कम्पिता कम्पिष्यते कम्पताम् कांक्ष् (१ प०, चाहना) कांक्षति चकांक्ष कांक्षिता कांक्षिप्यति कांक्षतु काश् (१ आ०, चमकना) काशते -काशिता काशिष्यते चकारो काशताम् कास् (१ आ०, खाँसना) कासते कासांचक्रे कासिष्यते कासिता कासताम् कित् (१ प०, चिकित्सा०) चिकित्सति चिकित्सां-चिकित्सिता चिकित्सिष्यते चिकित्सतु

चकार कील् (१ प०, गाड़ना) 'कीलति चिकील कीलिता कीलिष्यति कीलतु कु (२ प०, गूँजना) कौति कौतु चुकाव कोता कोप्यति कुञ्च (१ प०, कम होना) कुञ्जति चुकुञ्च कुञ्चिता कुञ्चिप्यति बु ञ्चतु बुत्स् (१० आ०, दोष देना) कुत्सयते कुत्सयं चक्रे कुत्सयिता कुत्सयिष्यते कुत्सयताम् कुप् (४ प०, क्रोध०) कुप्यति चुकोप कोपिता कोपिष्यति वु.प्यतु कुर्द् (१ आ०, कृदना) कुर्दते चक्दे कृर्दिता कुर्दिष्यते. कूर्दताम् कृज् (१ प०, चूँ-चूँ करना) कृजति कृ जिता चुकुज कृजिप्यति कृजतु क्ट (८ उ०, करना) प० करोति चकार कर्ता करिष्यति करोत् क्रस्ते चक्रे आ० कर्ता करिष्यते कुरुताम् कृत् (६ प०, काटना) कतिता कुन्तति चकर्त कर्तिष्यति कृन्ततु कृप् (१ आ०,समर्थ होना) कल्पते कल्पिता चक्लपे कल्पिष्यते कल्पताम् कृप् (१ प०, जोतना) कर्पति वकर्ष कर्षा कर्ध्यति कर्पतु कृ (६ प०, बखेरना) किरति चकार करिता करिष्यति किरतु कृत् (१० उ०, नाम लेना) कीर्तयिति-ते कीर्तयांचकार कीर्तयिता कीर्तियिष्यति कीर्तयतु ऋन्द् (१ प०, रोना) क्रन्दति चक्रन्द क्रन्दिता कन्दिप्यति ऋन्दतु

त्रम् (१ प० चलना) CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection मुखिवावां सिक्षिष्ठ). Digitizकस्मिक्शाऽidकस्मिक्ष्मिक्ष्मिक्ष्मिक्ष्मिक्ष्मिक्ष

विधिलिङ् आशीर्लंड लुङ णिच कर्म० लङ् औनत् औन्दीत् उन्द्यात् उद्यात् औन्दिष्यत् उन्दयति उद्यते औहत ऊहेत ऊहिषीष्ट औहिष्ट औहिष्यत ऊहयति ऊह्यते आर्च्धत् ऋच्छेत ऋच्छयात् आर्च्छीत आर्च्छिष्यत ऋच्छयति ऋच्छयते एजेत् ऐजत् एज्यात ऐनीत् ऐजिष्यत् एज्यते एजयति ऐधत ऐधेत एधिषीष्ट ऐधिष्ट ऐधिष्यत एधयति एध्यते अकण्ड्यत् कण्ड्येत् अकण्ड्रयीत कण्ड्य्यात् अकण्डूयिष्यत् कण्डूययति कण्ड्रय्यते कथयेत् अकथयत् कथ्यात् अकथयिष्यत् अचकथत कथयति कथ्यते कथयेत अकथयत कथयिषीप्र अकथयिष्यत अचकथत " कामयेत कामयिषीष्ट अकामयिष्यत कामयति अकासयत अचीकमत काम्यते कम्पेत क म्पिषीष्ट अकम्पिष्ट अकम्पिष्यत अकम्पत कम्पयति कम्प्यते कांक्षेत् अकांक्षत् अकांक्षीत अकांक्षिष्यत कांक्ष्यात कांक्षयति कांध्यते काशेत काशिषीष्ट अकाशिष्यत अका शिष्ट अकाशत काशयति काश्यते कासेत कासिषीष्ट अका सिष्ट अकासिष्यत अकासत कास्यते कासयति अचिकि-अचिकि-चिकित्सेत चिकित्स्यात अचिकि-चिकित्स-चिकित्स्यते त्सीत त्सिष्यत् यति त्सत् अकीलत् कीलेत अकीलीत् अकीलिष्यत् कील्यात कीलयति कील्यते अकौत् अकौषीत अकोष्यत कृयते क्यात् कावयति क्यात् कुञ्चेत् अकुञ्चीत् 'अकुञ्चिष्यत कुञ्चयति कुच्यते अकुञ्चत् कुच्यात् अकुत्सयिप्यत **वृ**त्सयेत कुत्सयिषीष्ट अचुकुत्सत कुत्सयते कुत्स्यते अकुत्सयत कोपयति कुप्यते अकोपिष्यत कप्येत अकुपत् अकुप्यत् क्रप्यात् कुर्द्यते अकृदिष्ट कुर्दयति कृदिंषीष्ट अकुर्दत कुर्देत अकृदिप्यत अकृजिष्यत अकुजीत् **कृ**ज्यते कुजयति कुजेत् कुज्यात् अकृजत् अकार्षीत अकरिष्यत **ब्रि.यते** क्यांत कारयति ि्रयात् अकरोत अकरिष्यत कुर्वीत क्षीष्ट अकृत अकुरुत " 33 कर्तयति अकतिष्यत् कृत्यते अकर्तीत कुन्तेत् क्रत्यात अकृन्तत् अकल्पिष्यत् क्लप्यते कल्पयति कल्पिषीष्ट कल्पेत अक्लपत् अकल्पत कृष्यते कर्षयति अकार्शीत् अकर्ध्यत कर्षेत् अकर्षत् कृष्यात् कीर्यते अकारीत् कारयति कीर्यात् अकरिष्यत् किरेत् अकिरत अचिकीर्तत् अकीर्तियिष्यत् कीर्दयति कीर्त्यवे कीर्त्यात् कीर्तयेत अक्रन्दिप्यत **क**न्दयति क्रन्दाते अक्रन्दीत कन्देत् कन्दात अक्रन्दत् CC-अक्रा मत् mdह्य मेल् athi लिलायुन on at Saral (CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लोट् लट् लुर् लिट् अर्थ लर् धातु क्रेष्यति कीणातु क्रेता क्री (९उ०,खरीदना)प०- क्रीणाति चिक्राय क्रेप्यते क्रीणीताम् चिकिये क्रेता क्रीणीते आ०-क्रीडिष्यति क्रीडत क्रीडिता चिक्रीड क्रीडति क्रीड् (१ प०, खेलना) कुध्यतु क्रोत्स्यति कोद्धा चुक्रोध **क्रुध्य**ति कुष् (४ प०, कुद्ध होना) क्रोक्ष्यति क्रोशतु चुक्रोश कोष्टा क्रोशति कुश् (१ प०, रोना) क्लिमध्यति क्लाम्यतु क्लिमता चक्लाम क्लाम्यति क्लम् (४ प०, थकना) क्लेदिध्यति क्लिचतु क्लेदिता क्लिट् (४प०, गीला होना) विलयति चिक्लेद क्लेशिष्यते क्रिश्यताम् क्लेशिता चिक्तिशे क्लिश् (४आ०, खिन्न होना)क्लिश्यते क्लेशिष्यति क्रिश्नातु चिक्लेश क्लेशिता क्लिश् (९ प०, दुःख देना) क्लिश्नाति क्षणिष्यति क्रणिता कणत् क्वण् (१ प०,झनझन करना)कणित चकाण क्षथिष्यति कथतु कथिता क्रथति चकाथ क्षथ् (१ प०, पकाना) क्षमिष्यते चक्षमे क्षमिता क्षमताम् क्षम् (१ आ०, क्षमा करना)क्षमते क्षमिता क्षमिष्यति क्षाम्यत क्षम् (४ प॰, क्षमा करना) क्षाम्यति चक्षाम क्षरिष्यति क्षरत क्षरिता क्षरति चक्षार क्षर् (१ प०, बहना) क्षल् (१० उ०, घोना) प्र + क्षालयित-ते क्षालयांचकार क्षालयिता क्षालियपित क्षाल्यतु क्षेष्यति क्षयतु क्षेता क्षि (१ प०, नष्ट होना) चिक्षाय क्षयति क्षेप्स्यति क्षिपतु क्षिपति-ते चिक्षेप क्षेता क्षिप् (६ उ०, फंकना) क्षीबिष्यते क्षीवताम् क्षीब् (१ आ०, मत्त होना) क्षीवते क्षीबिता ं चिक्षीबे क्षोत्ता क्षोत्स्यति क्षणत्त चुक्षोद क्षुद् (७ उ०, पीसना) क्षणित क्षोभताम क्षोभिष्यते क्षोभते चुक्षुभे क्षोभिता क्षुम् (१आ०, क्षुब्ध होना) क्षास्यति चक्षौ क्षायतु क्षायति क्षाता क्षे (१ प०, क्षीण होना) क्णोत क्ष्णविष्यति क्ष्णौति क्ष्णविता चुक्ष्णाव क्ष्यु (२ प०, तेज करना) खण्डयति-ते खण्डयांचकार खण्डयिता खण्डयिष्यति खण्डयतु खण्ड् (१० उ०, तोड़ना) खनिता खनति-ते चखान खनिष्यति खन् (१ उ०, खोदना) खनतु खादिष्यति खाद् (१ प०, खाना) खादति खादिता खादतु चखाद खिद् (४ आ०, खिन्न होना)खिद्यते विद्यताम् चिखिदे खेत्स्यते खेत्ता चिखेल खेलिष्यति खेल् (१ प०, खेलना) खेलति खेलिता खेलतु गण् (१० उ०, गिनना) गणयति-ते गणयांचकार गणयिता गणयिष्यति गणयतु गद् (१ प०, कइना) नि + गदति गदिता गदिष्यति जगाद गदतु CC-O. Dr. मुक्नू (एक् Jripathi) Ollection कर्डिक्निं (Cक्निने भ Digitized हम् Siddhan किन्द्रिक्ति otri Gypan Kosha

	लङ् वि	विधिलिङ्	आशीर्छिङ्	लुङ्	लङ्	णिच्	कर्म०	
	अक्रीणात्	क्रीणीयात्	क्रीयात्	अक्रैषीत्	अक्रेष्यत्	क्रापयति-ते	क्रीयते	
	अक्रीणीत	क्रीणीत	केषीष्ट	अक्रेष्ट	अक्रेष्यत	,,	,,	
	अक्रीडत्	क्रीडेत्	क्रीड्यात् ः	अक्रीडीत्	अक्रीडिध्यत्	भीडयति	क्रीड्यते	
	अकुध्यत्	कु ध्येत्	क्रुध्यात् ः	अक्रुधत्	अक्रोत्स्यत्	क्रोधयति	कु ध्यते	
	अक्रोशत्	क्रोशेत्	ब्रु श्यात्		अक्रोक्ष्यत्	क्रोशयति	क्रु स्यते	
	अक्षाम्यत्	क्राम्येत्			अक्रमिष्यत्	क्रमय ति	क्रम्यते	
	अक्लियत्	क्लिये त्			अह्रेदिध्यत्		क्लियते	
2	अक्रिश्यत	क्लिश्येत		अक्लेशिष्ट	अक्लेशिष्यत	ह्रेशयति	क्लिस्यते	
		क्रिस्नीयात्			अक्लेशिष्यत्	"	"	
	अक्षणत्	क्रणेत्			अक्षणिप्यत्	काणयति	कण्यते	
	अक्षथत्	क्षथेत्	कथ्यात्		अक्षथिष्यत्	काथयति	कथ्यत <u>े</u>	
	अक्षमत	क्षमेत	क्षमिषीष्ट	अक्षमिष्ट	अक्षमिष्यत	क्षमयति	क्षम्यते	
	अक्षाम्यत्	क्षाम्येत्	क्षम्यात्	अक्षमत्	अक्षमिष्यत्	- >>	"	
	अक्षरत्	क्षरेत्	क्षर्यात्	अक्षारीत्	अक्षरिष्यत्	क्षारयति	क्षर्यते	
	अक्षाल्यत्	क्षाल्येत्	क्षाल्यात्	अचिक्षरत्	अक्षालियवत्	क्षाल्यति	क्षाल्यते	
	अक्षयत्	क्षयेत्	क्षीयात्	अक्षैषीत्	अक्षेष्यत्	क्षाययति	क्षीयते	
	अक्षिपत्	क्षिपेत्	क्षिप्यात्	अक्षैत्सीत्	अक्षेप्स्यत्	क्षेपयति	क्षिप्यते	
1	अक्षीबत	क्षीवेत	क्षीविषीष्ट	अ क्षीविष्ट	अक्षीविष्यत	क्षीवयति	क्षीब्यते	
	अक्षुणत्	क्षुन्द्यात्	क्षुद्यात्	अक्षुदत्	अक्षोत्स्यत्	क्षोदयति	क्षुचते ं	
	अक्षोभत	क्षोभेत	क्षोभिषीष्ट	अक्षुभत	अक्षोभिष्यत	क्षोभयति	क्षुभ्यते	
	अक्षायत्	क्षायेत्	क्षायात्	अक्षासीत्	अक्षास्यत्	क्षपयति	क्षायते	
	अक्ष्णौत्	क्ष्णुयात्	क्ष्ण्यात्	अक्ष्णविष्यत	(अक्ष्णाचीत्	ध्णावयति	क्णूयते	
	अखण्डयत्	खण्डयेत्	खण्डयात	् अचखण्डत्	अखण्डयिष्यत	(खण्डयति	खण्ड्यते	
	अखनत्	खनेत्	खन्यात्	अखनीत्	अख्निष्यत्	खानयति	खायते	
	अखादत्	खादेत्	खाद्यात्	अखादीत्	अखादिप्यत्	खादयति	खाद्यते	
	अखिद्यत	खिद्येत	खित्सीष्ट	अखित्त	अखेत्स्यत	खेदयति	खिद्यते	
	अखेलत्	खेलेत्	खेल्यात्	अखेलीत्	अखेलिष्यत्	खेलयति	खेल्यते	
	अगणयत्	गणयेत्	गण्यात्	अजीगणत्	अगणयिष्यत्	गणयति	गण्यते	
	अगदत्	गदेत्	गद्यात्	अगादीत्	अगदिष्यत्	गादयति	गद्यते	
	अगच्छत्	गच्छेत्	गम्यात्	अगमत्	अगमिष्यत्	गमयति	गम्यतं	
CC-	O. Dr. Ramo	dev Tripathi (Collection at S	Sarai(CSDS).	Digitized By Si	ddhanta eGa	ngotri Gyaan K	Cosha

लोट लर् लिट् अर्थ लुट् लट् धातु गर्निष्यति गर्नत गर्जिता जगर्ज गर्जति गर्ज (१ प०, गरजना) गईताम् गर्हिष्यते गर्हिता जगहें गर्ह् (१ आ०,निन्दा करना)गईते ")गईयति-ते गईयांचकार गईियता गईयतु गईयिष्यति गह (१० उ०, " गवेष् (१० उ०, खोजना) गवेषयति गवेषयांचकार गवेषयिता गवेषयिष्यति गवेषयत गाहिता गाहिष्यते गाहताम् नगाहे गाहते गाहु (१ आ०, घुसना) गुञ्जिता गुञ्जिष्यति गुझतु गुञ्ज् (१ प०, गूँजना) गुञ्जति ज्गुझ गुण्ट् (१०उ०,घूँघट०)अव + गुण्ठयति गुण्ठयांचकार गुण्ठयिता गुण्ठियप्यति गुण्ठयतु गोपिता गोपिष्यति गोपायतु गोपायति जुगोप गुप् (१ प०, रक्षा करना) गुप् (१ आ०,निन्दा करना) जुगुप्सते जुगुप्सिष्यते जुगुप्सिता जुगुप्सताम् जुगुप्सांचक्रे गुम्फिता गुम्फिष्यति गुम्फू (६ प०, गूँथना) गुम्फति जुगुम्फ गुम्फतु गुह् (१ उ०, छिपाना) गृहिष्यति गृहति-ते जुगृह गृहिता गृहतु गॄ (६ प०, निगलना) गरिष्यति गिरति गरिता गिरत जगार ग (९ प०, कहना) गृणाति गृणातु " ,, गायति जगौ गै (१ प०, गाना) गास्यति गायतु गाता ग्रन्थ् (९ प०, संग्रह०) ग्रथ्नाति ग्रन्थिता ग्रन्थिष्यति जग्रन्थ ग्रथ्नातु प्रम् (१ आ०, खाना) ग्रसते जग्रसे ग्रसिता ग्रसिष्यते **यसताम्** प्रह (९ उ०, लेना) प०-गृह्वाति ग्रहीता ग्रहीष्यति जग्राह गृह्वातु आ ॰ गृह्णीते जगृहे ग्रहीता ग्रहीष्यते गृह्णीताम् ग्लै (१ प०, थकना) ग्लायति जग्लौ ग्लाता ग्लास्यति ग्लायत घट् (१ आ०, लगना) घटते जघटे घटिता घटिष्यते घटताम् घुप् (१० उ०, घोपणा०) घोषयति घोषयांचकार घोषयिता घोषयिष्यति घोषयतु घूर्णते घूर्ण् (१ आ०, घूमना) घूणिष्यते जुघूर्णे घूणिता घूर्णताम् घृर्णित घूर्ण (६ प०, घूमना) जुघूर्ण घूणिता घूणिष्यति घूर्णतु घा (१ प०, सूँघना) जिघ्रति नघौ जिघ्रत घाता वास्यति चकास् (२ प०, चमकना) चकास्ति चकासांचकार चकासिता चकासिष्यति चकास्त चक्ष् (२ आ०, कहना)आ + आचष्टे आचचक्षे आख्याता आख्यास्यति आच्छाम् चम् (आ + १प०, पीना) आचामति आचचाम आचमिता आचमिष्यति आचामतु चर् (१ प०, चलना) चरति चचार चरिता चरिष्यति चरतु चर्व (१ प०, चबाना) चर्वति चचर्व चिंता चर्विष्यति चल (१ प॰, हिल्मा) चलति चुचाल CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized हेल्डियोती dhamae स्थानी otri उल्लेख Kosha

	लङ् वि	धिलिङ	आशीर्छिङ	् लुङ्	लङ्	णिच्	कमें ०
	अगर्जत्	गर्जेत्	गर्ज्यात्		अगर्जिध्यत्	गर्जयति	गर्ज्यते
	अगईत	गर्हेत	गहिंषीष्ट	अगर्हिष्ट	अगर्हिष्यत	गईयति	गर्ह्यते
	अंगईयत्	गईयेत्	गर्ह्यात्	अजगईत्	अगईयिष्यत्	,,	,,
	अगवेषयत्	गवेषयेत्	गवेष्यात्	अजगवेषत्			गवेष्यते
	अगाहत	गाहेत	गाहिषीष्ट	अगाहिष्ट	अगाहिष्यत	गाहयति	गाह्यते
	अगुञ्जत्		गुञ्ज्यात्	अगुञ्जीत्		गुञ्जयति	गुञ्ज्यते
	अगुण्ठयत्		गुण्टयात्				गुण्ट्यते
	अगोपायत्		गुप्यात्	अगौप्सीत्		गोपयति	गुप्यते
	अजुगुप्सत	जुगुप्सेत		अजुगुप्सिष्ट			जुगुप्स्यते
8	अगुम्फत्	गुम्फेत्	गुपयात्	अगुम्फीत्		गुम्फयति	गुपयते
	अगूहत्	गूहेत्	गुह्यात्	अगूहीत्	अगृहिष्यत्	गृहयति	गुह्यते
	अगिरत्	गिरेत्	गीर्यात्	अगारीत्	अगरिष्यत्	गारयति	गीर्यते
	अगृणात्	गृणीयात	,,,	;,	,,	. ,,	"
	अगायत्	गायेत्	गेयात्	अगासीत्	अगास्यत्	गापयति	गीयते
	अग्रथ्नात्	ग्रथ्नीयात	र् ग्रथ्यात्	अग्रन्थीत्	अग्रन्थिप्यत्	ग्रन्थयति	प्रध्यते
	अग्रसत	ग्रसेत	ग्रसिषीष्ट	अग्रसिष्ट	अग्रसिष्यत	ग्रासयति	ग्रस्यते
	अगृह्णात्	गृह्णीया	त् गृह्यात्	अग्रहीत्	अग्रहीष्यत्	प्राह्यति	गृह्यते
	अगृङ्णीत	गृह्णीत	ग्रहीषीष्ट	अग्रहीष्ट	अग्रहीष्यत	. ,,	,,
	अग्लायत्	ग्लायेत	ग्लायात्	अग्लासीत्	अग्लास्यत्	ग्लापयति	ग्लायते
	अघटत	घटेत	घटिषीष्ट	अघटिए	अघटिष्यत	घटयति	घट्यते
	अघोषयत्	घोषयेत	् घोष्यात्	अजृधुषत्	अघोषयिष्यत्	घोषयति	घोप्यते
	अघूर्णत	घूर्णेत	घृणिषीष्ट	अघूर्णिष्ट	अघूर्णिष्यत	घूर्णयति	घूर्ण्ते
	अघूर्णत्	घूर्णेत्	घूर्ण्यात्	अघूर्णीत्	अघृणिंध्यत्	,,	,,
	अजिघत्	जिघेत्	घेयात्	अघात्	अघास्यत्	घापयति	घायते
	अचकात्	चकास्य	ात् चकास्याव	त् अचकासीत	(अचकासिष्यत		
	आचष्ट	आचक्षी	त आंख्याया	त् आख्यत्	आख्यास्यत्	ख्यापयति	ख्यायते
	आचामत्	आचारे	त् आचम्या	त् आचमीत्	आचिमध्यत्	आचामयति	ा आचम्यते
	अचरत्	चरेत्	चर्यात्	अचारीत्	अचरिष्यत्	चारयति	चर्यते
	अचर्वत्	चर्देत्	चर्चात्	अचर्वीत्	अचर्विष्यत्	चर्वयति	चर्व्यते
	अचलत्	चलेत्	चल्यात्	अचालीत्	. अचिलप्यत्	चलयति	चल्यते
CC-	O. Dr. Ramd	ev Tripathi C	Collection at S	Sarai(CSDS). I	Digitized By Sido	lhanta eGang	otri Gyaan Kosha

लोट् अर्थ लिट् लुट् लट् धातु लट् चिनोतु चेष्यति चि (५ उ०, चुनना) प०-चिनोति चिचाय चेता चेता चेष्यते चिनुताम् आं०-चिन्ते चिच्ये चेतिता चेतिष्यति चेततु चित (१ प०, समझना) चेतित चिचेत चेतयिता चेतयिष्यते चेतयताम चित् (१० आ०, सोचना) चेतयते चेतयांचके चित्र् (१०उ०,चित्र बनाना) चित्रयति चित्रयांचकार चित्रयिता चित्रयिष्यति चित्रयतु चिन्त् (१० उ०, सोचना) चिन्तयति चिन्तयांचकार चिन्तयिता चिन्तयिष्यति चिन्तयतु आ०- —ते —चक्रे <u>—ते</u> चिह् (१० उ०,चिह्न लगाना)चिह्नयति चिह्नयांचकार चिह्नयिता चिह्नयिपयित चिह्नयतु चुद् (१० उ०, प्रेरणा देना) चोदयति चोदयांचकार चोदयिता चोदयिष्यते चुम्य (१ प०, चूमना) चुम्यति चुचुम्ब चुम्बिता चुम्बिष्यति चोरयति चोरयांचकार चोरयिता चोरयिष्यति चुर् (१० उ०, चुराना) चोरयतु आ०- -ते —चक्रे —ते —ताम ,, चूर्ण (१० उ०, चूर करना) चूर्णयति चूर्णयांचकार चूर्णयता चूर्णयायति चूर्णयतु चूषति चुन्वूष चूष् (१ प०, चूसना) चूषिता चूषिष्यति चूषतु चेष्ट् (१ आ०, चेष्टा करना) चेष्टते चेष्ठिष्यते चेष्टिता चेष्टताम् छद् (१० उ०, दकना)आ + छादयति छादयांचकार छादयिता छादयिष्यति छादयतु छिद् (७ उ०, काटना) छिनत्ति चिच्छेद छेत्ता छेत्स्यति छिनत्त छुर् (६ प०, काटना) छ्रति चुच्छोर छुरिता छुरिप्यति छ्रतु छो (४ प०, काटना) छचति चच्छौ छास्यति छाता छयतु जन् (४ आ०, पैदा होना) जायते जज्ञे जनिता जनिष्यते जायताम जप् (१ प०, जपना) जपति जजाप जपिता जिपध्यति जपत् जल्प् (१ प०, बात करना) जल्पति जजल्प जिंदपता जिंदपयाति जल्पतु जागृ (२ प०, जागना) जागतिं जजागार जागरिता जागरिष्यति जागतु जि (१ प०, जीतना) जयति जिगाय जेता जेष्य ति जयतु जीव् (१ प०, जीना) जीवति जिजीव जीविता जीविष्यति जीवत जुप् (१० उ०, प्रसन्न होना) जोषयति जोषयांचकार जोषयिता जोषियध्यति जोषयत जुम्म् (१ आ०, जॅमाई लेना) जुम्भते जज़म्भे ज्मिता ज्मिभयते ज्म्भताम् ज् (४ प०, वृद्ध होना) जीर्यते जरिता जिर्ध्यति जीर्यत ज्ञा (९ उ०, जानना) प०- जानाति जज्ञौ ज्ञास्यति श्चाता जानातु

कमं० णिच विधिलिङ आशीर्लिङ लुङ् लङ् चाययति चीयते अचैषीत चीयात अचेध्यत अचिनोत् चिनुयात् चेषीष्ट अचेष्ट अचेष्यत चिन्वीत अचिन्त चित्यते चेतयति अचेतिष्यत अचेतीत चित्यात अचेतत चेतेत् चेत्रियषीष्ट अचीचित्रत अचेत्रिध्यत चेत्यते अचेतयत चेतयेत अचिचित्रत् अचित्रयिष्यत् चित्रयति चित्र्यते अचित्रयत् चित्रयेत् चित्र्यात चिन्त्यात् अचिचिन्तत् अचिन्तयिष्यत् चिन्तयति चिन्त्यते अचिन्तयत् चिन्तयेत् चिन्तयिषीष्ट —ध्यत -येत —न्तत -यत ,, चिह्नयात् अचिचिह्नत् अचिह्नयिष्यत् चिह्नयति चिह्नयते अचिह्नयत चिह्नयेत चोदयति चोद्यते अचूचुदत् अचोदयिष्यत् अचोदयत चोदयेत चोद्यात चुम्ब्यते अचुम्बीत् अचुम्बिष्यत् चुम्बयति चुम्बेत् चुम्ब्यात् अचुम्बत् चोर्यते चोरयति अचोरयिष्यत चोर्यात् अचूचुरत् चोरयेत अचोरयत् चोरयिषीष्ट -रत —त ,, —त चूर्णयति चूर्ण्यते अचुचूर्णत् अचूर्णियष्यत् चूर्णयेत चुर्ण्यात् अचूर्णयत् अचूषीत् चूध्यते अचूषिष्यत् चूषयति चूष्यात् चूषेत् अचूषत् चेष्टयते चेष्टिषीध्ट अचेष्टिष्ट अचेष्ट्रिध्यत चेष्टयति अचेष्टत चेघ्टेत अचिच्छदत् अच्छादयिष्यत् छादयति छाचते अच्छादयत् छादयेत छाद्यात छिद्यते छेदयति अच्छैत्सीत् अच्छेत्स्यत छिद्यात छिन्द्यात् अच्छिनत् छुर्यते अच्छ्रिष्यत् छोखित अच्छ्रीत् छर्यात् छुरेत् अच्छ्रत् छाययति छायते अच्छास्यत् अच्छात् छ्येत् छायात् अच्छ्यत् जनयति जन्यते अजनिष्ट अजनिष्यत जनिषीष्ट जायेत अजायत जापयति जप्यते अजपीत् अजिपष्यत जपेत जप्यात अजपत् जल्पयति जल्प्यते अजिंदपष्यत् अजल्पीत् जल्पात् जल्पेत् अजल्पत जागर्यते जागरयति अजागरीत अजागरिष्यत जागर्यात जाग्यात अजागः जीयते जापयति अजैषीत अजेष्यत जीयात् जयेत् अजयत अजीविष्यत जीवयति. जीव्यते अजीवीत् जीव्यात् जीवेत अजीवत अजोषयिष्यत् जोषयति जोष्यते अज्जुषत् अजोषयत् जोषयेत् जोध्यात् अज़म्भिष्यत जुम्भ्यते जुम्भयति ज्मिषीष्ट अज्भिष्ट ज्म्भेत अज़म्भत जीर्यते अजरिष्यत जरयति अजरीत जीर्यात नीर्येत् अनीर्यत ज्ञायते ज्ञापयति अज्ञासीत् अज्ञास्यत् अजानात् जानीयात् ज्ञेयात् ज्ञासीष्ट अज्ञास्यत अज्ञास्त जानीत ,, " अजानीत

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लोट् लिट् अथं लुट् लर् धातु लट् ज्ञापयांचकार ज्ञापयिता ज्ञापयिष्यति ज्ञापयतु ज्ञा(१०उ०,आज्ञादेना)आ + ज्ञापयति ज्बरिता ज्वरिष्यति ज्वरत् ज्वर् (१ प०, रुग्ण होना) जज्बार ज्वलिता ज्वलिप्यति उवलत् ज्वल (१ प०, जलना) ज्वलति जज्वाल टंकयिता टंकयिष्यति टंकयत् टंक्यांचकार टंक (१०उ०, चिह्न लगाना) टंकयति डियष्यते डियता डिड्ये डयताम् डी (१आ०, उड़ना) उत् + डयते डीयताम् डी (४ आ॰, ,,) उत् + डीयते " ढौकताम् ढौिकता ढौकिष्यते डुढौके ढौक् (१ आ०, पहुँचना) ढौकते तक्षिष्यति तक्ष् (१ पा०, छीलना) तक्षिता तक्षति ततक्ष तक्षतु ताड्यांचकार ताड्यिता ताड्यिष्यति तड् (१० उ०, पीटना) ताडयत् ताडयंति तनोतु तन् (८ उ०, फैलाना) प०-तनोति तनिता तनिष्यति ततान आ०-तन्ते तेने तनिता तनिष्यते तन्ताम् तन्त्रयते तन्त्र (१०आ०, पालन०) तन्त्रयांचक्रे तन्त्रयिता तन्त्रयिष्यते तन्त्रयताम् तप् (१ प०, तपना) तपति तताप तप्स्यति तप्ता तपतु तर्क (१० उ०, सोचना) तर्कयति तर्कयांचकार तर्कयिता तर्कयिष्यति तर्कयत् तर्जयते तर्जियध्यते तर्ज (१०आ०, डाँटना) तर्जयिता तर्जयताम् तर्जयांचक्रे तंस् (१०उ०,सजाना)अव + तंसयति तंसयिष्य ति तंसयांचकार तंसयिता तंसयत तिज् (१आ०, क्षमा करना) तितिक्षते तितिक्षिता तितिक्षिष्यते तितिक्षताम् तितक्षांचक्रे तुद् (६उ०, दुःख देना) तदति-ते ततोद तोत्ता तोत्स्यति तुदतु तुरण् (११प०, जल्दी करना) तुरण्यति त्रणांचकार त्रणिता त्रणिष्यति त्रण्यत् तुल् (१० उ०, तोलना) तोलयति तोलयांचकार तोलयिता तोलयिष्यति तोलयत तुष् (४ प०, तुष्ट होना) तुष्यति त्रतोष तोष्टा तोक्ष्यति तुष्यतु तृप् (४ प०, तृप्त होना) तृप्यति ततर्प तर्पिष्यति ਰਧਿੰਗ तृप्यतु तृष् (४ प०, प्यासा होना) तृष्यति ततर्ष तर्धिष्य ति तर्षिता तृष्यतु तु (१ प०, तैरना) तरति तरिता तरिष्यति ततार तरतु त्यन् (१ प०, छोड़ना) त्यजति तत्याज त्यक्ष्यति त्यजतु त्यक्ता त्रप् (१ आ०, लजाना) त्रपते त्रेपे त्रपिता त्रपिष्यते त्रपताम् त्रस् (४ प०, डरना) त्रस्यति व्यक्तिता तत्रास त्रसिष्यति त्रस्यत त्रुट् (६ प०, टूटना) त्रुटति तुत्रोट त्र्टिता त्रटिष्यति त्रुटतु CC-O कुर् (श्रेन्क्सर प्रांत्रोखना) llectiक्री ट्रफ्तिम्बा क्रिस्मिन्द्रिं giti क्रीटियितीं प्रतिप्रिति प्रांत्री स्थानिक क्रिक्सि क्रिक्स क्रिक्स क्रिक्सि क्रिक्सि क्रिक्सि क्रिक्सि क्रिक्सि क्रिक्स क्रिक्स क

	लङ् ि	वेधिळिङ्	आशीर्छिड	्	लङ्	णिच्	कर्म०
	अज्ञापयत्	ज्ञापयेत्		-	अज्ञापियप्यत्	ज्ञापयति 🎐	ज्ञाप्यते
	अज्वरत्	ज्वरेत्		अज्वारीत्	अज्वरिष्यत्		ज्वर्यते
	अज्वलत्	ज्वलेत्		अज्वालीत्	अज्वलिष्यत्		
1	अटंकयत्			अटटंकत्	अटंकयिष्यत्		टंक्यत <u>े</u>
	अडयत	डयेत	डियपीष्ट	अडियष्ट	अडयिष्यत	डाययति	डीयते
	अडीयत	डीयेत	"	"	"	,,,	"
	अढौकत	ढौकेत	ढौकिषीष्ट	अदौकिष्ट	अदौकिष्यत	ढौकयति	ढोक्यते
	अतक्षत्	तक्षेत्	तक्ष्यात्	अतक्षीत्		तक्षयति	तक्ष्यते ताड्यते
	अताडयत्		ताड्यांत्	अतीतडत्	अताडियण्यत्		ताड्यत तन्यते
	अतनोत्		तन्यात्	अतानीत्	अतनिष्यत्	तानयति	तन्यत
	अतनुत	तन्चीत तन्त्रयेत	तनिषीष्ट तन्त्रयिषीष्ट	अतनिष्ट अततन्त्रत	अतनिष्यत अतन्त्रयिष्यत	" तन्त्रयति	" तन्त्र्यंते
	अतन्त्रयत			अताप्सीत्		तापयति	तप्यते
	अतपत्	तपेत्			अतप्स्यत्		
	अतर्कयत्		, ,	अततर्कत्	अतर्कयिष्यत्		तर्क ्यते
	अतर्जत्	तर्जेत्	तर्ज्यात् ं	अतर्जीत्	अतर्जिष्यत्	तर्जयति	तर्ज्यते
	अतर्जयत	तर्जयेत	तर्जियषीष्ट	अततर्जत	अतर्जयिष्यत	"	"
	अतंसयत्	तंसयेत्	तंस्यात्	अततंसत्	अतंसयिष्यत्	तंसयति	तंस्यते
	अतितिक्षत	त तितिक्षेत	तितिक्षिषीष्ट	अतितिक्षिष्ट	अतितिक्षिष्यत	तेजयति	तितिक्ष्यते
	अतुदत्	तुदेत्	तुद्यात्	अतौत्सीत्	अतोत्स्यत्	तोदयति	तुद्यते
	अतुरण्यत्	तुरण्येत्	<u>तु</u> रण्यात्	अतुरणीत्	अतुरणिष्यत्	तुरणयति	तुरण्यते
	अतोलयत			अतृतुलत्	अतोलयिष्यत्	तोलयति	तोल्यते
	अतुष्यत्	तुष्येत्		अतुषत्	अतोक्ष्यत्	तोष्यति	तुष्यते
	अतृप्यत्	तृप्येत्	तृप्यात्	अतृपत्	अतर्पिध्यत्	तर्पयति	तृप्यते
	अतृष्यत्	तृष्येत्	तृष्यात्	अतृषत्	अतर्षिष्यत्	तर्षयति	तृष्यते
	अतरत्	तरेत्	तीर्यात्	अतारीत्	अतरिष्यत्	तारयति	तीर्यते
	अत्यजत्	त्यजेत्	त्यज्यात्	अत्याक्षीत्	अत्यक्ष्यत्	त्याजयित	त त्यज्यते
	अत्रपत	त्रपेत	त्रपिषीष्ट	अत्रपिष्ट	अत्रपिष्यत	त्रपयति	त्रप्यते
	अत्रस्यत्	त्रस्येत्	त्रस्यात्	अत्रसीत्	अत्रसिष्यत्	त्रासयति	त्रस्यते
	अतुरत्	त्रुटेत्	त्रुट्यात्	अत्रुटीत्	अत्रुटिष्यत्	त्रोटयति	त्रुट्यते
	अत्रोटयर			! अतुत्रुटत	अत्रोटियप्यत		त्रोट्यते
CC-C	O. Dr. Ramo	dev Tripathi C	Collection at Sa	rai(CSDS). D	igitized By Siddh	nanta eGang	gotri Gyaan Kosha

लोट् लट् लिट् लुट् अर्थ , लर् धातु त्रास्यते त्रायताम् तत्रे त्राता त्रायते त्रै (१आ०, बचाना) त्वक्षिष्यति त्वक्षतु त्वक्षिता त्वक्ष (१प०, छीलना) त्वक्षति तत्वक्ष त्वरिष्यते त्वरताम् त्वरिता त्वर्(१आ०, जल्दी करना) त्वरते तत्वरे त्वेक्ष्यति त्वेषतु त्विप् (१ उ०, चमकना) त्वेपति—ते तित्वेष त्वेष्टा दण्ड् (१०उ०, दण्डदेना) दण्डयति–ते दण्डयांचकार दण्डयिता दण्डियण्यति दण्डयतु दमिता दमिष्यति दाम्यतु दम् (४प॰, दमन करना) दाम्यति ददाम दम्भिष्यति दभ्नोतु दम्भिता दम्भ् (५प०, धोखा देना) दभ्नोति ददम्भ दय् (१आ०, दया करना) दयते दयिंता दयिष्यते द्यताम् दयांचक्रे दंक्ष्यति दंष्टा दंश् (१ प०, डँसना) ददंश दशतु दशति धक्ष्यति दह् (१ प०, जलाना) ददाह दग्धा दहतु दहति दास्यति यच्छति ददौ यच्छत दा (१ प०, देना) दाता दाति दातु दा (२ प०, काटना) ,,. ,, " दा (३ उ०, देना) प॰-ददाति ददातु ,, ,, " ददे आ०-दत्ते दास्यते दत्ताम् " देविता दीव्यतु दिव् (४प०, चमकना आदि) दीव्यति दिदेव देविष्यति देवयिष्यते दिव् (१०आ०, रुलाना) देवयते देवयांचके देवयिता देवयताम् दिदेश देक्ष्यति दिश् (६उ०,देना, कहना) दिशति-ते देष्टा दिशतु दीक्ष् (१आ०,दीक्षा देना) दीक्षते दिदीक्षे दीक्षिता दीक्षिष्यते दीक्षताम् दीपिता दीपिष्यते दीप् (४आ०, चमकना) दीप्यते दिदीपे दीप्यताम् दु (५प०, दुःखित होना) दुनोति दुदाव दोता दोष्यति दुनोतु दुष् (४ प०, बिगड़ना) दुष्यति दुदोष दोष्टा दोक्ष्यति दुष्यतु दुह् (२उ०, दुहना) प०-दोग्धि दुदोह दोग्धा धोक्ष्यति दोग्धु आ०-दुग्धे दुदुहे —ते दुग्धाम् " दू (४आ०, दुःखित होना) दूयते दुद्वे दविता दविष्यते द्यताम् ह(६आ०,आदरकरना)आ + आद्रियते आदद्रे आदर्ता आदरिष्यते आद्रियताम् दप् (४ प०, गर्व करना) द्रंपति ददर्भ दर्पिता दर्पिष्यति दप्यतु दश् (१ प०, देखना) पश्यति ददर्श द्रक्ष्यति द्रष्टा पश्यत द (९ प०, फाड़ना) दणाति दरिता दरिष्यति ददार हणातु दो (४ प०, काटना) द्यति ददौ दास्यति दाता द्युत अविश्वति Dig CC-O. Dr Ramdev Tripath Galletion at Sarai(C tized By Siddhanta e Gangotri Gyaan Kosha द्यातिता द्यातिष्यते द्यातिताम्

लङ् वि	विधिलिङ्	आशीर्छ	ङ् लुङ्	लङ्	णिच्	कर्म०
अत्रायत		त्रासीष्ट	अत्रास्त	अत्रास्यत	त्रापयति	त्रायते
अत्वक्षत्		त्वक्ष्यात्	अत्वक्षीत्	अत्वक्षिष्यत्	त्वक्षयति	
अत्वरत		त्वरिषीष्ट	अत्वरिष्ट	अत्वरिष्यत	त्वरयति	
अत्वेषत्		विष्यात्	अत्विक्षत्	अत्वेक्ष्यत्	त्वेषयति	त्विष्यते
अदण्डयत्		दण्ड्यात्	अददण्डत्	अदण्डयिष्यत्		दण्ड्यते
अदाम्यत्		दम्यात्	अदमत्	अदमिष्यत्	दमयते	दम्यते
	दभ्नुयात्	दभ्यात्	अदम्भीत्	अदिमभष्यत्		AND THE REAL PROPERTY.
अदयत		द्यिषीष्ट	अदयिष्ट	अदयिष्यत	दाययति	दय्यते
,	दरोत्	दश्यात्	अदाङ्क्षीत्		दंशयति	दश्यते
अदहत्		दह्यात्			दाहयति	दह्यते
अयच्छत्		देयात्	अदात्	अदास्यत्	दापयति	दीयते
अदात्		दायात्		"	"	दायते
अददात्		देयात्	अदात्	"	"	दीयते
अदत्त		दासीष्ट	अदित	अदास्यत	"	21
अदीव्यत्	दीव्येत्	दीव्यात्	अदेवीत्	अदेविष्यत्	देवयति	दीव्यते
अदेवयत	देवयेत	देवयिषीष्ट	अदीदिवत	अदेवयिष्यत	देवयति	देव्यते
अदिशत्	दिशेत्	दिश्यात्	अदिक्षत्	अदेश्यत्	देशयति	दिश्यते
अदीक्षत	दीक्षेत	दीक्षिषीष्ट	अदीक्षिष्ट	अदीक्षिष्यत	दीक्षयति	दीक्ष्यते
अदीप्यत	दीप्येत	दीपिषीष्ट	अदीपिष्ट	अदीपिष्यत	दीपयति	दीप्यते
अदुनोत्	दुनुयात्	दूयात्	अदौषीत्	अदोष्यत्	दावयति	दूयते
अदुष्यत्	दुष्येत्	दुष्यात्	अदुषत्	अदोक्ष्यत्	दूषयति	दुष्यते
अधोक्	दुह्यात्	दुह्यात्	अधुक्षत्	अधोक्ष्यत्	दोइयति	दुह्यते
अदुग्ध	दुहीत	धुक्षीष्ट	अधुक्षत	—क्ष्यत	"	,,
अदूयत	दूयेत	द्विषीष्ट (अद्विष्ट	अदविष्यत	दावयति	दूयते
आद्रियत	आद्रियेत	आद्यीष्ट	आदत	आदरिष्यत	आदारयति	आद्रियते
अद्यत्	द्येत्	द्यात्	अद्दपत्	अदर्पिष्यत्	दर्पयति	दृप्यते
अपश्यत्	पश्येत्	दश्यात्	अद्राक्षीत्	अद्रक्ष्यत्	दर्शयति	दश्यते
अदणात्	हणीयात्	दीर्यात्	अदारीत्	अदरिष्यत्	दारयति	दीर्यते
अद्यत्	द्येत्	देयात्	अदात्	अदास्यत्	दापयति	दीयते
अद्योतत	द्योतेत Tripathi Colle	द्योतिषीष्ट	अद्योतिष्ट	अद्योतिष्यत	द्योतयति	द्यत्यते

लोट लिट लट लुट् अथं लट धातु निद्रास्यति निद्रात निदद्रौ निद्राता निद्राति द्रा (२ प०, सोना) नि + द्रोध्यति द्रोता द्रवत् द्रवति द्र (१ प०, पिघलना) दुद्राव द्रोहिता द्रोहिप्यति द्रह्यतु दुद्रोह द्रह्यति द्रह (४ प०, द्रोह करना) द्वेक्ष्यति द्वेष्ट द्वेष्टि दिद्वेष द्वेष्टा द्विष (२ उ०, द्वेष करना) धास्यति दधौ दधातु धा (३ उ०, धारण करना)प०-दधाति धाता धास्यते दधे धत्ताम् आ०-धत्ते ,, धाविष्यति धावतु धाविता धाव (१ उ०, दौड़ना, धोना)धावति ते दधाव धोष्यति धुनोतु धोता धुनोति दुधाव धु (५ उ०, हिलाना) धुक्षिप्यते धुक्षिता धुक्षताम् धुक्ष् (१ आ०, जलना) दुधुक्षे धुक्षते धोध्यति धूनोतु धोता धूनोति दुधाव धू (५ उ०, हिलाना) धूपायांचकार धूपायिता धूपायिष्यति धूपायतु धूपायति धूप् (१ प०, सुखाना) धर्ता धरिष्यति धरति-ते धरत धृ (१ उ०, रखना) दधार धारयांचकार धारयिता धारयिष्यति धारयत् धारयति-ते धृ (१० उ०, रखना) धर्षयांचकार ६र्षयिता धर्षयिपयति धर्षयतु धर्षयति-ते धृष् (१० उ०, दवाना) दधौ धास्यति धे (१ प०, पीना, चूसना) धयति-धाता धयतु दध्मौ ध्मा (१ प०, फूँकना) धमति ध्माता ध्मास्यति धमतु दध्यौ ध्यै (१ प०, सोचना) ध्यायति ध्यास्यति ध्याता ध्यायत ध्वन् (१ प०, शब्द करना) ध्वनति ध्वनिता ध्वनिष्यति ध्वनतु दध्वान ध्वंस् (१ आ०, नष्ट होना) ध्वंसते ध्वंसिता ध्वंसिप्यते दध्वंसे ध्वंसताम नद् (१ प०, नाद करना) नदति नदिता नदिष्यति ननाद नदतु नन्द् (१ प०, प्रसन्न होना) नन्दति निन्द्ता निन्द्रप्दति नन्दत् ननन्द नम् (१ प०, झकना) प्र+ नमति तंस्यति ननाम नमतु नश् (४ प०, नष्ट होना) नश्यति नशिता नशिष्यति ननाश नस्यतु नह् (४ उ०, बांधना) नह्यति-ते नत्स्यति ननाह नद्धा नह्यतु निज (३ उ०, धोना) नेनेक्ति निनेज नेनेक्त नेध्यति नेक्ता निन्द् (१ प०, निन्दा०) निन्द् ति निनिन्द निन्दिता निन्दिप्यति निन्दतु नी (१ उ०, ले जाना) प०- नर्यात नेष्यति निनाय नेता नयतु आ०- नयते निन्ये नेप्यते नयताम् नु (२ प०, स्तुति०) नौति नौत नविता नुनाव नविष्यति CC-O. Dलुद्व(ह्वेट्य कृष्ट्रमण्येपाद के नार्ष) कुर्द्ध कि उपाद कि कि प्रमाणिक कि प्रमाणिक

लङ्	विधिलिङ्	आशीर्छिङ	लुङ्	लङ्	णिच	कर्म०
न्यद्रात्	निद्रायात्	निद्रायात्	न्यद्रासीत्		निद्रापयति	निद्रायते
अद्रवत्	द्रवेत्	द्र्यात्	अदुद्रुवत्			द्र्यते
	दुह्येत्	दुह्यात्	अद्रुहत्		द्रोहयति	द्रह्मते
अद्वेट्	द्विष्यात्	द्विष्यात्	अद्विक्षत्			द्विष्यते
अदधात्	दध्यात्	धेयात्	अधात्		धापयति	धीयते
अधत्त	दधीत	धासीष्ट	अधित	अधास्यत		"
अधावत्		धाव्यात्	अधावीत्			भाव्यते
अधुनोत्	धुनुयात्	धूयात्	अधौषीत्	अधोष्यत्		धूयते
अधुक्षत		धुक्षिषीष्ट	अधुक्षिष्ट	अधुक्षिष्यत		धुश्यते
अधूनोत्	धूनुयात्	धूयात्	अधावीत्			धूयते
अधूपायत	(धूपायेत्	धूपाय्यात्	अधूपायीत्		त् धृपाययति	धूपाय्यते
अधरत्		ब्रियात्	अधाषात्			घ्रियते
अधारयत	धारयेत्	धार्यात्	अदीधरत्	अघारयिष्य		धार्यते
अधर्षयत्	धर्षयेत्	धर्ष्यात्	अदधर्षत्	अधर्षयिष्यत	र् धर्षयति	धर्ष्यते
अधयत्	धयेत्	धेयात्	अधात्	अधास्यत्	घापयते	धीयते
अधमत्	धमेत्	ध्मायात्	अध्मासीत्	अध्मास्यत्	ध्मापयति	ध्मायते
अध्यायत्	<u>घ्यायेत्</u>	घ्यायात्	अध्यासीत्	अध्यास्यत्	ध्यापयति	घ्यायते
अध्वनत्	घ्वनेत्	घ्वन्यात्	अध्वानीत्	अध्वनिष्यत्	घ्वनयति	घ्वन्यते
अध्वंसत	ध्वंसेत	घ्वंसिषी ष्ट		अध्वंसिष्यत		घ्वस्यते
अनदत्	नदेत्	नद्यात्	अनादीत्	अनदिष्यत्	नादयति	नद्यते
अनन्दत्	नन्देत्	नन्द्यात्	अनन्दीत्	अनन्दिष्यत्	नन्दयति	नन्द्यते
अनमत्	नमेत्	नम्यात्		अनंस्यत्		नम्यते
अनश्यत्	नस्येत्	नश्यात्	अनशत्	अनशिष्यत्	नाशयति	नक्यते
अनह्यत्	नह्येत्	नह्यात्	अनात्सीत्	अनत्स्यत्	नाहयति	नह्यते
अनेनेक्	नेनिज्यात्	निज्यात्	अनिजत् ।	अनेक्यत्	नेजयति	निज्यते
अनिन्दत	निन्देत्	निन्द्यात्	अनिन्दीत्	अनिन्दिष्यत्	निन्दयति	निन्चते
अनयत्	नयेत्	नीयात्	अनैषीत्	अनेष्यत्	नाययति	नीयते
अनयत	नयेत	नेषीष्ट	अनेष्ट	अनेष्यत	"	19
अनौत्	नुयात्	न्यात्	अनावीत्	अनविष्यत्		न्यते
	A PARTY OF THE PAR					

लोट् अर्थ लिट् लर लुट् धातु लट् ननर्त नर्तिता नर्तिष्यति नृत् (४ प०, नाचना) नृत्यति नृत्यत् पक्ष्यति पच् (१ उ०, पकाना)प०- पचति पपाच पक्ता पचतु आ०- पचते पेचे पक्ष्यते पचताम् " पठिष्यति पठ् (१ प०, पढ्ना) पठित पंडिता पपाठ पठतु पणिष्यते पण् (१ आ०, खरीदना) पणते पेणे पणिता पणताम् पत् (१ प०, गिरना) पतित पतिता पतिष्यति पपात पततु पद्यते पेदे पद् (४ आ०, जाना) पत्स्यते पत्ता पद्यताम् पश् (१० उ०, वाँधना) पाशयति-ते पाशयिष्यति पाशयतु पाशयांचकार पाशयिता पा (१ प०, पीना) पिवति पपौ पिबतु पास्यति पाता पा (२ प०, रक्षा करना) पपौ पाति पातु ,, ,, पाल (१० उ०, पालना) पालयति-ते पालयांचकार पालयिता पालयिष्यति पालयत् पिष् (७ प०, पीसना) पिनष्टि पिपेष पेक्ष्यति पिनष्टु पेष्टा पीडियष्यति पीड् (१० उ०, दुःख देना) पीडयति-ते पीडयांचकार पीडयिता पीडयतु पुष् (४ प०, पुष्ट करना) पुष्यति प्रपोष पोक्ष्यति पोष्टा पुष्यतु पुष् (९ प०, पोषिता पोषिष्यति पुष्णाति पुष्णातु पुष् (१० उ०, पालना) पोषयति-ते पोषयांचकार पोषयिता पोषयिष्यति पोषयतु पू (१ आ०, पवित्र०) पवते पुपुवे पविता पविष्यते पवताम् पू (९ उ०, पवित्र०) पुनाति पुपाव पविता पविष्यति पुनातु पूज् (१० उ०, पूजना) पूजयति-ते पूजयांचकार पूजयिता पूजियध्यति पूजयतु पूर् (१० उ०, भरना) पूरयति-ते पूरयांचकार पूरियता पूरियध्यति पूरयतु प (३ प०, पालना) पिपति पपार परिता परिष्यति पिपर्तु पु (१० उ०, पालना) पार्यति-ते पार्याचकार पार्यिता पारियध्यति पारयतु प्यै (१ आ०, वढ़ना)आ + प्यायते पप्ये प्याता प्यास्यते प्यायताम् प्रच्छ (६ प०, पृछना) प्रच्छति पप्रच्ह प्रधा प्रक्ष्यति पुच्छतु प्रथ् (१ आ०, फैलना) प्रथते पप्रथे प्रथिता प्रथिष्यते प्रथताम् प्री (४ आ०, प्रसन्नं होना) प्रीयते पिप्रिये वेता प्रेष्यते प्रीयताम् प्री (९ उ०, प्रसन्न करना) प्रीणाति पिप्राय प्रेता प्रेप्यति प्रीणातु प्री (१० उ०, ,, **मीणयति** प्रीणयांचकार प्रीणयिता प्रीणयिष्यति प्रीणयतु प्छ (१ आ०, कृदना) प्रवते पुण्छवे श्रोवा प्रोध्यते प्रवताम

CC-O. Dr. Ramdev Tripath Collection at Sarai (CSDS). Digital By Side hante (Cangotti Cyaan Kosha

लङ् वि	धिलिङ्	आशीर्लंङ्	लुङ्	लङ्	णिच्	कर्म०
अनृत्यत्	नृ त्येत्	नृत्यात्	अनर्तीत्	अनर्तिध्यत्	नर्तयते	नृत्यते
अपचत्	पचेत्	पच्यात्	अपाक्षीत्	अपध्यत्	पाचयति	पच्यते
अपचत	पचेत	पक्षीष्ट	अपक्त	अपध्यत	"	,,
अपठत्	पठेत्	पठ्यात्	अपाठीत्	अपठिष्यत्	पाठयति	पठ्यते
अपणत	पणेत	पणिषीष्ट	अपणिष्ट	अपणिष्यत		पण्यते
अपतत्	पतेत्	पत्यात्	अपसत्	अपतिष्यत्		पत्यते
अपद्यत	पद्येत	पत्सीष्ठ	अपादि	अपत्स्यत	पादयति	पद्यते
अपाशयत्	पाशयेत्	पाश्यात्	अपीपशत्	अपाशिष्यत्		पास्यते
अपिबत्	पिबेत्	पेयात्	अपात्	अपास्यत्	पाययति	पीयते
अपात्	पायात्	पायात्	अपासीत्	יי	पाल्यति	पायते पाल्यते
अपालयत्	पाल्येत्	पाल्यात्	अपीपलत्	अपारुयिष्यत् अपेक्ष्यत्		पाल्यत पिष्यते
अपिनट्	पिष्यात्	पिष्यात् .				
अपीडयत्	पीडयेत्	पीड्यात्	अपिपीडत्	अपीडियप्यत्		पीड्यते
अपुष्यत्	पुष्येत्	पुष्यात्	अपुषत्	अपोक्ष्यत्	पोषयति	पुष्यते
अपुष्णात्	पुष्णीयात्	"	अपोषीत्	अपोषिष्यत्	"	"
अपोषयत्	पोषयेत्	पोष्यात्	अपूपुषत्	अपोषयिष्यत्	,,,	पोष्यते
अपवत	पवेत	पविषीष्ट	अपविष्ट	अपविध्यत	पावयति	पूयते
अपुनात्	पुनीयात्	पूयात्	अपावीत्	अपविष्यत्	"	"
अपूजयत्	पूजयेत्	पृज्यात्	अपूपुजत्.	अपूर्वायच्यत्	पूजयति	पूज्यते
अपूरयत्	पूरयेत्	पूर्यात्	अपूपुरत्	अपूरियध्यत्	पूरयति	पूर्यते
अपिप:	पिपूर्यात्	पूर्यात्	अपारीत्	अपरिष्यत्	पारयति	पूर्यते
अपारयत्	पारयेत्	पार्यात्	अपीपरत्	अपारियप्यत्	पारयति	पार्यते
अप्यायत	प्यायेत	प्यासीष्ट	अप्यास्त	अप्यास्यत	प्यापयति	प्यायते
अपृच्छत्	पृच्छेत्	पृच्छ्यात्	अप्राक्षीत्	अप्रक्ष्यत्	प्रच्छयति	पृच्छयते
अप्रथत	प्रथेत	प्रथिषीष्ट	अप्रथिष्ट	अप्रथिष्यत	प्रथयति	प्रथ्यते
अप्रीयत	प्रीयेत	प्रेषीष्ट	अप्रेष्ट	अप्रेष्यत	प्राययति	प्रीयते
अप्रीणात्	प्रीणीयात्	प्रीयात्	अप्रैषीत्	अप्रेष्यत्	प्रीणयति	- ,,
अप्रीणयत्	प्रीणयेत्	प्रीण्यात्	अपिप्रीणत्	अप्रीणयिष्यत्	. 22	प्रीण्यते
अप्लवत	प्लवेत	प्लोषीष्ट	अप्लोष्ट	अप्लोखत	प्लावयति	प्द्यते
अप्लोषत् -O. Dr. Ramdev 1	प्लोघेत् Tripathi Colle	प्लुष्यात् ction at Sarai(अप्लोषीत् CSDS). Digitiz	अप्लोषिष्यत् zed By Siddhar		प्लुष्यते Gyaan Kosha

लोट लर् लिट् अर्थ लुट लर् धातु फल्तिा फल्पियति फलत फल् (१ प०, फलना) फलति पफाल बीभत्सांचके बीभत्सिता बीभित्सिष्यते बीभत्सताम् वध् (१ आ०, बीभत्स होना)बीभत्सते बाधयांचकार बाधयिता बाधयिष्यति बाधयत बध् (१० उ०, बाँधना) बाधयति भन्त्स्यति बध्नातु बन्ध् (९ प०, बाँधना) वबन्ध बन्द्वा बध्नाति बाध् (१ आ॰, पीड़ा देना) बाधते बाधिता बाधिष्यते वबाधे वाधताम् बोधिष्यति बोधति-ते बुबोध बोधिता बोधतु बुध् (१ उ०, समझना) भोत्स्यते व्बधे बुध् (४ आ०, जानना) बुध्यते बोद्धा बुध्यताम् ब्रू (२ उ०, बोलना) प०-व्रवीतु वध्यति - व्रवीति उवाच वक्ता आ॰— ब्रूते ऊचे वध्यते व्रताम् " भक्षयांचकार भक्षयिता भक्ष (१० उ०, खाना)प०- भक्षयति भक्षयिष्यति भक्षयतु -ते भक्षयते भक्षयांचक —ताम भन (१ उ०, मेवा करना) भजति-ते भक्ष्यति बभाज भक्ता भजतु भञ्जु (७ प०, तोड़ना) भनक्ति भंका **भं**क्ष्यति भनक्त बभञ्ज भण् (१ प०, कहना) भणिता भणति भणिष्यति बभाण भणतु भर्त्स (१० आ०, डाँटना) भर्त्सयते भर्त्सयांचक्रो भर्तायिता भर्त्सियध्यते भर्त्सयताम् भा (२ प०, चमकना) भावि बभौ भास्यति भाता भातु भाष (१ आ०, कहना) भाषते बभाषे भाषितः भाषिष्यते भाषताम् भास (१ आ०, चमकना) भासते बभासे भासिता भासिष्यते भासताम् मिक्ष (१ आ०, माँगना) भिक्षते बिभिक्षे भिक्षिता भिक्षिव्यते भिक्षताम भिद् (७ उ०, तोड्ना) भिनत्ति बिभेद भेत्ता भेत्स्यति भिनत्त् भी (३ प०, डरना) बिभेति विभाय भेता बिभेतु भेष्यति भुज् (७ प०, पालना) अनक्ति बुभोज भोक्ता भोध्यति भुनक् मुज् (७ आ०, खाना) भुङ्क्रे बुमुजे भुङ्काम् 33 भू (१ प०, होना) भवति वभूव भविता भविष्यति भवतु भूषयति-ते भूषयांचकार भूषयिता भूष् (१० उ०, सनाना) भूषियपित भूषयतु भृ (१ उ०, पालना) भरति-ते बभार भर्ता भरिष्यति भरत मृ (३ उ०, पालना) बिभर्ति बिभर्तु 35 33 भ्रम् (१ प०, घूमना) भ्रमति भ्रमिता बभ्राम भ्रमिष्यति अम् (४ प०, घूमना) भ्राम्यति भ्राम्यतु अंश (१ आ॰, गिरना) अंशते बुभंशे CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized by Sidahi त्रिक्टि an क्रिया प्रधान Kosha

लङ विधिलिङ आशीर्लिङ् लुङ् णिच कर्म० लङ प.लेत् अफलत् फ.ल्यात् अफालीत अफल्बियत **फालयति** फल्यते अबीभत्सत वीभत्सेत बीभित्सपीष्ट अबीभत्सिष्ट अबीभित्सिष्यत बीभत्सयति बीभत्त्यते अवाधयत् वाधयेत अवीवधत् वाध्यात अवाधियध्यत वाधयति बाध्यते वध्नीयात् बध्यात् अभान्त्सीत् अवध्नात अभन्त्स्यत् बन्धयति बध्यते वाधेत वाधिषीष्ट अवाधिष्ट अवाधत े अवाधिष्यत वाधयति बाध्यते बोधेत अवाधत अबोधिष्यत बुध्यात अबुधत् . बोधयति बध्यते भत्सीष्ट बध्येत अबोधि अवध्यत अभोत्स्यत ,, 77 . अवोचत् अव्रवीत् व्रयात् उच्यात् अवश्यत् वाचयति उच्यते व्रवीत अव्रत वक्षीष्ट अवोचत अवध्यत " 33 भक्षयेत् अभक्षयिष्यत अभक्षयत् भक्षात् अवभक्षत भक्षयति भक्ष्यते —येत भक्षयिषीष्ट ---यत -क्षत —ध्यत " भजेत् अभाक्षीत् अभजत भज्यात अभक्ष्यत् भाजयति भज्यते अभाङ्क्षीत् अभनक भञ्ज्यात् भज्यात् अभक्ष्यत् भञ्जयति भज्यते भणेत अभाणीत् अभिणिष्यत अभणत् भण्यात भागयति भण्यते भर्त्सियषीष्ट भर्त्सयेत अवभर्त्सत अभर्त्सियप्यत अभर्त्सयत भर्त्सयति भर्त्स्यते अभासीत् अभात् भायात् भायात् अभास्यत भापयति भायते भाषेत भाषिषीष्ट अभाषिष्ट अभाषिष्यत अभाषत भाषयति भाष्यते भासेत भा सिघीष्ट अभा मिष्ट अभासिष्यत भासयति अभासत भास्यते भिक्षिपीष्ट अभिक्षिष्ठ अभिक्षिष्यत भिक्षेत अभिक्षत भिक्षयति भिक्ष्यते भिन्द्यात भिद्यात अभिदत् अभिनत् अभेत्स्यत भेदयति भिद्यते अभैषीत् अभेष्यत अविभेत् विभीयात भीयात भाययति भीयते अभौक्षीत् अभोक्ष्यत भुज्यते अभुनक भुञ्ज्यात् भुज्यात् भोजयति **भुक्षी**ष्ट भुज्जीत अभुक्त अभुङ्क —त 37 अभविष्यत् भवेत् भावयति भृयते भ्यात् अभृत् अभवत भषयेत् भुष्यात् अभूषयिष्यत भुषयति अबुभृषत् भृष्यते अभूषयत् भरेत अभाषींत अभरिप्यत भारयति भ्रियात् भ्रियते अभरत् अविभ: विभृयात् 22 ;; 20 अभ्रमिष्यत् अभ्रमीत भ्रमेत् भ्रम्यात् भ्रमयतिः भ्रम्यत अभ्रमत भ्राम्येत् अभ्रमत् अभ्राम्यत 33 CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai (CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लोट् लिट् लर् लुट् धातु अर्थं लर् भ्रक्ष्यति भुज्जति-ते महा भुज्जत् भ्रस्ज् (६ उ०, भूनना) बभुज्ज भ्राजिप्यते भ्राज् (१ आ०, चमकना) भ्राजते वभाजे भ्राजिता भ्राजताम् मण्डयांचकार मण्डयिता मण्डयिष्यति मण्डयतु मण्ड (१० उ०, सजाना) मण्डयति-ते मथिष्यात मथतु मथिता मथति ममाथ मध् (१ प०, मथना) मदिप्यति मदिता मद् (४ प०, प्रसन्न होना) माद्यति ममाद माचतु मेने मंस्यते मन्यते मन्ता मन्यताम् मन् (४ आ०, मानना) मनिप्यते मनुते सनिता मन् (८ आ०, मानना) मनुताम् " मन्त्रयिता मन्त्रयिष्यते मन्त्रयताम् मन्त्र (१० आ० मंत्रणा०) मन्त्रयते मन्त्रयांचक्रं मन्थिता मन्थिप्यति मथ्नातु मध्नाति मन्थ् (६ प०, मथना) ममन्थ मस्ज् (६ प०, ड्रवना) मज्जति मङ्ध्यति मङ्का ममज्ज मज्जुत ममौ मा (१ प०, नापना) माति मास्यति माता मातु ममे **मिमीताम्** मिमीते गास्यते मा (३ आ०, नापना) माता मान् (१ आ॰, जिज्ञासा॰) भीमांसते मीमांसांचके भीमांसिता भीमांसिष्यते भीमांसताम् मान् (१० उ०, आदर०) मानयति-ते मानयांचकार मानयिता मानयिष्यति मानयतु मार्गयति-ते मार्गयांचकार मार्गयिता मार्गयिष्यति मार्गयत मार्ग (१० उ०, हूँ द्ना) मार्ज (१०उ०, साफ करना)मार्जयति-ते मार्जयांचकार मार्जीयता मार्जियायति मिल (६ उ०, मिलना) मिलति-ते मिमेल मेलिता मेलिप्यति मिलतु मिश्र (१० उ०, मिलाना) मिश्रयति ते मिश्रयांचकार मिश्रयिता मिश्रयित्वति मिश्रयतु मिहु (१ प०, गीला करना) मेहति मिमेह मेदा मेहतु मेध्यति. मील् (१ प०, आँख मीचना)मीलति मिमील मीलिता मीलिप्यति मीलनु मुच् (६ उ०, छोड़ना) प०-मुञ्जति मुमोच मोत्ता मोध्यति मुञ्जतु आ०-- मञ्जते मोध्यते मुम्चे मुख्यताम् मुच् (१० उ०, मुक्त करना) मोचयति ते मोचयांचकार मोचयिता मोचयित्वति मोचयत मुद् (१ आ०,प्रसन्न होना) मोदते मुमुदे मोदिता मोदिप्यते मोदताम् मुच्छू (१ प०, मृछित होना)मूच्छिति मुमूच्छी मचिंछता म्चिंद्यात मुर्च्छतु मुष् (९ प०, चुराना) मुख्याति मुमोप मोषिप्यति मोषिता मुख्यातु मुहु (४ प०, मोह में पड़ना) मुह्यति मोहिता मुमोह मोहिप्यति मुह्यतु मृ (६ आ०, मरना) ममार सर्ता मरिष्यति म्रियताम् मृग् (१० आ०, हूँ दुना) मृगयते मृगयांचक्रे मृगयिता मगयिष्यते मृगयताम् CC-O. प्रमुद्ध (त्रिपेक् Triस्त्रमा क्रिपेक् Pior कि विवाद (CSAS) (CSAS) Digitized कि Siddhanta Gangotri Gyafin Kosha

	ळङ् हि	प्रधिलिङ् आ	शीहिंङ्	लुङ्	लङ्	णिच्	कर्म०
	अभृजत्	भृज्जेत्	भृज्यात्	अभाक्षीत्	अभ्रध्यत्	भ्रजयति	भृज्ज्यते
	अभ्राजत	भ्राजेत	भ्रा जिषीष्ट	अभ्रानिष्ट	अभ्राजिप्यत	भ्राज्यति	भ्राज्यते
	अमण्डयत्	मण्डयेत्	मण्ड्यात्	अममण्डत्	अमण्डियप्यत्	मण्डयति	मण्ड्यते
	अमथत्	मथेत्	मध्यात्	अमथीत्	अमथिप्यत्	माथयति	मध्यते
	अमाद्यत्	माचेत्		अमदीत्	अमदिप्यत्	मदयति	मद्यते
	अमन्यत	मन्येत		अमस्त	अमंस्यत	गानयति	मन्यते
	अमनुत	मन्बीत	मनिषीय	अमत	अमनिष्यत	,,	"
	अमन्त्रयत	मन्त्रयेत	मन्त्रयिषीष्ट		अमन्द्रिययत		मन्द्यते
	अमथ्नात्	मध्नीयात्	मथ्यात्	अमन्धीत्	अमन्थिप्यत्	मन्थयति	मध्यते
	अमजत्	मञ्जेत्	मज्ज्यात्	अमाङ्क्षीत्	अमङ्ध्यत्	मजयति	मज्ज्यते
	अमात्	मायात्	मेयात्	अमासीत्	अमारयत्	मापयति	मीयते
	अधिमीत	मिमीत	मासीष्ट	अमास्त	अमास्यत	"	"
	अमीमांसत	मीमांसेत	मीमांसिषीष्ट	अमीमांसिष्ट	अभीमांसिष्यत	मीमांसयति ।	मीमांस्यते
	अमानयत्	मानयेत्	मान्यात्	अमीमनत्	अमानियप्यत्	मानयति	मान्यते
- 8	अमार्गयत्	मार्गयेत्	मार्गात्	अममार्गत्	अमार्गियष्यत्	मार्गयति	मार्ग्यते
N.	अमार्जयत्	मार्जयेत्	मार्ज्यात्	अममार्जत्	अमार्जियप्यत्	मार्ज्यति	मार्ज्यते
	अमिलत्	मिलेत्	मिल्यात्	अमेलीत्	अमेलिप्यत्	मेलयति	मिल्यते
	अभिश्रयत्	मिश्रयेत्	मिश्यात्	अमिमिश्रत्	अभिश्रयिप्यत्	मिश्रयति	मिश्र्यते
	अमेहत्	मेहेत्	मिह्यात्	आंमक्षत्	अमेक्ष्यत्	मेहयात	मिह्यते
	अमीलत्	मीलेत्	मील्यात्	अमेलीत्	अमीलिप्यत्	मीलयति	मील्यते
	अमुञ्चत्	मुञ्चेत्	मुच्यात्	अमुचत्	अमोध्यत्	मोचयति	मुच्यते ्
	अमुञ्चत	मुञ्चेत	मुक्षीप्ट	अनुक्त	अमोक्ष्यत	"	"
	अमोचयत्	मोचयेत्	मोच्यात्	अमृमुचत्	अमोचियष्यत	(मोचयति	मोच्यते
	अमोदत	मोदेत	मोदिपीष्ट		अमोदिप्यत		
	अमूर्च्धत्	मूच्हें त्	मृर्च्छ ्यात्	अमूर्चीत्	अमून्छिप्यत्	मूर्च्छयति	म्र्च्छयते
	अमुख्णात्	मुणीयात्	मुप्यात्	अमोषीत्	अमोषिप्यत्	मोषयति	मुप्यते
					अमोहिष्यत्		
					अमिरिष्यत्		
	अमृगयत	मृगयेत	मुगयिपीप्ट	अममृगत	अमृगयिष्यत	मृगयति	मृग्यते ।
CC-C). Dr. Ramdev	Tapath Collect	tion at Sarai	(CSDS). Digiti	ized By Siddhah	ta eGangon	सुरुपते Gyaan Kosha

िंद लोट् लट लुर लट् धातु मृजु (१० उ०, साफ करना) मार्जयित-ते मार्जयांचकार मार्जयिता मार्जियपति मार्जयत मृप् (१० उ०, क्षमा करना) मर्पयति-ते मर्पयांचकार मर्पयिता मर्पयिष्यति मर्पयतु म्नास्यवि म्ना (१ प०, मानना) आ + मनति सम्बी ग्नाता मनतु माली म्है (१ प०, मुरझाना) ग्लायति ग्हाता म्लास्यति ग्हायतु यज् (१ उ०, यज्ञ करना) यजित-ते यध्यति इयाज यष्टा यजतु यते यतिता यतिष्यते यत् (१ आ०, यत्न करना) यवते यतताम् यद्यिष्यति यद्ययु यन्त्र (१० उ०, नियमित०) यन्त्रयति यन्त्रयांचकार यन्त्रियता यम् (१ प०, रोकना) नि+ यच्छति यंस्यति ययाम यन्ता यच्छतु यस् (४ प०, यस्न करना) यस्यति यसिप्यति वसिता ययास यस्यत् या (२ प०, जाना) याति ययो यास्यति यातु याता याच् (१ ड०, साँगना) प०- याचित याचिता याचिष्यति याचतु ययाच आ०--याचते यथाचे —ते —ताम् " यापि (या + णिच् , विताना) यापयति यापयांचकार यापयिता वापियप्यति यापयतु युज् (४ आ०, ध्यान लगाना) युज्यते युयुजे योक्ता योध्यते । युज्यताम् युज् (७ उ०, मिलाना) युनिक्त ययोज योक्ष्यति युनक्त योजयति-ते योजयांचकार योजयिता युन् (१० उ०, लगाना) योजयिष्यति योजयतु युष् (४ आ०, लड़ना) युध्यते युय्व योद्धा योत्स्यते युध्यताम् रक्ष् (१ प०, रक्षा करना) रक्षति रक्षिता ररक्ष रक्षिष्यति रक्षतु रच् (१० उ०, बनाना) रचयति-ते रचयांचकार रचयिता रचियपित रचयतु रज्यांत-ते ररञ्ज रञ् (४ उ०, प्रसन्न होना) रङ्का रङ्क्यति रज्यतु रट् (१ प०, रटना) रटित रिटता रराट रटिष्यति रटतु रन् (१ आ०, रमना) रमते रेमे रन्ता रंस्यते रमताम् (वि + रम्, पर॰) विरमति विरराम विरन्ता विरंस्यति विरमतु रस् (१० उ०, स्वाद टेना) रसयति-ते रसयांचकार रसयिष्यति रसयिता रसयत राज् (१ उ०, चमकना) प०- राजति राजिता रराज राजिष्यति राजतु राजते रेजे आ०— - ते —ताम् " राध् (५ प०, पूरा करना) राध्नोति रराध रात्स्यति राध्नोतु राद्धा रु (२ प०, शब्द करना) रौति रविता र्राव रविष्यति रौत रुच् (१आ०, अच्छा लगना) रोचते रुरुचं रोचिता रोचिष्यते रोचताम् CC-O. राष्ट्र (श्वारेन्डक, Tत्रोना) Collection मिह्निवा(C इसिन्ट् Digitized महर्

विधिलिङ आशीलिंङ ्णिच कर्म० लुङ लङ मार्जयेत अमार्जयत् मार्चात अमार्जयिष्यत मार्जयति मार्ज्यते अममार्जत अमर्पयत मर्पयेत मर्यात अममर्पत अमर्पयिष्यत् सर्घयति मर्ध्यते मनेत् म्नायते अम्नासीत अमनत म्नायात् अम्नास्यत म्नापयति अम्लासीत म्लापयति ग्लायते अम्लायत म्लायात् म्लायात अग्लास्यत यजेत अयाक्षीत इज्यते अयजत् याज्यति इज्यात अयध्यत् यतेत यतिपीष्ट यत्यते अयतिष्ट अयतिप्यत यातयति अयतत यन्त्रयेत अयन्त्रयिष्यत यम्ब्यते यन्यति अयञ्चयत् यन्त्र्यात् अययञ्चत यच्छेत अयंसीत नियभ्यते अयंस्यत नियभयति अयच्छत् यम्यात यस्यते यस्येत् अयसिष्यत् आयासयते अयस्यत् यस्यात् अयसत् अयासीत् यापयति यायते अयात् यायात यायात् अयास्यत् याच्यते याचेत् अयाचीत् अयाचिष्यत् याचयति वाच्यात अयाचत याचिषीष्ट अयाचिष्ट याचेत —त — त " अयापियप्यत याप्यते यापयेत अयीयपत् अयापयत याप्यात अयोध्यत युज्यते योजयति युज्येत युक्षीष्ट अयुक्त अयुज्यत अयोध्यत् अयुजत् अयुनक् युञ्ज्यात युज्यात् योज्यते अयोजयिष्यत योज्यात अयोजयत् योजयेत अयुजत युध्यते अयोत्स्यत योधयति युध्येत युत्सीप्ट अयुद अयुध्यत रध्यते अरक्षिष्यत् रक्षयति अरक्षीत् रक्षेत रक्ष्यात अरक्षत् रच्यते अरचियप्यत् रचयति रचयेत् अररचत् रच्यात् अरचयत रञ्जयति रज्यते अराङ्क्षीत् अरङ्क्ष्यत् रज्येत् रज्यात अरज्यत रट्यते राटयति अरटिष्यत् अरटीत रटेत् रस्यात अरटत रम्यते रमयति अरंस्त अरंस्यत रंसीष्ट रमेत अरमत विरमयति विरम्यते व्यरंसीत व्यरस्यत् विरमेत् विरम्यात व्यरमत् रस्यते रसयति अरसयिप्यत् अररसत रसयेत रस्यात अरसयत् राज्यते राजयति अराजिष्यत् । अराजीत् राजेत् राज्यात् अराजत अरा जिष्ट अराजिष्यत राजिषीष्ट ,, " —त —-त राधयति राध्यते अरात्सीत् राध्नुयात् राध्यात् अरात्स्यत् अराध्नोत् रावयात रूयते अर्रावष्यत अरावीत अरौत रूयात् रुयात् रोचयते रुच्यते अरोचिप्यत अरोचिष्ट रे। चिषीष्ट अरोचत रोचेत

लिट् अर्थ लोट् धातु लुट लर् लट् रुध् (७ उ०, रोकना) प०--रुणद्धि ररोध रोद्धा रोत्स्यति रुणद्धु रुन्धे रुख <u>—</u>ते रुन्धाम् आ०-रोहति स्रोह रुहु (१ प०, उगना) रोढा रोध्यति रोहतु रूपयिष्यति रूपयनु रूप् (१० उ०, रूप वनाना) रूपयति-ते रूपयांचकार रूपयिता लक्षयांचकार लक्षयिता लक्षयिष्यति लक्षयतु लक्ष् (१० उ०, देखना) लक्षयति-ते लग् (१ प०, लगना) लगति । लगिता लगिप्यति ललाग लगतु लङ्घ् (१ आ०, लाँचना)उत् + लङ्घते लंघिता ललङ्गे लंबिप्यते लंघताम् लङ्घ (१० उ०, लॉयना) लंबयात-ते लंघयांचकार लंघयिता लंघयिष्यति लंघयतु लड् (१० उ०, प्यार करना) लाडयति-ते लाडियप्यति लाडयतु लाडयां-लाड-यिता चकार लप् (१ प०, वोलना) रुपति ल्लाप लिपता लिपयति लपतु लभ् (१ आ०, पाना) लभते हें भे लब्धा लप्स्यते लभताम् लम्ब् (१ आ०, लटकना) लम्बते हलम्बे ल भिवता लिम्यप्यते लम्बताम् लप् (१ उ०, चाहना) लपति-ते लिपता लिपिष्यति ललाप लघत लस् (१प०,शोमित होना)वि + लसति लिसता ल्लास लसिप्यति लसनु . लस्ज् (लज् , ६ आ०, लजित०)लजते ललजे लाजिष्यते लिजता लजताम् लिख् (६ प०, छिलना) लिलेख हिखति लेखिता लेखिष्यति लिखतु लिङ्ग् (आ + , १ प०, आहिंगति आहिहिंग आलिं-आलिंगिष्यति आलिंगतु आलिंगन करना) गिता लिप् (६ उ०, लीपना) लिम्पति-ते लिलेप लेता लिम्पतु लेप्स्यति लिह् (२ उ०, चाटना) लेडि लिलेइ लेढा लेक्ष्यति लेंद्र ली (४ आ०, लीन होना) लीयते लिल्ये लेता लेप्यते लीयताम् लुट् (१ प०, लोटना) लोटति **लोट** लोटिता लोटिप्यति लोरतु लुड् (१ प०, बिलौना)आ + लोडति **लेंड** लोडिता लोडिप्यति लोडतु छुप् (४ प०, छुप्त होना) **ड**प्यति छलोप लोपिता लोपिप्यति लुप्यतु छप् (६ उ०, नर करना) टुम्पति-ते लोता लोप्स्यति ,, **लुम्पतु** लुम् (४ प०, लोभ करना) लभ्यति **उलोभ** लोभिता लोभिष्यति लुभ्यतु छ् (९ उ०, कारना) **छना**ति ल्लाव लविता लविष्यति **ख**नातु लोक् (१० उ०, देखना)आ + लोकयति-ते लोकयांचकार लोकयिता लोकयिष्यति लोकयतु लोच् (१० उ०,देखना)आ + लोचयति लोचयांचकार लोचियता लोचियप्यति लोचयतु वच् (१० उ०, वाँचना) वाचयति वाचयांचकार वाचयिता वाचयिष्यति वाचयतु वञ् (१० आ०, ठगना) यञ्चयते वञ्चयांचक्रो वञ्चयिता वञ्चयिष्यते CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection कर् क्रियां(CSDA); Digitized हिन्दु Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लङ्	विधिलिङ्	आशीर्छिः	ङ् छुङ्	लङ्	णिच्	कर्म०
अरुगत्	रुन्थात्	रुध्यात्	अरुधत्	अरोत्स्यत्	रोधयति	रुध्यते
	रुन्धीत	रुत्सीष्ट	अरुद्ध	` —त	,,	,,
	रोहेत्	मह्यात्	अरुक्षत्	अरो ध्यत्	रोहयति	रुह्यते
	्रूपयेत्	रुप्यात्	अरुरूपत्	अरूपयिष्यत्	रूपयति	रूप्यते
	न् लक्षयेत्	ह्रश्यात्	अललक्षत्	अलक्षयिष्यत्	लक्षयति	लक्ष्यते
अलगत्	लगेत्	लग्यात्	अलगीत्	अलगिष्यत्	लगयति	लग्यते
अलंघत		लंघिपी ष्ट	अलंबिष्ट	अलंघिष्यत	लंघयति	लंघ्यते
	र् लंघयेत्	लंच्यात्	अल्लंघत्	अलंबियष्यत्	,,	"
	ात् लाडयेत्	लाड्यात्	अलीलडत्	अलाड-	लाडयति	लाड्यते
				यिष्यत्		
अल्पत्	लपेत्	लप्यात्	अलपीत्	अलिपयत्	लापयति	
	हमेत	लप्सीष्ट	अलब्ध	अलप्स्यत	लम्भयति	the state of the s
अलम्बत	लम्बेत	लम्बिपीष्ट	अलम्बिष्ट	अलम्बिष्यत	लम्बयति	
अलपत्	लपेत्	लप्यात्	अलघीत्	अलिष्यत्	लाप्यति	
अल्सत्	लसेत्	लस्यात्	अलसीत्	अलसिष्यत्	लासयति	
अलजत	रुजेत -	लजिषीष्ट	अलिंष्ट	अलजिष्यत	लजयति	
अलिख	न् लिखेत्	लिख्यात्	अलेखीत्	अलेखिष्यत्	लेखयति	
	त् आलिंगेत्	आलिं-	आहिंगीत्	आहिंगि-		आल्ग्यित
		ग्यात्		ष्यत्	यति	<u> </u>
अलिम्प	त् लिम्पेत्	लिप्यात्	अलिपत्	अलेप्स्यत्	लेपयति	
	लिह्यात्	ल्हि ह्यात्	अलिक्षत्	अलेक्ष्यत्	लेहयति	लिह्यते - ीमने
अलीयत	न लीयेत	लेपीष्ट	अलेष्ट	. अलेष्यत	लाययति	
अलोटत	र् लोटेत्	लुख्यात्	अलोटीत्	अलोटिष्यत्	लोटयति	
	न् लोडेत्	<u> लु</u> ड्यात्	अलोडीत्	अलोडिष्यत्	लोडयति	
अलुप्यत	न् छुप्येत्	लुप्यात्	अलुपत्	अलोपिष्यत्	लोपयति	
	त् छम्पेत्	"	"	अलोप्स्यत्	"	
	त् छभ्येत्	लुभ्यात्	" अलोभीत्	अलोभिष्यत्	होभयि	
	त् छनीयात्	लूयात्	अलावीत्	अलविष्यत्	लावयवि	त ल्यत
	यत् लोकयेत्	लोक्यात्	अलुलोकत्	अलोकियष्यत्		
	यत् लोचयेत्	लोच्यात्	अलुलोचत्	अलोचियष्यत्		
	यत् वाचयेत्	वाच्यात्	अवीवचत्	अवाचियष्यत्		वाच्यते
	रत बञ्चयेत	वञ्चियपीष्ट	अववञ्चत	अवञ्चयिष्यत	वञ्चयति	
			रुपानीन	अनिह्यत	वादयति	उद्यते

CC-O. Dengampev विदेशीं Collected Sarai (टेडिकेड) Bigitized By Sidonanta eGangotri Gyaan Kosha

लिट लट् लोर लुद् लर धात वन्द्धिते वन्द्ताम् वन्दिता वन्द् (१ आ०, प्रणाम०) वन्दते ववन्दे वप्स्यति वप् (१ उ०, बोना) वपति-ते वता वपत् उवाप वमिष्यति वमतु विमता वम् (१ प०, उगलना) वमति ववाम वत्स्यति वस् (१ प०, रहना) वसति उवास वस्ता वसतु वहु (१ उ०, होना) वहति-ते वोदा वध्यति वहन् उवाह वा (२ प०, हवा चलना) ववा वास्यति वाति वाता वात वाञ्छिता वाञ्छिप्यति वाञ्छत वाञ्छ् (१ प०, चाहना) वाञ्छति ववाञ्छ विद् (२ प०, जानना) वेत्ति विवेद वेदिता वेदिष्यति वेत्त विद् (४ आ०, होना) विविदे वेत्ता वेत्स्यते . विद्यते विद्यताम् विद् (६ उ०, पाना) विन्दति-ते विवेद वेदिता वेदिष्यति विन्दत् विद् (१० आ०, कहना) नि + वेदयते वेदयिता वेदयिष्यते वंदयताम् वेदयांचक्रे विश् (६ प०, धुसना) प्र + विश्वात विवेश वेष्टा वेश्यति विश्तु वीज् (१० उ०, पंखा हिलाना) वीजयति-ते विजयांचकार वीजयिता वीजयिष्यति वीजयतु वृ (५ उ०, चुनना) त्रणोति वरिता वरिष्यति ववार वृणोत् वृ (९ आ०, छाँटना) वन्ने वृणीते । वश्घ्यते वरिता वृणीताम् वृ (१०उ०, हटाना, ढकना) वारयांचकार वार्यिता वार्यिष्यति वारयत वारयति-ते वृज् (१० उ०, छोडना) वर्जयांचकार वर्जयिता वर्जियप्यति वर्जयतु वर्जयति-ते वृत् (१ आ०, होना) वर्तते वर्तताम् ववते वर्तिता वर्तिष्यते वृध् (१ आ०, बढ्ना) ववृधे वर्धते वर्धिता वर्धताम् वधिष्यते वृष् (१ प०, बरसना) वर्षति ववर्ष वर्षिता विषयित वर्षत वे (१ उ०, बुनना) ववौ वयति-ते वास्यति वाता वयतु वेप् (१ आ०, काँपना) वेपते विवेपे वेषिता वेषिष्यते वेपताम् वेष्ट् (१ आ०, घेरना) वेष्टते विवेष्टे वेष्टिता वेष्टिप्यते वंद्याम् व्यथ् (१ आ०,दुःखित होना) व्यथते विद्यथे व्याथिता व्यथिष्यते व्यथताम व्यध् (४ प०, बींधना) विध्यति विव्याध त्यंद्धा व्यत्स्यति विध्यत व्रज् (१ प०, जाना) परि + व्रजति ववाज व्रजिता विज्यति वजत् शक् (५ प०, सक्ना) शक्नोति शक्नोत शशाक शक्ष्यति शक्ता शङ्क् (१आ०, शंका करना) शङ्कते शशंके शङ्किता शङ्किष्यते शङ्कताम् शप् (१ उ०, शाप देना) शपति-ते शशाप शप्यति शप्ता शपत् शम् (४ प०, शान्त होना) शाम्यति शमिता शमिष्यति शशाम शास्यत शंस् (१ प॰,प्रशंसा करना)प्र+शंसति शशंस शंसिता शंसिष्यति शंसत्

CC-O. Dr. स्थाति वर्षः निष्ठाती चांचनाको अविकासादिक विकासिकां स्थानिक स्थानिक

लङ् ।	विधिलिङ्	आशीर्लिड	् लुङ्	लङ्	णिच् /	कर्म०
अवन्दत	वन्देत	वन्दिपीष्ट	अवन्दिष्ट		वन्दयति	वन्द्यते
अवपत्	वपेत्	उप्यात्	अवाप्सीत्	अवप्स्यत्	वापयति	उप्यते
अवमत्	वमेत्	वम्यात्	अवमीत्	अवभिष्यत्	वसयति	वम्यते
अवसत्	वसेत्	उप्यात्	अवात्सीत्	अवत्स्यत्	वासयति	उप्यते 🐪
अवहत्	वहेत्	उह्या त्	अवाक्षीत्	अवश्यत्	वाहयति	उह्यते
अवात्	वायात्	वायात्	अवासीत्	अवास्यत्	वापयति	वायते
अवाञ्छत्	् वाञ्छेत्	वाञ्छ्यात्	अवाञ्छीत्	अवाञ्छिप्यत्	वाञ्छयति	वाञ्छ्यते
अवेत्	विद्यात्	विद्यात्	अवेदीत्	अवेदिप्यत्	वेदयति	विद्यते
अविद्यत	विद्येत	वित्सीष्ट	अवित्त	अवेत्स्यत	"	,,
अविन्दत्		विद्यात्		अवेदिष्यत्	-))	,,
अवेदयत	वेदयेत			अवेदयिष्यत	21	वेदाते
अविशत्	विशेत्	विश्यात्	अविक्षत्		वेशयति	विस्यत
अवीजयत	वीजयेत्	वीज्यात्	अवीविजत्	अवीजयिष्यत्	वीजयति	वीज्यते
अन्रुणोत्	वृणुयात्	वियात्	अवारीत्	अवरिष्यत्	वारयति	त्रियते
अवृणीत	वृणीत 🏻	चृ षीष्ट	अवरिष्ट		,,	,,
अवारयत्		वार्यात्		अवारियप्यत्	"	वार्यते
अवर्जयत्			अवीवृजत्		वर्जयति	वर्ज्यते
अवर्तत	वर्तेत	वर्तिषीष्ट		अवर्तिप्यत	वर्तयति	वृत्यते
अवर्धत	वर्धेत	वर्धिषीप्ट	अविधिष्ट		वर्धयति	वृध्यते
अवर्पत्	वर्षेत्	वृष्यात्	अवर्षीत्		वर्पयति	वृ प्यते
अवयत्	वयेत्		अवासीत्		वाययति	ऊयते
अवेपत	वेपेत	वेपिषीष्ट	अवेपिष्ट		वेपयति	
अवेष्टत	वेष्टेत	वेष्टिपीष्ट	अवेष्टिष्ट	अवेष्टिप्यत्	वेष्टयति	वेष्ट्यते
अव्यथत	व्यथेत	व्यथिपीष्ट	अव्यथिष्ट	अन्यथिष्यत	व्यथयति	व्यथ्यते
अवि्ध्यत्	विध्येत्	विध्यात्	अव्यात्सीत्	अन्यत्स्यत्	व्यधयति	विध्यते
अव्रजत्	व्रजेत्	व्रज्यात्	अवाजीत्	अव्रजिष्यत्	व्राजयति	व्रज्यते
अशक्नोत	र् शक्नुयात	् शक्यात्	अशकत्	अशस्यत्	शाकयति	शक्यते
अशंकत	शंकेत	शंकिपीष्ट	अशंकिष्ट	अशंकिष्यत	शंकयति	इांक्यते
अशपत्	शपेत्	श्रप्यात्	अशार्पात्	अशप्स्यत्	शापयति	शप्यते
अशाम्यत	् शाम्येत्	शम्यात्	अशमत्	, अशमिष्यत्	शमयति	शम्यते
अशंसत्	शंसेत्	इांस्यात् .			इांसयति	रास्यते
CC-O. Dr. Ram अशोशास	ndev Tripathi (त् शोशासत	Collection at Sa ् शैशिस्यात्	rai(CEDS)	न् अंशिशीसिस्य	भशीशांस्थिति । ।	शिशिष्ये Kosha

लोट् अर्थ लिट लर् लुर् लर् धातु शासिष्यति शास् (२ प०, शिक्षा देना) शास्ति शासिता शास्त शशास शिक्षिष्यते शिक्षताम् शिशिक्षे शिक्षिता शिक्ष् (१ आ०, सीखना) शिक्षते शेताम् श्यिता राविष्यते **हा**श्ये शेते शी (२ आ०, सोना) शोचिता शोचिष्यति शाचतु गुच् (१ प०, शोक करना) शोचित गुशोच शुध्यति गुशोध शोद्धा शोतस्यति शुध्यतु गुध् (४ प०, गुद्ध होना) शोभिष्यते शोभते शोभिता शोभताम् शुभ् (१ आ०, चमकना) गुगुभे शुशोष शोष्टा शुष् (४ प०, सूखना) शुष्यति शोक्ष्यति शुष्यतु श्र (९ प०, नष्ट करना) शृणाति शरिता शरिष्यति शृणातु शशार হাহাী शो (४ प०, छीलना) स्यति शास्यति स्यतु शाता रचुत् (१ प०, चुना) श्चोतित चुश्चोत श्चोतिता श्चोतिष्यति श्रोततु अम् (४ प०, अम करना) आम्यति श्रमिष्यति श्राम्यतु श्राम श्रमिता श्रि(१उ०, आश्रयलेना)आ + श्रयति-ते शिश्राय श्रयिष्यति श्रयिता श्रयतु श्र (१ प०, सुनना) • शृणोति श्रणोत गुश्राव श्रोता श्रोध्यति इलाय् (१आ०, प्रशंसाकरना) ख्लाघते शहलाधे रलाधिता रलाधिष्यते रलाधताम् दिलप् (४ प०, आलिंगन०) दिलध्यति दि। इलेप इलेष्टा . इलेध्यति दिलप्यत श्वस् (२ प०, साँस टेना) श्वसिति श्वसिष्यति श्वसितु शश्वास श्वसिता ष्टिव् (१ प०, थुकना)नि + धीवति तिष्ठेव ष्टेविता ष्ट्रेविष्यति ष्टीवतु सञ्जु (१ प०, मिलना) सजित सङ्ध्यति ससञ्ज सङ्का सजतु सद् (१ प०, बैठना) नि + शीदति सीदतु सत्स्यति ससाद सत्ता सहू (१ आ०, सहना) सहते सेहे सहिता सहिष्यते सहताम् साध् (५ प०, पूरा करना) साध्नोति ससाध साध्नोत सात्स्यति साद्धा सान्त्व्(१०उ०,भैर्य वॅधाना)सान्त्वयति सान्त्वयांचकार सान्त्वयिता सान्त्वयिष्यति सान्त्वयतु सि (५ उ०, बाँधना) सिनोति सिपाय सिनोतु सेता सेप्यति सिच्(६ उ०, सींचना) सिंचति-ते सिपेच सेक्ता सेक्ष्यति सिंचतु सिध् (४ प०, पूरा होना) सिध्यति सिषेध सेत्स्यति सेद्रा सिध्यत सिव् (४ प०, सीना) सीव्यति सिपेव सेविता सेविस्यति सीव्यतु सु (५ उ०, निचोड़ना) सुनोति सुषाव सोता सोध्यति सनोत स् (२ आ०, जन्म देना) स्ते सुष्वे सविता सविष्यते स्ताम् स्च् (१० उ०, स्चना देना)स्चयति स्चयांचकार स्चियता स्चियध्यति स्चयतु स्त्र् (१०उ०, संक्षिप्तकरना)स्त्रयति स्त्रयांचकार स्त्रयिता सूत्रयिष्यति सूत्रयतु स (१ प०, सरकना) सरति ससार सर्ता सरिष्यति सरतु

	लङ्	विधिलिङ्	आशिर्छ	ङ् लुङ्	लङ्	णिच्	कर्म०
	अशात्	इिष्यात्	शिष्यात्	अशिषत्	अशासिष्यत्		
	अशिक्षत	शिक्षेत	शिक्षिषीष्ट	अशिक्षिष्ट	अशिक्षिष्यत	शिक्षयति	शिक्ष्यते
	अशेत	शयीत	श्यिषीष्ट	अशयिष्ट	अश्यिप्यत	शाययति	शय्यते
		शोचेत्	गुच्यात्	अशोचीत्	अशोचिष्यत्	शोचयति	शुच्यते
	अगुध्यत्		गुध्यात्		अशोतस्यत् 🖟		शुध्यते
	No. of Lot, Lines, Lot, Lines, Lot, Lines, Lot, Lines, Lin	शोभेत	शोभिपीष्ट	अशोभिष्ट	अशोभिष्यत		
	1000	गुष्येत्	शुष्यात्	- '			
		शृणीयात्		अशारीत्			14.12
*	अश्यत्		शायात्		अशास्यत्		" - y Chelle
	अश्चोतत्		रचुत्यात्				
	ंअश्राम्यत्		श्रम्यात्			श्रमयति	
	अश्रयत्		श्रीयात्				
	अशृणोत्		श्रूयात्	अश्रौषीत्			0
	अरलाघत			: अरलाधिष्ट			
	अदिल्प्यत्			अदिलक्षत्	अश्लेक्ष्यत्	इ लेपयति	
	अश्वसीत्			अश्वसीत्	THE RESERVE AND ADDRESS OF THE PARTY OF THE		
	अष्ठीवत्			अष्ठेवीत्			
	असजत्			असाङ्क्षीत्			
	असीदत्		सद्यात्	असदत्	असत्स्यत्		
	असहत			असिंष्ट	असिह्ध्यत		
		साध्नुयात्		असात्सीत्			
		र् सान्त्वयेत्		(अससान्त्वत्			
		सिनुयात्		असैषीत्		साययति	सीयते
	असिंचत्	सिंचेत्		असिचत्		सेचयति	सिच्यते
	असिध्यत्	सिध्येत्	सिध्यात्	असिधत्	असेत्स्यत्	साधयति	सिध्यते
	असीव्यत्	सीव्येत्	सीव्यात्	असेवीत्	असेविष्यत्	सेवयति	सीव्यते
	असुनोत्	सुनुयात्	स्यात्	असावीत्	असोप्यत्	साववति	स्यते
	अस्त	सुवीत	सविषीष्ट	असविष्ट	असविप्यत	,,	"
	असूचयत्	सूचयेत्	सूच्यात्	अस्मुचत्			सूच्यते
	अस्त्रयत्	सूत्रयेत्	सूच्यात्				सूत्र्यते
	असरत्	सरेत्	स्रियात्	The state of the s		सारयति	स्रियते
CC-	OSIDE RAMO	deस् जेक् athi Col	॥ स्त्रान्य । ज	ar सार्वास्त्रीड ्र). [Siddle Siddle	सुजयाति nanta eGang	oth Gyaan Kosha

लोट् लट् अर्थ लिस् लुर् लर् धातु सेवताम् सेविता सेविष्यते सेवते सिषेवे सेव् (१आ०, सेवा करना) सास्यति स्यतु ससौ सो (४ प०, नष्ट होना) अव + स्यति साता स्विलिष्यति स्वलतु स्वलिता स्खल् (१ प०, गिरना) स्खलित चस्खाल स्तौतु स्तोष्यति स्तोता स्तौति स्तु (२ उ०, स्तुति करना) तुष्टाव स्तरिष्यति स्तृणातु स्तृगाति स्तरिता स्त (९ उ०, दकना, फैलाना) तस्तार तिष्ठतु तस्थौ स्थास्यति तिष्ठति स्था (१ प०, रुकना) स्थाता स्नास्यति सस्नौ स्नाति स्नातु स्ना (२ प०, नहाना) स्नाता स्नेहिता स्नेहिष्यति सिष्णेह स्निह्यतु स्निहु (४ प०, स्नेह करना) स्निह्यति पस्पन्दे स्पन्दिता स्पन्दिष्यते स्पन्दताम स्पन्द (१ आ०, फड़कना) स्पन्दते स्पर्ध (१ आ०, स्पर्धा करना) स्पर्धते पस्पर्धे स्पर्धिता स्पर्धिष्यते स्पर्धताम् पस्पर्श स्प्रशति स्पृश् (६ प०, छूना) स्प्रदा स्प्रक्ष्यति स्पृशतु स्पृह्यांचकार स्पृह्यिता स्पृह्यिष्यति स्पृह्यतु स्पृह (१० उ०, चाहना) स्प्रहयति स्फ्रट् (६ प०, खिलना) पुस्फोट रफ़टिता स्फ़टिष्यति स्फटति स्फरतु स्फुर् (६ प०, फड़कना) पुरफोर स्फ़रिता स्फ़रिष्यति स्फुरति स्फ़रतु स्म (१ आ०, मुस्करानां) समयते सिस्मिये समेध्यते स्मेता समयताम् समृ (१ प०, सोचना) स्मरति स्मरिष्यति स्मर्ता समरत सस्मार स्यन्द् (१ आ०, वहना) स्यन्दते सस्यन्दे स्यन्दिता स्यन्दिष्यते स्यन्दताम् स्रंसते स्रंस् (१ आ०, सरकना) सस्रंसे स्रंसिष्यते स्रंसिता संसताम् सु (१ प०, चूना, निकलना) स्रवति सुसाव स्रोता स्रोध्यति स्रवत् स्वद् (१ उ॰,स्वाद लेना) आ+स्वाद्यति स्वाद्यांचकार स्वाद्यिता स्वाद्यिष्यति स्वाद्यतु स्वप् (२ प०, सोना) स्वपिति सुष्वाप स्वप्स्यति स्विपतु स्वप्ता हन् (२ प०, मारना) हन्ति हिनध्यति जवान हन्ता हन्तु इस् (१ प०, हॅसना) हसति हसिता हसिष्यति जहास हसतु हा (३ प०, छोड़ना) जहाँ जहाति हास्यति हाता जहातु हिंस् (७ प०, हिंसा करना) हिनस्ति जिहिंस हिंसिता हिंसिप्यति हिनस्त हु (३ प०, यज्ञ करना) जहोति होता होष्यति जहोत जुहाव ह (१ उ०, ले जाना, चुराना) हरति-ते जहार हर्ता हरिष्यति हरतु हुप् (४ प०, खुश होना) **ह**ष्यति जहर्ष . हपिता हपिष्यति हृष्यतु ह्नु (२ आ०, छिपाना) अप + ह्ते जुह्वे ह्रोता हुनोष्यते हुनुताम् हम् (१ प०, कम होना) हसति ह्रसिता हसिष्यति जहास हसतु ही (३ प०, लजा करना) जिहेति जिह्नाय हेता हेध्यति जिह्नेतु

लङ् ।	विधितिङ.	्थाशोर्छिड	ह् लुङ	लङ्	णिच	कर्म॰
असेवत	तेवेत	सेविषीष्ट	असेविष्ट	असेविष्यत	सेवयति	सेव्यते
अस्यत्	स्येत्	सेयात्	असासीत्	असास्यत्	साययति	सीयते
अस्तलत्	स्वलेत्	स्खल्यात्	अस्वालीत			स्वल्यते
अस्तौत्	स्तुयात्	स्त्यात्	अस्तावीत्			स्तूयते
अस्तृणात्	•	स्तीर्यात्	अस्तारीत्			स्तीर्यते
अतिष्ठत्	तिष्ठेत्	स्थेयात्	अस्थात्	अस्थास्यत्		स्थीयते
अस्नात्	स्नायात्		अस्नासीत		स्नपयति	स्नायते
अस्निह्यत		स्निह्यात्	अस्निहत	(अस्नेहिष्यत्	स्नेहयति	स्निह्यते
अस्पन्दत	स्पन्देत	स्पन्दिपीष्ट	अस्पन्दिः		स्पन्दयति	स्पन्चते
अस्पर्धत	स्पर्धेत	स्पर्धिपीष्ट	अस्पधिष्ट	अस्पर्धिप्यत	स्पर्धयति	स्पर्ध्वते
अस्पृशत्	सृशेत्	स्पृक्ष्यात्	अस्प्राक्षीत	(अस्यक्ष्यत्	स्पर्शयति	स्पृश्यते
अस्पृह्यत		सृह्यात्	अपस्पृहत्			स्रुह्मते
अस्फुटत्		सुख्यात्	अस्फ्रटीत्			स्फुट्यते
अस्फुरत्		स्फूर्यात्	अस्फुरीत्	अस्फुरिष्यत्		स्फूर्यते
अस्मयत	स्मयेत	स्मेषीच्ट	अस्मेष्ट	अस्मेष्यत	साययति	स्मायते
अस्मरत्	स्मरेत्	स्मर्यात्	अस्मापींत्	अस्मरिष्यत्	स्मारयति	स्मर्वते
अस्यन्दत	स्यन्देत	स्यन्दिपीध्ट	अस्यन्दिष्ट	अस्यन्दिष्यत	स्यन्दयति	स्यद्यते
असंसत	संसेत	संसिपीष्ट	असंसिष्ट	असंसिष्यत	संसयति	स्रस्यते
अस्रवत्	स्रवेत्	स्र्यात्	अमुसुवत्	अस्रोध्यत्	स्रावयति	स्यते
अस्वादय	त् स्वादयेत्	स्वाद्यात्	असिष्वदत्	अस्वादियध्यत्	स्वादयति	स्वाद्यते
अस्वपीत्	स्वप्यात्	मुप्यात्	अस्वार्ग्शत	् अस्वप्स्यत्	स्वापयति	मुप्यते
अहन्	हन्यात्	वध्यात्	अवधीत्	अहनिष्यत्	घातयति	हन्यते -
अहसत्	हसेत्	हस्यात्	अहसीत्	अहसिष्यत्	हासयति	हस्यते
अजहात्	ज् <i>ह्यात्</i>	हेयात्	अहासीत्	अहास्यत्	हापयति	हीयते
अहिनत्	हिंस्यात्	हिंस्यात्	अहिंसीत्	अहिंसिष्यत्	हिंसयति	हिंस्यते
अजुहोत्	जुहुयात्	हूयात्	अहौषीत्	अहोष्यत्	हावयति	हूयते
				अहरिष्यत्		हियते
अहुप्यत्	हृष्येत्	हृष्यात्	अहृषत्	अहर्षिष्यत् ह	हर्षयति	हृष्यते
अहुत	हुवीत	ह्रोषीष्ट	अह्रोष्ट	अह्रोध्यत 💮	ह्रावयति	ह्रयते
अहसत्	हसेत्	हस्यात्	अहासीत्	अ्हसिष्यत् ह	हासयति	हस्यते
अजिहेत्	जिह्रीयात्	हीयात्	अहैषीत्	अहेष्यत् है	र्पयति	ह्रीयते
आह्रयत् C-O. Dr. Ram	आह्वयेत् ndev Tripathi	आहूयात् Collection at S	आहत् arai(CSDS)	आह्वास्यत् . Digitized By Sid	भाह्याययति dhanta eGang	आहूयते gotri Gyaan Kosha

प्रौढ-रचनानुवादकौमुदी (१) अकर्षक धातुएँ

ल्रजासत्तास्थितिजागरणं शयनकीडारुचिदीप्त्यर्थे वृद्धिक्षयभयजीवतिमरणम् । धातुगणं तमकर्मकमाहुः ॥

इन अथों वाली घातुएँ अकर्मक (कर्म-रहित) होती हैं: लजा, होना, रकना या बैठना, जागना, बढ़ना, घटना, डरना, जीना, मरना, सोना, खेलना, अच्छा लगना, चमकना।

(२) अनिट् धातुएँ (जिनमें वीच में इ नहीं लगता)

क ऋदन्त औ' शी श्रि डी को छोड़कर एकाच् सब । शक् पच् वच मुच् सिच् प्रच्छ त्यज् भज्, भुज् यज सुज् मस्ज युज ॥ अद् पद्य खिद् छिद् विद्य तुद् नुद् भिद् सद कुध् क्षुध् बुध । बन्ध् युध् रुध् साध् व्यध् शुध्, सिध् मन्य हन् क्षिप् आप् तप ॥ १ ॥ तृष्य हप् लिप् छप् वप स्वप्, शप् सुप रभ् लभ् गम । नम् यम् रम कुश् दंश् दिश् हश्, मृश् विश् सुश् पुष्य दुष ॥ कुष् तुष् दिष हिलप् शुष्य शिष् वस्, दह् दिह् लिह् औ' रुह् वह । धातु ये सब अनिट् हैं, परिगणन इनका है यह ॥ २ ॥

सूचना—अन्त्याक्षरों के कम से ये धातुएँ पद्मवद्ध हैं। दिवादिगणी धातुओं में, इस प्रकार की अन्य धातुओं से अन्तर के लिए, अन्त में य लगा है। पहले क् अन्तवाली शक् धातु, वाद में च् अन्तवाली, इसी प्रकार कमशः धातुएँ हैं। अजन्त धातुओं में ऊकारान्त और दीर्ध ऋकारान्त तथा शी श्रिडी धातु सेट् हैं, शेष अनिट् हैं। जैसे—चि, जि, कृ, हृ, धृ, भृ आदि। केवल विशेष प्रचलित धातुओं का ही संग्रह है। अप्रचलित ३० धातुओं का संग्रह नहीं है। सेट् धातुओं में धातु और प्रत्यय के बीच में इ लगता है। इट् का अर्थ है 'इ'। सेट् का अर्थ है, स+इट् अर्थात् 'इ' वाली। इसी प्रकार

CC-O. Dहा स्त्रिक्त निर्धि । से C आन् tibrहरू आधारि र्डाइआ हों शुष्प की छा जुल्मि | partie Gyaan Kosha

(५) प्रत्यय-विचार

(१) क्त (२) क्तवतु प्रत्यय (देखो अभ्यास ३७, ३८, ३९)

सूचना—क और क्तवतु प्रत्यय भ्तकाल में होते हैं। क्त का त और क्तवतु का तबत् शेष रहता है। क्त कर्मवाच्य या भाववाच्य में होता है, क्तवतु कर्तृवाच्य में। धातु को गुण या वृद्धि नहीं होती है। संप्रसारण होता है। अन्य नियमों के लिए देखों अभ्यास ३७-३९। क्त-प्रत्ययान्त के रूप पुंलिंग में रामवत्, स्त्रीलिंग में आ लगाकर रमावत् और नपुंसकलिंग में गृहवत् चलेंगे। यहाँ केवल पुंलिंग के ही रूप दिए गए हैं। क्त-प्रत्ययान्त का क्तवतु-प्रत्ययान्त रूप बनाने का सरल प्रकार यह है कि क्त-प्रत्ययान्त के बाद में 'वत्' और जोड़ दें। अभ्यास ३९ में दिए नियमानुसार तीनों लिंगों में रूप चलाएँ। धातुएँ अकारादि-क्रम से दी गई हैं।

,							
अ द्	जग्धः	कृष्	कृष्टः ।	घा	घातः)	त्यज्	त्यक्तः
. ((अन्नम्)	क्	कीर्णः		घाणः 🕽	भूते त्रे	त्रातः
अधि+इ	अधीतः	क्रन्द्	क्रन्दितः	चर्	चरितः	दंश्	दष्ट:
अर्चं	अचितः	界共	कान्तः	चल्	चलितः	दण्ड्	दण्डितः
अस् (२प	.) भृतः	की	न्धीत:	चि	चितः	र्दम्	दान्तः
आप्	आप्तः	क्रीड्	क्रीडितः	चिन्त्	चिन्तित:	दय्	दयितः
√आ+रभ्	आरब्धः	ऋध्	क़ुद्ध:	चुर्	चोरितः	र्दह	दग्धः
	भालम्बितः	क्षि	क्षीणः	चेष्	चेध्टितः	र दा	दत्तः
√आ+हे		क्षिप्	क्षित:	हिं द्	छिन्नः	र दिव् चृनः	, द्यूतः
इ	इत:	क्षुभ्	क्षुब्ध:	√ जन्	जातः	दिश्	दिष्ट:
इप्	इष्टः	खन्	खातः	जि	जित:	दीप्	दीप्तः
ईक्ष्	ईक्षितः	खाद्	खादित:	जीव्	जीवितः	र्दुह् .	दुग्धः
√उत्+डी	उड्डीनः	गण्	गणितः	র্ জু	जीर्णः	र हश्	दृष्ट:
कथ्	कथितः	गम्	गतः	ज्ञा	ज्ञातः	दो (दा)	दितः
ब म्	कान्तः	गर्ज_	गर्जितः	ज्वल्	ज्वलितः	द्युत्	द्योतितः
कम्प्	कम्पितः	गृ	गीर्णः	तन्	ततः	धा	हितः
कुप्	कु पितः	गै (गा)	गीतः	तप्	ततः	धाव्	धावितः
कूर्द्	कृदिंतः	ग्रस्	ग्रस्तः	तुप्	तुप्ट:	될	् धृत:
			गृहीतः		तृतः zed By Siddha	ध्मा	
C-O. Dr. Ram	dev Tripath	i'Collection	at Sarai(CSI	DS). Dîgiti:	zed By Siddha	inta eGangot	ri Gyaan K

२५६			प्रौढ-रचनान्	नुवादको <u>ं</u> सुदी			(क, क्तवतु)
र्थं सं	ध्यातः	भुज्	भुक्तः	। लिख्	्रिखत <u>ः</u>	્રશ્રુ	श्रुतः
र् ष्यंस्	ध्वस्तः	भू	भृतः	र्शिह	लीद:	इिल्प्	
√नम्	नतः	H	भृतः	√ दुम्	खुब्धः	४ सद्	सन्नः
नश्	नष्टः	भ्रम्	भ्रान्तः	वच् (ग्र)	उक्तः	1	सात:
निन्ट्	निन्दितः	मद्	मत्तः	√वड्	उदितः	√सह्	सोढ:
नी ं	नीतः	मन्	. भतः	वन्द	वन्दितः	साध्	साधित:
र नृत्	नृत्तः	मन्थ्	मन्थितः	र्वप्	उतः	√सिच्	सिक्तः
√ पच्	पकः	भा	ामतः	√वस् .	उपितः	√सिघ्	सिद्ध:
पट्	परितः	मिल्	मिलितः	√वह्	ऊढ:	1	स्यूतः
पत्.	र्पाततः	√मुच्	मुक्तः	वा	वातः	√सुज्	सुप्ट:
√ पट्	पन्नः	मुद्	मुद्तिः		विकसितः	सेव्	सेवितः
पलाय्		मुह	मुग्धः, मृदः	विद् (२प	.)विदितः	√सो (स।	ा) सितः
र्पा (१	प॰) पीतः	म्चर्छ	मृच्छितः	विद् (१०)) वेदितः	ख	स्तुत:
पाल्	पालितः	मृज्	मृष्ट:	विश्	विष्ट:	√स्था	स्थित:
पुष्	पुष्ट:	√यज्	इप्ट:	बृत्	वृत्तः .		स्नातः
पूज्	पृजितः	यत्	यतितं:	वृध्		√िंस्नह्	हिनग्धः
√q e	पूर्णः	√यम्		र्वे व		√स्टुश्	स्पृष्टः
√ प्र न्छ्	र्वेद्धः	या	यातः	व्यथ्		√स्वप्	सुतः
प्रथ्	प्रिथतः	याच्	याचितः	√व्यध्	विद्ध:	स्वाद्	स्वादितः
म + हि	प्रहितः	/युज्	युक्तः	शंक्	शंकितः	√स्विट् —	स्विन्नः
प्रेर्	प्रेरित:	/युध्	युद्दः	शक्	शक्तः	√हन्	इत:
√वन् <u>ध</u> ्	वदः	रक्ष्	रक्षितः	शप्	. शतः	हस्	हसितः
√ बुध्	बुद्धः	स्च्	रचितः 🗸	इाम्	शान्तः	√हा (३प	०) हीनः
√ त्रू	उक्तः ।	√रञ्	रत्तः 🗸	शास्	शिष्ट:		no) हानः
भक्ष्	भक्षितः 🗸	रम्	रतः	হািধ্	शिक्षितः	हिंस्	हिंसित:
√ भज्	भक्तः	रुच्	रुचितः	शी	शंयितः	हरु	हुत:
√ भज्ज्	भग्नः	स्ट्		गुच्	ग्रुचितः	9 100	हुत:
भण्	भणितः	रुध्	स्द्रः		शोभितः	हुप्	हुप्ट:
भाप्	भाषितः 🗸	र्वह	रुद्धः 🗸	्र ग्रुष्	गुप्कः	हस	ह्रसितः
√ भिद्		/लभ्	लब्धः 🗸	श्	शीर्णः	ही हीत	नः हीणः
CC-O. DHRamdev	Tripadii Coll	ल्टा on at S	Sara i(Pit) S	igitized By	Sidehanta e	Gangotri G	yaan Kosha हुतः

(३) शतृ प्रत्यय

(देखो अभ्यास ४०)

स्चना—परस्मैपदी धातुओं के लट् के स्थान पर शतृ होता है। शतृ का अत् शेष रहता है। पुंलिंग में पठत् के तुल्य, स्त्रीलिंग में ई लगाकर नदी के तुल्य और नपुंसक-लिंग में जगत् के तुल्य रूप चलेंगे। यहाँ पर केवल पुंलिंग के रूप दिए गए हैं। रूप बनाने के नियमों के लिए देखें अभ्यास ४०। धातुएँ अकारादि-क्रम से दी गई हैं।

				1.410 00	। वातुष	अकारादि-इ	कम संदी व	गई हैं।
	अद्	अदन्	चल्	चलन्	पत्	पतन्	व्यध्	विध्यन्
	अर्च	अर्चन्	चि	चिन्वन्	पा (१०			शक्नुवन्
-		प०) सन्	छिद्	छिन्दन्	पाल्	पालयन्	इाप्	शपन्
	आप्	आप्नुवन्	जप्	जपन्	पूज्	पूजयन्	शम्	शाम्यन्
		ह् आरोहन्	জি	जेयन्	प्रच्छ्	पृच्छन्	शुष्	गुप्यन्
		आह्रयन्	जीव्	जीवन्	प्रेर्	प्रेरयन्	क्षि	अय न्
-	इ	यन्	ज्वल्	ज्वलन्	बन्ध्	वध्नन्	Ŋ	श्रण्वन्
	इष्	इच्छन्	तप्	तपन्	भक्ष्	भक्षयन्	सद्	सीदन्
	कुप्	कुप्यन्	तुद्	तुद्न्			सिच्	सिञ्चन्
	कृष्	कर्षन्	. तुष्	तुष्यन्	भज्	भजन्	सिव् -	सीव्यन्
	क्	किरन्	तॄ	तरन्	भिद्	भिन्दन्	स्	सरन्
	क्रन्द्	क्रन्दन्	त्यज्	त्यजन्	भृ	भरन्	सुज्	सुजन्
	क्रम्	क्राम्यन्	दण्ड्	दण्डयन्	भू	भवन्	स्प्	सर्पन्
	क्रीड्	क्रीडन्	दह्	दहन्	भ्रम्	भ्रमन्)	ख	स्तुवन्
	कुध्	ऋध्यन्	दिव्	दीव्यन्	मिल्	मिलन्	स्था	तिष्ठन्
	क्षम्	क्षाम्यन्	दिश्	दिशन्	रक्ष्	रक्षन्	स्पृश्	स्पृशन्
	क्षिप्	क्षिपन्	दुह्	दुहन्	रच्	रचयन्	₹मृ	सारन्
	खन्	खनन्	दश्	पश्यन्	रुद्	रुदन्	स्वप्	स्वपन्
	खाद्	खादन्	धाव्	धावन्	लघ्	लषन्	हन्	इनन्
	गण्	गणयन्	घृ	धरन्	लिख्	लिखन्	हस्	हसन्
	गम्	गच्छन्	ध्यै	ध्यायन्	लिह्	लिहन्	हा (३५०)	जहत्
	गर्ज	गर्जन्	नम्	नमन्	वद्	वदन्	हिंस्	हिंसन्
	ग्	गिरन्	नश्	नश्यन्	वस्	वसन्	छ	जुहृत्
	गै	गायन्	निन्द्	निन्दन्	वह्	वहन्	ह	हरन्
	घा	जिघन्	नृत्	नृत्यन्	विश्ं.	विशन्	हुष्	हृष्यन्
CC-0	वर् D. Dr. Rar	चरन् ndev Tripath	पठ् i Collection a	पठन् at Sarai(CSI	वृष् DS). Digitiz	वर्षन् zed By Siddha	anta eGangot	ह्रयन ri Gyaan Kosha

(४) शानच् प्रत्यय

(देखो अभ्यास ४१)

सूचना—आत्मनेपदी धातुओं के लट् के स्थान पर शानच् होता है। उभयपदी धातुओं के लट् के स्थान पर शतृ और शानच् दोनों होते हैं। शानच् का आन शेष रहता है। शानच् प्रत्ययान्त के रूप पुं० में रामवत्, स्त्री० में आ लगाकर रमावत् और नपुं० में गृहवत् चलेंगे। यहाँ पर पुंलिंग के ही रूप दिए हैं। धातुएँ अकारादिकम से दी गई हैं।

Alin Ci	आत्मनेपर्द	धातुएँ		उभयपदी धातुएँ			
अधि 🕂	ई अधीयानः	मन्	मन्यमानः	कथ्	कथयन्	कथयमानः	
	न् आरभमाणः	मुद्	मोदमानः	कृ	कुर्वन्	कुर्वाण:	
	् आलम्बमानः	मृ	म्रियमाणः	क्री	क्रीणन्	क्रीणानः	
आस्	आसीनः	यत्	यतमानः	ग्रह्	गृह्णन्	गृह्णानः	
ईक्ष्	ईक्षमाणः	याच्	याचमानः	चि	चिन्वन्	चिन्वानः	
	ईहमानः	युध्	युध्यमानः	चिन्त्	चिन्तयन्	चिन्तयमानः	
	उड्डयमानः	रुच्	रोचमानः	चुर	चोरयन्	चोरयमाणः	
कम्प्	कम्पमानः	लभ्	लभमानः	श	जानन्	जानानः	
	कूर्दमानः	वन्द्	वन्दमानः	तन्	तन्वन्	तन्वानः	
गाह्	गाहमानः	वि+राज्	विराजमानः	दा	ददत्	ददानः	
ग्रस्	ग्रसमानः	वृत्	वर्तमानः	धा	दधत्	दधानः	
चेष्ट्	चेष्टमानः	वृध्	वर्धमानः	नी	नयन्	नयमानः	
जन्	जायमानः	व्यथ्	व्यथमानः	पच्	पचन्	पचमानः	
त्रै	त्रायमाणः	शंक्	शंकमानः	ब्रू	ब्रुवन्	ब्रुवाणः	
त्वर्	त्वरमाणः	भिक्ष्	भिक्षमाणः	भुज्	भुञ्जन्	भुञ्जानः	
दय्	दयमानः	शी	शयानः	मुच्	मुञ्चन्	्मुञ्चमानः	
द्युत्	द्योतमानः	गुच्	शोचमानः	यज्	यजन्	यजमानः	
ध्वंस्	ध्वंसमानः	ग्रुभ्	शोभमानः∠	युज्	युज्जन्	युञ्जानः	
पलाय्	पलायमानः	रलाघ्	रलाघमानः	रुध्	रुन्धन्	रुन्धानः	
प्रथ्	प्रथमानः	सं + पद्	संपद्यमानः	वह्	वहन्	वहमानः	
बाध्	बाघमानः	सह्	सहमानः	প্	श्रयन्	श्रयमाणः	
भास्	भासमानः	सेव्	सेवमानः	सु	सुन्वन्	सुन्वानः	

(५) तुम्रुन्, (६) तव्यत्, (७) तृच् प्रत्यय (देलो अभ्यास ४२, ४५, ४८)

स्चना—(क) तुमन् प्रत्यय 'को' 'के लिए' अर्थ में होता है। तुमन् का तुम् रोष रहता है। तुमन्-प्रत्ययान्त अव्यय होता है, अतः रूप नहीं चलते। धातु को गुण होता है। विशेष नियमों के लिए देखें अभ्यास ४२। (ख) तव्यत् प्रत्यय लगाकर रूप बनाने का सरल उपाय यह है कि तुम् प्रत्ययवाले रूप में तुम् के स्थान पर तव्य लगा दें। तव्यत् प्रत्यय 'चाहिये' अर्थ में होता है। तव्यत् का तव्य शेष रहता है। पुं० में तव्य-प्रत्ययान्त के रूप रामेवत्, स्त्री० में आ लगाकर रमावत्, नपुं० में गृहवत् चलेंगे। विशेष नियमों के लिए देखें अभ्यास ४५। (ग) तृच् प्रत्यय कर्ता या 'करने वाला' अर्थ में होता है। तृच् का तृ शेष रहता है। तृच् प्रत्यय लगाकर रूप बनाने का सरल उपाय यह है कि तुम् प्रत्ययवाले रूप में तुम् के स्थान पर तृ लगा दें। तृच् प्रत्ययान्त के रूप पुं० में कर्तृ के तुल्य, स्त्री० में ई लगाकर नदी के तुल्य और नपुं० में कर्तृ नपुं० के तुल्य चलेंगे। तृच् प्रत्यय के विशेष नियमों के लिए देखें अभ्यास ४८। उदाहरणार्थ— तुम्, तव्य, तृ लगाकर इन धातुओं के ये रूप होंगे। कृ-कर्तुम्, कर्तव्य, कर्तृ। हन्दुम्, हर्तव्य, हर्तृ। लिख्न्लेखितुम्, लेखितव्य, लेखितृ। तव्य और तृच् में तुम् के तुल्य ही सन्ध के कार्य होंगे। धातुएँ अकारादि-क्रम से दी गई हैं।

	अद्	अतुम्	ईक्ष्	ईक्षितुम्	की	क्रेतुम्	ग्रस्	य्रसितुम् 🗸
	अधि 🕂	इ अध्येतुम्	कथ्	कथियतुम्	क्रीड्	क्रीडितुम्	प्रह्	ग्रहीतुम्
	अर्च	अचिंतुम्	कम्	कमितुम्	क्रुध्	क्रोडुर्म्	वा	घातुम्
	अस्(२प	ा.)भवितुम्	कम्प्	कम्पितुम्	क्षम्	क्षमितुम्	चर्	चरितुम्
	आप्	आप्तुम्	कुप्	कोपितुम्	क्षिप्	क्षेप्तुम्	' चल्	चिहितुम्
	आ+रभ्	आरब्धुम्	कूर्द्	क्दिंतुम्	खन्	खनितुम्	चि	चेतुम्
	आ+रुह्	आरोडुम्/	कु	कर्तुम्	खाद्	खादितुम्	चिन्त्	चिन्तयितुम्
	आ+लप्	आलपितुम्	कृप्	कल्पितुम्	गण्	गणियतुम्	चुर्	चोर्यातुम्
	आस्	आसितुम्	कृष्	कर्ष्ट्रम्	गम्	गन्तुम्	चेष्ट्	चेष्टितुम्
	आ+हे	आह्वातुम्	क्	किंग्रिम्	गर्ज	गर्जितुम्	छिद्	छेत्तुम्
	इ	एतुम्	क्रन्द्	क्रन्दितुम्	गॄ	गरितुम्	जन्	जनितुम्
CC-	O. Dr. Ra	mdeशिवाम्ath	i Collectio	at क्रिक्रिक्स	जी (मुह्	ed By Saldha	ntareÇan	gotr नाभुत्रम् Kosha

CC-O.

440							
জি	जेतुम्	√पद् □	पत्तुम्	याच्	याचितुम्	शप्	शप्नुम्
जीव्	जीवितुम्	पलाय्	पलायितुम्	√युज्	योक्तुम्	√ शम्	शमितुम्
ज्ञा	ज्ञातुम्	पा (१,	२प.) पातुम्	युध्	योद्धुम्	शिक्ष्	इिक्षितुम्
ज्वल्		पाल्	पालयितुम्	रक्ष्	रक्षितुम्	शी	शयितुम्
डी	डियतुम्	युष्	पोषितुम्	रच्	रचियतुम्	√गुच्	शोचितुम्
ं तप्	तप्तुम्	पृज्	पूजियतुम्	रम्	रन्तुम्	गुभ्	शोभितुम्
तृप्	तर्पितुम्	√प्रच्छ्	प्रष्टुम्	राज्	राजितुम्	श्रि	श्रयितुम्
√तॄ	तरितुम्	प्रेर्	प्रेरियतुम्	√ रुच्	रोचितुम्	श्रु	श्रोतुम्
त्यज्	त्यक्तुम्	वन्ध्	बन्दुम्	रुद्	रोदितुम्	दिलघ्	ब्लेष्टुम्
त्रै	त्रातुम्	बाध्	बाधितुम्	रुध्	रोद्धम्	सह्	सोडुम्
√दंश्	दंष्टुम्	बुध्	बोद्धुम्	लभ्	लब्धुम्	सिच्	सेत्तुम्
दह्	दग्धुम्	/बू	वक्तुम्	लम्ब्	लम्बितुम्	सिध्	सेद्रुम्
दा	दातुम्	भक्ष्	भक्षयितुम्	लप्	लितुम् `	सिव्	सेवितुम्
दिश्	देष्टुम्	/भज्	भक्तुम्	लिख्	हेखितुम्	सु	सोतुम्
दीक्ष्	दीक्षितुम्	भाप्	भाषितुम्	√िलह	लेंदुम्	स्	सर्तुम्
दुह्	दोग्धुम्	भिद्	भेत्तुम्	√ छुभ्	लोभितुम्	'सुज्	स्रादुम्
गुत्	चोतितुम्	भी	भेतुम्	वच्	वक्तुम्	√सृप्	सर्नुम्
दुह्	द्रोग्धुम्	भुज्	भोक्तुम्	वद्	वदितुम्	सेव्	सेवितुम्
धा	धातुम्	મૃ	भवितुम्	वन्द्	वन्दितुम्	स्तु	स्तोतुम्
धाव्	धावितुम्	भृ	भर्तुम्	वप्	वप्तुम्	स्था	स्थातुम्
, धृ	धर्तुम्	√भ्रम्	भ्रमितुम्	वस्	वस्तुम्	स्ना	स्नातुम्
ध्यै	ध्यातुम्	मन्	मन्तुम्	वह्	बोद्धम्	स्पर्ध	स्पर्धितुम्
ध्वंस्	ध्वंसितुम्	मा	मातुम्	विद्(४,	६,७) वेत्तुम्	रमृश्	स्प्रष्टुम्
नम्	नन्तुम्	मिल्	मेलितुम्	/विश्	वेष्टुम्	स्मृ	स्मर्तुम्
√ नश्	नशितुम्	मुच्	मोक्तुम्	वृ(१०)	वार्यायतुम्	हन्	हन्तुम्
निन्द्	निन्दितुम्	मुद्	मोदितुम्	वृत्	वर्तितुम्	हस्	हसितुम्
नी	नेतुम्	편	मर्तुम्	√वृध्	विधितुम्	हा	हातुम्
नृत्	नर्तितुम्	√यज्	यष्टुम्	वृ ष्	विषितुम्	हिंस्	हिंसितुम्
पच्	पक्तुम्	यत्	यतितुम्	√वे .	वातुम्	हु	होतुम्
पुट	पटितुम्	यम्	यन्तुम्	इांक Digitized By	शंकितुम्	E	हर्तुम् Gyaan Kosha
पत्	पतितुम्	या	यातुम्	शक्	शक्तावाव स	र हुप्	हिषितुम्

(८) क्त्वा, (९) ल्यप् प्रत्यय

(देखो अभ्यास ४३,४४)

स्चना—'कर' या 'करके' अर्थ में क्त्वा और ल्यप् प्रत्यय होते हैं। क्त्वा का त्वा और ल्यप् का य शेष रहता है। धातु से पहले उपसर्ग नहीं होगा तो क्त्वा होगा। यदि उपसर्ग पहले होगा तो ल्यप् होगा। दोनों प्रत्ययान्त शब्द अव्यय होते हैं, अतः इनके रूप नहीं चलते। दोनों प्रत्यय लगाकर रूप बनाने के नियमों के लिए देखें अभ्यास ४३, ४४। जिन उपसर्गों के साथ ल्यप् वाले रूप अधिक प्रचलित हैं, वही यहाँ दिए गए हैं। धातुएँ अकारादि-क्रम से दी गई हैं।

अद्	जग्ध्वा	प्रजग्ध्य 🗸	क्षम्	क्षमित्वा	संक्षम्य
अधि + इ	_	अधीत्य	क्षिप्	क्षिप्त्वा	प्रक्षिप्य
अच्	अचित्वा	समर्च्य	क्षुम्	√ क्षुमित्वा	प्रक्षुभ्य
अस् (२ प०) भूत्वा	सम्भूय	खन्	खनित्वा }	उत्त्वन्य
अस् (४ प) असित्वा	प्रास्य 🗸		खात्वा ∫	उत्स्वाय
आ + द		आदत्य	गण्	गणयित्वा	विगणय्य
आप्	आप्त्वा	प्राप्य	गम्	गत्वा	{ आगम्य आगत्य
आस्	आसित्वा	उपास्य		2.0.2	
इ	इत्वा	प्रेत्य 🗸	गृ	✓ गीर्त्वा	उद्गीर्य
इष्	इष्ट्रा	समिष्य 🗸	गै (गा)	ं गीत्वा	प्रगाय
			ग्रस् -	ग्रसित्वा	संग्रस्य
ईक्ष्	ईक्षित्वा	समीक्ष्य	ग्रह्	गृहीत्वा	संगृह्य
उत्+डी		उड्डीय	घा	प्रात्वा	आध्राय
कम्	कमित्वा	संकाम्य 🗸	चर्	चरित्वा	आचर्य
कूर्द्	कृर्दित्वा	प्रकृर्द्य			
कृ	कृत्वा	उपकृत्य	चल्	चिलत्वा	प्रचल्य
कृष्	कृष्ट्वा	आकृष्य	चि	चित्वा	संचित्य
क	√ कीर्त्वा	विकीर्य	चिन्त्	चिन्तयित्वा	संचिन्त्य
			चुर्	✓ चोर्यित्वा	संचोर्य
ऋद्	क्रन्दित्वा	आक्रन्य	छिद्	छित्त्वा	उच्छिद्य
त्र.म्	√ क्रमित्वा) क्रान्त्वा)	संक्रम्य	जन्	√जिनत्वा	संजाय
क्री	क्रीत्वा	विक्रीय	जप्	जपित्वा	संजप्य
क्रीड्	क्रीडित्वा	प्रक्रीङ्य	जि	ं जित्वा	विजित्य

CC-O. क्रिअर् amdev Tipo क्रिक् द्वा ection at Satisficas DS). जिल्ला Zed By Siddh क्रीक्रिक विवाद के प्रकार करें

				,	
श	ज्ञात्वा	विज्ञाय	पलाय (परा +		पलाय्य
ज्वल्	ज्विलित्वा	प्रज्वल्य •	पा (१ प.)	पीत्वा	निपाय
√त न्	तनित्वा	वितत्य	पाल्	पालयित्वा	संपाल्य
त्रप्	तप्त्वा	संतप्य '	पुष्	पुष्टा	संपुष्य
√ तुष्	तुष्ट्वा	संतुष्य	पूज्	पूजियत्वा	संपूज्य
√ तॄ	तीर्त्वा	उत्तीर्य 🗸	ų į	पूर्त्वा	आपूर्य
त्यज्	त्यक्त्वा	परित्यज्य ٧	प्रच्छ्	विद्या	संपृच्छ्य
√ दंश्	दष्ट्वा	संदश्य ।	बन्ध्	वद्ध्वा	आबध्य
√ द ह	दग्ध्वा	संदह्य .	बुध्	बुद्ध्वा	प्रबुध्य
दा	दत्त्वा	आदाय 🗸	ब्रू	उक्त्वा	प्रोच्य
दिव्	देवित्वा	संदीव्य	भक्ष्	भक्षयित्वा	संभक्ष्य
√ दिश्	दिष्ट्वा	उपदिश्य	भज्	भक्त्वा	विभज्य
दीप्	दीपित्वा	संदीप्य	भञ्ज		विभज्य
√ दुह्	दुग्ध्वा	संदुह्य		भङ्क्तवा	
√ दश्	- हष्ट्रा	संदृश्य	भाष्	भाषित्वा	संभाष्य
युत्	योतित्वा	विद्युत्य ,	भिद्	भित्वा	प्रभिद्य ।
✓ ¥II			भी	भीत्वा	संभीय
	हित्वा	_ विधाय	भुज्	भुक्त्वा	उपभुज्य
धाव्	धावित्वा	प्रधाव्य	भू	भूत्वा	संभूय
√र्ध	धृत्वा	आधृत्य	भृ	भृत्वा	संभृत्य
ध्मा	ध्मात्वा	आध्माय	भंश्		
√ ध्यै	ध्यात्वा	संध्याय		भ्रष्ट्वा	प्रभ्रश्य
नम्	नत्वा	प्रणम्य	भ्रम्	भ्रमित्वा) भ्रान्त्वा }	संभ्रम्य
√ नश्			1191	मथित्वा	6
	नष्ट्रा	विनश्य	मथ्		विमध्य
नि + वृ		निवृत्य	मन्	मत्वा	अनुमत्य
नी	नीत्वा	आनीय	मा	मित्वा	प्रमाय
नुद्	नुत्त्वा	प्रणुद्य	मिल्	मिलित्वा	संमिल्य
√ नृत्	नर्तित्वा	प्रनृत्य	मुच्	मुक्त्वा	विमुच्य
पच्	पक्तवा	संपञ्य	मुह्	मुग्ध्वा	संमुह्य
पठ्	पठित्वा	संपठ्य 🗸	यज्	इष्ट्रा	समिज्य
पत् :	पतित्वा	निपत्य 🔻	यम्	यत्वा	संयम्य
CC-O Dr. Ramdev	Tripathi Collection पत्त्वा	at Sarai(CSDS संपद्य	s). Digitized By Sid	ldhanta eGangot यात्वा	tri Gyaan Kosh प्रयाय

याच्	याचित्वा	अनुयाच्य	राम्	श्रान्त्वा	निशम्य
युज्	युक्त्वा	प्रयुज्य	शास् ँ	ু হািছ্ <u>বা</u>	अनुशिष्य
युध्	युद्ध्वा	प्रयुध्य	शी	√ शयित्वा	संशय्य
रक्ष्	रक्षित्वा	संरक्ष्य	गुष्	शुष्ट्वा	परिशुष्य
रच्	रचियत्वा	विरचय्य	श्रि	श्रित्वा	आश्रित्य
रभ्	रब्ध्वा	आरभ्य	왱	श्रुत्वा	संश्रुत्य
रम्	रत्वा	विरम्य	हिलप्	रिल्घ्वा	आहिलध्य
रुट्	रुदित्वा	विरुद्य	श्वस्	श्वसित्वा	विश्वस्य
रुध्	रुद्ध्वा	विरुध्य	सद्	सत्त्वा	निषद्य
रुह्	√- रूढ्वा	आरुह्य	सह्	√ सहित्वा	संसह्य
ल्प्	रुपित्वा	विलप्य	साध्	साद्वा	प्रसाध्य
लभ्	लब्ध्वा	उपलभ्य	सिच्	सिक्त्वा	अभिषिच्य
लम्ब्	लम्बित्वा	आलम्ब्य	सिध्	सिद्ध्वा	निषिध्य
लप्	लिखा	अभिलप्य	सिव्	सेवित्वा	संसीव्य
्रिस् हिस्य्	लिखित्वा	आलिख्य	सुज्	√ सुद्धा	विसुज्य
		आलिह्य	सेव्	सेवित्वा	निषेव्यं
लिह्	√ हीढ्वा		सो	र्रि तवा	अवसाय
ਲੀ	लीत्वा	निलीय		स्तुत्वा	प्रस्तुत्य
<u>ख</u> भ्	√ लुब्ध्वा	प्रलुभ्य	स्तु		प्रस्थाय
वद्	√ उदित्वा	अन्य	स्था	स्थित्वा	
वन्द्	वन्दित्वा	अभिवन्य	स्ना	स्नात्वा	प्रस्नाय
वप्	√ उप्त्वा	समुप्य	स्निह्	हिनग्ध्वा	उपस्निह्य
वस्	√ उषित्वा	उपोष्य	स्पृश्	स्पृष्ट्वा	संस्पृश्य
	√ ऊ ढ्वा	प्रोह्य	स्मृ	स्मृत्वा	विस्मृत्य
वह्		संविद्य	स्वप्	/ सुप्त्वा	संप्रीप्य सु
विद् (२ प					निहत्य
विद् (१०)		निवेद्य	हन्	हत्वा	
विश्	विष्ट्वा	प्रविश्य	हस्	ह सित्वा	विहस्य
वृत्	प् वर्तित्वा .	निवृत्य	हा (३ प	०) √हित्वा	विहाय
वृध्	✓ विर्धित्वा	संवृध्य	हु	हुत्वा	• आहुत्य
वृष्	वर्षित्वा	प्रवृष्य	ह	हुत्वा	प्रहत्य
व्यध	विद्ध्वा	आविध्य	हृष्	हृषित्वा	प्रहृष्य
				/	आह्य
CC-O. Dr. Ramdev	Tripathi Collection a	it Safai(CSDS)	! Digitized E	हुर्वा By Siddhanta eGango	tri Gyaan Kosha

(१०) ल्युट् , (११) अनीयर् प्रत्यय

(देखो अभ्यास ४५, ४९)

सूचना—(क) त्युट् प्रत्यय भाववाचक शब्द बनाने के लिए धात से लगता है। त्युट्का 'अन' शेष रहता है। धात को गुण होता है। त्युट्प्रत्ययान्त शब्द नपुंसकिलंग होता है। अन्य नियमों के लिए देखें अभ्यास ४९। (ख) 'चाहिए' अर्थ में अनीयर् प्रत्यय होता है। अनीयर् का 'अनीय' शेष रहता है। अनीयर् प्रत्यय वाला रूप बनाने का सरल उपाय यह है कि त्युट्के अन के स्थान पर अनीय लगा दें। अन्य नियमों के लिए देखें अभ्यास ४५। जैसे—क का कारण, करणीय। दा-दान, दानीय। पट्पठन, पठनीय। धातुएँ अकारादि-क्रम से दी गई हैं।

क्दं कुर्दनम् त्रै (त्रा) अदनम् प्रसनम् त्राणम् ग्रस् अधि+इ अध्ययनम् कु करणम् दंश् दंशनम् ग्रह ग्रहणम् अन्विषु अन्वेषणम् ऋप् कल्पनम घा घाणम् दण्ड् दण्डनम् अर्चनम् कर्षणम् कृष चर् चरणम् दम् दमनम् अर्ज अर्जनम् क करणम् चल् चलनम् दह दहनम् अस् (२) भवनम् **ब्रम्**द् चि कन्दनम् चयनम दानम् दा अस् (४) असनम् क्रम क्रमणम् चिन्त् चिन्तनम् दिव् देवनम् की आ+क्रम् आक्रमणम त्रयणम् चोरणम् चुर् दिश् देशनम् क्रीड् आ+चर् आचरणम् चेष्ट् क्रीडनम् चेष्टनम् दीप दीपनम् क्रोधनम् आ+रम् आरमणम् क्रध् छिंद् छेदनम् दोहनम् दुह आ+रुह् आरोहणम् क्लिश् क्लेशनम् जन् दर्शनम् जननम् दश् आ+लप् आलपनम् जप् क्षम् द्योतनम् क्षमगम् जपनम द्युत् आस् आसनम् क्षिप जि क्षेपणम् द्रोहणम् जयनम् द्रह आ + ह्रे आह्वानम् जीव खन् जीवनम् खननम् धा धानम् इ अयनम् खाद् खादनम ज्ञा ज्ञानम् धाव धावनम् इष् एषणम् गण् ज्वल गणनम् ज्वलनम् धरणम् धृ ईक्ष ईक्षणम् ध्यै (ध्या) ध्यानम् गम् गमनम् डी डयनम् उद् + डी उड्डयनम् गर्ज गर्जनम् ध्वंस् तप् तपनम् ध्वंसनम् कथ् कथनम् गाह गाहनम् तुष् तोषणम् नन्द् नन्दनम् कम् ग कमनम् गरणम् तृप् तर्पणम् नम् नमनम् गै (गा) कम्प् कम्पनम् गानम् त् नश्, तरणम् नशनम्

CC-O. Di Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). टीज़ांट्रचे By खळमास्तात विकासिक्षां जिस्स्यणस्ति sha

निन्द् निन्दनम्	भुज्	भोजनम्	ल भ्	ल्भनम्	। शम्	शमनम्
नि-यम् नियमनम्	भू	भवनम्	लम्ब्	लम्बनम्	शास्	शासनम्
नि+वस् निवसनम्	भृ	भरणम्	लप्	ल्वणम्	शिक्ष्	शिक्षणम्
नि+विद् नि्वदनम्	भ्रंश्	भ्रंशनम्	लस्	ल्सनम्	शी	शयनम्
नि+सिध् निपेधनम्	भ्रम्	भ्रमणम्	िरख्	लेखनम्	शुभ्	शोभनम्
नी नयनम्	मद्	मदनम्	लिह्	लेहनम्	शुप्	शोषणम्
नृत् नर्तनम्	मन्	मननम्	ली	ल्यनम्	श्रि	श्रयणम्
पच् पचनम्	मन्थ्	मन्थनम्	<u>छ</u> ्	लोटनम्	श्रु	श्रवणम्
पठ् पठनम्	मा	मानम्	छप्	लोपनम्	सं+मिल्	संमेलनम्
पत् पतनम्	मिल्	मेंलनम्	<u>छ</u> भ्	लोभनम्	सद्	सदनम्
पलाय पलायनम्	मुच्	मोचनम्	लोक्	लोकनम्	सह्	सहनम्
पा (१, २) पानम्	मुद्	मोदनम्	लोच्	लोचनम्	साध्	साधनम्
पाल् पालनम्	मुष्	मोषणम्	वच्	वचनम्	सिच्	सेचनम्
पुष् पोषणम्	मुह्	मोहनम्	वञ्च्	वञ्चनम्	सिव्	सेवनम्
पूज् पूजनम्	मृ	मरणम्	वद्	वदनम्	सु	सवनम्
प्र+काश् प्रकाशनम्	यज्	यजनम्	वन्द्	वन्दनम्	स्	सरणम्
प्रच्छ् प्रच्छनम्	यत्	यतनम्	वप्	वपनम्	सुज्	सर्जनम्
म + आप् प्रापणम्	यम्	यमनम्	वर्ण	वर्णनम्	सुप्	सर्पणम्
प्र + विश् प्रवेशनम्	या	यानम्	वह्	वहनम्	सेव्	सेवनम्
प्र + हस् प्रहसनम्	याच्	याचनम्	वि + किर	न् विकसनम् 	स्तु	स्तवनम्
प्रेर्(प्र + ईर्)प्रेरणम्	युज्	योजनम्	विद्	वेदनम्	स्था	स्थानम्
प्रेष् प्रेषणम्	युध्	योधनम्	वि + धा	विधानम्	स्ना	स्नानम्
बन्ध् बन्धनम्	रंज्	रंजनम्	वि + नश्	विनश्नम्	स्निह्	स्नेहनम्
बाध् वाधनम्	रक्ष्	रक्षणम्	वि + लप्	विलपनम्	स्पृश्	स्पर्शनम्
बुध् बोधनम्	रच्	रचनम्	वि + श्वस्	्विश्वसनम्	स्मृ	स्मरणम्
ब्रू वचनम्	रम्	रमणम्	वृ	वरणम्	इंस्	संसनम्
भंज् भंजनम्	राज्	राजनम्	वृत्	वर्तनम्	स्वप्	स्वपनम्
भक्ष् भक्षणम्	रुच्	रोचनम्	बृध्	वर्धनम्	हन्	हननम्
भज् भजनम्	स्द्	रोदनम्	वृप्	वर्षणम्	ह	हवनम्
भाष् भाषणम्	रुध्	रोधनम्	वेष्	वेपनम्	夏	हरणम्
CC-O. Dr. Ramdey Tripathi भेदनम्	Collection :	at Sarai(CSD लपनम्	S). Digitizéd श्पू	By Siddhan	ta eGango	tri Gyaan Kos हप्रणम्

(१२) घञ् प्रत्यय (देखो अभ्यास ४७)

सूचना—भाव अर्थ में घञ्पत्यय होता है। घञ्का 'अ' दोष रहता है। घञन्त शब्द पुंलिंग होता है। घञ्पत्यय लगाकर रूप बनाने के नियमों के लिए देखें अभ्यास ४७। घञ्पत्ययान्त शब्द उपसर्गों के साथ बहुत प्रचलित हैं। उपसर्ग लगाकर स्वय अन्य रूप बनावें। धातुएँ अकारादि-क्रम से दी गई हैं।

					,		
अधि -	- इ अध्यायः	चर्	चारः	प्र+ भ्	प्रभावः	वि + लप्	विलापः
अभि+व	रप्अभिलापः	चल्	चालः	प्र + विश्	प्रवेश:	वि + वह्	विवाहः
अव +	तृ अवतारः	चि	कायः	प्र + सद्	प्रसाद:	वि + श्रम	विश्रमः
	रह् अवलेहः	चुर्	चोरः	प्र+स	प्रसारः	वि + श्वस्	विश्वासः
	प०) भावः	छिद्	छेद:	प्र+स्तु	प्रस्तावः	वि + सुज्	विसर्गः
	क्षेप् आक्षेपः	जप्	जापः	प्र+ह	प्रहार:	बृ प्	वर्षः
	ाम् आगमः	तप्	तापः	बुध्	बोधः	शप्	शाप:
	वर् आचारः	त्यज्	त्यागः	भज्	भागः	इाम्	श्रमः
	श् आदर्शः	दह्	दाहः	भिद्	भेदः	गुच्	शोकः
	गुआधारः	दा	दायः	भुज्	भोगः	शुप्	शोषः
	पुद् आमोदः	दिव्	देव:	मिल्	मेल:	श्रि	श्रायः
	ह् आरोहः	दुह्	दोह:	मुह्	मोहः	성	श्रावः
	त् आवर्तः	दुह्	द्रोहः	मृज्	मार्गः	दिलघ	इलेष:
	न् आघातः	धा	धाय:	यंज्	यागः	सं + कृ	संस्कारः
उत् +	ाद् उत्पादः	नश्	नाशः	युज्	योगः	सं + तन्	सन्तानः
उत् + स	ाह् उत्साहः 	नि + इ	न्यायः	युध्	योधः	सं + तुष्	सन्तोषः
उप + f	देश् उपदेशः	नि + वस्	निवासः	रञ्ज्	रागः	सं + मन्	
कम्	कामः	नि + सिध्	निषेधः	रम्	रामः	सं + यम्	संयमः
कुप्	कोपः	पच्	पाकः	रुध्	रोधः	सिच्	सेक:
कृ	कार:	पट्	पाठः	लभ्	लाभः	सुज्	सर्गः
इ. प्	कर्पः	पत्	पातः	लिख्	लेखः	स्निह्	स्नेहः
क्षिप्	क्षेपः	पुष्	पोषः	खुम्	होभ:	स्पृश्	स्पर्शः
क्षुभ्	क्षोभः	प्र + काश्	प्रकाशः	वद्	वादः	स्वप्	स्वापः
गम्	गमः	प्र+कृ	प्रकारः	वि + कस्		हस्	हासः
ग्रस्	्रयासः	प्र + कृष् ollection at S	प्रकर्षः			a esangotri (
D <u>r. R</u> amde ग्रह्	ev Tripathi ¢	ollection at S प्र + नम्	प्रणामः). Digitized B विद	y Siddhant	a eeangotri (Jyaan Kosi हर्षः

(१३) ण्वुल् प्रत्यय

(देखो अभ्यास ४९)

स्चना—कर्ता या 'करने वाला' अर्थ में खुल् प्रत्यय होता है। खुल् के स्थान पर 'अक' शेष रहता है। धातु को गुण या वृद्धि होगी। कर्ता के अनुसार तीनों लिंग होते हैं। विशेष नियम के लिए देखें अभ्यास ४९। धातुएँ अकारादि-क्रम से दी गई हैं।

अध्यापि	अध्यापकः ।	द्विप्	द्वेषकः	प्र + विश	् प्रवेशकः	रुध्	रोधकः
अन्विष्	अन्वेषकः	धा	धायकः	प्र+सृ	प्रसारकः	लिख्	लेखकः
उद् +	ाद् अत्पादकः। 	धाव्	धावकः	प्र + स्तु	प्रस्तावकः	वच्	वाचकः
उद्+ ध	रृ उद्धारकः	धृ	धारकः	प्रेर्(प+	ईर्)प्रेरकः		वाहकः
उद्+म	द् उन्मादकः	ध्यै	ध्यायकः	बन्ध्	बन्धकः		्विका सकः
उप+िद	श उपदेशकः	ध्वंस्	ध्वंसकः	वाध्	वाधकः		् ाप् व्यापकः
	ास् उपासकः	नश्	नाराकः	बुध्	बोधकः		विधायकः
	कारकः	निन्द्	निन्दकः	ब्र	वाचकः		् विभाजकः
कृष्	कर्षकः		्निवेदकः	मक्ष्	भक्षकः		भ्विष्कम्भक
कीड्	क्रीडकः		निवारकः	भज्	भाजकः		वर्धकः
खाद्	खादकः		् निषेधकः	भाष्	भाषकः		वर्षकः
गण्	गणकः	नी	नायकः	भिद्	भेदकः		शासकः
गम्	गमकः	नृत्	नर्तवः	भुज्	भोजकः	शिक्ष्	शिक्षक:
गै	गायकः	पच्	पाचकः	भू	भावकः	शुष्	
प्रह्	ग्राहकः	पठ्	पाठकः	मुच्	मोचकः	શ્રુ	श्रावकः
चि	चायकः	पत्	पातकः	मुद्	मोदकः		संचालकः
चिन्त्	चिन्तकः	परि + ईक्ष		मुह्	मोहकः	सं + तप्	संतापकः
छिद्	छेदकः		पायकः	मृ	मारकः	सं + युव	्संयोजकः
जन्	जनकः	पाल्	पालकः	यज्	याचकः	सं+ह	संहारकः
तॄ	तारकः	पुष्	पोषकः	यम्	यमकः	साध्	साधकः
दह्	दाहकः	पूज्	पूजकः	याच्	याचकः	सिच्	सेचकः
दीप्	दीपकः	प्र+काश	प्रकाशकः	युज्	योजकः	सेव्	सेवकः
दुह्	दोहकः	प्र + क्षिप्	प्रक्षेपकः	युध्	योधकः	स्था	स्थापकः
दश्	दर्शकः	प्र+चर्	प्रचारकः	रंज्	रंजक:	स्मृ	स्मारकः
द्युत्	द्योतकः	प्रच्छ्	प्रच्छकः	रक्ष्	रक्षकः	इन्	घातकः
Dr. Ramd		Control of the late of the late of	प्रदायकः Barai(CSDS)	रुच् Digitized	रोचकः By Siddhanta	हुष eGangotr	हर्षकः i Gyaan Kosl

Cosha

(१४) क्तिन्, (१५) यत् प्रत्यय

(देखो अभ्यास ४६, ५१)

सूचना—(क) भाववाचक संज्ञा बनाने के लिए धातु से किन् प्रत्यय होता है। किन् का 'ति' शेष रहता है। 'ति' प्रत्ययान्त शब्द स्त्रीलिंग होते हैं। विशेष नियमों के लिए देखें अभ्यास ५१। (ख) 'चाहिए' अर्थ में अजन्त धातुओं से यत् प्रत्यय होता है। यत् का 'य' शेष रहता है। तीनों लिंगों में रूप चलते हैं। विशेष नियमों के लिए देखें अभ्यास ४६। धातुएँ अकारादि-क्रम से दी गई हैं।

		यत्	प्रत्यय					
	अधि +	इ अधीतिः	तृप्	तृतिः	['] यम्	यतिः	अधि + इ	अध्येयम्
1	अस् (२५	ा.) भूतिः	दीप्	दीप्तिः	र्यु ज्	युक्तिः	आ + ख्या	आख्येयम्
	आप्	आप्तिः	दृश्	दृष्टिः	रम्	रतिः	√उप + माः	उपमेयम्
V	आ + सं	ज् आसक्तिः	घृ	धृतिः •	रुह्	रूदिः	क्री	क्रेयम्
V	आ + स	द् आसत्तिः	नम्	नतिः	वि + आप्	व्याप्तिः	क्षि	क्षेयम्
	आ + हु	आहुतिः	नी	नीतिः	वि + नश्	विनष्टिः	गै (गा)	गेयम्
	इष्	इष्टिः	√पच -	पक्तिः	वि + श्रम्	विश्रान्तिः	घा	घेयम्
1	उप + लभ	्उपलब्धिः	पा (१ प.)	पीतिः	बृत्	वृत्तिः	चि	चेयम्
/	ऋध्	ऋद्धिः	पुष	पुष्टिः	∕वृध्	वृद्धिः	জি	जेयम्
/	कम्	कान्तिः	d d	पृतिः	वृष्	वृष्टिः	र्श	ज्ञेयम्
	कु	कृतिः	प्र+आप्	प्राप्तिः	शक्	शक्तिः	दा	
	कृष्	कृष्टिः	प्री	प्रीतिः	/शम्	शान्तिः	धा	देयम् धेयम्
	क्	कीर्तिः	∕बुध्	बुद्धिः	शुध्	शुद्धिः	√ध्यै (ध्या)	ध्येयम्
V	कृत्	कीर्तिः	ब्र	उक्तिः	श्रु	श्रुतिः	नी	नेयम्
V	क्रम्	क्रान्तिः	भज्	भक्तिः	सं + पद्	संपत्तिः	पां (१प.)	पेयम्
V	क्षम्	क्षान्तिः	भी	भीतिः	सं + सृ	संसृतिः	भू	भव्यम्
	गम्	गतिः	भुज्	भुक्तिः	सं + ह	संहति:	भा	मेयम्
	गै	गीतिः	其	भूतिः	सिध्	सिद्धिः	वि + धा	विधेयम्
	चि	चितिः	भ्रम्	भ्रान्तिः	सृज्	सृष्टिः	श्रु	श्रव्यम्
	छिद्	छित्तिः	मन्	मतिः	स्तु	स्तुतिः	सु	सन्यम्
/	जन्	जातिः	मा	मितिः	स्था	स्थितिः	र खा	स्थेयम्
	श	ज्ञातिः	मुच्	मुक्तिः	स्मृ	स्मृतिः -	√हा	हेयम्
3	तुष् O Dr Rai	तुष्टिः mdev Tripat	यज् thi Collection s	इष्टि: \	स्वप SDS): Digitize	त हमुसिःता	and eGango	हत्यम् ४
	O. Dr. Mai	nidev riipat	an Joneonon a	it Garai(O	obo). Digitize	a by oldul	idi na coaligo	ar Oyaari K

(६) सन्धि-विचार

(क) स्वर-सन्धि

(१) (इको यणचि) इईको य्, उ ऊको व्, ऋ ऋ को र्, ल को ल् हो जाता है, यदि बाद में कोई स्वर हो तो। सवर्ण (वैसा ही) स्वर हो तो नहीं। जैसे---

- (१) प्रति+एक:=प्रत्येक: इति+अत्र = इत्यत्र इति + आह इत्याह यदि + अपि=यद्यपि सुधी + उपास्यः = सुध्युपास्यः
- (२) पठतु + एकः = पटत्वेकः अनु + अयः = अन्वयः मधु + अरिः = मध्वरिः गुर + आज्ञा = गुर्वाज्ञा पठतु + अत्र = पठत्वत्र वधू + औ = वध्वौ
- (३) पितृ + आ = पित्रा मातृ + ए = मात्रे धातृ+अंश:=धात्रंशः कर्त् + आ = कर्त्रा कर्तृ + ई = कर्त्री (४)ल+आकृतिः=लाकृतिः

(२) (एचोऽयवायावः) ए को अय्, ओ को अव्, ऐ को आय् और औ को आव् हो जाता है, बाद में कोई स्वर हो तो। (पदान्त ए या ओ के बाद अ होगा तो नहीं)। जैसे-

- (?) $\xi \hat{t} + \xi = \xi \hat{t}$ कवे + ए = कवये ने + अनम्=नयनम् जे + अः = जयः संचे + अः = संचयः
- (२) भो + अति = भवति पो + अनः = पवनः विष्णो + ए = विष्णवे भानो + ए = भानवे भो + अनम् = भवनम्
- (३) नै + अकः=नायकः गै + अक:=गायक: गै + अति=गायति (४) पौ + अकः=पावकः
- द्रौ + एतौ=द्वावेतौ (३) (क) (वान्तो यि प्रत्यये) ओ को अव्, औ को आव् हो जाता है, वाद मं य से प्रारम्भ होने वाला कोई प्रत्यय हो तो। (ख) (गोर्यूतौ, अध्वपरिमाणे च) गो शब्द के ओ को अव् होता है बाद में यूति शब्द हो तो, मार्ग की लम्बाई के अर्थ में। (ग) (धातोस्तिमित्तस्यैव) धातु के ओ को अव् और औ को आव् होता है यकारादि प्रत्यय बाद में हो तो। यह तभी होगा जब ओ या औ प्रत्यय के कारण हुआ हो। जैसे-
- (क) गो + यम् = गव्यम् (ख) गो + यूतिः = गव्यूतिः नौ + यम = नाव्यम
- (ग) हो + यम् = हत्यम् भौ + यम् = भाव्यम्
- (४) (आद्गुणः) (१) अया आ के बाद इया ई हो तो दोनों को 'ए' होगा। (२) अया आ के बाद उया ऊ हो तो दोनों को 'ओ' होगा। (३) अया आ के बाद ऋ या ऋ हो तो दोनों को 'अर्' होगा। (४) अ या आ के बाद ल होगा तो दोनों को 'अल्' होगा ।-जैसे-
- गण + ईशः=गणेशः उप + इन्द्रः=उपेन्द्रः रमा + ईशः=रमेशः
- (१) महा + ईशः=महेशः ।(२) पर + उपकारः =परोपकारः महा + उत्सवः=महोत्सवः गंगा + उदकम्=गंगोदकम्
- (३)महा + ऋपिः=महर्षिः राज+ऋषि:=राजिः ग्रीष्म+ऋतु:=ग्रीष्मर्तु:
- हित + उपदेश:=हितोपदेश: |(४)तव + लकार:=तवल्कार:

(५) (वृद्धिरेचि) (१) अया आ के बाद ए या ऐ हो तो दोनों को 'ऐ' होगा। (२) अया आ के बाद ओ या औ हो तो दोनों को 'औ' होगा।

(१) अत्र + एकः = अत्रैकः

कृष्ण + एकत्वम् = कृष्णैकत्वम् सा + एपा = सैपा देव + ऐश्वर्यम् = दैवैश्वर्यम्

- (२) तण्डुल + ओदनम् = तण्डुलौदनम् गङ्गा + ओघः = गङ्गोघः देव + औदार्यम् = देवौदार्यम् कृष्ण + औत्कण्ठ्यम् = कृष्णौत्कण्ठ्यम्
- (६) (क) (एत्येधत्यूट्सु) अ या आ के बाद एकारादि इ धातु या एष् धातु हो या ऊट् (ऊ) हो तो दोनों को मिलकर एक वृद्धि अक्षर (ऐ या औ) होता है। अ या आ + ए = ऐ। अ या आ + ओ या ऊ = औ। उप + एति = उपैति। अप + एति = अपैति। उप + एधते = उपैधते। प्रष्ठ + ऊहः = प्रष्ठीहः। विश्व + ऊहः= विश्वौहः। (ख) (अक्षादूहिन्यामुपसंख्यानम्) अक्ष + ऊहिनी में वृद्धि होकर 'अक्षौहिणी' रूप बनता है। (ग) (स्वादीरेरिणोः) स्व के बाद ईर या ईरिन् होगा तो वृद्धि होगी। स्व + ईरः = स्वैरः। स्व + ईरिन् = स्वैरिन्, स्वैरी। स्व = ईरिणी = स्वैरिणी। (घ) (प्रादृहोढोढ्येषेष्येषु) प्र के बाद ऊह, ऊढ, ऊढि, एप और एध्य हो तो वृद्धि होती है। प्र + ऊहः = प्रौहः। प्र + ऊढः = प्रौढः। प्र + ऊढिः = प्रौढिः। प्र + एषः = प्रैषः। प्र + एध्यः = प्रैष्यः।
- (७) (एडः पदान्तादित) पद (अर्थात् सुयन्त या तिङन्त) के अन्तिम ए या ओ के बाद अ हो तो उसको पूर्वरूप (अर्थात् ए या ओ जैसा रूप) हो जाता है। (अ हटा है, इस वात के सूचनार्थ ऽ(अवग्रहिचह्न) लगा दिया जाता है। जैसे—

(१) हरे + अव = हरेऽव लोके + अस्मिन् = लोकेऽस्मिन् विद्यालये + अस्मिन् = विद्यालयेऽस्मिन्

(२) विष्णो = अव = विष्णोऽव रामो + अधुना = रामोऽधुना लोको + अयम् = लोकोऽयम्

(८) (एङ पररूपम्) उपसर्ग के अ के बाद धातु का ए या ओ हो तो दोनों के स्थान पर पररूप (अर्थात् ए या ओ जैसा रूप) हो जाता है। अर्थात् (१) अ + ए = ए, (२) अ + ओ = ओ। जैसे—

(१) प + एजते = प्रेजते

(२) उप + ओषति = उपोषति

(९) (शकन्ध्वादिषु पररूपं वाच्यम्) शकन्धु आदि शब्दों में टि (अर्थात् अन्तिम स्वर सहित अगला अंश) को पररूप हो जाता है। शक + अन्धुः = शकन्धुः । कर्क + अन्धुः = कर्क न्धुः । मनम् + ईषा = मनीषा । कुल + अटा = कुलटा । पतत् + अज्ञलः = पतञ्जलः । मार्त + अण्डः = मार्तण्डः । (क) (सीमन्तः केशवेशों) सीम + अन्तः = सीमन्तः (बालों में माँग)। अन्यत्र सीमान्तः (हद)। (ख) (सारङ्गः पशुपक्षिणोः) सार + अङ्गः = सारङ्गः (पशु, पक्षी)। अन्यत्र साराङ्गः। (ग) (आत्वोष्टयोः समासे वा) समास में विकल्प से ओतु, ओष्ठ को पररूप। स्थूल +

भोतुः = स्थूलोतुः, स्थूलोतुः । विम्य + ओष्ठः = विम्बोष्ठः, विम्बोष्ठः । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

- (१०) (उपसर्गाद्यतिधातौ) अकारान्त उपसर्ग के बाद कोई ऋ से प्रारम्म होनेवाली धातु हो तो दोनों को आर् वृद्धि हो जायगी। अ + ऋ = आर्। उप + ऋच्छति = उपार्च्छति। प्र + ऋच्छति = प्रार्च्छति।
- (११) (अचो रहाभ्यां द्वे) किसी स्वर के वाद र्या ह् हो और उसके बाद कोई यर् (ह को छोड़कर कोई व्यंजन) हो तो उसे विकल्प से द्वित्व हो जाता है। जैसे—कार्+य=कार्य, कार्य। कर्+तव्य=कर्त्तव्य। कर्+ म=कर्म, कर्म।
- (१२) (ओसाङोश्च) अ के बाद ओम् या आङ् (आ) हो तो पररूप अर्थात् दोनों को ओम् या आ होता है। शिवाय + ओं नमः = शिवायों नमः। शिव + एहि (आ + इहि) = शिवेहि।
- (१३) (अकः सवर्णे दीर्घः) अइउ ऋ के बाद कोई सवर्ण (सहरा) अक्षर हो तो दोनों के स्थान पर उसी वर्ण का दीर्घ अक्षर हो जाता है। अर्थात् (१) अया आ + अ या आ = आ। (२) इ या ई+ इ या ई=ई। (३) उ या ऊ+उ या ऊ=ऊ। (४) ऋ+ऋ=ऋ।
- (१) हिम + आल्यः = हिमाल्यः (२) गिरि + ईशः = गिरीशः (३) गुरु + उपदेशः = गुरुपदेशः विद्या + आल्यः = विद्याल्यः श्री + ईशः = श्रीशः विष्णु + उदयः = विष्णूदयः देत्य + अरिः = दैत्यारिः इति + इदम् = इतीदम् (४) हो तृ + ऋकारः = हो तृकारः
- (१४) (सर्वत्र विभाग गोः) गो शब्द के बाद अ हो तो विकल्प से असे प्रकृतिभाव (वैसा ही रहना) होता है। गो + अग्रम् = गोअग्रम् , गोऽग्रम्।
- (१५) (अवङ् रूफोटायनस्य) स्वर वाद में हो तो गो शब्द के ओ को अवङ् (अव) हो जाता है विकल्प से । गो + अग्रम् = गवाग्रम् । गो + अक्षः=गवाक्षः ।
- (१६) (इन्द्रेच) गो के ओ को अनङ् (अव) होगा, इन्द्र बाद में हो तो। गो + इन्द्र: = गवेन्द्र:।
- (१७) (ऋत्यकः) हस्व या दीर्घ अ इ उ के बाद ऋ हो तो विकल्प से प्रकृति-भाव होगा। जहाँ सन्धि नहीं होगी वहाँ यदि शब्द का अन्तिम अक्षर दीर्घ होगा तो वह हस्व हो जायगा। ब्रह्मा + ऋषिः = ब्रह्मऋषिः, ब्रह्मर्षिः। सप्त + ऋषीणाम् = सप्तर्पीणाम्, सप्तऋषीणाम्।
- (१८) (प्रत्यभिवादेऽशूदे) अभिवादन के प्रत्युत्तर में वाक्य के अन्तिम अक्षर को प्छत (३) हो जाता है और वह उदात्त होता है। आयुष्मानेधि देवदत्त ३।
- (१९) (दूराद्ध्ते च) दूर से सम्बोधन में वाक्य के अन्तिम अक्षर को प्छत होगा। आगच्छ देवदत्त ३।
- (२०) (ईद्देद्द्विचचनं प्रगृह्मम्) शब्द या धातु के द्विवचन के ई, ऊ और ए के साथ कोई सिन्ध नहीं होती। हरी + एतौ = हरी एतौ। विष्णू + इमौ = विष्णू इमौ। गङ्गे + अमू = गङ्गेअमू। पचेते + इमौ = पचेते इमौ।
- (२१) (अदसो मात्) अदस् शब्द के म् के बाद ई या ऊ होंगे तो उसके साथ cc-o कोई स्वितिक निकी क्रोनिक क्रियान के अधिक के बाद ई या ऊ होंगे तो उसके साथ

(ख) हल्-सन्धि (व्यंजन-सन्धि)

(२२) (स्तोः श्रुना श्रः) स्या तवर्ग से पहले या बाद में श्या चवर्ग कोई भी हो तो स्को श्और तवर्ग को चवर्ग होगा। त्>च्, द्>ज्, न्>ञ्, स्>श्। जैसे—

रामस् + च = रामश्र सत + चित् = सञ्चित् सद् + जनः = सजनः कस् + चित् = कश्चित् । सत् + चरित्रः = सचरित्रः उद् + ज्वलः = उज्ज्वलः हरिश् + शेते = हरिश्शेते । उत् + चारणम् = उचारणम् शाङ्गिन् + जय = शाङ्गिखय

(२३) (शात्) श् के बाद तवर्ग को चवर्ग नहीं होगा। (नियम २२ का

अपवाद सूत्र) । प्रश् + नः = प्रश्नः । विश् + नः = विश्नः ।

(२८) (ण्टुना ण्टुः) स् या तवर्ग से पहले या बाद में ष् या टवर्ग कोई भी हो तो स् को प् और तवर्ग को टवर्ग होगा। त>ट्, द>ड्, न>ण्। स>ष्। जैसे— रामस् + पष्टः = रामध्यष्टः | इष् + तः = इष्टः | उद् + डीनः = उड्डीनः रामस् + टीकते=रामधिकते | दुष् + तः = दुष्टः | विष् + नुः = विष्णुः कृष् + नः = कृष्णः

- (२५) (क) (न पदान्ताद्दोरनाम्) पद के अन्तिम टवर्ग के बाद स् और तवर्ग की प् और टवर्ग नहीं होते, नाम् को छोड़कर। (नियम २४ का अपवाद)। षट् + सन्तः = षट् सन्तः। षट् + ते = षट् ते।
- (ख) (अनाम्नवितनगरीणामिति वाच्यम्) टवर्ग के बाद नाम्, नवित, नगरी हों तो नियम २४ के अनुसार इनके न को ण होगा। (बाद में नियम २९ के अनुसार ड्को ण्होगा)। षड्+नाम्= पण्णाम्। षड्+नवितः = पण्णवितः। षड्+नगर्यः = पण्णगर्यः।
- (२६) (तोः षि) तवर्ग के बाद ष हो तो तवर्ग को टवर्ग नहीं होगा। सन् + षष्टः = सन् षष्टः।
- (२७) (झळां जशोऽन्ते) झळां (वर्ग के १, २, ३, ४ और ऊष्म) को जश् (३ अर्थात् अपने वर्ग के तृतीय अक्षर) होते हैं, झळ्पद के अन्तिम अक्षर हों तो। (पद का अर्थ है सुवन्त शब्द या तिङन्त धातुएँ)। जैसे—

दिक् + अम्बरः=दिगम्बरः | चित् + आनन्दः=चिदानन्दः । षट् + एव = षडेव दिक् + गजः = दिग्गजः | जगत् + ईशः = जगदीशः । षट् + आननः=षडाननः अच् + अन्तः = अजन्तः | उत् + देश्यम् = उद्देश्यम् | सुप् + अन्तः = सुबन्तः

(२८) (झलां जरा झिरा) झलों (वर्ग के १, २, ३, ४ और ऊष्म) को जरा (३ अर्थात् अपने वर्ग के तृतींय अक्षर) होते हैं, बाद में झरा (वर्ग के ३, ४) हों तो । (विशेष—यह नियम पद के बीच में लगता है और नियम २७ पद के अन्त में । यही दोनों में भेद है)। जैसे—

 (२९) (क) (यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा) पदान्त यर् (ह के अतिरिक्त सभी व्यंजन) के बाद अनुनासिक (वर्ग का पंचम अक्षर) हो तो वर् को अपने वर्ग का पंचम अक्षर हो जायगा। यह नियम ऐच्छिक है। (ख) (प्रत्यय भाषायां नित्यम्) यदि प्रत्यय का 'म' इत्यादि बाद में होगा तो यह नियम ऐच्छिक नहीं होगा, अपितु नित्य छगेगा।

दिक् + नागः = दिङ्नागः सद् + मितः = सन्मितिः तत् + मात्रम् = तन्मात्रम् तत् + न = तत्र पद् + नगः = पत्रगः तत् + मयम् = तन्मयम् एतत् + मुरारिः = एतन्मुरारिः षट् + मुखः = षण्मुखः वाक् + मयम्=वाङ्मयम्

(३०) (तोर्छि) तवर्ग के बाद ल हो तो तवर्ग को भी ल् हो जाता है। अर्थात् (१) त्या द्+ल=छ, (२) न्+ल=ँछ। जैसे—

> तत् + लयः = तल्लयः तत् + लीनः = तल्लीनः

्डद् + लेखः = उल्लेखः विद्वान् + लिखति = विद्वाँल्लिखति

(३१) (उदः स्थास्तम्भोः पूर्वस्य) उद् के बाद स्था या स्तम्म् धातु हो तो उसे पूर्वसवर्ण होता है अर्थात् स्था और स्तम्म् के स् को थ् होगा । बाद में नियम ३२ के अनुसार थ् का लोप हो जायगा । उद् + स्थानम् = उत्थानम् । उद् = स्तम्भनम् = उत्तम्भनम् । द् को नियम ३४ से त्।

(३२) (झरो झरि सवर्णे) व्यंजन के बाद झर् (वर्ग के १, २, ३, ४ और श ष स) का विकल्प से लोप होता है, बाद में सवर्ण (वैसा ही) झर् हो तो। उद्+थ्

थानम् = उत्थानम् । रुन्ध् + धः = रुन्धः । कृष्णर् + ध्धिः = कृष्णर्धिः ।

(३३) (झयो हो ८न्यतरस्याम्) झय् (वर्ग के १, २, ३, ४) के बाद ह् हो तो उसे विकल्पसे पूर्वसवर्ण होता है अर्थात् पूर्व अक्षर के वर्ग का चतुर्थ अक्षर हो जाता है। क्या ग् + ह = ग्य, त्या द् + ह = द्ध। वाग् + हिरः=वाग्यिरः, वाग्हिरः। तद् + हितः = तद्धितः।

(३४) (खरि च) झलों (१, २, ३,४, ऊष्म) को चर् (१, उसी वर्ग के प्रथम अक्षर) होते हैं, बाद में खर् (१, २, इ, ष, स) हो तो । ग्रक्, ज्रच्, द्रत्। सद्+ कारः = सत्कारः | तद्+ परः = तत्परः | तज्+ छिवः = तिच्छवः उद्+ पन्नः = उत्पन्नः | उद्+ साहः = उत्साहः | दिग्+ पालः = दिक्पालः

(३५) (क) (शरछोऽटि) पदान्त झय् (वर्ग के १, २, ३, ४) के बाद श् हो तो उसको छ हो जाता है, यदि उस श् के बाद अट् (स्वर, ह्, य्, व्, र्) हो तो। श् को छ होने पर पूर्ववर्ती द् को नियम २२ से ज् और ज् को नियम ३४ से च्। पूर्ववर्ती त् हो तो नियम २२ से च्। यह नियम विकल्प से लगता है। -तद् (तत्) + शिवः = तन्शिवः तन्शिवः । सत् + शीलः = सन्शीलः ,, ,, + शिला = तन्शिला, तन्शिला । उत् + श्रायः = उन्ह्रायः

(स्त) (छत्वममीति वाच्यम्) श् के बाद अम् (स्तर, इ, अन्तःस्य, वर्ग का CC-O. Dk Ra्तोव्से मोध्यानको विकालस्यो अस्ति स्वारो क्रिक्टिको ताल्या क्रिक्टिको क्रिक्टिको अस्ति स्वारो क्रिक्टिको स्वारो स्वारो स्वारो क्रिक्टिको स्वारो क्रिक्टिको स्वारो क्रिक्टिको स्वारो क्रिक्टिको स्वारो क्रिक्टिको स्वारो क्रिक्टिको स्वारो (३६) (मोऽनुस्वारः) पदान्त म् को अनुस्वार (-) हो जाता है, बाद में कोई हल (व्यंजन) हो तो। बाद में स्वर होगा तो अनुस्वार कदापि नहीं होगा। जैसे—
हिर्म + वन्दे = हिर्रं वन्दे | सत्यम् + वद = सत्यं वद
कार्यम् + कुरु = कार्य कुरु | धर्मम् + चर = धर्म चर

(३७) (नश्चापदान्तस्य झिल) अपदान्त न् और म् को अनुस्वार (-) हो जाता है, बाद में झल् (वर्ग के १, २, ३, ४, ऊष्म) हो तो। जैसे—यशान् + सि=यशांसि। पयान् + सि = पयांसि। नम् + स्यति = नंस्यति। आक्रम् + स्यते=आक्रंस्यते। यह नियम पद के बीच में लगता है।

(३८) (अनुस्वारस्य यि परसवर्णः) अनुस्वार के बाद यय् (श, ष, स, ह को छोड़क्र सभी व्यंजन) हो तो अनुस्वार को परसवर्ण (अगले वर्ण का पंचम अक्षर)

हो जाता है। जैसे-

3i + a := 3 कु: 3i + a := 3 कितः 3i + a := 3

- (३९) (वा पदान्तस्य) पद के अन्तिम अनुस्वार के बाद यय (श, ष, श, ह को छोड़कर सभी व्यंजन) हो तो अनुस्वार को परसवर्ण विकल्प से होगा। यह नियम पदान्त में लगता है। त्वं + करोषि = त्वङ्करोपि, त्वं करोषि। सम् + गच्छध्वम् = सङ्ग-च्छव्वम्, संगच्छध्वम्।
- (४०) (मो राजि समः को) सम् के बाद राज्शब्द हो तो सम् के म् को म् ही रहता है। उसको अनुस्वार नहीं होता। सम् + राट्= सम्राट्। सम्राजी, सम्राजः।
- (४१) (ङ्णोः कुक्दुक्शिरि) ङ्याण्के बाद शर् (श, ष, स) हो तो विकल्प से बीच में क्या ट् जुड़ जाते हैं। ङ् के बाद क् और ण् के बाद ट्। प्राङ्+ षष्ठः = प्राङ्क्षष्ठः प्राङ्पष्ठः । सुगण् + षष्ठः = सुगण्ट्षष्ठः, सुगण्षष्ठः ।
- (४२) (डः सि धुट्) ड्के बाद स हो बीच में ध् विकल्प से जुड़ जाता है। नियम ३४ से घ्को त् और पूर्वर्ती ड्को ट्। षड् + सन्तः = षट्त्सन्तः षट्सन्तः।
- (४३) (नश्च) न् के बाद स हो तो बीच में विकल्प से घ् जुड़ जाता है। नियम ३४ से घ् को त्। सन् + सः = सन्त्सः, सन्सः।
- (४४) (शि तुक्) पदान्त न् के बाद श् हो तो विकल्प से बीच में त् जुड़ जाता है। नियम ३५ से श् को छ्। सन् + सम्भुः = सञ्च्छम्भुः, सञ्छम्भुः।
- (४५) (ङमो हस्वादिच ङमुण् नित्यम्) हस्व स्वरं के बाद ङ्ण्न् हों और बाद में कोई स्वर हो तो बीच में एक ङ्,ण्, न् और जुड़ जाता है। जैसे— प्रत्यङ्+आत्मा=प्रत्यङ्ङात्मा। सुगण्+ईशः=सुगण्णीशः। सन्+अच्युतः=सन्नच्युतः।
- (४६)(क) (रषाभ्यां नो णः समानपदे) र, प्या ऋ ऋ के बाद न को ण्हो जाता है। जैसे—कीर्+नः = कीर्णः, पूर्+नः = पूर्णः। पूष्+ना = पूष्णा। पितृ + नाम् = पितृणाम्। (ख) (अट्कुप्वाङ्नुमृत्यवायेऽपि) र और ष् के बाद न् को ण्होगा, बीच में स्वर, ह्, अन्तस्थ, कवर्ग, पवर्ग, आ, न्हों तो भी। रामेन = रामेण। (ग) (पदान्तस्य) पद के अन्तिम न् को ण्नहीं होता। रामान् का

- (४७) (क) (अपदान्तस्य मूर्धन्यः, इण्कोः, आदेशप्रत्यययोः) अ आ को छोड़कर सभी स्वर, ह, अन्तः स्थ और कवर्ग के बाद स् को प् होता है, यदि वह किसी के स्थान पर आदेश हुआ हो या प्रत्यय का स् हो। पद के अन्तिम स् को प् नहीं होगा। जैसे—रामे + सु = रामेपु, हिर + सु = इिष्णु। अधुक् + सत् = अधुक्षत्। (ख) (नुम्विसर्जनीयशर्व्यवायेऽपि) इण् (अ आ से भिन्न स्वर, ह, अन्तःस्थ) और कवर्ग के बाद स् को प् होता है, यदि बीच में नुम् (न्), विसर्ग (ः) और श् ष् स् में से कोई एक हो तो भी। धन्न् + सि = धन्षि। पिपठीष् + सु = पिपठीष्षु। पिपठीः + सु = पिपठीःषु।
- (४८) (सप्तः सुटि, संपुंकानां सो वक्तव्यः) सम् + स्कर्ता में म् के स्थान पर र होकर स् हो जाता है और उससे पहले अनुस्वार (-) या अनुनासिक ँ लग जाता है। बीच् के एक स् का लोप भी हो जायगा। सम् + स्कर्ता = सँस्कर्ता, संस्कर्ता। सम् + कृ धातु होने पर इसी प्रकार - स् लगाकर सन्धि होगी। संस्करोति, संस्कृतम्, संस्कारः आदि।
- (४९) (पुमः खर्यम्परे) पुम् के म् को र् होकर नियम ४८ के अनुसार स् हो जाएगा, बाद में कोकिलः, पुत्रः आदि शब्द हों तो । स् से पहले याँ लग जाएँगे । पुम् + कोकिलः = पुंस्कोकिलः । पुम् + पुत्रः = पुंस्पुत्रः ।
- (५०) (नश्छव्यप्रशान्) पद के अन्तिम न को र (:, स्) होता है, यदि छव् (च् छ्, ट्, ट्, त्, थ्) बाद में हो और छव् के बाद अम् (स्वर, ह, अन्तःस्थ, वर्ग के पंचम अक्षर) हो तो। प्रशान् शब्द में नियम नहीं लगेगा। न् को स् होने पर उससे पहले न याँ लग जाएँगे। इस नियम का रूप होगा—न्+छव्=ँ स्+छव् या न स्+छव्। नियम २२ के अनुसार श्चुत्व प्राप्त होगा तो होगा।

कस्मिन् + चित् = कस्मिश्चित् | शार्ङ्गिन् + छिन्धि = शार्ङ्गिश्चिन्धि = शार्ङ्गिश्चिन्धि = श्रीमान् + च = धीमांश्च तस्मिन् + तशै = तस्मिन्त् + तथा = तस्मिन्त्था

- (५१) कानाम्रेडिते) कान + कान् में पहले कान् के न् को र् होकर स् होगा और उससे पहलेँ या ÷ होगा। कान् + कान् = काँस्कान्, कांस्कान्।
- (५२) (क) (छे च) हस्व स्वर के बाद छ हो तो बीच में त् लग जाता है।
 नियम २२ से त् को च् हो जाएगा। स्व + छाया = स्वच्छाया। शिव + छाया =
 शिवच्छाया। स्व + छन्दः = स्वच्छन्दः (ख) (दिर्धित्) दीर्ध स्वर के बाद छ हो
 तो भी बीच में त् लगेगा। त् को च् पूर्ववत्। चे + छिद्यते = चेच्छिद्यते। (ग) (पदानताद् चा) पद के अन्तिम दीर्ध अक्षर के बाद छ हो तो विकल्प से त् लगेगा। लक्ष्मी
 + छाया = लक्ष्मीच्छाया, लक्ष्मीछाया। (घ) (आङ्माङोध्र) आ और मा के बाद
 छ होगा तो त् नित्य लगेगा। त् को च् पूर्ववत्। आ + छादयित = आच्छादयित।

 मा + छिदत् = माच्छिदत्।

(ग) विसर्ग-सन्धि (स्वादि-सन्धि)

(५३) (ससजुपो रः) पद के अन्तिम् स् को रु (र्) होता है। सजुप् शब्द के ष्को भी रु होता है। (सूचना - इस रु को साधारणतया नियम ५४ से विसर्ग होकर विसर्ग: ही शेष रहता है। जैसे-राम + स्=रामः, कृष्ण + स्=कृष्ण:। इसको ही नियम ६६, ६७, ६८ से उ या य् होता है। जहाँ उ या य् नहीं होगा, वहाँ र् रोष रहता है। अतः अ आ के अतिरिक्त अन्य स्वरों के बाद स्या विसर्ग का र् रोष रहता है, बाद में कोई स्वर या व्यंजन (वर्ग के ३, ४, ५ हों तो)। जैसे—

हरिः + अवदत् = हरिरवदत् वधूः + एषा = वधूरेषा शिशुः + आगच्छत् = शिशुरागच्छत् । गुरोः + भाषणम् = गुरोर्भाषणम् पितुः + इच्छा = पितुरिच्छा

हरेः + द्रव्यम् = हरेर्द्रव्यम्

(५४) (खरवसानयोर्विसर्जनीयः) र को विसर्ग होता है, वाद में खर् (वर्ग के १, २, शष स) हो या कुछ न हो तो। पुनर् + पृच्छिति = पुनः पृच्छिति। राम + स् (र्) = रामः । (सूचना—पुं० शब्दों के प्रथमा एक० में जो विसर्ग दीखता है, वह सुका ही विसर्ग है। उसको नियम ५३ से रु (र्) होता है और नियम ५४ से र को विसर्ग (:)।

(५५) (विसर्जनीयस्य सः) विसर्ग के बाद खर् (वर्ग के १, २, ३। प स) हो तो विसर्ग को स् हो जाता है। (श्या चवर्ग बाद में हो तो नियम २२ से श्रुत सन्धि भी)। जैसे-

हरिः + त्रायते = हरिस्रायते रामः + तिष्ठति = रामस्तिष्ठति कः + चित् = कश्चित्

विष्णु + त्राता = विष्णुस्त्राता बालः + चलति = बालश्रलति जनाः + तिष्ठन्ति = जनास्तिष्ठन्ति

(५६) (वा शार) विसर्ग के बाद शर् (श, ष स) हो तो विसर्ग को विसर्ग और स् दोनों होते हैं। श्चुत्व या ष्टुत्व (नियम २२, २४) यदि प्राप्त होंगे तो लगेंगे। जैसे—

हरिः + शेते = हरिःशेते, हरिश्शेते रामः + शेते = रामःशेते, रामश्शेते

। रामः + षष्ठः = रामष्यष्ठः बालः + स्विपति = बालस्स्विपति

(५७) (अस्कादिषु च) कस्क आदि शब्दों में विसर्ग से पहले अ या आ होगा तो विसर्ग को स् होगा, यदि इण् (इ, उ) होगा तो ष् होगा। कः + कः = कस्कः। कौतः + कुतः = कौतस्कुतः । सर्पिः + कुण्डिका = सर्पिष्कुण्डिका । धनुः + कपालम् = धनुष्कपालम् । भाः + करः = भास्करः ।

(५८) (सोऽपदादौ, पाशकल्पककाम्येष्विति०) पाश, कल्प, क और काम्य प्रत्यय बाद में हों तो विसर्ग को स् हो जाएगा। पयः + पाशम् = पयस्पाशम्। यशः + कल्पम् = यशस्कल्पम् । यशः + कम् = यशस्कम् । यशस्काम्यति ।

(५९) (इणः षः) पाश, कल्प, क, काम्य प्रत्यय बाद में हो तो विसर्ग को ष् हो जायगा, यदि वह विसर्ग इ, उ के बाद होगा तो। सर्पिष्पाशम्, सर्पिष्कल्पम्, सर्पिष्कम्।

(६०) (नमस्पुरसोर्गत्योः) गतिसंज्ञक नमस् और पुरस् के विसर्ग को स् होता है, बाद में कवर्ग या पवर्ग हो तो। (क धातु बाद में होती है तो नमस्, पुरस् गतिसंज्ञक होते हैं) नमः + करोति = नमस्करोति । पुरः + करोति = पुरस्करोति ।

(६१) (इदुदुपधस्य चाप्रत्ययस्य) उपधा (अन्तिम से पूर्ववर्ण) में इ या उ हो तो उसके विसर्ग को प् होता है, बाद में कवर्ग या पवर्ग हो तो। यह विसर्ग प्रत्यय का नहीं होना चाहिए। निः + प्रत्यूहम् = निष्पत्यूहम्। निः + क्रान्तः = निष्कान्तः । आविः + कृतम् = आविष्कृतम् । दुः + कृतम् = दुष्कृतम् ।

(६२) (तिरसोऽन्यतरस्याम्) तिरस् के विसर्ग को स् विकल्प से होता है, कवर्ग या पवर्ग बाद में हो तो । तिर: + करोति = तिरस्करोति, तिर: करोति । तिर: +

कृतम् = तिरस्कृतम्।

(६३) (इसुसोः सामर्थ्ये) इस् और उस् के विसर्ग को विकल्प से ष् होता है, कवर्ग या पवर्ग वाद में हो तो । दोनों पदों में मिलने की सामर्थ्य होनी चाहिए, तभी ष् होगा । सर्पिः + करोति = सर्पिष्करोति, सर्पिःकरोति । धनुः + करोति = धनुष्करोति, धनःकरोति।

(६४) (नितयं समासेऽनुत्तरपदस्थस्य) समास होने पर इस् और उस् के विसर्ग को नित्य ष् होगा, कवर्ग या पवर्ग बाद में हो तो । इस् और उस् वाला शब्द उत्तरपद्र (बाद के पद) में नहीं होना चाहिए । सर्पिः + कुण्डिका = सर्पिक्कुण्डिका ।

- (६५) (अतः कृकमिकंसकुम्भपात्रकुशाकर्णीप्वनव्ययस्य) अ के बाद विसर्ग को स् नित्य होता है, समास में, बाद में कु कम् आदि हों तो । यह विसर्ग अव्यय का नहीं होना चाहिए और उत्तरपद में न हो। अयः + कारः = अयस्कारः। अयः + कामः = अयस्कामः । इसी प्रकार अयस्कंसः, अयस्कुम्मः, अयस्पात्रम् , अयस्क्रशा, अयस्कर्णी।
- (६६) (अतो रोरप्लुतादप्लुते) हस्व अ के बाद रु (सू के र्याः) को उ हो जाता है, बाद में हस्व अ हो तो । (सूचना—इस उ को पूर्ववर्ती अ के साथ सन्धि-नियम ४ से गुण करके ओ हो जाता है और बाद के अ को सन्धि नियम ७ से पूर्वरूप सन्धि होती है। अतएव अ र् या अ: + अ = ओऽ होता है।) जैसे---

शिवः (शिव र्) + अर्च्यः = शिवोऽर्च्यः रामः (राम र्) + अस्ति = रामोऽस्ति कः (क र्) + अपि = कोऽपि रामः + अवदत् = रामोऽवदत् देवः + अधुना = देवोऽधुना

(६७) (हशि च) हस्व अ के बाद र (स् के र्या :) को उ हो जाता है, बाद में हशू (वर्ग के ३, ४, ५ ह, अन्तःस्थ) हो तो । सूचना सिन्धनियम ६६ बाद में अ हो तब लगता है, यह बाद में हश् हो तो। उ करने के बाद सन्धिनियम ४ से अ + उ को गुण होकर ओ होगा। अतः अः + हश् = ओ + हश् होगा, अर्थात् अः को ओ होगा।)

देव: + गच्छति = देवो गच्छति शिवः (शिव र्) + वन्दाः = शिवो वन्दाः बाल: + हसति = बालो इसति

(६८) (भोभगोअघोअपूर्वस्य योऽिश) भोः, भगोः, अघोः शब्द और अ या आ के बाद र (स् का र या :) को य् होता है, यदि बाद में अश् (स्वर, ह, अन्त:स्थ, वर्ग के ३, ४, ५) हो तो। सूचना—इसके उदाहरण आगे नियम ७० में देखें।

(६९) (हलि सर्वेषाम्) भोः, भगोः, अघोः और अ या आ के वाद य् का लोप अवस्य हो जाता है, बाद में व्यंजन हो तो । सूचना-इसके उदाहरण आगे नियम

७० में देखें।

(५०) (छोपः शाकल्यस्य) अ या आ पर्छे हो तो पदान्त य् और व का लोप विकल्प से होता है, वाद में अश् (स्वर, ह, अन्तःस्थ, वर्ग के ३, ४, ५) हो तो। (सचना-नियम ६८ के यु के बाद व्यंजन होगा तो नियम ६९ से यु का लोप अवस्य होगा। य के बाद यदि कोई स्वर आदि होगा तो नियम ७० से युका लोप ऐच्छिक होगा । यु का लोप होने पर कोई दीर्घ, गुण, वृद्धि आदि सन्धि नहीं होगी । अर्थात् अः या आः + अश् = अ या आ + अश् ।

भोः (भोय्) + द्रेवाः = भो देवाः देवाः (देवाय्) + नम्याः = देवा नम्याः देवाः (देवाय्) + यान्ति = देवा यान्ति पुत्रः + आगच्छति = पुत्र आगच्छति

| नराः + हसन्ति = नरा हसन्ति | देवाः + इह = देवा इह, देवायिह

(७१) (क) (रोऽसुपि) अहन् के न् को र होता है, बाद में कोई सुप (विभक्ति) न हो तो। अहन् + अहः = अहरहः। अहन् + गणः = अहर्गणः। (स्व) (रूप-रात्रिरथन्तरेषु रुत्वं वाच्यम्) रूप, रात्रि, रथन्तर वाद में हो तो अहन् के न् को रु होगा। उसको नियम ६७ से उ होगा और नियम ४ से गुण होकर ओ होगा। अहन् + रूपम् = अहोरूपम् , अहन् + रात्रः = अहोरात्रः । इसी प्रकार अहोरथन्तरम् । (ग) (अहरादीनां पत्यादिषु वा रेफः) अहर आदि के र के बाद पति आदि हों तो र् को र् विकल्प से रहता है। अहर् + पतिः = अहर्पतिः। इसी प्रकार गीर्पतिः, धूर्पतिः। अन्यत्र विसर्ग ।

(७२) (रो रि) र् के बाद र्हो तो पहले र् का लोप हो जाता है।

(७३) (ढ्लोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः) द्यार्का लोप हुआ हो तो उससे पूर्ववर्ता अ, इ, उ को दीर्घ हो जाता है। उद् + ढः = ऊढः, लिढ् + ढः = लीढः।

पुनर् + रमते = पुना रमते शम्भुर् + राजते = शम्भु राजते हरिर् + रम्यः = हरी रम्यः अन्तर् + राष्ट्रियः = अन्ताराष्ट्रियः

(৩৪) (एतत्त्दोः सुलोपोऽकोरनञ्समासे हलि) सः और एपः के विसर्ग या सूका लोप होता है, बाद में कोई व्यंजन हो तो। (सकः, एपकः, असः, अनेषः के विसर्ग का लोप नहीं होगा।) सूचना—सः, एपः के वाद अ होगा तो सन्धिनियम् ६६ से 'ओऽ' होगा । अन्य स्वर वाद में होंगे तो सन्धिनियम ६८ और ७० से विसर्ग का लोप होगा)।

(१) सः (सस्) + पठति = स पठति एषः (एषस्) + विष्णुः = एप विष्णुः | (२) सः + अयम् = सोऽयम् सः + इच्छति = म वन्त सः + इच्छति = स इच्छति

(७५) (सोऽचि लोपे चेत्पादपूरणम्) सः के विसर्ग का लोप हो जाता है, यदि बाद में स्वर हो और लोप करने से श्लोक के पाद की पूर्ति हो। सः + एषः= सेष दाशरथी रामः CC-O. Dr. Ramdev Inpathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(७) प्रत्यय-परिचय

आवश्यक-निर्देश

- १. पुस्तक में मुख्य रूप से प्रयुक्त १०० धातुओं से क्त आदि प्रत्यय लगाकर बने हुए रूपों का विवरण इस प्रत्यय-पिरचय में सारणी (चार्ट) के रूप में प्रस्तुत किया गया । धातुएँ अकारादि-क्रम से दी गई हैं ।
- २. धातुओं के मूलरूप कोष्ठ में दिए गए हैं। कितपय धातुओं के प्रारम्भ या अन्त में कुछ अनुबन्ध लगे हुए हैं। इन अनुबन्धों के लोप से धातु में कुछ विशेष कार्य होते हैं। जैसे—इकुञ् (क्र) धातु के इ के हटने से धातु से कित्र (त्रि) और मप् (म) प्रत्ययं। (हिंचतः कित्रः, ३-३-८८, क्त्रेमम्मित्यम्, ४-४-२०)। कृत्या निर्वृत्तं कृत्रिमम्, कृ + त्रि + म = कृत्रिमम्। इसी प्रकार इपचप् (पच्) का पित्रमम् और इवप् (वप्) का उप्त्रिमम् बनता है। इकुञ् में ज् हटने से अर्थात् जित् होने से धातु उमयपदी है। स्विरितजितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले (१-३-७२)। सभी जित् धातुएँ उमयपदी होती हैं। जैसे—इदाज् (दा), इधाञ् (धा) आदि। सभी ङित् (जिनमें ङ् हटा है) धातुएँ आत्मनेपदी होती हैं। अनुदात्तिहत आत्मनेपदम् (१-३-१२)। जैसे—चक्षिङ् (चक्ष्), शीङ् (शी), दीङ् (दी), देङ् (दे) आदि धातुएँ। धातु का अन्तिम उ हटने से क्त्वा (त्वा) प्रत्यय होने पर इ विकल्प से होता है। जैसे—दिन्न (दिव्) का देवित्वा यृत्वा, सिन्न (सिन्) का सेवित्वा-स्यूत्वा, शमु (शम्) का शमित्वा-शान्त्वा। द हटने से धातु से अथुच् (अथु) प्रत्यय होता है। टिवितोऽथुच् (३-३-८९)। द्वेषु (वेप्) का वेपथुः, दुओश्व (श्वि) का श्वयथुः।
- ३. उभयपदी धातुओं के शतृ प्रत्यय के रूप सारणी में दिए गए हैं। शानच् प्रत्यय करने पर ये रूप होंगे:—कथ्—कथयमानः, कृ—कुर्वाणः, क्री-क्रीणानः, क्षिप्— क्षिपमाणः, ग्रह्-ग्रह्णानः, चि-चिन्वानः, चिन्त्-चिन्तयमानः, चुर्-चोरयमाणः, ज्ञा- जानानः, तन्-तन्वानः, तुद्-तुदमानः, छिद्-छिन्दानः, दा-ददानः, दुह्-दुहानः, धा-दधानः, नी-नयमानः, पच्-पचमानः, ब्रू-ब्रुवाणः, भक्ष्-भक्षयमाणः, भञ्ज्- भञ्जानः, भिद्-भिन्दानः, भुज्-भुञ्जानः, भृ-विभ्राणः, मुच्-मुख्यमानः, याच्- याचमानः, युञ्ज,-युञ्जानः, रुष्-हन्धानः, छिह्-छिहानः वह्-वहमानः, सु-सुन्वानः,

प्रत्यय-परिचय (धातु का मूलरूप कोष्ठ में है)

धातु अर्थ	क	क्तवतु	शतृ।शानः	च् कत्व	ल्यप्
अद् (अदः, २ प० खाना)	जग्धः	जग्धवान्	अदन्	जग्ध्वा	प्रजग्ध्य
अश् (अशू , ५ आ०, व्यात	o) अष्टः	अष्टवान्	अश्नुवान	: अशित्वा	समस्य
अस् (अस, २ प०, होना)	भृत:	भृतवान्	सन्		संभूय
आप् (आप्ल, ५ प०, पाना)	आतः	आतवान्	आप्नुवन्		प्राप्य
आस् (आस, २ आ०, वैठना) आसित	ाः आसितवान्	आसीनः	आसित्व	उपास्य
इ (इण्, २ प०, जाना)	इतः	इतवान्	यन्		
इ, अधि + (इङ् ,२आ०,पढ़-			अधीयानः		
इष् (इष, ६ प०, चाहना)		इष्टवान्	इच्छन्	इष्ट्रा	
ईक्ष् (ईक्ष, १ आ०, देखना)		ईक्षितवान्	ईक्षमाणः		
कथ् (कथ, १० उ०, कहना)		कथितवान्	कथयन्		
कुप् (कुप, ४ प०, क्रोध०)	कुपितः	कुपितवान्	कुप्यन्		
क्र (इक्ट्रम्, ८ उ०, करना)	कृतः	कृतवान्	कुर्वन्		
कृष् (कृष, १ प०, जोतना)		कृष्टवान्	कर्षन्	<u>कृष्ट्वा</u>	
कॄ (कॄ, ६ प०, बखेरना)	कीर्णः	कीर्णवान्	किरन्	कीत्वां	
की (डुक्रीञ्, ९ उ०, खरीदना) क्रीतः	क्रीतवान्	क्रीणन्	क्रीत्वा	
क्षिप् (क्षिप, ६ उ०, फेंकना)	क्षिप्तः	क्षितवान्	क्षिपन्	क्षिप्तवा	प्रक्षिप्य
गम् (गम्ल, १ प॰, जाना)	गतः	गतवान् '	गच्छन्	गत्वा '	
गृ (गृ, ६ प०, निगलना)	गीर्णः	गीर्णवान्	गिरन्	गीरवा	
ग्रह् (ग्रह, ९ उ०, लेना)	गृहीत:	गृहीतवान्	गृह्णन्	गृहीत्वा,	
वा (वा, १ प०, सूँघना)	घात:	घातवान्	जिघ्न्	घात्वा ः	
चि (चिञ्, ५ उ०, चुनना)	चित:	चितवान्		चित्वा स	
चिन्त् (चिति, १० उ०, सोचना)चिन्तित	: चिन्तितवान्	चिन्तयन् चि		
चुर (चुर, १० उ०, चुराना)	चोरितः	चोरितवान्	चोरयन्	चोरयित्वा	
छिद् (छिदिर्, ७ उ०, काटना)	छिन्न:	छिन्नवान्	_	छित्त्वा	
जन् (जनी, ४ आ०, पैदा होना) जातः	जातवान्		जनित्वा	
ाज (जि. १ ५०, जातना)	जित:	जितवान्	जयन्		
सा (सा, १ ७०, जानना)	श्रातः	शातवान्	जानन्		वज्ञाय
तन् (तनु, ८ उ०, फैलाना)	ततः	ततवान्	तन्वन्		वितत्यं
गुद् (तुद, ६ उ०, दु:ख देना)	तुन्नः	तुन्नवान्	तुदन्	तुत्त्वा	संतुद्य
यज् (त्यज, १ प०, छोड़ना)	त्यक्तः	त्यक्तवान्		त्यक्त्वा परि	
रा (डुदाञ्, ३ उ०, देना)	दत्तः	दत्तवान्			
देव (दिव Dr. Ramdev Tripathi Collection a	द्भिक्क ai(C	Selan Pigitized	By Siddhanta	eGangotri G	yaan Kos

तुमन्	तन्यत्	तृच्	ल्युट्	कर्मवाच्य	णिच्	सन्
अतुम्	अत्तव्यम्	अत्ता	अदनम्	अद्यते	आदयति	जिघत्सति
अशितुम्	अशितव्यम्	अशिता	अशनम्	अस्यते	आशयति	अशिशिषते
भवितुम्	भवितव्यम्	भविता	भवनम्	भृयते	भावयति	बुभूपति
आप्तुम्	आप्तब्यम्	आप्ता	आपनम्	आप्यते	आपयति	ईप्सति
आसितुम्	आसितव्यम्	आसिता	आसनम्	आस्यते	आसयति	आसिसिपते •
एतुम्	एतव्यम्	एता	अयनम्	ईयते	गमयति	जिगमिषति
अध्येतुम्	अध्येतव्यम्	अध्येता	अध्ययनम्	अधीयते	अध्यापयि	ते अधिजिगांसते
एषितुम्	एषितव्यम्	एषिता	एवणम्	इप्यते	एपयति	एषिषति
ईक्षितुम्	ईक्षितव्यम्	ईक्षिता	ईक्षणम्	ईक्ष्यते	ईक्षयति	ईचिक्षिषते
कथयितुम्	कथ्यितव्यम्	कथयिता	कथनम्	कथ्यते	कथयति	चिकथयिषति
कोपितुम्	कोपितव्यम्	कोपिता	कोपनम्	कुप्यते	कोपयति	चुकोपिपति
कर्तुम्	कर्तव्यम्	कर्ता	करणम्	क्रियते	कारयति	चिकीर्षति .
कर्ष्ट्रम्	कर्ष्टव्यम्	कर्षा	कर्षणम्	कृष्यते	कर्पयति	चिकुक्षति
करितुम्	'करितव्यम्	करिता	करणम्	कीर्यते	कारयति	चिकरिषति
क्रेतुम्	क्रेतव्यम्	क्रेता -	क्रयणम्	क्रीयते	क्रापयति	चिश्रीपति
क्षेप्तुम्	क्षेतव्यम्	क्षेता	क्षेपणम्	क्षिप्यते	क्षेपयति	चिक्षिप्सति
गन्तुम्	गन्तव्यम्	गन्ता	गमनम्	गम्यते	गमयति	जिगमिषति
गरितुम्	गरितव्यम्	गरिता	गरणम्	गीर्यते	गारयति	जिगरिषति
ग्रही <u>त</u> ुम्	ग्रहीतव्यम्	ग्रहीता	ग्रहणम्	गृह्यते	ग्राह्यति	जिप्टक्षति
घातुम्	घातव्यम्	घाता	घाणम्	घायते	घापयति .	जिघासति
चेतुम्		चेता	चयनम्	चीयते	चापयति	चिचीषति
चिन्तयितुम्					चिन्तयति	चिचिन्तयिषति
चोरयितुम्	चोर्यातव्यम				चोरयति	चुचोरयिषति
छेत्तुम्	छेत्तव्यम्	छेत्रा	छेदनम्	छिद्यते	छेदयति	चिच्छित्सति
जनितुम्	जनितव्यम्	जनिता	जननम्	जायते	जनयति .	जिजनिषते
जेतुम्	जेतव्यम् '	जेता	जयनम्	जीयते	जापयति	जिगीषति
ज्ञातुम्	ज्ञातव्यम्	ज्ञाता	शानम्	ज्ञायते	ज्ञापयति	जिज्ञासते
तनितुम्	तनितव्यम्	तनिता	तननम्	तन्यते	तानयति	तितंसति
तोत्तुम्	तोत्तव्यम्	तोत्ता	तोदनम्	तुद्यते	तोदयि	तुतुत्सति
त्यक्तुम्	त्यक्तव्यम्	त्यक्ता	त्यजनम्	त्यज्यते	त्याजयति	तित्यक्षति
दातुम्	दातव्यम्	दाता	दानम्	दीयते	दापयति	दित्सति
देवितुम् D. Dr. Ramde	देवितव्यम् v Tripathi Colle	देविता ection at Sar	देवनम् rai(CSDS). Dig	दीव्यते gitized By Sid	देवयति ddhanta eG	दिदेविषति angotri Gyaan Kos

अर्थ धातु क्त दुग्धः दुह् (दुह्, २ उ०, दुहना) दश् (दृशिर्, १ प०, देखना) दृष्टः धा (डुधाञ् , ३ उ०, धारण०)हितः नम् (णम, १ प०, झकना) नतः नश् (णश, ४ प०, नष्ट होना) नष्टः नी (णीञ् , १ उ०, ले जाना) नीतः नृत् (नृती, ४ प०, नाचना) नृत्तः पच् (डुपचप् , १उ०, पकाना) पकः पट् (पट, १ प०, पढ़ना) पटितः पद् (पद, ४ आ०, जाना) पन्नः पा (पा, १ प०, पीना) पीतः पा (पा, २ प०, रक्षा करना) पातः प्रच्छ (प्रच्छ, ६ प०, पूछना) :3ष्ट बन्ध् (बन्ध, ९ पं ०, बाँधना) बद्धः ब्र (ब्रूज, २ उ०, बोलना) उक्तः মধ্ (মধ্র, १० उ०, खाना) মধ্বিतः भञ्ज् (भञ्जो, ७प०, तोड़ना) भगनः भिद् (भिदिर् ७ उ०, तोड़ना) भिन्नः भी (जिभी, ३ प०, डरना) भीतः मुज् (भुज७उ०,पालना,खाना)भुक्तः भू (भू, १ प०, होना) भूत: भृ (डुभूञ् , ३ प॰, पालना) भृतः भ्रम् (भ्रमु, ४ प०, घूमना) भ्रान्तः मन्थ् (मन्थ, ९ प०, मथना) मथितः मा (माङ् , ३ आ०, नापना) मितः मुच् (मुच्ल, ६, उ०, छोड़ना)मुक्तः मुद् (मुद, १ आ०, प्रसन्न०) मुदितः मृ (मृङ् , ६ आ०, मरना) मृतः या (या, २ प०, जाना) यातः याच् (दुयाच्, १उ०, माँगना) याचितः युज् (युजिर्, ७ उ०, मिलाना) युक्तः युध् (युध, ४ आ०, लड़ना) युद्धः रक्ष् (रक्ष, १ प०, रक्षा०) रक्षितः रद् (रुद्रि, २ प॰ रोना) रुद्रित (CSDS) प्रीतायान करने ddhanta स्टिबी gotri Gyann Kosha

क्तवतु रातृ शानच क्तवा ल्यप दुग्ध्वा दुहन् दुग्धवान् संदुह्य दृष्टवान् पश्यन् द्या सदश्य हित्वा हितवान् दधत् विधाय नतवान् नमन् नत्वा प्रणम्य नशित्वा विनश्य नष्टवान् नश्यन् नीत्वा नीतवान् आनीय नयन् नर्तित्वा प्रनृत्य नृत्तवान् नृत्यन् संपच्य पक्षवान् पचन् पक्त्वा परितवान् पिटत्वा संपठ्य पछन् विपद्य पन्नवान् पद्यमानः पत्त्वा पीतवान् पिबन् पीत्वा निपाय पातवान् पान् पात्वा प्रपाय संपृच्छ्य पृष्टवान् पृच्छन् वृद्धा वध्नन् बद्ध्वा बद्धवान् संबध्य उक्तवान् ब्रुवन् प्रोच्य उत्तवा मिक्षतवान् मक्षयन् भक्षयित्वा संभक्ष्य भग्नवान् भञ्जन् विभज्य भत्तवा भिन्नवान् भिन्दन् भित्त्वा संभिद्य-भीतवान् विभ्यत् भीत्वा संभीय भुक्तवान् भुञ्जानः भुक्तवा संभुज्य भूतवान् भवन् संभूय भूत्वा विभ्रत् भृतवान् संभृत्य भृत्वा भ्रान्तवान् भ्राम्यन् भ्रान्त्वा संभ्रम्य मथितवान मन्थित्वा मध्नन् संमध्य मितवान् मिमानः उपमीय मित्वा मुक्तवान् मुञ्चन् विमुच्य मुक्तवा मुदितवान् मोदमानः मुदित्वा प्रमुद्य म्रियमाणः मृत्वा मृतवान् प्रमृत्य यातवान् यान् यात्वा प्रयाय याचितवान् याचमानः याचित्वा प्रयाच्य युक्तवान् युञ्जन् युक्तवा प्रयुज्य युद्धवान् युध्यमानः युद्ध्वा प्रयुध्य रक्षितवान् रक्षन् रिक्षत्वा संरक्ष

तुमन्	तव्यत्	तृच्	ल्युट्	कर्म०	णिच्	सन्
दोग्धुम्	दोग्धव्यम्	दोग्धा	दोहनम्		दोहयति	दुधुक्षति
द्रष्टुम	द्रष्टव्यम्	द्रष्टा	दर्शनम्	दृश्यते	दर्शयति	दिदृक्षते
धातुम्	धातव्यम्	धाता	धानम्	धीयते	धापयति	धित्सति
नन्तुम्	नन्तव्यम्	नन्ता	नमनम्	नम्यते	नमयति	निनंसति
नशितुम्	नशितव्यम्	नशिता	नशनम्	नश्यते	नाशयति	निनशिषति
नेतुम्	नेतव्यम्	नेता	नयनम्	नीयते	नाययति	निनीषति
नर्तितुम्	नर्तितव्यम्	नर्तिता	नर्तनम्	नृत्यते	नर्तयति	निनर्तिषति
पत्तुम्	पक्तव्यम्	पक्ता	पचनम्	पच्यते	पाचयति	पिपक्षित्
'पटितुम्	पठितव्यम्	पठिता	पठनम्	पठ्यंते	पाठयति	पिपठिषति
पत्तुम्	पत्तव्यम्	पत्ता	पदनम्	पद्यते	. पादयति	पित्सते
पातुम्	पातव्यम्	पाता	पानम्	पीयते	पाययति	
पातुम्	पातव्यम्	पाता	पानम्	पायते	पाल्यति	पिपासति
प्रधुम्	प्रष्टन्यम्	সন্থা	प्रच्छनम्	पृच्छयते	प्रच्छयति	पिप्रच्छिपति
वन्धुम्	वन्धव्यम्	बन्धा	बन्धनम्	बध्यते	वन्धयति	विभन्त्सिति
वक्तुम्	वत्तव्यम्	वक्ता	वचनम्	उच्यते	वाचयति	विवश्वति
भक्षयितुम्		भक्षयिता	भक्षणम्	मध्यते	भक्षयति	विभक्षविपति
भङ्कुम्	भङ्कव्यम्		भव्जनम्		भञ्जयति	विभङ्क्षति
भेतुम्	भेत्तव्यम्	भेत्ता	भेदनम्	भिद्यते -	भेदयति	बिभित्सति
भेतुम्	भेतव्यम्	भेता	भयनम्	भीयते	भाययति	विभीषात
भोक्तुम्			भोजनम्	भुज्यते	भोजयति	बुभुक्षति-ते
भवितुम्			भवनम्	भूयते	भावयति	बुभ्पति
भर्तुम्	भर्तव्यम्	भर्ता	भरणम्	भ्रियते	भारयति	बुभूर्पति
भ्रमितुम्			भ्रमणम्	भ्रम्यते	भ्रमयति	बिभ्रमिषति
मन्थितुम्			मन्थनम्	मध्यते	मन्थयति	मिमन्थिपति
मातुम्	मातव्यम्	माता	मानम्	मीयते	माययति	मित्सते
मोक्तुम्		मोक्ता	मोचनम्		मोचयति	मुमुक्षते
मोदिनुम्	मोदितव्यम्		मोदनम्		मोदयति	मुमुदिषते
मादे म्		मता	मरणम्	म्रियते	मारयति	मुमूर्षति
यातुम्	यातव्यम्		यानम्	यायते	यापयति	यियासति
	यातिव्यम् याचितव्यम्		याचनम्	याच्यते		यियाचिषति
योक्तुम्			योजनम्	यज्यते	योजयति	युयुक्षति-ते
मोरम	योक्तव्यग्		योधनम्	यध्यते	योधयति	युयुत्सते
योद्धम्	योद्धव्यम्	योद्धा	रक्षणम्	उथ्यते ।		रिरक्षिपति
रक्षितुम्	रक्षितव्यम्	रक्षिता	रवागर्	Charles of Dir		Ganger Gyaan Ko

कत्वा क्तवतु ल्यप शतृ शानच विरुध्य रुध् (रुधिर्, ७ उ०, रोकना) रुन्धन् रुद्ध्वा रुद्धः रद्धवान् लब्ध्वा लब्धवान् लभमानः लभ् (डुलभष् , १ आ०, पाना) लब्धः उपलभ्य लिखित्वा आलिस्य लिखितवान् लिखन् लिखितः लिख् (लिख, ६ प०, लिखना) संलिह्य लीहः लीद्वा लीढवान् लिहन् लिह् (लिह, २ उ०, चाटना) उदितः उदित्वा वद् (वद, १ प०, बोलना) उदितवान् वदन् अन्द्य उषितवान् वसन् उषित्वा प्रोध्य उषितः वस् (वस, १ प॰, रहना) प्रोह्य वह् (वह, १ उ०, ढोना) ऊढवान् वहन् ऊढवा ऊदः विदितः विदितवान् विदन् विदित्वा संविद्य विद् (विद, २ प०, जानना) वर्तित्वा निवृत्य वर्तमानः वृत् (वृतु, १ आ०, होना) वृत्तः **नृत्तवान्** वर्धमानः वर्धित्वा वृध् (वृधु, १ आ०, बढ़ना) संवृध्य वृद्धः वृद्धवान् शक् (शक्ल, ५ प०, सकना) शक्तः शक्नुवन् शक्तवा संशक्य शक्तवान् शास् (शासु, २ प०, शिक्षा०) अनुशिष्य शिष्ट: शिष्टवान् शिष्टवा गासत् शयितः शी (शीङ्, २ आ०, सोना) शयितवान् शयानः श्यित्वा संशय्य शो (शो, ४ प०, छीलना) संशाय शातः शातवान् स्यन् शाःवा श्रम् (श्रमु, ४ प०, श्रम०) परिश्र म्य श्रान्तवान् श्राम्यन् श्रमित्वा श्रान्तः श्र (श्र, १ प०, सुनना) श्रुतः श्रुतवान् शृण्वन् श्रुत्वा संश्रुत्य सद् (पद्ल, १ प०, वैठना) सीदन् निषद्य सन्नः सन्नवान् सत्वा सहू (पह, १ आ०, सहना) सोढः सोदवान् सहमानः सोढवा संसह्य सिव् (षिवु, ४ प०, सीना) संसीव्य स्यूत: स्यूतवान् सीव्यन् सेवित्वा सु (पुञ्, ५ उ०, निचोड़ना) स्तः सुन्वन् सुत्वा प्रसुत्य सुतवान् सेव् (पेवृ, १ आ०, सेवा०) सेवित: सेवितवान् सेवमानः सेवित्वा संसेव्य चितः सो (षो, ४ प०, नष्ट होना) सितवान् स्यन् सित्वा अवसाय स्तु (प्टुज्, २ उ०, स्तुति०) स्तुत: स्तुवन् प्रस्तुत्य स्तुतवान् स्त्रवा तिष्ठन् स्था (ष्ठा, १ प०, रुकना) स्थित: स्थितवान् स्थित्वा प्रस्थाय संस्पृश्य स्पृश् (स्ट्श, ६ प० छूना) सृष्ट्वा स्वृष्टः स्पृष्टवान् स्पृशन् विस्मृत्य स्मृ (त्मृ, १ प०, स्मरण०) स्मृत्वा स्मृतः स्मृतवान् स्मरन् स्वप् (ञिष्वप् , २ प०, सोना) सुप्तः संसुप्य सुप्तवा सुप्तवान् स्वपन् निहत्य हन् (हन, २ प०, मारना) हत्वा घ्नन् हतवान् हत: हसित्वा हस् (हसे, १ प०, हँसना) विहस्य हसितः हसितवान् हसन् विहाय हा (ओहाक्, ३प०, छोड़ना)हीनः हित्वा हीनवान् जहत् हिंस् (हिसि, ७ प०, हिंसा०) हिंसितः हिंसित्वा विहिंस्य हिंसितवान् हिंसन् हु (हु, ३ प०, हवन करना) हुतः आहुत्य हुतवान् जुह्वत् हुत्वा ह (हज् , १ उ०, हरण०) हतवान् हर्न् हत्वा प्रहत्य S), Digitized By Siddhania eGangotri Gyaan Kosha होणवान् जिह्नियत् होत्वा सहीय हृतः CC-O. Der Ramdey Tripathi Collection at Sarai (CSE

तुमुन्	तब्यत् तृच्	ल्युट्	कर्म०	णिच्	सन्
रोद्धम्	रोद्धव्यम् रोद्धा	रोधनम्		रोधयति	रुरुत त
लब्धुम्	लब्धव्यम् लब्धा	लभनम्	लभ्यते	लम्भयति	
हेखितु म्	लेखितव्यम् लेखिता	लेखनम्		लेखयति	लिलिखिष ति
लेंडुम्	लेढव्यम् लेढा	लेहनम्	ल्हि सते	लेहयति	लिलिक्षति-ते
चिंदतुम्	वदितव्यम् वदिता	वदनम्	उद्यते	वादयति	विवदिषति
वस्तुम्	वस्तव्यम् वस्ता	वसनम्	उष्यते	वासयति	विवत्सति
वोडुम्	वोढव्यम् बोढा	वहनम्	उह्यते	वाहयति	विवक्षति-ते
वेदितुम्	वेदितव्यम् वेदिता	वेदनम्	विद्यते	वेदयति	विविदिषति
वर्तितुम्	वर्तितव्यम् वर्तिता	वर्तनम्	वृ त्यते	वर्तयति	विवर्तिषते
विधितुम्	वर्धितव्यम् वर्धिता	वर्धनम्	वृध्यते	वर्धयति	विवर्धिषते
शक्तुम्	शक्तव्यम् शक्ता	शकनम्	शक्यते	शाकयति	शिक्षति
शासितुम्	शासितव्यम् शासिता	शासनम्	शिष्यते	शासयति	शिशासिषति
श्यितुम्	शयितव्यम् शयिता	शयनम्	शय्यते	शाययति	शिशयिषते
शातुम्	शातव्यम् शाता	शानम्	शायते	शाययति	शिशासति
श्रमितुम्	श्रमितव्यम् श्रमिता	श्रमणम्	श्राम्यते	श्रमयति	शिश्रमिषति
श्रोतुम्	श्रोतव्यम् श्रोता	श्रवणम्	श्रूयते	श्रावयति	शुश्रूषते -
सत्तुम्	सत्तव्यम् सत्ता	सदनम्	सद्यते	सादयत्रि	सिसत्सित
सोडुम्	सोढव्यम् सोढा	सहनम्	सह्यते	साह्यति	सिसहिषते
सेवितुम्	सेवितव्यम् सेविता	सेवनम्	सेव्यते	सेवयति	सिसेविषति
सोतुम्	स्रोतव्यम् स्रोता	सवनम्	स्यते	सावयति	सुस्षति
सेविंतुम्	सेवितव्यम् सेविता	सेवनम्	सेव्यते	सेवयति	सिसेविषते
सातुम्	सातव्यम् साँता	सानम्	सीयते	साययति	सिषासति
स्तोतुम्	स्तोतव्यम् स्तोता	स्तवनम्	स्त्यते	स्तावयति	तुष्टूषति
स्थातुम्	स्थातव्यम् स्थाता	स्थानम्	स्थीयते	स्थापयति	तिष्ठासति
स्प्रष्टुम्	स्प्रष्टव्यम् स्प्रष्टा	स्पर्शनम्	स्पृश्यते	स्पर्शयति	पिस्पृक्षति
स्मर्तुम्	स्मर्तव्यम् स्मर्ता	स्मरणम्	स्मर्यते	स्मारयति	सुस्मूर्षते
खप्तुम्	स्वसन्यम् स्वसा	स्वपनम्	सुप्यते	स्वापयति	सुषुप्सति
हन्तुम्	हन्तव्यम् हन्ता	हननम्	हन्यते	घातयति	जिघासति
हसितुम्	हसितव्यम् हसिता	हसनम्	हस्यते	हासयति	जिइसिपति
हातुम्	हातव्यम् हाता	हानम्	हीयते	हापयति	जिहासति
हिंसितुम्	हिंसितव्यम् हिंसिता	हिंसनम्	हिंस्यते	हिंसयति	जिहिंसिषति
होतुम्	होतव्यम् होता	हवनम्	हूयते	हावयति	जुहूषति
हर्तुम्	हर्तव्यम् हर्ता	हरणम्	ह्रियते	हारयति	जिहीर्घति

CC-O. Dहि मुक्नाdev Trहित्रिधा म्ollecहिस्ता at Sarai (ह्विमिक्). Diह्यावती By Sid हेक्यांसि eGang सिहिप्सित Kosha

(८) वाक्यार्थक-दाब्द (वाक्यार्थ-वोधक राव्द)

स्चना—यहाँ पर उदाहरणार्थ कतिपय वाक्यार्थ-बोधक शब्दों का संग्रह किया गया है। निम्नलिखित पद्धित को अपनाकर सैकड़ों इस प्रकार के शब्द बनाए जा सकते हैं।

(१) समास

- (क) अव्ययीभाव समास—अव्ययीभाव समास करने से बहुत से वाक्यार्थक शब्द बनते हैं। इसमें कुछ अव्यय वाक्यांश का बोध कराते हैं। जैसे—कृष्ण के समीप—उपकृष्णम्, मद्र देश की समृद्धि—सुमद्रम्, यवनों का क्षय—दुर्यवनम्, मिक्स्यों का अभाव—निर्मक्षिकम्, इस समय सोना उचित नहीं है—अतिनिद्रम्, गंगा के किनारे किनारे—अनुगङ्गम्, शक्ति का उल्लंबन न करके या शक्ति के अनुसार—यथाशक्ति, आँख के संमुख—प्रत्यक्षम्, आँख से ओझल—परोक्षम्, हर घर की ओर—प्रतिगृहम्, तिनके को भी न छोड़कर—सतृणम्।
- (ख) तत्पुरुष समास—१. (मयूर्व्यंसकादि) जैसे—जिसके पास कुछ नहीं है—अर्क्चनः, जहाँ केवल खाने-पीने की ही वात चलती है—अर्क्नातिपवता, खावो और मस्त रहो, जहाँ पर यही प्रसंग रहता है—खादतमोदता, जिसको कहीं से कोई डर नहीं है—अकुतोभयः। २. (पात्रेसमितादि) केवल खाने के साथी—पात्रेसमिताः, अपने घर कुत्ता भी शेर होता है—गेहेशूरः, गेहेनर्दी। ३. (प्रादिसमास) प्रकृष्ट आचार्य—प्राचार्यः, माला को अतिक्रमण करने वाला—अतिमालः, पढ़ाई से तंग आया हुआ—पर्यध्ययनः, कौशम्त्री से निकला हुआ—निष्कौशाम्बः। दो अंगुल नाप की—द्व चङ्गुलं दार (लकड़ी)।
- (ग) बहुद्वीहि—जिसको जल मिल गया है—प्राप्तोदकः, जिसने रथ ढोया है, ऐसा बैल—ऊढरथः अनड्वान्, जिसके वस्त्र पीले हैं, ऐसे विष्णु—पीताम्बरः हरिः, जिसमें वीर पुरुष रहते हैं, ऐसा गाँव—वीरपुरुषकः प्रामः, जिसके पत्ते गिर गए हैं, ऐसा वृक्ष—प्रपर्णः वृक्षः, जिसके कोई पुत्र नहीं है—अपुत्रः, जिसके पास चितकवरी गाएँ हैं—चित्रगुः, जो औरत के वचन को ही प्रमाण मानता है—स्त्रीप्रमाणः, जिसने सोने की अँगृठी पहनी हुई है—हैममुद्रिकः, बीस के करीव—आसन्नविंशाः, दो या तीन—द्वित्राः, पाँच या छः—पञ्चपाः, वाल खींचकर झगड़ा हुआ—केशाकेशि, हाथा-पाई करके झगड़ा हुआ—मुष्टीमुष्टि, जिसकी पत्नी जवान है—युवजानिः, दो पैरों वाला—द्विपात्, चार पैरों वाला—चातुष्पात्, पुष्ट छाती वाला—च्यूढोरस्कः।
- (घ) एकरोष— माता और पिता—पितरौ, भाई और बहिन—आतरौ, हंस और हंसी—हंसौ, पुत्र और पुत्री—पुत्रौ सास और समुर CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Starta Ita eGangotri Gyaan Kosha

(२) तद्धित प्रत्यय

- (क) अपत्यार्थक—(पुत्र या पुत्री अर्थ में अण्, इञ् आदि प्रत्यय) वसुदेव का पुत्र—वासुदेवः, शिव का पुत्र—शैवः। इसी प्रकार विश्वामित्र>वैश्वामित्रः, दशरथ>दाशरथिः (राम), सुमित्रा> सौमित्रिः (लक्ष्मण), द्रोण>द्रोणिः (अश्वत्थामा), विनता> वैनतेयः (गरुड्), बहिन का पुत्र—भागिनेयः (भानजा), कुन्ती>कौन्तेयः, माद्री> माद्रे यः, पृथा> पार्थः, पाण्डु के पुत्र—पाण्डवाः, कुरु के पुत्र या वंशज> कौरवाः, राधा का पुत्र—राधेयः (कर्ण), दिति के पुत्र—दैत्याः, दनु के पुत्र—दानवाः, अदिति के पुत्र—आदित्याः। (राजा अर्थ में अण् आदि प्रत्यय) पञ्चाल देश का राजा—पाञ्चालः, पुरु जनपद का राजा—पोरवः, अंग देश का राजा—आङ्गः, वंग का राजा—बाङ्गः, मगध का राजा—मागधः, कम्बोज का राजा—काम्बोजः।
- (ख) चातुर्रार्थक—१. (रक्तार्थक या रंग से रँगने अर्थ में अण् आदि प्रत्यय) गेरु से रँगा हुआ वस्न—काषायम्, मँजीठ से रँगा हुआ—माञ्जिष्टम्, नील से रँगा हुआ—नीलम्, पीले रंग से रँगा हुआ—पीतकम्, हृद्दी से रँगा हुआ—हारिद्रम्। २. (देवतार्थक अण् आदि) इन्द्र जिसका देवता है—ऐन्द्र हृदिः। इसी प्रकार पशुपति>पाशुपतम्, सोम>सौम्यम्, वायु>वायन्यम्, अग्नि>आग्नेयम्, ३. (समूह अर्थ में अण् आदि) कौओं का समूह—काकम्, बकों का समूह>बाकम्। इसी प्रकार मिक्षा>भेक्षम्, युवति>योवनम्, जन>जनता, ग्राम>ग्रामता, वन्धु>बन्धुता। ४. (पढ़ने या जानने वाला अर्थ में अण् आदि प्रत्यय) व्याकरण पढ़ने या जाननेवाला—वैयाकरणः। इसी प्रकार न्याय>नैयायिकः,। मीमांसा> मीमांसकः, पुराण> पौराणिकः, इतिहास> ऐतिहासिकः।
- (ग) शौषिक—१. (होना आदि अथों में अण् आदि प्रत्यय) आँख से देखने योग्य—चाक्षुषं रूपम्, कान से सुनने योग्य—आवणः शब्दः । राष्ट्र में होने वाला> राष्ट्रियः, गाँव में रहने वाला> प्राम्यः, प्रामीणः, दक्षिण में रहने वाला> दाक्षिणात्यः, पश्चिम में रहने वाला—पाश्चात्त्यः, पूर्व में रहने वाला—पौरस्त्यः, समीप रहने वाला— अमात्यः । मास में होने वाला—मासिकम्, वर्ष> वार्षिकम्, दिन>दैनिकम् । शाम को होने वाला—सायन्तनम्, पहले होने वाला—पुरातनम् । २. (उत्पन्न होना अर्थ में अण् आदि) हिमालय से उत्पन्न होने वाली—हैमवती गङ्गा । ३. (प्रन्थ-निर्माण अर्थ में अण् आदि) शकुन्तला विषयक प्रत्य—शाकुन्तलस् । वासवदत्ता>वासवदत्ता । ४. (कृति अर्थ में अण् आदि) पाणिनि की कृति—पाणिनीयम् । वरक्चि> वारहचम् । ५. (मार्ग, निवास, इसका यह आदि अर्थों में अण् आदि) खुष्न का निवासी—सौष्नः, शरद्-सम्बन्धी—शारदम् ।

- (ঘ) मत्वर्धक—१. (वाला या मतुप्के अर्थ में मत्, इन्, इक आदि प्रत्यय) गुणों से युक्त —गुणवान् । इसी प्रकार धन > धनवान् , विद्या > , विद्यावान् , धी>धीमान् , श्री>श्रीमान् , बुद्धि>बुद्धिमान् , रूप> रूपवर्ती स्त्री । गुणों से युक्त-गुणिन्, धन से युक्त>धनिन्। दण्ड>दण्डिन्, कर>करिन्। धन वाला —धनिकः । माया > मायिकः । लोमवाला —लोमशः, सुन्दर अङ्गो वाली — अङ्गना । तारों से युक्त-तारिकतं नभः । इसी प्रकार पुष् > पुष्पितः, कुसुम > कुसु-मितः, दुःख > दुःखितः, क्षुधा > क्षुधितः, अङ्कुर > अङ्कुरितः । (युक्त अर्थ में विन् प्रत्यय) यश वाला—यशस्वी । इसी प्रकार तेजस् > तेजस्वी, साया > सायावी, मेधा > मेघावी, ओजस> ओजस्बी। अत्युत्तम वाणी (बोलने) वाला > वागमी, वकवाद करने वाला—वाचालः, वाचाटः। बड़े दाँत वाला—दन्तुरः, वड़ी तोंद वाला— नन्दिलः ।
- (ङ) (प्रमाण या नाप-तोल अर्थ में ह्यस, द्घ्न, मात्र प्रत्यय) कमर तक—कटिमात्रम् । घुटने तक—जानुदन्नम् । जाँघ तक—ऊरुद्वयसम् , ऊरुद-व्नम्, ऊरुमात्रम्।
- (च) (विकार अर्थ में अण् आदि) मिट्टी का वना हुआ-मार्तिकम्। पत्थर का बना हुआ-आरमः, राँगा का बना हुआ-जातुपम् । इसी प्रकार गो> गन्यम् , पयस् > पयस्यम् ।
- (छ) (विविध अर्थों में तद्धित प्रत्यय) पाशों से खेलने वाला—आक्षिकः। दही से बना हुआ-दाधिकम् । नाव से पार करने वाला-नाविकः । उडुप> औडु-पिकः । हाथी की सवारी करने वाला—हास्तिकः । समाज की रक्षा करने वाला— सामाजिकः। रथ को ढोने वाला—रथ्यः। धुरा को ढोने वाला—धुर्यः, धौरेयः। मभा में शिष्टता से रहने वाला — सभ्यः, शरणागतों पर सज्जन — शरण्यः, अतिथियों पर सज्जन-आतिथेयः। दाँतों के लिए हितकर-दन्त्यम्, गले के लिए हितकर-कण्ट्यम् । अपने लिए हितकर-आत्मनीनम् । ७० रु० में खरीदा-साप्ततिकम् । खान में काम करने वाला—आकरिकः। एक गुरु से पढ़ने वाले—सत्तीर्थ्याः। एक माता से उत्पन्न—सोद्यः, समानोद्यः।
- (ज) (तस्येदम्, इसका यह अर्थ में अण् आदि) देवों का -दैविकम्, भूतों का--भौतिकम्, आत्मा-सम्बन्धी-आध्यात्मिकम्। देवता और असुरों का-दैवासुरम् । उपगु का > औपगवम् ।
- (झ) (जैसा न हो, वैसा होना या वैसा करना अर्थ में चिव प्रत्यय) काले को सफेद करता है--ग्रुक्लीकरोति। काला करता है-कृष्णीकरोति। इसी प्रकार ग्रामीकरोति, भस्मन् > भस्मीकरोति, भस्मीभवति । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(३) तिङ् प्रत्यय

- (क) (उपसर्ग + धातु) धातुओं से पहले उपसर्ग आदि लगाने से पूरे वाक्य का अर्थ निकलता है। जैसे—उपकार करता है—उपकरोति, उपकार किया—उपाकरोत्, उपकृतम्। इसी प्रकार प्रहार करता है—प्रहरित, विहार करता है—विहरित, संहार करता है—संहरित, अनुकरण करता है—अनुकरोति, प्रणाम करता है—प्रणमित, संस्कार करता है—संस्करोति, अनुभव करता है—अनुभवित, विरस्कार करता है—तिरस्करोति, उत्पन्न करता है—उत्पादयित, संवाद करता है—संवदित, अनुग्रह करता है—अनुगृह्णाति।
- (ख) (करवाना अर्थ में णिच् प्रत्यय) पढ़ाता या पढ़वाता है—पाठयित, करवाता है—कारयित, भेजता है—गमयित, डराता है—भाययित, खरीदवाता है—कापयित, समझाता है—अधिगमयित, विश्वास दिलाता है—प्रत्याययित, साफ कराता है—माजँयित।
- (ग) (इच्छा करना या चाहना अर्थ में सन् प्रत्यय) पढ़ना चाहता है—पिपठिपति। सन्-प्रत्ययान्त से उ लगाकर संग्ञा-शब्द भी बनते हैं। जैसे—पढ़ने का इच्छुक—पिपठिपुः। करना चाहता है, करने का इच्छुक—चिकीषंति, चिकीषुंः। जाना चाहता है, जाने का इच्छुक—जिगमिषति, जिगमिषुः। इसी प्रकार युष्> युयुत्सते, युयुत्सुः, हन्> जिघांसति, जिघांसुः, प्रच्छ्> पिप्रच्छिषति, पिप्रच्छिषुः, मृ> सुमूर्पति, सुमूर्पः, आप्>ईप्सति, ईप्सुः, हश्> दिदृक्षते, दिदृक्षः। देना चाहता है, देने का इच्छुक—दित्सति, दित्सुः। प्राप्त करना चाहता है, प्राप्त करने का इच्छुक—छिप्सते, छिप्सुः। काम करना चाहता है, करने का इच्छुक—विधित्सति, विधित्सुः।
- (घ) (वार-बार करना अर्थ में यङ् प्रत्यय) वार वार नाचता है— नरीनृत्यते । वार-बार जीतता है—जेगीयते, बार-बार पढ़ता है—पापठ्यते, बार-बार घूमता है—बंभ्रम्यते, वार-बार करता है—चेक्रीयते ।
- (ङ) (नामघातु प्रत्यय) अपने लिए पुत्र चाहता है—पुत्रीयति, पुत्र-काम्यति । शिष्य को पुत्रवत् मानता है—पुत्रीयति छात्रम् । कृष्णवत् आचरण करता है—कृष्णायते । अप्सरा के तुल्य आचरण करता है—अप्सरायते । सूत्र बनाता है—

स्त्रयति । पटपट शब्द करता है—पटपटायते । खटखट करता है—खटखटाकरोति । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(४) कृत-प्रत्यय

- (क) (चाहिए या योग्य अर्थ में तब्य और अनीय प्रत्यय) करना चाहिए—कर्तव्यम्, करणीयम् । देना चाहिए—दातव्यम्, दानीयम् । लिखना चाहिए—लेखितव्यम्, लेखनीयम् । हॅसना चाहिए—हसितव्यम्, हसनीयम् । गाना चाहिए—गातव्यम्, गानीयम् । पीना चाहिए—पातव्यम्, पानीयम् । सरण करना चाहिए—सर्तव्यम्, सरणीयम् । जाना चाहिए—गन्तव्यम्, गमनीयम् । बुलाना चाहिए—आह्वातव्यम्, आह्वानीयम् । खरीदना चाहिए—केतव्यम्, क्यणीयम् । वेचना चाहिए—विकेतव्यम्, विकयणीयम् । उठना चाहिए—उत्थातव्यम्, उत्थानीयम् ।
- (ख) (चाहिए या योग्य अर्थ में यत् और ण्यत् प्रत्यय) देने योग्य—देयम्। गाने योग्य—गेयम्। पीने योग्य—पेयम्। रुकना चाहिए—स्थेयम्। छोड़ना चाहिए—हेयम्। जीतना चाहिए—जेयम्। इकट्ठा करना चाहिए—चेयम्। सुनना चाहिए—श्रव्यम्। करने योग्य—कार्यम्। हरने योग्य—हार्यम्। रखने योग्य—धार्यम्। छोड़ने योग्य—खाज्यम्। खाने योग्य—भोज्यम्। उपभोग के योग्य—भोग्यम्।
- (ग) (करनेवाला अर्थ में अण्, क, ट आदि प्रत्यय) घड़ा बनाने-वाला—कुम्भकारः । माला बनाने वाला—मालाकारः । जल लाने वाला—कहारः । धन देने वाला—धनदः । जल देने वाला—जलदः । सुख देने वाला—सुखदः । दुःख देने वाला—दुःखदः । धूप से बचाने वाला—आतपत्रम् । यश को करने वाली—यशस्करी विद्या । आज्ञा-पालन करने वाला—वचनकरः । काम करने वाला नौकर—कर्मकरः । चित्र बनाने वाला—चित्रकरः । सेना में घूमने वाला—सेनाचरः ।
- (घ) (करनेवाला अर्थ में इष्णु और क्रिप्) सजकर रहने वाला— अलंकरिष्णुः। सहन करने वाला—सहिष्णुः। प्रभुत्व करने वाला—प्रभविष्णुः। मन्न बनाने वाला—मन्त्रकृत्। सोम तैयार करने वाला—सोमकृत्। पृथ्वी का पालन करने वाला—मूखत्।
- (ङ) (स्वभाव अर्थ में णिनि) शाकाहार करने वाला—शाकाहारी, निरा-मिषभोजी। मांसाहार खभाव वाला—मांसाहारी, आमिषभोजी। झठ वोलने वाला— मिथ्यावादी। गर्म खाने वाला—उष्णभोजी। शराब पीने वाला—सुरापायी, मद्यपः।

(९) पत्रादि-लेखन-प्रकारः

आवश्यक निर्देश

पत्रों के लेखन में निम्नलिखित वातों का अवस्य ध्यान रखें:—

- (१) पत्र-लेखन बहुत सरल और स्पष्ट भाषा में होना चाहिए। इसमें प्रायः वार्तालाप में व्यवहृत भाषा का ही रूप अपनाया जाता है, जिससे पत्र का भाव सरलता से हृदयंगम हो सके।
- (२) पत्रों में अनावश्यक विशेषणों का परित्याग करना चाहिए। पाण्डित्य-प्रदर्शन का प्रयत्न पत्र में अनुचित है, यह निबन्ध आदि में कुछ अंश तक शिष्ट-सम्मत है।
 - (३) जिस उद्देश्य से पत्र लिखा गया है, उसका स्पष्ट उल्लेख करना चाहिए।
- (४) पत्र यथासम्भव संक्षित होना चाहिए। उसमें आवश्यक वातों का ही उछेखं करना चाहिए। अनावश्यक बातों का उल्लेख और विस्तार उचित नहीं है।
- (५) साधारणतया पत्रों को ४ श्रेणी में बाँट सकते हैं। तदनुसार ही उनका हेखन होता है। (क) अतिपरिचित व्यक्तियों को। (ख) सामान्य परिचित व्यक्तियों को। (ग) अपरिचित व्यक्तियों को। (घ) केवल व्यावहारिक पत्र।
- (क) (१) पिता, पुत्र, माता, मित्र, पत्नी, पित आदि के लिए ऐसे पत्र होते हैं। इनमें प्रारम्भ में उपर दाहिनी ओर स्व स्थान-नाम तथा तिथि या दिनांक देना चाहिए। (२) उसके नीचे सम्बोधनपूर्वक अपने से बड़ों को प्रणामः, नमस्कारः, नमस्ते आदि लिखें। समान आयुवालों को नमस्ते, छोटों को स्वस्ति, आशीर्वादः आदि। (३) पत्र के अन्त में बड़ों के लिए 'भवदाज्ञाकारी', 'भवत्कृपाकांक्षी' आदि, समान आयुवालों को 'भवदीयः', 'भावत्कः' आदि, छोटों को 'शुभाकांक्षी', 'शुभचिन्तकः' आदि लिखना चाहिए। (४) पत्र का पता लिखने में पहली पंक्ति में व्यक्ति का नाम लिखना चाहिए। उसके नीचे उपाधि आदि। दूसरी पंक्ति में प्रामन्नाम, मुहल्ला या सड़क आदि का नाम। तीसरी पंक्ति में पोस्ट आफिस (डाकखाना) का नाम। चौथी पंक्ति में जिले का नाम। यदि दूसरे प्रान्त या देश के लिए हो तो अन्त में प्रान्त या देश का नाम लिखें।
 - (ख) सामान्य परिचित में सम्बोधन में व्यक्ति का नाम निर्देश करें। शेष पूर्ववत्।
- (ग) अपरिचितों को सम्बोधन में 'श्रीमन्', 'महोदय' आदि लिखें। अन्त में 'भवदीयः' या 'भावत्कः'। शेष पूर्ववत्। इसमें काम की बात ही मुख्यरूप से लिखें।
- (घ) केवल व्यावहारिक पत्रों में—(१) प्रारम्भ में अधिकारी, व्यक्ति या कम्पनी आदि का नाम एवं कार्यालय सम्बन्धी पता लिखें। (२) तदनन्तर सम्बोधन में 'श्रीमन,' या 'महोदय'। (३) प्रणामः, नमस्ते आदि न लिखें। (४) अन्त में 'मनदीयः'।

(५) केवल कार्य-सम्बन्धी बात लिखें । पारिवारिक या वैयक्तिक नहीं । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized by Glodifienta eGangotri Gyaan Kosha

(१) पित्रे पत्रम्

प्रयाग-विश्वविद्यालयः

तिथि:—आवण-गुक्ता १०, २०२१ वि०

श्रीमतो माननीयस्य पितृतर्यस्य चरणारिवन्दयोः ! सादरं प्रणिततितः ।

अत्र शं तत्रास्त । समधिगतं मया भावत्कं कृपापत्रम् । अवगतं च निखिलं वृत्तम् । अवगतं च मिर्विश्य प्रवेशम-वाप्यातितरं मुदमावहे । वेदानां गुणगरिमा, उपनिषदां दृदयावर्जकत्वम्, काल्दिरासादि-महाकवीनां कलाकौशलम्, भारतीयसंस्कृतेः साधिष्ठता, भाषाविज्ञानस्य वैज्ञानिकी सरिणमेनोज्ञता च स्वान्तं मे प्रतिपलं प्रसादयति । आशासे कृतभूरिपरिश्रमः सद्य एव समेष्विप विषयेषु दाक्षिण्यमासादियतारिम । मान्याया मातुश्चरणयोः प्रणतिर्वाच्या । भवदाज्ञाकारी सुनः—भारतेन्दुः

(२) सुद्ददे पत्रम्

नैनीवाल्वः

दिनाङ्कः २१-४-१९६५ ईसवीयः

प्रियमित्र स्थामलाल यादव ! सप्रणयं नमस्ते।

अत्र कुशलं तत्रास्तु । भवत्येमपत्रं प्राप्य मानसं मेऽतीव मोदमावहित । परिवारे सर्वेषामि कुशलतामवगत्य दृष्टोऽस्मि । ऐषमस्तने संवत्तरे प्रीष्मतौं सपरिवारं नैनीताला-गमनाय मितिविधेया । नगरमेतत् प्राकृतिकसुषमायाः सर्वस्वम् , पर्वतमालापरिवृतम् , श्रीतलाच्छोदसंभृतसरसा सनायम् , वन्यवृक्षवीरुद्धिराजितम् , कृतिमाकृतिमोभयोपकरण-संकुलम् , सतत्शीतलसदागितमनोहरं रमणीयं च । आशासेऽत्रागमनेनानुप्रहीष्यन्ति माम् । कुशलमन्यत् । ज्येश्रेम्यो नमः, किनष्ठेम्यश्च स्वस्ति । पत्रोत्तरप्रदानेनानुप्राह्योऽह्म् । भवद्वन्यः — सरेन्द्रनायो दीक्षितः

(३) भात्रे पत्रम्

गुरुकुल-महाविद्यालय-ज्वालापुरतः दिनाङ्कः २०-६-१९६५ ई०

प्रिय बन्धुवर विजयकुमार ! सस्तेहं नमस्ते ।

अत्र शं तत्रास्तु । एतदवगत्य भवान्त्नं हर्षमनुभविष्यति यदहं संवत्सरेऽस्मिन् शास्त्रिपरीक्षामुत्तीर्णः । तत्र च प्रयमा श्रेणिः संप्राप्ता । साम्प्रतमहं संस्कृतविषये एम॰ ए॰ परीक्षा दित्सामि । आशासे परेशप्रसादात् तत्रापि साफल्यमाप्स्यामि । सर्वेऽपि गुरवो मिय कृपापराः । शिष्टं विशिष्टं स्वः । परिचितेम्यो नमः ।

(४) अवकाशार्थे प्रार्थनापत्रम्

श्रीमन्तः प्रधानाचार्यमहोदयाः,

राजकीय-महाविद्यालयः, नैनीतालः।

मान्यवर!

अहमद्य दिनद्वयाद् शीतज्वरेण पीडितोऽस्मि । ज्वरकृततापेन भृशं कार्श्यमुप-गतोऽस्मि । अतो विद्यालयमागन्तुं न प्रभवामि । कृपया दिवसद्वयस्यावकाशं स्वीकृत्य मामनुग्रहीष्यन्ति श्रीमन्तः ।

भवतामाज्ञाकारी शिष्यः - हरगोविन्दो जोशी

(५) पुस्तकप्रेषणार्थे प्रकाशकाय आदेशः

श्रीप्रबन्धकमहोदयाः,

विश्वविद्यालय-प्रकाशनम् , भैरवनाथः, वाराणसी ।

श्रीमन्तः,

हिष्यमुपागतं मे भवत्प्रकाशितं ''प्रौढ-रचनानुवादकौमुदी''-नामकं पुस्तकम् । प्रन्थस्यास्योपयोगितां समीक्ष्य नितरां हृतहृदयोऽस्मि । कृपया पुस्तकपञ्चकम् अधोनि-र्दिष्टस्थाने वी० पी० पी० द्वारा शीघं संप्रेष्यानुप्रहीतव्यम् । दिनांकः—३०-६-१९६५ ई०

भवदीयः — डा॰ सुरेन्द्रनाथ-दीक्षितो व्याकरणाचार्यः, एम०ए०, पी-एच० डी०, हिन्दी-प्राध्यापकः, एल० एस० कालेजः, मुजफ्फरपुरम् ।

(६) निमन्त्रणपत्रम्

श्रीमन्महोदय !

एतद् विज्ञाय नूनं भवन्तो हर्षमनुभविष्यन्ति यत् परेशस्य महत्याऽनुकम्पया
मम ज्येष्ठाया दुहितुर्विमलादेव्याः शुभपाणिप्रहणसंस्कारो वाराणसी-वास्तव्यस्य श्रीमतो
रामचन्द्रप्रसादगुप्तस्य ज्येष्ठपुत्रेण एम० ए० इत्युपाधिविभूषितेन श्रीसुरेन्द्रप्रसादगुप्तेन सह
दिनांके २-७-१९६५ ईसवीये रात्रौ दशवादने सम्पत्स्यते । सर्वेऽपि भवन्तः सादरं सविनयं
च प्रार्थ्यन्ते यत् सपरिवारं निर्दिष्टसमये समागत्य वरवधूयुगलं स्वाशीर्वादप्रदानेनानुग्रहीष्यन्त्यस्मान् ।

१०१९, मुद्रीगंजः,

प्रयागः

भवद्दर्शनाभिलाषी— वैजनाथप्रसादगुप्तः

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha (स्वीकृति स्चनयाऽनुग्राह्यः)

(७) परिषदः सूचना

श्रीमन्तो मान्याः,

सविनयमेतद् निवेद्यते यद् आस्माकीनाया महाविद्यालयीयसंस्कृतपरिषदः साप्ताहिकमिवेशनम् आगामिनि शुक्रवासरे (दिनांकः—२६-२-१९६५ ई०) सायंकाले चतुर्वादने महाविद्यालयस्य महाकक्षे भविष्यति । सर्वेषामपि विद्यार्थिनामुपाध्यायानां चोपस्थितिः सादरं सविनयं प्रार्थ्यते ।

दिनांक: -- २३-२-१९६५ ई०

निवेदिका-(क्०) माया त्रिपाठी (मन्त्रिणी)

(८) प्रस्तावः, अनुमोदनम् , समर्थनं च

(१) (क) आदरणीयाः सभासदः, प्रिया विद्यार्थिबान्धवाश्च !

सौभाग्यमेतदस्माकं यदद्यः ''(कर्णपुरस्थ-डी० ए० वी० कॉलेज-संस्थायाः संस्कृत-विभागस्याध्यक्षवर्याः श्रीमन्तो डा० हरिदत्तशास्त्रिणः, नवतीर्थाः, व्याकरणवेदान्ताचार्याः, एम० ए०, पी-एच० डी० आदि-विविधोपाधिविभूषिताः) अत्र समायाताः सन्ति । अतः प्रस्तौमि यत् श्रीमन्तो मान्या विद्वद्दरेण्या आचार्यवर्या अद्यतन्याः सभाया अस्याः सभापतित्वं स्वीकृत्यारमान् अनुप्रहीष्यन्तीति । आशासे एतेषां सभापतित्वे सदसोऽस्य सर्वमिप कार्यकलापं सुचारुतया सम्पत्स्यते इति । आशासे अन्येऽपि सभासदः प्रस्तावस्या-स्यानुमोदनं समर्थनं च करिष्यन्ति ।

(२) (क) मान्या सभासदः !

अहमेतस्याः सभाया मन्निपदार्थे (सभापतिपदार्थम्, उपसभापतिपदार्थम्, कोषाध्यक्षपदार्थम्) श्रीमतः " नाम प्रस्तवीमि ।

- (ख) अहं प्रस्तावस्यास्य हृदयेनानुमोदनं करोमि ।
- (ग) अहं प्रस्तावस्यास्य हार्दिकं समर्थनं करोमि ।

(९) पुरस्कार-वितरणम्

श्रीयुताय · · · (रामचन्द्रशर्मणे), (एम॰ ए॰) कक्षायाः (द्वितीय) · · वर्षस्थाय · · · (ब्याख्यान-प्रतियोगितायां सर्वप्रथमस्थानप्राप्त्यर्थे) निमित्तं (प्रथमं) पारितोषिकमिदं सहषे प्रदीयते ।

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kos<mark>ha</mark> सभासंचालकः (सभाध्यक्षः, प्रधानः)

(१०) जयन्ती समारोहः

एतत् संस्चयन्त्या मया भ्यान् प्रहर्षोऽनुभ्यते यदागामिनि शुक्रवासरे गुरुपूर्णिमा-दिवसे (आषाढ-पूर्णिमा वि० २०१७) दिनाङ्के ८-७-१९६० ईसवीये महाविद्याल्यस्य महाकक्षे सायंकाले चतुर्वादने व्यास-जयन्ती-समारोहः संयोजियप्यते । समेषामि संस्कृत-ज्ञानां संस्कृतपेमिणां च समुपिश्चितिः प्रार्थ्यते । आज्ञासे यत् सर्वेरिप यथासमयं समागत्य महाकवये श्रीमते व्यासाय श्रद्धाञ्जलि समर्प्य, तद्गुणग्रामं समाकर्ण्य, तिद्वरिचतानि हृद्यानि पद्यानि निशम्य, गृद्धभावावलिविभूषितां तदीयामाध्यात्मिकविद्यां च श्रावं श्रावं स्वान्तः सुखमनुभविष्यते इति ।

दिनाङ्कः ६-७-१९६० ई०

(कु०) रिम-कोचरः

सभा-संयोजिका

(११) दर्शनार्थं समय-याचना

श्रीमन्तो मुख्यमन्त्रिमहोदयाः डा॰ सम्पूर्णानन्दमहाभागाः, उत्तर प्रदेशः, लक्ष्मणपुरम् (लखनऊ)

श्रीमन्तः परमसंमाननीयाः,

अहं कालिदास-जयन्ती-समारोहविषयमाश्रित्यात्रभवद्भिः सह किञ्चिदालिपतु-कामोऽस्मि । आशासे भवन्तो दशकलामात्रसमयप्रदानेन मामनुप्रहीष्यन्ति । भवन्निर्दिष्ट-समये भवतां सविधे समागत्य भवद्द्यांनेन भवत्परामर्शेन चात्मानं कृतकृत्यं मंस्ये । दिनाङ्कः ६-७-१९६० ई० भवद्द्यांनीसलाषी

प्रेमनाथ:

(१२) व्याख्यानम्

श्रीमन्तः परमसंमाननीयाः परिषत्पतयः ! आदरणीयाः सभासदश्च !

अद्याहं भवतां समक्षे ''(विद्या, अहिंसा, देश-सेवा, समाज-सुधार-) विषयमङ्गी-कृत्य किंचिद् वक्तुंकामोऽस्मि । संस्कृतभाषाभाषणस्यानभ्यासवशाद् न संभाव्यते साधी-यस्या भावाभिव्यक्तया भाषितुम् । पदे पदे स्खलनमपि च संभाव्यते । 'गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः । इसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधित सजनाः' । अतः प्रमाद-प्रभूतास्त्रुटयो मे भवद्भिः क्षन्तव्याः परिमार्जनीयाश्च ।''(तदनन्तरं व्याख्यानस्य

(८) निबन्ध-माला

आवश्यक-निर्देश

(१) किसी विषय पर अपने विचारों और भावों को सुन्दर, सुगटित, सुबोध एवं हमबद्ध भाषा में लिखने को निबन्ध कहते हैं। निबन्ध के लिए दो बातों की आवश्यकता होती है: —१. निबन्ध की सामग्री। २. निबन्ध की शैली।

निवन्ध की सामग्री एकत्र करने के ३ साधन हैं:—१. निरीक्षण अर्थात् प्रकृति को स्वयं देखना और ज्ञान एकत्र करना। २. अध्ययन अर्थात् पुस्तकों आदि से उस विषय का ज्ञान प्राप्त करना। ३. मनन अर्थात् स्वयं उस विषय पर विचार या चिन्तन करना।

- (२) निवन्ध-लेखन में इन बातों का सदा ध्यान रखें—(क) प्रस्तावना या आरम्भ—प्रारम्भ में विषय का निर्देश, उसका लक्षण आदि रखें। (ख) विवेचन—बीच में विषय का विस्तृत विवेचन करें। उस वस्तु के लाभ, हानि, गुण, अवगुण, उपयोगिता, अनुपयोगिता आदि का विस्तृत विचार करें। अपने कथन की पृष्टि में स्कि, पद्य या दलोक उद्धरणरूप में दे सकते हैं। (ग) उपसंहार—अन्त में अपने कथन का सारांश संक्षेप में दें। प्रस्तावना और उपसंहार एक या दो सन्दर्भ (पैराम्राफ) में ही हों। अधिक स्थान विवेचन में दें।
- (३) नियन्ध की शैली के विषय में इन बातों का ध्यान रखें:—१. भाषा व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध हो। २. भाषा प्रारम्भ से अन्त तक एक-सी हो। ३. भाषा में प्रवाह हो। स्वाभाविकता हो। ४. उपयुक्त और असंदिग्ध शब्दों का प्रयोग करें। ५. भाषा सरल, सरस, सुबोध और आकर्षक हो। ६. लोकोक्ति और अलंकारों को भी स्थान दें। ७. अनावश्यक विस्तार, पुनक्कि, अधिक पाण्डित्य-प्रदर्शन तथा क्षिष्टता का त्याग करें।
 - (४) निबन्ध के मुख्यतया तीन भेद हैं :-
- (क) वर्णनात्मक निबन्ध—इसमें पशु, पक्षी, नदी, ग्राम, नगर, पर्वत, समुद्र, ऋतु-वर्णन, यात्रा, पर्व, रेल, तार, विमान आदि का स्पष्ट एवं विस्तृत वर्णन होता है।
- (ख) विवरणात्मक निबन्ध—इनमें घटित घटनाओं, युद्धों, प्राचीन कथाओं, ऐतिहासिक वर्णनों, जीवन-चरितों आदि का संग्रह होता है।
- (ग) विचारात्मक निबन्ध—इनमें आध्यात्मिक, मनोविज्ञान-सम्बन्धी, सामाजिक, राजनीतिक तथा अमूर्त विषयों चिन्ता, क्रोध, अहिंसा, सत्य, परोपकार आदि का संग्रह होता है। इन निबन्धों में इन विषयों के गुण, दोष, लाभ, हानि आदि का विचार होता है।

उदाहरण के लिए २० निबन्ध अतिप्रसिद्ध विषयों पर प्रौढ संस्कृत में दिए CC-O.क्रम् हिंaphdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१. वेदानां महत्त्वम्

वेदशब्दार्थः—'विद शाने' इति शानार्थकाट् विद्धातोधित्र प्रत्यये कृते वेद इति रूपं निष्पद्यते । एवं वेदशब्दो शानार्थकः । शानराशिवेंद इति वक्तुं शक्यते । विद सत्तायाम्, विद विचारणे, विद्लू लाभे, विद चेतनाख्याननिवासेषु इति धातु-भ्योऽपि धित्र वेदरूपं निष्पद्यते । वेदा शानराशित्वात् शाश्वतस्थायिनः, शाननिधयः, मानवहितप्रापकाः, मनुज-कर्तव्य-बोधका इति विविधधात्वर्थग्रहणाद् शायते ।

वेदानां वेशिष्ट्यम् वेदार्थानुशीलनाद् ज्ञायते यद् वेदा हि विविधज्ञान-विज्ञान-राशयः, संस्कृतेराधाररूपाः, कर्तव्याकर्तव्याववीधकाः, शुभाशुभनिदर्शकाः, जीवनस्योन्नायकाः, विश्वहितसंपादकाः, आचार-संचारकाः, सुखशान्तिसाधकाः, ज्ञानालोकप्रसारकाः, सत्यतायाः सरणयः, कलाकलापप्रेरकाः, आशाया आश्रयाः, नैराश्य-विनाशकाः, चतुर्वर्गावाप्तिसोपानस्वरूपाश्च सन्ति।

वेंदानां महत्त्विचारचिन्तायां कितपयेऽनुयोगाः पुरतोऽवितष्ठन्ते । कित वेदाः ? किं वेदानां महत्त्वम् ? किं वेदानां वेदत्वम् ? किं तत्र विशिष्टं ज्ञानम् ? किं तेषां व्यावहारिकी उपयोगिता ? किं वेदाध्ययनस्य जीवने उपयोगित्वम् ? किं च समस्याबहुले जगित समस्या-निराकरणत्वं वेदानाम् ? किं च वेदानां धार्मिकं राजनीतिकम् आर्थिकं भाषा-वैज्ञानिकम् ऐतिहासिकं काव्यशास्त्रीयं शास्त्रीयं सामाजिकं सांस्कृतिकं च महत्त्वम् ? इत्येवात्र समासतो विवियते प्रस्तूयते च ।

वैदिकं साहित्यम् मुख्यत्वेन वेदशब्दः ऋग्यजुःसामाथर्वनामिभः प्रचलितानां चतस्णां वेदसंहितानां बोधकः । एतेषामेव चतुर्णा वेदानां व्याख्यानभूता
ब्राह्मणप्रन्थाः सन्ति, येषु वैदिककर्मकाण्डस्य विशदं वर्णनमस्ति । एतेषु वेदानाम् आध्यातिमकी व्याख्याऽपि प्रस्त्यते । एतेषां परिशिष्टरूपेण आरण्यकप्रन्थाः सन्ति । एषु
अध्यात्मविद्याया विवेचनं प्राप्यते । उपनिषत्सु च तस्या एवाध्यात्मविद्यायाश्चरमोत्कर्षः संलक्ष्यते । वैदिकसाहित्यशब्देन समग्रोऽपि मन्त्र-ब्राह्मण-आरण्यक-उपनिषत् संग्रहरूपो निधिर्यह्मते । अतएव भन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम् (आप० श्रीत० ३१) इति निर्दिश्यते ।

वेदानां धार्मिकं महत्त्वम् वेदा मन्वादिभिः ऋषिभिः परमप्रमाणत्वेनोप-न्यस्ताः । 'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्' (मनुस्मृति २-६) इति समुद्घोषयता मनुना समग्र-स्यापि वेदनिधेर्धर्माधाररूपेण प्रतिष्ठा विहिता । मानवस्याखिलं कृत्यजातं कर्तव्याकर्तः व

CC-वि वित्वा विश्वत् त्रायमा मिस्राक्ति व्यक्तिएक विद्या विद्या विद्या विश्व विद्या व

यः कश्चित् कस्यचिद् धर्मो मनुना परिकीर्तितः । स सर्वोऽभिहितो वेदे सर्वज्ञानमयो हि सः॥ (मनु॰ २-७)

सर्वेऽपि विद्वत्तल्ल्ला भारतीया दार्शनिकाः, आचारशिक्षणप्रवणाः स्मृतिकाराः, शब्दतस्वभीमांसादक्षा वैयाकरणाः, अन्ये च शास्त्रकारा वेदानां परमप्रामाण्यं प्रतिपदम् उद्घोषयन्ति । अतएव मह्षिणा पतञ्जलिना कर्तव्यत्वेन समादिश्यते यत्—

ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्ययो ज्ञेयश्च। (महाभाष्य, आह्रिक १)

स्मृतिकारैर्न एतावतैव विरम्यते, अपितु निर्दिश्यते यद् ब्राह्मणेन एकनिष्ठया वेदाध्ययनं संपाद्यम् । एतद् ब्राह्मणस्य परमं तपः । यश्च वेदाध्ययनम् अवमत्य शास्त्रान्तरे कृतमितः, स जीवन्नेव सपरिवारः श्र्द्रत्वम् उपयाति ।

> वेदमेव सदाऽभ्यस्येत् तपस्तप्यन् द्विजोत्तमः । वेदाभ्यासो हि विप्रस्य तपः परमिहोच्यते ॥ मनु० २-१६६ योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम्। स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः ॥ मनु० २-१६८

वेदानां सांस्कृतिकं महत्त्वम् — भारतीयायाः संस्कृतेर्मूलस्रोतोऽनुसंधीयते चेत् तर्हि वेदा एव तन्मूलस्रोतस्त्वेनोपतिष्ठन्ति । वेदेष्वेव प्रत्नतमा भारतीया संस्कृतिर्वर्णि-ताऽस्ति । भारतीयायाः संस्कृतेर्मूलरूपं वेदेष्देवोपलभ्यते । वेदेष्वेव प्राक्तनभारतीयानां जीवनदर्शनं, कार्यकलापः, आचार-विचाराः, नैतिकं सामाजिकं च चरितं प्राप्यते। मानवानां विविधकर्तव्यादिनिर्धारणं तत्रैवोपलभ्यते । उत्तं च मनुना-

> सर्वेषां तु स नामानि कर्माणि च पृथक् पृथक् । वेदशब्देभ्य एवादौ पृथक् संस्थाश्च निर्ममे ॥ मनु० १-२१

लोकमान्य-तिलकमहाभागास्तु वेदेषु प्रामाण्यबुद्धिमेव आर्यत्वस्य लक्षणं व्यादि-शन्ति—'प्रामाण्यबुद्धिवेंदेषु', वेदे वेवार्याणां संस्कृतेविशुद्धं रूपं विस्तरशः प्राप्यते । आर्याणां यज्ञेषु दृढविश्वासः, एकेश्वरवादेन सहैव बेहुदेवतावादस्यापि स्वीकरणम्, अनासक्तभावनया कर्मीविधिः, ईश्वरस्य सर्वव्यापकत्वम् , ज्ञानकर्मणोः समन्वयः, भौतिक-वादं प्रत्यनास्था, पुनर्जन्मनि विश्वासः, मोक्षस्य जीवनोद्देश्यत्वं चेत्यादितथ्यानि वेदेष्वेव प्राप्यन्ते।

विश्वसंस्कृतेरैतिह्यं गवेषितं चेत् तर्हि वेदा एव सर्वप्रमुखत्वेन दृष्टिपथम् अवतरन्ति । अस्मिन् संसारे संस्कृतेः सभ्यतायाश्च कथमिव विकासोऽभूदित्यर्थे वेदानुशीलनम् अनिवार्यम् आपद्यते । तत एव क्रमिकविकासस्य प्रक्रिया प्राप्यते । अतएव यजुर्वेदे प्राप्यते—'सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा' (यजु० ७–१४), वैदिकी संस्कृतिः प्रथमा CC-O. संस्कृतिराकीत्। ||pathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शास्त्रीयं महत्त्वम्—वेदानां शास्त्रीयं महत्त्वं सर्वतोमुख्यं वर्तते । 'सर्व-ज्ञानमयो हि सः' इति वदता मनुना वेदानां सर्वविधज्ञाननिधानत्वम् उरीकृतम् । यदि विचारदशा समीक्ष्यते तर्हि वेदेषु बीजरूपेण दार्शनिकाः सिद्धान्ताः, राजनीतिः, समाजशास्त्रम्, अध्यात्मम्, मनोविज्ञानम्, आयुर्वेदः, गणितम्, अर्थशास्त्रम्, नाट्यशास्त्रम्, काव्यशास्त्रम्, कामशास्त्रम्, अन्याश्च विविधाः कलास्तत्र तत्र वर्ण्यन्ते । वैदिकं दर्शनम् अध्यात्मतत्त्वं चोपादाय उपनिषदो विविधानि दर्शनानि च प्रवृत्तानि । तथ्यमेतद् निदर्शनरूपेण नाट्यशास्त्रकृतो भरतमुनेविवेचनेन विश्वदीभवति ।

> जग्राह पाठ्यम् ऋग्वेदात् सामभ्यो गीतमेव च । यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि ॥ नाट्यशात्र १-१७

नेतिकं सहत्त्वम्—वेदानाम् आचारशिक्षा-दृष्टया, नैतिक-दर्शनरूपेण चातीव महत्त्वं वर्तते । कर्तव्योद्वोधनरूपेण तेषां परमं प्रामाण्यं वर्तते । किं कर्म, किम् अकर्मेति चिन्तायां वेदा एवादर्शरूपेण प्रस्तूयन्ते । अतएव मनुनोच्यते—

वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः ।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद् धर्मस्य लक्षणम् ॥ मनु० २-१२
श्रुतिस्मृत्युदितं धर्मम् अनुतिष्ठन् हि मानवः ।
इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम् ॥ मनु० २-९
धर्मचिन्तायां कर्तव्यविचारणे च वेदाः परमप्रमाणभूताः सन्ति ।
धर्मे जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः । मनु० २-१३

सामाजिकं महत्त्वम् — समाजशास्त्रीयदृष्टयाऽपि वेदा अत्यन्तं महत्त्वपूर्णाः सिन्तं । समाजस्य विकासस्य, सभ्यतायाः समुन्नतेः, वर्णानां विविधवृत्तिपराणां नराणां च कर्मकलापस्य, सामाजिक्या व्यवस्थायाश्च महत्त्वपूर्णम् इतिवृत्तं वेदेषूपलभ्यते । प्राक्तनस्य समाजस्य किं स्वरूपमासीदित्यपि तत एवाप्तुं पार्यते ।

आर्थिकं महत्त्वम् — अर्थशास्त्रदृष्टयाऽपि वेदानां महत्त्वम् अस्ति । वेदेषु प्रत्नाया अर्थव्यवस्थायाः स्वरूपं स्फुटं समवाप्यते । आदान-प्रदानस्य, क्रय-विक्रयस्य, व्यापारस्य वाणिज्यस्य च, गवादिपश्चनाम्, कृषि-धान्यादीनां च का व्यवस्थाऽवस्था चासीदित्यपि तत्र प्राप्तुं शक्यते । आदान-प्रदानस्य महत्त्वं यजुर्वेदे वर्ण्यते : —

देहि मे ददामि ते नि मे घेहि नि ते दघे। निहारं च हरासि मे निहारं निहराणि ते॥ यजु० ३-५०

राजनीतिक महत्त्वम् - राजनीतिशास्त्रदृष्ट्यापि वेदानां महत्त्वं नावमूल्ययितुं शक्यते । वेदेषु राज्ञः प्रजायाश्च कर्माणि, राज्ञतन्त्रस्य विविधं स्वरूपम् , राज्ञो वरणम् , सभायाः समितेश्च संस्थापना, मन्त्रिपरिषदो मनोनयनम् , राज्ञतन्त्रीया प्रजातन्त्रीया च CC-0. Dr Ramasev मानुकानं स्टाल्टा सामदृण्डादिविधीनां प्रयोगः , समुपळ्भ्यन्ते । वेदेषु राज्ञो Kosha निर्कोचनस्य प्रजातन्त्रीयाया राज्यव्यवस्थायाश्चापि समुल्लेखो विविधेषु स्थलेषु उप-रूभ्यते । तद्यथा—

विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु० (अथर्व० ६-८७-१) त्वां विशो वृणतां राज्याय । (अथर्व० ३-४-२) महते जानराज्याय० । (यजु० ९-४०)

भाषावैद्यानिकं महत्त्वम् तुल्नात्मकमाषाविज्ञानस्याध्ययनाय वेदानाम् अतीव महत्त्वं विद्यते । वेदा विश्वस्य प्राचीनतमाः समुपल्ब्धाः प्रन्थाः । तत्रापि ऋग्वेदस्य प्राचीनतमत्त्वेन भाषायाः प्राचीनतमं रूपं प्राप्यते । पारसीकधर्मप्रन्थ-जेन्दावेस्ता-(ज्न्दोऽवस्था)-प्रन्थेन सह तुल्नायाम् अवेस्ता-भाषया सह वैदिकभाषाया घनिष्ठः संवन्धो दृश्यते । ऋग्वेदीया मन्त्रा अवेस्ताभाषायाम् अवेस्ता-मन्त्राश्च वैदिकमन्त्रेषु च परिवर्तायतुं शक्यन्ते । तुल्नात्मक-भाषाविज्ञानस्य दृष्ट्या विशेषतो वेदानाम् अध्ययनं पाश्चात्त्यदेशेषु प्रवृत्तम् । वैदिक-संस्कृतभाषाया लौकिक-संस्कृतस्य, ततश्च भाषाणाम् अन्यासां जनिकमस्यावबोधाय वेदानाम् अध्ययनम् अनिवार्यम् ।

ऐतिहासिकं महत्त्वम्—वेदेषु कतिपये ऐतिह्याववेषकाः सन्दर्भा अपि तत्र तत्रोपलभ्यन्ते । तानाश्रित्य संदर्भान् विद्वद्भिः प्राचीनतमम् ऐतिह्यं प्रस्त्यते । तत्र गङ्गादीनां नदीनाम् (ऋग्० १०-७५-५), दाशराज्ञयुद्धस्य (ऋग्० ७-८३-७), पञ्च जनानाम् (ऋग्० ३-३७-९), विविधानां वर्णानां वृत्तीनां च (यजु० ३०-५-२२) उल्लेखः प्राप्यते ।

काव्यशास्त्रीयं साहित्यकं च महत्त्वम् — काव्यशास्त्रीयदृष्ट्याऽपि वेदानां महत्त्वं प्रशस्यम् । तत्र अनुप्रास-यमक-रूपकादीनाम् अलंकाराणां प्रयोगोऽनेकत्र प्राप्यते । उपः स्के उपसो वर्णने कवित्वस्य स्फुटं दर्शनं जायते । सुन्दरी युवतिः स्ववस्त्राणीव उषाः स्वीयं सौन्दर्ये विस्तारयति । सक्लेऽपि भुवने तस्याः सौन्दर्यम् आह्लादकारि व्याप्नोति ।

अव स्यूमेव चिन्वती मघोन्युषा याति स्वसरस्य पत्नी । स्वर्जनन्ती सुभगा सुदंसा आन्ताद् दिवः पप्रथ आ पृथिव्याः ॥ (ऋग्० ३–६१–४)

एवं वेदाध्ययनं जीवनं पावयति, चिन्ताकुलं जगत् चिन्तायास्त्रायते, लोकानां विविधाः समस्या निवारयति, जीवनम् उन्नमयति, सद्भावांश्च प्रेरयति, इति सर्वथा वेदानां महत्त्वं सिध्यति ।

वेदानां महत्त्वम् अङ्गीकृत्यैव भारतीयैः पाश्चात्त्येश्च विपश्चिद्भिः वेदाध्ययने स्वजीवनं यापितम् । तद् यथा—सायणाचार्य-वेंकटमाधव-महर्षिदयानन्द-मधुसूदन ओझा-मोतीलाल शर्मा-वासुदेवशरण अप्रवाल-मैक्समूलर-रुडाल्फ रॉठ-विल्सन-प्रिफिथ-मैकडानल-

CC क्राज्यों विवास कार्यकार्या (Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

२. वेदाङ्गानि, तेषां वेदार्थबोघोपयोगिताः

वेदार्थाववोघाय तत्क्रायवगमाय तिद्विनयोगज्ञानाय चासीद् महत्यावस्यकता केषाञ्चित् सहायकप्रन्थानाम् । एतदभावपूर्तये एव जिन्समवद् वेदाङ्कानाम् । षिडमानि वेदाङ्कानि । १. शिक्षा, २. व्याकरणम्, ३. छन्दः, ४. निरुक्तम्, ५. ज्योतिषम्, ६. कस्यः । तथा चोच्यते—'शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दसां चयः । ज्योतिषामयनं चैव वेदाङ्कानि षडेव तु'। षिडमान्यङ्कानि वेदार्थवोधादिविधौ उपकुर्वन्तीति निरूप्यतेऽत्र । पण्णामेतेषां महत्त्वं निरीक्ष्यैव प्रतिपायते पाणिनीयशिक्षायाम् :—"छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते । ज्योतिषामयनं चक्षुनिरुक्तं श्रोत्रमुच्यते ॥ शिक्षा घाणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम् । तस्मात् साङ्कमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते" ॥ (स्रो॰ ४१-४२) ।

वेदाङ्गानामेतेषां विवरणं तेषां वेदार्थवोधोपयोगिता च समासतोऽत्र प्रस्तूयते । (१) शिक्षा—शिक्षाप्रन्था वर्णोचारणविधि विशेषतो वर्णयन्ति । कथं वर्णा उचा-रणीयाः, किं तेषां स्थानम्, कश्च तत्र यत्नः, कण्ठतास्वादीनामुच्चारणे किं महत्त्वम्, कित वर्णाः, कथं कायमारुतो वर्णत्वेन विपरिणमते, कित स्थानानि, कित स्वराः, कथं च ते प्रयोज्या इत्यादयो विषयाः शिक्षाग्रन्थेषु विविच्यन्ते। वर्णोच्चारणादिविधिज्ञानमन्तरेण न शक्यो वेदानां विशुद्धः पाठोऽर्यावगमश्चेति शिक्षाग्रन्थानां विशिष्टं महत्त्वम् । साम्प्रतं केचन शिक्षाग्रन्था उपलभ्यन्ते । तेषां सम्बन्धश्च केन्चिद् विशिष्टेन वेदेन वर्तते । तद्यथा— ऋग्वेदादेः पाणिनीयशिक्षा, गुक्लयजुर्नेदस्य याज्ञवल्क्यशिक्षा, कृष्णयजुर्वेदस्य व्यासशिक्षा, सामवेदस्य नारदशिक्षा, अथर्ववेदस्य माण्डूकीशिक्षा। अन्येऽपि केचन शिक्षाप्रन्याः सन्ति । यथा-भरद्वाचशिक्षा, वसिष्ठशिक्षादयः । (२) व्याकरणम्-व्याकरणे प्रकृति-प्रत्ययस्य विचारः, उदात्तादिस्वरविचारः, उदात्तादिस्वरसंचारनियमाः, सन्धि-नियमाः, शब्दरूपधातुरूपादिनिर्माणनियमाः, प्रकृतेः प्रत्ययस्य च स्वरूपावधारणं तदर्यनिर्घारणं चेति विविधा विधया विविच्यन्ते । वेदेषु प्रकृति-प्रत्ययविचारस्य स्वरस्य च महन्महत्त्विमिति तत्र व्याकरणमेव साहाय्यमनुतिष्ठतीति पडङ्गेषु व्याकरणमेव प्रधानम्। संस्कृतव्याकरणं प्रातिशाख्यमूलकमेव । वेदानां प्रतिशास्त्रामाश्रित्य व्याकरणग्रन्या आसन्, ते च प्रातिशाख्यग्रन्था इति पप्रथिरे । केचन एव प्रातिशाख्यग्रन्थाः साम्प्रतमुपलम्यन्ते । ते कमप्येकं वेदमाश्रित्य वर्तन्ते । तद्यथा-ऋग्वेदस्य शाकल्शास्तायाः शौनकप्रणीतम् ऋक्पाितशास्यम् । एतदेव पार्षदस्त्रमित्यप्यभिषीयते । शुक्रयजुर्वेदस्यः माध्यन्दिन-कात्यायनविरचितं गुक्कयजुःमातिशास्यम् । कृष्णयजुर्वेदस्य तैत्तिरीय-शासायाः तैत्तिरीयप्रातिशाख्यम् । सामवेदस्य सामप्रातिशाख्यं (पुष्पस्त्रं वा), एउ-

CC-विषयमं कार्य भारतीय स्थाप कार्य से प्रतिकार स्थाप के स्थाप के

बोधाय च पाणिनेरष्टाध्यायी सर्वप्रमुखा । अन्ये प्राचीना व्याकरणग्रन्था छुतप्राया एव । (३) छन्दः-वेदेषु मन्त्राः प्रायशञ्छन्दोबद्धा एव । अतो वृत्तज्ञानाय छन्दःशास्त्रम-निवार्यम् । छन्दःशास्त्रविषयको मुख्यो ग्रन्थः पिगलप्रणीतं छन्दःस्त्रमेवोपलभ्यते । प्राति-शाख्यग्रन्थेष्वपि वृत्तविचारः प्राप्यते । (४) निरुक्तम् — निरुक्ते क्लिष्टवैदिकशब्दानां निर्वचनं प्राप्यते । विषयेऽस्मिन् यास्कप्रणीतं निरुक्तमेव प्रमुखो ग्रन्थः । अत्र मन्त्राणां निर्वचनमूलाया व्याख्ययाः प्रथमः प्रयासः समासाद्यते । वैदिकशब्दानां संप्रहात्मको ग्रन्थो निघण्टुरिति कथ्यते । तस्यैव व्याख्यानभृतं निरुक्तमेतत् । यास्को निरुक्ते स्वपूर्व-वर्तिनः सप्तदश निरुक्तकारान् परिगणयति । निरुक्ते काण्डत्रयं नैघण्टुककाण्डं नैगमकाण्डं दैवतकाण्डं चेति । (५) ज्योतिषम् — शुभं मुहूर्तमाश्रित्यैव विशिष्टोऽध्वरः प्रावर्ततेति शुममुहूर्ताकल्नाय ज्योतिषस्योदयोऽभूत्। अत्र सूर्यचन्द्रमसोर्यहाणां नक्षत्राणां च गति-र्निरीक्ष्यते परीक्ष्यते विविच्यते च । सौरमासक्चान्द्रमासश्चोभयं परिगण्यतेऽत्र । मखमुहूर्त-निर्धारणे चान्द्रमासस्य प्रधानत्वं परिलक्ष्यते । विषयेऽस्मिन् आचार्यलगधप्रणीतं 'वेदाङ्ग-ज्योतिषम्' इति ग्रन्थ एव साम्प्रतमुपलभ्यते । (६) कल्पः —कल्पसूत्रेषु विविधाध्वराणां संस्कारादीनां च वर्णनं प्राप्यते । मन्त्राणां विविधकर्मसु विनियोगश्च तत्र प्रतिपाद्यते । कल्पसूत्राणि चतुर्धा विभज्यन्ते—(क) श्रौतस्त्रम्, (ख) गृह्यस्त्रम्, (ग) धर्मस्त्रम्, (घ) गुल्वसूत्रं च। (क) श्रोतसूत्रम् —श्रोतस्त्रेषु श्रुतिप्रतिपादितानां सप्त हविर्यज्ञानां सप्त सोमयज्ञानामेवं चतुर्दशयज्ञानां विधानं विधिविनियोगादिकं च प्रतिपाद्यते । तत्र प्रमुखाणि श्रौतस्त्राणि सन्ति—आश्वलायनश्रौतस्त्रम्, शांखायनश्रौतस्त्रम्, बौधायन०, आपस्तम्ब॰, कात्यायन॰, मानव॰, हिरण्यकेशी॰, लाट्यायन॰, द्राह्यायण॰, वैतान-श्रौतसूत्रं च। श्रौतस्त्राणीमानि कमप्येकं वेदमाश्रित्य वर्तन्ते। (ख) गृह्यसूत्रम्— गृह्यसूत्रेषु षोडशसंस्काराणां पञ्चमहायज्ञानां सप्तपाकयज्ञानामन्येषां च गृह्यकर्मणां सविद्येषं वर्णनमाप्यते । गृह्यसूत्राण्यपि कमप्येकं वेदमाश्रित्य वर्तन्ते । तत्र प्रमुखाणि सन्ति-आश्वलायनगृह्यसूत्रम्, पारस्कर०, शांखायन०, बौधायन०, आपस्तम्ब०, मानव०, हिरण्य-केशी॰, भारद्वाज॰, वाराह॰, काठक॰, लौगाक्षि॰, गोभिल॰, द्राह्यायण॰, जैमिनीय॰, खदिरगृह्यसूत्रं च। (ग) धर्मसूत्रम्—धर्मसूत्रेषु मानवानां कर्तव्यं नीतिर्धर्मो रीतयश्च-तुर्वणिश्रमाणां कर्तव्यादिकमन्यच सामाजिकनियमादिकं वर्ण्यते । तत्र प्रमुखा ग्रन्थाः सन्ति—बौधायनधर्मस्त्रम्, आपस्तम्ब०, हिरण्यकेशी०, वसिष्ठ०, मानव०, गौतमधर्मस्त्रं च। (घ) शुल्वस्त्रम्—शुल्वस्त्रेषु यज्ञवेद्या मानादिकं वेदीनिर्माणविध्यादिकं च वर्ण्यते । तत्र मुख्या प्रन्थाः सन्ति—बौधायनशुल्वस्त्रम्, आपस्तम्ब०, कात्यायन०, मानवगुल्वसूत्रं च । एवं षडिमानि वेदाङ्गानि वेदार्थबोधे तल्लियाकलापवर्णने चोप-

CC**ு நெடிந்து**ச்<mark>y</mark> Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

३. सर्वोपनिषदो गावो, दोग्धा गोपालनन्दनः। पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता, दुग्धं गीतामृतं महत्।।

कस्य न विदितं विपश्चितो भगवद्गीताया गुणगौरवम् । गीतेयं न केवलं प्रस्तवीति सर्वासामप्युपनिषदां सारभागम् , अपि तु श्रुतिसारमपि प्रस्तौतितराम् । सांख्ययोगदर्शनयोः सिद्धान्तानां वैशयोन विवेचनात् प्रतिपादनाच दर्शनसारसंग्रहोऽप्यत्रोपलभ्यते । वेदान्त-दर्शनप्रतिपादितस्य तन्त्वमसीति महावानयस्याप्यत्रोपलम्भाद् वेदान्तावगाहित्वमप्यस्य लक्ष्यते । सेयं सरलया भावाभिव्यक्तिप्रक्रियया, भ्यिष्ठयाऽर्थगभीरतया, प्रेष्ठया पद्धत्या, श्रेष्ठया विवृतिसरण्या, साधिष्ठया योगसाधनादीक्षया, वरिष्ठयाऽऽत्मविश्चद्धिशिक्षया सर्वस्यापि लोकस्यादितमनुभवति । एतदेवात्र समासत उपस्थाप्यते विविवयते च ।

गीतायां ये भावाः सिद्धान्ताश्च प्रतिपाद्यन्ते, ते क्वचित् समासतः क्वचित्रच विस्तरश उपनिषत्सु वेदेषु च समुपलभ्यन्ते । गीतायां विषय-क्रमेण, हृद्ये न भावाभिन्य-ञ्जनप्रकारेण, साधिष्ठया विवृत्या च ते भावाः समासाद्यन्त इति प्रमुखं गीताया महत्त्वम् । गीतेयं प्रसादगुणसंयोगात्, अल्पीयोभिः शब्दैर्भूयिष्ठस्यार्थावबोधस्य संकलनात् तथा प्रीणयति चेतः सचेतसां यथा न प्रन्थान्तरम् । (१) निष्कामकर्मयोगस्य वर्णनं महत्या विवृत्या समुपलभ्यते गीतायाम् । तद्यथा-कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा पलेषु कदाचन । मा कर्मफलहेतुर्भुमा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥ (गीता २-४७)। विहायासिक फलप्रेप्सामना-स्थाय कर्मणि प्रवर्तितव्यम् । निष्कामकर्मकरणेन चेतः प्रसीदति, धीर्विकसति, मानसमानन्द मनुभवति, न कर्माणि बध्नन्ति मानवम्, न विषया विमोहयन्ति मानसम्, न पतित जीवः स्वलक्ष्यात् , न च मोहो मनो मोहयति । निष्कामकर्मयोगप्रतिपादकाः केचन क्लोका अत्र दिङ्मात्रं निर्दिश्यन्ते । योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनंजय (२-४८), कर्मयोगेन योगिनाम् (३-३), न कर्मणामनारम्भात् नैष्कर्म्ये पुरुषोऽक्नुते (३-४), कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वेः प्रकृतिजैर्गुणैः (३-५), यस्त्विन्द्रयाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन । कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते ॥ (३-७), नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः । (३-८), तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर । (३-१९), कर्मणैव हि संसिद्धिम् आस्थिता जनकादयः। (३-२०), सक्ताः कर्मण्यविद्वांसीयथा कुर्वन्ति भारत । कुर्याद् विद्वांस्तथाऽसक्तश्चिकीर्धुलींकसंग्रहम् ॥ (३-२५), कुरु कर्मैव तस्मात्

CC-O. Dr. Ramdev ripathi Collection at Sarah (CSDS)? Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(४-१८), त्यक्ता कर्मफलासङ्गं "कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किञ्चित् करोति सः।(४-२०), कर्मयोगो विशिष्यते (५-२)। निष्कामकर्मयोगस्य वर्णनं मूलरूपेण यजुर्वेदे चत्वारिंशत्तमे-Sच्याये ईशोपनिषदि च समासाद्यते। तद्यथा—कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत ् समाः। एवं त्विय नान्ययेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे (यजु० ४०-२, ईश० २)। जगत्यस्मिन् जीवः कर्म कुर्वन्नेव जीवितुमिमल्धित्। एवं मानवस्य लक्ष्यनाशो न भवति, न च स कमीभर्वध्यते । (२) गीतायां यज्ञस्य महत्त्वं तस्यावश्यकर्तव्यता च निरूप्यते। तद्यथा सहयज्ञाः प्रजाः० (३-१०), देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः। (३-११), इष्टान् भोगान् हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः। (३-१२), यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्विकित्विषैः। (३-१३), अन्नाद् भवन्ति भूतानि चत्राद् भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः। (३-१४, १५), एवं प्रवर्तितं चक्रं नानवर्तयतीह यः । "मोघं पार्थस जीवति । (३-१६), दैवमेवापरे यज्ञं० (४ २५-२७) द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथापरे । स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्व० (४-२८), यज्ञशिष्टामृतभुनो यान्ति ब्रह्म सनातनम्। (४.३१-३३)। यतिनाऽपि नोज्झितव्यो यागः। यज्ञदानतपः-कर्म न त्याच्यं कार्यमेव तत्॰ (१८-५)। यज्ञस्य महत्त्वं तदुपयोगिता तत्फलादिकं च शतशो मन्त्रेषु यजुर्वेदे वर्ष्यते । तद् दिङ्मात्रमिह निर्दिश्यते --श्रेष्ठतमाय कर्मणे० (यजु॰ १-१), यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म (शत॰ बा॰ १-७-१-५), पाहि यज्ञं पाहि यज्ञपर्ति पाहि मां यज्ञन्यम् (यज्ञ॰ २-६), समिधाग्नि दुवस्यत षृतैर्बोधयतातिथिम्॰। (यज्ज॰ ३. १-५), देवान् दिवमगन् यज्ञः (यज्जु ८-६०), आयुर्यज्ञेन कल्पतां प्राणो यज्ञेन कल्पताम् । (यज् ९-२१), मद्रो नो अग्निराहुतो मद्रा रातिः सुमग मद्रो अध्वरः । (१५.३८-३९), उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि० (यजु० १५.५४-५५), अशीतिहोंमाः समिघो इ तिहतः। "सप्त होतार ऋतुशो यचन्ति। (यजु॰ २३-५८), अयं यज्ञो मुवनस्य नामिः (यजु॰ २३-६२), तस्माद् यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जिल्रिरे । छन्दांसि निर्मरे तस्माद्॰ । (३१-६-९), वसन्तोऽस्यासीदान्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः । (३१-१४), यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवांस्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्। (३१-१६)। यज्ञमहत्त्वप्रतिपादका अन्ये मन्त्राः सन्ति । तद्यथा—ऊर्ध्वमिममध्वरं० (यजु० ६-२५), य इमं यज्ञं स्वधया ददन्ते (यज्जु॰ ८-६१), प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपति भगाय (यज्जु॰ ९-१) सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः (यजु० १२-४४)। (३) कर्मकाण्डस्य

्ट्रहासुनारोक्षयाः गोपाल्वं।मर्दिपाद्यके गोक्षक्षयाम् प्थापिमी भुंचिति प्रांति प्रवित्तर्भा हिप्या Kosha

• कामात्मानः स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम्। (२.४२-४३)। विषयोऽयं विस्तरशो वर्ष्यते मुण्डकोपनिषदि । तद्यथा—प्लवा ह्येते अद्दा यज्ञरूपाः एतच्छ्रेयो येऽभिनन्दन्ति मूढा बरामृत्युं ते पुनरेवापियन्ति । इष्टापूर्ते मन्यमाना वरिष्ठं नान्यच्छ्रेयो वेदयन्ते प्रमृद्धाः । (मुण्डकः १.२.७-१०)। (४) आत्मनोऽज्यस्त्वममस्त्वमनादित्वादिकं च महता विस्तरेण गीतायां सम्प्राप्यते । तद्यथा-अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ता शरीरिणः । (२-१८), य एनं वेत्ति हन्तारं यक्त्वैनं मन्यते हतम्। (२-१९), न जायते भ्रियते वा कदाचित् ' अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो॰ (२-२०), वासांति जीर्णानि यथा विहाय' ' तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही। (२-२२), नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः (२-२३), अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च० (२-२४), देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत० (२-३०)। आत्मनो नित्यत्वमीशो-पनिपदि कठे च विस्तरतो वर्णितमस्ति । तद्यथा — स पर्यगाच्छुकमकायमवण । (ईश ०८). अनेजदेकं मनशो जवीयो॰ (ईश॰ ४), तदेजित तन्नैजित तद्दूरे तद्दन्तिके। तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः। (ईश्च० ५), अंबो नित्यः शास्वतोऽयं पुराणो न इन्यते हुन्यमाने शरीरे । अणोरणीयान् महतो महीयानात्मास्य जन्तोनिहितो गुहायाम् । (कठ १.२. १८-२१)। (५) गीतायां द्वितीये चतुर्थे चाध्याये ज्ञानयोगस्य विस्तरशो वर्णनमाप्यते । मूलमेतस्येशोपनिषदि लभ्यते—विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोमयँ सह । अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमञ्तुते । (ईश् ९-११) । मन्त्रत्रयेऽस्मिन् विद्यामार्गेण ज्ञानमार्गोऽविद्यामार्गेण च कर्ममार्गो गृह्यते । सांख्याभिमतोऽयं पन्थाः सांख्यदर्शने विशेषतो विवियते । (६) पञ्चमाच्याये षष्टाध्याये च गीतायां योगो वर्ण्यते । तस्य हरूपं साधनाविध्यादिकं च तत्र प्राप्यते । वर्णनमेतद् वेदान्तदर्शनं योगदर्शनं चाश्रित्य वर्तते । मुण्डकोपनिषदि माण्डूक्योपनिषदि चायं विषय उपलभ्यते । तद्यया—घनुर्वहीत्वौपनिषदं महास्त्रं शरं ह्युपासानिशितं संघयीतः। (मु० २-३), प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते। अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत्तन्मयो भवेत । (मु॰ २-४), यः सर्वज्ञः सर्वविद्यस्यैष महिमा भुवि। (मु॰ २-७), सत्येन लम्यस्तपसा ह्रोष आत्मा सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्० (मु० ३-५), यत्र सुतो न कंचन CC-Cक्तिमां स्थितमध्ये निम्भूतिम् एवपनं द्यारि वास्तुराम् प्राचित्र वास्तुराम् प्राचित्र प्राचि

तदनुष्यानेन मोक्षाधिगमश्चाष्टमाध्याये गीतायां वर्ण्यते । मुण्डकोपनिषदि, छान्दोग्ये बृहदारण्यके च ब्रह्मणो वर्णनं प्रणवानुध्यानेन मोक्षावाप्तेश्च वर्णनं विस्तरश उपरूभ्यते । (८) न्वमेऽध्याये गीतायामीश्वरार्पणमीरवरप्राप्तिसाधनत्वेनोपदिस्यते । भावोऽयं मुण्डको-पनिषदि मुख्यत्वेनोपलभ्यते । नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन । यमेवेष वृणुते तेन रुम्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तन् स्वाम् । नायमात्मा बरुहीनेन रुम्यो० (मु॰ ३-३,४)। (९) गीतायां दशमेऽध्याये विभोविंभूतीनां वर्णनमासाद्यते । कठोपनिषदि विस्तरशो विभोविभूतिवर्णनं निरीक्ष्यते । तद्यथा-- रूपं रूपं प्रतिरूपो वभूव । एकस्तथा सर्वभृतान्तरात्मा रूपं रूपं प्रतिरूपो बहिश्च। (कठ २.५.८-११), तमेव भान्तमनुभाति सर्वे तस्य भासा सर्वमिदं विभाति (कठ २.५.१५) भयादस्याग्निस्तपति भयात्तपति सर्यः । भयादिन्द्रश्च वायुश्च मृत्युर्धावति पञ्चमः (कठ २.६.३) । (१०) गीतायामेका-दशेऽध्याये विराड्रपदर्शनमुपलभ्यते । विभोविराड्रपस्य वर्णनं यजुर्वेदे पुरुषसूक्ते ३१ तमे अध्याये प्राप्यते । तद्यथा — सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् । स भूमिँ सर्वत स्पृत्वात्यतिष्ठद् दशाङ्गुलम् । (यजु० ३१.१-१३)। (११) द्वादशेऽध्याये मक्तियोगवर्णनं गीतायाम् । कैवल्योपनिषदि भक्तियोगो ध्यानयोगश्च वर्ण्येते । तद्यथा- श्रद्धाभक्ति-ध्यानयोगादवैहि । न कर्मणा न प्रजया धनेन त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः । (कैव० १-२)। (१२) त्रयोदरोऽध्याये क्षेत्रक्षेत्रज्ञवर्णनं सांख्यदर्शनानुसारि ज्ञातव्यम्। सांख्याभिमतं प्रकृतिपुरुषवर्णनिमहोपलभ्यते। (१३) चतुर्दशेऽध्याये गुणत्रयवर्णनमिप सांख्यदर्शनानुसार्येव बोद्धव्यम् । स्वेताश्वतरोपनिषद्यपि गुणत्रयवर्णनमुपलभ्यते । तद्यथा-अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां बह्धीः प्रजाः सुजमानां सरूपाः० (स्वेता० ४-५), स विश्वरूपिस्त्रगुणः (श्वेता १५७)। सप्तदशेऽष्टादशे चाध्याये श्रद्धाया ज्ञानादिकस्य च सात्त्विकादिभेदो वर्ष्यते । तदिष सांख्यानुसार्येवावगन्तव्यम् । (१४) पञ्चदशेऽध्याये-ऽस्वत्थवर्णनं कठोपनिषदमाश्रित्यं वर्तते । तद्यथा—ऊर्ध्वमूलोऽवाक्शाख एषोऽस्वत्थः सनातनः । तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म तदेवामृतमुच्यते । (कठ २.६.१) । तत्र वर्णिता क्षराक्ष-रद्वयी क्वेताक्वतरे प्राप्यते। तद्यथा-क्षरं प्रधानममृताक्षरं हरः क्षरात्मानावीक्षते देव एकः । (क्वेता० १-१०) । विशदीभवत्येतस्माद्यद् गीतेयं सर्वासामुपनिषदां समेषां दर्शनानां श्रुतीनां च सारं सरल्या सरण्या पुस्तकोत्। किं। bilgitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

४. आसनाटकचक्रम्

महाकवेर्भासस्य कृतित्वेन त्रयोदश नाटकरत्नानि समुपलभ्यन्ते । 'भासनाटक-नकेऽपि छेकैः क्षिते परीक्षितुम्' इति राजशेखरभणितिमाश्रित्य भासनाटकचक्रमिति तत्कृतनाटकानां नाम व्यवहियते । नाटकत्रयोदशस्य परिचयः समासतोऽत्र प्रस्तूयते । (१) प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् — अङ्कचतुष्टयमत्र । उदयनस्य वासवदत्तया सह प्रणयः परिणयश्चेह वर्ण्येते । यौगन्धरायणप्रयत्नतः प्रद्योतप्रासादादुदयनस्य मोक्षः । (२) स्वप्न-वासवदत्त्रम् — अङ्कषट्कमत्र । वासवदत्ताऽग्निदाहेन दग्धेति प्रवादं प्रचार्थ यौगन्धराय-णप्रयत्नात् पद्मावत्या सहोदयनस्योपयमोऽपहृतराज्यावातिश्च वर्ण्यंते । (३) ऊरुभङ्गम्— नाटकमेतदेकाङ्कि । पाञ्चालीपरिभवप्रतिविधार्थं भीभेन गदायुद्धे दुर्योधनोरुभझनं वस्त प्रतिपाद्यते । निखिलेऽपि संस्कृतवाङ्मये दुःखान्तमेतदेव नाटकम् । (४) दूतवाक्यम्— एकाङ्कि नाटकम् । महाभारताहवात् प्राक् पाण्डवार्थे दुर्योधनसंसदि श्रीकृष्णस्य दूतत्वेन गमनं प्रयत्नवैफल्यं चात्र वर्ष्यते। (५) पञ्चरात्रम् — अङ्कत्रयमत्र। यज्ञान्ते द्रोणो दक्षिणास्वरूपं पाण्डवेभ्यो राज्यार्धे ययाचे दुर्योधनम्। पञ्चरात्राभ्यन्तरे पाण्डवाना-मुदन्त उपलभ्यते चेद्राज्यार्धे दास्यते मयेति दुर्योधनोक्तिः । पञ्चरात्राभ्यन्तरे पाण्डवानां प्राप्तिर्दुर्योधनकृतराज्यार्धप्रदानं च । (६) बालचरितम्—अङ्कपञ्चकमत्र । बालस्य श्रीकृष्णस्य जन्मारस्य कंसवधान्तं चरित्रमिह वर्ण्यते । (७) दूतघटोत्कचम् — एकाङ्कि <mark>नाटकमदः। अभिमन्युनिधनानन्तरं श्रीकृष्णप्रेरणया घटोत्कचस्य दौत्यमाश्रित्य धृतराष्ट्रान्तिकं</mark> गमनम् । दुर्योधनकृतस्तस्यावमानः । दुर्योधनोक्तिश्च-'प्रतिवचो दास्यामिते सायकैरिति'। (८) कर्णभारम्—नाटकमिदमेकाङ्कि । ब्राह्मणवेषधारिणे शकाय कर्णस्य कवचकुंडला-र्पणम् । (९) स्रध्यस्रव्यायोगः - नाटकमिदमेकाङ्कि । मध्यमः पाण्डवो भीमो मध्यम-नामानं ब्राह्मणसूनुमेकं घटोत्कचात् त्रायते । अपत्यदर्शनेन भीमस्यानन्दावाप्तिः पत्न्या हिडम्यया च समागमः। (१०) प्रतिमानाटकम् —अङ्कसप्तकमिह। रामवनवासादा-रभ्य रावणवधान्ता कथाऽत्र वर्णिता । दशरथप्रतिमां प्रेक्ष्य भरतः पितुर्निधनमवगच्छिति । (११) अभिषेकनाटकम् — अङ्कषट्कमत्र । किष्किन्धाकाण्डादारभ्य युद्धकाण्डान्ता रामकथाऽत्र वर्णिता । रावणवधानन्तरं रामस्य राज्येऽभिषेकः । (१२) अविमारकम् — अङ्कषट्कमत्र । राजकुमारस्याविमारकस्य राज्ञः कुन्तिभोजस्य दुहित्रा कुरङ्गया सह प्रणयपरिणयोऽत्र वर्णितः । (१३) चारुद्त्तम् अङ्कचतुष्टयमिह । वितीर्णविपुरुवित्तनो-दारचित्तेन चारुद्तेन सह वसन्तसेनानामवाराङ्गनायाः प्रणयोपयमोऽत्र वर्णितः ।

 (७) पात्रनामसाम्यमि । यथा—काञ्चुकीयो बादरायणः, प्रतीहारी विजया च कतिपयेषु नाटकेषु । (८) अप्रचल्तिवृत्तानां प्रयोगो यथा—सुवदना दण्डकादयः । (९) बहुषु नाटकेषु पताकास्थानकप्रयोगः । (१०) नाटकेषु सर्वेषु भाषासाम्यं रीतिसाम्यं च । (११) अपाणिनीयप्रयोगाश्च सर्वेष्वेव नाटकेषु । (१२) अन्योन्यसंबद्धानि नाटकानि यथा—स्वप्न० प्रतिज्ञायौगन्धरायणस्योत्तरभाग एव । प्रतिमाऽभिषेकनाटके च तथा ।

वाणो हर्षचिरतं 'सूत्रधारकृतारम्भैः॰' इति भासनाटकवैशिष्ट्यमाच्छे । तच्च सर्वत्रेहावाप्यते । राजशेखरोऽभिधत्ते—'भासनाटकचक्रेऽपि हेकैः क्षिते परीक्षितुम् । स्वप्नवासवदत्तस्य दाहकोऽभून्न पावकः ।' एतस्मात् भासकृतनाटकबहुत्वस्य स्वप्नवासवदत्तस्य च तत्कृतित्वेनावगितर्भवित । भोजदेवो रामचन्द्रगुणचन्द्रौ च स्वप्नवासवदत्तं भासकृतिमामनित । अतो भास एव सर्वेषां प्रणेतेत्यवगम्यते ।

भासस्य जनिकाल्ध्य ४५० ई० पूर्वादनन्तर ३७० ई० पूर्वात्प्राक् च स्वीकियते। साम्प्रतकालं यावदुपलन्धं संस्कृतवाङ्मय परीक्ष्यते चेद् भास एव नाटककृद्मणी-रिति शक्यं वक्तुम् । त्रयोदशनाटकानां प्रणेता स इति प्रतिपादितमेव । नाटकानां बाहुल्येन विषयवैविध्येनाभिनयोपयोगित्वेन च तस्य नाट्यनैपुण्यं नाटकानिर्मितौ वैद्यारद्यं चावधार्यते । नाटकेषु तस्य मुख्या विशेषताः सन्त्येताः—भाषायां सरह्तता, अकृत्रिमा शैली, वर्णनेषु यथार्थता, चरित्रचित्रणे वैयक्तिकत्वं, घटनासंयोजने सौष्ठवं, कथाप्रसङ्गस्या-विच्छिन्नश्च प्रवाहः। सर्वाण्येव नाटकान्यभिनयोपयोगीनीति तस्य महनीयतार्माभवर्ध-यन्ति । नाटकेषु मौलिकता कल्पनावैचिन्यं च विशेषत उपलभ्यते । स एव सर्वाग्रणी-रेकाङ्किनाटकप्रणयने । नाटकपञ्चकमस्यैकाङ्कि । पताकास्थानकमपि मधुरं प्रयुङ्कै । शैली चेद् विविच्यते तस्य तिहं प्रसादमाधुर्यौजसां त्रयाणामिष गुणानां समन्वयस्तत्रा-वेक्ष्यते । भाषा तस्य सरला, सुबोघा, सरसा, नैसर्गिकी, सप्रवाहा च । उपमारूपकोत्प्रेक्षा-र्थान्तरन्यासालंकाराणां प्रयोगो विशेषतोऽवाप्यते तस्य कृतिषु । अनुप्रासादिकं विशेषतः व्रियं तस्य । यथा—हा वत्स राम जगतां नयनाभिराम (प्रतिमा॰ २-४) । मनोवैज्ञानिक विवेचने नितरां निपुणः सः । यथा—दुःखं त्यक्तुं बद्धमूलोऽनुरागः० (स्वप्न० ४-६), प्रदेषो बहुमानो वा॰ (खप्न॰ १-७), शरीरेऽरिः प्रहरति॰ (प्रतिमा॰ १-१२)। भारतीया भावाः स्विशेषं रोचन्ते तस्म । यथा-पितृभक्तिः पातित्रत्यं भ्रातृप्रेमादिकम् । भर्तृनाथा हि नार्यः' (प्रतिमा॰ १-२५), कुतः क्रोधो विनीतानाम्० (प्रतिमा॰ ६-९), अयुक्तं परपुरुषसकीर्तन श्रोतुम् (खप्न० अंक ३)। भाषायां सरल्ता रम्यता च लोकप्रियत्वस्य कारणं तस्य । रसभावानुकूलं शैल्यां परिवर्तनमपि प्राप्यते । यथा—मद्भुजाकृष्ट॰ (प्रतिमा॰ ५-२२) पक्षाभ्यां परिभूय॰ (प्रतिमा॰ ६-३)। विस्तरमनादृत्य समासं साधीयान्मनुते। कम्प्यर्थे : अनुक्तैव वनं गताः (प्रतिमा॰ २-१७)। चित्रयति तथा भावान् यथा मूर्तवत्ते उपिष्ठिन्ति । व्यङ्ग्यप्रयोगस्तस्यासाधारणो मार्मिकश्च । यथा— अनुपत्या (प्रतिमा २ २-८) । उपमाप्रयागेऽपि दक्षः । यथा—सूर्य इव गतो रामः (प्रतिमा॰ २।७), विचेष्टमानेव॰ (प्रतिमा॰ ६-२)। व्याकरणादिवैदग्यमपि प्रदर्शयति यथावसरम् । यथा — स्वरपद० (प्रतिमा॰ ५-७), घनः स्पष्टो घीरः० (प्रतिमा॰ ४-७)। विविधरसवर्णने, छन्दःप्रयोगे, अर्थान्तरन्यासप्रयोगे च प्रभूतं द्वाशिष्ठासुप्रकाश्यते ज्ञास्त्रणं Gyaan Kosha

५. कालिदासर सर्वस्वमिश्जानदााकुन्तलम्

महाकवेः काल्दिसस्य जनिकाल्यमनुरुध्य कितपयानि मतान्युपस्थाप्यन्ते मितमतां विस्तैः । मतद्वयं च मुख्यतः प्रचिरणु । (१) विक्रमसंवत्तरसंस्थापकस्य विक्रमादित्यस्य राज्यकाले खिस्ताब्दात्पूर्वं प्रथमशताब्द्याम् , (२) ईसवीयचतुर्थशताब्द्यां गुप्तकाले । प्रथमं मतं भारतीयैरिधकं स्वीवियते, द्वितीयं च पाश्चात्त्यैः । कृतयस्तस्य प्राधान्यतः सतैव स्वीवियन्ते । (क) नाट्यप्रन्थाः—(१) अभिज्ञानशाकुन्तलम् , (२) विक्रमोर्वशीयम् , (३) मालविकाग्नित्रम् । (ख) काव्यद्वयम्—(४) रघुवंशम् , (५) कुमारसम्भवम् । (ग) गीतिकाव्यद्वयम्—(६) मेघदूतम् , (७) ऋतुसंहारम् । कृतिष्वेतासु शाकुन्तलमेव कवेः प्रतिभायाः परिपावेन, रचनाकौशलेन, प्रकृतिचित्रणे पाटवेन, रसपरिपाकेन, नीरसाख्याने सरसताऽऽधानेन, मूलकथापरिवर्तने वैशारयेन, करणादिरससंचारेण च सर्वाविशायीति तदेव काल्दिसस्य सर्वस्वमिममन्यते । अतो निगदितं वेनापि—'काव्येषु नाटकं रम्यं नाटकेषु शकुन्तला । तथापि च चतुर्थोऽङ्कस्तत्र दलोकचतुष्टयम्' । एतदेवात्र विविच्यते विवियते च । विषयोऽयं महता विस्तरेण वर्णितो विश्वदीकृतश्च मत्कृतशाकुन्तलन्यम् मूमिकायाम् । विस्तरस्तत एवावगन्तत्यः । रलोकाङ्कादिकं मत्संपादितशाकुन्तलसंस्वरणान्ताराः ।

काल्दिसस्य नाट्यकलाकोशले सन्त्येते विशेषाः । घटनासंयोजने सौष्ठवं, वर्णनानां सार्थकता स्वाभाविकता ध्वन्यात्मकता च, चित्रत्रचित्रणे वैयक्तिकत्वं, किवत्वं, स्मपिर्पाकश्चेति । अभिनयाईतया चैतेषां नाटकानां महत्त्वं नितरामिनवर्षते । घटनासंयोजने सौष्ठवं यथा—द्वितीयेऽक्के आश्रमं प्रवेष्टुकामे सित दुष्यन्ते ऋषिवुमारद्वयस्य नृपाह्वानार्थे प्रवेशः । पञ्चमे हंसपदिकागीतम् , षष्ठेऽङ्गुलीयकोपलिषः, सप्तमे पुत्रदर्शनं शकुन्तलावापिश्च । वर्णनेषु स्वाभाविकता यथा—प्रथमेऽक्के मृगप्लुतिवर्णनं, द्वितीयेऽवनिपविद्वस्तर्मलापार्थ । वर्णनेषु स्वाभाविकता यथा—प्रथमेऽक्के मृगप्लुतिवर्णनं, द्वितीयेऽवनिपविद्वस्तर्मलापः, चतुर्थे शकुन्तलाविप्रयोगवर्णनं, पञ्चमे शकुन्तलाप्रत्याख्यानं, सप्तमेऽपत्य-क्षीडावर्णनं च । वर्णनानां ध्वन्यात्मकता यथा—'दिवसाः परिणामरमणीयाः' (१-३) नाटकस्य सुखावसायित्वं सूचयति । सूत्रधारकथनम्—'अस्मिन् क्षणे विस्मृतं खलु मया' (पृष्ठ १४) नाटके विस्मरणस्य महिमानं द्योतयति । 'यात्येकतोऽस्तशिखरं पतिरोष-धीनाम्, आविष्कृतोऽरुणपुरःसर एकतोऽर्कः, (४-२) सुखदुःस्वक्रमस्यानिवार्यत्वम् । हंस-धीनाम्, आविष्कृतोऽरुणपुरःसर एकतोऽर्कः, (४-२) सुखदुःस्वक्रमस्यानिवार्यत्वम् । हंस-धिनाम् ।

चरित्रचित्रणे वैयक्तिकता यथा—ऋषित्रये कण्वः साधुप्रकृतिर्नियतः शकुन्तलायां पितृ-वन्मृदुहृदयः, मरीचो वीतरागः, दुर्वासाश्च रोषप्रकृतिः।

रसनिरूपणेऽपि महती विदग्धताऽवाष्यते । बीभत्सरसं विहाय प्रायः समेऽप्यन्ये रसाः समुपलभ्यन्तेऽत्र । शृङ्गाररसश्च सर्वानतिशेते । (क) संभोगशृङ्गारो यथा— शकुन्तलां समीक्ष्य नृपोक्तिः — अहो मधुरमासां दर्शनम् (पृष्ठ ४२), शुद्धान्तदुर्लभिदं वपुराश्रमवासिनो यदि जनस्य । (१-१७) । शकुन्तलालावण्यवर्णनम् — इदं किलाव्याज-मनोहरं वपुस्तपःक्षमं साधियतुं य इच्छति। (१-१८), सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं ' 'किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् । (१-२०), अधरः किसल्यरागः कोमल-विटपानुकारिणौ बाहू (१-२१), चलापाङ्गां दृष्टि स्पृशसि बहुशो वेपथुमतीं० (१-२४)। शकुन्तलामुपेत्य तृपोक्तिः — इदमनन्यपरायणमन्यथा हृदयसन्निहिते हृदयं मम (३-१६), किं शीतलैः क्लमविनोदिभिरार्द्रवातान्० (३.१८), अपरिक्षतकोमलस्य यावत् सदयं मुन्दरि गृह्यते रसोऽस्य (३-२१),उपरागान्ते शशिनः समुपगता रोहिणी योगम् (७-२२), (ख) विप्रलम्भशृङ्गारो यथा — द्वितीयेऽङ्के शकुन्तलास्मरणं तच्चेष्टावर्णनं च — कामं प्रिया न सुलभा मनस्तु तद्भावदर्शनाश्वासि॰ (२-१), रिनम्धं वीश्वितमन्यतोऽपि नयने यत् प्रेरयन्त्या तया० (२-२), चित्रे निवेश्य परिकल्पितसत्त्वयोगा०(२-९),अनाविद्धं रत्नं मधु नवमनास्वादितरसम्०(२-१०), अभिमुखे मिय संहतमीक्षितं ' 'न विवृतो मदनो न च संवृतः (२-११), दर्भाङ्कुरेण चरणः क्षत इत्यकाण्डे तन्वी स्थिता० (२-१२) । चन्द्रादीनां तापहेतुत्व—तव कुसुमशरत्वं शीतरिसत्विमन्दोः० (२-३)। विरहक्षामगात्रायाः शकुन्तलाया वर्णनम्—स्तनन्यस्तोशीरं प्रशिथिलमृणालैकवलयं० (३-६), क्षामक्षाम-कपोलमाननमुरः काठिन्यमुक्तस्तनं० (३।७)। राज्ञो विरहावस्थावर्णनम् — इदमशिशिरै-रन्तस्तापाद् विवर्णमणीकृतं० (३-१०)। (ग) करुणरसो यथा—शकुन्तलाप्रस्थानसमये आश्रमावस्था — यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कृष्ठया ० (४-६), पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या० (४-९), उद्गलितदर्भकवला मृग्यः परित्यक्तनर्तना मयूराः (४-१२), यस्य त्वया वर्णावरोपणमिङ्गुदीनां (४-१४), अभिजनवतो मर्तुः क्लाघ्ये स्थिता ग्रहिणीपदे० (४-१९), शममेष्यति मम शोकः कथं नु वत्से त्वया रचित-पूर्वम् (४-२१)। (घ) वीररसो यथा—अध्याकान्ता वसतिरमुनाऽप्याश्रमे सर्वभोग्ये० (२-१४), नैतचित्रं यदयमुदिधस्यामसीमां धरित्रीं० (२-१५), का कथा बाणसन्धाने ज्याशब्देनैन दूरतः॰ (३-१), कुमुदान्येन शशाङ्कः सनिता बोधयति पङ्कजान्येन॰ (५-२८) । (ङ) अद्भुतरसो यथा — दृष्यन्तेन्।हिन् तेन्नोताहर्षा हां अद्भागिवभुम्ब ६०व(ष्रव्याः) Çyaan Kosha CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection al Sarah (८५६६) तेन्नोताहर्षा हां अद्भागिवभुम्ब ६०व(ष्रव्याः) Çyaan Kosha क्ष्मीमं केनचिदिन्दुपाण्डु तरुणा माङ्गल्यमाविष्कृतं (४-५), शैलानामवरोहतीव शिलरादुन्मजतां मेदिनी० (७-८), वल्मीकार्धनिमग्नमृर्तिरुरसा सन्दृष्टसर्पत्वचा० (७-११), प्राणानामनिलेन वृत्तिरुचिता सत्कल्पवृक्षे वने० (७-१२)। (च) हास्यरसो यथा—अत्र पयोधरिवस्तारियतृ आत्मनो यौवनमुपालभस्व (पृ० ४९), किं मोदक-खादिकायाम् (पृ० १०९), यथा कस्यापिपिण्डखर्जू रैरुद्देजितस्य तिन्तिण्यामिमलाषो भवेत् (पृ० १२३), त्रिश्चङ्कुरिवान्तरा तिष्ठ० (पृ० १४२), एष मां कोऽपि प्रत्यवनतिशरोधर-मिक्षुमिव त्रिभङ्गं करोति० (पृ० ४१०), विडालग्रहीतो मूषक इव निराशोऽस्मि जीविते संवृत्तः (पृ० ४१३)। (छ) शान्तरसो यथा—स्वर्गादिधकतरं निर्वृतिस्थानम् (पृ० ४३८), प्राणानामनिलेन वृत्तिरुचिता० (७-१२)।

काञ्यसौन्द्रयं विवेचनदशा दृश्यते चेत्समग्रमेव शाकुन्तलं सौन्दर्यपरीतम् । (क) करुणरसव्याप्लुतत्वाच्चतुर्थोऽङ्कोऽतिशायी। तत्र चोत्कृष्टं श्लोकचतुष्ट्यं मन्मत्या वर्तते — यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुःकण्ठया ० (४-६), श्रूश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रिय-सखीवृत्ति सपत्नीजने॰ (४-१८), पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जुलं युष्मास्वपीतेषु या॰ (४-९), अस्मान् साधु विचिन्त्य संयमधनानुच्चैः कुलं चात्मनः० (४-१७)। (ख) अन्तःप्रकृतेर्बाह्यप्रकृत्या समन्वयो दृश्यते । खिन्ना शकुन्तला कुमुदिनी च भर्तृवियोगेन । अन्तर्हिते शशिनि सैव कुमुद्रती मे॰ (४-३)। शकुन्तलावियोगेन सर्वोऽप्याश्रमो विषी-दति । आश्रमस्थैः पशुपक्षिमिरपि भोजनादिकं परित्यक्तम् । पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं (४-९), उद्गलितदर्भकवला मृग्यः (४-१२)। (ग) बाह्यप्रकृत्याऽऽत्मीयत्वम्---अस्ति मे सोदरस्नेहोऽप्येतेषु (पृ० ४५), ल्तासनाय इवायं केसरवृक्षकः प्रतिभाति (पृ० ५३), न नमयितुमधिज्यमस्मि शक्तो धनुरिदमाहितसायकं मृगेषु (२-३), क्षौमं केनचिदिन्दुपाण्डु तरुणा माङ्गल्यमाविष्कृतं० (४-५), उद्गलितदर्भकवला मृग्यः (४-१२) । (घ) प्रेमचित्रणं लावण्यवर्णनं च। मतमेतन्महाकवेर्यत् सौन्दर्ये नाहार्ये गुणमपेक्षते । अतस्तेनोच्यते—इदं किलाव्याजमनोहरं वपुस्तपःक्षमं साधियतुं य इच्छति॰ (१-१८), सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं ' 'किमिव हि म्धुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् (१-२०), अहो सर्वास्ववस्थासु रमणीयत्वमाकृतिविशेषाणाम् (पृ० ३५७)। नैसर्गिकत्वादेव निदींषत्वं शकुन्तलालावण्यस्य । इदमुपनतमेवं रूपमिकल्षकान्ति० (५-१९)। पुष्पिता हतेव हावण्यमयी शकुन्तहा। अधरः किसलयरागः कोमहिवट-

CC-O.पानुक्तारिको बाक्रूमा कुतुम्सिक्षवत्त्वेमनी एंडमें निन्मा के संग्रह्मा (१-२१) । तस्य मत्मेत्र

'यत्राकृतिस्तत्र गुणा वसन्ति' । सुन्दरीसौन्दर्ये त्रपयैव, नान्यया । अतो व्यादिश्यते तेन— वाचं न मिश्रयति यद्यपि मद्वचोभिः (१-३१), अभिमुखे मिय संहृतमीक्षितं० (२-११) । स्त्रीसौन्दर्ये सच्चारित्र्येण तपसा च । यथा—शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्ति सपत्नीजने० (४-१८), इयेष सा कर्जुमवन्ध्यरूपतां समाधिमास्थाय तपोभिर तमनः (कुमार० ५-२) । तपःपूतमेव प्रेम प्रसीदित प्रशस्यते च । तपःपूतैव शकुन्तला प्रियमनुविन्दति ।

कालिदासस्य शैली कालिदासो वैदर्भीरीत्याः सर्वाग्रणीः कविरित्यत्र न कस्यापि विप्रतिपत्तिः। (क) तस्य शैल्यां प्रसादमाधुर्योजसां त्रयाणामपि गुणानां सम-न्वयोऽवलोक्यते । प्रसादगुणो यथा—भव हृदय साभिलाषं संप्रति सन्देहनिर्णयो जातः (१-८८), क वयं क परोक्षमन्मथो मृगशावैः सममेधितो जनः (२-१८), अयं स ते तिष्ठति संगमोत्सुको विशङ्कसे भीरु यतोऽवधीरणाम् (३-११), अर्थो हि कन्या परकीय एव तामद्य संप्रेष्य परिग्रहीतुः० (४-२२)। माधुर्यगुणो यथा—सरिसजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यम्० (१-२०), अधरः क्रिसल्यरागः कोमल्रविटपानुकारिणौ बाहू (१-२१), स्वप्नो नु माया नु मतिभ्रमो नु० (६-१०)। ओजोगुणो यथा—तीवाघातप्रतिइततरु-स्कन्धरुग्नैकदन्तः (१-३३), अनवरतधनुर्ध्या (२-४)। (ख)तस्य भाषायामसाधारणोऽ-धिकारः । मनोज्ञान् भावान् मधुरैः शब्दैरभिव्यनक्ति । तद्यथा-अनाघातं पुष्पं किस-ल्यमळ्नं करस्हैः॰ (२-१०), अमी वेदिं परितः बल्रुप्तधिषयाः॰ (४-८), त्रिस्रोतसं वहति॰ (७-६)। (ग) वर्णने संक्षेपो ध्वन्यात्मकता च दृदयते। तद्यथा — अये लब्धं नेत्रनिर्वाणम् (पृ० १५३), इत्यनेन दर्शनानन्दावाप्तेः । किं शीतलैः क्लमविनोदिभिरा-र्द्रवातान्॰ (३-१८) इत्यनेन दियताराधनस्य वर्णनम्। (घ) वर्णनेऽनुपमं कौशलं समीक्ष्यते । स प्रत्येकं वस्तु सजीववत् प्रस्तवीति । यथा — विरह्विषण्णयोर्दुष्यन्तशकुन्तलः योर्वर्णनम् । चतुर्थेऽङ्के शकुन्तलावियोगखिन्नस्याश्रमपदस्य वर्णनम् । (ङ) तस्य संलापेषु सर्वत्र संक्षेपो रम्यता चावाप्यते । (च) सोऽलंकाराणां प्रयोगेऽनुपमः पटुः । प्रायश्चत्वारिंश-दलंकारास्तेन प्रयुक्ताः । (छ) उपमा काल्दित्तसस्य । वर्णितमेतदन्यत्र । अर्थान्तरन्यास-प्रयोगेऽप्यसमः पटुः । तद्यथा—सतां हि सन्देहपदेषु वस्तुषु प्रमाणमन्तःकरणप्रवृत्तयः (१-२२), खभाव एवैष परोपकारिणाम् (५-१२), अथवा भवितव्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र (१-१६) । (ज) न्याहिसस्मिक्कस्वामि(प्रयुक्तामि।सम्बन्धिम् संस्थि। anta eGangotri Gyaan Kosha

६. उपमा कालिदासस्य

कविताकामिनीकान्तः कालिदासः कस्य नावर्जयित चेतः सचेतसः। तस्य काव्यसौन्दर्थे प्रेक्षं-प्रेक्षं प्रशंसन्ति सहृदयाः मुधियस्तस्य कलाकौशलम्। तस्य स्त्तयः सुधासित्ता मञ्जर्य इव चेतोहराः सन्ति। अत उच्यते वाणमट्टेन हर्पचरिते—'निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य स्तिषु। प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मञ्जरीष्विव जायते'। कालिदासोऽनिरोते सर्वानिप महाकवीनौपम्ये। अतः साधृच्यते—'उपमा कालिदासस्य'। एतदेवात्र विविच्यते।

का नामोपमा ? कथं चैषोपकर्त्री कान्यस्य ? विश्वनाथानुसारं 'साम्यं वाच्यमवै-धर्म्य वाक्यैक्य उपमा द्वयोः' (सा॰ दर्पण १०-१४) । वस्तुद्वयस्य वैधर्म्ये विहाय साम्य-मात्रं चेदुच्यते वाक्यैक्ये तिहं सोपमा । उपमेषा सौदामिनीव विद्योतते विपुले वाङ्मये । कान्यशरीरे समादधाति महतीं मञ्जुलताम् । कालिदासस्योपमाप्रयोगेऽपूर्वे वैशारद्यम् । उपमासु न केवलं रम्यता, यथार्थता, पूर्णता, विविधता चैवापि तु सर्वत्रैव लिङ्गसाम्य-मौचित्यं च । लिङ्गसाम्यमौचित्यस्य च समाश्रयणेन काचिदपूर्वा सम्पद्यते चास्तोपमासु । शतशः सन्त्युपमाप्रयोगस्थलानि तस्य कान्यादिषु । रघुवंशे तूपमाप्रयोगः सर्वातिशायी ।

उपमाप्रयोगे चातुर्येणैव स 'दीपशिखा-कालिदास' इति प्रसिद्धिमाप। पितंवरा इन्दुमती दीपशिखेव व्यराजत। तद्यथा—'संचारिणी दीपशिखेव रात्रौ, यं यं व्यतीयाय पितंवरा सा। नरेन्द्रमार्गाष्ट इव प्रपेदे, विवर्णभावं स स भूमिपालः'। (रघु० ६-६७)। वामदेवो दीप इवास्ते, रितश्च कामविहीना दीपदशेव भृशं दुःखमाप। 'गत एव न ते निवर्तते, स सखा दीप इवानिलाहतः। अहमस्य दशेव पश्य मामविषद्धव्यसनेन धूमि-ताम्'। (कुमार० ४-३०)।

शास्त्रीया उपमास्तावत् प्राङ्निर्दिश्यन्ते । (१) शास्त्रीया उपमाः—(क)
वेद विषयकाः—मनुस्तथैव नृपाणामग्रिमोऽभवद्यथा मन्त्राणामोकारः । 'आसीन्महीक्षितामाद्यः प्रणवश्चन्दसामिव' (रघुवंश १-११) । सुदक्षिणा नन्दिन्या मार्ग तथैवान्वगच्छद्यथा स्मृतिः श्रुतेर्थम् । 'श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्' (रघु० २-२) । (ख)
दर्शनविषयकाः—यथा दुद्धेः कारणमव्यक्तं मूलप्रकृतिवां तथा सरय्वा नद्याः कारणं
मानसं सरः । 'ब्राह्मं सरः कारणमाप्तवाचो बुद्धेरिवाव्यक्तमुदाह्ररन्ति' (रघु० १३-६०) ।
दिलीपस्य कृतिविशेषाः प्राक्तनाः संस्कारा इव पत्नानुमेया आसन् । 'फलानुमेयाः प्रारम्भाः
संस्काराः प्राक्तना इव' (र०१-२०) । गम्भीराया नद्याः पयो निर्मलं मानसमिव वर्तते,
मेघश्च छायात्मेव । 'चेतसीव प्रसन्ने, छायात्मापि०' (मेघ०१-४३) । यतिर्ययेन्द्रियारातीन्
वाधते तथा रघुः पारसीकान् जेतुं प्रतस्थे । 'इन्द्रियाख्यानिव रिपृस्तत्वज्ञानेन संयमी'
(रघु० ४-६०) । (ग) यज्ञविषयकाः—नृपो दुष्यन्तः शक्नुन्तला भरतोऽपत्यं च त्रयमेतत्
(८८-कमशःस्विष्क्षिप् श्रुक्कानिक्तं। व्यक्ति अस्त्रमान्नां सम्बत्ते । अधुद्धा वित्तं विधिश्चेति त्रितयं

तत् समागतम्' (शा० ७-२९) । शकुन्तलाऽनुरूपं भर्तारं गता यथा धुमावृतलोचनस्य यजमानस्य बह्नाबाहतिः। 'दिष्ट्या धूमाकुलितदृष्टेरपि यजमानस्य पावक एवाहतिः पतिता' (शा॰ अंक ४)। यज्ञस्य दक्षिणेव सुदक्षिणा दिलीपभार्याऽभूत्। 'अध्वरस्येव दक्षिणां (र० १-३०) । स्वाहया युक्तोऽग्निरिव वसिष्ठोऽरुन्धत्या समेतोऽभूत् । 'स्वाहयेव हविर्भुजम्' (र० १-५६)। दिलीपानुगता नन्दिनी विधियुक्ता श्रद्धेच बभौ। 'श्रद्धेच साक्षाद् विधिनोषपन्ना' (र० २-१६)। रामादिभातृचतुष्टयस्य विनीतत्वं तथैवावर्धत यथा हविषाऽग्निः। 'हविषेव हविर्भुजाम्' (र० १०-७९)। (घ) विद्याविषयकाः-विद्याऽभ्यासेन यथा चकांस्ति तथा नन्दिनी सेवया प्रसादनीया । 'विद्यामभ्यसनेनेव प्रसादयितुमईसि' (र॰ १-८८)। दुष्यन्तपरिणीता शकुन्तला सुशिष्यपदत्ता विद्येवाशोचनीयाऽभूत्। 'सुशिष्यपरिदत्ता विद्येवाशोचनीयाऽस्ति संवृत्ता' (शा० अंक ४)। (ङ) व्याकरण-विषयकाः --अपवादनियमो यथोत्सर्गे बाधते तथा रात्रुघ्नो लवणासुरं बवाधे । 'अपवाद इवोत्सर्गे व्यावर्तयितुमीश्वरः' (र० १५-७) । अध्ययनार्थकादिङ्धातोः प्राक् अधिरुपसर्गो यथा शोभाकृद् व्यर्थश्च तथा शत्रुघ्नेन समं सेना । 'पश्चादध्ययनार्थस्य धातोरधिरिवाभवत्' (र० १५-९)। (च) राजनीतिविषयकाः - प्रभावशक्तिर्मन्त्रशक्तिरुत्साहशक्तिश्चेति त्रयं यथाऽर्थमक्षयं सूते तथा सुदक्षिणा पुत्रं रघुमस्त । 'त्रिसाधना शक्तिरिवार्थमक्षयम्' (र० ३-१३)। (छ) ज्योतिषविषयकाः—चन्द्रग्रहणानन्तरं यथा रोहिणी शशिनमुपैति तथा शकुन्तला दुष्यन्तमुपगता। 'उपरागान्ते शशिनः समुपगता रोहिणी योगम्' (शा० ७-२२)।

- (२) मूर्तस्यामूर्तरूपेण—दिलीपः क्षात्रधर्म इवासीत्। 'क्षात्रो धर्म इवाश्रितः' (र० १-१३)। स धवलं क्षीरं यशसोपिमभीते—'शुभ्रं यशो मूर्तिमवातितृष्णः' (र० २-६९)। रथं मनोरथेनोपिमभीते—'स्वेनेव पूर्णेनं मनोरथेन' (र० २-७२)। रामादय-श्रत्वारश्चतुर्वर्ग इवाशोभन्त। 'धर्मार्थकाममोक्षाणामवतार इवाङ्गभाक्' (र० १०-८४)। क्वित्तत् निर्जीवस्य सजीवेन सहौपम्यम्—सिप्रावातः चाडुकारो जन इवास्ते। 'सिप्रावातः प्रियतम इव प्रार्थनाचाडुकारः' (मेव० १-३१)।
- (३) प्रकृतिसंबद्धाः—अत्रसंकेतमात्रं निर्दिश्यन्त उपमाः,ता यथायथं विवेच्याः।
 (क) सूर्यसंबद्धाः—सूर्यमिव तेनोमयं सुतं जनय। 'तनयमचिरात् प्राचीनार्के प्रसूय च पावनम्' (शा०४-१९)। रामपरशुरामौ शशिदिवाकराविवाशोभेताम्। 'पार्वणौ शशिदिवाकराविव' (र०११-८२)। (ख) चन्द्रसंबद्धाः—शोकविकला यक्षपत्नी विधुकलेवालक्ष्यत। 'प्राचीमूले तनुमिव कलामात्रशेषां हिमांशोः' (मे०२-२९)। पार्वती दिवा विधुलेखेवाम्ला-यत्। 'शशाङ्कलेखामिव पश्यतो दिवा०' (कुमार०५-४८)। सन्ध्या शशिनमिव नन्दिनी श्वेतरोमाङ्कं दथे। 'सन्ध्येव शश्चिनं नवम्' (र०१-८३)। अन्याश्चन्द्रसंबद्धा उपमाः, यथा—मनुवंशे दिलीपः, सिन्धौ चन्द्र इव नत्रे। 'इन्दुः क्षीरनिधाविव' (र०१-२२), सुद्धिशाद्धिलीमी क्रिजाचल्द्रमसोरिव'

(र० १-४६)। मगधा थिपः परन्तपो राजा साक्षात् चन्द्र इवासीत्। 'कामं नृपाः सन्तु सहस्रशोऽन्ये "ज्योतिष्मती चन्द्रमसैव रात्रिः। (रघु॰ ६-२२)। सीतावियुक्तो रामस्तु-षारवर्षी चन्द्र इवारोदीत् । 'वभृव रामः सहसा सवाष्पस्तुषारवर्षीव सहस्यचन्द्रः' । (रघु० १४-८४) । चन्द्रसंबद्धाश्चान्या उपमाः - दिलीपं चन्द्रमिवावालोकयन् जनाः । 'नेत्रैः <mark>पपुस्तृतिमनाप्नुवद्धिर्नवोदयं नाथमिवौषधीनाम्'। (रघु० २-७३)। रघुश्चन्द्र इव वृद्धि-</mark> माप । 'पुपोष वृद्धिं हरिदश्वदीधितेरनुप्रवेशादिव वाल्चन्द्रमाः' । (रघु० ३-२२) । वाल्मीकिना जानकी तापसीभ्योऽर्पिता, यथा चन्द्रकला ओषधीभ्यो दत्ता । 'निर्विष्टसारां पितृभिर्हिमांशोरन्त्यां कलां दर्श इवीषधीषु । (रष्टु० १४-८०) । (ग) ऋक्षादिसंबद्धाः— शकुन्तलायाः कमनीयं कलेवरं लतामिवानुचकार । 'अधरः किसलयरागः कोमलविट-पानुकारिणौ बाहू । कुसुमिव लोभनीयं यौवनमङ्गेषु सन्नद्धम्' (शा० १-२१) । वल्क-लावृता शकुन्तला शैवलावृतं कमलमिव, लक्ष्मान्वितः सुधांशुरिवाशोभत । 'सरसिजमनु-विद्धं शैवलेनापि रम्यम्०' (शा० १-२०)। वृक्षादिसंबद्धाश्चान्या उपमाः—पार्वती ल्रतेवासीत् , 'पर्याप्तपुष्पस्तबकावनम्रा संचारिणी प्छविनी ल्रतेव' । (कुमार० ३-५४) । शकुन्तला माधवीलतेवाशुष्यत् , 'पत्राणामिव शोषणेन मस्ता सृष्टा लता माधवी' (शा० ३-७)। गर्भवती शकुन्तला शमीवाभवत्। 'अवेहि तनयां ब्रह्मन्निगर्भी शमीमिव' (शा० ४-४)। सीता रुतेव भूमौ पपात। 'स्वमूर्तिलाभप्रकृतिं घरित्रीं लतेव सीता सहसा जगाम' (रघु० १४-५४)। (घ) पुष्पसंबद्धाः—खिन्ना यक्षपत्नी साभ्रे दिवसे स्थलकमल्टि-नीव म्लानाऽभृत्। 'साभ्रेऽह्रीव। स्थलकमिलनीं न प्रबुद्धां न सुप्ताम् (मे० २-३०), मृगः पुष्पराशिरिवास्ते, न च वथ्यः । 'न खलु मृदुनि मृगशरीरे पुष्पराशाविवाग्निः' (शा० १-१०)। पुष्पसंबद्धाश्चान्या उपमाः—'पदं सहेत भ्रमरस्य पेलवं, शिरीषपुष्पं न पुनः पतित्रणः' (कु॰ ५-४)। 'न षट्पदश्रेणिभिरेव पङ्कलं सशैवलासङ्गमपि प्रकाशते' (कु॰ ५-९)। रघुरतीव जनप्रियोऽभृत्। 'फलेन सहकारस्य पुष्पोद्गम इव प्रजाः' (रघु० ४-९)। शकुन्तलायाः शरीरं कुसुममिवासीत्। 'वपुरिमनवमस्याः पुष्यति स्वां न शोभां, कुसुममिव पिनद्धं पाण्डुपत्रोदरेण' (शा० १-१९) । शकुन्तला नवमालिका-कुसुमिमवाभूत् । 'अर्कस्योपरि शिथिलं च्युतिमिव नवमालिकाकुसुमम्' । (शा॰ २-८)। शकुन्तलाऽनाघातं पुष्पमि<mark>वासीत्। '</mark>अनाघातं पुष्पं किसल्यमॡनं कररुहैंः' (शा० २-१०) । 'स्रजमिप शिरस्यन्धः क्षिप्तां धुनोत्यहिशङ्कया' (शा० ७-२४)। 'अपसृतपाण्डुपत्रा मुख्य-न्त्यश्रूणीव लताः' (शा० ४-१२)। जातां मन्ये शिशिरमिथतां पिश्चनीं वान्यरूपाम्। (मेघ० २-२०)। स्थानाभावादन्या उपमाः संकेतमात्रमुपस्थाप्यन्ते। (ङ) पशु-संबद्धाः—रेवा गजशरीरे भूतिरिवास्ति । 'रेवां द्रक्ष्यस्युपलविषमे विन्ध्यपादे विशीर्णो, मक्तिच्छेदैरिव विरचितां भूतिमङ्गे गजस्य' (मेघ० १-१९)। 'पत्रस्यामा दिनकरहयस्प-र्घिनो यत्र वाहाः, शैलोदग्रास्त्वमिव करिणो वृष्टिमन्तः प्रभेदात्' (मेघ० २-१३)। दुष्यन्तो गज इवासीत्। 'यूथानि संचार्य रिवप्रतप्तः, शीतं दिवा स्थानमिव द्विपेन्द्रः' (शा० ५-५)। 'अरुन्तदमिवालानमिनवाणस्य दन्तिनः' (रघ० १-७१), 'जुगोप गारू-CC-O Dr. Randey Tripathi Collection at अस्तिमिद्धावस्था हाम्यविद्धावस्य विद्धावस्य विद्यावस्य विद्यावस्य विद्धावस्य विद्यावस्य स्थावस्य विद्यावस्य स्थावस्य विद्यावस्य स्थावस्य स्यावस्य स्थावस्य स्थावस्य स्थावस्य स्थावस्य स्थावस्य स्थावस्य स्था

ऐरावत इवासीत् । 'सुरगज इव दन्तैर्भग्नदैत्यासिधारैः'। (रघु० १०-८६)। (च) नद्यादि-संबद्धाः—प्रयागे संगमवर्णनम् । 'क्वचित् प्रभालेपिभिरिन्द्रनीलैर्मुक्तामयी यष्टिरिवानुविद्धा । अन्यत्र माला सितपङ्कजानामिन्दीवरैकत्लचितान्तरेव ॥ क्वचित्प्रभा चान्द्रमसी तमो-भिक्छायाविलीनैः शबलीकृतेव। अन्यत्र शुभ्रा शरदभ्रेलेखा रन्ध्रेष्विवालक्ष्यन्भः-प्रदेशा ॥ (रष्टु॰ १३-५४, ५६) । दिलीपः सागर इवासीत् । अधृष्यश्चाभिगम्यश्च यादोरत्नैरिवार्णवः। (रघु॰ १-१६)। क्षणमात्रमृषिस्तस्थौ सुप्तमीन इव हदः। (रघु० १-७३) । लिपेर्यथावद् ग्रहणेन वाङ्मयं नदीमुखेनेव समुद्रमाविशन् । (रघु० ३-२८)। बभौ हरजटाभ्रष्टां गङ्गामिव भगीरथः। (रघु ० ४-३२)। तमेव चतुरन्तेशं रत्नैरिव महार्णवाः। (रघु० १०-८५)। (छ) पर्वतादिसंबद्धाः — पाण्ड्योऽयमंसापितलम्बहारः ' सिनर्झरोद्गार इवाद्रिराजः। (रघु॰ ६-६०)। स्थितः सर्वोन्नतेनोर्वी क्रान्त्वा मेरुरिवात्मना। (रघु० १-१४) । प्रकाशश्चापकाशश्च लोकालोक इवाचलः । (रघु० १-६८) । अधित्यकाया-मिव घातुमय्यां लोध्रद्रमं सानुमतः प्रफुल्लम् । (रघु० २-२९) । शङ्कारपृष्टा इव जल्मुच-स्त्वादृशा जालमार्गैः (मेघ० २-८)। त्वत्संपर्कात् पुलकितमिव प्रौढपुष्पैः कदम्त्रैः (मेघ० १-२५)। (ज) पृथ्वीसंबद्धाः -- ऊषस्यमिन्छामि तवोपभोक्तुं षष्ठांशमुर्व्या इव रक्षितायाः। (रघु० २-६६)। कल्पिष्यमाणा महते फलाय वसुन्धरा काल इवोसबीजा। (शा० ६-२४)। (झ) यु संबद्धाः -- अथ नयनसमुत्थं ज्योतिरत्रेरिव द्यौः, सुरसरिदिव तेजो वह्निनिष्युतमैशम् । (रष्ठु० २-७५) । (अ) वायुसंबद्धाः—र० ४-८, १०-८२ । (ट) अग्निसंबद्धाः-र॰ ११-८१; शा० ५-१०। (ठ) मासदिनादिसंबद्धाः-र० ११-७, १०-८३, २-२०। (ड) वर्षादिसबद्धाः — कु० ४-३९, ५-६१; र० १-३६, ४-६१; शा० ३-९, ३-२४। (ढ) खगादिसंबद्धाः—र० ४-६३, १४-६८।

(४) विविधविषयसम्बद्धाः—(क) देवसंबद्धाः—अथैनमद्रेस्तनया शुशोच, सेनान्यमालीदिमवासुराह्नैः। (रघु० २-३७)। जडीकृतस्त्र्यम्बकवीक्षणेन, वज्रं मुमुक्षन्निव वज्रपाणिः। (रघु० २-४२)। (क्त) पुरुषसंबद्धाः—तेन श्यामं वपुरिततरां कान्तिमापत्स्यते ते, वर्हेणेव स्फुरितरुचिना गोपवेषस्य विष्णोः। (मेघ० १-१५)। शिप्रावातः प्रियतम इव प्रार्थनाचाटुकारः। (मेघ० १-३२)। धारापातैस्त्वमिव कमलान्यभ्यवर्षन् मुखानि। (मेघ० १-५१)। अंसन्यस्ते सित इलभृतो मेचकेवाससीव। (मेघ० १-६२)। प्रांशुलभ्ये फले लोभादुद्बाहुरिव वामनः। (रघु० १-३)। (ग) स्त्रीसंबद्धाः—मुक्ताजालप्रथित-मलकं कामिनीवाभवृन्दम्। (मेघ० १-६६)। अवाकिरन् बाल्लताः प्रस्तै। प्राप्तिः प्रस्ते। अवाकिरन् बाल्लताः प्रस्तै। प्रस्ते। प्रस्ते। प्रस्ते। प्रस्ते। प्रस्ते। प्रस्ते। प्रमुक्तिः प्रस्ते। प्रस्

७. भारवेरर्थगौरवम्

महाकविर्मारविः पष्ट्यां शताब्द्यामीसवीयाब्दस्य जिनमापेति ६३४ ईसवीये लिखितेन 'ऐहोल'—शिलालेखेन निविवादं निर्णीयते । तथा चोदीर्यते रिवकीर्तिना, 'येनायोजि नवेऽदमस्थिरमर्थविषौ विवेकिना जिनवेदम । स विजयतां रिवकीर्तिः किविताश्रितकालिदासभारिवकीर्तिः' । अवन्तिसुन्दरीक्यामनुस्त्य निर्णीयते यत् किविवरोऽयं दाश्चिणात्यः, पुलकेशिद्वितीयस्यानुजस्य विष्णुवर्षनस्य सदसः किववर इति । भारिवर्नाम किववरोऽयं गीर्वाणिगिरो गगने भा रवेरिव चकास्ति । समिष्यतमनेनानुपमं यशः स्वकीयेनार्थगौरवसमन्वितेन किरातार्जुनीयनामधेयेन महाकाव्येन । महाकाव्यमेतस्य गुणत्रयेण माधुर्येण प्रसादेनोजसा च परिपूर्णम् । किववरोऽयं न केवलमासीद् व्याकरणपारक्षतोऽपि तु नीतिशास्त्रेऽलंकारशास्त्रेऽपि महद् वैचक्षण्यं समासादयत् । कृतिरियं तस्यार्थभारभिरतिति दर्शे-दर्शे विपश्चिद्धः 'भारवेर्थगौरवम्' इति सादरमुदीर्यते । महाकाव्यस्यैतस्य टीकाकृत् श्रीमिष्ठिनायः काव्यमेतत् नारिकेल्फलेनोपिममीते । अभिषत्ते च—'नारिकेल्फलसंमितं वचो मारवेः सपिद तिद्वभज्यते । स्वादयन्तु रसगर्भनिर्भरं सारमस्य रिका यथेप्सितम्' ।

भारवेः कीर्तिर्महाकाव्यं किरातार्जुनीममवलम्ब्यैव वरीवर्ति । प्रन्थरत्नमेतदेकमेव तस्योपलभ्यते । प्रशस्तैः स्वीयैर्गुणैर्महाकाव्यमेतत् संस्कृतसाहित्ये प्रमुखं स्थानमाश्रयते । संस्कृतमहाकाव्येषु बृहत्त्रय्यामन्यतमं गण्यते । वृहत्त्रय्यामितरे स्तः-मार्घावरचितं शिशु-पालवधं, श्रीहर्षप्रणीतं नैषधीयचरितं च। समग्रेऽपि संस्कृतसाहित्ये नैतादशमोबोगुणसमन्वितं कान्यान्तरम् । अष्टादशात्र सर्गाः । किरातवेषधारिणा शिवेन सहार्जुनस्य संगरोऽत्र वर्ण्यते । वीररसोऽत्र प्रघानः, रसाश्चान्ये गौणाः । श्रीसमन्वितं काव्यमेतदिति संसूचनाय 'श्री'शब्देन महाकाव्यमारमते, प्रतिसर्गान्ते च 'लक्ष्मी'-शब्दं प्रयुङ्क्ते। तद्यथा-'श्रियः कुरूणामघिपस्य पालनीम्०' (१-१), 'दिनकृतमिव लक्ष्मीस्त्वां समम्येतु भूयः' (१-४६)। न केवलमर्थगौरवान्वितपदप्रयोग एव निष्णातोऽयम्, अपि तु प्रकृतिवर्णने विविधा-लंकारप्रयोगे चित्रालंकारप्रयोगे व्याकरण-काव्यशास्त्र-नीतिशास्त्र-कामशास्त्रादिपाण्डित्य-प्रदर्शनेऽप्यनुपम एवायम् । शतशः सन्ति स्किमुक्ताः प्रकृतिवर्णनादिवैदग्ध्यप्रतिपादिकाः । शरद्वर्णनं यथा — तुतोष पश्यन् कलमस्य सोऽिषकं, सवारिजे वारिणि रामणीयकम्। सुदुर्रुमे नाईति कोऽभिनन्दितुं, प्रकर्षत्रस्मीमनुरूपसंगमे। (४-४)। चित्रालंकारप्रदर्शनं यथा—एकाक्षरात्मकः स्लोकः-'न नोननुन्नो नुन्नोनो नाना नानानना ननु । नुन्नोऽनुन्नो ननुन्नेनो नानेना नुन्ननुन्ननुत्' (१'५-१४)। सर्वतोमद्रप्रयोगो यथा-'देवाकानिनि कावादे. वाहिकास्वस्वकाहि वा। काकारेभमरे काका निस्वभव्यव्यमस्वनि' (१५-२५)। विभिन्नचतुरर्थकबोधकपदप्रयोगो यथा—'विकाशमीयुर्जगतीशमार्गणा,विकाशमीयुर्जगतीशcc-o. मार्गणाः । विकाशमीयुर्जगतीशमार्मणा, विकाशमीयुर्जगतीशमार्गणाः' (१५-५२) । जल-Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhapta e Garyatti Gyatelligsha कीडावर्णनं यथा—'करो धुनाना नवपछवाकृती, प्यस्यगार्घ किले जातसभूमां Gyatelligsha निर्वाच्यमधार्ष्ट्यंदूषितं, प्रियाङ्गसंद्रहेषमवाप मानिनी । (८-४८) । 'विहस्य पाणौ विधृते धृताम्भिस, प्रियेण वध्वा मदनार्द्रचेतसः । सखीव काञ्ची पयसा घनीकृता, वभार वीतो-चयवन्धमंशुकम्' (८-५१) ।

कि नामार्थगौरवम् ? कथं चैतंदुपकरोति महाकाव्यस्य ? कथं च गुणेनैतेनानुत्तमं यशो भारवेः ? इत्येतदत्र विवच्यते । अर्थगौरवं नाम भावगाम्भीर्ये सन्द्रावभूषाभूषितत्वं च । भावमूलकत्वाद् महाकाव्यस्य, भावभृषया च काव्यगौरवस्य समिभवृद्धेरर्थगौरवं महदुपकारि महाकाव्यस्य । पदे-पदे समुपलभ्यन्ते महाकाव्येऽस्मिन् अर्थभारभिरता
विविधविषयकाः स्त्तयः । अनुमीयते चैतेन भारवेर्वेदुष्यम् । शतशोऽत्र स्तिमुक्ताः
समुपलभ्यन्ते । तासां दिङ्मात्रमिह प्रस्त्यते ।

अर्थगौरवस्य महत्त्वमुदीरयता भारविनैव सम्यक् प्रतिपाद्यते यत्तरय काव्ये सर्वत्र स्फुटताऽर्थगौरवं भावसांकर्याभावः सामर्थ्यं च प्राप्स्यते। यथोच्यते—स्फुटता न पदैरपाद्यता, न च न स्वीकृतमर्थगौरवम्। रचिता पृथगर्थता गिरां, न च सामर्थमपोहितं क्षचित्। (किराता० २-२७)। सा चैतादृशी भावगाम्भीर्यभिरिता भारती सततकृतपुण्यकर्मभिरेव प्रवर्तते, नान्यथा। 'प्रवर्तते नाकृतपुण्यकर्मणा प्रसन्नगम्भीरपदा सरस्वती' (कि० १४-३)। कि नाम वाग्मित्वम्, कथं च सम्येषु ते विशेषत आद्रियन्ते, इति विवेचयता तेन साधु प्रतिपाद्यते यन्मनोगतस्य गभीरस्यार्थस्य परिष्कृतया प्राञ्जलया च वाचा प्रकाशनेन वाग्मित्वं समासाद्यते। 'भवन्ति ते सम्यतमा विपश्चितां, मनोगतं वाचि निवेशयन्ति ये। नयन्ति तेष्वप्युपपन्ननेपुणा गभीरमर्थे कतिचित्यकाशताम्'। (कि० १४-४)। भाषणेऽपि च केचनार्थगौरवमाद्रियन्ते, केचन भाषासौष्ठवमपरे माधुर्यमन्ये भावप्रकाशनशैलीम्, इति महति विरोधे वर्तमाने सर्वमनःप्रसादिनी गीः सुदुर्लमा। अतस्तेनोक्तम्—'सुदुर्लभाः सर्वमनोरमा गिरः' (१४-५)। विदुषां कीदृशः स्वभाव इति विवेचयन्नाह विद्वांसो गुणग्रहणे धृतिधयो भवन्ति। 'गुणग्रह्या वचने विपश्चितः' (२-५)। विद्वांसो हि परेङ्गितज्ञा भवन्ति। इङ्गितज्ञश्च न विषीदिति काले। 'न हीङ्गितज्ञोऽवसरे-ऽवसीदिते' (४-२०)।

प्रेमणो गौरवं प्रतिपादयता तेनोच्यते—'वसन्ति हि प्रेमिण गुणा न वस्तुनि' (८-३७)। स्नेहप्राचुर्यमेव गुणानां निंधानं, न वस्तुसौन्दर्यमात्रम्। प्रेमी सदैव प्रियस्या-निध्वारणाय यतते चिन्तयित च। तदाह—'प्रेम पश्यित भयान्यपदेऽपि' (९-७०)। मित्रलामश्च लामोऽपूर्वः। तदाचष्टे—'मित्रलाभमनु लामसम्पदः' (१३-५२)। विनयः सुशीळता च किमित्युररीकरणीयेति प्रतिपादयन्नाह विनयेनैव योगिनो मुक्ति समिष-गच्छिन्त । 'योगिनां परिणमन् विमुक्तये, केन नास्तु विनयः सतां प्रियः' (१३-४४),

cc-र्ठ छिन्दे स्ट्रिंगते हिलान्स्। (१ के-४३) (६८ एक्नो किलान्स् इत्र विधानस्थान्त्र क्रियानिक्। क्षणां क्रुवे जी Kosha देनो स्वतं चेदो मावा एव हितैषणं रिपुं वा प्रकटयन्ति । 'विमलं कलुषी भवच चेदः, कथयत्येव हितैषिणं रिपुं वा' (१३-६)। अविज्ञातमिष प्रियमिष्टं वा प्रेक्ष्य जनस्य हृदयं प्रसीदति । 'अविज्ञातेर्ऽाप बन्धौ हि बलात् प्रह्लादते मनः' (११-८)।

भौतिकविषयाणां स्वरूपविचारे साधु तेन प्रतिपाद्यते यद् विषयाः परिणामे दुःखदाः । 'आपातरभ्या विषयाः पर्यन्तपरितापिनः' (११-१२) । अतएवकामानां हैयत्वं प्रतिपादयित । तेषां स्वरूपं च विष्रणोति । 'श्रद्धेया विप्रलब्धारः, प्रिया विप्रियकारिणः । सुदुस्त्यजास्त्यजन्तोऽपि कामाः कष्टा हि शत्रवः' (११-३५) । भोगा भुजङ्गफणसद्दशाः, भोगप्रवृत्तस्य च विषदवाप्तिः सुनिश्चिता । 'भोगान् भोगानिवाहेयान्, अध्यास्यापन्न दुर्लभा' (११-२१) । अतो विषयान् विहाय गुणार्जने मनो निधेयम् । 'सुलभा रम्यता लोके दुर्लभं हि गुणार्जनम्' (११-११) । गुणैरेव गौरवं प्राप्यते । 'गुरुतां नयन्ति हि गुणा न संहतिः' (१२-१०) । गुणैरेव प्रियत्वं प्राप्यते, न तु परिचयमात्रेण । 'गुणाः प्रियत्वेऽधिकृता न संस्तवः' (४-२५) । गुणैरेव सर्वे जगद् वशीकर्त्वे पार्यते । 'कमिवेशते रमियतुं न गुणाः' (६-२४) ।

स्वाभिमानस्य महत्त्वं प्रतिपादयता साध्वभिषीयते तेन यत्स्वाभिमानरिहतस्तृण-वदगण्यः। 'जिन्मनो मानहीनस्य तृणस्य च समा गितः' (११-५९)। निह तेजिस्वनं कृशानुवद् भान्तं कश्चिद्वज्ञातुमहित। 'ज्विल्तं न हिरण्यरेतसं चयमास्कन्दित महमनां जनः' (२-२०)। पुरुषः स एव यो मानेन जीवित। 'पुरुषस्तावदेवासौ यावन्मानान्न हीयते' (११-६१)। मनिस्वना यदेवेप्स्यते तदेवाधिगम्यते। 'किमिवास्ति यन्न सुकरं मनिस्विभिः' (१२-६)। नीतिविषयकान्यनेकानि सुभाषितान्युपल्भ्यन्ते। तान्यतिस्कृष्म-तयोल्लिख्यन्ते। तानि च यथायथं विवेक्तव्यानि। 'हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः' (१-४)। सद्भिरेव मैत्रीं विरोधं च दुर्वीत, नासिद्धः। 'समुन्नयन् भृतिमनार्यसंगमाद्, वरं विरोधोऽपि समं महात्मिः' (१-८)। न बलीयसा युध्येत। 'अहा दुरन्ता बल्वद्-विरोधिता' (१-२३)। अवन्ध्यकोपस्योदारसन्त्वस्येव च सर्वत्रादरो भवित। 'अवन्ध्य-कोपस्य विहन्तुरापदां, भवन्ति वश्याः स्वयमेव देहिनः। अमर्षश्चन्येन जनस्य जन्तुना, न जातहादेन न विद्विषादरः। (१-३३)। सदा विचार्येव कर्मणि प्रवितितव्यम्, न सहसा कृतिमनुतिष्ठेत्। 'सहसा विद्धीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्। वृणुते हिं विमृश्यकारिणं, गुणलुङ्धाः स्वयमेव संपदः। (२-३०)।

एवं राजनीतिनिषयका बह्वोऽत्र सक्तयः समुपलभ्यन्ते । शठे शाठ्यमेवान्तरेत् । 'बजन्ति ते मूढिधियः पराभवं, भवन्ति मायानिषु ये न मायिनः' (१-३०) । युद्धे जय-

CC-O श्री र स्विपशा सिम्भिमं द्रियस्त tipn कंप्रकर्मसा स्काप विद्या र स्वाप स

परमं कर्तव्यम् । 'परमं लाभमराविभङ्गमाहुः' (१३-१२) । नोत्कृष्टेन सह विग्रहो नयसंमतः । 'प्रार्थनाऽधिकबले विगत्सत्यः' (१३-६१) । विक्रमार्जितसत्त्वस्य न कोऽपि दोषः । 'न दूषितः शक्तिमतां स्वयंग्रहः' (१४-२०) । नीतिमृत्मृज्ञतो नृपस्य न प्रजा प्रसीदिति । 'नयहीनादपर्ज्यते जनः' (२-४९) । नृपस्यामात्यानां च सांमनस्यमेव श्रेयसे भवति । 'सदाऽनुकृलेषु हि कुर्वते रित, नृपेष्वमात्येषु च सर्वसम्पदः' (१-५) । राज्ञां कृते शममार्गो न शोभनः । 'व्रजन्ति शत्रृनवधूय निःस्पृहाः, शमेन सिद्धि मुनयो न भूभृतः' (१-४२)।

कानिचिदन्यानि हुग्रानि सुक्तानि प्रस्तूयन्तेऽत्र तानि यथायथं निवेच्यानि। स्वपौरुषं परममालम्बनम् । 'विनिपातनिवर्तनक्षमं, मतमालम्बनमात्मधौरुषम्' (२-१३)। महीयांसो न परकृपाजीविनः । 'लघयन् खलु तेजसा जगन्न महानिच्छति भृतिमन्यतः' (२-१८)। मानिनं श्रीः स्वयमनुगन्छति। 'अभिमानघनस्य गत्वरैरसुभिः स्यास्न यराश्चिचीषतः । अचिरांशुविलासचञ्चला, ननु लक्ष्मीः पलमानुषङ्गिकम्' (२-१९)। महान् नान्यसमुन्नति सहते । 'प्रकृतिः खलु सा महीयसः, सहते नान्यसमुन्नति यया' (२-२१)। सन्द्रावाविर्भावाय क्रोघोऽपनेयः। 'अविभिद्य निशाकृतं तमः, प्रभया नांग्रुमताऽप्युदीयते' (२-३६) । अन्तिनिद्रयैः श्रियो न रक्षितुं शक्यन्ते । 'शरदभ्रचला-श्रलेन्द्रियेरसुरक्षा हि बहुच्छलाः श्रियः' (२-३९)। दुर्जनसंगतिः सदैव दोषाय। 'असाधुयोगा हि जयान्तरायाः, प्रमाथिनीनां विपदां पदानि' (३-१४)। खलाः साधुष्वपि दोषदर्शिनः । 'मात्सर्यरागोपहतात्मनां हि, स्वलन्ति साधुष्वपि मानसानि' (३-५३)। सत्यवसरे भाषणं शोमते। 'मुखरताऽवसरे हि विराजते' (५-१६)। स्वभावसुन्दरं वस्तु न कृत्रिमतामपेक्षते ।' 'न रम्यमाहार्यमपेक्षते गुणम्' (४-२३)। सविघ्नैव सुखावाप्तिः । 'श्रेयांसि लब्धुमसुखानि विनाऽन्तरायैः' (५-४९) । मित्रवियोगो दु:सहः। 'संघत्ते भृशमरति हि सद्वियोगः' (५-५१)। मनस्विनो न खिद्यन्ते। 'किमिनावसादकरमात्मवताम्' (६-१९)। सुन्दरं वस्तु विकृतमपि शोभते। 'रम्याणां विकृतिरिप श्रिय तनोति' (७-५) । लक्ष्मीः परोपकारार्थमेव भवति । 'सा लक्ष्मीरुपकुरुते यया परेषाम्' (७-२८) । सर्वोऽपि निर्वाधं वस्तुकामः । 'वस्तुमच्छिति निरापिद सर्वः' (९-१६)। कामः सदा नामः। 'नाम एव सुरतेष्विप कामः' (९-४९)। भवति योग्येषु पक्षपातः । 'मर्वान्त भन्येषु हि पक्षपाताः' (३-१२) । न मानिनो धनवन्तः । 'न मानिता चास्ति भवन्ति च श्रियः। (१४-१३)। न गना गोमायुसस्ताः। 'भवन्ति गोमायुसला न दन्तिनः' (१४-२२) । लोके गुणार्जनं दुष्करम् । 'सुलभा रम्यता लोके, दुर्लमं हि गुणार्जनम्' (११-११)।

CC-O. D**ए क**ं अपितार समितार वस्ति स्वापन क्षिप्र के प्रति स्वापन क्षिप्र के प्रति स्वापन क्षिप्र का Gyaan Kosha

८. दण्डिनः पदलालित्यम्

महाकवेर्द ण्डिनो जनिकालविषये सन्ति बहवो विप्रतिपत्तयः । समासतः पक्षद्वयं मुख्यत्वेनाङ्गीक्रियते । केचनेसवीयाब्दस्य षष्ठशताब्द्या अन्तिमे चरणेऽस्य जनिमुरीकुर्वन्त्यन्ये च सप्तमशताब्द्या उत्तरार्घे । राजशेखरेण कविरसौ प्रवन्धत्रयस्य प्रणेतेति प्रतिपाद्यते । विषयेऽस्मित्रपि प्रचुरो विवादः । काव्यादर्शो दशकुमारचरितं चेति प्रन्थद्वयं तु सर्वेरेव स्वीक्रियते दण्डिनः कृतित्वेन । अवन्तिसुन्दरीकथेति खण्डश उपलब्धा वृतिस्तृतीयेति मन्यते मनीषिभिः कैश्चित् ।

दशकुमारचिरतमाश्रित्यैवास्य महती महनीयतेति नात्र विप्रतिपत्तिविदुषाम् । गद्यकाव्यस्यैतस्य गौरवं पदलाहित्यं च प्रेक्षं प्रेक्षं प्रेक्षावतां प्राप्यन्ते प्रभूतानि प्रचुरप्रशस्ति-पूर्णानि पद्यानि । 'कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः' । केचन वाल्मीकेव्यांसस्य चानन्तरं दण्डिनमेव महाकवित्येनाकलयन्ति । 'जाते जगति वाल्मीको कविरित्यभिधा- प्रभवत् । कवी इति ततो व्यासे कवयस्त्वियदण्डिनि'। मथुराविजयमहाकाव्यस्य रचित्री गङ्गादेवी (१३८० ई०) तु दण्डिनो वाचं सरस्वत्या मणिदर्पणमेव मनुते । 'आचार्य-दण्डिनो वाचामाचान्तामृतसम्पदाम् । विकासो वेधसः पत्त्या विलासमण्वद्पेणम्'।

कि नाम पदलालित्यम् १ कथं चैतेन काव्यस्य महत्त्वसिमवर्धते १ सुप्तिङन्तं पदिमिति सुवन्तं तिङन्तं वा पदिमित्यभिधीयते । लिलतस्य भावो लालित्यं माधुर्यभिति । यत्र पदेषु वाक्येषु शब्दसंघटनायां वा माधुर्थं श्रुतिसुखदत्वं वा समुपलभ्यते, तत्र पद-लालित्यमिति मन्यते । पदलालित्यं शब्दसंष्ठवं चावर्जयित सचेतसां चेतांसीति गुणोऽयं गरिमान तनुते काव्यस्य । दशकुमारचिरते दृश्यते गुणस्यैतस्य गौरवम् । तच्चेह समासतो व्याचिख्यासितम् ।

मृद्वीकारसभारमिरितेव भारती दण्डिन आचार्यस्य । सुधीभिरास्वादनीयं समीक्ष-णीयं चैतस्या माधुर्यम् । राजहंसस्येव राज्ञो राजहंसस्य सुषमां समवलोकयन्तु सन्तः । "अनवरतयागदक्षिणारिक्षतिशिष्टविशिष्टविद्यासंभारभासुरभूसुरिनकरः," राजहंसो नाम धनदर्पकन्दर्पसौन्दर्यसोदर्यहृद्यनिरवद्यरूपो भूपो बभूव" (पूर्वपीठिका उच्छ्वास १) । राज-हंसस्य महिषी वसुमती ललनाकुलललामभूताऽभूत् । 'तस्य वसुमती नाम सुमती लीलावती कुलशेखरमणी रमणी बभूव" (पू॰ उ॰ १) । मालवेश्वरस्य प्रस्थानवर्णनं कुर्वताऽभिधीयते तेन—'मालवनाथोऽप्यनेकानेकपयूथसनाथो विग्रहः सविग्रह इव साग्रहोऽभिमुखीभ्य भूयो निर्जगाम" (पू॰ उ० १) । राजहस्य मालवराजचम् खसैन्यसिहतोऽवारुणत् । 'राज-हंसस्त प्रशस्तवीतदैन्यसैन्यसमेतस्तीत्रगत्या निर्गत्याधिकरुषं द्विषं रुरोध' (पू॰ उ० १) ।

विजयार्थे प्रस्थातुकामानां कुमाराणां यमकालंकारालंकृतं वर्णनमदो दण्डिनो वाग्वैभवमेवाविर्भावयति । 'कुमारा माराभिरामा रामाद्यपौरुषा रुषा भस्मीकृतारयो रुयोपह्मित्तसमीरणा त्रणाभियानेन चानेनाभ्यत्साक्षेत्रहर्माक्षेत्रहर्म्भाति प्रकृतिक्षेत्रात्रहर्मा श्रीविष्म (एडकान्द्रिक्षात्र) yalan Kosha एटेन्ट्रजालिककृतेन्द्रजालप्रदर्शनरूपेण फणिनां वर्णनमेतत्—'तदनु विषमं विषमुख्वणं वमन्तः फणालंकरणा रत्नराजिनीराजितराजमन्दिराभोगा भोगिनो भयं जनयन्तो निश्चेरुः? (पू० उ० ५)।

आस्तरणमधिशयानाया राजकन्याया वर्णनमेतद् दण्डिनः स्क्ष्मेक्षिकयेक्षणं वर्णन-वैदग्ध्यं चाविष्करोति । 'अवगाह्य कन्यान्तःपुरं प्रव्वल्रस् मणिप्रदीपेषु' 'कुसुमलवन्छुरित-पर्यन्ते पर्यकतले' 'ईषिद्ववृतमधुरगुल्मसंधि, आभुग्नश्रोणिमण्डलम्, अतिक्ष्टिचीनांशु-कान्तरीयम्, अनिविल्लितनुतरोदरम्, अर्धलक्ष्याधरकर्णपाश्चनिभृतकुण्डलम्, आमी-लितलोचनेन्दीवरम्, अविभ्रान्तभूपताकम्' 'चिरविल्सनखेदनिश्चलां शरदम्भोधरोत्सङ्ग-शायिनीमिव सौदामिनीं राजकन्यामपस्यत्।' (उत्तर० उ० २)।

राज्ञो धर्मवर्धनस्य दुहितरमुप्तवर्णयति । 'तस्य दुहिता प्रत्यादेश इव श्रियः, प्राणा इव कुसुमधन्वनः, सौकुमार्थविडम्बितनवमालिका, नवमालिका नाम कन्यका।' (उ० उ० ५)। गिरिवरं च वर्णयन्नाह—'अहो रमणीयोऽयं पर्वतनितम्बभागः, कान्त-तरेयं गन्धपाषाणवत्युपत्यका, शिशिरमिदमिन्दीवरारविन्दमकरन्दविन्दु चन्द्रकोत्तरं गोत्र-वारि, रम्योऽयमनेकवर्णकुसुममञ्जरीभरस्तरवनाभोगः।'

उत्तरपीठिकायां समग्रः सप्तमोच्छ्वास ओष्ठ्यवर्णरहितः। एतादृशं नियन्धनमपूर्वमदृष्ट्यरं च विशालेऽपि विश्ववाङ्मये। ओष्ठ्यवर्णपिरहारेऽपि न परिहीयतेऽत्र शब्दसौष्ठवं पदलालित्यं च। यथा—'आर्य, कदर्यस्यास्य कदर्थनात्र कदाचित्रिद्रायाति नेत्रे।'
'सस्ते, सैषा सज्जनाचरिता सरिणः, यदणीयसि कारणेऽनणीयानादरः संदृश्यते'। 'असत्येन
नास्यास्यं संस्र्ज्यते'। 'चिरं चरितार्था दीक्षा'। 'न तस्य शक्यं शक्तेरियत्ताज्ञानम्'।
'दिष्ट्या दृष्टेष्टसिद्धः। इह जगित हि न निरीहदेहिनं श्रियः संश्रयन्ते। श्रेयांसि च
सकलान्यनलसानां हस्ते संनिहितानि।''असिद्धिरेषा सिद्धः, यदसन्निधिरिहार्याणाम्। कृष्टा
चेयं निःसङ्गता, या निरागसं दासजनं त्याजयति। न च निषेधनीया गरीयसां गिरः।
'तच्छरीरं छिद्रे निधाय नीरानिरयासिषम्'। 'दृश्यतां शक्तिराषीं, यत्तस्य यतेरजेयस्येन्द्रयाणां संस्कारेण नीरजसा नीरजसांनिध्यशालिनि सहर्षालिनि सरसि सरसिजदलसंनिकाशच्छायस्याधिकतरदर्शनीयस्याकारान्तरस्य सिद्धिरासीत्।' 'बहुश्रुते विश्रुते विकचराजीवसदृशं दृशं चिश्रेप देवो राजवाहनः'। (उत्तर० उ० ७)।

'न मां रिनग्धं पश्यित, न स्मितपूर्वं भाषते, न रहस्यानि विवृणोति, न हस्ते स्पृश्यित, न व्यसनेष्वनुकम्पते, नोत्सवेष्वनुग्रह्णातिः।' मृगयालाभांश्च निर्दिशित । शाकुन्तले द्वितीयाङ्के विणितेन मृगयालाभेन साम्यमेतद्भजते । 'यथा मृगया ह्यौपकारिकी, न तथान्यत् । मेदोऽपक्षपांदङ्गानां स्थैर्यकार्कश्यातिलाघवादीनि, शीतोष्णवातवर्षक्षुत्-पिपासासहत्वम्, सत्त्वानामवस्थान्तरेषु चित्तचेष्टितज्ञानम्।' (उ० उ० ८)।

एवं संलक्ष्यते दण्डिनः कृतौ शब्दयोजनसौष्ठवमनुपासमाधुर्ये यमक्योजनं वर्णन-CC-O वैश्वानमाधुर्वे प्राप्तिकार्ण (Solection at Sarai(CSDS). Digitized By Sidonanta eGangotri Gyaan Kosha प्रदेश कृतौ क्रमनीयतामाद्धाति । मदस्तस्य कृतौ कमनीयतामाद्धाति ।

९. माघे सन्ति त्रयो गुणाः

साधस्य कवित्वस् महाकविर्माधः सुरगवी-काव्याकाशे विद्योतमानं स्व-प्रमोनिरस्तान्यतेजःप्रसरम् अनुपमं नक्षत्रम्। तस्यापूर्वा कान्तिः समप्रमपि वाद्ययं रोचयतितमाम्। तस्य विविधशास्त्रावगाहिनी स्कृमेक्षिका प्रतिभा सुस्कृमेषि तथ्यम् आत्मसात्कृत्वा पुरः स्पुरदिव प्रस्तौति। कविरयं न वेवलं काव्यशास्त्रस्यैव पारदक्षा, अपि तु व्याकरणशास्त्रस्य, राजनीतेः, अर्थशास्त्रस्य, धर्मशास्त्रस्य, कामशास्त्रस्य, दर्शनानाम्, ज्योतिषस्य, संगीतस्य, पाकशास्त्रस्य, हस्तिविद्यायाः, अश्वशास्त्रस्य, पुराणादीनां च सारविदनुपमो मनीपी। अस्य चमत्कृतिकरं पाण्डित्यं प्रेक्षं प्रक्षां-वन्तोऽस्य कवित्वं प्रशंसन्ति।

साधस्य गौरचम् —केचन माधस्य किवत्वं तथाऽऽह्लादकरं मन्वते यत्ते तदर्थं स्वजीवनसमर्पणमिष सुन्दरं मन्यते । अतएव साधूच्यते—'मेघे माघे गतं वयः' अर्थात् मेघदूतस्य शिशुपाटवधस्य चानुशीलने आयुर्व्यतीतम् । काव्येऽस्मिन् तस्य विशालं शब्द-कोशमुद्वीक्ष्य केनापि निगद्यते—'नवसर्गगते माघे नवशब्दो न विद्यते' अर्थात् शिशुपाटवधस्य नवसर्गाणां समाप्तौ न नवीनः शब्दोऽविशिष्यते, तेन नवसर्गेषु तथा नवनवाः शब्दाः प्रयुक्ताः, यथा तत्र शब्दकोश-राशिष्यलभ्यते । तस्य काव्ये प्रतिपदं पद-लालित्यं माधुर्यं च प्रेक्ष्य विपश्चिद्धिष्ठदाहियते यत्—'काव्येषु माघः' इति । अनर्धराघवनाटककृतो मुरारेः पाण्डित्यपरिपूर्णं नाटकं प्रेक्ष्य केनाप्यभिधीयते यद् मुरारिर्जिज्ञासितश्चेद् माघे मन आध्यम् । 'मुरारिपदचिन्ता चेत् तदा माघे रति कुरु'। भारविं सर्वतोभावेन भावावत्याऽतिशयानं माघं प्रेक्ष्य केनापि निगद्यते—'तावद् भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः'।

माधस्य कृतित्वम् — कवेरेतस्य गौरवाधायकं ग्रन्थरत्नम् एकमेव 'शिशुपाल-वध'—नामकम् उपलम्यते । अस्मिन् महाकाव्ये विश्वतिः सर्गाः, १६४५ रलोकाश्च विद्यन्ते । १५ सर्गे क्षेपकाः श्लोकाः ३४, ग्रन्थान्ते च कविवंशवर्णनश्लोकाः ५, तेषाभिष समाहारे श्लोकसंख्या १६८४ भवति ।

माघस्य वैशिष्ट्यम् — विपश्चिद्धिः महाकवेः कालिदासस्य कृतिषु उपमानां प्राधान्यम्, भारवेः कृतौ किरातार्जुनीये अर्थगौरवस्य वैशिष्ट्यम्, दण्डिनः कृतौ दश-कुमारचिरते पदलालित्यम्, माघस्य च कृतौ शिशुपालवधे त्रयाणामपि पूर्वोक्तानां गुणानां समन्वयं समीक्ष्य साहूलादम् उद्घोष्यते यद् —

उपमा काल्दि। संस्य भारवेरर्थगौरवम् । दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः ॥

एतदत्रावधेयं यद् माघो यद्यपि त्रयाणामपि गुणानां स्वकाव्ये समाहारं विधत्ते, तत्र तत्र च वैशिष्ट्यं सौन्दर्यं माधुर्यं चापि धत्ते, तथापि नोपमाप्रयोगे स कालिदासम् अतिशेते, अर्थगौरवे च भारविम् । पदलालित्ये नृनं स दण्डिनम् अतिशेते । तस्य पद-माधुर्ये सर्वातिशायि । माघः त्रयाणामपि गुणानां संकलने नितरां साफल्यम् अवापेत्येव

माघस्य होली — महाकवेर्माघस्य भावपक्षापेक्षया कलापक्षः प्रशस्यतरः । यद्यपि भावपक्षस्यापि मनोज्ञत्वं माधुर्यं हृद्यत्वं च पदे पदेऽवलोक्यते, तथापि नात्र कस्यापि सुधियो विप्रतिपत्तिः यन्माघः कलापक्षाश्रयणे कवीन् अन्यान् अतिहोते । क्वचिद् अलंकारप्रयोगाः, विहोषतश्चित्रालंकारप्रयोगाः, कचिद् व्याकरण-नैपुण्य-प्रदर्शनम्, कचिद् छन्दोरचना-दक्षतोपयोगः, कचिद् यमकाद्यलंकाराणां प्रयोगवाहुल्यम्, कचिद् कोमलकान्त-पदावल्याः संधानम्, कचित् शास्त्रीय-पाटव-प्रदर्शनम्, तस्य कलात्मक्या रुचेः परिचायिकानि सन्ति । महाकविर्भारविस्तस्य आदर्शरूपोऽभूत् । तत्य सर्णिमनुस्तय सोऽपि कलात्मक-पाण्डित्य-प्रदर्शने कृतमतिरभूत् । भारवेः स्वोत्कर्षं साधियतुं स तदीयां सर्णिम् अनुसत्य तत्रोत्कर्षम् अवापः। कलापक्षाश्रयणे स न केवलं भारविमेव, अपि तु महाकविं भिष्टमिप अतिकामति ।

माघस्योपमा-वैशिष्ट्यम् — साघे सुष्विपूर्णाः शतश उपमाः समुपलभ्यन्ते । तत्र कचित् शास्त्रीयं ज्ञानम्, कचित् काव्यगौरवम्, कचिद् नीतिशास्त्रतत्त्वम्, कचिद्व विविधविद्याविशारदत्वं तस्य गरिमाणं प्रथयति । संगीतशास्त्रस्य काव्यशास्त्रस्य च महत्त्वं वैचित्र्यं चोपमया प्रकटयति यद् वाङ्मये कतिपये एव वर्णाः सन्ति, संगीतशास्त्रे च सप्त स्वराः, परं तेषामुपादानेन कथमिव वैचित्र्यजनकं शास्त्रम् उदेति ।

वर्णेः कतिपयैरेव प्रथितस्य स्वरैरिव । अनन्ता वाङ्मयस्याहो गेयस्येव विचित्रता ॥ शिशु० २-७२

भाग्यपुरुषकारयोर्द्वयोरिप परस्परापेक्षित्वम् अनिवार्यत्वेनाङ्गीकरणं च तथैवा-वश्यकं यथा सत्कवये शब्दार्थयोर्द्वयोरिप संग्रहः । उपमया साध्वदं विशदयति सः ।

> नालम्बते दैष्टिकतां न निषीदति पौरुषे। शब्दार्थी सत्कविरिव द्वयं विद्वानपेक्षते॥ शि० २-८६

उपमाप्रयोगे काव्यशास्त्रीयं ज्ञानं संपुष्णता तेनोच्यते यद् यथा संचारिभावाः स्थायिभावं पोषयन्ति, तथैव विजिगीषुं नृपमन्ये सहायकाः ।

स्थायिनोऽथें प्रवर्तन्ते भावाः संचारिणो यथा । रसस्यैकस्य भूयांसस्तथां नेतुर्महीभृतः ॥ शि० २-८७

नीतिशास्त्रविदग्धतां विशदयता तेनोच्यते यद् यथा स्वक्षेमकामेन वृद्धिं प्राप्तुवन् रोगो नोपेक्ष्यः, तथैव एधमानोऽरातिरपि नोपेक्षामर्हति ।

उत्तिष्ठमानस्तुं परो नोपेक्ष्यः पश्यिमच्छता । समौ हि शिष्टैराम्नातौ वर्त्स्यन्तावामयः स च ॥ शि० २-१०

स्वकवित्वस्य कल्पनामनोज्ञत्वस्य च संकल्पनं विद्धता तेनोच्यते यद् यथा स्वल्पवयस्का वाला मातरम् अन्वेति, तथैव प्रातःकालिकी सन्ध्या रजनिम् अनुगच्छति । अनुपतित विरावैः पत्रिणां व्याहरन्ती

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Çalleştiri (STS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan K<mark>osh</mark>a पूर्वसन्ध्या सुतेच ॥ शि० ११-४० उपमा-प्रयोगे शास्त्रीयस्य पाण्डित्यस्यापि अपूर्वः समन्वयो दृश्यते । सांत्यदर्शना-नुसारं पुरुप उदासीनोऽकर्ता च, परं बुद्धिकृतकर्मणां फलभाग् भवति. तथैव साक्षि-मात्रोऽपि कृष्णः सेनांकृतविजयस्य फलभोक्ता भविष्यति ।

> विजयस्विय सेनायाः साक्षिमात्रेऽपदिश्यताम् । फलभाजि समीक्ष्योक्तं बुद्धेभींग इवात्मिन् ॥ शि० २-५९

उपमाप्रयोगे मनोज्ञायाः कल्पनाया अपि सदुपयोगः प्रशस्यः । कृष्णं दिदृश्च-माणायाः कस्याश्चिद् रमण्या गवाक्षगतं वदनकमलम् उदयाद्रिकन्दरास्थितस्थांशुमण्डल-मिव व्यराजत ।

अधिक्क्ममिन्दिरगवाक्षमुळ्यत् सुदृशो रराज मुरजिद्दिदक्षया । वदनारविन्दमुदयाद्रिकन्दराविवरोदरस्थितमिवेन्दुमण्डलम् ॥ शि० १३-३५

नारदश्रीकृष्णयोः सिंतासिते कान्ती तथैवारोचयतां यथा रात्रौ पत्रान्तरगोचराः सुधांशोर्मरीचयः।

रथाङ्गपाणेः पटलेन रोचिषाम् ऋषित्विषः संविलता विरेजिरे । चलत्पलाञ्चान्तरगोचरास्तरोस्तुषारमूर्तेरिव नक्तमंशवः ॥ शि० १-२१

माघस्यार्थगौरवम्—माघेऽर्थगौरवान्वितानां स्लोकानां महती परम्परा । यद्यप्यर्थगौरवं पदे पदे प्रेश्यते, तथापि द्वितीयः सर्गः सर्वातिशायी । तत्र प्रतिपदम् अर्थगौरवं हग्गोचरताम् उपयाति । कतिपये एव स्लोका उदाहरणार्थम् अत्र प्रस्त्यन्ते । अत्रापि तस्य विविधशास्त्रज्ञता, कल्पनाकाम्यत्वम्, भावोत्कर्षः, स्श्मेक्षणदक्षता, नीतिज्ञता, व्यवहारपाटवम्, लोकाराधनक्षमत्वं च समीश्यते । तस्य कतिपयानि हृद्यानि पद्यानि सुभाषितरूपेण प्रयुज्यन्ते । कृष्ण एव रक्षोनिकरं विनाशियतुं क्षमो यथा भास्करस्तमोनिचयम् ।

ऋते रवेः क्षालियतुं क्षमेत कः, क्षपातमस्काण्डमलीमसं नभः। १-३८

मनस्विता जीवनोन्नायिका । मानहीनस्य जीवनं तृणमिव तुच्छम् । अनेकशो मनस्वितायाः स्वाभिमानस्य च गुणगौरवं वर्ण्यते कविना ।

पादाहतं यदुत्थाय मूर्घानम् अधिरोहति। स्वस्थादेवापमानेऽपि देहिनस्तद् वरं रजः॥ द्रिा० २-४६ सदाभिमानैकधना हि मानिनः। शिशु० १-६७

स्वीयं दर्शनशास्त्रवैदग्ध्यं प्रकटयता तेन दार्शनिकभावानुबद्धा बहवः श्लोका उपन्यस्ताः । तद्यथा---

सतीव योषित् प्रकृतिः सुनिश्चला पुमांसमभ्येति भवान्तरेष्वपि । शि० १-७२ CC-O. Dr. Ram**श्रीकृतम्बर्णने सांस्कृतिकार्यक्रीत्वपुरक्षेत्र** हिन्द्र सिद्धारिते हिन्द्र सिद्धारित सिद्धारित हिन्द्र सिद् उदासितारं नियहीतमानसैर्यहीतमध्यात्महशा कथंचन ।
बिहिर्विकारं प्रकृतेः पृथग् विदुः पुरातनं त्वां पुरुषं पुराविदः । शि० १-३३
रामणीयकस्य लक्षणं तस्य बुद्धिवैशारद्यं स्चयतिः—
क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः । शि० ४-१७

अर्थगौरववन्तोऽन्ये केचन श्लोका दिङ्मात्रम् उदाह्नियन्ते। तद्यथा—सर्वेषां स्वार्थिसिद्धिरेवाभीष्टा। 'सर्वः स्वार्थं समीहते' (२-६५)। सुकविः स्वीये काव्ये गुणत्रय-मेवाश्रयते। 'नैकमोजः प्रसादो वा रसभाविवदः कवेः' (२-८३)। सामसहितैव दण्ड-नीतिः साधीयसी। 'मृदुव्यवहितं तेजो भोक्तुमर्थान् प्रकल्पते' (२-८५)। सत्काव्येऽर्थ-गौरवाधानम् अनिवार्यम्। 'अनुिङ्झतार्थसंबन्धः प्रवन्धो दुरुदाहरः' (२-७३)। महान्तो महिद्धरेव विवदन्ते नाधमैः। 'अनुहुंकुरुते घनध्वनिं निह गोमायुरुतानि केसरी' (१६-२५)। अरातिकृता तिरिक्तया दुःसहा। 'पिरिभवोऽरिभवो हि सुदुःसहः' (६-४५)। कट्विप भेषजं गदहारि। 'अरुच्यमिप रोगघ्नं निसर्गादेव भेषजम्' (१९-८९)। सन्तः सतामेव ग्रहाणि अनुग्रह्णन्ति। 'ग्रहानुपेतुं प्रणयादभीष्मवो भवन्ति नापुण्यकृतां मनीिषणः' (१-१४)। कवयो महीपाश्चार्थमेव चिन्तयन्ति। 'कवय इव महीपाश्चिन्तयन्त्यर्थजातम्' (११-६)। स्त्रीणां रोदनं बलम्। 'रुदितमुदितमस्त्रं योषितां विग्रहेषु' (११-३५)। दैवदुर्विपाको दुर्निवारः। 'हतविधिलसितानां ही विचित्रो विपाकः' (११-६४)।

माघस्य पदलालित्यम्—माघे पदलालित्यं गदे पदे प्राप्यते। पद-सौकुमार्यम्, वर्ण-माधुर्यम्, भाषायाः संगीतात्मकत्वम्, भावानुसारि भाषाश्रयणम्, भाषायाम् आरोहावरोहकमश्च पदलालित्यं समेधयति। भाषायाः संगीतात्मकत्वं यथा—

> मधुरया मधुवोधितमाधवी—मधुसमृद्धितसमेधितमेधया। मधुकराङ्गनया मुहुरुन्मद—ध्वनिभृता निभृताक्षरमुज्जगे॥ (६-२०)

यमकालंकारालंकृतभाषाश्रयणेन माधुर्यम् । यथा---

नवपलाशपलाशंवनं पुरः, स्फुटपरागपरागतपङ्कजम् । मृदुलतान्तलतान्तमलोकयत्, स सुर्गि सुर्गि सुमत्तेभरैः ॥ (६-२)

शावानुसारि भाषाश्रयणेन सौकुमार्यम् । यथा-

वदनसौरभलोभपरिभ्रमद्—भ्रमरसंभ्रमसंभृतशोभया। चलितया विदधे कलमेखला—कलकलोऽलकलोलहशाऽन्यया॥ (६-१४)

अन्ये च पदलालित्यवन्तः श्लोका दिङ्मात्रम् उदाहियन्ते । यथा—'अचूचुर-चन्द्रमसोऽभिरामताम्' (१-१६), 'न रौहिणेयो न च रोहिणीशः' (३-६०), 'प्रभावनीके तनवै जयन्तीः प्रभावनी केतनवैजयन्तीः' (६-६९), 'विकचकमलगन्धैरन्धयन् भूङ्ग-मालाः, सुरभितमकरन्दं मन्दमावाति वातः' (११-१९)।

CC-O. Dr. <mark>रिज</mark>ी बिण निमेद्धामि **सल्कियक्वं** व**म्हब्**स्य(पुरिन्नि होन्न्) işitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१०. बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्

निस्विलेऽपि संस्कृः बाह्मये कविकुलगुरुः काल्टिदासो यथा रचनाचातुर्येण कल्पनावैचित्र्येण च पद्मबन्धे गरिष्ठो वरिष्ठश्च, तथैव गद्मकाव्यनियन्धने कविवरो बाणो-ऽतिद्येतेऽन्यान् सर्वानप्यभिरूपान् । पद्यरचनायां केषुचिदेव पद्येषृक्तिवैचित्र्येण भाव-गाम्भीयेंण कृतिकौरालेन वाऽपृव् छटा संजायतेऽखिलेऽपि काव्ये। परं नैतावतैव संभाव्यते गद्यकाव्येऽपि तादृश्यनुपमा कान्तिः। गद्यकाव्ये तु भ्यान् श्रमोऽपेक्ष्यते। पदे पदे वाग्वैचित्र्यमर्थगाम्भीर्यं भाववैभवं कल्पनाकाम्यत्वं च दुर्निवारम् । अतः साधूच्यते— 'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति'। गद्यकाव्यवन्धे दण्डी सुवन्धुश्चेति द्वावेवैतौ वाणेन समं सनामग्राहमुल्लेख्यौ । परं वाणो गरिष्ठो वरिष्ठश्चैतेषां भूयिष्ठया भावाभिन्यत्त्या साधिष्ठया हौल्या मृदिष्ठया मनोहरतया श्रेष्ठया साधुतया प्रेष्ठया पदपरिष्कृत्या च । अतः सोहुलेन 'बाणः कवीनामिह चक्रवतीं' इत्युक्तम् । धर्मदासेन तरुणीलावण्यमस्य कृतौ दश्यते । 'रुचिरस्वरवर्णपदा रसभाववती जगन्मनो हरति। सा किं तरुणी ? नहि नहि वाणी बाणस्य मधुरशीलस्य । गङ्गादेव्या सरस्वतीवीणाध्वनिरेव कृतिष्वस्य निशम्यते । 'वीणा-पाणिपरामृहवीणानिकाणहारिणीम् । भावयन्ति कथं वाऽन्ये भट्टवाणस्य भारतीम् ।' जयदेवो बाणं पञ्चवाणेन कामेनोपमिमीते । 'हृदयवसतिः पञ्चवाणस्तु वाणः ।' श्रीचन्द्र-देवोऽमुं कविवु झरगण्डभेदकं सिंहं गणयति । 'आः सर्वत्र गभीरधीरकविताविन्ध्याटवी-चातुरी-संचारी कविकुम्भिकुम्भभिदुरो बाणस्तु पञ्चाननः।'

महाकवेर्बाणस्य जनिकालविषये वंद्यादिविषये च न काचन विप्रतिपत्तिः। हर्ष-चित्रस्यादौ तेन वंद्यादिविवरणं महता विस्तरेणोपस्थाप्यते। जनकोऽस्य चित्रभानुर्जननी राजदेवी च। सम्राजो हर्षस्य समकालीनत्वात् जनिकालोऽस्येसवीयसप्तमशताब्द्याः पूर्वाधोऽङ्गीक्रियते। हर्षचरितं कादम्बरी चेति प्रन्थद्वयमस्य प्रधानतः कृतित्वेनाङ्गीक्रियते। कृतयोऽन्या विवादविषया एव विदुषाम्।

वाणस्य वस्तुविद्वतौ वर्णने चापूर्वे वैशारद्यं वीक्ष्य मन्त्रमुग्धत्वमनुभवन्ति मनीषिणः। वर्ण्यस्य वस्तुनोऽणुतमामपि विद्वति न विजहाति, न किञ्चिदुञ्झति परस्मै यत्तेन शक्यं वर्णयितुम्। वर्णनानां व्यापित्वात् सर्वाङ्गीणत्वात् स्क्ष्मतमविवरणसमन्वितत्वाच्च 'वाणो-च्छिष्टं जगत्सर्वम्' इति भूयोभृयो व्यादिश्यते। एतदेवात्र समासतः समुपस्थाप्यते।

हर्पचरिते कवेर्वर्णनचात्तरी बहुशोऽवलोक्यते । तेषु मुख्यत उत्त्टेख्याः प्रसङ्गाः सिन्त—मुमुर्पोर्नृपस्य प्रभाकरस्य वर्णनम् , वैधव्यदुःखपरिहाराय सतीत्वमाश्रयत्त्या यशोः वत्या वर्णनम् , सिहनादस्योपदेशः, दिवाकरिमत्रस्य राज्यश्रीसान्त्वनम् । कवेर्गरिमा वत्या वर्णनम् , सिहनादस्योपदेशः, दिवाकरिमत्रस्य राज्यश्रीसान्त्वनम् । कवेर्गरिमा वत्या वर्णनम् , सिहनादस्योपदेशः, दिवाकरिमत्रस्य राज्यश्रीसान्त्वनम् । यत्र तत्र CC-O. कम्मसीमार्वकात्रक्वाभिष्टाक्षित्याऽवितिष्टते हत्यत्र नास्ति विप्रतिपत्तिविदुषाम् । यत्र तत्र

साङ्गोपाङ्गं वर्णनं महता अमेण वाणेनोपस्थाप्यते, तेऽत्र प्रसङ्गा नामग्राहं दिङ्गात्रं प्रस्त्-यन्ते । तद्यथा—शूद्रकवर्णनम्, चाण्डालकन्यावर्णनम्, विन्ध्याटवीवर्णनम्, पम्पासरो-वर्णनम्, प्रभातवर्णनम्, शबरसेनापतिवर्णनम्, हारीतवर्णनम्, जावाल्याश्रमवर्णनम्, जावालिवर्णनम्, सन्ध्यावर्णनम्, उज्जियनीवर्णनम्, तारापीडवर्णनम्, इन्द्रायुधवर्णनम्, राजभवनवर्णनम्, अच्छोदसरोवर्णनम्, सिद्धायतनवर्णनम्, महास्वेतावर्णनम्, कादम्बरीवर्णनं च।

समासतः कानिचिद्दाहरणान्यत्र प्रस्तुयन्ते। सन्ध्यावर्णनं यथा-'अनेन च समयेन परिणतो दिवसः। स्नानोत्थितेन मुनिजनेनार्घविधिमुपपादयता यः क्षितितले दत्तस्तमम्बर-तलगतः साक्षादिव रक्तचन्दनाङ्गरागं रविरुद्वहत्। "उद्यत्सप्तर्षिसार्थस्पर्शपरिजिहीषयेव संहतपादः पारावतचरणपाटलरागो रविरम्बरतलादलम्बत । ''विहाय धरणितलमुन्मुच्य कमल्निवनानि शक्तनय इव दिवसावसाने तपोवनशिखरेषु पर्वताग्रेषु च रविकिरणाः स्थितिमकुर्वत ।' प्रभातवर्णनं यथा — 'एकदा तु प्रभातसन्ध्यारागलोहिते गगनतलकम-लिनीमधुरक्तपक्षसंपुटे वृद्धहंस इव मन्दाकिनीपुलिनादपरजलनिधितटमवतरित चन्द्र-मसि, ''सन्ध्यामुपासिनुमुत्तराशावलम्बिनि मानससरस्तीरमिवावतरति सप्तिपिमण्डले, '' इतस्ततः संचरत्सु वनचरेषु, विजृम्भमाणे श्रोत्रहारिणि पम्पासरःकल्हंसकोलाहले, ... क्रमेण च गगनतल्मार्गमवतरतो दिवसकरवारणस्यावचूलचामरकलाप इवोपलक्ष्यमाणे मिक्किष्टारागलोहिते किरणजाले, शनैः शनैकदिते भगवति सवितरि०'। कादम्बरीवर्णनं यथा—पृथिवीमिव समुत्सारितमहाकुलभूभृद्द्रयतिकरां द्येषभोगेषु निपण्णाम, गौरीमिव व्वेतां गुकरचितोत्तमाङ्गाभरणाम्, इन्दुमूर्तिमिवोद्दाममन्मथविलासगृहीतगुस्कल्त्राम्, आकाशकमलिनीमिव स्वच्छाम्बरदृश्यमानमृणालकोमलोरुम्लाम् , कल्पतरुलतामिव कामफलप्रदाम् , ' 'कादम्त्ररीं ददर्श । अच्छोदसरोवर्णनं यथा— 'प्रविश्य च तस्य तरु-खण्डस्य मध्यभागे मणिदर्पणमिव त्रैलोक्यलक्ष्म्याः, स्फटिकभूमिगृहमिव वसुन्धरादेव्याः, निर्गमनमार्गमिव सागराणाम्, निस्यन्दमिव दिशाम्, अंशावतारमिव गगनतलस्य, कैलासमिव द्रवतामापन्नम् , तुषारगिरिमिव विलीनम् , चन्द्रातपमिव रसतामुपेतम् , हराट्टहासमिव जलीभृतम् ः भदनध्वजमिव मकराधिष्ठितम् , ः भलयमिव चन्दनद्दिाशिर-वनम्, असत्साधनमिवादृष्टान्तम्, अतिमनोहरम्, आह्वादनं दृष्टेः, अच्छोदं नाम सरो दृष्टवान्'। जावालिवर्णनं यथा—'स्थैयेंणाचलानां गाम्भीयेंण सागराणां तेजसा सवितुः प्रशमेन तुषाररक्मेर्निर्मलतयाऽम्बरतलस्य संविभागमिव कुर्वाणम्, ः शरत्कालमिव क्षीण-

CC वर्ध मे । हातिस्मिनावस्मिन स्वानस्मिन् , at अवासंविधिक्ति मिन्ने स्वतिपयोभक्षम् , शून्यनगरमिन

दीनानाथविपन्नशरणम्, पशुपतिमिव भरमपाण्डुरोमाश्लिष्टशरीरं भगवन्तं जावालिम-पश्यम् ।

पाञ्चाली रीतिर्बाणस्य । 'शब्दार्थयोः समो गुम्फः पाञ्चाली रीतिरिष्यते' इति बाणोक्तौ शब्दार्थयोर्मञ्जलः समन्वयः समीक्ष्यते । विषयानुरूपमेव तस्य शब्दावव्यपि विलोक्यते । यथा विन्ध्याटवीवर्णने ओजःसमासभ्यस्त्वम् । 'उन्मदमातङ्गकपोलस्थल-गिलतसिललिसक्तेनेवानवरतमेलावनेन मदगन्धिनान्धकारिता, प्रेताधिपनगरीव सदा-सिन्निहितमृत्युभीषणा महिषाधिष्ठिता च, कात्यायनीव प्रचिलतखड्गभीषणा रक्तचन्दनालंकृता च'। यसन्तवर्णने च माधुर्यमिश्रितत्वम् । 'कोमलमलयमास्तावतारतरङ्गितानङ्ग-ध्वजांशुकेषु, मधुकरकुलकङ्ककालीकृतकालेयककुसुमकुड्मलेषु, मधुमासदिवसेषु'।

तस्य वर्णनानि वनितामिव विभूषणानि विभूषयन्त्यलंकरणैरलंकाराः । उपमा-रूपकोत्प्रेक्षाइलेपविरोधाभासपरिसंख्यैकावल्यादयोऽलंकाराः पदे पदे प्राप्यन्ते तत्तत्प्रसङ्गेषु । परिसंख्या यथा शृद्रकवर्णने—'यस्मिश्च राजनि जितजगति पाल्यति महीं चित्रकर्भसु वर्णसंकराः, रतेषु केशप्रहाः, काव्येषु दृढवन्धाः, शास्त्रेषु चिन्ता'। विरोधाभासो यथा ह्र्द्रकवर्णने—'आयतलोचनमपि स्क्ष्मदर्शनम् , महादोषमपि सकलगुणाधिष्टानम् , कुपतिमपि कलत्रवल्लभम् , अत्यन्तशुद्धस्वभावमपि कृष्णचरितम्'। इलेषम्लोपमा यथा चाण्डालकन्यावर्णने—'नक्षत्रमालामिव चित्रश्रवणाभरणभूषिताम् , मृर्छामिव मनो-हारिणीम्, दिव्ययोषितमिवावु श्रीनाम्, निद्रामिव लोचनग्राहिणीम्, अमृतामिव स्पर्श-वर्जिताम् । विन्ध्याटवीवर्णने उपमा यथा — 'चन्द्रमूर्तिरिव सततमृक्षसार्थानुगता हरिणा-ध्यासिता च, जानकीव प्रस्तकुशलवा निशाचरपरिगृहीता च'। विरोधाभासो यथा विन्ध्याटवीवर्णने-- 'अपरिमितबहुलपत्रसंचयापि सप्तपणीपशोभिता, कूरसःवापि मुनिजन-सेविता, गुष्पवत्यपि पवित्रा'। विरोधाभासो यथा शबरसेनापतिवर्णने — अभिनवयौवन-मिप क्षिपतबहुवयसम्, कृष्णमप्यमुदर्शनम्, स्वच्छन्दचारमिप दुर्गैकशरणम्'। उत्प्रेक्षा यथा सन्ध्यावर्णने--- 'अपरसागराम्भसि पतिते दिनकरे पतनवेगोत्थितमम्भःसीकरनिकर-मिव तारागणमम्बरमधारयत्'। ब्लेषो यथा राजभवनवर्णने—'उत्कृष्टकविगद्यमिव विविध-वर्णश्रेणिप्रतिपाद्यमानाभिनवार्थसंचयम् , नाटकमिव पताकाङ्कशोभितम् , पुराणिमव विभागावस्थापितसकलभुवनकोशम्, व्याकरणमिव प्रथममध्यमोत्तमपुरुपविभक्तिस्थिताने-कादेशकारकाख्यातसंप्रदानक्रियाव्ययप्रपंचसुस्थितम्'। इहेपः सन्ध्यावर्णने यथा— 'क्रमेण च रविरस्तमुपागत इत्युदन्तमुपलभ्य जातवैराग्यो धोतदुक्लवल्कलधवलाम्बरः सतारान्तः

CC-पुर्णपर्भवतास्थिततास्थाततास्थाकवनाङेसं।(स्याप्रिंगप्रदुक्ताःश्चिष्ठास्ववक्षात्रस्वधरीसंत्रुरमा स्वित्वस्था

उपहितापादम् आल्ध्यमाणमूलम् एकान्तस्थितचास्तारकमृगम् अमरलोकाश्रममिव गगनतल्म् अमृतदीधितिरध्यतिष्टत्'। एकावली यथा महाश्रेताजन्मवर्णने—'क्रमेण च कृतं मे वपुषि वसन्त इव मधुमासेन, मधुमास इव नवपळ्वेन, नवपळ्व इव कुसुमेन, कुसुम इव मधुकरंण, मधुकर इव मदेन नववीवनेन पदम्'। परिसंख्या यथा जावाल्या-श्रमवर्णने—'यत्र च मिलनता हविधूमेषु न चिरतेषु, मुखरागः द्युकेषु न कोषेषु, तीक्ष्णता कुशाग्रेषु न स्वभावेषु, चळ्ळता कदळीदळेषु न मनःसु, चक्ष्रागः कोकिछेषु न परकल्त्रेषु, ''मेखलाबन्धो व्रतेषु नेध्यांकल्देषु, ''रामानुरागो रामायणेन न यौवनेन, मुखभङ्गविकारो जरया न धनाभिमानेन'। 'यत्र च महाभारते शकुनिवधः, पुराणे वायुप्रवितं, ''शिखण्डिनां कृत्यपक्षपातो, भुजङ्गमानां भोगः, कषीनां श्रीफलाभिलाधः, मुलानामधोगतिः'।

वाणः दिल्प्टसमस्तदीर्घवाक्यप्रयोगमनु प्रयुङ्क्ते लघुपदन्यासां वाक्यावलीम् । स यथेव दक्षो दीर्ववाक्यरचनायां तथैव पद्वर्लवुवाक्यप्रयोगेऽपि । यत्र भावगाम्भीर्यमर्थ-गोरवं च तत्र सरला ल्युपदा वाक्यावली, इतरत्र च दिल्छा समस्ता दीर्घा च । यथा द्युकनासोपदेदोऽर्थगौरवत्वात् ल्रघुपदप्रयोगः—'मिथ्यामाहात्म्यगर्वनिर्भराश्च न प्रणमन्ति देवताभ्यः, न पूजयन्ति द्विजातीन्, न मानयन्ति मान्यान्, नार्चयन्त्यर्चनीयान्, नाभ्यत्तिष्टन्ति गुरून्'। महाद्येताविलापे, कपिञ्जलकृताक्रन्दने च सन्ति लघूनि वाक्यानि । तद्यथा-किपञ्चलकृतं रोदनम्-'हा हतोऽस्मि, हा दग्धोऽस्मि, हा विञ्चतोऽस्मि, हा किमिदमापतितम्, किं वृत्तम्, उत्सन्नोऽस्मि, इं धर्म निष्परि-ग्रहोऽसि, हा तपो निराश्रयोऽसि, हा सरस्वति विधवासि, हा सत्यम् अनाथमसि, हा मुरलोक श्योऽसि' 'इत्येतानि चान्यानि च विलपन्तं कपिञ्जलमश्रोपम्'। जाबालि-वर्णने लघुपदविन्यासो यथा—'प्रवाहः करुणारसस्य, संतरणसेतुः संसारसिन्धोः, आधारः क्षमाम्भमाम्, "सागरः सन्तोषामृतस्य, उपदेष्टा सिद्धिमार्गस्य, "सस्वा सत्यस्य, क्षेत्रम् आर्जवस्य, प्रभवः पुण्यसंचयस्य०'। शुकनासोपदेशे लक्ष्मीखरूपवर्णने लघुपद्विन्यासो यथा--- 'न परिचयं रक्षति । नाभिजनम् ईक्षते । न रूपमाङोकयते । न कुलक्रममनुवर्तते । न शीलं पस्यति । न वैदग्ध्यं गणयति । न श्रुतमाकर्णयति । न धर्ममनुरुध्यते । न त्याग-माद्रियते । न विशेपज्ञतां विचारयति' । उज्जियनीवर्णने, राजभवनवर्णने, शुक्रनासोपदेशे, पुण्डरीकाय कपिञ्जलोपदेशे च संलक्ष्यते वाणस्यापूर्वा वर्णनचातुरी । स तथा प्रस्तवीति प्रत्येकं वस्तु यथा चित्रपटे स्वतः सन्दृश्यमाना काचित् कथा घटना वोपतिष्ठति । एवं CC-O. भा विकायम् vत्रम् व्यागिनिधारामा सर्वात्वा(CSDS)। Digitized By Siddhanta eGangotti Gyaan Kosha कवीनामन्यपा वर्गन् च वाणाच्छिष्टमेव ।

११. कारुण्यं भवभूतिरेव तनुते

श्रीभवभ्तिः कान्यकुञ्जेश्वरस्य श्रीमतो यशोवर्मण आश्रितो महाकविरित्यत्र सर्वेषां सुधियामैकमत्यम् । महाकविना वाणेन हर्षचिरते महाकविगणनाप्रसङ्गे नास्याभिधानमस्यधायीति महाकवेर्बाणात् पूर्वे जनिकालमस्य नेति निर्णायते । एवं भवभ्तेर्जनिकालः ७०० ईसवीयस्य सन्धि स्वीक्रियते । विदर्भ (वरार)-प्रदेशस्थपद्मपुरनगरवास्तव्योऽयं श्रीकण्ठपदलाञ्छनो भवभूतिनामाऽभवत् । पितामहोऽस्य भट्टगोपालो, जनको नीलकण्ठो, जननी जातुकर्णां, गुरुश्च ज्ञाननिधिनाम । नाटकत्रयमस्य समुपलभ्यते—महावीरचरितम्, मालतीभाधवम्, उत्तररामचरितं च । व्याकरणन्यायमीमांसाशास्त्रेषु निष्णातत्वादेव 'पदवाक्यप्रमाणज्ञ' इत्युपाधिसमलंकृतोऽभृत् । वेदेष्वन्येषु च शास्त्रेष्वस्याव्याहता गतिः । वायदेवी वश्येव समन्ववर्ततेति तथ्यं स्वयमेवोद्धोष्यते तेन । 'यं ब्रह्माणिमयं देवी वायवश्येवानुवर्तते (उत्तर० १-२) ।

करुणरसिनस्यन्दे नातिशेतेऽन्यो महाकविर्महाकविममुम्। अतः साधूच्यते— 'कारुण्यं भवभृतिरेव तनुते'। करुणरसोद्रेकमालोक्यैव कवेरेतस्य कृतिषु कृतिभिः कृतानि कितपयानि प्रशंसापद्यानि । आर्यासप्तशत्यां (१-३६) श्रीगोवर्धनाचार्यो भवभूतेर्भारतीं भूधरसुतया गौर्योपिममीते। तत्कृतकारुण्ये प्रावाणोऽपि रुदन्त्यन्येषां तु का कथा। 'भवभूतेः संबन्धाद् भूधरभरेव भारती भाति। एतत्कृतकारुण्ये किमन्यथा रोदिति प्रावा'। कारुण्ये कालिदासाद्प्यतिरिच्यते। अत उच्यते— 'उत्तरे रामचरिते भवभ्तिर्विशिष्यते'।

करुणरसप्रवाहपरीक्षया परीक्ष्यते चेन्नाटकत्रयमस्य तहि उत्तररामचिरतमेव सर्वातिशायि। यथाऽत्र कारुण्यसनिस्यन्दो, न तथाऽन्यत्र। किं कारुण्यम् १ करुणरसस्य प्रवाह एव कारुण्यमिति। इदमत्रावधेयम्। भवभ्तिः करुणरसं रसत्वेनैव नातिष्ठतेऽिष तु रसानां समेषां मूलभूतत्वेन करुणमेवैकं रसं मनुते। रसा अन्येऽस्यैव विवर्तरूपेण परिणाम्सरूपेण वा परिणमन्ते इति करुणरसस्य महत्त्वमातिष्ठते। आह च—'एको रसः करुण एव निमित्तमेदाद्, भिन्नः पृथक् पृथगिवाश्रयते विवर्तान्। आवर्तेबुद्बुदतरङ्गमयान् विकारान्, अम्भो यथा सल्लिमेव हि तत् समग्रम् (उत्तर॰ ३-४७)। उत्तररामचरिते चोदाहियते-ऽनेन यत्कथमन्ये रसाः करुणरसमूलका इति। एतदेवात्र विविच्यते उदाहियते च।

उत्तररामचरितस्य प्रथमेऽङ्के आदावेव पितृवियोगविषणां जानकीमाश्वासयित दाशरिथः। गृहस्थधर्मस्य विष्नव्यासत्वं व्याचष्टे। 'संकटा ह्याहिताग्नीनां प्रत्यवायैर्गृहस्थता (उ०१-८)। बन्धुजनवियोगस्य सन्तापकारित्वं सीतैवाभिधत्ते। 'सन्तापकारिणो बन्धुजनवियोगा भवन्ति' (अंक१)। रामश्च संसारस्याहन्तुदत्वं विशदयति। 'एते हि हृदयमर्म-चिछदः संसारभावाः' (अंक१)। त्तित्रवीथ्यां चित्रितानि वृत्तानि वीक्ष्य समुज्जूम्भते तेषां

CC-Cक्रिस्यिशास्त्रः। निम्नियं प्रिक्षिक्षका क्षित्रका विश्वासका क्षित्रका के किर्मा क्षेत्र के किर्मा किर्

'क्लिप्टो जनः किल जनैरनुरञ्जनीयस्तन्नो यदुक्तमिश्चवं नहि तत्क्षमं ते।' (१-१४)। जानकीपरिणयचित्रणं प्रेक्ष्य दिवंगतं तातं दशरथं चिन्तयतो विषीदित चेतो रघ्दहस्य। 'जीवत्सु तातपादेपुः ते हि नो दिवसा गताः' (१-१९)। संभोगशृङ्गारमपि करुण-रसमूलकं व्याचष्टे । यथा-कृष्टसहस्रसंकुलं कानन् विचरतां तेषां जनस्थानमध्यगे प्रस्रवणे गिरो यामिनीयापनं वर्णयति—'किमपि किमपि मन्दं मन्दमासत्तियोगात्' अविदितगत-यामा रात्रिरेव व्यरंसीत्' (१-२७)। चित्रे रावणकृतजानकीहरणवृत्तं वीक्ष्य खिद्यते चेतश्चारुचरितस्य राघवस्य । जनस्थाने सति सीताहरणे कथमतप्यत राम इति लक्ष्मणो वर्णयति तस्य कारण्यपूर्णो स्थितिम् । तस्य विक्लवत्वं विलोक्य प्राचाणोऽप्यरदन् , वज्र-रयापि हृतयं व्यदलत् । 'अथेदं रक्षोमिः कनकहरिणछद्मविधिना, तथा वृत्तं पापैर्व्य-थयति यथा क्षालितमपि। जनस्थाने शून्ये विकलकरणैरार्यचिरितरिप प्राचा रोदित्यपि दलति वजस्य हृदयम्' (१-२८) । सीताहरणचित्रदर्शनेन विषण्णस्य विल्पतश्च दाशर-थेरवस्थां वर्णयति वाष्पप्रसरं च मुक्ताहारेणोपिमभीते । 'अयं तावद् बाष्पस्त्रृटित इव मुक्तामणिसरो विसर्पन् धाराभिर्द्धटित धरणीं जर्जरकणः। निस्द्धोऽप्यावेगः स्फुरदधरनासा-पुटतया, परेपामुन्नेयो भवति चिरमाध्मातहृदयः' (१-२९)। प्रियवियोगजन्मा दुःखाग्निः कथं पीडयति मानसमिति व्याहरति — दुःखाग्निमेनसि पुनर्विपच्यमानो हृन्मर्भ-वण इव वेदनां तनोति' (१-३०) । मात्यवन्नामके गिरौ स्वीयां मोहावस्थां स्मारं स्मारं सीदति स्वान्तं भ्योऽपि राघवस्य । 'विरम विरमातः परं न क्षमोऽस्मि, प्रत्यावृत्तः पुनरिव स मे जानकीविप्रयोगः' (१-३३)। रामबाहुमुपधानत्वेनाश्रित्य यदैव निःशङ्क स्विपिति सीता, तावदेव समुपितिष्ठते जनप्रवादजन्यो विषमो विषादहेतुर्विप्रयोगः। 'हा हा धिक परगृहवासद्पणं यद्, वैदेह्याः प्रशमितमद्भुतैरुपायैः । एतत्तत्पुनरपि दैवदुर्विपाका-दालकें विपमिव सर्वतः प्रस्तम्' (१-४०)। वैदेह्या वने प्रवासनं व्याधाय शकुन्त-समर्पणमिव प्रतीयते । 'शैशवात् प्रसृति पोषितां प्रियां, सौहृदादपृथगाश्रयामिमाम् । छद्मना परिददामि मृत्यवे, सौनिके गृहशकुन्तिकामिव'(१-४५)। पिशाचेभ्यो वलिवितरण-मिव चैतत्कर्म। 'विसम्भादुरसि निपत्य जातनिद्राम् , उन्मुच्य प्रियगृहिणीं गृहस्य लक्ष्मीम् । ः ऋत्याद्भ्यो वलिमिव दारुणः क्षिपामि' (१-४९)। सीताप्रवासनेनासह्यां व्यथा-मनुभवति रामभद्रः । 'दुःखसंवेदनायैव रामे चैतन्यमाहितम् । मर्मोपघातिभिः प्राणैर्वज्र-कीलायितं हृदि । (१-४७)।

शम्बृकप्रसङ्गेन दण्डकारण्यं पञ्चवटीं च प्राप्य जानकीसहवासं स्मारं स्मारं CC-Ofखिब्रितिसभी मनी मनिस्विनी रामस्य । रामोऽभिघत्ते—'चिराद् वेगारम्भी प्रसृत इव तीब्रो विषरसः, कुतश्चित् संवेगात् प्रचल इव शल्यस्य शकलः। व्रणो रूढग्रन्थिः स्फुटित इव हुन्मर्मणि पुनः, पुराभूतः शोको विकलयित मां नूतन इव। (२-२६)। सीताप्रवासनेन पापिनमात्मानं गणयन् पञ्चवटीदर्शनापात्रं मन्यते । यस्यां ते दिवसास्तया सह मया नीता यथा स्वे गृहे, "एकः संप्रति नाशितप्रियतमस्तामेव रामः कथं, पापः पञ्चवटीं विलोकयतु वा गच्छत्वसंभाव्य वा (२-२८)। भुरला चित्रयति रामावस्थाम्, कथं पुरुपाकवद् व्यथयति रामं सीताविवासनशोकः। 'अनिर्भिन्नो गभीरत्वादन्तर्गूढघन-व्यथः । पुटपाकप्रतीकाशो रामस्यं करुणो रसः' (३-१)। तमसा दुःखक्षामां जानकीं करुणस्य मूर्तिमेव गणयति। 'करुणस्य मूर्तिरथवा शरीरिणी, विरहव्यथेव वनमेति जानकी' (३-४) । दीर्घशोकः शोषयति शरीरं सीतायाः। 'किसलयमिव मुग्धं वन्धनाद् विप्रव्हनं, हृदयकमलशोषी दारुणो दीर्घशोकः। ग्लपयति परिपाण्डु क्षाममस्याः शरीरं, शरिद इव घर्मः केतकीगर्भपत्रम् । (३-५) । रामः पञ्चवटीदर्शनेन भूयोऽपि मोहमाप-द्यते । दुःखाग्निरुत्पीडयति तम् । 'अन्तर्लीनस्य दुःखाग्नेरद्योहामं ज्वलिप्यतः । उत्पीड इव धूमस्य, मोहः प्रागातृणोति माम्' (३-९)। शोकामिपीडितो नामिज्ञायते रामः स्वकार्स्यात्। 'नवकुवलयस्निग्धैः विकलकरणः पाण्डुच्छायः ग्रुचा परिदुर्बलः, कथमपि स इत्युन्नेतव्यस्तथापि दशोः प्रियः । (३-२२)। वासन्ती सोत्प्रासं सीताया उदन्तं पृच्छिति रामम्। 'अयि कठोर यशः किल ते प्रियं, किमयशो ननु घोरमतः परम्। किमभवद् विपिने हरिणीदृशः, कथय नाथ कथं बत मन्यसे। (३-२७)। सशोकमुत्तरित रामः कत्याद्भिस्तस्या भक्षणम् । 'त्रस्तैकहायनकुरङ्गविलोलदृष्टे-स्तस्याः परिस्फुरितगर्भभराल-सायाः। ज्योत्स्नामयीव मृदुबालमृणालकल्पा, क्रव्याद्भिरङ्गलतिका नियतं विखुता' (३-३८)। शोकक्षोभे विलपनमेव चित्तनिग्रहोपायः प्रस्त्यते कविना। 'पूरोत्पीडे तडा-गस्य परीवाहः प्रतिकिया । शोकक्षोभे च हृदयं प्रलापैरेव धार्यते (३-२९)। रामः स्वावस्थां वर्णयति — कथमन्तस्तापस्तापयति तन् , न तु हरति जीवितम् । 'दलति हृदयं शोकोद्देगाद् द्विधा तु न भिद्यते, वहति विकलः कायो मोहं न मुञ्जति चेतनाम्। ज्वलयति तन्मन्तर्दाहः करोति न भस्मसात्, प्रहरति विधिर्मर्भच्छेदी न कृत्तति जीवितम्। (3-38) 1

अन्ये च करुणरसाप्छुताः प्रमुखाः श्लोका दिङ्मात्रमत्र निर्दिश्यन्ते । ते यथा-यथं विवेच्याः । सीतापरित्यागविषण्णो रामोऽश्वरणो रोदितितराम् । 'न किल भवतां देव्याः स्थानं गृहेऽभिमतं तत-स्तृणमिव वने शून्ये त्यक्ता न चाप्यनुशोचिता । चिर-

CC-O. Dr.परिक्रितिखा प्लें para Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जानकीवियोगजः शोकस्तिरश्चीनं शल्यमिव विषमयो दन्त इव च पीडयति। 'यथा तिरश्चीनमलातशब्यं, प्रत्युप्तमन्तः सविषश्च दन्तः । तथैव तीव्रो हृदि शोकशङ्कुर्ममाणि कुन्तन्नपि कि न सोटः' (३-३५)। शोकप्रसारो निवारितोऽपि न विरमति। 'वेलोछोलः •• भित्त्वा भित्त्वा प्रसरित बळात् कोऽपि चेतोविकार-स्तोयस्येवाप्रतिहतरयः सैकतं सेतुमोघः। (३-३६)। दुःखपीडितं रामं जगन्निर्जनिमवाभाति । 'हा हा देवि स्फुटति हृद्यं ध्वंसते देहवन्धः, शून्यं मन्ये जगदविरलज्वालमन्तर्ज्वलामि' (३-३८) । पूर्वो वियागो रावण-विनाशाविषरभूत्, अयं च निरविषः। 'उपायानां भावाद' वियोगो मुग्धाक्ष्याः स खलु रिपुघातावधिरभृत्, कटुस्तूरणीं सह्यो निरवधिरयं तु प्रविलयः' (३-४४)। पुत्रीनाश-विषण्णो जनको न धृतिमावहति । 'अपत्ये यत्ताहग्' 'पदुर्धारावाही नव इव चिरेणापि हि न मे, निक्रन्तन्मर्माणि क्रकच इव मन्युविरमित' (४-३)। संबन्धिवियोगजानि दुःखानि वियजनदर्शने नितरां वर्धन्ते । 'सन्तानवाहीन्यपि मानुषाणां, दुःखानि संवन्धिवियोग-जानि । दृष्टे जने प्रेयसि दुःसहानि, स्रोतःसहस्रैरिव संप्लवन्ते' (४-८) । शोके सर्वमिप दु:खायैव । 'अलं वा तत् स्मृत्वा दहति यदवस्कन्द्य हृदयम्' (४-१४) । लवदर्शनेन सीतां संस्मृत्य जनको नितरां विषीदति । 'वात्सायाश्च" 'हा हा देवि कि मुत्यथैर्मम मनः पारिप्लवं धावति' (४-२२) । वनवासे संत्रस्तया त्वया नूनं जनकोऽसङ्गत् स्मृतः । 'नृनं त्वया : 'क्रव्याद्गणेषु परितः परिवारयत्सु, संत्रस्तया शरणिमत्यसङ्कृत् स्मृतोऽहम्' (४-२३)। प्रियानाशे जगदरण्यमिव प्रतीयते। 'विना सीतादेव्या किमिव हि न दुःखं रघुपतेः, प्रियानाद्ये कृत्स्नं किल जगद्रण्यं हि भवति' (६ ३०)। प्रियावियोगे जगद्ति-तरां दुःखायैव भवति । 'जगजीर्णारण्यं भवति च कलत्रे ह्युपरते, कुकूलानां राशौ तदनु हृदयं पन्यत इव' (६-३८)। नृपं जनकमुद्रीक्ष्य रामस्य हृदयं त्रपया विदीर्यत इव। 'पस्यन्नीदृशमीदृशः पितृसखं वृत्ते महावैशसे, दीर्थे किं न सहस्रधाऽहमथवा रामेण किं दुष्करम् (६-४०) । शुचा निष्पभं रामं वीध्य मातरः प्रमोहमुपयान्ति । 'अनुभावमात्र-समवस्थितिश्रियं, सहसैव वीक्ष्य रघुनाथमीदृशम्। ''विधुराः प्रमोहमुपयान्ति मातरः' (६-४१)। शीतापरित्यागाद् राम आत्मानं दयापात्रं न मनुते। 'जनकानां रघूणां च, यत् कृत्स्नं गोत्रमङ्गलम् । तत्राप्यकरुणे पापे, वृथा वः करुणा भयि' (६-४२) । प्राक्-कृतकर्मनं दुःखं सुतरां दुर्निवारम्। 'सोढिइचरं राक्षसमध्यवास-स्यागो द्वितीयस्तु सुदुःसहोऽस्याः । को नाम पाकाभिमुखस्य जन्तुर्द्वाराणि दैवस्य पिधातुमीध्टे' (७-४) ।

पूर्वकृतालोचनया सिध्यत्यदो यट् भवभृतिः करुणरसवर्णने सर्वानतिशेते CC-**अग्र**ाकस्थित्_रdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan <mark>Kosh</mark>a

१२. नैषधं विद्वदौषधम्

श्रीश्रीहर्षमहाकवेः कृतिनैषधचरितं कस्य न कृतिनो मानसमावर्जयति । बृहत्त्र-य्यामन्यतमैषा कृतिः । भारवेः किरातार्जुनीयं माघस्य शिशुपालवधं श्रीहर्षस्य नैषधचरितं चेति त्रयमेतद् बृहत्त्रय्यां गण्यते । उत्तरोत्तरमेषामुत्कर्षश्चोररीक्रियते । एतद्भावात्मकमेवै-तदुद्गीर्यते—'तावद् भा भारवेर्भाति, यावन्माघस्य नोदयः । उदिते नैषधे काव्ये, क्व माघः क्व च भारविः ॥'

महाकवेरेतस्य जनकः श्रीहीरो जननी मामछदेवी च। तथा हि—'श्रीहर्षे कविराजराजिमुकुटालंकारहीरः सुतं, श्रीहीरः सुषुवे जितेन्द्रियचयं मामछदेवी च यम्'। (नैषध० १-१४५)। कान्यकुब्जेश्वरस्य जयचन्द्रस्याश्रयमाशिश्रयत् कविरयम्, तदादृतिमविन्दत च । 'ताम्बूलद्वयमासनं च लभते यः कान्यकुब्जेश्वरात्' (नै० २२-१५३) । अतोऽस्य जनिकालो द्वादशशताब्या उत्तराधोंऽङ्गीक्रियते । श्रीहर्षो महाकवि-र्महायोगी च। उभयत्रापि चरमोत्कर्ष लेमे। 'यः साक्षात्कुरुते समाधिषु पर ब्रह्म प्रमोदार्णवम् । यत्काव्यं मधुवर्षि०' (नै० २२-१५३) । सर्गान्तरलोकेषु प्रन्थाष्टकस्यान्यस्य नामग्राहं गृह्यते तेन । तत्र चाद्वैतवेदान्तप्रतिपादकः खण्डनखण्डखाद्यमेवैको प्रन्थः साम्प्रतमुप्लभ्यतेऽन्ये च छुप्तप्राया एव । सायासमेतत् तस्य महाकान्यं, प्रन्थयश्चात्र विन्यस्तास्तेन महता श्रमेण । अतः श्रमसाध्य एव महाकाव्यस्यैतस्यार्थावगमोऽपि । 'ग्रन्थग्रन्थिरिह क्विचत् क्विचिद्पि न्यासि प्रयत्नान्मया। प्राज्ञंमन्यमना हठेन पठिती माऽस्मिन् खलः खेलतु । श्रद्धाराद्धगुरुश्लथीकृतदृढग्रन्थः समासादयत्वेतत्काव्यरसो-र्मिमजनसुखव्यासजनं सजनः'। (नै० २२-१५२)। रमणीलावण्यं हरति चेतः सचेतसो यून एव, न तु किशोराणाम्। तथैव श्रीहर्षकृतिः सुधीभिरेवास्वादनीया, न तु प्राज्ञंमन्यैः। 'यथा यूनस्तद्वत् परमरमणीयापि रमणी, कुमाराणामन्तःकरणहरणं नैव कुरुते। मदुक्तिश्चेदन्तर्मदयति सुधीभूय सुधियः, किमस्या नाम स्यादरसपुरुषानादरभरैः।' (नै० २२-१५०)।

श्रीहर्षो महाकविर्महादार्शनिको महावैयाकरणश्चेत्यादिविविधविषद्धगुणगणसम-न्वयादितशेते सर्वानन्यान् महाकवीन् पाण्डित्यप्रदर्शने वाग्वैभवे रुचिररचनायां भावाभि-व्यक्तौ साधुशब्दसंकलने विद्यावैशारये वक्नोक्तिव्यवहारे च । अनुपमवैदुष्यवैभवाविर्मावात् पाण्डित्यपुटपरिपाकप्रतीकाशः प्रतीयते प्रबन्धोऽस्य । नैकशास्त्रनिष्णातस्यानुपहता गति-

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रत्रेति 'नैपर्यं विद्वदौषधम्' इति साह्णादमुद्घोष्यते यशोऽस्य सुधीभिः । प्रतिपदं पदला-लित्यावेक्षणात् 'नेपधे पदलालित्यम्' इत्यप्यभिधीयते । एतदेव समासतोऽत्र प्रस्त्यते । विवृतिश्च विद्वद्भिः स्वयमेवाभ्यूह्या ।

पदलालित्यवन्तः केचन रलोका अत्र दिङ्मात्रमुदाहियन्ते। अधारि पद्मेषु तदङ्घिणा घणा क्व तच्छयच्छायलवोऽपि पल्लवे। तदास्यदास्येऽपि गतोऽधिकारितां न शारदः पाविकश्वर्वरीश्वरः। (नैषध० १-२०), मनोरथेन स्वपतीकृतं नलं निश्चि क्व सा न स्वपती सा पश्यित। अदृष्टमप्यर्थमदृष्टवैभवात्० (नै० १-३९), अहो अहोभिर्मिहिमा हिमागमेऽप्यभिप्रपेदे प्रति तां स्मरादिताम। "विभावरीभिर्विभरावभूविरे। (नै० १-४१), अलं नलं रोदुम्मी किलाभवन् "स्मरः सा रत्यामनिरुद्धमेव यत्, स्वत्ययं सर्गनिसर्ग ईदृद्यः। (नै० १-५४), चलन्नलंकृत्य महारयं ह्यं स्ववाहवाहोचितवेषपेशलः। (नै० १-६६), दिने दिने त्वं तनुरेषि रेऽधिकं पुनः पुनर्मूच्छं च तापमुच्छ च। (नै० १-९०), मदेकपुत्रा जननी जरातुरा नवप्रस्तिवर्यः तपस्विनी। (नै० १-१३६), महृत्मानं भवनिन्दया दयासस्याः सत्यायः सवदश्रवो मम। (नै० १-१३६), निलनं मिलन विवृण्वती पृषतीमस्पृश्चती तदीक्षणे। अपि स्वज्ञनमञ्जनाञ्चिते० (२-२३), धन्यास्ति वैदर्मि गुणैरुद्दिर्यया समाकृत्यत नैषधोऽपि। (३-११६), सकल्या कल्या किल दंष्ट्रया समबधाय यमाय विनिर्मितः। (४-७२), लोकेशकेशकेशविश्वानिप यश्चकार श्रङ्कारसान्तरभृशान्तर-शान्तभावान्। (११-२५), कुमुदमुदमुदेष्यतीमसोढा रिवरिवलम्बतुकामतामतानीत्। (२१-१४६), श्रङ्कारसङ्कारसुधाकरेण वर्णस्वजानूप्य कर्णकृपौ। (२२-५७)।

विविधविद्यापारदृश्वा श्रीहर्षः। विविधदर्शनिध्द्यान्तानां व्याकरणादिशास्त्रराद्धान्तानां चोल्लेखात् संजायते नैषधचिरते महत् काठिन्यम्। अतो विद्वदौषधमेतत्
काव्यमुच्यते। एतदेवात्रातिसमासतो निरूप्यते विवियते च। (१) इलेखप्रयोगः—
चेतो नलं कामयते मदीयम्० (३-६७), श्लेषम्लकमर्थत्रयमेतस्य। तद्यथा—मदीयं चेतः
नलं कामयते, ० न लंकाम् अयते, ० चेतः अनलं कामयते। त्रयोदशसर्गे पञ्चनलीवर्णने (१३.२-३४) सर्वेऽपि श्लोका द्व्यर्थकास्त्र्यर्थका वा। 'देवः पतिर्विदृषि नैषधराजगत्या निर्णीयते न किमु न त्रियते भवत्या। (१३-३४), पञ्चार्थकमेतत्पद्यम्। अन्ये
च केचन श्लेषम्लाः श्लोकाः—विदर्भजाया मदनस्तथा मनोनलावरुद्धं वयसैव वेशितः
(१-३२), वयोतिपातोद्गतवातवेपिते (१-७७), वियोगिनीमैक्षत दाडिभीमसौ (१-८३),

रथाङ्गभाजा कमलानुषङ्गिणा ० (१-१११) CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(७sDS) प्रिकृतिम्बर्ग् Sid**निन्ता** स्वलक्ष्रेतिम्बर्ग Kosha कोऽपि क्षमः (४-११६)। (२) व्याकरणसिद्धान्तवर्णनम् — कियेत चेत्साधुविभक्ति-चिन्ता व्यक्तिस्तदा सा प्रथमाभिधेया । या स्वौजसां साधियतुं विलासै:०' (३-२३) इत्यत्र 'अपदं न प्रयुञ्जीत' इत्यस्य वर्णनम् । 'किं स्थानिवद्भावमधत्त दुष्टं तादक्कृतव्याकरणः पुनः सः।' (१०-१३६) इत्यत्र स्थानिवदादेशो० (१-१-५६) इति सूत्रस्य वर्णनम्। 'अपवर्गे तृतीयेति भणतः पाणिनेरिप' (१७-७०) इत्यत्र 'अपवर्गे तृतीया' (२-३-६) इति सुत्रस्य वर्णनम् । भण फणिभवशास्त्रे तातङः स्थानिनौ काविति विहिततुहीवागुत्तरः कोकिलोऽभृत्' (१९-६०), इत्यत्र तुह्योस्तातङ्० (७-१-३५) इति स्त्रस्य वर्णनम्। 'अधीतियोधाचरणप्रचारणैर्दशाश्चतसः प्रणयन्नुपाधिभः' (१-४) इत्यनेन 'चतुर्भिः प्रकारीविद्योपयुक्ता भवति०'(महाभाष्य, प्रथमाह्निक) इत्यस्य वर्णनम् । एकशेष-वर्णनम् हस्ते तवास्ते द्वयमेकशेषः। (३-८२), मुखेन्दुमस्थापयदेकशेषम् (७-५९)। आदेशः— भवः स्वरादेशमथाचरामो० (८-९६), स्वं नैषधादेशमहो विधाय (१०-१३६)। अपादानम्---आगच्छतामपादानं ० (१७-११८) । बु-संज्ञा—घोषयन् यो घुसंज्ञां ० (१९-६१) । तमप्---मधुराधारस्तमपुप्रत्ययः (२१-१५२)। आम्रेडितम्—भवदुपविपिनाम्रे ताभिराम्रेडितेन (२१-१५६)। (३) सांख्यसिद्धान्तवर्णनम् - सत्कार्यवादः - नास्ति जन्यजनकव्य-तिभेदः (५-९४)। (४) योगसिद्धान्तवर्णनम् सम्प्रज्ञातसमाधिः सम्प्रज्ञात-वासिततमः समपादि (२१-११८)। (५) न्याय-वैशेषिकसिद्धान्तवर्णनम् <mark>परमाणुवादः—आदाविव द्वयणुककृत्परमाणुयुग्मम् (३-१२५), मनसोऽणुत्वम्—मनो-</mark> भिरासीदनणुप्रमाणैः (३-३७), न्यायस्य षोडशपदार्थत्वम् —द्विधोदितैः षोडशभिः पदार्थैः (१०-८२)। कारणगुणपूर्वकं हि कार्यम् , 'अन्नानुरूपां तनुरूप-ऋद्धिं कार्ये निदानाद्धि गुणानधीते' (३-१७)। न्यायाभिमतमोक्षस्य परिहासः - मुक्तये यः शिलात्वाय शास्त्रमूचे सचेतसाम् । गोतमं तमवेक्ष्येव यथा वित्थ तथैव सः । (१७-७५)। वैद्योपिकाभि-मततमःस्वरूपपरिहासः -- ध्वान्तस्य वामोरु विचारणायां, वैशेषिकं चारु मतं मतं मे । औलूकमाहुः खु दुर्शनं तत्, क्षमं तमस्तत्त्वनिरूपणाय ॥ (२२-३५)। (६) भीमांसा-सिद्धान्तवर्णनम् —देवानामरूपित्वं मन्त्ररूपित्वं च —विश्वरूपकलनादुपपन्नं, तस्य जैमिनिमुनित्वमुदीये। विग्रहं मखभुजामसहिष्णुः० (५-३९), प्रत्यक्षलक्ष्यामवलम्ब्य मूर्ति हुतानि यज्ञेषु तवोपभोक्ष्ये। "मर्खं हि मन्त्राधिकदेवभावे॥ (१४-७३)। स्वतःप्रामा-ण्यम्—स्वत एव सतां परार्थता ग्रहणानां हि यथा यथार्थता । (२-६१) । मानवस्य कर्माधीनत्वमीश्वराधीनत्वं वा-अनादिधाविस्वपरम्पराया हेतुस्रजः स्रोतिस वेश्वरे वा। आयत्ति धीरेष जनस्तदार्याः किमीदृशः पर्यनुयोगयोग्यः। (६-१०२)। श्रुतीनां प्रामाण्यम्—

श्रुति श्रद्धत्थ विक्षिप्ताः प्रक्षिप्तां ब्र्थ च स्वयम् । मीमांसामांसलप्रज्ञास्तां यृपद्विपदापिनीम् । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha २२

(१७-६१)। (७) वेदान्तसिद्धान्तवर्णनम् अहासाक्षात्कारः - प्रापुस्तमेकं निरुपा-ख्यरूपं ब्रह्मेव चेतांिस यतव्रतानाम् (३-३)। मुक्तदशा—सा मुक्तसंसारिदशारसाभ्यां द्विस्वादमुल्लासमभुङ्क्त मिष्टम् (८.१५) । लिङ्गशरीरम्—न तं मनस्तच न कायवायवः (९-९४) । अद्वैतवादस्य तात्त्विकत्वम्—श्रद्धां दधे निषधराड् विमतौ मतानाम् । अद्वैततत्त्व इव सत्यतरेऽपि लोकः (१३-३६)। (८) वौद्धसिद्धान्तवर्णनम् बौद्धामिमतः श्र्न्यवादो विज्ञानवादः साकारतावादश्च- 'या सोमसिद्धान्तमयाननेव, शून्यात्मतावादमयोदरेव। विज्ञानसामस्त्यमयान्तरेव, साकारतासिद्धिमयाखिलेव'। (१०-८८)। (९) जैनसिद्धान्तवर्णनम् - जैनाभिमतरत्नत्रयम् - 'न्यवेशि रत्नत्रितये जिनेन यः, स धर्मचिन्तामणिरुज्झितो यया। कपालिकोपानलभस्मनः कृते, तदेव भसा स्वकुले स्तृतं तया'। (९-७१)। (१०) चार्चाकसिद्धान्तवर्णनम्-वर्णनमेतस्य सप्तदशे सर्गे (१७.३६-८३) विस्तरशः प्राप्यते। तद्यथा--न कश्चनेश्वरः । 'देवश्चेदस्ति सर्वज्ञः, करुणाभागवन्ध्यवाक् । तत् कि वाग्व्ययमात्रान्नः कृतार्थयति नार्थिनः' (१७-७७)। अग्निहोत्रादिकं निष्फलम्। 'अग्निहोत्रं त्रयीतन्त्रं त्रिदण्डं भस्मपुण्ड्रकम् । प्रज्ञापौरुषनिःस्वानां जीविकेति बृहस्पतिः (१७-३९) । भोगोप-भोगार्थे शरीरिमदम्। 'सुकृते वः कथं श्रद्धा, सुरते च कथं न सा। तत्कर्म पुरुषः कुर्याद येनान्ते सुखमेधते'।(१७-४८)। न मृतस्य पुनर्जन्म। 'कः शमः क्रियतां प्राज्ञाः, प्रियाप्रीतौ परिश्रमः । भस्मीभृतस्य भृतस्य पुनरागमनं कृतः' (१७-६९) । एवमेव वेदानां वेदाङ्गा-नामन्येषां च विषयाणामत्र प्रतिपदं वर्णनं प्राप्यते ।

उपर्युक्तेन वर्णनेन विश्वदीभवत्येतद् यद् श्रीहर्षः कविताकामिनीकान्तो भाषाप्रयोगविदग्धो विविधशास्त्रपारदृश्चा रसिद्धः कवीश्वरो वर्तते । तस्य काव्यं प्रतिपदं तस्य व्याकरणज्ञतां भावगाम्भीयं पदमाधुर्यं भाषासौष्ठवं रसपरिपाकं च प्रकटयित । अनुपमस्तस्य समग्रेऽपि संस्कृतवाङ्मयेऽधिकारः । गीर्वाणवाणी वाणीश्वरिमव तं सेवते । स भाषां पुत्तालिकामिव प्रनर्तयितुं प्रभवित । तदीहासमकालमेव समुपतिष्ठन्ति रसा भावाः कान्ता पदावली विविधाश्चालंकाराः । गूढातिगूढभावान्वितानि शिल्ष्टानि च पद्यानि स तेनैव सारत्येन रचितुमलं यथा सरलानि सरसानि प्रसादगुणोपेतानि दृद्यानि पद्यानि । तस्य पद्यानि नारिकेलफलोपमानानि सन्ति विद्धः कठोराणि अन्तः माधुर्योपेतानि च । रसिकैः सद्धदयैर्विविधशास्त्रनिष्णातैरेव तत्काव्यगौरवम् अवधारियतुं पार्यते । विविधशास्त्रादि- सिद्धान्तवर्णनादेवास्य महाकाव्यस्य प्रतिपदं क्लिष्टत्वमालक्ष्यते । अतः साधूच्यते—

СС-О. तेन् श्वात्विध्वात्विद्धात्विद्यात्विद्धात्विद्धात्विद्धात्विद्यात्विद्धात्विद्यात्वविद्यात्वात्वविद्यात्वविद्यात्विद्धात्विद्धात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्विद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्वविद्यात्य

१३. भारतीया संस्कृतिः

भारतीयसंस्कृतेविवृतिविचारे बहवोऽन्योगाः समापतित चेतसि । तेषां समासतोऽत्र विवरणमपस्थाप्यते। का नाम संस्कृतिः ? कथमिवैषोपकरोत्यात्मनो मनसो जनस्य देशस्य संसतेर्वा ? हेयोपादेयोपेश्या वैषा ? उपादेया चेदियं किं स्यात् स्वरूपमस्याः साम्प्रतिक्यां लोकसंस्थितौ ? कास्तावत् प्रातिस्विक्यो भारतीयसंस्कृतेः ? किमिव हि साध्यं क्षेमिमह लोकस्य संस्कृत्याऽनया ? कानि च सन्ति कारणानि विश्वसंस्कृतावाद्दतेरस्याः ? इत्यादयः । संस्करणं परिष्करणं चेतस आत्मनो वा संस्कृतिरिति समिभधीयते । सा नाम संस्कृतिर्या व्यपनयति मलं मनसश्चाञ्चल्यं . चेतसोऽज्ञानावरणमात्मनश्च । पापापनयपूर्वकमेषा प्रसादयति स्वान्तं, दुर्भावदमनपूर्वकं संस्थापयति स्थैयं चेतसि, मनःशुद्धिपुरःसरं पावयत्या-त्मानमपहरति च चित्तभ्रमम् । संस्कृतिरेवैषा चेतः प्रसादयति, मनोऽमलीकुरुते, दुर्भावान् दमयते, दुर्गुणान् दारयति, पापान्यपादुरुते, दुःखद्वन्द्वानि दहति, ज्ञानज्योतिर्ज्वस्यति, अविद्यातमोऽपहन्ति, भूतिं भावयति, सुखं साधयति, धृतिं धारयति, गुणानागमयति, सत्यं स्थापयति, शान्ति समादधाति च । न केवलमेषोपकर्त्री व्यष्टेरेवापि तु समष्टेरपि जीवनभूता । उपकरोति चैषाऽऽमनो मनसो लोकस्य राष्ट्रस्य संस्तेश्च । अजस्रमेषोपादेया सर्वेरेव स्वसुखमभीप्सुभिः। स्वोन्नतिमभीप्सता न शक्या केनाप्येषा हातुसुपेक्षितुं वा। उिज्ञतोपेक्षिता वैषा परिणंस्यते स्वात्मविनाशाय लोकाहिताय च। अङ्गीकृतेऽस्या उपादेयत्वं तदेव स्यादस्याः स्वरूपं यत् साम्प्रतिक्या लोकसंस्थित्या नातितरां संभिद्येत । विविधाचारविचारवादव्याकुले विश्वेऽस्मिन् सैव संस्कृतिरुपादेयतामाप्स्यति या समेषां स्वान्तेषु सद्भावाविर्भावपुरःसरं विश्वहितं विश्वबन्धुत्वं विश्वोपकरणं चादर्शत्वेनोररी-कुर्यात् । अतः सिध्यत्यदो यद् विश्वजनीना संस्कृतिरेव साम्प्रतसुपादानमईति, सैव च तापत्रयसन्तमं जगत् तापापनयनेन सुखनिधानं सम्पादियतुं प्रभवति ।

भारतीयसंस्कृतेः काश्चन प्रातिस्विक्यो सुख्या विशेषा वाऽत्र प्रस्त्यन्ते । (१) धर्मप्राधान्यस् — मानवेषु धर्मप्राधान्यसेव तान् व्यवच्छेदयति पशुभ्यः । अत उक्तम्— 'धर्मो हि तेषामधिको विशेषो, धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः' । निह धर्मपदेन कश्चन सम्प्रदायविशेषोऽत्र विवक्षितः । जगद्धारकाणि मूलतत्त्वानि यमाख्यया व्याख्यातानि शास्त्रेषु धर्मपदवान्यानि । तदेवोच्यते — 'धारणाद् धर्म इत्याहुर्धमों धारयते प्रजाः । यः स्याद् धारणसयुक्तः स धर्म इति निश्चयः' । यमास्तु व्याख्याता योगदर्शने— 'अिहंसा-सत्यमस्त्रेयब्रह्मचर्यापरिष्रहा यमाः (योग० २-३०) अिहंसायाः समाश्रयणम्, सत्यस्य परिपालनम्, अस्त्रेयवृत्त्या आश्रयः, ब्रह्मचर्यव्रतस्यानुष्ठानम्, अपरिग्रहव्रतस्य पालनं च

CC-ट्याम इस्सुन्तको Tripस्नि एंजिस्साली सा अवामा (CSDS) Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ल्लप्यत इति तानि विश्वजनीनधर्मपदेन वाच्यानि । एत एव यमाः शाश्वतिकाः सार्वभौमा महाव्रतमित्युच्यन्ते—'जातिदेशकालसमयानवच्छिन्नाः सार्वभौमा महाव्रतम्'(योग०२-३१)। यश्चैहिकमामुष्मिकं चोभयं क्षेममाबहति च धर्म इति व्यवस्थापितं दैशेपिकदर्शनकृता कणा-देन 'यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः' । यतोऽभ्युदयोऽर्थात् ऐहिकी स्रोकिकी मोतिकी वः समुन्नतिः समुपलभ्यते, निःश्रेयसावाप्तिर्मोक्षाधिगमश्च भवति पारलौकिकं च सुख-माप्यते, स एव धर्मपदेन वाच्यः । एतदेव मनसिकृत्य मनुना धृत्यादयो दश राुणा धर्म-नाम्ना व्याख्याताः । तद्यथा — 'वृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौर्चामन्द्रयनिग्रहः । धीर्विद्या सत्यमकोधो दशकं धर्मलक्षणम्' (मनु०) । (२) आध्यात्मिकी भावना— जीवनमेतन्न केवलं भोगार्थमेव, अपि त्वात्मोन्नतेः प्रमुखं साधनम् । आध्यात्मिकी भावना मानवं देवत्वं प्रापयति । स सर्वे विपि जीवेष्वेकत्वं समीअते । समग्रमपि प्राणिजातं परेदोनैवोत्पादितमिति विचारं विचारं तत्रैकत्वमनुभ्वति । जगदिदं परमात्मना व्यातम् । ईशावास्यमिदं सर्वे यत् किं च जगस्यां जगत्' (ईशोपनिषद् १) । 'यस्तु सर्वाणि भृतान्यात्मन्येवानुपश्यति । सर्वभृतेषु चारमानं ततो न विजुगुप्सते' (ईशोप० ६)। यस्मिन्सर्वाणि भृतान्यारमैवाभृदु विजानतः । तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपस्यतः' (ईशोप० ७) । अध्यात्मप्रवृत्त्या जीवन्मुन्नतं भवति । सर्वत्रैकत्वदर्शनेन न मानवः शोकाद्यभिभृतो भवति । स प्रतिपदमा-नन्दमनुभवति । निखिलमपि संस्कृतवाङ्मयं व्याप्तं भावनयाऽनया । भावनैषा चेतः प्रसादयति, आत्मानं मोक्षाधिगमं प्रति प्रेरयति । उपनिषत्सु गीतायां चारया भावनाया वणितं विविधं महत्त्वम् । अध्यात्मश्रवृत्त्या प्रवर्तते मनसि सहृदयता सहानुभृतिरौदार्यादिकं च। (३) पारहोकिकी भावना—जगदिदं विनश्वरं, कीतिरेवैकाऽविनाशिनी। भौतिका विषया इमे आपातरम्याः पर्यन्तपरितापिनश्च । 'आपातरम्या विषयाः पर्यन्त-परितापिनः' (किराता० ११-१२) । एषामाश्रयणेन पतनं सुल्भं, दुःस्वावाप्तिः सुल्भा, मुखं तु नितरां दुर्लभम् । एतस्मादेव हेतोधींरा वीराः सुकृतिनश्च कर्तव्यं प्रमुखं मन्वाना विषयसुखानि विहाय प्राणान् तृणवट्गणयन्तः समरादिषु वीरगति लेभिरे । (४) सदा-चारपालनम्—'आचारः परमो धर्मः' इति सिद्धान्तमाश्रित्य सदाचारः सर्वोत्तमं तप इति स पालनीयः। अत उक्तं महाभारते—वृत्तं यत्नेन संरक्षेट् वित्तमेति च याति च। अक्षीणो वित्ततः क्षीणो वृत्ततस्तु हतो हतः'। ब्रह्मचर्यादिपालनेनेन्द्रियनिग्रहो मनसो दमश्र साधनीयौ । सदाचारपालने ब्रह्मचर्यस्य विशिष्टं महत्त्वम् । ब्रह्मचर्यव्रतस्याश्रयणेन न केवलं शारीरिकी समुन्नतिरवाप्यते, अपितु मानसिकी वौद्धिकी आध्यात्मिकी चापि समुन्नतिः सुतरां सुलभा । देवा ब्रह्मचर्यवतपालनेनैव मृत्युमपि वशीकृतवन्तः । 'ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाष्नतं (अथर्व०) । देवा ब्रह्मचर्येणैवानन्दमधिगतवन्तः । CC-ा छान्येरीमा देखे मार्क्सार Dसाब्देश (n आध्यक्षिका) CSD श्चा रिप्रोप्या व By Siddhanta e Gangoti Gyaar Kosha

वशीकरणमिन्द्रियाणां नियमनं चेत्यादिगुणाः सदाचारपालने विशेषतोऽवधेयाः। (५) वर्णट्यवस्था—ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यग्रुद्राश्चत्वार इमे वर्णाः । वेदानां वेदाङ्गानां चाध्ययन-मध्यापनं यजनं याजनं विद्याया धनस्य च दानं धनादिदानस्य स्वीकरणं च ब्राह्मणस्य कर्तव्यम् । 'अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा । दानं प्रतिग्रहश्चैव ब्रह्मकर्म स्वभावजम् (मनु०)। 'शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च । ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् (गीता० १८-४२) । देशस्य समाजस्य च रक्षणं क्षत्रियस्य परमो धर्मः । स विपत्तेः क्षताद् वा लोकं त्रायते । अतः साधु निगदितं कविवरेण्येन कालिदासेन— क्षतात् किल त्रायत इत्युदग्रः क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः' (रघु०)। 'शौर्य तेजो घृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाऽप्यपलायनम् । दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्' (गीता० १८-४३) । देशस्य जनतायाश्च मनोरञ्जनत्वादेव राजा राजते । 'राजा प्रकृतिरञ्जनात्' । कृषिगौरक्षा वाणिज्यं च वैश्यस्य प्रमुखं कर्म । 'कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम्' (गीता० १८-४४)। एषु कर्ममु वैश्यैः समुन्नतिः कार्या। श्रमसाध्यं शारीरिकं च कार्ये श्र्रस्य प्रधानं कर्तव्यम् । 'परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम्' (गीता १८-४४)। यो याद्यं कर्म कुरुते ताद्यं वर्णमवाप्नोति । सर्वे वर्णाः स्वं स्वं कर्म विद्धीरन् । इदमिहा-वधेयम् आर्यसंस्कृतौ वर्णस्यवस्था स्वीक्रियते, न तु जातिप्रथा। जन्मना जातिरिति, कर्मणा वर्ण इति । वर्णो वृणोतेः । जनो यत्कर्म वृणोति स तस्य वर्णः । जातिप्रथा सदोषा हेयोपेश्या च, परं वर्णव्यवस्था निर्दोषोपादेया च। (६) आश्रमव्यवस्था - ब्रह्मचर्य-गृहस्थवानप्रस्थसंन्यासाश्चत्वार एते आश्रमाः । स्ववयोऽनुरूपमाश्रममाश्रयेत् , तदाश्रम-निर्दिष्टनियमान् पालयेच । आपञ्चविंशतिवर्षे ब्रह्मचर्याश्रमः । विद्याध्ययनं तयोमयजीवन-यापनं सर्वविधगुणानां संग्रहश्राश्रमेऽस्मिन् प्रधानं कर्तव्यम् । आपञ्चाशद्वर्षे गृहस्थाश्रमः । भौतिकी शारीरिकी मानसिकी चसमुन्नतिः, भौतिकविषयाणामुपभोगः, दाम्पत्यजीवनयापनं वंशप्रतिष्ठायै सन्तानोत्पत्तिश्चाश्रमेऽस्मिन् विशिष्टं कर्म । पञ्चाशद्वर्षानन्तरं वानप्रस्थाश्रमे प्रवेशः । सपत्नीकेनेश्वराराधनं, संयमपारूनं, योगादिकर्मसु विशिष्टा प्रवृत्तिश्च तत्र प्रमुखं कर्म । पष्टिवर्षानन्तरं यदैव वैराग्यभावना समुत्यद्यते, तदैव संन्यासाश्रम आश्रयणीयः । 'यदहरेव विरजेत् तदहरेव प्रव्रजेत्'। भौतिकविषयान् परित्यज्य योगाभ्यासे रतिः, पुण्यार्जने प्रवृत्तिः, समाधौ मनसः स्थितिः, लोकोपकरणे च विनियुक्तिः परिव्राजकानां प्रथमं कर्तव्यम् । (७) कप्रवादः -- मनुष्येण सदाऽनासक्तिभावनया कर्म कार्यमिति । कृतस्य कर्मणः फलावाप्तिः सुनिश्चिता । सत्कर्मणा पुण्यं दुष्कर्मणा पापं चाप्नोति । 'अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्'। 'पुण्यो वै पुण्येन कर्मणा भवति पापः पापेनैवेति' (बृहदारण्यकम्) । मानवः कर्मानुसारं शुभं वाऽशुभं वा जन्म लभते । सुकृतं क्रियते चेत् CC-O. सित्हिक्षाक्ष्मते, गिक्कु कि विद्याते चेद्वाहर छिड़ा रात्री सर्वास्ववस्थास् कर्मणां फलमवश्यम-

वाप्यते । अतस्तादृशं कार्ये यथा जीवने दुःखावाप्तिर्न स्यात् । (८) पुनर्जन्मवादः— कर्मानुरूपं सर्वस्यापि जन्तोः पुनर्जन्म भवति । 'जातस्य हि ध्रुवो मृत्युधु वं जन्म मृतस्य च' (गीता २-२७)। यो हि जायते तस्य मरणं ध्रुवमेवास्ति । मृतस्य च कर्मानुसारं पुनर्जन्म सुनिश्चितम् । यः पूर्वजन्मनि यादशं कर्म कुरुते, सोऽस्मिन् जन्मनि तादश एव कुले परिवारे च जन्म लभते । प्रतिभादिवैशिष्ट्यं विशिष्टगुणादिसमन्वितत्वं तद्वैपरीत्यं च पूर्वजन्मकृतकर्मविपाक एवेत्यवगन्तव्यम् । ज्ञानाग्निदग्धकर्माणः केचन यतयो निःश्रेय-समधिगच्छन्ति । .(९) मोक्षः - मोक्षावातिः परमः पुरुषार्थः । मोक्षमधिगम्य न च पुनरावर्तन्ते मुनयः । केषांचित् मतेन नियतकालं निःश्रेयससुखमुपमुख्य तेऽप्यावर्तन्त इति । ज्ञानाग्निना सर्वकर्मप्रदाहे मोक्षावाप्तिर्भवतीति । (१०) श्रुतीनां प्रामाण्यम् —वेदाश्च-त्वारः स्वतःप्रमाणस्वरूपाः, ग्रन्था अन्ये तु तन्मूलकं प्रामाण्यं लभन्तेऽतस्ते परतःप्रमाण-रूपाः। श्रुत्युक्तदिशा कर्मानुष्ठानेन श्रेयोऽवाप्तिस्तदन्यथाऽऽचरणेन दुःखाधिगमश्च। (११) यज्ञस्य महत्त्वम् — सर्वे रेव जनैः पञ्च यज्ञा दैनिककर्तव्यत्वेनानुष्ठेयाः । यज्ञा-नुष्ठानेनात्मप्रसादनं देवप्रसादनं चोभयं क्रियते । पञ्च यज्ञाः सन्ति—(क) ब्रह्मयज्ञः— सन्ध्योपासनमीश्वरोपासनं च, (ख) देवयज्ञः—दैनिकयागस्यावश्यकर्तव्यता, (ग) पितृ-यज्ञ:--मातुः पितुश्च सततं परिचर्या, तयोराज्ञापालनं च, (घ) बलिवैश्वदेवयज्ञः-परिपक्तस्य भोजनस्याल्पेनांद्रोन मन्नपूर्वकमग्नावाहुतिः, कीटादिभ्योऽन्नप्रदानं च, (ङ) अतिथियज्ञः—'अतिथिदेवो भव' इति शास्त्रमनुस्त्यातिथीनां शुश्रूषा सत्करणं च। (१२) सत्यपरिपालनम् - मनसा वाचा कर्मणा सत्यमुरीकुर्यादनुतिष्ठेच । सर्वथा सत्यं व्यव-हरेन्नासत्यम् । सत्यमेव शाश्वतं विजयं लभते नासत्यम् । तथोक्तम् — सत्यमेव जयते नानृतम् । (१३) अहिंसापालनम् 'अहिंसा परमो धर्मः' इत्यहिंसैव श्रेष्ठधर्मत्वेनाङ्गी-क्रियते । अहिंसयैव साध्या विश्वशान्तिः । जनहितं विश्वहितं चेप्सताऽजसं मनसा वाचा कर्मणा चाहिंसाधर्मः पालनीयः। (१४) त्यागमहत्त्वम् अनासक्तेनात्मना जगति व्यवहरेत्। न परस्वममीप्सेत्। पुरुषार्थोपार्जितमेवोपभुञ्जीत। तथा चोक्तं वेदे—'तेन त्यक्तेन भुक्षीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्' (यजु० ४०-१)। (१५) तपोमयं जीव-नम् -- तपसैव शुध्यति जीवनं मनश्च प्रसीदति । भोगवासनाभिर्विषीदति स्वान्तम् । मनसो बुद्धयाश्च परिष्काराय सततं तपोमयं जीवनं यापयेत्। (१६) मातृपितृगुरु-भक्तिः-मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव, इत्येषां देववत्पूज्यत्वमाख्यायते। शुश्रूषयैवैषां सिध्यति सकलमिह संसतौ । मातुः पितुर्गुरूणां चादेशोऽनवरतं पालनीयः । त एव मानवस्य सर्वोत्तमं ग्रुभिचन्तकाः । तेषामाज्ञानुसारमेव व्यवहर्तव्यम् ।

विश्वहितस्य विश्वोन्नतेश्च सर्वा एव मूलभूता भावनाः संस्कृतावस्यामुपलभ्यन्ते । एतासामाश्रयणेन सर्वविधा समुन्नतिः सुलभा राष्ट्रस्य विश्वस्य च । गुणवैशिष्ट्यमेवैतस्याः

cटारी आ. सम्राद्धियते ग्रिक्समर्थस्थ्रासम्बियक् Parai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'१४. संस्कृतस्य रक्षार्थं प्रसारार्थं चोपायाः

सुविदितमेतत् समेषामपि होमुषीमतां यद् भारतीया संस्कृतिनीधिगन्तुं पार्यते संस्कृतज्ञानमन्तरा । संस्कृतिमन्तरेण निर्जीवं जीवनं जीविनः । संस्कृतिर्हि स्वान्तस्य संस्कर्जी, सन्द्रावानां भावयित्री, गुणगणस्य ग्राहयित्री, धैर्यस्य धारयित्री, दमस्य दात्री, सदाचारस्य रुचारयित्री, दुर्गुणगणस्य दमयित्री, अविद्यान्धतमसस्यापनोदयित्री, आत्मा-वयोधस्यादगमियत्री, सुखस्य साधियत्री, शान्तेः सन्धात्री च काचिदनुत्तमा शक्तिः। सेयं संस्कृतिरजस्तं रक्षणीया पालनीया परिवर्धनीयेति भारतीयसंस्कृतेः समुद्धारायावबोधाय च संस्कृतज्ञानमनिवार्यम् । समग्रमिष पुरातनं भारतीयं वाङ्मयं संस्कृतमाश्रित्यावतिष्ठते, इति सुविदितम् । न केवलं भारतीयसंस्कृतिसंरक्षणार्थमेवावस्यकं संस्कृतमपि तु संस्कृत-मेतत् विविधसंस्कृतिप्रसारसाधनम्, भारतीयभाषणामभिवृद्धिहेतुः, राष्ट्रभाषायाः समुन्नतेः साधकम्, आर्यभाषाया गौरवस्य प्राणभूतम्, विश्ववाद्ययस्य पथप्रदर्शकम्, जीवन-द्र्शनस्य दर्शकम्, आचारशास्त्रस्य शिक्षकम्, पुरुषार्थस्य प्रयोजकम्, विविधविरुद्ध-संस्कृतिसमाहारसाधकम्, प्रान्तीयानां प्रादेशिकानां च विकृतीनां विवादानां संघर्षाणां च प्रशमनम् , राष्ट्रीयभावनायाः सद्वृत्ततायाश्चाभिवृद्धेर्म् लम् , वैदिकवाङ्मयालोकस्य प्रसार-हेतुः, आध्यात्मिक्या भौतिक्याश्च समुन्नतेः साधनमिति सुतरामवधेया । संस्कृत्या वाद्य-येन च विहीनस्य देशस्य जातेश्चाधःपतनमनिवार्यम् । द्रयोरेवैतयोः संरक्षणेन संवर्धनेन च समेधते श्रीः सर्वस्या अपि संस्तेः। इत्येतदेवावधार्यं संस्कृतस्य संरक्षणस्य प्रचारस्य प्रसारस्य च भूयस्यावस्यकताऽनुभूयते साम्प्रतम् । तद्रक्षणप्रचारप्रसारोपायाश्च समासतोऽत्र विविच्यन्ते समुपस्थाप्यन्ते च।

(१) संस्कृतकाठिन्यापनोदनम्—विल्हा दुल्हा दुर्वोधा चेयं गीर्वाणगीरिति लोकानां विचारः प्रशमं नेयः । सरला सुबोधा प्रसादगुणोपेता चेयं प्रयोज्या व्यवहायां च । सरला सुबोधेव च भाषा प्रचरित प्रसरित चेत्यवगन्तव्यम् । (२) संस्कृतव्याकरणस्य काठिन्यं महद्वाणस्य सरलीकरणम्—संस्कृतस्य प्रचारे प्रसारे च संस्कृतव्याकरणस्य काठिन्यं महद्वाधिकम् । व्याकरणं सरलं कार्यम् । स्त्राणां कण्टस्थीकरणे न बल्लमाधेयम् । व्याकरण-धिकम् । व्याकरणं नियमा अनुवादद्वारा प्रयोगशेत्या च शिक्षणीयाः । प्रयोगशैत्याऽवगता नियमास्तथा वद्वमूला भवन्ति, यथा नान्येनोपायेन । (३) नवशब्दानामात्मसात्करणम्—विविधास भाषास प्रयुज्यमाना नवभावावबोधका नव्याः शब्दाः संस्कृतशब्दावत्यां संस्कृतस्व-धासु भाषासु प्रयुज्यमाना नवभावावबोधका नव्याः शब्दाः संस्कृतशब्दावत्यां संस्कृतस्व-स्पप्रदानद्वारा आत्मसात्करणीयाः । संसतौ व्यवहियमाणाः सर्वा एव प्रमुखा भाषाः शैलीमिमामाश्रयन्ते । प्रकारेणैतेन तासां भाषाणां प्रगतिष्ठद्गितिर्जागतिश्च संसूच्यते ।

CC-O. Dangernessस्मात्क्र्यात्म् thहोत्नीकं tio आक्रुड्यंत्व्य हेड्कि)! Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रयुज्यमानाः सर्वेऽपि भावाः सहर्षमाश्रयणीयाः प्रयोज्याश्च । नवभावाववोधनार्थे नूतना शब्दावली प्रयोज्या निर्मातव्या वा । विदेशीयनवशब्दग्रहणेऽपि न संकोच-प्रवृत्तिरास्थेया । (५) संस्कृतभाषाव्यवहारः — जीवता जागृता च सैव भाषा या लोके व्यवहियते प्रयुज्यते च। संस्कृतभाषायाः प्रचाराय प्रसाराय चानिवार्यमेतद् यत् संस्कृतज्ञाः संस्कृतमाश्रित्यैव व्यवहरेयुः । भाषणे हेस्वने वादे विवादे संलापे पत्रादि-व्यवहारे च संस्कृतमेव प्रयुक्जीरन्। (६) नवग्रन्थरचना—नवीनान् विषयानाश्रित्य संस्कृते नवग्रन्थरचना स्यात्। साम्प्रतिके काले प्रचलिताः सर्वेऽपि विषयाः संस्कृत-माध्यमेन सुलभाः स्युः। एतदर्थे विविधविद्यानिष्णताः संस्कृतज्ञाः सविद्येषमुत्तर-दाथित्वं भजनते । तेषां चैतत्पावनं कर्म । (७) नवविषयाध्ययनम् —संस्कृतज्ञानां कृतेऽनिवार्यमेतद् यत्ते संस्कृताध्ययनेन सहैव भूगोलमैतिह्यं विज्ञानादिविषयान् विदेशीया भाषाश्चाधीयीरन् । विविधविद्याऽध्ययनमन्तरेणाशक्यं धियो विस्फुरणम् । (८) अन्वेषणकार्यम् — संस्कृतेऽन्वेषणकार्यस्य महत्यावश्यकता । अन्वेषणकार्यमेव गौरवाधायि । अन्वेषणेनैव वाङ्मयस्य महत्त्वमुत्कर्षश्चावगम्येते । एतद्र्थं महान् श्रमोऽ-पेक्ष्यते । (९) संस्कृतग्रन्थानामनुवादः - संस्कृतस्य प्रचारार्थे प्रसारार्थे चावस्यकमदो यत् सर्वोषामपि प्रमुखानां संस्कृतग्रन्थानां न केवलं भारतीयासु भाषास्वेव प्रामाणिको-ऽनुवादः स्यादिप तु विश्वस्य सर्वास्वेव प्रधानासु भाषासु तेषामनुवादः स्यात् । कार्ये चैतत् सर्वकारप्रयत्नेन तत्सह्योगेन च सम्भवति। (१०) सुलभग्रन्थमालाप्रका-शनम् सर्वेपामेव प्रमुखानामुपयोगिनां च संस्कृतग्रन्थानां सानुवादोऽल्पमूल्यकं संस्करणं प्रकाशितं स्यात् । महार्घाणां चाकरग्रन्थानां सारांशरूपं संस्करणं सानुवादं प्रचारार्थे प्रका-शितं स्यात्। (११) वैज्ञानिकशैलीसमाश्रयणम्—वैज्ञानिकीं शैलीं समाश्रित्य संस्कृतं प्रारिप्स्नां बालानां संस्कृतप्रेमिणां च कृते सुबोधा हृद्याश्च ग्रन्थाः प्रणेयाः । (१२) संस्कृतस्यानिवार्यशिक्षणम् आर्य (हिन्दी)-भाषया सहैव संस्कृतमि सर्वेषु विद्यालयेष्वनिवार्ये स्यात् । संस्कृतमूलकमेव हिन्दीभाषाज्ञानं श्रेयोवहमिति समेषां सुधिया-मत्रैकमत्यम्। (१३) पठनपाठनपद्धतिपरिष्कारः संस्कृतस्य प्रचारार्थमावदयकमेतद् यत् संस्कृतस्य पठनपाठनप्रणाली साम्प्रतिकीं वैज्ञानिकीं पद्धतिमनुसरेत् । तत्र च स्यादा-वस्यकः परिष्कारः । (१४) विद्युप्तग्रन्थोद्धारः — संस्कृतस्यानेके महार्घा ग्रन्था विद्युप्ता विद्धप्तप्राया जीर्णाः शीर्णा वा यत्र तत्रोपलभ्यन्ते । तेषामभ्युद्धार आवस्यकः । (१५) सर्वकारसहयोगः - सर्वमुपरिष्टादिमहितं सर्वकारसहयोगेनैव सम्भवति । सर्वकारस्य कर्तव्यमेतद् यत् स संस्कृतज्ञानाद्रियेत, संस्कृतवाङ्मयप्रसारे साहाय्यमाचरेत् , राजकीय-CC निष्ठ, संद्र्वतस्थानमनिकारिक्कार्यकाल् । अंक्ष्यतिक्षिक्कोरिक्षेत्रिक्षेत्रिक्षेत्रिक्षेत्रिक्षेत्रिक्षेत्र

१५. कस्यैकान्तं सुखम्रुपनतं दुःखमेकान्ततो वा । (मेघ॰ उत्तर॰ ४९)

निखिलं जगदिदं परिवर्तनशालि । प्रतिक्षणं प्रतिपलं सर्वोऽपि भूतग्रामः स्वात्मिन परिवृत्तिमनुभवति । परवृत्तिधर्मत्वमेवास्य भुवनस्य विलोकं विलोकं विपश्चिद्धः 'गच्छ-तीति जगत्' इति निर्वचनमाश्रित्य जगदिति नामधेयं विहितम्। 'संसरित गच्छिति चलित वेति संसारः संस्तिविद्या इति व्युत्पत्तिनिमित्तकं संसारः संस्तिरिति च नामद्वयं प्रवर्तितं कोविदैः । जगत् , संसारः, संस्तिरित्यादयः शब्दाः समुद्वोषयन्ति संसारस्य परिवर्तनशालित्वम् । नेह किञ्चिद् वस्तु शाश्वतं स्थिरमपरिवर्तनशालि वा । यदा सर्वस्य लोकस्ये-दृश्यवस्था, तदा न सम्भवति मानवजीवनस्यापरिवृत्तित्वम् , तत्रापि च सुखस्य दुःखस्य वा समावस्थया समवस्थानम् ।

जगित यथर्तवः परिवर्तन्ते, यथा सप्तसिष्ठदेति विधुरस्तमेति, निशाकरश्चीदयं याति प्रभाकरश्चास्तमुपगच्छिति, यथा रात्रेरनन्तरं दिनं दिवसानन्तरं च विभावरी, तथैव सुखानन्तरं दुःखं दुःखानन्तरं च सुखम्, सम्पदनन्तरं विपद् विपदनन्तरं च सम्पदिति । सर्वनेतत् परिवर्तनस्य क्रममात्रम् । एतदेव तथ्यं समीश्य सन्दिशति शाकुन्तले किवकुलगुष्ठः कालिदासः । 'यात्येकतोऽस्तशिखरं पतिरोषधीनाम्, आविष्कृतोऽष्ठणपुरःसर् एकतोऽर्कः । तेजोद्वयस्य युगपद् व्यसनोदयाभ्यां, लोको नियम्यत इवात्मदशान्तरेषु'॥ (शाकु० ४-२) । उत्थानं पतनम्, उत्कर्षोऽपकर्षः, जन्म मृत्युः, सम्पत्तिविपत्तः, सुखं दुःखमिति च परिवृत्तेरवस्थान्तरमेव नान्यत्। यथा शैशवं तदनु यौवनं तदनु वार्धकं तदनु देहावसानं तदनु जन्मान्तरं तदनु पुनः शैशवम्, एवमेव जीवने सुखदुःखं परिवर्तेते, परिवृत्तेरवश्य-म्भावित्वादिनवार्यत्वाच ।

सम्भवित परिवर्तनेऽस्मिन् केपामप्यापित्तरिनष्टापित्तवां। परं निपुणं विचार्यते ति प्रित्रीयते परिवृत्तेः सुतरामावश्यकतोपयोगिता च । भुवनेऽस्मिन् नाभविष्यत् परिवर्तनं चेन्नाभविष्यत् प्रगतिरुन्नतिरम्युदयश्च लोकानाम् । ऋत्नां परिवृत्तिमन्तरेण नाभविष्यद् वसन्तो ग्रीष्मो वर्षा वा । न चेदभविष्यत् सुवृष्टिर्नाभविष्यत् सुभिक्षम् । नाभविष्यच्चेद् दुःखं नानुभूतमभविष्यत् सुखम्। दुःखस्य सत्तैव सुखमनुभावयित्, सुखस्य सत्ता च दुःखम् । सुखदुःखस्य समवस्थानमावश्यकम् । यद्यको यावजीवं सुखं सम्पत्तिमेवानुभवेदन्यश्च दुःखं विपत्तिमेव वा, तिहं न प्रसरिष्यति लोकस्थितिः । कर्मणामावश्यकतोपयोगिता चानुभूयते सर्वेरेव । कर्मविपाकोऽपि नियतोऽतः कर्मानुरूपं कश्चित् स्वकृतसुकृतपरिपाकरूपेण सुखमिषगच्छिते, तिद्वपर्ययेण च दुःखम् । सुखदुःखं परिवर्तमानमेतत् सुतरां शिक्षयित निखलं जगत् सुकृत्यस्य सत्परिणामित्वं दुष्कृत्यस्य च दुष्परिणामित्वम् ।

परिवृत्तेरेतस्य महत्त्वमालोक्यैव महाकविभिर्विविधाः स्क्तयो विषयेऽस्मिन् वर्णिताः। यथा च—(क) कस्यैकान्तं सुखमुपनतं दुःखमेकान्ततो वा। नीन्वैर्गन्छःयुपरि ^{CC-चि. दिशिविक्रमेश्}मिक्रवेशां ६०(कोषण वर्षकाः) (\$D (स्व)) अतसेऽिं है जैकान्तस्य देशितु के सिव्यक्र कान्तदुःखः पुरुषः पृथिव्याम्। (बुद्धचरितम् ११-४३)। (ग) कालक्रमेण जगतः परिवर्त-माना, चक्रारपङ्क्तिरिव गच्छिति भाग्यपङ्क्तिः। (स्वप्न० १-४)। (घ) भाग्यक्रमेण हि धनानि भवन्ति यान्ति। (मृच्छ० १-१३)। (ङ) चक्रवत् परिवर्तन्ते दुःखानि च सुखानि च। (हितो० १-१७३)

किं नाम मुखं, किञ्च दुःखिमिति। मुखदुःखस्य बहूनि लक्षणानि वर्ण्यन्ते विवधैः शास्त्रकारैः। भगवान् मनुरत्र निर्दिशति यत् सर्वमात्माधीनं मुखम्, आत्मायत्तत्वं वा मुखत्विमिति, परायत्तत्वं च दुःखिमिति। तदाह—'सर्वे परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं मुखम्। एतद् विद्यात् समासेन लक्षणं मुखदुःखयोः'। केचन चान्ये मुखदुःखयोर्लक्षणं निगदन्ति। मु मुष्ठु मुखकरं वा खेभ्य इन्द्रियेभ्य इति मुखम्, ज्ञानेन्द्रियेभ्यः मुखकरं यत् तत्मुखमिति। एवमेव ज्ञानेन्द्रियेभ्यो दुःखकरं यत् तद् दुःखमिति। मन्मत्या तु लक्षणान्तरमिष शब्दयोरनयोः सम्भवति। मुख् खानि मुखानि, दुष्टानि खानि दुःखानीति। इन्द्रियाणि चेत् संयतानि तर्हि सर्वमिष विषयजातं मुखत्वमापद्यते। दुष्टानि चेदिन्द्रियाणि तर्हि सर्वोऽपि विषयग्रामो दुःखत्वेनापति। इत्थं मुखदुःखशब्दद्वयमेवेन्द्रियसंयमस्य महत्त्वमुपदिशति।

सुखबद् दुःखस्यापि जीवनेऽनल्पं महत्त्वम् । दुःखनिशीथिनीं धृत्योत्तीर्थेव धीराः श्रीकौमुदीमाकाङ्क्षन्ति । अननुभ्य दुःखं न सुखं साधूपभुज्यते । अतः साधूच्यते—सुखं हि दुःखान्यनुभ्य शोभते (मृन्छ० १-१०), यदेवोपनतं दुःखात् सुखं तद्रसवत्तरम् (विक्रमो० ३-२१) । समीक्ष्यते चैतन्त्रत्यहं यन्न सुखं सुलमं दुःखानुभूतिमन्तरा प्रत्यवायमन्तरेण च । दुःखमनुभ्य प्रत्यूहान् निरस्य च श्रेयः सुलमम् । अत एवाभिधीयते —श्रेयांसि लब्धुमस्खानि विनान्तरायैः (किराता० ५-४९), विष्नवत्यः प्राथितार्थसिद्धयः (शाकु० अंक ३)।

कर्मविपाकस्य वलीयस्वात् समापति चेद् दुःखं ति कि नु विधेयं वराकेण विपद्मस्तेन। दुःखादधौ निमग्नेन धैर्यमेवावलम्बनीयम् । धैर्यमाश्रित्यैव धीरा विपत्पारावार- मुत्तरित । पारावारे पोतमङ्गेऽपि सायात्रिको धृतिमवष्टभ्य तितीर्षत्येव । उक्तं च व्याज्यं न धेर्य विधुरेऽपि काले, धैर्यात् कदाचिद् गतिमाप्नुयात् सः । याते समुद्रेऽपि च पोतमङ्गे, सायात्रिको वाञ्छति तर्नुभेव ॥ घोरे दुःखेऽपि नर आत्मशक्तिमाश्रयते चेत्स दुःखप्रहाणि कर्तु प्रभवति । निह किञ्चिदसाध्यमात्मशक्त्या । आत्मशक्ति सर्वोदयस्य मृलम् । सादुःखविभावरी स्वप्रखरांश्रुभिः सद्यः संहरति । अत उच्यते — उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् । आत्मैव ह्यात्मनो वन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥ धैर्यधना हि साधवः । ते सम्पदि न हृष्यन्ति, न च विपदि विषीदन्ति । अतः सुखदुःखे समे कृत्वा प्रवर्तेत । सम्पदि विपदि च महतामेकरूपतैव लक्ष्यते । यथा चोच्यते — उद्देति सविता ताम्रस्ताम् एवास्तमेति च । सम्पत्ती च विपत्ती च महतामेकरूपतैव लक्ष्यते । यथा चोच्यते — उद्देति सविता ताम्रस्ताम् एवास्तमेति च । सम्पत्ती च विपत्ती च महतामेकरूपतीव लक्ष्यते । यथा चोच्यते — उद्देति सविता ताम्रस्ताम् एवास्तमेति च । सम्पत्ती च विपत्ती च महतामेकरूपतीव लक्ष्यते । यथा चोच्यते — उद्देति सविता ताम्रस्ताम् एवास्तमेति च । सम्पत्ती च विपत्ती च महतामेकरूपता ॥ अतः सम्पदि न हृष्येत् , न च

CC-O. विप्त स्वित्तिविधिदेत्त्patिबप्रकृष्टिक्षेश्वमाधीय व्यक्ति हो Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha स्वीय कर्तव्यमतिवाहयेत् ।

१६. नालम्बते देष्टिकतां न निषीदति पौरुषे । शब्दार्थी सत्कविरिव द्वयं विद्वानपेक्षते ।। (शिशु० २-८६)

दैवस्योद्योगस्य च गुरुलाघवं बलावलं च निश्चिन्वतां विपश्चितामस्ति गरीयसी विप्रतिपत्तिविषयेऽस्मिन् । केचन दिष्ट्या दैवस्य वा महात्म्यमुद्धोषयन्ति, ते दैष्टिका इत्यमिधीयन्ते । अन्ये पौरुषस्य महत्त्वमाचक्षाणाः पुरुषार्थमेव सिद्धेः सोपानत्वेनाङ्गी-कुर्वन्ति । ईहदो महति विरोधे वर्तमाने केचन मनीषिणो द्वयोरेव समन्वयं श्रेयस्करमाचक्षते । विचारणीयं तावदेतद् यत्कतमा सरणिरिह साधीयसी । यामवलम्ब्य सकलो लोको भुवनेऽस्मिन् भव्यां भूतिं समासाद्य चिरसञ्चितपुण्यपरिपाकसम्प्राप्तस्य मानवजीवनस्यास्य चिरतार्थतां सम्पादयन् ऐहिकमामुष्मिकं चोभयं क्षेममधिगच्छति ।

विमृश्यते तावद् दिष्ट्या एव बलाबलत्वं प्राक् । का नाम दिष्टिः, कथं च प्रभवत्येषा जीवलोकस्योदयास्तमयस्योत्कर्षापकर्षस्य पातोत्पातस्य वा । यदि विचारदशा निपुणं परीक्ष्यते तर्हि न भ्यान् भेदोऽनयोः । प्रान्धतस्य कर्मण एव नामान्तरं दिष्टिरिति दैवमिति भाग्यमिति वा । अतः साधृच्यते—'पूर्वजन्मकृतं वर्म तद् दैवमिति कथ्यते' । दिष्टिरेव साधकत्वेन बाधकत्वेन वोपतिष्ठते निख्लिष्ठेषु क्रियमाणेषु कर्मसु । अतः कर्मणां सिद्धिरसिद्धवां दैवाधीनेति व्यवह्रियते । प्राक्कृतकर्मपत्त्परिपाको नियतोऽतो नियतिरिति च दैवस्य नामान्तरं भवति । न च नियतिः साम्प्रतिकैः कर्मभिरन्यथा भवितुमईतीति नियतेनियोगोऽधृष्य इति गण्यते । अत्र देष्टिका उदाहरन्ति—सूर्याचन्द्रमसौ तेजसां विष्ठौ नियत्यधीनत्वादेवास्तं समुपगन्छतः । विद्यां पौरुषं चाननुरुष्य लोको दैवानुरूपमेव पलमक्ते । सुरासुरकृतसमुद्रमन्थने समेऽपि भागे प्राप्तव्ये हर्रिल्क्ष्मां लेभे, हरस्तु हालाहलमेव । उत्तं च—''दैवं पलिति सर्वत्र न विद्या न च पौरुषम् । समुद्रमथनाल्लेभे हर्रिल्क्ष्मां हरो विषम् ॥''

प्रतिकृ लतामुपगते हि देवे न मनागि सिध्यति साध्यम् । अत्यवाह माघः—
"प्रतिकृ लतामुपगते हि विधौ विफल्ल्वमेति बहुसाधनता । अवलम्बनाय दिनमर्तुरभ्न्न
पतिष्यतः करसहस्रमि ।" तादृशं दैवस्य प्राब्ह्यं यजनस्य चेत्रश्चेतयते तदेव यद्
दैवमभिल्ष्यति । अत आह श्रीहर्षः—"अवश्यभव्येष्वनवग्रहग्रहा यया दिशा धावति
वेधसः स्पृहा । तृणेन वात्येव तयाऽनुगम्यते जनस्य चित्तेन भृशावशात्मना ।" विरुद्धे
हि विधौ श्रमसहस्रमि वितथं स्यात् । भाग्येऽनुकृले दोषा अपि गुणत्वमायान्ति । उक्तं
च—"गुणोऽपि दोषतां याति वक्षीमृते विधाति । सानुकृले पुनस्तस्मिन् दोषोऽपि
च गुणायते ।" दुःखानि सुखानि च भाग्यानुसारमेव सम्भवन्ति । उच्यते च—"भाग्यक्रमेण हि धनानि भवन्ति यान्ति"। दैवानुसारमेव मनुष्यस्य बुद्धिवृत्तिरि सम्भवते ।
विधिश्चाघिटतघटनापदुर्घटितस्य विघटने च दक्षः । 'अघिटतघटितं घटयित, सुघितघटितानि दुर्घटीकुरते । विधिरेव तानि घटयित, यानि पुमान्नैव चिन्तयित ।'

CC सि. जिर्र सिक्किक विक्रमा कामिनाजा सिम्स्मिति।(dSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अवितथमेतद्यद् दैवं फलित, सिद्धिश्च दैवाधीना । परन्तववगन्तव्यमेतद् यत् पूर्वकृतकर्मपरिपाक एव दैवमिति, न्नान्यत् । यदि मुनिश्चितमेतद्वधारितं तर्हि भाग्यमनु-कृलियतुं भवितिरामावश्यकता मुविचारितस्य कर्मणः किटनस्य श्रमस्य च । अतएवा-वितथमाह श्रीकृष्णो गीतायाम्—'नियतं कुरु कर्म त्वं, कर्म प्यायो ह्यकर्मणः । शरीर-यात्रापि च ते न प्रसिध्येदकर्मणः' । कर्म च कर्मफलासक्तिं विहायव कार्यम् । तदेव साफल्यं लग्भयति । 'कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेपु कदाचन । मा कर्मफलहेनुर्म्मां ते सङ्गोऽस्तवकर्मणि ।' सर्फलं तपसा श्रमेण स्चरितेन च लग्यम् । तदेव च परिणमिति काले । 'भाग्यानि पूर्वतपसा किल सञ्चितानि, काले फलित पुरुषस्य यथैव वृक्षाः ।' भाग्याद् गुरुतरं कर्म, तदेव फलित, तदेव चोपास्यम् । 'नमस्तत्कर्मभ्यो विधिरिव न येभ्यः प्रभवति ।'

जगित समेपामिप सत्त्वानां नैसर्गिकीयमभिवाञ्छा यत् स्याद् दुःखात्ययः सुखाधि-गमश्च। का नु वरीयसी स्तिरिह स्वीकार्या साध्यमेतत् साधियतुम्। शान्तेन स्वान्तेन चिन्त्यते चेत्तर्हि पुरुषार्थमन्तरा न साधनान्तरं दृष्टिपथमुपयाति । धीरा वा, वीरा वा, मनीषिणो वा, वाग्वैभवसम्पन्ना वाग्मिनो वा, कविताकामिनीकान्ताः कविवरा वा, सर्वेऽपि पौरुषमाश्रित्यैवाभीष्टां सिद्धिमधिजग्मुः। अकर्मण्यताऽऽलास्यं पौरुपहीनत्वं दैष्टिकता वाऽत्र प्रत्यवायरूपेणावतिष्ठते । यद्यस्ति हार्दिकी सुखिल्सा, अभीष्टमात्महितं, चिकीर्पित परहितं, का ङ्क्षितं बु लहितं, वाञ्छितं विश्वहितं, समीहितं समाजसुखं वा तर्हि आलस्यं नाम रिपुरपनेयश्चेतसोऽपहरणीयाऽकर्मण्यताऽपहस्तयितव्यं चापौरुपत्वम् । उद्यम उद्योगोऽध्यव-सायो वा मानवस्यानुपमो बन्धुः। यमवष्टभ्य यद्भिल्रितं तद्धिगम्यते। तथा चोच्यते— 'आल्स्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः। नास्त्युद्यमसमो वन्धुः कृत्वा यं नावसी-दति'। योगवासिष्ठेऽप्यभिधीयते—'पौरुषाद् दृश्यते सिद्धिः पौरुषाद् धीमतां क्रमः'। यावजीवं जीवः कर्मेनिरतोऽध्यवसायपरश्च स्यात्, कर्मफलासक्तिं च परिहरेन्मनसेत्या-दिशति वेदः । पथाऽनेनैवाभीप्सितमस्त्रिलं सिध्यति सताम् । 'कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजी-विषेच्छत्ँ समाः। एवं त्विय नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे' (यजु० ४०-२)। या काऽपि सिद्धिरभीष्टा, साऽविकला शक्यते लब्धुमुद्यमेनैवेति चेच्चेतसि वियते तर्हि नालभ्यं किञ्चिदिस्त जगति। अतः साधृक्तम्— 'उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः'। 'उद्योगिनं पुरुपसिंहमुपैति लक्ष्मीः'। अध्यवसायिन एव साहाय्यमाचरति विभुरि । यथा चोक्तम्-'उद्यमः साहसं धैर्ये बुद्धिः शक्तिः पराक्रमः । षडेते यत्र वर्तन्ते तत्र देवः सहायकृत्।'

पक्षद्वयस्य बलाबल्खविवेचनेन सिध्यत्यदो यत् सुविचार्य कृतमवदातं कर्म साध-यति साध्यमिह जगति । तदेव च संस्काररूपेणाविशष्टं दैवमिति भवति, प्रवर्तयति च भावि-

१७. सहसा विदधीत न क्रियाम् (किराता० २-३०)

महाकवेभीरवेर्महाकाव्ये किरातार्जुनीये सन्ति शतशः स्किमुक्ताः । तत्रापि द्वित्राः सन्ति स्क्तयो याश्रकासति तरणिश्रयमिव । तास्वप्यन्यतमेषा स्किः । स्कं तेन महाकविना यद्य जनः कोऽपि सहसा किर्माप विधेयं विद्धीत, यतो ह्यविवेकः परमापदां पदमस्ति । ये च विमृश्यकारिणो भवन्ति त एव श्रियः श्रयन्ते । यथोक्तं तेन—"सहसा विद्धीत न कियामविवेकः परमापदां पदम् । वृणुते हि विमृश्यकारिणं गुणलुक्धाः स्वयमेव सम्पदः ।"

को नाम विवेक: ? कश्चाविवेक: ? क उपयोगो विवेकस्य ? किमिह साध्यं विवेकेन ? यदि नोपादीयतेऽयं कथमिव विपदां निदानत्वेन पश्णिमते ? विवेचनमेव विवेक इति । सदसतोः पुण्यापुण्ययोः कर्तव्याकर्तव्ययोईयोपादेययोश्च येन विधिवत् विवेचनं क्रियते रा विवेक इत्यभिधीयते । इतरश्चाविवेक इत्याख्यायते । विवेकस्य महत्युपयोगिता जीवने ऽस्मिन् । विवेक एव सदसतोः पापपुण्ययोः कर्माकर्मणोश्च फलाफलं गुरुलाघवं च चिन्तयति । स एव किं ग्राह्मं किं हेयं किञ्चोपेक्ष्यमिति सन्दिशति । विवेक एवेह जगति ज्ञानमिति, बुद्धिरिति, धीरिति च व्यवहियते। विवेकमन्तरेण न भृयान् भेदो मनुष्येषु पद्मुषु च । अस्ति मानवे विवेकशक्तिः । यया सोऽर्थमनथे च बह्धा विभाव्यार्थसाधकमुपादत्ते ऽनर्थसाधकं चोष्झति । जीवने हि सर्वस्येष्टं सुखम् । सर्वो हि यतते मुखावातये । निह दुर्जनोऽपि खलोऽपि मृहोऽपि हीनेन्द्रियोऽपि दुःखिमण्टत्वेन गणयति । सोऽपि मुखमेव कामयते, यतते च तल्लाभाय । अङ्गीकृतायामीहस्यामव-स्थायां को नु मार्गो यः सुखसाधकत्वेन प्रवर्तेत । विचारचक्षुषा चिन्त्यते चेद् विवेकस्य महत्त्वं स्फुटं प्रतीयते । सर्वमिष साध्यं साध्यते विवेकेनैव । विवेकपृवां कृतिरेवं लम्भयति श्रियम् । विवेक एव सुखस्य मूलम् , शान्तेनिधानम् , धृत्या निदानम् , श्रिय आश्रयः, गुणानामागारम्, विभवस्य भूमिः, उन्नतेः साधनम्, सत्कर्मणामाकरः, विनयस्य कारणम् , शीलस्य सन्धायकश्च । विवेक उपादत्तश्चेद् न जीवनेऽवसादावसरः । अतु-पादत्तरचेद्यं प्रतिपलं प्रतिपदं चोपितष्ठन्ते विपदो दुःखानि प्रत्यूहाश्च ।

ये हि विपश्चितो विचारशीलाश्च ते प्रतिपदं सम्यगवधायं वस्तुस्थिति शान्तेन स्वान्तेन कर्तव्यस्याकर्तव्यस्य च गुरुलाघवं विमृश्य यद् हितसाधकं मुखकारकं च तदेवोपाद-दते। नहि भयाद् वा हिया वा सहसा वा किञ्चित्तेऽनुतिष्ठन्ति। यस्कर्म मुविचार्य क्रियते तत् संपल्लमादधाति। अत उच्यते—सुचिन्त्य चोक्तं सुविचार्य यत्कृतं, मुदीर्घकालेऽपि न याति विक्रियाम् (हितोपदेशः १-२२)। ये चाविचार्य कर्मण प्रवर्तन्ते, तेषां प्रवृत्तिर-शानमूला। अज्ञानं हिसर्वासामापदामास्पदम्। अज्ञानावृत्तवात् तेषां कर्मणां दुखावाप्तिरेव मुलभा। तादशा जना दिङ्मृहा इव मुखं दुःखमिति मन्यते, दुःखं च मुखम्, पापं मुखसाधनमिति, पुण्यं च दुःखसाधनमिति। एवं ते व्यसनशतशरव्यतामुपगच्छन्ति, प्रत्यहमवनति चोपगच्छन्ति। अत उक्तं भर्तृहरिणा—'विवेकभ्रष्टानां भवति विनिपातः शतमुखः' (नीति० १०)। विपश्चितो हि विचार्य सर्वमिपि क्रियाकलापं कर्मणि प्रवर्तन्ते। मुधियामवनिभृतां

विपश्चितो हि विचाय सवमाप क्षियाकलाप कमाण प्रवास । CC-O. चुत्त Ramdev गुणि याद्विभृश्यां से क्ष्मुं अंदिश्चिमा श्वासेट्र विक्रमुखां स्माना विक्रिक्षित्र सिंह ।

कार्यं कश्च तस्योपाय इति भृशं विविच्य ते कर्तव्यं कर्म निश्चिन्वन्ति । यदाविचार्येव निश्चीयते किञ्चित् तर्हि तत्फलं दुःखावहमेव भविता । एवं विद्वांसोऽपि यत् किञ्चिद्पि स्यात् कर्तव्यं तत्र परिणति प्रधानतोऽवधारयन्ति । नहि ते सहसा कर्तव्यमकर्तव्यं वा विनिश्चित्य कर्मसु प्रवर्तन्ते । सहसा विहितं विधेयं दुःखं लम्भयति, चेतसि च शल्यतुल्य-माघातं विधत्ते । अतः साधूक्तं केनापि—'गुणवदगुणवद्वा कुर्वता कार्यमादौ, परिणति-रवधार्या यत्नतः पण्डितेन । अतिरम्सङ्गतानां कर्मणामाविपत्तेर्भवति हृदयदाही श्रह्य-त्रस्यो विपाकः'।

एष एवाभिप्रायश्चरकसंहितायामप्युपलभ्यते—'परीक्ष्यकारिणो हि कुशला भवन्ति'। 'नापरीक्षितमभिनिविद्योत' 'सम्यक्षयोगनिमित्ता हि सर्वकर्मणां सिद्धिरिष्टा। व्यापचासम्यक्षयोगनिमित्ता' । भगवता चरकेनापि कर्तव्यस्य कर्मणः परीक्षणमनिवार्य-त्वेन गण्यते । यदि सम्यग् विचार्य कर्तव्यं निर्धार्यते तर्हि तस्य साफल्यमपि प्रागेवानु-मातुं पार्यते । अविचार्य इते कर्भणि न केवलमसाफल्यमेन, विपद् शरीरक्टेशः साधना-त्ययः प्रत्यवायावाप्तिश्च । महाभारतेऽपि व्यासेन स्विचार्य कर्मप्रवृत्तिरुपदिष्टा । विस्रस्य-कारी मुखमेधते, श्रियमञ्जुते, प्रत्यूहानपहन्ति, विपद् विदारयति, साध्यं साधयति । उक्तं च महाभारते—'चिरकारक भद्रं ते, भद्रं ते चिरकारक'।

अनालोच्य शुभाशुभं जनो यत् कर्मणि प्रवर्तते, तस्य मूलमज्ञानमेव । अज्ञाना-वृतचेतसो हि भिथ्यामाहात्म्यगर्वनिर्भराः प्राज्ञंमन्याः कर्तव्याकर्तव्यविवेचनमप्यात्मप्रज्ञा-परिभवत्वेनाकलयन्ति, न गुश्रूषन्ते साधूनासुपदिष्टम्, क्रियाविलम्बमन्तरायान्तरणसव-गच्छन्ति, क्षिप्रकारित्वं च श्रियः साधनं गणयन्ति। एवंविधयाऽऽत्मविडम्बनया विप्रलब्धा-स्तेऽतिरभसकारित्वाद् न केवलं विपत्पारावार एव निमजन्ति, अपितु सर्वलोकस्योपहास्य-तामवाष्य दुःखदुःखेन कालमतिवाहयन्ति । केचन हतबुद्धित्वादज्ञानतमःप्रसरेण पींड्यमाना यथैवोपदिःयते परैस्तथैवाचर्यते तैः। न ते स्वविवेकोपयोगेन साध्वसाधु वा निर्णेतुमध्यव-स्यन्ति । परिणतिस्तु तस्य विपदुपताप एव । अतो निगदतं काल्विदासेन- 'सन्तः परी-क्यान्यतरद् भजन्ते । मृदः एरप्रत्ययनेयबुद्धिः ।'

विवेकमूलः सुविचारश्चेदाश्रीयते आश्रयत्वेन, नह्यसाध्यमिह किञ्चिजगति । प्रत्यहं समीक्ष्यते सर्वस्यां संसतौ देशैरनेकैः स्वराष्ट्रोद्धाराय प्रवर्त्यमाना विविधा योजनाः । भारतेऽपि पञ्चवर्षीया योजनाः प्रयुक्तचराः प्रयुज्यमानाः प्रयोक्ष्यमाणाश्चावेश्यन्ते । विवेकम्लत्वादेवैतासां साफल्यमिष्यते सम्भाव्यते च । विपश्चितोऽपि विवेकजीवित्वात् जीवनस्य कार्यक्रमं विमृत्यावधारयन्ति । अध्यवसायावसिक्तेन मनसा मुहुर्मुहुर्यतमा-नास्ते स्वाभीप्सितमाश्रयन्ते ।

भारतीयैतिह्यमीक्ष्यते चेत्तत्राप्यविचार्यकारित्वादेव विविधा विपदो वीक्ष्यन्ते । दाशरथी रामः सुवर्णमुगं प्रेक्ष्याविचार्यकारित्वादेव तमन्वधावत् । तत्कृत्यं च तस्य जानकीहरणत्वेन परिणेमे । गुरुलाघवमविमृश्यैव रावणोऽपि सीताहरणे प्रवृत्तो निधन-मवातश्च सवान्धवः । अविवेकमाश्रित्यैव दुर्योधनोऽपि स्च्यग्रमात्रभूप्रदानेऽपि कार्पण्यं भेजे । तद्विपाकत्वेन महाभारतसमरे सुपरिवारः स्परिजनः स्वेष्टजनसहितः सकलामवनि

विहाय दिवमशिश्रियत् । अतो विचार्येव हिन्दुचिन्नुचिन्नुमुक्ति स्वर्णनाम् एकि स्वर्णनाम् स्वरंगिति स्

१८. ज्वलितं न हिरण्यरेतसं चयमास्कन्दति भस्मनां जनः।

(किराता० २-२०)

स्किमुक्तेयमुपलभ्यते महाकवेर्भारवेः कृतौ किरातार्जुनीये। कविरिहोपदिशति तेजस्विताया मानितायास्च महत्त्वम् । प्रज्वलितमग्निमाक्रमितुं नोत्सहते धृष्टोऽपि कश्चित् , परं भस्मनां पुञ्जं लघुरपि जनः प्रभवत्याक्रमितुम्। कोऽत्र भेदः १ प्रदीप्तोऽप्तिर्दाहगुणसम्वेतस्तेजसा समन्वितश्च प्रभवति दग्धुं निखिलं जगदिदम्। तत्तेजस्तनोति साध्वसमतुलं स्वान्तेऽपि सन्त्रासकस्य। न धृष्णोति धृष्टोऽपि धाष्टर्यमाधातुं मनसि कृशानुधर्षणस्य। भस्मानि तु निस्तेजांसि। नानुभवन्ति तानि मानावमानम्। अतस्तेषां धर्षणं शक्यम्। एवमेव मानिनोऽपि सहर्पमस् नुज्झन्ति, न तु स्वतेजस्त्यजन्ति। अतो निगद्यते भार-विणा—'ज्वलितं न हिरण्यरेतसं चयमास्कन्दित भस्मनां जनः। अभिभृतिभयादस्त्तः सुखमुज्झन्ति न धाम मानिनः' (किराता० २-२०)।

कि नाम जीवनम् १ कि नाम पुरुषत्वम् १ के गुणास्ते ये जीवनं साफत्यं लम्भ-यित, पुरुषे पौरुषञ्चादधित १ तदेव जीवनं येन स्थास्तु यशस्वीयते, सुखमुपभुज्यते, शान्तिः स्थिरीक्रियते । तदेव पुरुषत्वं यत्र तेजः स्वाभिमानिता पौरुषं च प्राधान्येनाश्रयं लभते । तेजस्विता मानिता गुणार्जनं श्रीसंग्रहश्चेति गुणाः सर्वेषामेव जीवनानि सफलयन्ति, पुरुषे पौरुषमाविष्कुर्वन्ति च । भारविर्लक्षयित पुरुषत्वं यन्मानित्वमेव प्रधानं पुरुषस्य लक्षणम्, मानविद्दीनो न नरः । 'पुरुषस्तावदेवासौ यावन्मानान्न द्दीयते' (कि॰ ११-६१)। विजहाति चेन्मानं स तृणवदगण्यो निरर्थकं च तस्य जन्म । 'जन्मिना मानदीनस्य तृणस्य

च समा गतिः' (कि॰ ११-५९)।

मानश्चेदभीष्सितः, कस्तदवाप्त्युपायः १ भारविस्तदवाप्तिसाधनमभिदधाति तेज इति । 'स्थिता तेजसि मानिता' (कि॰ १५-२१) । तेजस्वितागुणमेवावष्टभ्य मानिता प्रवर्तते प्रवर्धते च । यत्र तेजस्विता तत्रैव यशः श्रीर्गुणगणाश्च । तेजस्विनो हि विराजन्ते तरिणवदाभया । ते दुष्करमिप सुकरं दुर्गममिप सुगमं दुर्लभमिप सुल्मं दुःसहमिप सुसहं सम्पादयन्ति । न तेषां वयो विचार्यते । वाल एव रामः खरदूपणवधं विधातुमशकत् । अत आह कालिदासः —'तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते' (रघु॰ ११-१) । यश्च तेजसा परिहीयते परिक्षीयते तत्र मानिता । मानपरिक्षये च सर्वे गुणा अपि तत्र क्षयमेवाश्रयन्ते । निवाणे तु दीपके ज्योतिरिप तदाश्रयमुज्झित । तदाह—'तेजोविहीनं विजहाति दर्पः, शान्ताचिषं दीपमिव प्रकाशः' (कि॰ १७-१६) । निस्तेजाः सर्वत्रवावगण्यते परिभ्यते धिक्तियते घृष्यते च । तस्य निस्तेजस्त्वमजस्यवमानमावहित । अतो निगदितं भासेन—'मृदुः परिभ्यते' (प्रतिमा॰ १-१८) । उक्तं च मृच्छकटिके शृद्रकेण—'निस्तेजाः परिभ्यते' (१-१४) । तेजसा सममेव समेधते स्वावलम्बनस्य साधीयसी साधना । तेजस्विनो न पराश्रयमपेक्षन्ते, न च परसाहाय्यमेव समीहन्ते । ते स्वतेजसा जगद् व्याप्नुवन्ति । तदुच्यते—'लघ्यन् खळु तेजसा जगन्न महानिच्छिति भूतिमन्यतः' (कराता॰ २-१८) ।

CC-O. Dr. Ramer क्विना माद्देनापि तेजस्विताया मानितायाश्च महत्त्वं बहुधा वर्णितम् । मानिनोऽवमन्तृन् समूलमुन्मृल्यैव शान्ति श्रयन्ते, यथा सप्तसप्तिः समस्त नैश तिमिर्मपी- कृत्यैवोदेति । 'समूलघातमध्नन्तः परान्नोद्यन्ति मानिनः । प्रध्वंसितान्धतमसस्तन्नोदाहरणं रिवः ।' (शिग्रु० २-३३) । परावमानं यः सहते, न स पुंशब्दभाक् । तादशस्य नराध्यमस्याजनिरेव श्रेयसी । स केवलं मातृक्लेशकारी । 'मा जीवन् यः परावज्ञादुःखदग्धोऽपि जीवित ।' (शि० २-४५) । पादाहतं रजोऽप्युत्थाय मूर्धानमारोहित । योऽपमानेऽपि गतन्यथः स रजसोऽपि हीनः । 'पादाहतं यदुत्थाय मूर्धानमधिरोहित । स्वस्थादेवापमानेऽपि देहिनस्तद् वरं रजः ।' (शि० २-४६) । तिग्मता प्रतापाय म्रदिमा परिभवाय चेति स्फुटं समीक्ष्यते । राहुर्द्रुतं प्रसते चन्द्रं, भानुं च चिरेण । 'तुल्येऽपराधे' जनमृदिग्नः स्फुटं फलम्' (शि० २-४९) ।

महाकविना कालिदासेनापि तेजस्विताया महिमोररीकियतेऽभिधीयते च।
ऋपयः शान्तिसमिन्वता अपि तेजोमयाः । सति चाभिभन्ने सूर्यकान्तमणिवद् उद्विरन्ति
तेजः । न ते सहन्तेऽभिभवं जातु । 'शमप्रधानेषु तपोधनेषु गृढं हि दाहात्मकमस्ति तेजः । '
(शाकु० २-७) । सत्यभिभन्ने प्रज्वलति जातवेदाः, सति च परिभन्ने तेजस्विनोऽपि स्वमुगं
रूपं धारयन्ति । 'ज्वलति चलितेन्धनोऽग्निविषक्ततः पन्नगः फणां कुरुते । प्रायः स्वं

महिमानं क्षोभात् प्रतिपद्यते हि जनः।' (शा० ६-३१)।

सन्तः सदैव श्रेयस्करमाचक्षते यश एव । विनश्वरे जगित यश एवैकं स्थास्तु । यशरे एव जीवित प्रियन्ते च साधवः । यश एव परमं धनं मन्वते मानिनः । उच्यते च—'यशोधनानां हि यशो गरीयः' 'कीर्तिर्यस्य स जीवित' । श्रीरनुयाति तादृशान् मानिनो यशस्विनस्य । मानिनो गत्वरेरसुभिः स्थायि यशश्चिषीपन्ति । तथोक्तं भारिवणा—'अभिमानधनस्य गत्वरेरसुभिः स्थास्तु यशश्चिषीपतः । अविरांशुविलासचञ्चला नतु लक्ष्मीः फलमानुपङ्गिकम् ।' (कि० २-१९) । अवधेयिमह चैतत् । ये हि मानिनो मानभेव प्रधानतो गणयन्ति, न ते जात्विभलपित श्रियम् । श्रियमवमत्य मानमाद्रियन्ते । मानस्य सम्पदश्चेकत्रावस्थानं सुदुर्लभम् । तदुच्यते भारविणा—'न मानिता चास्ति भवन्ति च श्रियः' (कि० १४-१३) ।

तेजोऽवासये सन्पद्यतेतरामावस्यकता गुणार्जनस्य । नान्तरेण गुणसंग्रहं मानिता तेजस्विता वा सम्भवित । गुणार्जनं मृलं मानितायारतेजस्वितायास्च । गुणैरेवावाप्यते यशो महिमा च । गुणैरेव गौरवावासिरादरास्पदत्वं च । उक्तं च भारविणा—'गुरुतां नयन्ति हि गुणा न संहितः' (कि॰ १२-१०) । गुणार्जनस्य महत्त्वमन्यत्रापि श्रूयते । 'गुणेषु क्रियतां यत्नः किमाटौपैः प्रयोजनम्' । भवभृतिरिप गुणानामेव पूज्यत्वमाचिष्टे, न तु वय आदीनाम् । 'गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिङ्गं न च वयः' (उत्तर॰ ४-११) । गुणैरेव स्थायिनी कीतिः सुलभा, शरीरं तु गत्वरम् । यशःसिद्धयै एव सिध्यन्ति साधूनां सचिरितानि । तदुच्यते—'शरीरस्य गुणानां च दूरमत्यन्तमन्तरम् । शरीर-क्षणविष्वसि कल्पान्तस्थायिनो गुणाः' । (हितोपदेशः १-४९) ।

तेजस्विन एव नामाभिनन्दन्ति रिपवोऽपि। स एव सत्यं पुंशब्दाभिधेयः। 'नाम यस्याभिनन्दन्ति द्विषोऽपि स पुमान् पुमान्' (किराता० ११-७३)। क्षणमपि तेजःसहितं СС-О. Dलीक्वितंत्रश्रेयोत्तिकाच विवदंश्लाकम निम्हण् (Cक्षिकिस्टिकेस्य विविश्व स्थान) eGaran प्रसिक्ध्याते (CS-05) किस्टिकेस्य विविश्व स्थानिक स्थानिक स्थानिक स्थानिक स्थानिक स्थानिक स्थानिक स्थानिक स्थानिक स्थितिक स्थानिक स्था

१९.आञा बलवती राजन् शल्यो जेष्यति पाण्डवान् । (वेणी०५-२३)

का नामाशा ? कथं चाचरतीयं विधियं सुष्रियं वा सर्वस्य लोकस्य ? अस्ति किमावश्यकता जीवने आशाया उपादानस्य परिहारस्य वा ? उपादत्ता चेत् किमिति किंचित् साधयित साध्यमिह जगित ? निरस्ता चेत् किं सुफला विफला कुफला वा भवित ? आशाया नामग्राहेण समकालमेव समुपितिष्ठन्ते बहवोऽनुयोगाः । ते क्रमशोऽत्र विविच्यन्ते । तेषामौचित्यमनौचित्यं वाऽवधारियध्यते सयुक्तिकम् । प्राक् तावद् विचार्यते—का नामाशा ? आ समन्ताद् अञ्चते व्याप्नोति मानवानां चेतांसीत्याशा । आङ्पूर्वकादश्धातोरच्यत्ययेनैतद् रूपं निष्पयते ।

वेदेषूपलभ्यते सर्वत्राशावादस्य प्रवाहः। श्रुतयो मुहुर्मुहुरादिशन्ति मानव-माशामवलम्ब्य समुद्रत्यै समृद्धयै प्रगत्यै च। उच्यते च—(क) वयं स्याम पतयो रयीणाम् (यजु० १०-२०), (ख) अग्ने नय सुपथा राये० (यजु० ४०-१६), (ग) कृषी न ऊर्ध्वान् चरथाय जीवसे (ऋ० १-३६-१४)। (घ) अदीनाः स्याम शरदः शतम् (यजु० ३६-२४)। (ङ) भृत्यै जागरणम् अभृत्यै स्वपनम् (यजु० ३०-१७)। (च) उच्छ्रयस्व महते सौभगाय (अथर्व० ३-१२-२)। (छ) मिय देवा दधतु श्रियमुत्तमाम्० (यजु० ३२-१६)। (ज) महां नमन्तां प्रदिशश्चतसः (ऋ०१०-१२८-१)। आशैव जीवने धृति स्फूर्ति शक्तिं चादधाति। तामाश्रित्यैव सर्वविधा समुन्नतिः सुलभा।

आशा नामेषा मानवजीवनस्यास्त्याधारशिला । मानवजीवने यः संचारः प्रगतिचृद्गतिच्न्नतिर्वाऽवलोक्यते तस्य मूलत्वेनाशायाः संचार एव जीवनेऽवगन्तव्यः । यदि
नाम न स्यादाशा जीवने तत्येरकत्वेन, न स्याज्जीवनं प्रगतिशीलमुन्नतिपयमारूढमभ्युन्नतं
च । आशा नाम जीवनेऽनुपमा स्पूर्तिप्रदायिनी काचिदपूर्वा शक्तिः । सैव मुमूर्षाविप
जीवनाशां संचारयित । सैव वीरे वीराभिमानित्वं शूरे शौर्यं विदुष्यं वेदुष्यं धीरे धैर्यं साधौ
साधुत्वं च प्रसारयित । सैव दीने हीने खिन्ने विषणो विपन्नेऽपि च धैर्यमादधाति, दुःसहदुःखसहनशक्तिं चाविष्करोति चेतिस । नैराश्यस्य घोरायां तिमसायामिष सैषाऽऽविमावयित
जीवनशक्तिपदं जाज्वत्यमानं ज्योतिः । न ज्योतिरेतच्चला चपलेव क्षणमङ्गुरम् ।
जागत्यदोऽहिनशं शान्तेऽपि स्वान्ते साधकस्य। ज्योतिरेतदेव प्रेरयित मुमुक्षु मोक्षाधिगमाय,
साधकं साधनासिद्धयै, वाग्मिनं वाग्-वैशारद्याय, गुणिनं गुणप्रहणाय, विपश्चितं
विद्यावैभवाय, कविं काव्यकौशलाय, शूरं शौर्याय, धीरं धैर्याय च । अजसमेतदाचरित
मुप्रियं सर्वलोकस्य ।

आशा नामेयं नितरामांवश्यकी जीवनेऽस्मिन् । उपादेया चेयमुन्नतिमभिविधि-त्सुभिः । अस्ति चेच्चेतिस धैर्यस्याऽऽधित्सा तिईं न्निमयमाधेया । विपन्ने विषणो च मानसे धैर्यमादधात्याशैव । निह विपच्छाश्वती, तदत्ययो ध्रुवः, निशावसानं नियतम् , निशात्यये उपस उद्गमोऽनिवार्यः, एवं विपदां क्षयोऽपि ध्रुवः, क्रमशः सम्पदां समुपिश्य-

CC-पतिश्च म्थ्रितिसिवसि निर्भावसि निर्भावसि की की की प्राप्त कि glitzed By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उपादत्ता चेदियं साध्यत्यसाध्यमि साध्यं साधृनाम् । परिहतिनरता हि साधवः पीड्यन्ते पापिष्टैः पुरुषैः । अज्ञानसंभारसंक्षीणसद्भावा ह्यसाधवो न चिन्तयन्ति चामचेतसां चित्तानि । अपगते चाज्ञानमले त एव साधृनां सचिरतानि चिन्तयन्ति, प्रशंसन्ति च तेषां परिहतिनरतत्वम् । धृत्या आश्रयणेनैव साधवोऽसाधृन् विजयन्ते । प्रोपिते हि भर्तिर वियोगदुःखविधुरा वामा न लभन्ते जातु शान्तिम् । आश्रव त्रायते तासां जीवनम् । सैव साहयति गुर्विप विरहदुःखम् । अत आहं कालिदासः—गुर्विप विरहदुःखमाशावन्धः साहयति (शा० ४-१६) । अतिमृदुलं हि मानसं भवति मनिस्वनीनाम् । आशावन्ध-मन्तरेण न शक्यं ताभिर्विप्रयोगदुःखं सोढुम् । अत उच्यते—आशावन्धः कुसुमसदृशं प्रायशो ह्यङ्गनानां सद्यःपाति प्रणिय हृदयं विप्रयोगे रुणिह्न । (भेष० पूर्व० ९) ।

आशामवष्टभ्येव वीतरागभयक्रोधाः संसारासारत्वोपदेशदक्षा ऋपयो मुनयश्च मुमुक्षवस्तीक्ष्णं तपस्तप्यन्ते । आशामाश्रित्येवान्तेवासिनो महच्छ्ममनुष्ठाय परीक्षोदिधमुत्तीर्यं जीवने साफत्यं भजन्ते । महाभारतयुद्धे गते भीष्मे हते द्रोणे कर्णे च देवभूमिं गते आशामाश्रित्येव शत्यं सैनापत्येऽभ्यपेचयन् कौरवाः । अत एवोच्यते—'गते भीष्मे हते द्रोणे कर्णे च विनिपातिते । आशा वलवती राजञ्छत्यो जेष्यति पाण्डवान्' । देशाभ्युदयः समाजोन्त्रतिश्चाशाश्रयणेनैव संभवति । भारतवर्षे विविधाः पञ्चवर्षीया योजना देशाभ्युदयस्या-श्चेव प्रवर्त्यन्ते । अवगम्यत एवमाशाया महत्त्वम् ।

इदं चात्रावधेयम् । स्तः केनापि—अति सर्वत्र वर्जयेत् । यद्याशैवैषा तृष्णारूपेण परिणमते चेद् भवत्येपैव विषदां निदानम् । निह शाम्यति तृष्णा, तदुपकरणानि तु शाम्यित् । तावत्येवाशा श्रेयस्करी सुखसाधनस्वरूपा च याविदयं नोल्लङ्घते स्वीयां मर्यादाम् । मर्यादातिक्रमे तु सर्वमेव दुःखात्मकतां भजते इत्यत्र न कस्यापि विपश्चितो विप्रतिपत्तिः । एतच्चेतिस कृत्वैव कियते कोविदैराशायास्तिरिक्त्र्या, सन्तोषस्य च सिक्त्या । उच्यते च "आशा हि परमं दुःखं नैराश्यं परमं सुखम्'। न स्याज्जात्वा-शाया वशंवदः, अपि त्वाशामेव वशंवदां विदधीत । आशा चेद् वशगा तिर्ह सर्वोऽपि लोको वशगो भवेत् । अत उच्यते—'आशाया ये दासास्ते दासाः सर्वलोकस्य । आशा येषां दासी तेषां दासायते लोकः' । आशावशगस्य न भवित मोक्षः स्थिवरत्वेऽपि । अतः साधूच्यते—'अङ्गं गल्तिं पल्तिं मुण्डं दशनिविहीनं जातं तुण्डम् । वृद्धो याति गृहीत्वा दण्डं तदिप न मुञ्जत्याशा पिण्डम्' । 'कालः क्रीडित गच्छत्यायुस्तदिप न मुञ्जत्याशा पिण्डम्' । 'कालः क्रीडित गच्छत्यायुस्तदिप न मुञ्जत्याशा-

CC-O. प्यामुक्षीक्षेत्ववेत्तंकृतिकारिकादोः अत्वत् अमुग्यारक्षेत्राञ्जा आक्षेत्वव्याम् क्षव्याद्याम् काव्याद्यास्य क्षाध्यात्वेत्वास्य स्वतास्यस्य भ्रित्य च साध्येत् सकलं साध्यम् ।

२० स्त्रीशिक्षाया आवंदयकतोपयोगिता च।

शिक्षा नाम जीवने शुभाशुभाववोधनी पुष्यापुष्यविवेचनी हिताहितनिदर्शनी कृत्याकृत्यनिर्देशनी समुन्नतिसाधिकाऽवनतिनाशनी सद्भावाविर्मावयित्री दुर्मावतिरोधात्री आत्ममंस्कृतिहेतुर्मन्सः प्रसादयित्री, धियः परिष्कत्रीं, संयमस्य साधियत्री, दमस्य दात्री, धैर्यस्य धात्री, शीलस्य शीलियत्री, सदाचारस्य संचारियत्री, पुण्यप्रवृत्तेः प्रेरियत्री, दुष्पवृत्ते-र्दमयित्री, समग्रसुखनिधाना, शान्तेः सरणिः, पौरुषस्य पावनी काचिदपूर्वा शक्तिरिह निखिलेऽपि भुवने । समाश्रित्यैवैतां सुधियो विश्वहितं देशहितं समाजहितं जातिहितं च चिकीर्षन्ति, लोकस्य दुःखदावाग्निं संजिहीर्षन्ति, दीनानुपचिकीर्षन्ति, सद्भावानाधित्सन्ति, दुर्भावान् जिहासन्ति, सत्कर्म विधित्सन्ति, दुष्कर्म जिहीर्घन्ति, आत्मानं मुमुक्षन्ते च। यथेयं नराणां हितसाधयित्री सुखसाधनी च, तथैव स्त्रीणामपि कृतेऽनिवार्या सुखशान्ति-साधिका समुन्नतिमूला च । यथा च नान्तरेण शिक्षां पुरुषैरम्युदयावाप्तिः सुलमा सुकरा च, तथैव स्त्रीणां कृतेऽपि समधिगन्तव्यम् । नरश्च नारी च द्वावेवैतौ सद्गृहस्थसुरथस्य चक्रद्वयम् । यथा चक्रेणैकेन न रथस्य गतिर्भवित्री, एवं सर्वार्थसाधिनीं स्त्रियमन्तरेण न गृहस्थरथस्य प्रगतिः सुकरा । सति विदुषि नरे सहधर्मचारिणी चेत् संच्छिक्षापरिहीणा, न दाम्पत्यं सुखावहम् । द्वयोरेव गुणैर्धर्मेण ज्ञानेन विद्यया शीलेन सौजन्येन च गाईस्थ्यं सुखमावहतीत्यवगन्तन्यम् । यथा नरेण ज्ञानमन्तरा समुन्नतिदुर्लभा, तथैव स्त्रियाऽपि । एतर्हि पुरुषशिक्षावत् स्त्रीशिक्षाप्यनिवार्याऽऽवश्यकी च।

यदि विचारदृशा विमृश्यते परीक्ष्यते चेद् भूयस्यावश्यकताऽनुभूयते स्त्रीशिक्षायाः। स्त्रिय एवैता मातृशक्तेः प्रतीकभूताः। निसर्गादेवैतासु पतत्युत्तरदायित्वं शिशोर्भरणस्य पोषणस्य च, गृहस्य संचालनस्य संस्थापनस्य च, गृहस्यजीवनस्य सुखस्य शान्तिश्च, परिवारप्रपृष्टेः कुटुम्बभरणस्य च, श्रशुरश्वश्वोः शुश्रूषायाः परिचर्यायाश्च, शिशोः शैशवे शिक्षणस्य प्रशिक्षणस्य च, शिशो सत्संस्काराधानस्य सच्छीलिनधानस्य च, भर्तुः सह्योगस्य सद्भावोन्नयनस्य च, अभ्यागतसपर्याया लोकहितसम्पादनस्य च। अनासाद्य वैदुष्यं न संभाव्यते स्त्रीमः स्वीयोत्तरदायित्वपरिपालनम्। वैदुष्यलाभाय च न केवलं विविधम्रन्थपरिशीलनमेव पर्याप्तम्, अपितु व्यावहारिकीणां विविधानां विद्यानां विज्ञानानां च परिज्ञानमपि तेषां कृतेऽनिवार्यम्। विविधकलाकलापकौशलमवाप्येव पार्यते दाम्पत्य-जीवनं मधुरं सुखावहमानन्दरसावसिक्तं च सम्पादयितुम्। विश्वदीभवत्येतस्माद् यन्मानव-शिक्षणवन्नारीशिक्षाऽपि नितरामावस्यकी। ज्ञानविज्ञानकौश्चलमधिगच्छितं चेद् द्वर्यपि नरनार्योस्तर्हि न केवलं तेषामेव जीवनं सुखशान्तिसमन्वतं भविताऽपि तु समाजहितं

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha राष्ट्रीहेत विश्वहितं च संभाव्यते तैः सम्पादयितुम् । उरीक्षियते चेत् स्त्रीशिक्षाया आवश्यकता तर्ह बह्वोऽनुयोगाः पुरुतोऽवितष्टःते।
तद्यथा—िकं स्यात् स्त्रीशिक्षायाः स्वरूपम् १ कीहशी शिक्षा तासां हितकरी भवितुमहिति १
कुमाराणां कुमारीणां च सहिशक्षा श्रेयस्करी न वेति १ विषयेष्वेषु नैकमर मितमताम्।
कुमारीणां शिक्षा कुमाराणां शिक्षावदेव स्यात्। तत्र नोचितः कश्चन प्रतिवन्धः।
कुमारीणां शिक्षा कुमाराणां शिक्षावदेव स्यात्। तत्र नोचितः कश्चन प्रतिवन्धः।
कीवनसंग्रामे साम्यमूला स्यात् तासु व्यवहृतिरित्येके आतिष्टन्ते। अन्ये तु नरनायोनंसगिको भेदोऽपौरुषेयः, तेषां कार्यशक्तिरसमा, तेषां व्यवहारक्षेत्रं विषरीतम्, तेषां वृत्तिभेद
इत्यास्थाय शिक्षायामिष वैविध्यं हितकरमाकलयन्ति। उचितं चैतत् प्रतिभाति। नार्यो
हि मातृशक्तः प्रतीकभ्ता इत्युक्तपूर्वम्। तासां वृत्ते सैव शिक्षा श्रेयो वित्तिनतुं प्रभवित या
मातृशक्तिमृलभृतान् गुणान् उन्नयेत। तासु शीलं सौकुमार्थं सन्द्रावं स्नेहं वात्सत्यं
सच्चारित्यं द्वन्द्वसहिष्णुत्वं कर्तव्यनिष्ठतामास्तिययं चोत्पादयेत्। गुणानामेतेषामभावश्चेत्
तासु, तर्हि सकलकलानिष्णातत्वमिष तासां निष्प्रयोजनम्। अतस्तादशी शिक्षा हितकरी या
सच्छीलादिगुणाधानपूर्वकं तासु गृहकलावैशारद्यं कर्मनिष्ठतां सद्गृहिणीत्वबुद्धिनुत्पादयेत्।
''स्त्रीशुद्रौ नाधीयाताम्''इत्यत्र न श्रद्दधित सुधियः साम्प्रतम्। लोकव्यवहारज्ञानिवहीनानां
केषामप्रयुक्तिरिति तेषां मतम्।

कुमाराणां कुमारीणां च सहिशिक्षाविषये वैमत्यमधुनाऽपि संलक्ष्यते विदुषाम् । शौशवे सहिशिक्षा संभवति । न तत्र व्यावहारिकी क्लिष्टता । यौवनेऽपि सहिशिक्षा श्रेयस्क-रीति न वक्तुं सुकरम् । व्यवहारदृशा दृश्यते चेत् समापतित यद् यौवने सहिशिक्षा न तथा हितसाधनी, यथाऽहितसाधनी । अतो यावच्छक्यं तावद् यौवने पृथक् शिक्षेव प्रशस्या ।

मुशिक्षितैव स्त्री सद्गृहिणी सती साध्वी सत्कर्मपरायणा वंशप्रतिष्ठास्वरूपा च भिवतुमहित । सैव सद्वृत्तादिसद्गुणगणान्वितां सन्ततिं विधातुमीष्टे । स्त्रिय एव मातृभ्ताः सद्वंशं सद्राष्ट्रं च निर्मातुं प्रभवन्ति । आह्निकित्रयाकलापविकलो मानवो न तथाऽपत्येषु सत्संस्काराधाने प्रभवति, यथा मातरः । अतः मातृशक्तेः शास्त्रेषु महद् गौरवमनुश्रूयते । उक्तं च मनुना—'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः' । अन्यत्र चोच्यते—'मातृदेवो भव', 'सहस्रं तु पितृन् माता गौरवेणातिरिच्यते', 'पितुर्दशगुणं माता गौरवेणातिरिच्यते' । गृहाधिष्ठातृदेवतात्वात् सा गृहिणी, गृहस्वामिनी, गृहलक्ष्मीरित्यादिशब्दैः संस्त्यते । तत्सत्त्वादेव गृहं गृहमित्युच्यते । उच्यते च—'न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते' । ऋग्वदेऽपि 'जायेदस्तम्' गृहण्येव गृहमिति प्रतिपाद्यते । एवं मातरः स्त्रियश्च

(११) अनुवादार्थ गच-संग्रह

(१) बढ़े चलो, बढ़े चलो (ऐतरेय ब्राह्मण, अ॰ ३३, खंड ३)

हरिश्चन्द्र के पुत्र रोहित को इन्द्र ने उपदेश किया कि—(क) है रोहित, हमने सुना है कि कठोर परिश्रम करके थके विना ऐश्वर्य नहीं मिलता। परावलम्बी मनुष्य पापी होता है। परमात्मा परिश्रमी का साथी होता है, अतः वहें चलो। (ख) बैठे हुए का ऐश्वर्य बैठ जाता है। उठते हुए का उठता है, सोते हुए का सोता है और चलते हुए का बढ़ता है, अतः वहें चलो। (ग) सोता हुआ कलियुग होता है, अँगड़ाई लेता हुआ द्वापर होता है, उठता हुआ त्रेता होता है और चलता हुआ सतयुग होता है, अतः वहें चलो। (घ) चलता हुआ मधु पाता है, चलता हुआ स्वादिष्ट भोगों को पाता है। सूर्य की श्रेष्ठता को देखों जो चलता हुआ कभी आलस्य नहीं करता, अतः वहें चलो।

(२) अभिमान से पतन (शतपथ ब्राह्मण, कांड ९, प० १, ब्रा० १)

देवता और असुर दोनों प्रजापित के पुत्र हैं। दोनों में स्पर्धा हुई। तब असुरों ने दुरिभमान से सोचा कि हम किसमें हवन करें ? उन्होंने स्वार्थ-बुद्धि से अपने ही मुँह में आहुति दी और अपनी ही उदरपूर्ति करते हुए विचरण करने लगे। वे दुरिभमान के कारण ही पराजित हुए। अतएव दुरिभमान न करें। दुरिभमान पतन का कारण है। देवों ने स्वार्थ-बुद्धि को छोड़कर एक-दूसरे के मुँह में आहुति दी और परोपकार करते हुए विचरण करने लगे। प्रजापित ने अपने आपको उन्हें समर्पण किया। उनको यज्ञ दिया। यज्ञ देवों का अन्न है।

संकेत—(१) (क) नानाश्रान्ताय श्रीरस्तीति रोहित शुश्रुम। पापो नृषद्वरो जन इन्द्र इञ्चरतः सखा। चरैवेति। (ख) आस्ते भग आसीनस्योध्वंस्तिष्ठति तिष्ठतः। शेते निपद्यमानस्य चराति चरतो भगः। (ग) किलः शयानो भवित संजिहानस्तु द्वापरः। उत्तिष्ठं स्त्रेता भवित कृतं संपद्यते चरन्। (घ) चरन् वै मधु विन्द्न्ति चरन् स्वादुमुदुम्बरम्। स्र्यस्य पश्य श्रेमाणं यो न तन्द्रयते चरन्। (२) देवाश्र वा असुराश्र । उभये प्राजापत्याः परपृधिरे। किस्मिन्नु वयं जुहुयामेति। स्वेष्वेवास्येषु जुहृतश्चेरः। तेऽतिमानेनैव परावभृवः। तस्मान्नातिमन्येत। पराभवस्य हैतन्मुखं यदिभिमानः। अन्योन्यिस्मिन्नेव जुहृतश्चेरः।

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha तेभ्यः प्रजापतिरात्मानं प्रदर्वे । यशो हैपामास । यशो हि देवानामन्त्रम्

(३) याज्ञवल्क्य-मैत्रेयी-संवाद (बृहदारण्यक उप०, अ० ४, ब्रा० ५)

याज्ञवल्क्य की दो पत्नियाँ थीं, मैत्रेयी और कात्यायनी । मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी थी और कात्यायनी सामान्य स्त्री-बुद्धिवाली । याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी से कहा—में संन्यास छेना चाहता हूँ और तुम्हें कुछ वताना चाहता हूँ । मैत्रेयी ने कहा - यदि यह सारी पृथ्वी धन से पूर्ण हो जाए तो क्या में अमर हो जाऊँगी ? याज्ञवल्क्य ने कहा— नहीं, नहीं। जैसा अन्य सांसारिक लोगों को जीवन है, वैसे ही तुम्हारा जीवन होगा। धन से अमरत्व की कोई आशा नहीं है। मैत्रेयी ने कहा-जिससे मैं अमर नहीं हो सकती, उसको लेकर मैं क्या करूँगी ? जिससे अमरत्व प्राप्त हो, वह बात मुझे बताइए । याज्ञवल्क्य ने कहा-पति, स्त्री, पुत्र, धन, पशु, ब्राह्मण, क्षत्रिय, जनता, देवता, वेद और प्राणियों के हित के लिए ये प्रत्येक वस्तुएँ प्रिय नहीं होती हैं, अपितु अपनी आत्मा की भलाई के लिए ये वस्तुएँ प्रिय होती हैं। अतः आत्मा को देखो, सुनो, मनन और चिन्तन करो। आत्मा के देखने, सुनने, मनन और जानने पर सब कुछ ज्ञात हो जाता है।

(४) सत्य को जानो और अपनाओ (छान्दोग्य उप॰ अध्याय ७)

सत्य को जानना चाहिए। मनुष्य जव वस्तु-स्वरूप को जानता है, तभी सत्य बोलता है। विना जाने सत्य नहीं बोलता, जानतें हुए ही सत्य वोलता है, अतः ज्ञान और विज्ञान को जानना चाहिए। मनुष्य जब मनन करता है, तभी जानता है। विना मनन किए नहीं जानता, मनन करने से जानता है, अतः मनन करना चाहिए। मनुष्य को जब किसी वस्तु पर श्रद्धा होती है, तभी मनन करता है। विना श्रद्धा के मनन नहीं करता, श्रद्धा होने पर मनन करता है, अतः श्रद्धा को जानना चाहिए। मनुष्य में जब निष्ठा होती है, तभी किसी वस्तु पर श्रद्धा करता है। विना निष्ठा के अदा नहीं होती। मनुप्य जब कर्म करता है तभी किसी कार्य में उसकी निष्ठा होती है। विना कर्म किए निष्टा नहीं होती। मनुष्य को जय किसी कार्य से सुख मिलता है, तभी वह उस काम को करता है। दुःख मिलने पर उस कार्य को नहीं करता। अतः जानना चाहिए कि मुख क्या है ? जो महान् है, वह सुख है, थोड़े में सुख नहीं होता । ब्रहा महान् है, वह सुखरूप है, उसे जानो ।

संकेत—(३) प्रव्रजिष्यन् अस्मि । स्यां न्वहं तेनामृता । अमृतत्वस्य तु नाशा-ऽस्ति वित्तेन । कामाय । आत्मनस्तु कामाय । आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः। आत्मिन दृष्टे श्रुते मते विज्ञाते इदं सर्वे विदितम्। (४) सत्यं त्वेव विजिज्ञासितव्यम्। यदा वै विजानात्यथ सत्यं वदति, अविजानन्। यदा वै मनुतेऽथ विजानाति, अमत्वा । यदा वै अद्धात्यथ मनुते, अश्रद्धन् , श्रद्धत् । यदा वै निस्तिष्ठत्यथ श्रद्दधाति । अनिस्तिष्टन् । नाकुला जिन्नस्तिष्ट्रके sidanस्यस्यं छन्नहारा करोनि kosha CC-O. श. Samdev Tripathi Collection at Sarai(CSBS)! जिन्नस्तिष्ठ कि sidanस्यस्यं छन्नहारा करोनि kosha यो व भूमा तत्सुखं नात्पे सुखमस्ति ।

(५) जगत्कर्ता ब्रह्म (ब्रह्मसूत्र, शांकरभाष्य २.१.२४)

चेतन ब्रह्म एक और अद्वितीय जगत् का कारण है, यह आपका कथन ठीक नहीं है, क्योंकि संसार में सर्वत्र साधन-समूह के संग्रह से कार्य की सत्ता दृष्टिगोचर होती है। घट पट आदि के बनानेवाले कुम्हार आदि मिट्टी, चाक, डंडा, धागा आदि अनेक साधनों को लेकर घटादि को बनाते हैं। ब्रह्म असहाय है, अतः वह अन्य साधनों के अभाव में कैसे संसार को बना सकता है? इससे सिद्ध होता है कि ब्रह्म जगत् का कर्ता नहीं है। आपकी पूर्वोत्तर युक्ति युक्तियुक्त नहीं है। दृष्य के विशिष्ट स्वभाव के कारण ऐसा हो सकता है। जैसे दूध दही के रूप में परिणत होता है और जल वर्फ के रूप में। उसी प्रकार ब्रह्म जगत् के रूप में परिणत होता है। उष्णता आदि दूध से दही बनने में सहायक मात्र होते हैं। दूध से ही दही बनेगी, जल से ही वर्फ, अन्य वस्तु से नहीं। इससे ज्ञात होता है कि वस्तु-विशेष वनती है। अन्य वस्तु एं उसमें सहायक मात्र होती हैं। ब्रह्म सर्वसाधन-सम्पूर्ण है, अतः विचित्र शक्तियों के योग से एक ब्रह्म से ही विचित्र परिणाम-युक्त यह जगत् उत्पन्न होता है।

(६) सांख्य-दर्शन

इस दर्शन के संस्थापक कपिल मुनि माने जाते हैं। इस दर्शन के अनुसार ब्यक्त (प्रकट जगत्), अब्यक्त (मूल प्रकृति) और ज्ञ (पुरुप) के ज्ञान से सांसारिक दुः लों की समाप्ति होती है। इस दर्शन के अनुसार प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द ये तीन प्रमाण हैं। इस संसार में प्रकृति और पुरुष ये दोनों स्वतन्त्र और अविनाशी सत्ताएँ हैं। प्रकृति में तीन गुण हें— सन्त्व, रजस् और तमस्। इनकी साम्यावस्था का नाम प्रकृति है। जब इस त्रिगुण की साम्यावस्था में अन्तर पड़ता है, तब सृष्टि का प्रारम्भ होता है। प्रकृति से महत् या बुद्धि उत्पन्न होती है। महत् से अहंकार और अहंकार से ११ इन्द्रियाँ अर्थात् ५ ज्ञानेन्द्रियाँ, ५ कर्मेन्द्रियाँ और मन तथा ५ तन्मात्राएँ (शब्द, स्पर्श, रस, गन्ध) उत्पन्न होती हैं। ५ तन्मात्राओं से ५ स्थूल भूत उत्पन्न होते हैं। कार्य के विषय में इस दर्शन का मत है कि कार्य कारण में सदा अब्यक्त रूप में विद्यमान रहता है। इस सिद्धान्त को सत्कार्यवाद कहते हैं। कारण कार्य के रूप में प्रकट होता है। कारण का कार्यरूप में तात्विक विकार होता है। इस सिद्धान्त को परिणामवाद कहते हैं।

संकेत—(५) इति यदुक्तं तन्नोपपद्यते, कस्मादुपसंहारदर्शनात् । चक्रम् । साधनान्तरानुपसंग्रहे । द्रव्यस्वभावविशेषादुपपद्यते । दिधरूपेण परिणमते, हिमरूपेण । योगात् । (६) व्यक्ताव्यक्तज्ञविज्ञानात् । सत्ताद्वयो वर्तते । सत्त्वं रजस्तम इति । पञ्च CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha तन्मात्राः । (७) महाभाष्य-नवनीत (महाभाष्य नवाह्निक आ० १, २)

- (क) जिसके उच्चारण करने से तत्तद्गुणादि विशिष्ट वस्तु का बोध हो, उसे शब्द कहते हैं। (ख) रक्षा, ऊह (तर्क), आगम, लघुत्व और असन्देह, ये व्याकरणा-ध्ययन के प्रयोजन हैं। वेदों की रक्षा के लिए व्याकरण पढ़ना चाहिए। वेद के मन्त्रों में यथास्थान विभक्ति आदि के परिवर्तनार्थ व्याकरण पढ़ना चाहिए। यह परम्परागत आदेश भी है कि-- ब्राह्मण को निःस्वार्थभाव से धर्मस्वरूप पडङ्ग वेद पढ़ना और जानना चाहिए। व्याकरण के द्वारा ही अत्यन्त लघु उपाय से शब्दज्ञान हो सकता है। व्याकरण के द्वारा शब्दार्थ में सन्देह नहीं रहता कि इस शब्द का वास्तविक अर्थ क्या है। (ग) चार प्रकार से विद्या का उपयोग होता है—विद्याभ्यास के द्वारा, स्वाध्याय-काल के द्वारा, प्रवचन-काल के द्वारा और व्यवहारकाल के द्वारा। (घ) द्रव्य नित्य है, आकृति अनित्य है। यह कैसे होता ? संसार में ऐसा देखा जाता है कि मिट्टी एक आकृति से युक्त होकर पिण्ड होती है। उसको विगाड़कर घड़े आदि बनाए जाते हैं। इसी प्रकार सोने की बनी वस्तु की एक आकृति को बिगाड़कर अनेक आभूषण बनाये जाते हैं। आकृति बार-बार बदलती जाती है, किन्तु द्रव्य वही रहता है। आकृति के नष्ट होने पर द्रव्य ही शेष रहता है। अथवा आकृति भी नित्य है, क्योंकि वस्तु की कोई-न-कोई आकृति रोष रहती ही है। (ङ) चार प्रकार के शब्द होते हैं-जातिवाचक, गुणवाचक, क्रियावाचक और यदच्छा शब्द ।
 - (८) वाक्यपदीय-सुभाषित (वाक्यपदीय कांड १ और २)
 - (क) संसार में ऐसा कोई ज्ञान नहीं है जो शब्दज्ञान के विना हो। सारा ज्ञान शब्द से मिश्रित होकर ही प्रकाशित होता है। (ख) शब्द और अर्थ ये दोनों एक ही आत्मा के अपृथक रहनेवाले भेद हैं। (ग) अनेकार्थक शब्दों के अर्थों का निर्णय इन साधनों से होता है—संयोग, वियोग, साहचर्य, विरोध, प्रयोजन, कारण, चिह्न-विशेष, अन्य शब्दों का सान्निध्य, सामर्थ्य, औचित्य, देश, काल, लिंग-विशेष. स्वर आदि।
 - संकेत (७) (ख) रक्षोहागमल्ब्यसन्देहाः प्रयोजनम् । आगमः खत्विप्न्ना ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्को वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च । (ग) चतुर्मः प्रकारैविद्योपयुक्ता भविति—आगमकालेन, स्वाध्यायकालेन, प्रवचनकालेन, व्यवहारकालेनेति । (घ) द्रव्यं हि नित्यम्, आकृतिरिनत्या । कथं ज्ञायते १ पिण्डः । उपमृद्य । क्रियन्ते । आकृतिरन्या चान्या च भवित । आकृत्युपमर्देन । अथवा नित्याऽऽकृतिः । (ङ) चतुष्ट्यी शब्दानां प्रवृत्तिः—जातिशब्दा गुणशब्दाः क्रियाशब्दा यद्दच्छाशब्दाः । (८) (क) न सोऽस्ति प्रत्ययो लोके यः शब्दानुगमादते । अनुविद्धमिव ज्ञानं सर्वे शब्देन भासते। (ख) एकस्यैन्वात्मनो भेदौ शब्दार्थावपृथक् स्थितौ । (ग) संयोगो विप्रयोगश्च साहचर्ये विरोधिता ।

CC-O. Dहार्र्शक्तप्रसाम्बद्धाः विकास स्थानकार होत्र क्षेत्रका विकास वित

(९) पम्पासर-वर्णन (वा॰ रामायण, किष्किन्धा॰ सर्ग १)

हे लक्ष्मण ! यह पम्पा पन्ने के तुल्य स्वच्छ जल से युक्त है। चारों ओर कमल खिले हैं और अनेक वृक्षों से शोमित है। पम्पा का वन भी दर्शनीय है। यहाँ ऊँचे-ऊँचे वृक्ष शिखरयुक्त पर्वतों के तुल्य प्रतीत होते हैं। यह कमलों से व्याप्त है और दर्शनीय है। वृक्षों की चोटियाँ फूलों के बोझ से लदी हुई हैं और वृक्ष पृष्पित लताओं से आहिलप्ट हैं। वन पृष्पित वृक्षों से युक्त हैं और वृक्ष फूलों की वर्षा इस प्रकार कर रहे हैं जैसे बादल जल की वर्षा करते हैं। पत्थरों पर उगे हुए अनेक वनवृक्ष हवा से कम्पित होकर पृथ्वी पर फूलों की वर्षा कर रहे हैं। वायु गिरे हुए, गिरनेवाले और वृक्षों पर लगे हुए फूलों के साथ क्रीड़ा-सी कर रही है। पर्वत की कन्दराओं से निकली हुई वायु वृक्षों को नचाती हुई-सी, मत्त कोकिलों की ध्वनि से गान-सी कर रही है। सुगन्धित कमल जल में तरुण सूर्य के तुल्य चमक रहे हैं। वायु एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर और एक पर्वत से दूसरे पर्वत पर घूमती हुई अनेक रसों का आस्वादन करके आनन्दित-सी घूम रही है। भोरा फूलों का रसास्वादन कर प्रेममत्त हो फूलों में ही लीन है। भोरों की ध्वनि से युक्त वृक्ष एक-दूसरे को बुलाते हुए-से प्रतीत होते हैं।

(१०) नलोपाख्यान (महाभारत, वनपर्व)

राजा नल वीरसेन का सुपुत्र था और निषध देश का राजा था। वह सुन्दर, सुशील, वीर, योदा, वेद-शास्त्रज्ञ, अश्विविद्या-विशेषज्ञ और पाकशास्त्र-प्रवीण था। उसके राज्य के समीप ही विदर्भ का राज्य था। वहाँ राजा भीमसेन राज्य करता था। उसकी पुत्री दमयन्ती सर्वगुणों से युक्त और सर्वसुन्दरी थी। चारणों ने एक-दूसरे के समक्ष दोनों की प्रशंसा की। फलस्वरूप नल और दमयन्ती एक-दूसरे को बिना देखे ही प्रेम करने लगे। एक दिन उद्यान में भ्रमण करते समय नल ने एक सुनहरा हंस देखा। उसने उस हंस को पकड़ लिया। हंस की प्रार्थना पर नल ने उसे छोड़ दिया। हंस ने निवेदन किया कि में आपकी एक उत्तम सेवा करूँगा। हंस उड़कर विदर्भ पहुँचा और वहाँ उसने दमयन्ती के समक्ष नल के गुणों की प्रशंसा की। दमयन्ती ने नल से विवाह का निश्चय किया। हंस ने सारी सूचना नल को दी। दमयन्ती के विवाहार्थ स्वयंवर का आयोजन हुआ। सभी राजा और राजकुमार स्वयंवर में पहुँचे। इन्द्र, अग्नि, वरण और यम भी स्वयंवर में आए। दिक्पालों ने नल के द्वारा प्रयत्न किया कि दमयन्ती उनमें से एक को छाँट छे। परन्तु दमयन्ती ने ऐसा करना स्वीकार नहीं किया। स्वयंवर में उसने नल को ही पति चुना। चारों दिक्पालों ने उसके हृदय की पवित्रता देखकर उसे वर दिए।

संकेतः—(९) वैदूर्यविमलोदका । उत्तुङ्गाः । शिखराणि, पुष्पभारसमृद्धानि, उपगूढानि । पुष्पवर्षाणि । उद्भूताः, पुष्पैरविकरित गाम् । पतितैः, पतमानैः, पादपस्थैः । नर्तयिन्नव, गायतीव । सूर्यवत् प्रकाशन्ते । पादपाद् पादपम्, गच्छन्, आस्वाद्य, वाति ।

CC-खाइयस्ताइक्थ्भावितान (क्षाक्रेशकाक्षरक्षरक्ष्र) वृण्यात्व्ये By Siddhanta èGangotri Gyaan Kosha

(११)आचार-शिक्षा (चरकसंहिता)

जो अपना हित चाहता है, वह सदाचार का पालन करें। इससे दो लाभ होते हैं—आरोग्य और जितेन्द्रियता। देवता, ब्राझण, गुस्ओं, वृद्धों और आचार्य की पूजा करें। सुन्दर वेश रखे, बालों को ठीक सवारे, प्रसन्नमुख रहे, समय पर हितकर स्वल्प और मधुर बात कहें। इन्द्रियों को वश में रखें, धर्मात्मा, निर्मीक, आस्तिक, बुद्धिमान, उत्साही और क्षमाशील हो। असत्य न बोले। पर-धन को न ले। झगड़ा पसन्द न करें, पाप न करे। दूसरे के दोषों को न कहे। दूसरों की गुप्त बात न बतावे। अधार्मिकों के साथ न बैठे। बहुत जोर से न हँसे। नाक न खोदे, दाँत न कटकटावे, भूमि न कुरेंदे, तिनका न तोड़े। न अधिक जागे, न अधिक सोवे और न अधिक खावे-पीए। श्रेष्ठ लोगों से विरोध न करें। रात में दही न खावे। खियों का अपमान न करें। सजनों और गुरुओं की निन्दा न करें। अपनी प्रतिज्ञा को न तोड़े। अपने समय को नष्ट न करें। अपने नियम को न तोड़े। लोभी और मूखों से मित्रता न करें। गुप्त बात प्रकट न करें। किसी का अपमान न करें। अभिमान न करें। समय को हाथ से न जाने दें। शोक के वश में न हो। धैर्य और पराक्रम को न छोड़े।

(१२) कालमृत्यु और अकालमृत्यु (चरकसंहिता)

कालमृत्यु और अकालमृत्यु कैसे होती है ? भगवान् आत्रेय ने अग्निवेश से कहा कि—जैसे रथ की धुरी अपनी विशेषताओं से युक्त होती है और वह उत्तम तथा सर्वगुणसम्पन्न होने पर भी चलते चलते समयानुसार अपनी शक्ति के क्षीण हो जाने से नष्ट हो जाती है, उसी प्रकार बलवान् मनुष्य के शरीर में आयु स्वभावतः धीरे-धीरे उपयोग में आने पर अपनी शक्ति के क्षीण होने पर नष्ट हो जाती है। जैसे वही धुरी बहुत बोझ लदने से, ऊँचे-नीचे मार्ग पर चलने से, पिहणु के टूटने से, कील निकल जाने से और तेल न देने से बीच में ही टूट जाती है, उसी प्रकार शक्ति से अधिक काम करने से, उचित रूप से भोजन न करने से, हानिकारक भोजन खाने से, इन्द्रियों के असंयम से, कुसंगति से, विषादि के खाने से और अनशन आदि से बीच में ही आयु समात हो जाती है। इसको अकालमृत्यु कहते हैं। इसी प्रकार रोगों की ठीक चिकित्सा न होने से भी अकालमृत्यु होती है।

संकेत—(११) आत्महितं चिकीर्षता सद्वृत्तमनुष्ठेयम् । प्रसाधितकेशः स्यात् । काले हितमितमधुरार्थवादी स्यात् । न वैरं रोचयेत् । नान्यरहस्यमागमयेत् । कुष्णीयात् , विष्ठद्येत् , विलिखेत् , छिन्द्यात् । न विरुध्येत । न स्त्रियमवजानीत । न परिवदेत् , न गुद्धं विवृणुयात् । न कार्यकालमितपातयेत् । जह्यात् । (१२) अक्षः, यथाकालम् , स्वराक्तिक्षयात् । अतिभाराधिष्ठितन्वात् , विषमपथात् , चक्रभङ्गात् , कीलमोक्षात् , तैला-

CC-O दीनास्त्रण्**राम्याम् समामाराम्याना** विकास्य विकास विकास विकास विकास विकास विकास विकास (Galan Kosha

(१३) सन्ध्यावर्णन (सुवन्धुकृत वासवदत्ता)

इसके वाद सूर्य अस्ताभिमुख हुआ। वह अस्ताचलरूपी कल्पनृक्ष के फूल के गुच्छे के समान सुन्दर प्रतीत हो रहा था। वह सिन्दूर-पंक्ति से शोभित ऐरावत के गण्ड-स्थल की शोभा धारण किए हुए था। वह आकाशरूपी लक्ष्मी के विकसित पुष्पस्तवक के तुल्य, आकाशरूपी अशोक वृक्ष के गुलदस्ते के तुल्य और पश्चिमदिशारूपी अंगना के स्वर्ण-दर्पण के तुल्य प्रतीत होता था। इस प्रकार विद्रुमलता-तुल्य आकृति-युक्त भगवान सूर्य पश्चिम समुद्र के जल में मग्न हो गये। वृक्षों की चोटियों पर चिढ़ियाँ शब्द करने लगीं, कोवे अपने घोसलों की ओर जाने लगे, वासगृहों में अगर की धूप-वित्तयाँ जलने लगीं, वृद्धाएँ लोरियाँ गाकर और थपथपाकर बच्चों को सुलाने लगीं, सज्जनवृन्द सन्ध्या वन्दन करने लगे, कपि-वृन्द उद्यान-वृक्षों पर आश्रय लेने लगे, जीर्ण वृक्षों के कोटरों से उल्लू निकलने लगे, अन्धकार को भगाने के लिए दीपशिखाएँ चमकने लगीं। उस समय पश्चिम-समुद्र की विद्रुम लता के तुल्य, आकाशरूपी सरोवर की रक्त-कमलिनी के तुल्य, कामदेव के रथ की स्वर्णपताका के तुल्य, आकाशरूपी महल की लाल पताका के तुल्य, पीले तारों से युक्त सन्ध्या दिखाई पड़ी।

(१४) वर्षावर्णन (सुवन्धुकृत वासवदत्ता)

कुछ समय बाद वर्षा ऋतु आई। उस समय आकाशरूपी सरोवर में कामदेव की स्वर्ण और रत्न-जिटत नौका की तरह, आकाशरूपी महल के मुख्यद्वार की रत्न-माला के तुल्य, आकाश्यापी कल्पवृक्ष की सुन्दर कली के तुल्य, कामदेव की रत्न-जिटत कीडायि के तुल्य, इन्द्रधनुपरूपी लता शोभित हुई। क्यारीरूपी खानों में उछलते हुए पीले हरे मेड करूपी मोहरों से मानो वर्षा ऋतु बिजली के साथ शतरंज खेल रही थीं। वादलरूपी लकड़ी पर बिजलीरूपी आरे के चलने से गिरते हुए बुरादे के तुल्य बूँदें शोभित हो रही थीं। दिग्वधुओं के दूटे हुए हार के मोतियों के तुल्य ओले शोभित हो रहे थे।

संकेत—(१३) अस्तिगिरिमन्दारस्तवकसुन्दरः, विभ्राणः, नभःश्रिय, गगनाशो-कतरोः, पुष्पगुच्छ इव, दिनमणिरपराक्पारपयिस ममज, कलविङ्कसुलकलकलवाचाल-शिखरेषु शिखरिषु, ध्वाङ्क्षेषु, अगुरुधूपपरिमलोद्गारेषु, आलोलिकाभिरतिलधुकरताडनैः शिश्रायिषमाणे शिशुजने, निर्जिगमिपति, स्फुरन्तीषु, गगनहम्यस्य, कपिलतारका। (१४) कनकरत्ननौकेव, नभःसौधतोरणरत्नमालिकेव, कल्किव, रत्नमयी, इन्द्रधनुर्लता, केदा-रिकाकोष्टिकासु समुत्पतिद्धः पीतहरितैर्दर्षु रैर्नथर्यूतैरिव चिक्रीड विद्युता समं घनकालः। जलददारुणि तडिल्लताकरपत्रदारिते, चूर्णनिकरा इव, जलकणाः। विच्छिन्नदिग्वधूहार-

CC-पुर्तानिकरी इंव करकाः Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(१५) धर्म त्रिवर्ग का सार (दशकुमारचरित, उत्तरपीठिका, उ० २)

धर्म के बिना अर्थ और काम की उत्पत्ति ही नहीं हो पाती। इरिलिए कहा जा सकता है कि धर्म, काम और अर्थ की अपेक्षा नहीं करता। यह धर्म ही मोक्ष-सुख की उत्पत्ति का मूळ कारण है और चित्त की एकाग्रतामात्र से यह सिद्ध हो जाता है। धर्म, अर्थ और काम की तरह बाह्य साधनों के अधीन नहीं रहता। तत्त्वज्ञान से उत्कर्ष को प्राप्त धर्म किसी भी प्रकार से अनुष्ठित अर्थ और काम से वाधित नहीं होता। यदि अर्थ और काम से वाधित भी हो जाए तो थोड़े-से प्रयत्न से ठीक होकर उस दोष को नष्ट करके महान् कल्याण का साधन बन जाता है। धर्म से पवित्र मन में रजोगुण का समावैश उसी प्रकार नहीं होता जैसे आकाश में धूल नहीं रकती। अतः मेरा विश्वास है कि अर्थ और काम धर्म की सौबीं कला को भी नहीं पहुँच सकते।

(१६) राजनीति के मूल-तत्त्व (दशकुमार॰, उत्तर॰, उच्ह्वास ८)

राज्य तीन शक्तियों के अधीन होता है। वे तीन शक्तियाँ हैं—मन्त्र, प्रभाव और उत्साह। तीनों परस्पर एक-दूसरे से सम्बद्ध होकर कार्य-साधन करती हैं। मन्त्र से कर्तव्य-कर्म का ज्ञान होता है। प्रभाव अर्थात् प्रभुशक्ति से कार्य में प्रवृत्ति होती है अरे उत्साह-शक्ति से कार्यसिद्धि होती है। सहाय, साधन, उपाय, देश-काल का विभाग और विपत्ति का प्रतीकार, ये पाँच अंग कहे जाते हैं। ये ही पाँच अंग नीतिरूपी वृक्ष के मूल हैं। कोष और दण्ड का प्रभाव उक्त वृक्ष का स्कन्ध है। कर्तव्य अर्थ के लिए स्थिर प्रयत्न को उत्साह कहते हैं। साम, दाम, दण्ड और मेद ये चारों गुण उसकी शाखाएँ हैं। स्वामी, अमात्य, मुद्धद्, कोष, राष्ट्र, दुर्ग, सेना और पुरवासी, इन आठ राज्य के अंगों के भेद और प्रभद से नीतिवृक्ष के ७२ पत्ते होते हैं। सन्धि, विग्रह, यान, आसन, दैध और समाश्रय, ये ही नीतिवृक्ष के किसल्य हैं। मन्त्र, प्रभाव, उत्साह और इनकी सिद्धियाँ इसके पुण और फल हें। यह नीतिरूपी वृक्ष राजा का वरावर उपकार करता रहता है। इसकी रक्षा के लिए अनेक सहायकों की आवश्यकता होती है, अतः सहायकों से हीन के द्वारा इसकी रक्षा नहीं हो सकती।

संकेतः—(१५) निवृत्तिसुखप्रस्तिहेतुः, आत्मसमाधानमात्रसाध्यश्च । तत्त्वदर्श-नोपवृहितः, न वाध्यते । अल्पायासप्रतिसमाहितः, श्रेयसेऽनल्पाय कल्पते । मन्ये, शतत-मीमपि कलां न स्पृशतः । (१६) राज्यं नाम शक्तित्रयायत्तम् । एते परस्परानुगृहीताः

CC-एम्, स्योत्रक्षामको Triमक्षोणि विक्रिमिश्राको Sर्वाक्।(६६ पृड्यास्थिक हुर्स् हें।विश्वकृति eGangotri Gyaan Kosha

(१७) जावाल्याश्रम-वर्णन (कादम्बरी, पूर्वभाग)

मेंने जायालि का पवित्र आश्रम देखा। जहाँ पर निरन्तर यज्ञ हो रहा है, छात्रवृन्द अध्ययन में लगे हुए हैं, अनेक तोता और मैना वेद का पाठ कर रहे हैं, देवों
और पितरों की पूजा की जा रही है, अतिथियों की सेवा हो रही है, यज्ञ विद्या
की व्याख्या हो रही है, धर्मशास्त्रों की आलोचना हो रही है, अनेक धार्मिक पुस्तकें
बाँची जा रही हैं, समस्त शास्त्रों के अथों पर विचार हो रहा है, यति-लोग ध्यान लगा
रहे हैं, मन्त्रों की साधना कर रहे हैं और योग का अभ्यास कर रहे हैं। यहाँ न कलिकाल
है, न असत्य है और न काम-विकार है। यह त्रिलोक से विन्दित है, गायों से अधिष्ठित है,
नदी स्रोत और प्रपातों से युक्त है, पवित्र हैं, उपद्रव-रहित है, घने वृक्षों से अन्धकारित है
और ब्रह्मलोक के तुल्य अति रमणीय है। यहाँ मिलनता हिव-धूम में है, चिरत्र में नहीं।
मुख की लालिमा तोतों में है, कोध में नहीं। तीक्ष्णता कुशाग्री में है, स्वभाव में
नहीं। चंचलता कदली-दलों में है, मनों में नहीं। अग्नि-प्रदक्षिणा में भ्रमण (भ्रान्ति)
है, शास्त्रों के विषय में भ्रान्ति नहीं। मुख-विकार वृद्धावस्था के कारण है, धन के
अभिमान से नहीं।

(१८) सन्ध्या-वर्णन (कादम्बरी, पूर्वभाग)

इस समय दिन ढळने ळगा। स्नान करके निकले हुए मुनियों ने पूजा करते हुए जो लाल चन्दन का अंगराग पृथ्वी पर दिया, मानो सूर्य ने वस्तुतः उसे धारण कर लिया। धूप का पान करनेवाले ऋषियों ने मानो सूर्य की उष्णता पी ली, अतएव सूर्य निस्तेज हो गया। सूर्य की किरणें और पिक्ष-गण पृथ्वी और कमलवनों को छोड़कर अब पर्वतिशिखरों और तरुशिखरों पर पहुँच गये। सूर्य के अस्त होने पर मूँगों की लता के तुल्य लाल सन्ध्या दिखाई पड़ी। दिनभर कहीं घूमकर मानो अब दिनान्त के समय लाल तारों से युक्त सन्ध्या लौटकर आई है। अब कमलिनी सूर्यरूपी पित से मिलन के लिए मानो बत कर रही है। पिश्चम समुद्र के जल में सूर्य के वेग से गिरने से जो छींटे ऊपर उठे हैं, वही मानो तारागण के रूप में आकाश में शोभित हो रहे हैं। सिद्ध-कन्याओं के द्वारा पूजार्थ डाले हुए पुष्पों के तुत्य तारों से युक्त आकाश दिखाई पड़ने लगा। कमशः चन्द्रमा उदित हुआ। चन्द्रमा के अन्दर विद्यमान कलक ऐसा ही प्रतीत हुआ मानो चन्द्रमारूपी तालाब में चाँदनीरूपी जल के पान के लोभ से आया हुआ और अमृतरूपी कीचड़ में फँस जाने से निश्चल मृग हो।

संकेत—(१९) अनवरतप्रवृत्ताध्वरम्, अध्ययनमुखरवदुजनम्, अनेकशुक-सारिकोद्बुष्यमाणसुब्रह्मण्यम्, पूज्यमान०, उपचर्यमाण०, व्याख्यायमान०, आबध्यमान-ध्यानम् । यत्र मिलनता हविधूमेषु न चरितेषु । मुखरागः शुकेषु न कोपेषु । जरया, न धनाभिमानेन । (१८) परिणतो दिवसः, उदबहत्, अध्मपैः, स्थितिमकुर्वत । विद्रुमलतेव पाटला । विद्वत्य । लोहिततारका । परावर्तिष्ट । दिनपतिसमागमव्यतिमवाचरत् । अम्भः-

CC-O प्रीकृ प्रिवस्ता ग्रीकाक्षरस्त्रा । दिसम्बरसासि चिद्धिका जलपानलोभादवतीर्णः, अमृतपङ्कलग्नः । Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(१९) उज्जियनी-वर्णन (कादम्बरी पूर्वभाग)

राजा तारापीड की उज्जैन नामक राजधानी थी। वह समस्त त्रिभुवन की तिलकरूपी थी। वह गहरी खाई से घिरी हुई थी, सफेदी पुते हुए परकोटे से परि-वेष्टित थी, बड़ी-बड़ी बाजार की सड़कों से शोभित थी, चौराहों पर वने हुए देव-मन्दिरों से अलंकृत थी, वेद-ध्वनियों से निष्पाप थी, असंख्यों तालाबों से युक्त थी। वहाँ पर लोग वीर, विनयी, सत्यवादी, सुन्दर, धर्मतत्पर, महापराक्रमी, समस्त ज्ञान-विज्ञानवेत्ता, दानी, चतुर, मधुरभाषी, प्रसन्नमुख, खच्छवेषधारी, सभी भाषाओं के ज्ञाता, सभी लिपियों के वेत्ता, शान्त और सरलहृदय थे। उस नगरी में मणिद्वीपों में हीं अनिर्वाण था, चकवा-चकवी के जोड़े में ही वियोग होता था, सोने की ही वर्ण-परीक्षा होती थी, ध्वजाओं में ही अस्थिरता थी, कुमुदों में ही मित्रद्वेष (सूर्यद्वेष) था, अन्यत्रं नहीं।

(२०) शुकनासोपदेश (कादम्बरी, पूर्वभाग)

जन्मसिद्ध प्रमुख, नव यौवन, अनुपम सौन्दर्य और असाधारण शक्ति, ये चारों महान् अनर्थ के कारण हैं। इनमें से एक-एक भी सभी अविनयों के कारण हैं, सभी एकत्र हों तो कहना ही क्या। यौवन के आरम्भ में प्रायः शास्त्ररूपी जल से धोने से निर्मल बुद्धि भी कलुषित हो जाती है। विषय-भोगरूपी मृगतृष्णा इन्द्रियरूपी सृगों को हरनेवाली है और भयंकर दुष्परिणामवाली है। निर्मल मन में उपदेश की बातें उसी प्रकार सरलता से प्रविष्ट हो जाती हैं, जैसे स्फटिक मणि में चन्द्रमा की किरणें। गुरुजनों का उपदेश मनुष्यों के समस्त मलों को धोने में समर्थ बिना जल का स्नान है, बालों की सफेदी आदि विरूपता को न करनेवाला वृद्धत्व है, चर्बी आदि को न बढ़ानेवाला गौरव है, असाधारण तेजवाला प्रकाश है। लक्ष्मी को ही देखो। यह मिलने परं भी बड़े कष्ट से सुरक्षित होती है। गुणरूपी पाशों के बन्धन से निश्चेष्ट बनाने पर भी नष्ट हो जाती है। यह न परिचय को मानती है, न कुलीनता को देखती है, न सौन्दर्य को देखती है, न कुलपरम्परा को मानती है, न शील को देखती है, न चतुरता को कुछ गिनती है, न त्याग का आदर करती है, न विशेषज्ञता का विचार करती है, न सत्य को कुछ समझती है और न आचार का ही पालन करती है। इसको पाकर लोग सभी अविनयों के स्थान हो जाते हैं। वे न देवताओं को प्रणाम करते हैं, न माननीयों का मान करते हैं और न गुरुओं का सत्कार करते हैं।

संकेत—(१९) ललामभूता, गर्भारेण परिखावलयेन परिवृता, सुधासितेन प्राकारमण्डलेन, महाविपणिपथैः, श्रङ्काटकेषु, निष्कल्मषा । अनिवृत्तिर्मणिपदीपानाम्, द्वन्द्ववियोगः, कनकानाम् , कुमुदानां मित्रद्वेषः। (२०) किमुत समवायः। इन्द्रियहरिण-हारिणी, अतिदुरन्ता । उपदेशगुणाः, सुखं विशन्ति । अखिलमलप्रक्षालनक्षमम्, अजलम् , अनुपजातपलितादिवैरूप्यम् , अनारोपितमेदोदोषम् , अतीत्रज्योतिरालोकः । CC-**राज्या प्रक्रिप्रकृपिणारासीर्व्सभिनित्रिक्**रिश्वित्राद्वि । गणयति, आद्रियते, अनुबुध्यते ।

(२१) मरणासन्न पिता के समीप हर्ष (हर्षचरित)

एक बार हर्ष ने रात्रि के चौथे पहर स्वप्न में देखा कि एक महासिंह भयंकर दावाग्नि में जल रहा है और सिंहिनी भी अपने वच्चों को छोड़कर अग्नि में कृद रही है। यह देखकर उसके मन में आया कि संसार में लोहे से भी दृद प्रेम का बन्धन होता है, जिसके कारण पशु-पक्षी भी ऐसा करते हैं। अगले ही दिन उसने कुरङ्गक नामक दूत से पिता की रुणाता का समाचार सुना। समाचार पाते ही वह शुड़सवारों के साथ लौट पड़ा और अगले दिन राजद्वार पर पहुँचा। वहाँ उसने निःश्रद्ध, किवाहों के खुलने और बन्द होने की खटखट से रहित, खिड़कियाँ बन्द होने से हवा के झोंके से रहित, कुछ प्रेमी जनों से युक्त, तीव ज्वर से भयभीत वैद्यों से युक्त, खिन्न मित्रयों से अधिष्ठित महल में विद्यमान, काल की जिह्ना के अप्र भाग पूर वर्तमान, क्षीण वाणीवाले, चंचल चित्त, शारीरिक व्याकुलता से युक्त, दीर्घ साँस लेते हुए और पास में वैठी हुई निरन्तर रोती हुई माता यशोवती के द्वारा वार-बार शिर और छाती पर हाथ फेरे जाते हुए पिता को देखा।

(२२) मानवचरित-समीक्षा (प्रवन्धमंजरी, उद्भिष्जपरिषत्)

सभापित अश्वत्थदेव मानवचिरत-समीक्षा करते हुए अपने वन्धु वृक्षों से कहते हैं कि—मनुष्यों की हिंसावृत्ति की सीमा नहीं है। पग्रहत्या उनके लिए खेल है। वे खिन्न मन के विनोद के लिए महावन में आकर इच्छानुसार और निर्दयतापूर्वक पग्रविध करते हैं। जिस प्रकार ऐहिक सुख की इच्छा से मनुष्य उत्साहपूर्वक जीविहेंसा करके अपने हृदय की अतिनिष्टुर ब्रुरता को प्रकट करते हैं, उसी प्रकार पारलौकिक सुख की आशा से वे महोत्सवपूर्वक निरपराध पग्रुओं को इष्टदेवता के आगे विल देकर अपनी नृशंसता का परिचय देते हैं। वस्तुतः इनके पग्रुविल के कार्य को देखकर हम जड़ों का भी हृदय विदीर्ण हो जाता है। ये निरन्तर अपनी उन्नति को चाहते हुए प्रतिक्षण सर्वथा स्वार्थसिद्धि के लिए प्रयत्न करते हैं। ये न धर्म को मानते हैं, न सत्य का अनुष्यान करते हैं, अपितु तृणवत् स्नेह की उपेक्षा करते हैं, स्वच्छता को छोड़ देते हैं, विश्वासघात करते हैं, पापाचरण से थोड़ा भी नहीं डरते, झूठ बोलने में नहीं छिजित होते, सर्वथा अपने स्वार्थ को सिद्ध करना चाहते हैं।

संकेत—(२१) तुरीये यामे, आत्मानं पातयति । आसीच्चास्य चेतसि । लोके हि लोहेभ्यः कठिनतराः खलु स्नेहमया बन्धनपाशाः, यदाकृष्टास्तिर्यञ्चोऽप्येवमाचरन्ति । समधिगत्यैवोदन्तम् । परिहृतकपाटरिते, घटितगवाक्षरक्षितमहति०, भिषिजि, दुर्मनाय-मानमन्त्रिणि, धवलग्रहे स्थितम् , विरलं वाचि, चिलतं चेतिस, विह्नलं वपुषि, सन्ततं श्वसिते, वक्षसि च स्पृश्यमानम् । (२२) निरविधः। आक्रीडनम् । प्रकटयन्ति । विदीर्यते ।

CC-O उपेक्षकां प्रविद्यामानिक प्रात्का करणा हो कि प्रविद्या कि प्रविद्या कि CS Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(२३) आर्यावर्त-वर्णन (नलचम्पू)

यह आर्यावर्त देवों के द्वारा भी सेव्य है, धन-धान्य से सम्पन्न है, नदी-नहरों से युक्त है, सब विषयों में संसार का अग्रणी है, समस्त संसार का सार है, पुण्यात्माओं को शरण देता है, धर्म का धाम है, सम्पत्तियों का सदन है, पुण्यों का आधार है, सद्व्यवहार ह्यी रतनों की खान है और आर्यमर्यादाओं का निकेतन है। यहाँ प्रजा संसार के सभी सुखों से सम्पन्न है, सभी पूर्ण आयु तक जीते हैं, सभी धर्म-कर्म में छग्न हैं, अतः आधि-व्याधियों से मुक्त हैं। सभी ग्राम गाय, घोड़े आदि पशुओं से युक्त हैं, सभी नगर गगन चुम्बी महलों से सुशोभित हैं, सभी लोग सदाचारी हैं तथा धन का दान और उपभोग करते हैं, वन सुन्दर और फलदायी वृक्षों से युक्त हैं, वाटिकाएँ मनोहर फल-फूलों से युक्त हैं, कुलीन स्त्रियाँ सूर्य के तुत्य तेजयुक्त और पतिव्रता हैं। वह स्वर्ग से भी बढ़कर है। घर-घर में सुन्दर स्त्रियाँ हैं, सारी प्रजा समृद्ध है, सभी धनी दानी और मानी हैं।

(२४) कवित्व और राजत्व (शिवराजविजय)

भूषण किव बादशाह औरंगजेब का दरबार छोड़कर महाराज शिवाजी का आश्रय प्राप्त करने के लिए उनकी नगरी में पहुँचे। शिवाजी से मिलने से पूर्व वे एक शिवमन्दिर में रुके और वहाँ के पुजारी से बातचीत की। मन्दिर की खिड़की से शिवाजी ने भूषण की यह बात सुनी—में चिरकाल तक दिल्लीश्वर की छत्र-छाया में रहा हूँ। किन्तु हम किव लोग किसी के राजत्व, वीरता, तेजस्विता और धनाढ्यता की परधाह नहीं करते हैं। हम लोग किसी के साभिमान श्रूमंग को और कोपयुक्त गर्व की बर्बरता को नहीं सहन करते हैं। उसका पृथ्वी पर ऐसा राज्य नहीं है, जैसा कि हमारा साहित्य-जगत् पर। उसके खरीदे हुए गुलाम भी उसकी इच्छा होते ही हाथ जोड़कर उसके सामने खड़े नहीं हो जाते, जैसे कि हमारे सामने इच्छा होते ही पद, वाक्य, छन्द, अलंकार, रीतियाँ, गुण और रस उपिरथत हो जाते हैं। वह अशर्फी देकर भी दूसरों को उतना सन्तुष्ट नहीं कर सकता, जितना कि हम केवल किवता से सन्तुष्ट कर सकते हैं। हमारी वीररस की किवता को सुनकर मरता हुआ भी युद्ध में खड़ा हो जाता है। जिसके भाग्य में चिरस्थायिनी कीर्ति होती है, वह हमारा आदर करता है। यह सुनकर किव का परिचय प्राप्त करने के लिए शिवाजी ने मन्दिर में प्रवेश किया।

संकेत—(२३) शरण्यः, आकरः, पुरुषायुषजीविन्यः, अभ्रंलिहैः प्रासादैः, विशिष्यते। (२४) सम्राजः, द्वारम्, शिवराजस्य। अध्यतिष्ठत्, मन्दिराध्यक्षेन सह, गवाक्षात्, नाऽपेक्षामहे, साभिमानभूभङ्गम्, कोपाञ्चितगर्ववर्वरतां न सहामहे, तादृशम्, सारस्वतसृष्ठौ, कीतदासा अपि, तदीहासमकालमेव, नाऽवितष्ठन्ते, छन्दांसि, रीतयः,

CC री चार संस्थानेस्प्रिंग त्विवस्थार जातेषाविक सम्बद्धाः (प्रिक्तिमाणि संभिष्ध) By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(२५) वैदिक साहित्य

वेद चार हैं—ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथवंवेद । ऋग्वेद में मन्त्र हैं, जिनको ऋचा कहते हैं । ये पद्य में हैं । ऋग्वेद की पाँच शाखाओं में से केवल शाकल शाखा ही प्राप्य है । यजुर्वेद की दो शाखाएँ हैं—शुक्ल यजुर्वेद और ऋणा यजुर्वेद । शुक्ल यजुर्वेद की दो संहिताएँ प्राप्त होती हैं—काण्य और माध्यित्दन । ऋणा यजुर्वेद की चार संहिताएँ प्राप्य हैं—काठक, कापिष्ठल, मैत्रायणी और तैत्तिरीय । सामवेद गानात्मक वेद है । यह दो भागों में विभक्त है—आचिक, उत्तरार्चिक । अथवंवेद की दो संहिताएँ प्राप्त होती हैं—शौनक और पैप्पलाद । प्रत्येक वेद चार भागों में विभक्त है—संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् । प्रत्येक वेद के ब्राह्मण आदि हैं । ऋग्वेद के दो ब्राह्मण, अरण्यक और उपनिषद् । प्रत्येक वेद के ब्राह्मण आदि हैं । ऋग्वेद के दो ब्राह्मण-प्रत्य हैं—ऐतरेय ब्राह्मण, कौषीतिक ब्राह्मण । शुक्ल यजुर्वेद का शतपथ ब्राह्मण है और ऋण्य पजुर्वेद का तैत्तिरीय ब्राह्मण । सामवेद के ब्राह्मण हैं—ताण्ड्य ब्राह्मण, षड्विंश ब्राह्मण । अथवंवेद का गोपथ ब्राह्मण है । ऋग्वेद के दो आरण्यक हैं—ऐतरेयाण्यक, कौषीतक्यारण्यक । अन्य आरण्यक ब्राह्मण-प्रत्यों के साथ ही सम्बद्ध हैं । आजकल १२० उपनिषद् उपलब्ध हैं । इनमें से निम्निल्खित ११ ही सुख्य और प्रामाणिक मानी जाती हैं—ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक और श्वेताश्वतर ।

(२६) वेदाङ्ग

वेदाङ्ग ६ हैं-१. शिक्षा (ध्वनिविज्ञान), २. व्याकरण, ३. छन्द, ४. निरुक्त (वेदों की निर्वचनात्मक व्याख्या), ५. ज्योतिष, ६. कल्प (कर्मकाण्ड की विधि)। इनके द्वारा वेदों के अर्थों का ज्ञान होता है और मन्त्रों का यज्ञादि में विनियोग भी ज्ञात होता है। शिक्षा और ध्वनिविज्ञान का वर्णन प्रातिशाख्यों और शिक्षा-प्रनथीं में है। इनमें मुख्य ये हैं-ऋक्प्रातिशाख्य, शुक्लयजुःप्रातिशाख्य, तैत्तिरीयप्रातिशाख्य, साम्प्रातिशाख्य, पुष्पस्त्र, अथर्वप्रातिशाख्य । भरद्वाज, व्यास, याज्ञवर्क्य और पाणिनि आदि के शिक्षा-ग्रन्थ है। व्याकरण में पाणिनि की अष्टाध्यायी सबसे मुख्य है। इस पर कात्यायन ने वार्तिक और पतंजिल ने महाभाष्य लिखा है। इसके आधार पर काशिका, सिद्धान्तकौमुदी आदि व्याकरण-प्रन्थ लिखे गये हैं। छन्द विषय पर पिंगल का छन्दः सूत्र प्राचीन ग्रन्थ है। निरुक्त में यास्क का निरुक्त ही प्राप्य है। ज्योतिष विषय पर ज्योतिष-वेदांग नामक एक प्राचीन ग्रन्थ प्राप्त हुआ है। कल्पसूत्र चार भागों में विभक्त हैं—(क) श्रौतसूत्र—इनमें विशेष यज्ञों की विधियाँ वर्णित हैं। इनमें मुख्य आश्वलायनश्रोतसूत्र, कात्यायनश्रोतसूत्र, बौधायनश्रोतसूत्र आदि हैं। (ख) गृह्यसूत्र— इनमें १६ संस्कारों का वर्णन है। गृह्यसूत्र अनेक हैं। ये बोधायन, आपस्तम्ब, गोभिल आदि के हैं। (ग) धर्मसूत्र—इनमें नीति, धर्म, कर्तव्य आदि का वर्णन है। ये भी CC-O. Dr. Rande (म) जार वसूत्र का देश (CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(२७) भाषा और भाषण (भाषाविज्ञान, श्यामसुन्दरदास)

मनुष्य और मनुष्य के बीच, वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और मित का आदान-प्रदान करने के लिए व्यक्त ध्वनि-संकेतों का जो व्यवहार होता है, उसे भाषा कहते हैं। भाषा विचारों को व्यक्त करती है, पर विचारों से अधिक सम्बन्ध उसके वक्ता के भाव, इच्छा, प्रश्न आदि मनोभावों से रहता है। भाषा सदा किसी न किसी वस्तु के विषय में कुछ कहती है, वह वस्तु चाहे बाह्य भौतिक जगत् की हो अथवा सर्वथा आध्यात्मिक और मानसिक। यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि भाषा एक सामाजिक वस्तु है। भाषा का शरीर प्रधानतः उन व्यक्त ध्वनियों से बना है, जिन्हें वर्ण कहते हैं। इसके अतिरिक्त संकेत, मुख-विकृति और स्वर-विकार भी भाषा के अङ्ग माने जाते हैं। स्वर, बल-प्रयोग और उचारण का वेग या प्रवाह भी भाषा के विशेष अङ्ग हैं। 'बोली' से अभिपार्य स्थानीय और घरेलू बोली से हैं, जो तनिक भी साहित्यिक नहीं होती और बोलनेवालों के मुख में ही रहती है। 'विभाषा' का क्षेत्र बोली से विस्तृत होता है। एक प्रान्त अथवा उपप्रान्त की बोलचाल तथा साहित्यिक रचना की भाषा 'विभाषा' कहलाती है। इसे प्रान्तीय भाषा भी कहते हैं। कई विभाषाओं में व्यवहृत होने वाली एक शिष्ट-परिगृहीत विभाषा ही 'भाषा' कहलाती है। विभाषा ही भाषा बनती है और वह धार्मिक, राजनीतिक और ऐतिहासिक कारणों से प्रोत्साहन पाकर अपना क्षेत्र अधिक से अधिक व्यापक और विस्तृत बनाती है।

(२८) अर्थ-विकास (अर्थविज्ञान और व्याकरणदर्शन)

यास्क ने निरुक्त में सर्वप्रथम इस वात पर ध्यान आकृष्ट किया है कि किस प्रकार वस्तुओं के नाम पड़ते हैं और आगे चलकर किस प्रकार उनके अथों में विस्तार या संकोच होता है। पतंजिल ने महाभाष्य में और भर्तृहिर ने वाक्यपदीय में इस पर विस्तृत विचार किया है। अर्थविकास की तीन धाराएँ हैं—अर्थसंकोच, अर्थविस्तार और अर्थादेश। एक शब्द जो अपने योगिक या निर्वचनात्मक अर्थ के आधार पर नानार्थक और व्यापक होना चाहिए था, उसके अथों में संकोच हो जाने से उसका व्यापक रूप से प्रयोग नहीं हो सकता है। जैसे—गो, अश्व, परित्राजक, जीवन आदि में अर्थसंकोच होने से इनका निर्वचनात्मक अर्थ में प्रयोग नहीं हो सकता है। जहाँ शब्द का मूल अर्थ विस्तृत होकर अन्य अर्थों का भी बोध कराता है, वहाँ अर्थनिस्तार होता है। जैसे—प्रवीण, कुशल, तैल, गोशाला आदि शब्दों के अर्थों में विस्तार हो गया है। जहाँ पर शब्द अपने मूल अर्थ को छोड़ कर नए अर्थ को अपना लेता है, वहाँ अर्थादेश होता है। जैसे—सह धातु वेद में जीतने अर्थ में है, पर अब उसका अर्थ सहना हो गया है।

संकेत—(२७) परिवारेषूपयुज्यमानया गिरा, नाममात्रमपि । (२८) अर्था-न्तराण्यवगमति । अभिनवमर्थमासमाहरुङग्रेजित Digit ज्या के कारीका कार्यक्रिक्ते Kpsha

(२९) (क) नाटक की संक्षिप्त रूपरेखा (दशहपक और साहित्यदर्पण)

धनंजय के अनुसार नाटक में तीन तत्त्व होते हैं, जिनके आधार पर उनका विभाजन होता है—वस्तु, नेता और रस। वस्तु को कथावस्तु भी कहते हैं। वस्तु को दो भागों में विभक्त किया गया है—(१) आधिकारिक—वह कथावस्तु है जो मुख्य कथा होती है। (२) प्रासंगिक—वह कथा है जो गौणहप से हो और मुख्य कथा का अंग हो। सम्पूर्ण कथावस्तु को तीन भागों में विभाजित किया गया है—(१) प्रख्यात— जो इतिहास पर अवलिम्बत हो। (२) उत्पाद्य—किव किया गया है—(१) प्रख्यात— जो इतिहास पर अवलिम्बत हो। (२) उत्पाद्य—किव किया गया है (३) मिश्र—कुछ अंदा ऐतिहासिक हो और कुछ किव किप्ति। नाटक में पाँच अर्थप्रकृतियाँ, पाँच अवस्थाएँ और पाँच सन्धियाँ होती हैं। अर्थप्रकृतियाँ नाटकीय कथा-वस्तु के पाँच तत्त्व हैं। ये प्रयोजन की सिद्धि के कारण होते हैं। (१) वीज—वह तत्त्व हैं, जो प्रारम्भ में संक्षेप में निर्दिष्ट हो और आगे उसका ही विस्तार हो। (२) विन्दु—यह अवान्तर कथा से मूल कथा के हूटने पर उसे जोड़ता और आगे बढ़ाता है। (३) पताका—वह प्रासंगिक कथा जो मुख्य कथा के साथ दूर तक चली जाती है। (४) प्रकरी—वह प्रासंगिक कथा जो मुख्य कथा के साथ थोड़ी ही दूर तक चलती है। (५) कार्य—जो साध्य या लक्ष्य होता है, उसे कार्य कहते हैं।

(३०) (ख) नाटक की संक्षिप्त रूपरेखा

नाटकीय कार्य की प्रगति के विभिन्न विश्रामों को अवस्थाएँ कहते हैं। ये पाँच हैं—(१) आरम्भ—मुख्य पल की सिद्ध के लिए नायक में जो उत्सुकता होती है, उसे आरम्भ कहते हैं। (२) यक्न—पल की प्राप्ति के लिए नायक जो वड़े वेग से प्रयक्त करता है, उसे यक्त कहते हैं। (३) प्राप्त्याशा—अनुकूल और प्रतिकूल परि-रिथितियों के द्वारा फल-प्राप्ति की कभी सम्भावना और कभी असम्भावना, इस संदिग्ध अवस्था को प्राप्त्याशा कहते हैं। (४) नियताप्ति—इसमें विष्नों के हट जाने से फल-प्राप्ति निश्चित जान पड़ती है। (५) फलागम—जब इष्ट फल की प्राप्ति हो जाती है। पाँचों अर्थप्रकृतियों को क्रमशः पाँचों अवस्थाओं से जो सम्बद्ध करती हैं, उन्हें सन्धियाँ कहते हैं। ये पाँच हैं—(१) मुख—बीज और आरम्भ को मिलाकर मुख-सन्धि होती है। (२) प्रतिमुख-सन्धि—विन्दु और यत्न को मिलाकर। (३) गर्भ-सन्धि—पताका और प्राप्त्याशा को मिलाकर। (४) विमर्श-सन्धि—प्रकरी और नियताप्ति को मिलाकर। (५) उपसंहित या निर्वहण-सन्धि—कार्य और फलागम को मिलाकर। नाटक में अभिनय चार प्रकार का होता है:—(१) आङ्किक—श्रारे के अंगों के द्वारा। (२) वाचिक—वाणी के द्वारा। (३) आहार्य—वेपभूषा के द्वारा। (४) साचिक—स्वम्भ, स्वेद, रोमांच, अश्रु आदि के द्वारा।

संकेत (२९) अल्पमात्रं समुद्दिष्टं बहुधा यद् विसर्पति । अवान्तरार्थ-विच्छेदे बिन्दुरच्छेदकारणम् । व्यापि प्रासङ्गिकं वृत्तं पताकेत्यभिधीयते । प्रासङ्गिकं (३१) (ग) नाटक की संक्षिप्त रूपरेखा

रंगमंच पर प्रदिशत करने की दृष्टि से कथा-वस्तु के दो विभाग किये गये हैं—(१) सूच्य—नीरस या अनुचित घटनाएँ, जिनकी केवल सूचना दे दी जाती है। (२) दृश्य अव्य—दर्शनीय और अवणीय वस्तुएँ, जिनका प्रदर्शन किया जाता है। सूच्य वस्तुओं को जिन उपायों से सूचित किया जाता है, उन्हें अर्थोपक्षेपक कहते हैं। वे पाँच हें—(१) विष्करमक—भूत और भावी घटनाओं की सूचना मध्यम श्रेणी के पात्रों के द्वारा दी जाती है। एक या दो मध्यम कोटि के पात्र हों तो 'शुद्ध विष्करमक', नीच और मध्यम दोनों कोटि के पात्र हों तो उसे 'मिश्र विष्करमक' कहते हैं। इनकी भाषा संस्कृत या शौरसेनी प्राकृत होती है। (२) प्रवेशक—भूत और भावी घटनाओं की सूचना निम्न श्रेणी के पात्रों के द्वारा दी जाती है। इनकी भाषा केवल प्राकृत ही होती है। (३) चूलिका—पर्दे के पीछे से वस्तु या घटना की सूचना देना। जैसे—नेपथ्य से कथन। (४) अंकास्य—अंक की समाप्ति के समय जाते हुए पात्रों के द्वारा अगले अंक की घटना की सूचना देना। (५) अंकावतार—अंक की समाप्ति के पहले ही अगले अंक की कथावस्तु का प्रारम्भ करना।

(३२) (घ) नाटक की संक्षिप्त रूपरेखा

सुनाने या न सुनाने की दृष्टि से कथावस्तु के तीन विभाग किये गये है-(१) सर्वश्राव्य या प्रकाश—जो बात सबको सुनाने योग्य है! (२) अश्राव्य या स्वगत-जो बात सुनाने के योग्य न हो और मन-ही-मन कही जाए। (३) नियत-श्राव्य—जो वात कुछ लोगों को ही सुनानी होती है। इसके दो विभाग हैं—(क) जनान्तिक-हाथ की ओट करके दो पात्रों का वार्तालाप करना कि अन्य पात्र उसे न सुन पावें। (क) अपवारित-सुँह फेरकर किसी दूसरे पात्र की गुप्त बात कहना। एक और भेद आकाशभाषित है, ऊपर मुँह करके स्वयं ही अकेले बात करना। नाटक में चार वृत्तियाँ या शैलियाँ होती हैं--(१) कैशिकी वृत्ति-यह शृंगारप्रधान नाटकीं के उपयुक्त है। इसमें मनोहर वेषभूषा, स्त्रियों की अधिकता, नृत्य-गीत का वाहत्य और शृङ्गाररस की मुख्यता होती है। (२) सान्वती वृत्ति—यह वीररस-प्रधान नाटकों के योग्य है। इसमें सत्त्व, शौर्य, त्याग, दया, ऋजुता आदि गुणों का बाहुत्य होता है; शोक का अभाव और हर्ष का विस्तार होता है। (३) आरभटी वृत्ति-यह रौद्र और बीभत्सरसों के योग्य है। इसमें माया, इन्द्रजाल, संग्राम, क्रोध, वध, बन्धन आदि कार्य मुख्य होते हैं। (४) भारती इत्ति—इसका सभी रसों में उपयोग होता है। इसमें संस्कृत का प्रयोग अधिक होता है, स्त्रियाँ नहीं होती हैं, वाचिक कार्य अधिक होता है।

संकेत--(३१) अन्तर्जवनिकासंस्थैः सूचनार्थस्य चूलिका । (३२) (१) सर्वश्राव्यं प्रकाशं स्यात् । (२) अश्राव्यं खलु यद्वस्तु तिदह स्वगतं मतम् । (क) त्रिपताककरेणान्यानपवार्यान्तरा कथाम् । अन्योन्यामन्त्रणं यस्यात् तज्जनान्ते जनान्तिकम् ।

CC-O.(छा.)रवेज्यवेद मनविस्ताछ्।।eयस्त्रसंवाकु अञ्चल्यस्य प्रम्णु स्पृत्रभू क्ष्मू क्ष्मू क्ष्मू क्ष्मू क्ष्मू

(३३) भाव या मनोविकार (रामचन्द्र शुक्ल, चिन्तामणि)

नाना विषयों के बोध का विधान होने पर ही उनसे सम्बन्ध रखने वाली इच्छा की अनेकरूपता के अनुसार अनुभूति के वे भिन्न-भिन्न योग संघटित होते हैं, जो भाव या मनोविकार कहलाते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि सुख और दुःख की मूल अनुभूति ही विषय-भेद के अनुसार प्रेम, हास, उत्साह, आश्चर्य, क्रोध, भय, करुणा, घृणा इत्यादि मनोविकारों का जटिल रूप धारण करती है। मनोविकारों या भावों की अनुभूतियाँ परस्पर तथा सुख या दुःख की मूल अनुभूति से ऐसी ही भिन्न होती हैं, जैसे रासायनिक मिश्रण परस्पर तथा अपने संयोजक द्रव्यों से भिन्न होते हैं। समस्त मानव जीवन के प्रवर्तक भाव या मनोविकार ही होते हैं। मनुष्य की प्रवृत्तियों की तह में अनेक प्रकार के भाव ही प्रेरक के रूप में पाये जाते हैं। शील या चरित्र का मूल भी भावों के विशेष प्रकार के संघटन में ही समझना चाहिए। लोक रक्षा और लोक-रंजन की सारी व्यवस्था का ढाँचा इन्हीं पर ठहराया गया है।

(३४) श्रद्धा-भक्ति

(चिन्तामणि)

किसी मनुष्य में जन-साधारण से विशेष गुण या शक्ति का विकास देख उसके सम्बन्ध में जो एक स्थायी आनन्द-पद्धति हृदय में स्थापित हो जाती है, उसे श्रद्धा कहते हैं। श्रद्धा महत्त्व की आनन्दपूर्ण स्वीकृति के साथ-साथ पूज्य-बुद्धि का संचार है। प्रेम और श्रद्धा में अन्तर यह है कि प्रेम प्रिय के स्वाधीन कार्यों पर ही निर्भर नहीं। प्रेम और श्रद्धा में अन्तर यह है कि प्रेम प्रिय के स्वाधीन कार्यों पर ही निर्भर नहीं। कभी-कभी किसी का रूप मात्र, जिसमें उसका कुछ भी हाथ नहीं, उसके प्रति प्रेम उत्पन्न होने का कारण होता है। पर श्रद्धा ऐसी नहीं है। प्रेम के लिए इतना ही बस है कि कोई मनुष्य हमें अच्छा छगे; पर श्रद्धा के लिए आवश्यक यह है कि कोई मनुष्य किसी बात में बढ़ा हुआ होने के कारण हमारे सम्मान का पात्र हो। श्रद्धा का व्यापार-किसी बात में बढ़ा हुआ होने के कारण हमारे सम्मान का पात्र हो। श्रद्धा में विस्तार। प्रेम स्वप्न है तो श्रद्धा जागरण। प्रेम में वेनल दो पक्ष होते हैं, श्रद्धा में तीन। प्रेम प्रमात्र अपने ही अनुभव पर निर्भर रहता है, पर श्रद्धा दूसरों के अनुभव पर भी जगती है।

संकेत—(३३) मूले, प्रेरकत्वेनोपलम्यन्ते, अवगन्तव्यम्, आधारः, उपस्था-प्यते। (३४) पर्याप्तमेतदेव, रोचेत, कमपि विषयमवलम्ब्य समुन्नत्या, एकान्तम्,

CC-O. छ्रद्रमुक्क्युरेल्√ Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(३५) कविता क्या है ?

(चिन्तामणि)

जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की यह मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है। हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द-विधान करती आयी है, उसे कविता कहते हैं। इस साधना को हम भावयोग कहते हैं और कर्मयोग और ज्ञानयोग का समकक्ष मानते हैं। कविता ही मनुष्य के हृदय को स्वार्थ सम्यन्धों के संकृचित मंडल से ऊपर उठाकर लोक-सामान्य भाव-भूमि पर ले जाती है, जहाँ जगत् की नाना गतियों के मार्मिक स्वरूप का साक्षा-त्कार और शुद्ध अनुभूतियों का संचार होता है। इस भूमि पर पहुँचे हुए मनुष्य को कुछ काल के लिए अपना पता नहीं रहता। वह अपनी सत्ता को लोक-सत्ता में लीन किये रहता है। उसकी अनुभृति सबकी अनुभृति होती है या हो सकती है। इस अनुभृति-योग के अभ्यास से हमारे मनोविकारों का परिष्कार तथा शेष सृष्टि के साथ हमारे रागात्मक सम्बन्ध की रक्षा और निर्वाह होता है।

(३६) काव्य में लोक-मंगल की साधनावस्था (चिन्तामणि)

सत्, चित् और आनन्द —ब्रह्म के इन तीन खरूपों में से काव्य और मितमार्ग 'आनन्द' स्वरूप को लेकर चले। विचार करने पर लोक में इस आनन्द की
अभिव्यक्ति की दो अवस्थाएँ पाई जाएँगी—साधनावस्था और सिद्धावस्था। आनन्द
की साधनावस्था प्रयत्न-पक्ष को लेकर चलती हैं और सिद्धावस्था उपभोग-पक्ष को
लेकर। साधनावस्था को लेकर चलने वाले काव्य हैं—रामायण, महाभारत, रघुवंश,
शिग्रुपालवध, किरातार्जुनीय आदि। सिद्धावस्था को लेकर चलने वाले काव्य हैं—
आर्यासतशती, अमस्शतक, गीतगोविन्द आदिं। लोक में फेली दुःख की छाया को
हटाने में ब्रह्म की आनन्दकला जो शक्तिमय रूप धारण करती है, उसकी भीषणता में
भी अद्भुत मनोहरता, कदुता में भी अपूर्व मधुरता, प्रचण्डता में भी गहरी आईता
साथ लगी रहती है। विरुद्धों का यही सामंजस्य कर्मक्षेत्र का सौन्दर्य है। भीपणता और
सरसता, कोमलता और कटोरता, कटुता और मधुरता, प्रचण्डता और मदुता का
सामंजस्य ही लोकधर्म का सौन्दर्य है। धर्म और मंगल की यह ज्योति अधर्म और
अमंगल की घटा को फाइती हुई फूटती है। काव्य में सारे भाव, सारे रूप और सारे
व्यापार आनन्द-कला के विकास में ही योग देते हैं।

संकेत—(३५) समकक्षत्वेन मन्यामहे । आक्षिप्य। भूमिमेतामारूढस्य मनुजस्य, आत्मावयोधोऽपि न र्जायते । विलाययति । (३६) आश्रित्य प्रवृत्तौ । अनुशीलनेन, अवस्थाद्वयमुपलप्रयते । अवलम्ब्य प्रवर्तते । प्रवृत्तानि । प्रसृतामकात्रपहर्वानुका स्थीया kosha CC-Qangey Tripathi Collection at Saral(CSDS) Digitized By Stuffent अपहर्वानुका स्थीया kosha CC-Qange हैते (सम् । गम् आत्मनेपदी)। ज्योतिरिदम्, विदारयत् प्रस्फुटति। साहाय्यमाद्धति।

(३७) साधारणीकरण और व्यक्ति-वैचिज्यवाद

(चिन्तामणि)

जब तक किसी भाव का कोई विषय इस रूप में नहीं लाया जाता कि वह सामान्यतः सबके उसी भाव का आलम्बन हो सके, तब तक उसमें रसोद्वोधन की पूर्ण इक्ति नहीं आती । इसी रूप में लाया जाना हमारे यहाँ 'साधारणीकरण' कहलाता है। सच्चा किव वही है, जिसे लोक-हृदय की पहचान हो, जो अनेक विशेषताओं और विचित्रताओं के बीच मनुष्य-जाति के सामान्य हृदय को देख सके। इसी लोक हृदय में हृदय के लीन होने की दशा का नाम रस-दशा है। भाव और विभाव दोनों पक्षों के सामंजस्य के बिना पूरी और सच्ची रसानुभ्ति हो नहीं सकती। काव्य का विषय सदा 'विशेष' होता है, 'सामान्य' नहीं; वह 'व्यक्ति' सामने लाता है, 'जाति' नहीं। काव्य का काम है कल्पना में विम्ब या मूर्त भावना उपस्थित करना, बुद्धि के सामने कोई विचार लाना नहीं। 'विम्ब' जब होगा तब विशेष या व्यक्ति का ही होगा, सामान्य या जाति का नहीं।

(३८) रसात्मक-वोध के विविध स्वरूप

(चिन्तामणि)

संसार-सागर की रूप-तरंगों से ही मनुष्य की कल्पना का निर्माण और इसी की रूप-गति से उसके भीतर विविध भावों या मनोविकारों का विधान हुआ है। सौन्दर्य, माधुर्य, विचित्रता, भीषणता, करूता आदि की भावनाएँ बाहरी रूपों और व्यापारों से ही निष्पन्न हुई हैं। हमारे प्रेम, भय, आक्चर्य, क्रोध, करुणा आदि भावों की प्रतिष्ठा करने वाले मूल आलम्बन बाहर ही के हैं। रूप-विधान तीन प्रकार के हैं—(१) प्रत्यक्ष रूप-विधान, (२) स्मृत रूप-विधान, (३) कल्पित रूप-विधान। (१) प्रत्यक्ष रूप-विधान भावुकता की प्रतिष्ठा करने वाले मूल आधार या उपादान हैं। इन प्रत्यक्ष रूपों की मार्मिक अनुभूति जिनमें जितनी ही अधिक होती है, वे उतने ही रसानुभूति के उपयुक्त होते हैं। (२) स्मृति दो प्रकार की होती है—(क) विशुद्ध स्मृति—वह स्मृति जो हमारी मनोवृत्ति को शुद्ध मुक्त भावभूमि में ले जाती है। जैसे-प्रिय-स्मरण, बाल्यकाल या यौवनकाल के अतीत जीवन का स्मरण। (ख) प्रत्यभिज्ञान—यह प्रत्यक्ष-मिश्रित स्मरण है। प्रत्यभिज्ञान में थोड़ा-सा अंश प्रत्यक्ष होता है और बहुत-सा अंश उसी के सम्बन्ध में स्मरण द्वारा उपस्थित होता है। जैसे—'यह वही है' के द्वारा व्यक्ति को देखकर यह वही झगड़ालू व्यक्ति है, जो उस दिन झगड़ा कर रहा था, यह स्मरण करना। (३) कल्पना-काव्य-वस्तु का सारा रूप-विधान इसी किया से होता है। वचनों द्वारा भाव-व्यंजना के क्षेत्र में कल्पना को पूरी स्वच्छन्दता रहती है।

संकेत—(३७) नैतद्रूपं प्राप्यते, भवेत्, न भवति । एतद्रूपतां प्रापणमेव । ० हृदयं परिचिनोति । लयस्य । वास्तविकी । उपस्थापयति । उपस्थापनम्, आहरणम्। (३८) बाह्यरूपेभ्यः, निप्पन्नाः । प्रतिष्ठापकानि । बाह्यान्येव । नयति । स्तोकांशः,

(३९) विराग या अनुराग

(चित्रहेखा)

विराग मनुष्य के लिए असम्भव है, क्योंकि विराग नकारात्मक है। विराग का आधार सून्य है - कुछ नहीं है। ऐसी अवस्था में जब कोई कहता है कि वह विरागी है, गलत कहता है, क्योंकि उस समय वह यह कहना चाहता है कि उसका संसार के प्रति विराग है। पर साथ ही किसी के प्रति उसका अनुराग अवश्य है, और उसके अनुराग का केन्द्र है ब्रह्म। जीवन का कार्यक्रम है रचनात्मक, विनाशात्मक नहीं। मनुष्य का कर्तव्य है अनुराग, विराग नहीं। 'ब्रह्म से अनुराग' के अर्थ होते हैं — ब्रह्म से पृथक् वस्तु की उपेक्षा, अथवा उसके प्रति विराग। पर वास्तव में देखा जाए तो विरागी कहलानेवाला व्यक्ति वास्तव में विरागी नहीं, अपितु ईश्वरानुरागी होता है। क्या संसार से विराग और ब्रह्म से अनुराग—ये दोनों एक चीज हैं ?

(४०) पाप और पुण्य

(चित्रलेखा)

संसार में पाप कुछ भी नहीं है, वह केवल मनुष्य के दृष्टिकोण की विषमता का द्सरा नाम है। प्रत्येक व्यक्ति एक विशेष प्रकार की मनःप्रवृत्ति छेकर उत्पन्न होता है। प्रत्येक व्यक्ति इस संसार के रंगमंच पर एक अभिनय करने आता है। अपनी मनः-प्रवृत्ति से प्रेरित होकर अपने पाठ को वह दुहराता है—यही मनुष्य का जीवन है। जो कुछ मनुष्य करता है, वह उसके खभाव के अनुकूल होता है, और खभाव प्राकृतिक है। मनुष्य अपना स्वामी नहीं है, वह परिस्थितियों का दास है, विवश है। वह कर्ता नहीं है, वह केवल साधन है। फिर पुण्य और पाप कैसा ?

मनुष्य में ममत्व प्रधान है। प्रत्येक मनुष्य सुख चाहता है। परन्तु व्यक्तियों के मुख के केन्द्र भिन्न होते हैं। कुछ मुख को धन में देखते हैं, कुछ मुख को मदिरा में देखते हैं, कुछ मुख को सत्कर्म में देखते हैं और कुछ दुष्कर्म में, कुछ मुख को त्याग में देखते हैं और कुछ संग्रह में, पर सुख प्रत्येक व्यक्ति चाहता है। कोई भी व्यक्ति संसार में अपनी इच्छानुसार ऐसा काम नहीं करेगा, जिससे दुःख मिले। यही मनुष्य की मनः-प्रवृत्ति है और उसके दृष्टिकोण की विषमंता है। संसार में इसीलिए पाप की एक परिभाषा नहीं हो सकी और न हो सकती है। हम न पाप करते हैं और न पुण्य करते हैं, हम वही करते हैं जो हमें करना पड़ता है।

संकेत—(३९) असद्रूपः सः, विरक्त इति, मृषाऽभिधानं तत्, परमार्थतः, विरक्त इति, ईश्वरानुरक्तः, किमुभयमेतत् पर्यायत्वेन गणनीयम्। (४०) आवर्तयति, स्वस्य प्रभुः, साधनमात्रं सः, न भूता न भविष्यति, यद् विवशत्वेन CC-**िविभे**यत्रे **बालक्ति** †ripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(१२) सुभाषित-मुक्तावली

सूचना—(१) सुभाषित विषयानुसार अकारादि-क्रम से दिये गये हैं। (२) सुभाषितों के आगे ग्रन्थ-नाम संक्षेप में दिया गया है, जिस ग्रन्थ से वह सुभाषित संकित किया गया है। (३) जिन सुभाषितों का विवरण अज्ञात या सिन्दिग्ध है, उनके आगे ग्रन्थ-नाम नहीं दिया गया है। (४) सुभाषित वर्गों और उपवर्गों में विषय के आधार पर विभाजित किये गये हैं। (५) संक्षेप के लिए ग्रन्थों के निम्नलिखित संकेत दिये गये हैं।

संकेत-सूची

अ० = अनर्घराघव
उ० = उत्तररामचरित
ऋग् = ऋग्वेद
क० = कथासरित्सागर
का० = कादम्बरी
का० नी० = कामन्दकीयनीति
काव्या० = काव्यादर्श
कि० = किरातार्जुनीय
कु० = कुमारसम्भव
कुव० = कुवल्रयानन्द
गी० = भगवद्गीता
गु० = गुणरत्न
घ० = घटखर्परकाव्य

च॰ = चरकसंहिता
चा॰ = चाणक्यनीति
चौ॰ = चौरपंचाशिका
द॰ = दशकुमारचरित
ह॰ = हष्टान्तशतक
नै॰ = नैषधीयचरित
प॰ = पञ्चतन्त्र
प॰ = प्रमन्तराघव
भ॰ = भगवतपुराण
म॰ = मनुस्मृति
महा॰ = महाभारत
मा॰ = मालतीमाधव

मृ० = मृच्छकटिक
मे० = मेघदूत
यज्ज० = यजुर्वेद
यो० = योगवासिष्ठ
र० = रघुवंश
रा० = रामायण(वात्मीकीय)
वि० = विक्रमोर्वशीय
शा० = अभिज्ञानशाकुन्तल
(शाकुन्तल)
शा० प० = शार्ङ्कधरपद्धति
शि० = शिशुपालवध
ह० = हर्षचरित
हि० = हितोपदेश

(१) भारत-प्रशंसा

(क) भारत-प्रशंसा

१. दुर्लभं भारते जन्म मानुष्यं तत्र दुर्लभम्।

(ख) भूमि-प्रशंसा

१. बहुरत्ना वसुन्धरा । २. बह्वाश्चर्या हि मेदिनी (क०)।

(ग) जन्मभूमि-प्रशंसा

१. जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी । २. प्राणिनां हि निकृष्टाऽपि जन्मभूमिः ^{Cपरी} प्रिया (के)

(२) अध्यात्म

(क) अध्यातम

१. अमृतायते हि सुतपः सुकर्मणाम् (कि॰)। २. इति त्याज्ये भवे भव्यो मुक्तावुत्तिष्ठते जनः (कि॰)। ३. उदिते परमानन्दे नाहं न त्वं न वै जगत्। ४. एकाग्रो हि बहिर्वृत्तिनिवृत्तस्तत्त्वमीक्षते । ५. किमिवास्ति यन्न तपसामदुष्करम् (कि०) । ६. छाया न मूर्च्छति मलोपहतप्रसादे, गुद्धे तु दर्पणतले सुलभावकाशा (शा०)। ७. जपतो नास्ति पातकम् । ८. ज्ञानमार्गे ह्यहंकारः परिघो दुरतिकमः (क०)। ९. तपःसीमा मुक्तिः । १०. तपोऽधीनानि श्रेयांसि ह्यपायोऽन्यो न विद्यते (क०) । ११. तपोधीना हि संपदः (क०) । १२. दृष्टतत्त्वश्च न पुनः कर्मजालेन बध्यते (क०) । १३. धन्यास्ते भुवि ये निवृत्तमनसा धिग्दुः खितान् कामिनः । १४. न मुक्तेः परमा गतिः (यो०)। १५. न वैराग्यात् परं भाग्यम् । १६. न शान्तेः परमं सुखम् । १७. नहि महतां सुकरः समाधिभङ्गः (कि॰)। १८. निरुत्सुकानामभियोगभाजां समुत्सुकेवाङ्कमुपैति सिद्धिः (क॰)। १९. निवृत्तपापसंपर्काः सन्तो यान्ति हि निर्वृतिम् (क॰)। २० निवृत्तरागस्य गृहं तपोवनम् (हि०)। २१. निरंपृहस्य तृणं जगत्। २२. बोघे बोघे सचिदानन्दभासः। २३. मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः (गी०)। २४. लब्धदिव्यरसास्वादः को हि रज्येद् रसान्तरे (क॰)। २५. वाञ्छारत्नं परमपदवी। २६. विरक्तस्य तृणं जगत्। २७. विरक्तस्य तृणं भार्या । २८. शीलयन्ति यतयः सुशीलताम् (कि॰) । २९. साक्षा-त्कृतधर्माण ऋषयो बभूवः (निरुक्त) । ३०. साक्षात्कृतधर्माणो महर्षयः (उ०) । ३१. साधने हि नियमोऽन्यजनानां योगिनां तु तपसाऽखिलसिद्धि (नै०)। ३२. सुखमास्ते निःस्पृहः पुरुषः । ३३. स्वाधीनकुशलाः सिद्धिमन्तः (शा०) ।

(ख) कर्मफल

१. अयि खलु विषमः पुराकृतानां, भवति हि जन्तुषु कर्मणां विषाकः। २. आत्मकृतानां हि दोषाणां नियतमनुभवितव्यं फलमात्मनैव (का०)। ३. कर्म कः स्वकृतमत्र न सुङ्क्तें (नै०)। ४. कर्मदोषाद् दरिद्रता। ५. कर्मानुगो गच्छिति जीव एकः (भा०)। ६. कर्मायत्तं फलं पुंसाम्। ७. गहना कर्मणो गितः (गी०)। ८. चित्रा गितः कर्मणाम्। ९. जन्मान्तरकृतं हि कर्म फलमुपनयित पुरुषस्येह जन्मनि (का०)। १०. प्राचीनकर्म बल्चन्मुनयो वदन्ति (महा०)। ११. भद्रकृत् प्राप्नुयाद् भद्रमभद्रं СС-० ज्याच्यामुकृत् (का०)) विष्याद् भद्रमभद्रं परिन्याद् भद्रमभद्रं काल्यानुकृत् (का०)) विष्याद् भद्रमभद्रं काल्यानुकृत् (का०)) विष्याद् भद्रमभद्रं काल्यानुकृत् (का०)) विष्याद् भद्रमभद्रं काल्यानुकृत् (का०)) विष्याद् भद्रमभद्रं काल्यानुकृत् (का०) विष्याद्व काल्यानुकृत् विष्याद्व काल्यानुकृत् काल्यानुकृत् विष्याद्व काल्यानुकृत् काल्यानुकृत् विष्याद्व काल्यानुकृत् विष्याद्व काल्यानुकृत् विष्याद्व काल्यानुकृत् विषयाद्व काल्यानुकृत् विषय काल्यानुकृत् विषय काल्यानुकृत् विषय काल्यानुकृत्य काल्यानुकृत् विषय काल्यानुकृत्य क

सूत्रग्रथितो हि लोकः।

(ग) दर्शन

१. अविज्ञातेऽपि बन्धो हि बलात् प्रह्लादते मनः (कि॰)। २. भस्मीभृतस्य जीवस्य पुनरागमन कुतः (नै॰)। ३. भस्मीभृतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः।४. मनो-रथानामगतिर्न विद्यते (कु॰)। ५. मनो हि जन्मान्तरसंगतिज्ञम् (र०)। ६. यस्यामेव वेलायां चित्तवृत्तिः, सैव वेला सर्वकार्रेषु (का॰)। ७. विक्त जन्मान्तरभीति मनः स्निद्यदकारणम् (क॰)। ८. विचित्ररूपाः खलु चित्तवृत्तयः (कि॰)। ९. विचित्राः खलु वासनाः। १०. विमलं कलुषीभवच्च चेतः कथयत्येव हितैषिणं रिपुं वा (कि॰)। ११. सतां हि सन्देहपदेषु वस्तुषु प्रमाणमन्तःकरणप्रवृत्तयः (शा॰)। १२. सदा स्थाद्योऽत्र यचित्तस्तन्मयत्वमुपेति सः (क॰)। १३. सर्वश्चित्तप्रमाणेन सदसद् वाऽभिवाञ्छति (क॰)। १४. सिद्धं वा यदि वाऽसिद्धं चित्तोत्साहो निवेदयेत् (प॰)।

(घ) देव-कृपा

१. अमोघो देवतानां च प्रसादः किं न साधयेत् (क०)। २. देवा हि नान्यद् वितरन्ति किन्तु प्रसद्य ते साधुधियं ददन्ते (नै०)। ३. दोषोऽपि गुणतां याति, प्रभोर्भवित चेत्कुपा। ४. न देवा यष्टिमादाय रक्षन्ति पशुपालवत्। यं तु रक्षितुमिच्छन्ति बुद्ध्या संयोजयन्ति तम् (महा०)। ५. प्रसन्ने हि किमप्राप्यमस्तीह परमेश्वरे (क०)। ६. विषमण्यमृतं क्वचिद् भवेदमृतं वा विषमीश्वरेच्छया (र०)। ७. सानुकूले जगन्नाथे विप्रियः सुप्रियो भवेत्।

(ङ) दैव-स्वरूप (दैवप्रशंसा, दैवनिन्दा, भाग्य, भाग्यहीन)

प्रायेण वजायते। २३. दैवे निरुम्धति निबन्धनतां वहन्ति, हन्त प्रयासपरुषाणि न पौरुपाणि (नै ०)। २४. दैवेनैव हि साध्यन्ते सदर्थाः शुभकर्मणाम् (क ०)। २५. न च दैवात् परं बलम् । २६. ननु दैवमेव शरणं धिग्धिम्बृथा पौरूषम् । २७. न भविष्यति इन्त साधनं किमिवान्यत् प्रहरिष्यतो विधेः (र०)। २८. न ह्यलमतिनिपुणोऽपि पुरुषो नियतिलिखितां लेखामतिक्रमितुम् (द०)। २९. नाभाव्यं भवतीह कर्मवदातो भाव्यस्य नाशः कुतः । २०. नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण (मे०) । ३१. नैवाकृतिः फलति नैव कुलं न शीलम् (भ०) । ३२. नैवान्यथा भवति यिछिखितं विधात्रा । ३३. प्रतिकृलतामुपगते हि विधौ विफलत्वमेति बहुसाधनता (शि॰)। ३४. प्रायः समापन्न-विपत्तिकाले घियोऽपि पुंसां मलिनीभवन्ति (हि०)। ३५. प्रायो गन्छति यत्र भाग्य-रहितस्तत्रैव यान्त्यापदः (भ०)। ३६. पलं भाग्यानुसारतः (महा०)। ३७. बलवित सति दैवे वन्ध्रभिः किं विधेयम् । ३८. वलीयसी केवलमीश्वरेच्छा (महा०) । ३९. भवितव्यता वलवती (शा०)। ४०. भवितव्यं भवत्येव कर्मणामीदृशी गतिः (महा०)। ४१. भवितव्यस्य नासाध्यं दृश्यते वत दृश्यताम् (क०) । ४२. भवितव्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र (शार्) । ४३. यत्पूर्वे विधिना ललाटलिखितं तन्मार्जितुं कः क्षमः (हि०) । ४४. यदभावि न तद्भावि, भावि चेन्न तदन्यथा (हि॰)। ४५. लिखितमपि ललाटे प्रोज्झितुं कः समर्थः । ४६. वक्रे विधौ वद कथं व्यवसायसिद्धिः । ४७. वामे विधौ निह फलन्त्यभिवाञ्छितानि । ४८. विधिरहो बलवानिति मे मितः (भा०) । ४९. विधि-रुच्छंङ्ख लो नृणाम् । ५०. विधिर्हि घटयत्यर्थानचिन्त्यानिप संमुखः (क०) । ५१. विधि-लिखितं बुद्धिरनुसरित । ५२. विधेर्विचित्राणि विचेष्टितानि । ५३. विधेर्विलासानब्धेश्च तरङ्गान् को हि तर्कयेत् (क०)। ५४. शक्या हि केन निक्चेतुं दुर्गाना नियतेर्गतिः (क॰)। ५५. शिरिस लिखितं लङ्घयित कः। ५६. साध्यासाध्यविचारं हि नेक्षते भवितव्यता (क०)।

(च) धर्म-चर्चा

१. अचिन्त्यो वत दैवेनाप्यापातः सुखदुःखयोः (क०)। २. अधर्मविषवृक्षस्य पच्यते स्वादु किं फलम् (क०)। ३. अनपायि निवर्हणं द्विषां, न तितिक्षासममस्ति साधनम् (कि०)। ४. अप्यप्रसिद्धं यशसे हि पुंसामनन्यसाधारणमेव कर्म (कु०)। ५. को धर्मः कृपया विना। ६. क्षमया किं न सिध्यति। ७. क्षान्तितुल्यं तपो नास्ति। ८. चक्रवत् परिवर्तन्ते दुःखानि च सुखानि च (यो०)। ९. त्रैलोक्ये दीपको धर्मः। १०. धर्मः कीर्तिर्द्वयं स्थिरम् (महा०)। ११. धर्मः सत्येन वर्धते। १२. धर्मः स नो यत्र न सत्यमस्ति। १३. धर्मसंरक्षणार्थेव प्रवृत्तिर्भुवि शाङ्गिणः (र०)। १४. धर्मस्य СС-О. Dr. Ramdey Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha तत्त्व निहितं गुहायाम् (महा०)। १५. धर्मस्य त्विरता गितः (प०)। १६. धर्मेण

चरतां सत्ये नास्त्यनभ्युदयः क्वचित् (क०)। १७. धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः (हि०)। १८. धर्मो मित्रं मृतस्य च । १९. धर्मो हि सान्निध्यं कुरुते सताम् (क०)। २०. न च धर्मों दयापरः । २१. न दयासदृशं ज्ञानम् । २२. न धर्मवृद्धेषु वयः समीक्ष्यते (कु॰) । २३. न धर्मसदृशं मित्रम् । २४. न धर्मात् परमं मित्रम् । २५. नाधर्मश्चिरमृद्धये (क०) । २६. नानृतात् पातकं परम् । २७. नास्ति सत्यसमो धर्मः (महा०) । २८. निसर्ग-विरोधिनी चेयं पयःपावकयोरिव धर्मकोधयोरेकत्र वृत्तिः (ह०) । २९.पथः श्रुतेर्दर्शयितार ईश्वरा मलीमसामाददते न पद्धतिम् (र०) । ३०. प्रमाणं परमं श्रुतिः (महा०) । ३१. भवन्त्येव हि भद्राणि धर्मादेव यदादरात् (क०)। ३२. महेश्वरमनाराध्य न सन्तीप्सित-सिद्धयः (क०) । ३३. यतः सत्यं ततो धर्मः । ३४. यतो धर्मस्ततो जयः । ३५. योगिनां परिणमन् विमुक्तये, केन नाऽस्तु विनयः स्तां प्रियः (कि०)। ३६. वचीभूषा सत्यम्। ३७. वित्तेन रक्ष्यते धर्मों, विद्या योगेन रक्ष्यते (चा०)। ३८. व्यक्तिमायाति महतां माहात्म्यमनुकम्पया (क०)। ३९. श्रवणपुटरत्नं हरिकथा। ४०. श्रीर्मङ्गलात् प्रभवति (महा०) ४१. श्रेयिस केन तृष्यते (शि०)। ४२. सत्यं सम्यक् कृतोऽल्पोऽपि, धर्मो भूरिफलो भवेत् (क॰) । ४३. सत्यं कण्ठस्य भूषणम् । ४४. सत्यं न तद् यच्छलमभ्युपैति । ४५. सत्यमेव जयते नानृतम् । ४६. सत्येन धार्यते पृथ्वी । ४७. स धार्मिको यः परमर्म न सृशेत्। ४८. सर्वे सत्ये प्रतिष्ठितम् (चा०)। ४९. स्वधर्मे निधनं श्रेयः, परधर्मो भयावहः (गी०)।

(३) अर्थ (धन)

(क) धन-निन्दा

१. अकाण्डपातोपनता न कं लक्ष्मीविमोहयेत् (क०)। २. अकालमेघवट् वित्त-मकस्मादेति याति च (क०)। ३. आये दुःखं व्यये दुःखं धिगर्थाः कष्टसंश्रयाः (प०)। ४. ऋद्धिश्चत्तविकारिणी। ५. कोऽर्थान् प्राप्य न गवितः (प०)। ६. जल्बुट्बुट्समाना विराजमाना संपत् तडिल्लतेव सहसैवोदेति, नश्यति च (द०)। ७. धनोष्मणा म्लायत्यलं लतेव मनस्विता (ह०)। ८. मूर्च्छन्त्यमी विकाराः प्रायेणैश्वर्यमत्तेषु (शा०)। ९. यत्रास्ति लक्ष्मीविनयो न तत्र। १०. शरदभ्रचलाश्चलेन्द्रियैरसुरक्षा हि बहुच्छलाः श्रियः (कि०)। ११. सम्पत्कणिकामपि प्राप्य तुलेव लघुप्रकृतिकन्नतिमायाति (ह०)। १२. साधुवृत्तानिप क्षुद्रा विक्षिपन्त्येव सम्पदः (कि०)।

(ख) धन-प्रशंसा

१. अर्थो हि लोके पुरुषस्य बन्धुः । २. अर्थेन बल्लान् सर्वः (प०) । ३. को न तृप्यति वित्तेन । ४. चाण्डालोऽपि नरः पूज्यो यस्यास्ति विपुलं धनम् । ५. द्रव्येण सर्वे ^{CC कि Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarat हिन्द्रिति खिल्ली श्रीति कि स्विक्ती अपि (२४) ग Kosha} ८. पात्रत्वाद् धनमाप्नोति । ९. पुनर्धनाद्धः पुनरेव भोगी । १०. पूज्यं वाक्यं समृद्धस्य । ११. भोगो भूषयते धनम् । १२. मातर्लक्षिम तव प्रसादवदातो दोषा अपि स्युर्गुणाः । १३. लक्ष्मीर्यस्य गृहे स एव भजित प्रायो जगद्धन्यताम् । १४. लभेत वा प्रार्थियता न वा श्रियं, श्रिया दुरापः कथमीप्सितो भवेत् (शा०) । १५. सा लक्ष्मीरुपकुरुते यया परेषाम् (कि०) ।

(ग) निर्धनता (निर्धन)

१. अवज्ञासोदर्थं दारिद्रयम् (द०)। २. उत्पद्यन्ते विकीयन्ते दरिद्राणां मनोरथाः। ३. कष्टं निर्धनिकस्य जीवितमहो दारैरिप त्यज्यते। ४. इसे कस्यास्ति सौद्ध्यम् (प०)। ५. क्षीणा नरा निष्कस्णा भवन्ति (प०)। ६. दरिद्रता धीरतया विराजते। ७. दारिद्रयदोषेण करोति पापम्। ८. दारिद्रयदोषो गुणराधिनासी (घ०)। ९. दारिद्रयं परमाञ्जनम् (भा०)। १०. न दरिद्रग्तथा दुःखी रुज्धक्षीणधनो यथा। ११. निर्धनता सर्वापदामास्पदम् (मृ०)। १२. निर्धनस्य बुतः सुखम्। १३. पुनर्दरिद्री पुनरेव पापी। १४. पुण्पं पर्युषितं त्यजन्ति मधुपाः। १५. बुभुक्षितः कि न करोति पापम् (प०)। १६. बुभुक्षितं न प्रतिभाति किञ्चत्। १७. बुभुक्षितैर्थांकरणं न भुज्यते। १८. रिक्तः सर्वो भवति हि रुधुः पूर्णता गौरवाय (मे०)। १९. विषं गोष्ठी दरिद्रस्य। २०. वृक्षं क्षीणफलं त्यजन्ति विह्गाः। २१. सर्वे शून्यं दरिद्रस्य (प०)। २२. सर्वशून्या दरिद्रता।

(४) काम (भोगनिन्दा)

१. अपथे पदमर्पयन्ति हि श्रुतवन्तोऽपि रजोनिमीलिताः (र०)। २. अहो अतीव भोगाशा कं नाम न विडम्बयेत् (क०)। ३. आकृष्टः कामलोभाभ्यामपायः को न पश्यति (क०)। ४. आपातरम्या विषयाः पर्यन्तपरितापिनः (कि०)। ५. कामकोधौ हि विप्राणां मोक्षद्वारार्गलावुमौ (क०)। ६. कामातुराणां न भयं न लजा (भ०)। ७. कामाती हि प्रकृतिकृपणाश्चेतनाचेतनेषु (मे०)। ८. कुतः सत्यं च कामिनाम्। ९. कोऽवकाशो विवेकस्य दृदि कामान्धचेतसः (क०)। १०. को हि मार्गममार्गे वा व्यसनान्धो निरीक्षते (क०)। ११. तेषामिन्द्रियनिग्रहो यदि भवेद् विन्ध्यस्तरेत् सागरम्। १२. दुर्जया हि विषया विदुषापि (नै०)। १३. न कामसहशो रिपुः (यो०)। १४. नास्ति कामसमो व्याधिः। १५. भोगान् मोगानिवाहयान् अध्यास्यापन्न दुर्लभा (कि०)। १६. वनेऽपि दोषाः प्रभवन्ति रागिणाम् (प०)। १७. विषयाकृष्यमाणा हि तिष्ठन्ति सुपथे कथम् (क०)। १८. विषयणः कस्यापदोऽस्तं गताः। १९. श्रद्धेया विप्रलब्धारः कामाः

CC-O. हैं है रिवर्ति वेर निर्मा के कि Colle के कि के share (CS है जा ए ज़िल्ड का मार्ग के का मार्ग के कि के वाप Gyaan Kosha

(५) जगत्-स्वरूप

(क) जगत्-स्वरूप

१. असारेऽस्मिन् भवे तावद् भावाः पर्यन्तनीरसाः (क०)। २. न जाने संसारः किमनृतमयः कि विषमयः। ३. परिवर्तिनि संसारे मृतः को वा न जायते। ४. मधुरवि-धुरमिश्राः सृष्टयो हा विधातुः (प्र०)।

(ख) नश्वरता

१. अतिद्रुतवाहिनी चानित्यतानदी (ह०)। २. अस्थिरं जीवितं होके (हि०)।
३. अस्थिराः पुत्रदाराश्च (हि०)। ४. अस्थिरे धनयौवने (ह०)। ५. क्षणविष्वसिनः कायाः का चिन्ता मरणे रणे। ६. जातस्य हि ध्रुवो मृत्युष्ठु वं जन्म मृतस्य च (गी०)। ७. धिगिमां देहभृतामसारताम् (र०)। ८. न वस्तु दैवस्वरसाद् विनश्वरं सुरेश्वरोऽपि प्रतिकर्त्तुमीश्वरः (नै०)। ९. मरणं प्रकृतिः श्ररीरिणां विकृतिजीवितसुच्यते बुधैः (र०)। १०. सर्वे क्षयान्ता निचयाः पतनान्ताः समुच्छूयाः (महा०)।

(ग) लोक-स्वभाव

१. अतिकष्टाखण्यवस्थासु जीवितिनिरपेक्षा न भवन्ति खल्ल जगित सर्वप्राणिनां प्रवृत्तयः (का०)। २. अहो धिग्वैषम्यं लोकव्यवहारस्य (मृ०)। ३. आत्मवर्गहितिमिच्छिति सर्वः (का०)। ४. गतयो भिन्नपथा हि देहिनाम्। ५. गतानुगितको लोको न लोकः पारमार्थिकः। ६. जनस्य रूढप्रणयस्य चेतसः किमण्यमशोंऽनुनये भृशायते (कि०)। ७. जनानने कः करमर्पयम्थिति (नै०)। ८. श्रुवमिमिनते को वा पूर्णे सुदा न हि माद्यति (कु०)। ९. नवा वाणी मुखे सुखे। १०. न सन्त्येव ते येषां सतामिष सतां न विद्यन्ते मित्रोदासीनशत्रवः (ह०)। ११. नहि सर्वविदः सर्वे। १२. नहि सर्वेऽपि कुर्वन्ति सभ्या युक्तिविवेचनम्। १३. पञ्च त्वानुगिमध्यन्ति यत्र यत्र गिमिष्यसि। उपकायोपकर्तारो मित्रोदासीनशत्रवः (महा०)। १४. पिण्डे पिण्डे मितिर्मिन्ना तुण्डे तुण्डे सरस्वती। १५. पीत्वा मोहमयीं प्रमादमिदरासुन्मत्तभूतं जगत्। १६. प्रमादमोहितः प्रायो न विचारक्षमो जनः (क०)। १७. भिन्नस्चिहिं लोकः। १८. सर्वः स्वार्थं समीहते (शि०)।

(घ) स्वभावो दुरतिक्रमः

१. आकण्टजलमग्नोऽपि श्वा लिहत्येव जिह्नया। २. उत्सविप्रयाः खलु मनुष्याः (शा॰)। ३. उप्णत्वमग्न्यातपसम्प्रयोगाच्छैत्यं हि यत्सा प्रकृतिर्जलस्य (र०)। ४. या यस्य प्रकृतिः स्वभावजनिता वेनापि न त्यच्यते। ५. सतां हि साधु शीलत्वात् स्वभावो न निवर्तते। ६. सुतप्तमपि पानीयं शमयत्येव पावकम् (प०)। ७. स्नापितोऽपि बहुशो नदीजलैर्गर्दभः किमु हयो भवेत् कवित्। ८. स्वभावो दुरतिक्रमः (प०)।

(६) चातुर्वण्यी

(क) ब्राह्मण

१. असन्तुष्टा द्विजा नष्टाः (प०) । २. तुष्यन्ति भोजनैर्विपाः । ३. ब्राह्मणा मधुरिवयाः । ४. शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च । ज्ञानविज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्म-कर्म स्वभावजम् (गी०) । ५. सिद्धं ह्येतद् ब्राचि वीर्ये द्विजानां, बाह्वोर्वीये यत्तु तत् क्षत्रियाणाम् (उ०) ।

(ख) क्षत्रिय

१. अधर्मयुद्धेन जयं को हीच्छेत् क्षत्रियो भवन् (क०)। २. कुराजान्तानि राष्ट्राणि (प०)। ३. क्षतात् किल त्रायत इत्युदमः क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः (र०)। ४. तत्कार्मुकं कर्ममु यस्य शक्तिः। ५. राजा प्रकृतिरञ्जनात्। ६. शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम्। दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम् (गी०)। ७. स क्षत्रियस्त्राणसहः सतां यः। ८. संग्रामो हि शूराणामुत्सवो हि महानयम् (क०)। ९. सिद्धं ह्येतद् वाचि वीर्थं दिजानां, वाह्वोवीर्थं यत्तु तत् क्षत्रियाणाम् (उ०)।

(ग) वैश्य

१. कृषिगोरक्षवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम् (गी०)।

(घ) शूद

१ परिचर्यात्मकं कर्म श्रूद्रस्यापि स्वभावजम् (गी०)।

(७) जीवन

(क) वाल्य

१. कस्य नोच्छृंखलं बाल्यं गुरुशासनवर्जितम् (क०)। २. लाल्येत् पञ्च वर्षाणि दश वर्षाणि ताडयेत्। प्राप्ते तु षोडशे वर्षे पुत्रं मित्रवदाचरेत्। ३. स्वामिवत् पञ्चवर्षाणि दश वर्षाणि दासवत्। प्राप्ते तु षोडशे वर्षे पुत्रं मित्रवदाचरेत्।

(ख) यौवन

१. कस्य नेष्टं हि यौवनम् (क॰)। २. किंचित्कालोपभोग्यानि यौवनानि धनानि च। ३. सर्वथा दुर्लभं यौवनमस्वलितम् (का॰)। ४. सर्वथा न कंचिन्न खलीकरोति जीविततृष्णा। ५. स्पृशन्त्यास्तरुण्यं किमिव निह रम्यं मृगदृशः। ६. हरति मनो मधुरा हि यौवनश्रीः (कि॰)।

(ग) वार्धक्य

१. अङ्गं गलितं पलितं मुण्डं, दशनिवहीनं जातं तुण्डम्। वृद्धो याति गृहीत्वा दण्डं, तदिप न मुख्यत्याशा पिण्डम्। २. जरा रूपं हरित। ३. न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धाः (हि०)। ४. वृद्धस्य तरुणी विषम्। ५. वृद्धा जना निष्करुणा भवन्ति।

(घ) काल (अवसर)

१. कालयुत्तया ह्यरिर्मित्रं जायते न च सर्वदा (क॰)। २. काले खलु समा-रब्धाः फलं वध्नन्ति नीतयः (र०)। ३. काले दत्तं वरं ह्यल्पमकाले बहुनापि किम् (क॰)। ४. कालेन फलते तीर्थं सद्यः साधुसमागमः (भा०)। ५. कुर्वन्त्यकालेऽभिन्यक्तिं न कार्यापेक्षिणो बुधाः (क०)। ६. समय एव करोति बलाबलम् (शि॰)। ७. समये हि सर्वमुपकारि कृतम् (शि॰)।

(ङ) काल (मृत्यु)

१. कः कालस्य न गोचरान्तरगतः (म०)। २. कालस्य कुटिला गतिः।
३. कालो ह्ययं निरविधिर्विपुला च पृथ्वी (मा०)। ४. मृत्योः सर्वत्र तुल्यता। ५. मृत्योविभेषि किं बाले, न स भीतं विमुञ्जति। ६. लङ्घ्यते न खलु कालानियोगः (कि०)।
७. सर्वः कालवदोन नश्यति। ८. सर्वे यस्य वशादगात् स्मृतिपथं कालाय तस्मै नमः।

(८) आरोग्य

१. अजीणें भोजनं विषम् (हि०)। २. अहितो देहजो व्याधिः। ३. आत्मानमेव मन्येत कर्तारं सुखदुःखयोः (च०)। ४. दृष्टश्रुताभ्यां सन्देहमवापोह्याचरेत् क्रियाः (सुश्रुत०)। ५. धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मृलसुत्तमम् (च०)। ६. न च व्याधिसमो रिपुः। ७. न नक्तं दिध भुञ्जीत। ८. पित्तेन दूने रसने सितापि तिक्तायते (नै०)। ९. प्रतिकारविधानमायुषः सित दोषे हि पलाय कल्पते (र०)। १०. मर्दनं गुणवर्धनम्। ११. यथौषधं स्वादु हितं च दुर्लभम्। १२. रसमूला हि व्याधयः। १३. विकारं खलु परमार्थतोऽज्ञात्वाऽनारम्भः प्रतीकारस्य (शा०)। १४. व्याधितस्यौषधं मित्रम्। १५. श्रुतिः व्याधिमन्दिरम्। १६. शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् (कु०)। १७. शरीरे चैव शास्त्रे च दृष्टार्थः स्याद् विशारदः (सुश्रुत०)। १८. सम्यक् प्रयोगं सर्वेषां सिद्धिराख्याति कर्मणाम् (च०)। १९. सर्वथा च कञ्चन न स्पृशन्ति शरीरधर्माणमुपतापाः (का०)। २०. सुखार्थाः सर्वभूतानां मताः सर्वाः प्रवृत्तयः (च०)। २१. स्वेद्यमामज्वरं प्राजः कोऽम्भसा परिषिञ्चति (शि०)। २२. हितमुक् मितभुक् शाकभुक्। २३. हितमारण्य-मौषधम्।

(९) राजधर्मादि

(क) राजधर्म (राजकर्म)

१. अरिषु हि विजयार्थिनः क्षितीशा विद्धित सोपिध सन्धिदूषणानि (कि॰)।
९. अत्पीयसोऽप्यामयतुल्यवृत्तेर्महापकाराय रिपोर्विवृद्धिः (कि॰) । ३. अविश्रमोऽयं
लोकतन्त्राधिकारः (शा॰)। ४. आपन्नस्य विषयनिवासिन आर्तिहरेण राज्ञा भवितव्यम्
(शा॰)। ५. आश्वस्तो वेत्ति कुसृतिं प्रभुः को हि स्वमन्त्रिणाम् (क॰)। ६. द्विश्वराणा
CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हि विनोदरसिकं मनः (कि०)। ७. ऋद्धं हि राज्यं पदमैन्द्रमाहुः (र०)। ८. को नाम राज्ञां प्रियः (प०)। ९. क्षितिपतिः को नाम नीति विना। १०. गणयन्ति न राज्यार्थेऽ-पत्यस्नेहं महीभुजः (क०)। ११. चाराजानन्ति राजानः। १२. नयवर्त्मगाः प्रभवतां हि धियः (कि॰)। १३. नये च शौयें च वसन्ति सम्पदः। १४. नयेन चालंकियते नरेन्द्रता । १५. नरपतिहितकर्ता द्वेष्यतां याति लोके, जनपदहितकर्ता द्विष्यते पार्थिवेन्द्रैः (प०)। १६. नहीश्वरत्याहृतयः कदाचित् पुष्णन्ति लोके विपरीतमर्थम् (दु०)। १७. नृपतिजनपदानां दुर्लभः कार्यकर्ता (प०) । १८. नृपस्य वर्णाश्रमपालनं यत्स एव धर्मः (र०)। १९. परमं लाभमरातिभङ्गमाहुः (कि०)। २०. पिशुनजनं खलु विभ्रति क्षितीन्द्राः । २१. पृथिवीभृषणं राजा । २२. प्रजानामपि दीनानां राजैव सदयः पिता । २३. प्रभुचित्तमेव हि जनोऽनुवर्तते (शि॰)। २४. प्रभुप्रसादो हि मुदे न कस्य (कु॰)। २५. प्रभूणां हि विभूत्यन्धा धावत्यविषये मतिः (क०)। २६. प्रयोजनापेक्षितया प्रभूणां प्रायश्चलं गौरवमाश्रितेषु (कु०)। २७. प्रायेण भूमिपतयः प्रमदा लताश्च, यः पार्श्वतो भवति तं परिवेष्टयन्ति (प०)। २८. भजन्ति वैतसीं वृत्तिं राजानः कालवेदिनः (क०)। २९. मनीषिणः सन्ति न ते हितैषिणः (प०)। ३०. महीपतीनां विनयो हि भूषणम्। ३१. राजा राष्ट्रकृतं पापम् । ३२. राजा सहायवान् शूरः सोत्साहो जयति द्विषः (क०) । ३३. वसमत्या हि नृपाः कलत्रिणः (र०) । ३४. वाराङ्गनेव नृपनीतिरनेकरूपाः (प०) । ३५. वर्जन्ति शत्रुनवधूय निःस्पृद्दाः, शमेन सिद्धिं मुनयो न भूभृतः (कि॰)। ३६. शुचिः क्षेमकरो राजा। ३७. सर्वः प्रार्थितमर्थमधिगम्य सुखी सम्पद्यते जन्तुः। राज्ञां तु चरिता-र्थता दुःखोत्तरैव (शा॰)। ३८. स्वदेशे पूज्यते राजा (चा॰)। ३९. इतं सैन्यम-नायकम् (चा०)।

(ख) सद्भृत्य

१. अनियुक्तोऽपि च ब्र्याद्यदीच्छेत् स्वामिनो हितम् (क०)। २. कथं हि लङ्घ्यते भृत्यैर्प्रहिकस्य प्रभोर्वचः (क०)। ३. कालप्रयुक्ता खल्छ कर्मविद्धिर्विज्ञापना भर्तृषु सिद्धिमेति (कु०)। ४. न किंचिन्न कारयत्यसाधारणी स्वामिभक्ताः (ह०)। ५. नास्त्यहो स्वामिभक्तानां पुत्रे वात्मिन वा स्पृहा (क०)। ६. प्राणैरिप हि भृत्यानां स्वामिसंरक्षणं व्रतम् (क०)। ७. भृत्या अपि त एव ये संपत्तेविपत्तौ सिवशेषं सेवन्ते (का०)। ८. संभावना स्विधृहतस्य तनोति तेजः (क०)। ९. सेवाधमः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः (भ०)। १०. स्वामिन्यसाध्यव्यसने सुखं सन्मित्त्रणां कुतः (क०)। ११. स्वाम्यायत्ताः

सदा प्राणा भृत्यानामर्जिता धनेः (पुर्व) (CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(१०) आचार (क) कर्तव्य-बोधन

१. अर्थमनर्थं भावय नित्यं, नास्ति ततः सुखहेशः सत्यम् । २. आज्ञा गुरूणां ह्यविचारणीया (२०) । ३. आपदयें धनं रक्षेद् दारान् रक्षेद् धनैरिप (प०) । ४. उद्धरे-दात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् (गी०) । ५. उद्धरेद् दीनमात्मानं समर्थों धर्ममाचरेत् । ६. कर्तव्यं हि सतां वचः (क०) । ७. कर्तव्यो महदाश्रयः (प०) । ८. कस्यचित् किमिप नो हरणीयं, मर्मवाक्यमि नो चरणीयम् । ९. गत्तव्यं राजपथे । १०. न स्वेच्छं व्यव-हर्तव्यमात्मनो भृतिमिच्छता (क०) । ११. न्याय्यां वृत्तिं समाचरेत् । १२. परमार्थम-विज्ञाय न भेतव्य क्वचिन्नृभिः (क०) । १३. भवेन्न यस्य यत्कर्म, स तत्कुर्वन् विनश्यित (क०) । १४. मानं सर्वार्थसाधकम् । १७. मोनं स्वीकृतिलक्षणम् । १८. यद्यपि द्युद्धं लोकविद्धं नाचरणीयं नाचरणीयम् । १९. वचने का दरिद्रता । २०. वस्त्रपूतं पिवेज्जलम् (का०नी०) । २१. विश्वासं स्त्रीषु वर्जयेत् । २२. सत्रोरिप गुणा वाच्या दोषा वाच्या गुरोरिप । २३. सत्यपूतां वदेद् वाणीम् । २४. सर्वथा व्यवहर्तव्यं कुतो ह्यवचनीयता (उ०) । २५. सहसा विद्धीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम् (कि०) । २६. सहसा हि कृतं पापं कथं मा भृद् विपत्तये (क०) । २७. सुलभो हि द्विषां भन्नो, दुर्लभा सत्स्ववाच्यता (क०) ।

(ख) १. कुसंगति-निन्दा

१. असतां सङ्गदोषेण साधवो यान्ति विक्रियाम् । २. असाधुयोगा हि जयान्तरायाः प्रमाथिनीनां विपदां पदानि (कि०) । ३. कामं व्यसनवृक्षस्य मूळं दुर्जनसंगतिः
(क०) । ४. दशाननोऽहरत् सीतां वन्धं प्राप्तो महोदिधः । ५. नीचाश्रयो हि महतामपमानहेतः । ६. पवनः परागवाही रथ्यासु वहन् रजस्वलो भवति । ७. मधुरापि हि
मूर्च्छयते विषविटिपसमाश्रिता वल्ली । ८. मूर्वैहिं सङ्गं कस्यास्ति शर्मणे (कि०) । ९.
हीयते हि मतिस्तात हीनैः सह समागमात् । समेश्र समतामेति विशिष्टैश्र विशिष्टताम् (हि०)।

(ख) २. सत्संगति-प्रशंसा

१. अनुसत्य सतां वर्त्म यत् स्वस्पमपि तद् बहु। २. कस्य नाम्युदये हेतुर्भवेत् साधुसमागमः (क०)। ३. कस्य सत्सङ्को न भवेच्छुभः (क०)। ४. कामं न श्रेयसे कस्य संगमः पुण्यकर्मभिः (क०)। ५. कि वाऽभविष्यदरुणस्तमसां विभेत्ता, तं चेत्सहस्रकरिणो धुरि नाकरिष्यत् (शा०)। ६. गुणमहतां महते गुणाय योगः (कि०)। ७. चन्द्रचन्दन-योर्भध्ये शीतला साधुसंगतिः। ८. धुवं फलाय महते महतां सह संगमः (क०)। ९. पद्म-पत्रिस्तिं वारि धत्ते मुक्ताफलश्रियम्। १०. पुण्येरेव हि लम्यते सुकृतिभिः सत्संगतिर्दुर्लभा। ११. प्रायः सज्जनसंगतौ हि लभते दैवानुरूपं फलम्। १२. प्रायेणाधममध्यमोत्तमगुणः संसर्गतौ जायते (भ०)। १३. बृहत्सहायः कार्यान्तं क्षोदीयानिष गच्छति (शि०)। ८८-० ठा स्वातिश्वराष्ट्रस्ता स्वाति स्वति स्वाति स्वा

१६. सङ्गः सतां किमु न मङ्गलमातनोति (भा०)। १७. सतां सिद्धः सङ्गः कथमपि हि पुण्येन भवति (उ०)। १८. सतां हि सङ्गः सकलं प्रस्यते (भा०)। १९. सत्संगतिः कथय कि न करोति पुंसाम् (भ०)। २०. सिद्धरेव सहासीत सिद्धः कुवींत संगतिम्। सिद्धिविवादं मैत्रीं च नासिद्धः किंचिदाचरेत्। २१. समुन्नयन् भूतिमनार्यसंगमाद्, वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः (कि०)।

(ग) १. कृतघ्नता-निन्दा

१. अङ्कमारुह्य सुप्तं हि हत्वा कि नाम पौरुषम्। २. कृतन्ना धनलोभान्धा नोपकारेक्षणक्षमाः (क॰) । ३. कृतन्नानां शिवं कुतः (क॰) ।

(ग) २. कृतज्ञता-प्रशंसा

१. कृतज्ञे सत्परीवारे प्रभौ सेवाऽफला कुतः (क०) । २. न क्षुद्रोऽपि प्रथम-सुकृतापेक्षया संश्रयाय, प्राप्ते मित्रे भवति विमुखः (मे०) । ३. न तथा कृतवेदिनां करिष्यन् प्रियतामेति यथा कृतावदानः (कि०) ।

(घ) १. गुण-प्रशंसा

१. अम्बुगर्भो हि जीमृतश्चातकैरिमनन्यते (र०)। २. अल्ब्धशाणोत्कषणा नृपाणां, न जातु मौलौ मणयो वसन्ति (विक्रमांक०)। ३. एको हि दोषो गुणसिन्नपाते निमजतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः (कु०)। ४. किमवेशते रमियतुं न गुणाः (कि०)। ५. गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिङ्गं न च वयः (उ०)। ६. गुणाः प्रियत्वेऽधिकृता न संस्तवः (कि०)। ७. गुणिनि गुणशो रमते, नागुणशीलस्य गुणिनि परितोषः। ८. गुणी गुणं वेत्ति न वेत्ति निर्गुणः। ९. गुणेषु क्रियतां यत्नः किमाटोपैः प्रयोजनम्। १० गुणेषु यत्नः पुरुषेण कार्यो, न किंचिदप्राप्यतमं गुणानाम्। ११. गुरुतां नयन्ति हि गुणा न संहतिः (कि०)। १२. नाम यस्याभिनन्दन्ति द्विषोऽपि स पुमान् पुमान् (कि०)। १३. पदं हि सर्वत्र गुणैनिषीयते (र०)। १४. परिजनताऽपि गुणाय सद्गुणानाम् (कि०)। १५. प्राकाश्यं स्वगुणोदयेन गुणिनो गच्छन्ति किं जन्मना। १६. प्रायः प्रत्ययमाधत्ते स्वगुणेषूत्तमादरः (कु०)। १७. लक्ष्मीरनुसरित नयगुणसमृद्धम्। १८. वृणुते हि विमृत्यकारिणं गुणछुज्याः स्वयमेव सम्पदः (कि०)। १९. सुलभा रम्यता लोके दुर्लभ हि गुणार्जनम् (कि०)। २०. सुलभो हि द्विषां भङ्को दुर्लभा सस्ववाच्यता (कि०)। २१. स्थिरा शैली गुणवताम् (कुवलया०) २२. हंसो यथा क्षीरिमवाम्बुम्प्यात्। २३. हंसो हि क्षीरमादत्ते तिनम्आं वर्जयत्यपः (शा०)।

(घ) २. दुर्गु ण-निन्दा

१. अतिरोषणश्चक्षुष्मानप्यन्ध एव जनः (ह०)। २. अशीलं कस्य नाम स्यान्न खलीकारकारणम् (क०)। ३. अशीलं कस्य भ्तये (क०)। ४. अशीलस्य हतं कुलम्। ५. आपदेत्युभयलोकदूषणी वर्तमानमपथे हि दुर्मतिम् (कि०)। ६. गुणैर्विहीना बहु जल्पयन्ति। ७. पुरुषा अपि बाणा अपि गुणच्युताः कस्य न भयाय। ८. मद्यपस्य कुतः CC-Q Dr Pangdey Tripathi Collection et Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(ङ) तेजस्विता

१. अरुन्तुद्रत्वं महतां ह्यगोचरः (कि०)। २. अवन्ध्यकोपस्य विहन्तुरापटां, भवन्ति वस्याः स्वयमेव देहिनः (कि॰)। ३. अविभिद्य निशाकृतं तमः, प्रभया नागुमता-ऽप्युदीयते (कि॰)। ४. अशनेरमृतस्य चोभयोर्वशिनश्चाम्बुधराश्च योनयः (कु॰)। ५. इन्धनौघधगप्यमिस्तिवषा नात्येति पूषणम् (शि०)। ६. उदिते तु सहस्रशौ न खद्योतो न चन्द्रमाः। ७. उपहितपरमप्रभावधाम्नां, न हि जयिनां तपसामलङ्घयमस्ति (कि॰)। ८. ऋते कृशानोर्निह मन्त्रपूतमईन्ति तेजांस्यपराणि हव्यम् (कु॰)। ९. ऋते रवेः क्षालियतुं क्षमेत कः, क्षपातमस्काण्डमलीमसं नमः (शि०)। १०. कथचिन्नहि दिव्याना, वीर्यं भजति मोघताम् (क०)। ११. किमिवावसादकरमात्मवताम् (कि०)। १२. किमिवास्ति यन्न सुकरं मनस्विभिः (कि०)। १३. को विहन्तुमलमास्थितोद्ये, वासरिश्रयमशीतदीधितौ (शि॰)। १४. जगित बहुमताः कस्य नाभ्यर्चनीयाः। १५. <mark>ज्वलयति महता मनांस्यमर्षे, न हि लभतेऽधसरं सुखाभिलाषः (कि०)। १६. ज्वलितं</mark> न हिरण्यरेतसं, चयमास्कन्दति भस्मनां जनः (कि॰)। १७. तमस्तपति घर्माशौ कथमा-विभीविष्यति (शा०) । १८. तीव्रसन्त्वस्य न चिराद् भवन्त्येव हि सिद्धयः (क०) । १९. तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते (र०)। २०. तेजोविहीनं विजहाति दर्पः, शान्तार्चिषं दीपमिव प्रकाशः (कि॰)। २१. न खलु वयस्तेजसो हेतुः (भ०)। २२. न दूषितः दाक्तिमतां स्वयंग्रहः (कि०)। २३. न परेषु महोजसङ्खलादपकुर्वन्ति मलिम्लुचा इव (शि॰)। २४. न मानिता चास्ति भवन्ति च श्रियः (कि॰)। २५. नातिपीडियतुं भशानिच्छन्ति हि महोजसः (कि०)। २६. निवसन्नन्तर्दारुणि लङ्घ्यो वह्निन त ज्वलितः । २७. परैरिनिन्द्यं चिरतं मनिस्वनां पयोऽनुसारोचितमेव शोभते (क०)। २८. प्रकृतिः खञ्ज सा महीयसः, सहते नान्यसमुन्नति यया (कि०)। २९. मनस्वी कार्यार्थी गणयति न दुः सं न च सुखम् (भ०) । ३०. महतां हि धैर्यमविभाव्यवैभवम् (कि०) । २१. महानुभावः प्रतिहन्ति पौरुषम् (कि०) । ३२. मा जीवन् यः परावज्ञादुःखदग्धोऽपि जीवति (शि०)। ३३. वशिनां न निहन्ति धैर्यमनुभावगुणः (कि०)। ३४. विलम्बितुं न खलु सदा मनस्विनो, विधित्सवः कलहमवेक्ष्य विद्विषः (शि०)। ३५. श्रेयान् हि मानिनो मृत्युर्नेद्दगात्मप्रकाशनम् (क०)। ३६. संकलौकप्रधाना हि दिव्यानामिखलाः क्रियाः (क०)। ३७. सदाभिमानैकधना हि मानिनः (शि०)। ३८. सम्पत्स हि सुसत्त्वा-नामेकहेतुः स्वपौरुषम् (क०)। ३९. संभवत्यभिजातानाममिमानो ह्यकृत्रिमः (क०)। ४०. सहते विपत्सहस्रं मानी नैवायरानलेशमपि (महा०)। ४१. सहापऋष्टैर्महतां न संगतं, भवन्ति गोमायुसखा न दन्तिनः (कि॰)। ४२. सामानाधिकरण्यं हि तेजिस्तिमिरयोः कुतः (शि॰)। ४३. सूर्ये तपत्यावरणाय दृष्टेः कल्पेत लोकस्य कथं तमिस्रा (र०)। ४४. स्थिता तेजिस मानिता (िक॰)। ४५. स्ववीर्यगुप्ता हि मनोः प्रस्तिः (र०)। ४६. हेम्नः

संरक्ष्यते हामो विद्याद्धिः इयामिकाऽपि वा (र०) । CC-O. Dr. Ramdev Tripatri Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(च) मित्रता

१. आकरः स्वपरभूरिकथानां प्रायशो हि सुहृदोः सहवासः (नै०)। २. आप-त्काले तु सम्प्राप्ते यन्मित्रं मित्रमेव तत् (प०)। ३. आरम्भगुवीं क्षयिणी क्रमेण, लघ्वी पुरा वृद्धिमती च पश्चात्। दिनस्य पूर्वार्घपरार्धभिन्ना, छायेव मैत्री खलसज्जनानाम् (प०)। ४. एकं मित्रं भूपतिर्वा यतिर्वा (भ०)। ५. किमु चोदिताः प्रियहितार्थकृतः कृतिनो भवन्ति सुहृदः सुहृदाम् (शि॰)। ६. कुवाक्यान्तं च सौहृदम् (प०)। ७. कृशे कस्यास्ति सौहृदम् । ८. तत्तस्य किमिप द्रव्यं यो हि यस्य प्रियो जनः (७०)। ९. निह विचलति मैत्री दरतोऽपि स्थितानाम् । १०. नालं सुखाय सहदो नालं दुःखाय शत्रवः (महा०)। ११. परोऽपि हितवान् बन्धुः (प०)। १२. भावस्थिराणि जननान्तरसौह-दानि (शा॰)। १३. मनोभूषा मैत्री। १४. मन्दायन्ते न खलु मुहृदामभ्युपेतार्थकृत्याः (मे॰)। १५. मित्रलाभमनु लाभसम्पदः (कि॰)। १६. मित्रार्थगणितप्राणा दुर्लभा हि महोदयाः (क॰)। १७. यतः सतां हि संगतं, मनीषिभिः साप्तपदीनमुच्यते (कु॰)। १८. विदेशे बन्धुलाभो हि, मरावमृतनिर्झरः (क०)। १९. विप्रलम्भोऽपि लाभाय, सति प्रियसमागमे (कि॰)। २०. समानशीलव्यसनेषु सख्यम् (हि॰)। २१. समीरणो नोदियता भनेति, न्यादिश्यते केन हुताशनस्य (कु०)। २२. स सुहृद् व्यसने यः स्यात् (प०)। २३. स्वं जीवितमपि सन्तो न गणयन्ति मित्रार्थे (प०)। २४. स्वयमेव हि वातोऽग्नेः, सारथ्यं प्रतिपद्यते (र०)। २५. हितप्रयोजनं मित्रम्।

(छ) वीरता (धीरता), (वीर, धीर)

१. अनुत्सेकः खलु विक्रमालंकारः (वि०)। २. अमर्षणः शोणितकाङ्क्षया किं, पदा स्पृशन्तं दशित द्विलिह्नः (र०)। ३. अयमश्वः पताकेयमथवा वीरघोषणम् (उ०)। ४. अस्पत्तेषु धीराणामवज्ञैव हि शोभते (क०)। ५. अस्पुते स हि कत्याणं, व्यसने यो न मुद्यति (क०)। ६. असिद्धार्था निवर्तन्ते, न हि धीराः कृतोद्यमाः (क०)। ७. आपत्काले च कष्टेऽपि, नोत्साहस्त्यज्यते बुधैः (क०)। ८. आपत्सु धीरान् पुरुषान् स्वयमायान्ति सम्पदः (क०)। १. आपदि स्फुरित प्रज्ञा, यस्य धीरः स एव हि (क०)। १०. आपत्रिप त्याज्यं न सत्त्वं सम्पदेषिभिः (क०)। ११. आर्ज्धा द्यसमाप्तेव, किं धीरेस्त्यज्यते किया (क०)।१२. आर्ज्धे हिसुदुष्करेऽपि महतां मध्ये विरामः कृतः (क०)। १३. उत्साहैकधने हि वीरहृदये नाप्नोति खेदोऽन्तरम् (क०)। १४. उन्नतो न सहते तिरिक्तियाम्।१५. एकोऽप्याश्रयहीनोऽपि लक्ष्मीं प्राप्नोति सत्त्ववान् (क०)।१६. जीवन् हि धीरोऽभिमतं, किं नाम न यदाप्नुयात् (क०)। १७. ज्वल्यति महतां मनास्यमर्भे, न हि लभतेऽवसरं सुलाभिलाषः (कि०)। १८. न जात्ववसरे प्राप्ते, सत्त्ववान्वसीदिति (क०)। १९. ननु प्रवातेऽपि निष्कम्पा गिरयः (शा०)। २०. न श्रा विसहन्ते हि, क्वीनिमित्रं प्राप्ताम्वस्ति (क०)। । १०. न श्रा विसहन्ते हि,

२२. निह संचावसादेन, स्वत्पाप्यापद् विल्रङ्घते (क०) । २३. निसर्गः स हि धीराणां, यदापद्यधिकं दृटम् (क०) । २४. ग्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः (भ०) । २५. पराम्वोऽप्युत्सव एव मानिनाम् । २५. पराम्वोऽप्युत्सव एव मानिनाम् । २७. प्रकृतिरियं सत्त्ववताम् । २८. प्रतिपन्नसुद्धःकार्यनिर्वाहं धीरसत्त्वता (क०) । २९. प्राण्ययाय सूराणां, जायते हि रणोत्सवः (क०) । ३०. प्राणेभ्योऽपि हि धीराणां, प्रिया द्यन्नप्रतिक्रिया (नै०) । ३१. भुजे वीर्य निवसति न वाचि (ह०) । ३२. भीता इव हि धीराणां, यान्ति दूरे विपत्तयः (क०) । ३३. महीयांसः प्रकृत्या मितभाषिणः (शि०) । ३४. विकारहेतौ सति विविध्यत्ते, येषां न चेतांसि त एव धीराः (कु०) । ३५. विनाप्यर्थेधीरः स्टुशति वहुमानोन्नतिपदम् (ह०) । ३६. शतेषु जायते सूरः । ३७. सूरं कृतज्ञं दृटसौद्धवं च, लक्ष्मीः स्वयं याति निवासहेतोः (प०) । ३८. सूरस्य मूरणं तृणम् । ३९. सूरा हि प्रणतिप्रियाः (क०) । ४०. स धीरो यो न समोहमापत्कालेऽपि गच्छति (क०)।

(ज) शिष्टाचार (सदाचार)

१. आचारः प्रथमो धर्मः (म०)। २. आत्मेश्वराणां निह जातु विद्याः, समाधिमेदप्रभवो भवन्ति (कु०)। ३. उपभुक्ते हि तारुण्ये, प्रश्नमः सद्धिरिष्यते (क०)। ४.
महाजनो येन गतः स पन्थाः (प०)। ५. विनयाद्याति पात्रताम्। ६. विनयो हि सतां
वतम्। ७. शीलं परं भूषणम्। ८. शीलं भूषयते कुलम्। ९. शीलं हि विदुषां धनम्
(क०)। १०. शीलं हि सर्वस्य नरस्य भूषणम्। ११. शुभाचारस्य कः कुर्यादशुभं हि
सचेतनः (क०)। १२. सकलं शीलेन कुर्याद् वशम्। १३. सकलगुणभृषा च विनयः।

(झ) १. सज्जनप्रशंसा

१. अक्षीभ्यतैव महतां महत्त्वस्य हि लक्षणम् (क०)। २. अगम्यं मन्यते सुगम्।
३. अङ्गीकृतं सुकृतिनः परिपालयन्ति । ४. अनुग्रह्णन्ति हि प्रायो देवता अपि ताहशम् (क०)। ५. अनुत्तेकः खलुः विक्रमालंकारः (वि०)। ६. अनुहुंकुरुते घनध्वनि न हि गोमायुरुतानि केसरी (शि०)। ७. अयशोभीरवः किं न, सुर्वते वत साधवः (क०)। ८. अयातपूर्वा परिवादगोचरं, सतां हि वाणी गुणमेव भाषते (कि०)। ९. अरुन्तुदत्वं महतां ह्यगोचरः (कि०)। १०. अहह महतां निःसीमानश्चरित्रविभ्तयः (भ०)। ११० आदानं हि विसर्गाय, सतां वारिमुचामिव (र०)। १२. आपन्नार्तिप्रयमनफलाः सम्पदो ह्यन्तमानाम् (मे०)। १३. आवेष्टितो महासर्पेश्चन्दनः किं विपायते। १४. उत्तरोत्तरशुभो हि विभूनां कोऽपि मञ्जुलतमः क्रमवादः (नै०)। १५. उत्तहन्ते न हि द्रष्टुमुत्तमाः स्वजनापदम् (क०)। १६. उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् СС-० कि स्वीलाकी स्वानिक्षा स्वजनापनाम् । १४० क्राविक्षा स्वजनापनाम् । १४० क्राविक्षा स्वजनापनाम् । १४० क्राविक्षा स्वजनापनाम् । १४० क्राविक्षा स्वजनापनाम् । १६. उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ।

१९. कथमपि भुवनेऽस्मिस्तादृशाः संभवन्ति (मृ०)। २०. कदापि सत्पुरुषाः शोकवास्तव्या न भवन्ति (शा०)। २१. करुणार्द्रा हि सर्वस्य, सन्तोऽकारण-बान्धवाः (क॰)। २२. केषां न स्यादिभमतफला प्रार्थना ह्युत्तमेषु (मे॰)। २३. क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे (भ०)। २४. क्षुद्रेऽपि नृनं शरणं प्रपन्ने, ममन्वमुच्चैःशिरसां सतीव (कु०)। २५. खलसङ्गेऽपि नैष्टुर्यं, कल्याणप्रकृतेः कुतः। २६ प्रहीतुमार्यान् परिचर्यया मुहुर्महानुभावा हि नितान्तमर्थिनः (शि०)। २७. घना-म्बुना राजपथे हि पिन्छिले, ववचिद् बुधैरप्यपथेन गम्यते (नै०)। २८. घनाम्बुभिर्बहु-लितनिम्नगाजलैर्जल निह व्रजति विकारमम्बुधेः (शि०)। २९. चित्ते वाचि कियायां च, साधूनामेकरूपता । २०. जितशान्तेषु धीराणां स्नेह एवोचितोऽरिषु (क०) । ३१. ते भूमण्डलमण्डनैकतिरुकाः सन्तः कियन्तो जनाः । ३२. त्यजन्त्युत्तमसत्त्वा हि, प्राणानपि न सत्पथम् (क०)। ३३. दावानलप्लोपविपत्तिमन्योऽरण्यस्य हर्तुं जलदात् प्रभुः किम् (कु०)। ३४. दुर्लक्ष्यचिह्ना महतां हि वृत्तिः (कि०)। ३५. देवद्विजसपर्या हि, कामवेनुर्मता सताम् (क०)। ३६. देहपातमपीच्छन्ति, सन्तो नाविनयं पुनः (क०)। ३७. धनिनामितरः सतां पुनर्गुणवत्संनिधिरेव संनिधिः (शि०)। ३८. न चलति खलु वाक्यं सज्जनानां कदाचित्। ३९. न प्राणान्ते प्रकृतिविकृतिर्जायते चोत्तमानाम्। ४०. न भवति पुनरक्तं भाषितं सजनानाम् । ४१. न भवति महतां हि क्वापि मोघः प्रसादः । ४२. नहि कृतमुपकारं साधवो विस्मरन्ति । ४३. निजहृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः । ४४. निर्वाहः प्रतिपन्नवस्तुषु सतामेतद् हि गोत्रव्रतम् । ४५. न्यायाधारा हि साधवः (कि॰)। ४६. परदुःखेनापि दुःखिता विरलाः। ४७. परिजनताऽपि गुणाय सजनानाम् (कि॰)। ४८. पुण्यवन्तो हि सन्तानं पश्यन्त्युच्चै:कृतान्वयम् (क०)। ४९. प्रकृतिसिद्धमिदं हि महात्मनाम् (भ०) । ५०. प्रणामान्तः सतां कोपः । ५१. प्रणिपात-प्रतीकारः संरम्भो हि महात्मनाम् (र०)। ५२. प्रतिपन्नार्थनिर्वाहं सहजं हि सतां व्रतम् (क॰)। ५३. प्रत्युक्तं हि प्रणयिषु सतामी िसतार्थि कियेव (मे॰)। ५४. प्रवर्तते नाकृतपुण्य-कर्मणां, प्रसन्नगम्भीरपदा सरस्वती (कि॰)। ५५. प्रसन्नानां वाचः फलमपरिमेयं प्रसुवते। ५६. प्रसादचिह्नानि पुरःफलानि (र०) । ५७. प्रह्वेष्वनिर्वन्धरुषो हि सन्तः (र०) । ५८. प्रायेण साधुवृत्तानामस्थायिन्यो विपत्तयः। ५९. प्रायेणाकारणिमत्राण्यतिकरणाद्रीणि च सदा खलु भवन्ति सतां चेतांसि (का०)।६०. प्रारभ्य चोत्तमजना न परित्यजन्ति (भ०)। ६१. बताश्रितानुरोधेन किं न कुर्वन्ति साधवः (क०)। ६२. ब्रुवते हि फलेन साधवो,न तु कण्ठेन निजोपयोगिताम् (नै०)। ६३. भत्तया हि तुष्यन्ति महानुभावाः। ६४. भज-न्त्यातमंभरित्वं हि, दुर्लभेऽपि न साधवः (क०)। ६५. भवति महत्सु न निष्फलः प्रयासः CC-विष्णिश्रेalmdर्हे हिमानेस्त्रोतं व्हिताब्येकारञ्ज्ञङ्बाका एड्स इस्माम्ब्यंष्ट्रव्युष्ट्रप्र इस्मिस्वयः विद्यालेण क्रियंग्वेष्ट्रप्र महात्मनाम् (हि०) । ६८. महतां हि धैर्यमविभाव्यवैभवम् (कि०) । ६९. महतां हि सर्व-मथवा जनातिगम् (शि॰)। ७०. महतामनुकम्पा हि विरुद्धेषु प्रतिक्रिया (क॰)। ७१. महतीमपि श्रियमवाप्य विस्मयः, सुजनो न विस्मरित जातु किंचन (शि॰)। ७२. महते रुजन्नपि गुणाय महान् (कि॰)। ७३. महान् महत्येव करोति विक्रमम् (प०)। ७४. मोघा हि नाम जायेत महत्सूपकृतिः कुतः (क०)। ७५. यथा चित्तं तथा वाचो, यथा वाचस्तथा किया: । ७६. रहस्यं साधृनामनुपिध विशुद्धं विजयते (उ०) । ७७. रिपुष्विप हि भीतेषु सानुकम्पा महाशयाः (कि०)। ७८. वज्रादिप कठोराणि, मृदृनि कुसुमादिप । लोकोत्तराणां चेतांसि, को हि विज्ञातुमईति (उ०)। ७९. विक्रियायै न कल्पन्ते सम्बन्धाः सदनुष्ठिताः (कु०) । ८०. विप्रियमप्याकर्ण्यं ब्रूते प्रियमेव सर्वदा सुजनः । ८१. विवेक-धाराशतधौतमन्तः, सतां न कामः कलुषीकरोति (नै०)। ८२. व्रतामिरक्षा हि सतामलं-क्रिया (कि॰)। ८३. संपत्सु महतां चित्तं भवत्युत्पलकोमलम् (भ०)। ८४. संपत्सु हि सुसत्त्वानामेकहेतुः स्वपोरुषम् (क०) । ८५. सतां महत्संमुखधावि पौरुषम् (नै०) । ८६. सतां हि चेतः शुचितात्मसाक्षिका (नै०)। ८७. सतां हि प्रियंवदता कुलविद्या (ह०)। ८८. सतां हि साधुशीलत्वात् स्वभावो न निवर्तते । ८९. सत्यनियतवचसं वचसा सुजनं जनाश्चलयितुं क ईशते (शि०)। ९०. सद्भावार्द्रः फलति चिरेणोपकारो महत्सु (मे०)। ९१. सद्भिस्तु लीलया प्रोक्तं शिलालिखितमक्षरम् । ९२. सद्य एव सुकृतां हि पच्यते, कल्पवृक्षफलधर्मि काङ्कितम् (र०)। ९३. सन्तः परार्थं कुर्वाणा नावेक्षन्ते प्रतिक्रियाम् (महा०)। ९४. सन्तः पर्क्यान्यतरद् भजन्ते (मालविका०)। ९५. सुदुर्ग्रहान्तःकरणा हि साधवः (कि॰)। ९६. स्वामापदं प्रोज्झ्य विपत्तिमग्नं, शोचन्ति सन्तो ह्यपकारिपक्षम् (कि॰)। ९७. हदे गभीरे दृदि चावगाढे, शंसन्ति कार्यावतरं हि सन्तः (नै॰)।

(झ) २. दुर्जन-निन्दा

१. अकृत्यं मन्यते कृत्यम् (प०)। २. अत्युचैर्भवित लघीयसां हि धार्ष्यम् (श०)।
३. अनुकृलेऽपि कलत्रे, नीचः परदारलम्पटो भवित । ४. अन्यस्माल्रब्धपदो नीचः प्रायेण दुःसहो भवित । ५. अपि मुदमुपयान्तो वाग्विलासैः स्वकीयैः परभणितिषु तृप्तिं यान्ति सन्तः कियन्तः । ६. अभक्ष्यं मन्यते भक्ष्यम् । ७. अलोकसामान्यमचिन्त्यहेतुकं, द्विषित्त मन्दाश्चरितं महात्मनाम् (कु०)। ८. अव्यवस्थितचित्तस्य प्रसादोऽपि भयंकरः (भ०)।
९. अव्यापारेषु व्यापारं, यो नरः कर्तुमिच्छिति (प०)। १०. अश्रेयसे न वा कस्य, विश्वासो दुर्जने जने (क०)। ११. असद्वृत्तेरहोवृत्तं दुर्विभावं विधेरिव (कि०)। ८ असन्मैत्री हि दोषाय, कृल्ब्छायेव सेविता (कि०)। १३. अहो विश्वास्य वञ्च्यन्तं, धूत्तेंश्च्यमिरीश्वराः (क०)। १४. अहो सहन्ते बत नो परोदयम् । १५. उग्गो दहित

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ननु मक्षिकाऽन्नभोक्तारम् । १७. कथापि खलु णपानामलमश्रेयसे यतः (शि०) । १८. कि मर्दितोऽपि कस्त्यों, ल्ह्युनो याति सौरभम् । १९. किमिव ह्यस्ति दुरात्मनामलङ्घ्यम् (कि॰)। २०. कोऽन्यो हुतवहाद् दग्धुं प्रभवति (शा०)। २१. को वा दुर्जनवागुरासु पतितः क्षेमेण यातः पुमान् (प०) । २२. क्वाश्रयोऽस्ति दुरात्मनाम् । २३. क्षारं पिवति पयोधेर्वर्पत्यम्भोधरो मधुरमम्भः। २४. गुणार्जनोच्छायविरुद्धवुद्धयः, प्रकृत्यमित्रा हि सता-मसाधवः (कि॰)। २५. तरुणीकच इव नीचः, कौटित्यं नैव विजहाति। २६. दुःखान्धा हि पतन्त्येव, विपच्छुभ्रेषु कातराः (क०)। २७. दुग्धधौतोऽपि किं याति, वायसः कलहंसताम् । २८. दुर्जनः परिहर्तव्यो, विद्ययाऽलंकृतोऽपि सन् (भ०) । २९. दुर्जनस्य कुतः क्षमा । ३०. दुर्जनस्याजितं वित्तं, भुज्यते राजतस्करैः । ३१. दूरतः पर्वता रम्याः । ३२. दोपग्राही गुणत्यागी पछोलीव हि दुर्जनः (प०)। ३३. न परिचयो मलिनात्मना प्रधानम् (शि॰) । ३४. नासद्भिः किञ्चिदाचरेत् । ३५. निसर्गतोऽन्तर्मिलना ह्यसाधवः । ३६. नीचो वदति न कुरुते, वदति न साधुः करोत्येव । ३७. परिवृद्धिषु वद्धमत्सराणां, किमिव ह्यस्ति दुरात्मनामलङ्घ्यम् (कि॰)। ३८. प्रकृतिसिद्धमिदं हि दुरात्मनाम्। ३९. प्रकृत्यिमत्रा हि सतामसाधवः (कि॰)। ४०. प्रासादशिखरस्थोऽपि, काकः किं गरुडायते (प०) । ४१. बन्धुः को नाम दुष्टानाम् । ४२. भूयोऽपि सिक्तः पयसौ इतेन, न निम्ब-वृक्षो मधुरत्वमेति । ४३. भ्रष्टस्य का वा गतिः । ४४. मणिना भूपितः सर्पः किमसौ न भयंकरः (भ०)। ४५. मन्ये दुर्जनचित्तवृत्तिहरणे धाताऽपि भग्नोद्यमः। ४६. मात्सर्य-रागोपहतात्मनां हि, स्खलन्ति साधुप्विप मानसानि (कि०)। ४७. ये तु घ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे (भ०)। ४८. विचित्रमायाः कितवा ईंद्रशा एव सर्वदा (क०)। ४९. विपदन्ता ह्यवनीतसम्पदः (कि॰)। ५०. विश्वासः कुटिलेषु कः (क०)। ५१. शाम्येत् प्रत्यपकारेण नोपकारेण दुर्जनः (कु०)। ५२. सरित्पूरप्रपूर्णोऽपि, क्षारो न मधु-रायते (यो०)। ५३. सर्पः कूरः खलः कूरः सर्पात् क्रूरतरः खलः (चा०)। ५४. साहसं नैरपेक्ष्यं च, कितवानां निसर्गजम् (क०) । ५५. स्पृशन्ति न नृशंसानां, हृदयं बन्धुबुद्धयः (नै०)। ५६. स्पृशन्निप गजो हन्ति (प०)। ५७. हिंसा बलमसाधृनाम् (महा०)। ५८. होतारमपि जुह्दन्तं, स्पृष्टो दहति पावकः (प०)।

(ञ) १. सत्कर्म-प्रशंसा

१. अचिन्त्यं हि फलं स्ते सद्यः सुकृतपादपः (क०)। २. उप्तं सुकृतबीजं हिं, सुक्षेत्रेषु महत्फलम् (क०)। ३. कुरूपता शीलतया विराजते। ४. क्रिया हि वस्तूपहिता प्रसीदति (र०)। ५. यहानुपैतुं प्रणयादभीष्सवो, भवन्ति नापुण्यकृतां मनीषिणः (शि०)। ६. धर्मपरायणानां सदा समीपसंचारिण्यः कस्याणसंपदो भवन्ति (का०)। ७. नहि कस्याणकृत् कश्चिद्, दुर्गतिं नात गच्छति। ८. रक्षन्ति पुण्यानि पुराकृतानि। ९. वृत्तं यत्नेन संरक्षेद्, वित्तमेति च याति च (महा०)। १०. वृत्तं हि महितं सताम्। ११. शुभकृत्निह

CC-छी छतिरि(क्रिक्ट) Tribathi स्वसंक्रमाध्यस्य अर्थास्य (Sनिश्चिति प्रेयति प्रेयति (गी०) e Gangotri Gyaan Kosha

(ञ) २. दुष्कर्म-निन्दा

१. अनार्यः परदारव्यवहारः (शा०) । २. अनार्यजुष्टेन पथा, प्रवृत्तानां शिवं कुतः (क०) । ३. अनिर्वर्णनीयं परकल्त्रम् (शा०) । ४. अपन्थानं तु गच्छन्तं, सोदरोऽपि विमुञ्जति । ५. कष्टो ह्यविनयक्रमः (क०) । ६. पापप्रभावात् नरकं प्रयाति । ७. पापे कर्मण्यवज्ञातिहतवाक्ये कुतः सुखम् (क०) । ८. पूर्वावधीरितः श्रेयो दुःखं हि परिवर्तते (शा०) । ९. प्रतियध्नाति हि श्रेयः, पूष्यपूजाव्यतिक्रमः (र०) । १०. भवित हृदयदाही शल्यतुत्यो विपाकः (भ०) । ११. वरं क्लैब्यं पुंसां न च परकल्त्राभिगनम् (भ०) । १२. वरं प्राणत्यागो न च पिशुनवाक्येष्वभिरुचिः । १३. वरं भिक्षाशित्वं न मानपरिखण्डनम् । १४. वरं मौनं कार्ये न च वचनमुक्तं यदनृतम् ।

(ट) स्वावलम्बन

१. आत्मानमात्मनाऽनवसाद्यैवोद्धरित सन्तः (द०)। २. उद्धरेदात्मनात्मानं, नात्मानमवसादयेत् (गी०)। ३. गुणसंहतेः समितिरिक्तमहो, निजमेव सन्त्वमुपकारि सताम् (कि०)। ४. नास्ति चात्मसमं वलम्। ५. लंघयन् खल्ठ तेजसा जगन्न महानिच्छिति भूतिमन्यतः (कि०)। ६. विनिपातिनवर्तनक्षमं, मतमालम्बनमात्मपौरुषम् (कि०)।

(११) विद्या

(क) ज्ञान

१. कर्मणो ज्ञानमितिर्च्यते । २ न ज्ञानात् परमं चक्षुः । ३. न विवेकं विना ज्ञानम् । ४. नास्ति ज्ञानात् परं मुख्यम् । ५. प्रज्ञा नाम बलं ह्येवं, निष्प्रज्ञस्य बलेन किम् (क०) । ६. प्रज्ञावलं च सर्वेषु, मुख्यं कार्येषु साधनम् (क०) । ७. बुद्धिः कर्मानुसारिणी (चा०) । ८. बुद्धिनीम च सर्वेत्र, मुख्यं मित्रं च पौरुषम् (क०) । ९. बुद्धेः फलमनाग्रहः । १०. मितरेव बलाद्गरीयसी (हि०) । ११. स तु निरविधरेकः सज्जनानां विवेकः । १२. सुकृतः परिशुद्ध आगमः, कुस्ते दीप इवार्थदर्शनम् (क०) । १३. रवस्थे चित्ते बुद्धयः संभवन्ति ।

(ख) वाक्-प्रशंसा

१. अर्थभारवती वाणी, भजते कामपि श्रियम्। २. कः परः प्रियवादिनाम्। ३. क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम् (भ०)। ४. मुखरताऽवसरे हि विराजते (कि०)। ५. सदोभूषा स्किः। ६. सुदुर्लभाः सर्वमनोरमा गिरः (कि०)। ७. हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः (कि०)।

(ग) वाग्मिता

१. अल्पाक्षररमणीयं यः कथयति निश्चितं स खलु वाग्मी। २. भवन्ति ते सभ्यतमा विपश्चितां, मनोगतं वाचि निवेशयन्ति ये। नयन्ति तेष्वप्युपपन्ननैपुणा, गभीरमर्थे कतिचित् प्रकाशताम् (कि०)। ३. मितं च सारं च वचो हि वाग्मिता (नै०)। ४. मुखरताऽवसरे हि विराजते (कि०)। ५. वक्ता दशसहस्रेषु। ६. वक्ता श्रोता

च यत्रास्ति, रमन्ते तत्र सम्पदः । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(घ) विद्या

ः १. अजरामरवत् प्राज्ञो विद्यामर्थं च चिन्तरेत्। २. आलस्योपहता विद्या (हि॰) । ३. ऋते ज्ञानात्र मुक्तिः । ४. कणदाः क्षणदाश्चैव विद्यामर्थे च साधयेत् । ५. कामिनश्च कुतो विद्या। ६. का विद्या कविता विना। ७. किं किंन साधयित कल्प-लतेव विद्या । ८. किं जीवितेन पुरुषस्य निरक्षरेण (भ०)। ९. कुतो विद्यार्थिनः सुखम् । १०. जलविन्दुनिपातेन क्रमशः पूर्वते घटः। ११. ज्ञानमेव शक्तिः। १२. ज्ञानस्याभरणं क्षमा । १३. तस्य विस्तारिता बुद्धिस्तैलविन्दुरिवाम्भसि । १४. तस्य संकुचिता बुद्धिर्धत-बिन्दुरिवाम्भसि । १५. दुरधीता विषं विद्या (हि०) । १६. धिम्जीवितं शास्त्रकलोज्झ-तस्य । १७. न च विद्यासमो बन्धुः । १८. पटतो नास्ति मूर्खत्वम् । १९. पूर्वपुण्यतया विद्या । २०. माता शत्रुः पिता वैरी, येन वालो न पाटितः (हि०) । २१. या लोक-द्वयसाधनी तनुभृतां सा चातुरी चातुरी। २२. विद्यातुराणां न सुखं न निद्रा। २३. विद्या ददाति विनयम् (हि॰)। २४. विद्याधनं सर्वधनप्रधानम्। २५. विद्या नाम नरस्य स्पमधिकम् । २६. विद्या परं दैवतम् । २७. विद्या मित्रं प्रवासे च । २८. विद्या योगेन रक्ष्यते । २९. विद्या रूपं कुरूपाणाम् । ३० विद्याविहीनः पद्यः । ३१. विद्यासमं नास्ति शरीरभूपणम् । ३२ विद्या सर्दस्य भूषणम् । ३३ विद्या स्तब्धस्य निष्मला । ३४. वेदाजानित पण्डिताः । ३५. शास्त्रं हि निश्चितिधयां वव न सिद्धिमेति (शि॰)। ३६. शास्त्राद् रुटिर्वलीयसी। ३७. शोभन्ते विद्यया विप्राः। ३८. श्रोत्रस्य भूपणं शास्त्रम् । ३९. सुखार्थिनः कृतो विद्या, विद्यार्थिनः कृतः सुखम् ।

(ङ) १. विद्वत्प्रशंसा

१. अगाधजलसंचारी न गर्वे याति रोहितः (प०)। २. अलब्धशाणोत्कपणा नृपाणां, न जातु मौलौ मणयो वसन्ति (विक्रमांकः)। ३. किमज्ञेयं हि धीमताम् (कः)। ४. झटिति पराशयवेदिनो हि विज्ञाः (नै०)। ५. न खलु धीमतां कश्चिद्विषयो नाम (शा०)। ६. ननु वक्तृविशेषनिःस्पृहा, गुणरह्या वचने विपश्चितः (कि०)। ७. ननु विमृश्य कृती कुरुतेऽखिलम्। ८. नहीङ्गितज्ञोवसरेऽवसीदित (कि॰)। ९. परेङ्गितज्ञान-फला हि बुद्धयः। १०. प्रतिभातश्च पश्यन्ति सर्वे प्रज्ञावतां धियः (क०)। ११. प्रस्तु-तार्थविरुद्धं हि, कोऽभिद्ध्याद्वाल्झः (क०)। १२. बलवद्पि शिक्षितानामात्मन्यप्रत्ययं चेतः (शा॰)। १३. यत्र विद्वजनो नास्ति, श्लाध्यस्तत्राल्पधीरपि। १४. युक्तं न वा युक्तमिदं विचिन्त्य, वदेद् विपश्चिन्महतोऽनुरोधात्। १५. युक्तियुक्तं प्रगृह्णीयाद् वालादपि विचक्षणः। १६. वर्तमानेन कालेन वर्तयन्ति विचक्षणाः। १७. विद्वान् कुलीनो न करोति गर्वम् । १८. विद्वान् सर्वगुणेषु पृजिततनुर्मूर्खस्य नान्या गतिः । १९. विद्वान् सर्वत्र पृज्यते (चा०)। २०. संकटे हि परीक्ष्यन्ते प्राज्ञाः सूराश्च संगरे (क०)। २१. सभारत्नं विद्वान् । २२. सहस्रेषु च पण्डितः । २३. सारं गृह्णन्ति पण्डिताः । २४. CC^Eतुः धेरक्षेत्रस्थिताः विद्वातः विद्वातः (पाक्ट)ion at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(ङ) २. मूर्ख-निन्दा

१. अगुणस्य हतं रूपम् । २. अजागलस्तनस्येव तस्य जन्म निरर्थकम् (प०) । ३. अज्ञता कस्य नामेह, नोपहासाय जायते (क०)। ४. अज्ञानामृतचेतसामितरुषां कोऽर्थस्तिरश्चां गुणैः । ५. अनार्यसंगमाद्, वरं विरोधोऽपि समं महात्माभिः (कि॰)। ६. अन्तःसारविहीनानामुपदेशो न विद्यते । ७. अन्यस्य दीपो विधरस्य गीतम् । ८. अर्घो घटो घोषमुपैति नूनम् । ९. अल्पविद्यो महागर्वी । १०. अल्पस्य हेतोर्बह् हातुमिच्छन् , विचारमूदः प्रतिभासि मे त्वम् (र०)। ११. अवस्तुनि कृतक्लेशो मूर्खो यात्यवहास्यताम् (क०)। १२. आपदेत्युभयलोकदूषणी, वर्तमानमपथे हि दुर्मतिम् (कि०)। १३. उपदेशो हि मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये (प०)। १४. क्षमन्ते न विचारं हि, मूर्खा विषयलोलुपाः (क॰)। १५. जायन्ते बत मूढानां संवादा अपि तादशाः (क॰)। १६. ज्ञानलबदुर्विदग्धं ब्रह्मापि नरं न रञ्जयति (भ०) । १७. दर्दुरा यत्र वक्तारस्तत्र मौनं हि शोभनम्। १८. न तु प्रतिनिविष्टमूर्खंजनचित्तमाराधयेत्। (भ०) १९. निष्पज्ञो नारायत्येव प्रभोरर्थमथात्मनः (क॰)। २॰. प्राप्तोऽप्यर्थः क्षणादेव हार्थते मन्दबुद्धिना (क॰)। २१. बलं मूर्खस्य मौनित्वम् । २२. बहुवचनमल्पसारं यः कथयति विप्रलापी सः । २३. भवति योजयितु-र्वचनीयता (प०)। २४. मदमूढबुद्धिषु विवेकिता कुतः (शि०)। २५. मूढः परप्रत्ययनेय-बुद्धिः (मालविका०)। २६. मूर्वस्य किं शास्त्रकथाप्रसङ्गः। २७. मूर्वाणां बोधको रिपुः। २८. मूर्खोऽनुभवति क्लेशं, न कार्ये कुरुते पुनः (क०)। २९. मोहान्धमविवेकं हि श्रीश्चिराय न सेवते (क॰)। ३०. लोके पशुश्च मूर्खश्च निर्विवेकमती समी (क॰)। ३१. लोकोपहसिताः शश्वत् सीदन्त्येव ह्यबुद्धयः (क॰)। ३२. विद्या विवादाय धनं मदाय। ३३. विद्याविहीनः पशुः । ३४. विभूषणं मौनमपण्डितानाम् (भ०)। ३५. संवृणोति खिछ दोषमज्ञता (कि॰)। ३६. सर्वस्यौषधमस्ति शास्त्रविहितं मूर्वस्य नास्त्यौषधम् (प॰)। ३७. स्रजमि शिरस्यन्धः क्षिप्तां धुनोत्यहिशङ्कया (शा०)। ३८. स्वगृहे पूज्यते मूर्तः। ३९. हितोपदेशो मूर्वस्य कोपायैव न शान्तये (क०)।

(१२) विचारात्मक

(क) आशा

१. आशा नाम नदी मनोरथजला तृष्णातरङ्गाकुला (भ०)। २. आशाबन्धः कुसुमसदृशं प्रायशो हाङ्गनानां, सद्यःपाति प्रणयि हृद्यं विप्रयोगे रुणद्धि (मे॰)। ३. एवमाशाग्रहग्रस्तैः क्रीडन्ति धनिनोऽथिमिः (हि०)। ४. गुर्वपि विरहदुःखमाशा-र. एवनारात्रहरूराः गाउँ। । बन्धः साहयति (शा०) । ५. घिगाशा सर्वदोषभूः । ६. नास्ति तृष्णासमो व्याधिः । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(ख) उद्यम-प्रशंसा

१. अगच्छन् वैनतेयोऽपि पदमेकं न गच्छति । २. अचिरांशुविलासचञ्चला. ननु लक्ष्मीः फलमानुषङ्क्तिकम् (कि॰)। ३. अप्राप्यं नाम नेहास्ति धीरस्य व्यवसायिनः (क॰)। ४. अथों हि नष्टकार्यार्थेर्नायत्नेनाधिगम्यते (रा॰)। ५. इह जगति हि न निरीहदेहिनं श्रियः संश्रयन्ते (द०)। ६. उत्साहवन्तः पुरुषा नावसीदन्ति कर्मसु (रा०)। ७. उद्यमेन विना राजन्न सिध्यन्ति मनोरथाः (प०)। ८. उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः (प०) । ९. उद्योगः पुरुषलक्षणम् । १०. उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः (प०)। ११. क ईप्सितार्थस्थिरनिश्चयं मन:, पयश्च निम्नाभिमुखं प्रतीपयेत् (कु०)। १२. कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन (गी०)। १३. कि दूरं व्यवसायिनाम् (चा०)। १४. कुर्वत्रेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः (यजु०)। १५. कुधी न ऊर्ध्वान् चरथाय जीवसे (ऋग्०)। १६. कोऽतिभारः समर्थानाम् (प०)। १७. गुणसंहतेः समतिरिक्तमहो निजमेव सत्त्वमुपकारि सताम् (कि॰)। १८. धिग्जीवितं चोद्यमवर्जितस्य । १९. निह दुष्करमस्तीह किंचिदध्यवसायिनाम् (क०) । २०. निह सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः । २१. निवसन्ति पराक्रमाश्रया न विषादेन समं समृद्धयः (कि॰)। २२. प्राप्नोतीष्टमविक्लवः (क॰)। २३. यत्ने कृते यदि न सिध्यति कोऽत्र दोषः (हि०)। २४. यदनुद्वेगतः साध्यः पुरुषार्थः सदा बुधैः (क०)। २५. यस्तु कियावान् पुरुषः स विद्वान् । २६. सत्त्वाधीना हि सिद्ध्यः (क०) । २७. सत्त्वा-नुरूपं सर्वस्य, धाता सर्वे प्रयच्छति (क॰)। २८. समर्थों यो नित्यं स जयतितरां कोऽपि पुरुषः । २९. सर्वः कुच्छ्रगतोऽपि वाञ्छात जनः सत्त्वानुरूपं फलम् (भ०) । ३०. साहसे श्रीः प्रतिवसति (मृ०)। ३१. सिध्यन्ति कुत्र सुकृतानि विना श्रमेण। ३२. सुकृती चानुभूयैव दुःखमप्यश्नुते सुखम् (क०) । ३३. इतं ज्ञानं कियाहीनम् ।

(ग) एकता

१. एक चित्ते द्वयोरेव किमसाध्यं भवेदिति (क०)। २. पञ्चभिर्मिलितैः कि यजगतीह न साध्यते (नै०)। ३. महोदयानामिष संघवृत्तितां, सहायसाध्याः प्रदिशन्ति सिद्धयः (कि०)। ४. संगच्छध्यं संवद्ध्वं सं वो मनांसि जानताम् (ऋग्०)। ५. संघे शक्तिः कलौ युगे। ६. समानी व आकृतिः समाना हृदयानि वः (ऋग्०)। ७. समानो मन्त्रः समितिः समानी, समानं मनः सह चित्तमेषाम् (ऋग्०)।

(घ) कीर्ति

१. अनन्यगामिनी पुंसां कीतिरेका पतिव्रता । २. अपि स्वदेहात् किमुतेन्द्रियार्थाद्, यशोधनानां हि यशो गरीथः (२०) । ३.काकोऽपि जीवति चिराय बलिं च भुङ्क्ते (प०) ।

४. कुकर्मान्तं यशो न्याप्ता ection a स्डिजियाला विकास प्राप्ता है। Signatura e e ang स्थितिका Kosha

किं जन्म कीर्ति विना। ७. जटरं को न बिभर्ति केवलम्। ८. पिण्डेप्बनास्था खलु भौति-केषु (र०)। ९. प्राप्यते किं यशः शुभ्रमनङ्गीकृत्य साहसम् (क०)। १०. माने म्लाने कुतः सुखम्। ११. यशः पुण्येरवाप्यते (चा०)। १२. यशस्तु रक्ष्यं परतो यशोधनैः (र०)। १३. संभावितस्य चाकीर्तिर्मरणादितिरिच्यते (गी०)। १४. सर्वे रत्नमुपद्रवेण सहितं निर्दोषमेकं यशः। १५. सहते विरहक्टेशं यशस्वी नायशः पुनः (क०)।

(ङ) दान

१. आदानं हि विसर्गाय सतां वारिमुचामिव (र०)। २. उपार्जतानां वित्तानां त्याग एव हि रक्षणम् (प०)। ३. कुपात्रदानाच भवेद् दिद्धः। ४, कुप्येत् को नाति याचितः। ५. त्यागाज्ञगति पूज्यन्ते, पशुपाषाणपादपाः। ६. त्यागी भवित वा न वा। ७. दानं भोगो नाशश्च तिस्रो गतयो भवित वित्तस्य (प०)। ८. देशे काले च पात्रे च तद् दानं सान्तिकं स्मृतम् (गी०)। ९. श्रद्धया देयम् (तै० उप०)। १०. श्रद्धया न विना दानम्। ११. सकलगुणसीमा वितरणम्। १२. सित्यितिर्नहि समुपैति रिक्तताम् (शि०)। १३. हस्तस्य भूषणं दानम्।

(च) परोपकार

१. अनुभवति हि मूर्ध्ना पादपस्तीत्रमुष्णं शमयति परितापं छायया संश्रितानाम् (शा॰)। २. अपृष्टोऽपि हितं ब्रूयाद्, यस्य नेच्छेत् पराभवम् । ३. आपन्नत्राणविकलैः किं प्राणैः पौरुषेण वा (क०)। ४. आपन्नार्तिप्रामनफलाः सम्पदो ह्यत्तमानाम् (मे०)। ५. इच्छादानपरोपकारकरणं पात्रानुरूपं फलम् । ६. उपकृत्य निसर्गतः परेषासुपरोधं नहि कुर्वते महान्तः (शि०)। ७. उपदेशपराः परेप्वपि, स्वविनाशाभिमुखेषु साधवः (হাি০)। ८. किमदेयमुदाराणामुपकारिषु तुष्यताम् (क०)। ९. धनानि जीवितं चैव परार्थे प्राज्ञ उत्सृजेत् (प॰)। १०. निह प्रियं प्रवक्तुमिच्छन्ति मृषा हितैषिणः (कि॰)। ११. नास्त्यदेयं महात्मनाम् । १२. परिहतिनरतानामादरो नात्मकायं । १३. परार्थ-प्रतिपन्ना हि नेक्षन्ते स्वार्थमुत्तमाः (क०) । १४. परोपकारजं पुण्यं न स्यात् क्रतुशतैरि । १५. परोपकाराय सतां विभूतयः । १६. परोपकारार्थमिदं शरीरम् । १७. पर्यायपीतस्य सुरैहिं मांशोः, कलाक्षयः श्लाघ्यतरो हि वृद्धेः (र०)। १८. भक्त्या कार्यधुरं वहन्ति कृतिनस्ते दुर्लभास्वादशाः। १९. मिथ्यापरोपकारो हि कुतः स्यात् कस्य शर्मणे (क॰)। २०. युक्तानां खलु महतां परोपकारे, कल्याणी भवति क्जल्स्विप प्रवृत्तिः (क॰)। २१. रिवपीतजला तपात्यये पुनरोघेन हि युज्यते नदी (कु॰)। २२. वरिवभवभूषा वितरणम् । २३. साधूनां हि परोपकारकरणे नोपाध्यपेक्षं मनः । २४. स्वत एव सतां परार्थता, ग्रहणानां हि यथा यथार्थता (शि॰)। २५. स्वभाव एवैष परोपकारिणाम् CC-O (क्रिस्) mide श्वा महामा पार्ट अपेमङ्गा sana (CSDS) Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(छ) लोभ

१. अर्थार्थी जीवलोकोऽयं स्मशानमिप सेवते (प०)। २. अर्थातुराणां न गुरुनं बन्धुः । ३. कष्टो हि वान्धवस्तेहं राज्यलोमोऽतिवर्तते (क०)। ४. कृतच्ना धनलोमान्धा नोपकारेक्षणक्षमाः (क०)। ५. केषां हि नापदां हेतुरतिलोभान्धबुद्धिता (क०)। ६.-कोऽथीं गतो गौरवम् (प०)। ७. तृष्णैका तरुणायते (प०)। ८. प्राणेभ्योऽप्यर्थमात्रा हि कुपणस्य गरीयसी (क०)। ९. लुब्धमर्थेन गृह्णीयात् (प०)। १०. लुब्धाना याचकः शत्रुः । ११. लोभः पापस्य कारणम् । १२. लोभमूलानि पापानि ।

(ज) सन्तोष

१. अन्तो नास्ति पिपासायाः सन्तोषः परमं सुखम् । २. अपां हि तृप्ताय न वारिधारा, स्वादुः सुगन्धिः स्वदते तुपारा (नै०) । ३. न तोषात् परमं सुखम् । ४. न तोषो महतां मुपा (कः)। ५ मनसि च परितुष्टे कोऽर्थवान् को दरिद्रः । ६. सन्तोष एवं पुरुषेस्य परं निधानम् । ७. सन्तोषतुरुयं धनमस्ति नान्यत् ।

(झ) सौन्दर्य

१. किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् (शा०)। २. केवलोऽपि सुभगो नवाम्बदः, कि पुनिस्त्रिदशचापलाञ्छितः (र०)। ३. क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति, तदेव रूपं रमणीयतायाः (शि०)। ४. गुणान् भूषयते रूपम्। ५. न रम्यमाहार्यमपेक्षते गुणम् (कि॰)। ६. न पट्पदश्रेणिभिरेन पङ्कजं, सरीवलासङ्गमपि प्रकाराते (कु॰)। ७.प्रागेन मुक्ता नयनाभिरामाः, प्राप्येन्द्रनीलं किमुतोन्मयूखम् (र०)। ८. प्रियेषु सौभाग्यफला हि चास्ता (कु०)। ९. भवन्ति साम्येऽपि निविष्टचेतसां, वपुर्विरोषेष्वतिगौरवाः क्रियाः (कु०)। १०. यतो रूपं ततः शीलम् । ११. यत्रांकृतिस्तत्र गुणा वसन्ति । १२. यदेव रोचते यस्मै भवेत्तत्तस्य सुन्दरम् । १३. रम्याणां विकृतिरिप श्रियं तनोति (कि०) । १४. सेयमाकृतिर्न व्यभिचरित शीलम् (द०)। १५. हरित मनो मधुरा हि यौवनश्रीः (कि०)।

(१३) मनोभाद

(क) करुण-रस

१. अपि ग्रावा रोदित्यपि दलंति वज्रस्य हृदयम् (उ०)। २. अभितप्तमयोऽपि मार्दवं, भजते कैव कथा शरीार्षु (र०)। ३. इष्टम्लानि शोकानि। ४. दुःखिते मनसि सर्वमसह्यम् (कि॰)। ५. प्रायः सर्वो भवति करुणावृत्तिराद्रीन्तरात्मा (मे॰)। ६. प्रिय-बन्धुविनाशोत्थः शोकाग्निः कं न तापयेत् (क०)। ७. प्रियानाशे कृत्स्नं किल जगदरण्यं हि भवति (उ॰)। ८. सन्धत्ते भृशमरति हि सद्वियोगः (कि॰)।

(ख) कोध

१. क्रोधः संसारवन्धनम् । २. क्रोधो मूलमनर्थानाम् (हि०) । ३. जितकोधेन सर्व हि जगदेतर विजीयते (क॰)। ४. जितकोधो न दुःखस्यास्पदीभवेत् (क॰)। ५. CC-Oपित्रस्वक्रतेत्वकृतिकृतिक्षिक्षक्षिक्षको(दिन्हिः)। Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(ग) चिन्ता

१. चिता दहति निर्जीवं, चिन्ता चैव सजीवकम् । २. चिन्ता जरा मनुष्याणाम् । ३. चिन्तासमं नास्ति शरीरशोषणम् ।

(घ) प्रेम (प्रेम-स्वभाव)

१. अनुरागान्धमनसां विचारः सहसा कुतः (क०)। २. अपथे पदमर्पयन्ति हि श्रुतवन्तोऽपि रजोनिमीलिताः (र०)। ३. अपायो मस्तकस्थो हि, विषयप्रस्तचेतसाम् (क०)। ४. अविज्ञातेऽपि बन्धो हि, बलात् प्रह्लादते मनः (कि०)। ५. आशु बध्नाति हि प्रेम, प्राग्जन्मान्तरसंस्तवः (क०)। ६. आहुः सप्तपदी मैजी। ७. गुणः खल्बनुरागस्य कारणं न बलात्कारः (मृ०)। ८. चित्तं जानाति जन्तूनां प्रेम जन्मान्तराजितम् (क०)। ९. जनानुरागप्रभवा हि सम्पदः। १०. तारामैत्रकं चक्षूरागः (उ०)। ११. दियतं जनः खलु गुणीति मन्यते (शि०)। १२. दियतास्वनवस्थितं नृणां, न खलु प्रेम चलं मुहुज्जने (कु०)। १३. प्रेम पश्यति भयान्यपदेऽपि (कि०)। १४. भावस्थिराणि जननान्तर-सौहदानि (शा०)। १५. लोके हि लोहेभ्यः कटिनतराः खलु स्नेहमया बन्धनपाशाः (ह०)। १६. वसन्ति हि प्रेम्णि गुणां न वस्तुनि (कि०)। १७. व्यतिषजित पदार्थानान्तरः कोऽपि हेतुः (उ०)। १८. सिल साहजिकं प्रेम दूरादिप विजायते। १९. सताः संगतं, मनीषिभिः साप्तपदीनमुन्यते (कु०)। २०. सर्वे स्नेहात् प्रवर्तते (महा०)। २१. सर्वः कान्तमात्मीयं पश्यति (शा०)। २२. सर्वः प्रियः खलु भवत्यनुरूपचेष्टः (शि०)। २३. स्नेहमूलानि दुःखानि (महा०)।

(ङ) रुचि

१. अनपेश्य गुणागुणौ जनः, स्वरुचि निश्चयतोऽनुधावति (शि॰)। २. तस्य तदेव हि मधुरं, यस्य मनो यत्र संलग्नम्।

(च) श्रंगार

१. इष्ट्रप्रवासनितान्यवलानस्य. दुःखानि नृनमितमात्रसुदुःसहानि (शा०)।
२. प्रभवति मण्डियतुं वधूरनङ्गः (कि०)। ३. वाम एव सुरतेष्विप कामः (कि०)।
४. सन्तापकारिणो बन्धुननिवप्रयोगा भवन्ति। ५. सन्धत्ते भृशमरित हि सदियोगः
(कि०)। ६. साधनेषु हि रतेरूपधत्ते रम्यतां प्रियसमागम एव (कि०)। ७. सूर्यापाये न
खलु कमलं पुष्यति स्वामिभिख्याम् (मे०)।

(छ) स्वाभिमान

१. जन्मिनो मानहीनस्य, तृणस्य च समा गतिः (कि॰)। २. न स्पृशति पत्व-लाम्भः पंजरशेषोऽपि कुंजरः कापि। ३. परमुक्ते हि कमले किमलेजीयते गतिः (क॰)।

CC-O. Dr. Ramdev Inpathi ट्यावन्सानान ही पते (कि॰) CC-O. Dr. Ramdev Inpathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(१४) व्यवहार

(क) अतिथि-सत्कार

१. अतिथिदेवो भव (तैत्ति० उ०)। २. अभ्यागतो यत्र न तत्र लक्ष्मीः। ३. यथाशक्त्यतिथेः पूजा धर्मो हि गृहमेधिनाम् (क०)।

(ख) अति सर्वत्र वर्जयेत्

१. अतिदानाद् बलिर्वद्धः (भा०)। २. अतिपरिचयादवज्ञा, सन्ततगमनादनादरो भवति । ३. अतिभुक्तिरतीवोक्तिः सद्यः प्राणापहारिणी । ४. अतिलोभो न कर्तव्यः, चकं भ्रमति मस्तके (प०)। ५. सर्वमतिमात्रं दोषाय (उ०)।

(ग) अस्तेय (चोर-स्वभाव)

१. कस्यचित् किमिप नो हरणीयम्। २. चोराणामनृतं बल्रम्। ३. चौरे गते वा किमु सावधानम्। ४. तस्करस्य कुतो धर्मः। ५. तेन त्यक्तेन भुझीथा मा ग्रधः कस्यस्विद् धनम् (यजु०)।

(घ) इष्टलाभ

१. कः शरीरनिर्वापयित्रीं शारदीं ज्योत्स्नां पटान्तेन वारयित (शा०)। २. कायः कस्य न वल्लभः। ३. चकास्ति योग्येन हि योग्यसंगमः (नै०)। ४. ददाति तीव्रसत्त्वा-नामिष्टमीक्षर एव हि (क०)। ५. धीराश्च सोढविरहाः प्राप्नुवन्तीष्टसंगमम् (क०)।

(ङ) कलह-निन्दा

१. अस्वर्यं लोकविद्विष्टम् । २. अहो दुरन्ता बलवद्विरोधिता (कि०) । ३. ईर्ष्या हि विवेकपरिपन्थिनी (क०) । ४. कल्हान्तानि हर्म्याणि (प०) । ५. वाड्यात्रोत्पादिता-सह्यवैरात् को नानुतप्यते (क०) ।

(च) कृषि '

१. अत्यवीजं हतं क्षेत्रम्। २. नाना फलैः फलति कल्पलतेव भूमिः (भ०)। ३. नास्ति धान्यसमं प्रियम्। ४. यथा बीजं तथाङ्कुरः। ५. यथा वृक्षस्तथा फलम्।

(छ) पराश्रय

१. कष्टः खल पराश्रयः। २. कष्टादिप कष्टतरं परगृहवासः परान्नं च । ३. नैवाश्रितेषु महतां गुणदोषयांका।

(ज) याञ्चा-निन्दा

१. अभ्यर्थानाभङ्गभयेन साधुर्माध्यस्थ्यमिष्टेऽप्यवलम्बतेऽथें (कु०)। २. अर्थिन जने त्यागं विना श्रीश्च का। ३. यं यं पश्यिस तस्य तस्य पुरतो मा ब्रूहि दीनं वचः (भ०)। ४. याचनान्तं हि गौरवम्। ५. याञ्चा मोघा वरमिष्रगुणे नाधमे लब्धकामा

(मे॰) । ६. वरं हि मानिनो मृत्यर्न हैन्यं स्तुज्ञा सिद्धांट (कन्छ) Slodhanta eGangotri Gyaan Kosha

(झ) विध्न

१. छिद्रेष्वनर्था बहुलीभवन्ति (प०)। २. रन्ध्रोपनिपातिनोऽनर्थाः (शा०)। ३. विद्नवत्यः प्रार्थितार्थसिद्धयः (शा०)। ४. श्रेयांसि लब्धुमसुखानि विनाऽन्तरायैः (कि०)। ५. सत्यः प्रवादो यच्छिद्रेष्वनर्था यान्ति भूरिताम् (क०)। ६. सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः।

(ञ) स्वार्थ

१. आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत् (प०)। २. कृतार्थः स्वामिनं द्वेष्टि (प०)। ३. कृता-र्थाश्च प्रयोजकम् (महा०)। ४. परसेवैकसक्तानां को हि स्नेहो निजे जने (क०)। ५. सर्वः कार्यवराज्जनोऽभिरमते तत्कस्य को वल्लभः (भ०)। ६. सर्वः स्वार्थे समीहते (शि०)। ७. सर्वथा स्वहितमाचरणीयं किं करिष्यति जनो बहुजल्पः।

(ट) नीति

१. अही दुरन्ता बलवद्विरोधिता (कि०)। २. आदी साम प्रयोक्तत्यम् (प०)। २. आर्जवं हि कुटिलेषु न नीतिः (नै०)। ४. आहारे व्यवहारे च त्यक्तलज्जः सुखी भवेत्। ५. इतो भ्रष्टस्ततो भ्रष्टः। ६. इदं च नास्ति नं परं च लभ्यते। ७. इष्टं धर्मेण योजयेत् (प॰)। ८. उच्छ्राय नयति यद्दच्छयाऽपि योगः (क॰)। ९. उपायं चिन्तयेत् प्राज्ञः (प०) । १० . उपायमास्थितस्यापि नश्यन्त्यर्थाः प्रमाद्यतः (शि०) । ११. उपायेन हि यच्छक्यं न तच्छक्यं पराक्रमैः (प०)। १२. ऋणकर्ता पिता शत्रुः (प०)। १३. एको वासः पत्तने वा वने वा (भ०)। १४. क उष्णोदकेन नवमालिकां सिञ्चिति (द्यार)। १५. कण्टकेनैव कण्टकम् (प०)। १६. के वा न स्युः परिभवपदं निष्फला-रम्भयत्नाः (मे०)। १७. को न याति वदां लोके मुखे पिण्डेन पूरितः। १८. गतं न शोचामि कृतं न मन्ये। १९. ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत्। २०. चलति जयान्न जिगीषतां हि चेतः (कि०)। २१. चलत्येकेन पादेन तिष्ठत्येकेन पण्डितः (शा० प०)। २२. त्यजेदेकं कुलस्यार्थे (प०)। २३. न काचस्य कृते जातु युक्ता मुक्तामणेः क्षतिः (क०)। २४. न कृपखननं युक्तं प्रदीप्ते वहिना गृहे (हि०)। २५. न पादपोन्मलन-शक्ति रंहः शिलोच्चये मूर्च्छति मारुतस्य (र०)। २६. न भयं चारित जायतः। नयहीनादपरज्यते जनः (कि॰)। २८. नहि तापयितुं शक्यं सागरा-म्मस्तृणोल्कया । २९. नार्कातपैर्जलजमेति हिमैस्तु दाहम् (नै०) ! ३०. नासमीक्ष्य परं स्थानं पूर्वमायतनं त्यजेत् (शा० प०)। ३१. निपातनीया हि सतामसाधवः (शि०)। ३२. नीचैरनीचैरतिनीचनीचैः सर्वेह्यायैः पळमेव साध्यम् । ३३. नृपतिजनपदानां दुर्लभः कार्यकर्ता (प०)। ३४. पयःपानं भुजङ्गानां केवलं विषवर्धनम् (प०)। ३५. पयो गते कि खल सेतुबन्धः। ३६. परवृद्धिषु बद्धमत्सराणां किमिव ह्यस्ति इरात्मनामलङ्घ्यम् (कि.०)। ३७. परसदननिविष्टः को लघुत्वं न याति (भ०)।

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

३८. पाणौ पयसा दग्धे तकं फूत्कृत्य पामरः पिबति । ३९. प्रकर्षतन्त्रा हि रणे जयश्रीः (कि॰)। ४०. प्रकृत्या ह्यमणिः श्रेयान् नालंकारश्च्युतोपलः (कि॰)। ४१. प्रच्छन्न-मप्यूहयते हि चेष्टा (कि॰)। ४२. प्रतीयन्ते न नीतिज्ञाः कृतावज्ञस्य वैरिणः (क०)। ४३. प्रमुख निर्विचारश्च नीतिरौर्न प्रशस्यते (क०)। ४४. प्रायोऽशुभस्य कार्यस्य कालहारः प्रतिक्रिया (क॰)। ४५. प्रार्थनाऽधिकवले विपत्फला (कि॰)। ४६. विधरा-न्मन्दकर्णः श्रेयान् । ४७. वन्धुरप्यहितः परः । ४८. बहुविध्नास्तु सदा कल्याणसिद्धयः (क॰)। ४९. भवन्ति वलेशबहुलाः सर्वस्यापीह सिद्धयः (क॰)। ५०. भवन्ति वाचो-ऽवसरे प्रयुक्ता, ध्रुवं प्रविस्पष्टफलोदयाय (कु॰)। ५१. भेदस्तत्र प्रयोक्तव्यो यतः स वशकारकः (प०) । ५२. महानिप प्रसङ्गेन नीचं सेवितुमिच्छति । ५३. महोदयानामिप संघवृत्तितां, सहायसाध्याः प्रदिशन्ति सिद्धयः (कि॰)। ५४. मायाचारो मायया वर्तितव्यः, साध्वाचारः साधुना प्रत्युपेयः (महा०)। ५५. मुख्यमङ्गं हि मन्त्रस्य विनिपात-प्रतिक्रिया (क॰)। ५६. मुह्यत्येव हि कृच्छ्रेषु संभ्रमज्वलितं मनः (कि॰)। ५७. मौनं सर्वार्थसाधकम् । ५८. मौनं स्वीकृतिलक्षणम् । ५९. मौनिनः कलहो नास्ति । ६०. यथा देशस्तथा भाषा। ६१. यथा राजा यथा प्रजा। ६२. यदि वाऽत्यन्तमृदुता न कस्य परि-भूयते (क०) । ६३. यद्यपि शुद्धं लोकविरुद्धं नाचरणीयं नाचरणीयम् । ६४. यान्ति न्याय-प्रवृत्तस्य, तिर्यञ्चोऽपि सहायताम् (अ०) । ६५. येन केन प्रकारेण प्रसिद्धः पुरुषो भवेत् । ६६. येनेष्टं तेन गम्यताम् । ६७. रत्नव्ययेन पाषाणं को हि रक्षितुमईति (क०) । ६८. वरयेत् कुलजां प्राज्ञो विरूपामपि कन्यकाम् । ६९. विक्रीते करिणि किमंकुद्दो विवादः। ७०. व्रजन्ति ते मूटिधियः पराभवं, भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः (क०)। ७१. शुष्केन्धने विह्नरुपैति वृद्धम्। ७२. श्रेयांसि लब्धुमसुखानि विनाउन्तरायैः (कि॰)। ७३. सदाऽनुक्लेषु हि कुवंते रतिं, नृपेष्वमात्येषु च सर्वसम्पदः (कि०)। ७४. सन्दीते भवने तु कृपखननं प्रत्युद्यमः कीः शः (भ०)। ७५. सन्धि कृत्वा तु हन्तव्यः संप्राप्तेऽवसरे पुनः (क॰)। ७६. संमुखीनो हि जयो रन्ध्रप्रहारिणाम् (र०)। ७७. सर्वनाशे समुत्पन्ने-८र्घे त्यनति पण्डितः (प०)।

(१५) पुरुषस्त्री-स्वभावादि (क) कन्या (पुत्री)

१. अथों हि कन्या परकीय एव (शा॰)। २. अशोच्या हि पितुः कन्या, सद्भर्तृ-प्रतिपादिता (कु॰)। ३. कन्या नाम महद् दुःखं, धिगहो महतामिप (क॰)। ४. कन्या-पितृत्वं खलु नाम कष्टम्। ५. शोककन्दः क्य कन्या हि, क्वानन्दः कायवान् सुतः

(क॰) । ६. स्नुपात्वं पापानां फलमधनगेहेलु सुद्धाम् । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS) Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(ख) पुत्र

१. अपुत्राणां किल न सन्ति लोकाः शुभाः (का०)। २. कः सूनुर्विनयं विना। ३. कुपुत्रेण कुल नष्टम्। ४. कोऽर्थः पुत्रेण जातेन, यो न विद्वान् न धार्मिकः (हि०)। ५. दुर्लभं क्षेमकृत् सुतः। ६. धिक् पुत्रमिवनीतं च। ७. न चाप्त्यसमः स्तेहः। ८. न पुत्रात्परमो लाभः। ९. पुत्रः शत्रुरपण्डितः (चा०)। १०. पुत्रहीनं गृहं शून्यम्। ११. पुत्रादिप भयं यत्र तत्र सौख्यं हि कीदृशम्। १२. पुत्रोदये माद्यति का न हर्षात्। १३. मातापितृभ्यां शतः सन्न यातु सुखमस्तृते (क०)। १४. शोककन्दः क कन्या हि, कानन्दः कायवान् सुतः (क०)। १५. सन्तृत्र एव कुलसञ्चिन कोऽपि दीपः। १६. सन्तितः पुण्यमाख्याति। १७. सन्तितः शुद्धवंश्या हि, परत्रेहं च शर्मणे (र०)।

(ग) स्त्रीचरित-निन्दा

१. अधरेष्वमृतं हि योषितां, हृदि हालाहलमेव केवलम्। २. अनुरागपरायत्ताः कुर्वते किं न योषितः (क०)। ३. अन्तिविषमया होता बहिश्चैव मनोरमाः (प०)। ४. अविनीता रिपुर्भार्या। ५. किंटनाः खल्ल स्त्रियः (कु०)। ६. कष्टा हि कुटिलश्वश्रूपरतन्त्र-वध्रूस्थितः (क०)। ७. किं किं करोति न निर्मालतां गता स्त्री। ८. किं न कुर्वन्ति योषितः (भ०)। ९. कुगेहिनीं प्राप्य गृहे कुतः सुखम्। १०. न स्त्री चिल्तचारित्रा निम्नोन्नतमवेक्षते (क०)। ११. नार्यः समाश्रितजनं हि कलङ्कयन्ति। १२. प्रत्ययः स्त्रीषु सुष्णाति विमर्शे विदुषामिष (क०)। १३. मद्ये मारैकसुहृदि प्रसक्ता स्त्री सती कुतः (क०)। १४. वज्न्यन्ते हेलयैवेह कुस्त्रीभिः सरलाशयाः (क०)। १५. वेस्यानां च कुतः स्नेहः। १६. संनिकृष्टे निकृष्टेऽपि कष्टं रज्यन्ति कुस्त्रियः (क०)।

(घ) स्त्रीधर्म आदि

१. इहामुत्र च नारीणां परमा हि गतिः पतिः (क०)। २. उपपन्ना हि दारेषु प्रभुता सर्वतोमुखी (शा०)। ३. कष्टं इन्त मृगीदृशां पतिगृहं प्रायेण कारागृहम्। ४. प्रमदाः पतिमार्गगा इति प्रतिपन्नं हि विचेतनैरिप (कु०)। ५. प्रियेषु सौभाग्यफला हि चारुता (कु०)। ६. भर्नुनाथा हि नार्थः (प्रतिमा०)। ७. भर्नुमार्गानुसरणं स्त्रीणां हि परमं व्रतम् (क०)।

(ङ) स्त्रीशील-प्रशंसा

१. अचिन्त्यं शीलगुप्तानां चिरतं कुल्योषिताम् (क॰)। २. असाध्यं सत्यसाध्वीनां किमस्ति हि जगत्त्रये (क॰)। ३. असारे खल्ल संसारे, सारं सारङ्गलोचना। ४. आपद्यपि सतीवृत्तं, कि मुञ्जन्ति कुलस्त्रियः (क॰)। ५. का नाम कुलजा हि स्त्री, भर्तृद्रीहं करिष्यति (क॰)। ६. कि नाम न सहन्ते हि, भर्तृभक्ताः कुलाङ्गनाः СС-О (कि हु) mbev कावक्किल्यां ection at Sarah (CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotti Gyaan Kosha

सत्यत्यो मूलकारणम् (कु०)। ९. तस्मात् सर्व परित्यज्य पतिमेकं भजेत् सती। १०. धिम् गृहं गृहिणीशून्यम्। ११. न गृहं गृहिमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते। १२. न पतिच्यति-रेकेण सुस्त्रीणामपरा गृतिः (क०)। १३. न भार्यायाः परं सुख्यम्। १४. नारीणां भूषणं पतिः। १५. नारीणां भूषणं शिलम्। १६. नास्ति भर्तुः समो बन्धः (वि०)। १७. नेष्यी भर्तृहितैषिण्यो गणयन्ति हि सुस्त्रियः (क०)। १८. पुत्रप्रयोजना दाराः। १९. पुरम्त्रीणां चित्तं वृसुमसुकुमारं हि भवति (उ०)। २०. पेशलं हि सतीमनः (क०)। २१. भर्तारं हि विना नान्यः सतीनामस्ति बान्धवः (क०)। २२. भवन्त्यव्यभिचारिण्यो भर्तृरिष्टे पतित्रताः (कु०)। २३. भार्या मूलं गृहस्थस्य। २४. भार्यासमं नास्ति शरीरतोषणम्। २५. भार्याः हीनं गृहस्थस्य शून्यभेव गृहं मतम्। २६. यत्र नार्यस्तु पृज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः (म०)। २७. या सौन्दर्यगुणान्विता पतिरता सा कामिनी कामिनी। २८. शुचिर्नारी पतित्रता। २९. सतीधमों हि सुस्त्रीणां चिन्त्यो न सुहृदादयः (क०)। ३०. स्निग्धमुग्धा हि सत्स्त्रियः (क०)। ३१. स्फुटमभिभूषयिति स्त्रियस्त्रपेव (शि०)। ३२. स्वसुखं नास्ति साध्वीनां, तासां भर्तृसुखं सुखम् (क०)।

(च) स्त्री-स्वभावादि-वर्णन

 अहो विनेन्द्रजालेन स्त्रीणां चेष्टा न विद्यते (क०)। २. आदावसत्यवचनं पश्चाजाता हि कुस्त्रियः (क०)। ३. उदारसन्वं वृण्ते, स्वयं हि श्रीरिवाङ्गना (क०)। ४. कान्ता रूपवती शत्रः । ५. को हि वित्तं रहस्यं वा, स्त्रीषु शक्नोति गृहितुम् (क०) । ६. क्षुम्यन्ति प्रसममहो विनापि हेतोलींलाभिः किमु सित कारणे रमण्यः (शि०)। ७. जातापत्या पति देष्टि । ८. तदेव दुःसहं स्त्रीणामिह प्रणयखण्डनम् (क०) । ९. धिक् कलत्रमपुत्रकम् । १०. नवाङ्गनानां नव एव पन्थाः । ११. न स्त्री स्वातन्त्र्यमईति (महा०)। १२. न स्नेहो न च दांक्षिण्यं, स्त्रीष्वहो चापलादते (क०)। १३. नहि नार्यो विनेर्घ्या । १४. नहिं वन्ध्याऽक्तुते दुःखं, यथा हि मृतपुत्रिणी । १५. निसर्गसिद्धो नारीणां, सपत्नीषु हि मत्सरः (क०) । १६. प्रत्युत्पन्नमति स्त्रीणम् (ज्ञा०) । १७. प्रायः श्वश्रूस्तुषयोर्न दरयते सौहदं लोके। १८. प्रायः स्त्रियो भवन्तीह निसर्गविषमाः शठाः (क॰)। १९. प्रायेण भ्मिपतयः प्रमदा लताश्च, यः पार्श्वतो भवति तं परिवेष्टयन्ति (प०)। २०. वत स्त्रीणां चञ्चलादिचत्तवृत्तयः (क०)। २१. युवतिजनः खलु नाप्यते-ऽनुरूपः (कि॰)। २२. स्त्रियश्चिर्त्त्रं पुरुषस्य भाग्यम्, देवो न जानाति कृतो गनुष्यः। २३. स्त्रियो नष्टा ह्यभर्तृकाः। २४. स्त्रीचित्तमहो विचित्रमिति (क०)। २५. स्त्रीणां प्रियालोकफलो हि वेषः (क॰)। २६. स्त्रीणां भावानुरक्तं हि, विरहःसहनं मनः (क॰)। २७. स्त्रीणामलीकमुग्धं हि, वचः को मन्यते मृषा (क०)। २८. स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं CC-ि समेरिक्विविष्येक्कि (मिर्फ)।lection at स्वीत्यां वस्तु S) मामित्व विद्वां ddl वासून विवास विकास (Kosha ३०. स्त्रीयुद्धिः प्रलयावहा (का० नी०)। ३१. स्त्रीभिः कस्य न खण्डितं भुवि मनः (भ०)। ३२. स्त्री विनश्यति रूपेण (शा० प०)। ३३. स्त्रीयु वाक्संयमः कुतः (क०)। ३४. स्त्राधीना दियता सुताविध।

(१६) कवि, काव्य, कवितां

१. कलासीमा काव्यम् । २. कवयः किं न पश्यन्ति । ३. काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छिति धीमताम् (हि॰) । ४. केषां नैषा कथय कविताकामिनी कौतुकाय । ५. पिपासितैः काव्यरसो न पीयते । ६. पिबामः शास्त्रीघानुत विविधकाव्यामृतरसान् । ७. सुकविता यद्यस्ति राज्येन किम् । ८. स्फुटता न पदैरपाकृता, न च न स्वीकृतमर्थगौरवम् । रचिता पृथगर्थता गिरां, न च सामर्थ्यमपोहितं कचित् (कि॰)।

(१७) विविध

(क) कलि

१. कलौ वेदान्तिनो भान्ति, फाल्गुने बालका इव। २. पश्यन्तु लोकाः कलि-कौतुकानि । ३. पश्यन्तु लोकाः कल्दिशेषकाणि । ४. साधुः सीदित दुर्जनः प्रभवित प्राप्ते कलौ दुर्युगे ।

(ख) शकुन

१. अन्तरापाति हि श्रेयः, कार्यसम्पत्तिस्चकम् (क०)। २. अव्यक्षिपो भविष्य-न्त्याः कार्यसिद्धेहिं लक्षणम् (२०)। ३. आवेदयन्ति हि प्रत्यासन्नमानन्दमप्रपातीनि शुभानि निमित्तानि (का०)। ४. आमुखापाति कल्याणं, कार्यसिद्धिं हि शसित (क०)। ५. भवन्त्युदयकाले हि सत्कल्याणपरम्पराः (क०)।

(ग) विविध सुभाषित

१. अधिकस्याधिकं फलम् । २. अनाश्रया न शोभन्ते पण्डिता वनिता लताः । ३. अपवाद एव मुलभो द्रष्टुर्गुणो दूरतः । ४. अपुत्रस्य ग्रहं शून्यम् । ५. अप्रकटीकृत-शक्तिः शक्तोऽपि जनस्तिरिक्तयां लभते । ६. अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः (प०) । ७. अभोगस्य हतं धनम् (प०) । ८. अर्धमात्रालाघवेन पुत्रोत्सवं मन्यन्ते वैयाकरणाः । ९. अल्पश्च कालो बह्वश्च विद्नाः । १०. अश्नेरमृतस्य चोभयोर्वशिन-श्चाम्बुधराश्च योनयः (कु०) । ११. अहो दुर्निवारता व्यसनोपनिपातानाम् (का०) । १२. आज्ञा गुरूणां द्यविचारणीया (र०) । १३. इन्द्रोऽपि लघुतां याति, स्वयं प्रख्यापितै-र्गुणैः (प०) । १४. कस्यचित् किमपि नो हरणीयं, मर्मवाक्यमपि नोचरणीयम् । १५. क्लेशः फलेन हि पुनर्नवतां विधत्ते । १६. क्षुधातुराणां न किचर्न पक्वम् । १७. घनाम्बुना

CC-Oरमिनाधिनाहिल्पविच्छिले, प्रान्तिक्लाकु व्यक्तिकात्राक्षेत्र प्राप्तिक्रिक्षेत्र प्राप्तिक्षेत्र प्रविक्तिक्षेत्र प्रविक्तिक्तिक्षेत्र प्रविक्तिक्षेत्र प्रविक्तिक्तिक्षेत्र प्रविक्तिक्षेत्र प्रविक्तिक्षेत्र प्रविक्तिक्षेत्र प्रविक्तिक्षेत्र

(चा०)। १९. जातौ जातौ नवाचाराः। २०. जामाता दशमो ग्रहः। २१. जीवो जीवस्य जीवनम् । २२. ज्येष्ठभ्राता पितुः समः । २३ दया मांसाद्यानः दुतः (प०) । २४. दिशस्यपायं हि सतामतिक्रमः (कि ०) । २५. दुर्लभः स गुरुलोके शिष्यचित्ताप-हारकः । २६. दुर्रुभः स्वजनाप्रयः । २७. देहस्नेहो हि दुस्त्यजः (क०) । २८. नकः स्वस्थानमासाद्य गजेन्द्रमपि कर्षति (प०)। २९. न नस्यति तमो नाम, कृतया दीपवा-र्तया । ३०. ननुतैल्लिपेकविन्दुना, सह दीपाचिरुपैति मेदिनीम् (र०) । ३१. न पाटपो-न्मूलनशक्ति रंहः, शिलोच्चये मूर्च्छति मास्तस्य (र०)। ३२. न प्रभातरलं ज्योतिस्द्ति वसुधातलात् (शा०) । ३३. न भूतो न भविष्यति । ३४. न रत्नमन्विष्यति मृग्यते हि तत् (कु॰) । ३५. नराणां नापितो धूर्तः (प॰) । ३६. न सुवर्णे ध्वनिस्ताहग्, याहक् कांस्ये प्रजायते । ३७. निह प्रफुल्लं सहकारमेत्य, वृक्षान्तरं कांक्षति पट्पदािकः (२०)। ३८. नहि सिंहो गजास्कन्दी भयात् गिरिगुहाश्रयः। ३९. नाकाले म्रियते जन्त-र्विद्धः शरशतैरपि (घ०)। ४०. नाल्पीयान् बहुसुकृतं हिनस्ति दोषः (कि०)।४१. निःसारस्य पदार्थस्य प्रायेणाडम्बरो महान् । ४२. निरस्तपादपे देशे एरण्डोऽपि द्रमायते (हि॰)। ४३. निर्वाणदीपे किमु तैलदानम्। ४४. नैकत्र सर्वो गुणसंनिपातः। ४५. पङ्को हि नमिस क्षिप्तः क्षेप्तः पति मूर्धनि (क०)। ४६. परोपदेशवेलायां शिष्टाः सर्वे भवन्ति वै । ४७. परोपदेशे पाण्डित्यं सर्वेषां सुकरं नृणाम् ।४८. प्रकृत्या ह्यमाणः श्रेयान् नालंकाररूयुतोपलः (कि०)। ४९. प्रत्यासन्नविपत्तिमृहमनसा प्रायो मतिः क्षीयते। ५०. फणाटोपो भयंकरः (प०) । ५१. वालानां रोदनं बलम् । ५२. भवत्यपाये परिमो-हिनी रुतिः (कि॰) ५३. भवन्ति भव्येषु हि पक्षपाताः (कि॰) । ५४. मनोरथानामगतिनै विद्यते (क्॰) । ५५. मुण्डे मुण्डे मतिभिन्ना । ५६. यत्तद्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम् । ५७. यदध्यासितमईद्भिसाद्ध तीय प्रचक्षते (कु०)। ५८. यदन्तं भक्षयेन्नित्यं जायते ताहशी मातः । ५९. यद्वा तद्वा भावष्यति । ६०. याचको याचकं दृष्ट्वा स्वानवत् गुर्गयते । ६१. यादशास्तन्तवः काम तादशो जायते पटः (क०) । ६२. योगस्ति जी-यदयो रिवास्तु । ६३. यो यद् वर्णात बीज हि, रूभते ताहरां फरूम् (क०) । ६४. रत्ने समागच्छतु काञ्चनेन । ६५. रतनाकरे युज्यत एव रत्नम् (कु०) । ६६. रिक्तपाणिर्न प्रक्षेत राजानं देवतां गुरुम् । ६७. लाभः परं तव मुखे खलु भस्मपातः । ६८. वासः प्रधानं खळु योग्यतायाः । ६९. वासोविहीनं विजहाति लक्ष्मीः । ७०. विना मलयमन्यत्र चन्दनं न प्ररोहति । ७१. विनाशकाले विपरीतबुद्धिः । ७२. विवक्षितं ह्यनुक्तमनुतापं जनयति (शा॰)। ७३. विपवृक्षोऽपि संवध्यं स्वयं छेत्तुमसाम्प्रतम् (कु॰)। ७४. शस्त्रा-घाता न तथा स्चीक्षतवेदना याद्यक् । ७५. शिष्यपापं गुरुस्तथा । ७६. शुभस्य शीव्रम्, अशुभस्य कालहरणम् । ७७ वयालको गृहनाशाय (चा०) । ७८. संपत्सम्पदं विपद् विपदमनुष नाती।त (का०)। ७९. सम्पूर्णकुम्भो न करोति शब्दम्। ८०, सागरं वर्षि वा कुत्र वा महानद्यवतर्रात (शा०)। ८१. मुखमुपदिश्यते परस्य (का०)। ८२.

र नभ्रष्टा न शोभन्त दन्ताः कशा नखा नराः (प०) । ८३ स्वदेशजातस्य नरस्य नूनं CC-O सुमा <mark>विकरिश Tripathi Colle</mark>ction at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhahta eGangotri Gyaan Kosha

(१३) पारिभाषिक-शब्दकोश

- स्चना (१) संस्कृत व्याकरण को ठीक ठीक समझने के लिए आवश्यक एवं अत्युपयोगी सभी पारिभाषिक शब्दों का यहाँ पर संग्रह किया गया है। विद्यार्थी इन शब्दों को बहुत सावधानी से स्मरण कर लें। (२) पारिभाषिक शब्दों के साथ उनके मूल-नियम पाणिनि के स्त्र आदि के रूप में दिए गए है। (३) स्त शब्दों का सभी शब्द अकारादि कम से दिए गए है।
- (१) अकर्मक अकर्मक वे धातुएँ होती है, जिनके साथ हमें नहीं आता । अकर्मक की साधारणतथा पहचान यह है कि जिनमें किम् (किसको, क्या) का प्रस्त नहीं उठता । इन अथोंवाली घातुएँ अकर्मक होती हैं। 'ल्जासत्तास्थितिजागरणं, वृद्धिक्षयभयजीवितमरणम् । शयनकीडारुचिदीप्त्यर्थं, धातुगणं तमकर्मकृमाहुः'। पल्ल्य-धिकरणव्यापारवाचकत्वं सकर्मकत्वम् । पल्ल्समानाधिकरणव्यापारवाचकत्वं सकर्मकत्वम् । इन कारणों से सकर्मकेधातु अकर्मक हो जाती हैं: —धातु का अर्थान्तर में प्रयोग, धात्वर्थं में कर्म का संग्रह, प्रसिद्धि तथा कर्म की अविवक्षा ।
- (२) अक्षर—(अक्षर न क्षरं विद्याद् , अश्नोतंर्वा सरोऽक्षरम्) अविनाशी और व्यापक होने के कारण स्वर और व्यंजन वणों को अक्षर कहते हैं।
- (३) अघोष—खय् प्रत्याहार अर्थात् वर्गा के प्रथम और द्वितीय अक्षर, जिह्वामूलीय द्रक, उपध्मानीय द्रप, विसर्ग और द्याप स ये अघोष वर्ण है।
 - (४) अच-स्वरों को अच् कहते हैं। वे हैं-अ से टेकर औ तक स्वर।
 - (५) अजन्त—(अच् + अन्त) खर अन्तवाले शब्द या धातु आदि।
- (६) अध्याहार (स्त्रे अश्रूयमाणत्वे सित अर्थप्रत्यायकत्वम्) स्त्र मे जा दाब्द या अर्थ नहा है और वह शब्द या अर्थ अर्थवशात् लिया जाता है तो उस अश को अध्याहार कहते हैं।
- (७) अनिट्—(न + इट्) जिन धातुओं में साधारणया बीच में 'इ' नहीं लगता। जैसे कृ, गम् आदि। इनका विशेष विवरण पृष्ठ १६८ पर दिया है। कृ कर्ता, कर्तुम् आदि।
- (८) अनुदात्त (नीचैरनुदात्तः, १।२।३०) जिस स्वर को ताल आदि के नीचे भाग से बोला जाता है, या जिस पर बल नहीं दिया जाता, उसे अनुदात्त कहते हैं। वेद में अक्षर के नीचे लकीर खींचकर अनुदात्त का संकेत किया जाता है। स्वरित के बाद अनुदात्त का चिह्न नहीं लगता। बाद में उदात्त होगा तो अनुदात्त रहेगा।
- (९) अनुनासिक—(मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः, १-१-८) जिन वणों का उचारण मुख और नासिका दोनों के मेल से होता है, उन्हें अनुनासिक कहते हैं। वर्गों के पंचमाक्षर ङ ज ण न म अनुनासिक ही होते हैं। अच् और य व ल अनुनासिक और अनुनासिक-रहित दोनों प्रकार के होते हैं।
- (१०) अनुबन्ध—प्रत्ययों आदि के प्रारम्भ और अन्त में कुछ स्वर या व्यंजन इसलिए जुड़े होते हैं कि उस प्रत्यय के होने पर गुण, वृद्धि, सप्रसारण, कोई CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विशेष स्वर उदात्तादि, या अन्य कोई विशेष कार्य हो । ऐसे सहेतुक वणों को अनुवन्ध कहते हैं । ये 'इत्' होते हैं अर्थात् इनका लोप हो जाता है । जैसे—क्तवतु में क् और उ। शतृ में श् और ऋ। अतः क्तवतु को कित् कहेंगे, शतृ को शित् या उगित्।

- (११) अनुवृत्ति—पाणिनि के स्त्रों में पहले के स्त्रों से कुछ या प्रा अंश अगले स्त्रों में आता है, इसे अनुवृत्ति कहते हैं। तभी अगले स्त्र का अर्थ प्रा होता है। विरोधी बात होने पर अनुवृत्ति नहीं होती। कुछ अधिकार-स्त्र होते हैं, उनकी पूरे प्रकरण में अनुवृत्ति होती है। जैसे—प्राग्दीव्यतोऽण् (४।१।८३), तस्यापस्यम् (४।१।९२)।
- (१२) अन्तरङ्ग-प्राथमिकता का कार्य। धातु और उपसर्ग का कार्य अन्तरङ्ग अर्थात् मुख्य होता है।

(१३) अन्तस्थ—(यरलवा अन्तस्थाः) य र ल व को अन्तस्थ कहते हैं।

- (१४) अन्वादेश—(किचित्कार्ये विधातुमुपात्तस्य कार्यान्तरं विधातुं पुनरुपा-दानमन्वादेशः) पूर्वोक्त व्यक्ति आदि के पुनः किसी काम के लिए उल्लेख करने को अन्वादेश कहते हैं। जैसे—अनेन व्याकरणमधीतम्, एनं छन्दोऽभ्यापय।
- (१५) अपवाद—विशेष नियम। यह उत्सर्ग (सामान्य) नियम का बाधक होता है।

(१६) अपृक्त—(अपृक्त एकाल्प्रत्ययः, १।२।४१) एक अल् (स्वर या व्यंजन) मात्र शेष प्रत्यय को अपृक्त कहते हैं। जैसे—सु का स्, ति का त्, सि का स्।

- (१७) अभ्यास—(पूर्वोऽभ्यासः, ६।१।४) लिट् आदि में धातु के जिस अंश को द्विल होता है, उसके प्रथम भाग को अभ्यास कहते हैं। जैसे—चकार में च, ददर्श में द।
- (१८) अलुक्—सप्-विभक्ति या सुप् का लोप न होना। अलुक्समास में पूर्व पद की सुप् विभक्तियों का लोप नहीं होता है। जैसे—आत्मनेपदम्, परस्मैपदम्, सरसिजम्।
- (१९) अल्पप्राण—(वर्गाणां प्रथमतृतीयपञ्चमा यरलवाश्चाल्पप्राणाः) वर्गों के प्रथम, तृतीय और पंचम अक्षर तथा यर ल व अल्पप्राण कहे जाते हैं। जैसे—कवर्ग में क ग ङ। च ज अ, ट ड ण, त द न, प व म, यर ल व।
- (२०) अवग्रह—(स्त्रेण विधीयमानकार्यस्य बोधकं चिह्नम्) सूत्र से किये गए कार्य के बोधक चिह्न को अवग्रह कहते हैं। ऽ = अ। ऽ यह संकेत अ हटा है, इसका बोधक है। पदों या अवयवों के विच्छेद को भी अवग्रह कहते हैं।
- (२१) अव्यय—(स्वरादिनिपातमन्ययम् , १।१।३७) स्वर् आदि शब्द तथा सभी निपात अव्यय होते हैं। अव्यय वे हैं, जिनके रूप में कभी परिवर्तन या अन्तर नहीं होता। जैसे-प्रपरा सम् आदि उपसर्ग और उच्चैः, नीचैः आदि।

 प्रत्येक पाद में कुछ सूत्र । सूत्रों के आगे निर्दिष्ट संख्याओं का क्रमशः यह भाव है— (१) अध्याय की संख्या, (२) पाद की संख्या, (३) सूत्र की संख्या । यथा—१।१।१, अध्याय १, पाद १ का पहला सूत्र ।

(२३) असिद्ध—(पूर्वत्रासिद्धम्, ८।२।१) किसी विशेष नियम की दृष्टि में किसी नियम या कार्य को न हुआ सा समझना। जैसे—सवा सात अध्यायों की दृष्टि में अन्तिम तीन पाद असिद्ध हैं और तीन पाद में भी पूर्व के प्रति पर नियम असिद्ध हैं।

(२४) आख्यात—धातु और क्रिया को आख्यात कहते हैं। 'नामाख्यातोप-सर्गनिपाताश्च'।

(२५) आगम—शब्द या धातु के बीच या अन्त में जो अक्षर या वर्ण और जुड़ जाते हैं, उन्हें आगम कहते हैं। जैसे—पयस्> पयांसि में न का बीच में आगम है।

(२६) आत्मनेपद्—(तङानावात्मनेपदम्, १।४।१००) तङ् (ते, एते, अन्ते आदि) शानच्, कानच्, ये आत्मनेपद होते हैं। जिन धातुओं के अन्त में ते एते अन्ते आदि हगते हैं, वे धातुएँ आत्मनेपदी कहाती हैं। जैसे — सेव् धातु। सेवते सेवेते०।

(२७) आदेश, एकादेश—िकसी वर्ण या प्रत्यय आदि के स्थान पर कुछ नए प्रत्यय आदि के होने को आदेश कहते हैं। जैसे-आदाय में क्ला को ल्यप् आदेश। पूर्व और पर दो के स्थान पर एक वर्ण होना एकादेश है। जैसे-रमेशः में आ + ई को ए गुण।

(२८) आमन्त्रित—(सामन्त्रितम्, २।३।४८) सबोधन को आमन्त्रित कहते

हैं। हे अग्ने !

(२९) आम्रेडित—(तस्य परमाम्रेडितम्, ८।१।२) द्विरुक्तिवाले स्थानीं पर उत्तरार्धं को आम्रेडित कहते हैं। जैसे—कान् + कान्, = कांस्कान् में बाद वाला कान्।

- (३०) आर्घधातुक (आर्धधातुकं दोपः, २।४।११४) तिङ् (ति तः अन्ति आदि और ते एते अन्ते आदि) और दित् (श् इत् वाले, शतृ आदि) से अतिरिक्त धातुओं से जुड़नेवाले प्रत्यय आर्धधातुक कहे जाते हैं। (लिट्च, २।४।११५, लिङा-शिषि, ३-४-११६) लिट् और आशीर्लिङ् के स्थान पर होनेवाले तिङ् भी आर्धधातुक होते हैं।
- (३१) इट्—(आर्धधातुकस्येड्वलादेः, ७।२।३५) इट्का इ शेष रहता है। यह धातु और प्रत्यय के बीच में होता है। वलादि आर्धधातुक को इट्(इ) होता है। जैसे—पिटिष्यति, पिटितुम्। इस इट्(इ) के आधारपर ही धातुएँ सेट्या अनिट्कही जाती हैं। जिन धातुओं में साधारणतया इट्(इ) होता है, उन्हें सेट्(स + इट्) अर्थात् 'इ'वाली धातुएँ कहते हैं। जिनमें इट्(इ) नहीं होता, उन्हें अनिट्(न + इट्) कहते हैं।
- (३२) इत्—(तस्य लोप:, १।३।९) जिसको इत् कहेंगे, उसका लोप हो जाएगा। अनुबन्धों को इत् कहते हैं। गुण आदि के लिए प्रत्ययों के आदि या अन्त में ये लगे होते हैं। बाद में ये हट जाते हैं। जैसे—शतृ में श् और ऋ। शतृ में श् हटा CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

है, अतः इसे शित् कहेंगे। जो अक्षर हटा होगा, उसके आधार पर प्रत्यय कित् (क् + इत्), पित् (प् + इत्) आदि कहे जाते हैं। इत् होने वाले अक्षर ये हैं—(१) हल्त्यम् (१।३।३) अन्तिम व्यंजन इत् होता है। (२) उपदेशेऽजनुनासिक इत् (१।३।२) उच्चा-रण में अनुनासिक संवेत वाला स्वर। (३) चुद्र (१।३।७) प्रत्यय के आदि के चवर्ग और टवर्ग। (४) लशकतिहते (१।३।८) तिहत प्रकरण को छोड़कर प्रत्यय के आदि के ल श और कवर्ग। (५) पः प्रत्ययस्य (१।३।६) प्रत्यय के आदि का प्। इत्यादि।

(३३) उणादि—(उणादयो वहुलम् , ३-३-१) धातुओं से उण् आदि प्रत्यय होते हैं । इस उण्प्रत्यय के आधार पर व्याकरण में इस प्रकरण को उणादि-प्रकरण

कहते हैं।

(३४) उत्सर्ग-साधारण नियमों को उत्सर्ग कहते हैं। विशेष की अपवाद।

(३५) उद्देश्य —(उच्चेरदात्तः, १।२।२९) जिस स्वर को तालु आदि के उच भाग से बोला जाता है या जिस स्वर पर वल दिया जाता है, उसे उदात्त कहते हैं।

- (३६) (क) उपपद-विभक्ति—किशी पद (सुबन्त, तिङन्त) को मानकर जो विभक्ति होती है, उसे उपपद-विभक्ति कहते हैं। जैसे—गुरवे नमः में नमः पद के कारण चतुर्थी है। (ख) कारक-विभक्ति—क्रिया को मानकर जो विभक्ति होती है, उसे कारक-विभक्ति कहते हैं। जैसे—पाट पटति में पटति क्रिया के आधार पर द्वितीया विभक्ति हैं।
- ्र (३७) उपधा—(अलोऽन्त्यात् पूर्व उपधा, १।१।६५) अन्तिम अल् (स्वर या व्यंजन) से पहले आने वाले वर्ण को उपधा कहते हैं । जैते— लिख् धातु में उपधा में इ हैं ।
- (३८) उपध्मानीय—(कुष्वोः क्र्यं च, ८।३।३७) प फ से पहलें अर्धिवसर्ग के तुल्य व्यक्ति को उपध्मानीय कहते हैं। जैसे—नृ पाहि। यह विसर्ग के स्थान पर होता है।
- (३९) उपसर्ग—(उपसर्गाः क्रियायोगे, १।४।५९) धातु या क्रिया से पहले लगने वाले प्रपण आदि को उपसर्ग कहते हैं। ये २२ हैं—प्रपण अप सम् अनु अव निस् निर्हुस् हुर् वि आङ् नि अधि अपि अति सु उत् अभि प्रति परि उप।
- (४०) उभय पद—परसमैपद (ति, तः आदि) और आत्मनेपद (ते, एते, आदि) इन दोनो पढों के चिह्नां का रूगना। जिन धातुओं में ये चिह्नां रूगते हैं, उन्हें उभयपदी कहते हैं।
 - (৪१) ऊष्य-(शपसहा ऊष्माणः) श प स ह को ऊष्म वर्ण कहते हैं।
- (४२) ओष्ट्य—(उपप्रमानीयानामोष्टी) उ. ऊ. उ३, पवर्ग और उपध्मा-नीय इनका उच्चारण स्थान ओष्ठ है, अतः ये ओष्ट्य वर्ण कहलाते हैं।
- (४३) कण्ड्य (अकुहविसर्जनीयानां कण्डः) अ, आ, अ३, कवर्ग, ह और विसर्ग (ঃ) इनका उच्चारण-स्थान कण्ड है, अतः ये कण्ड्य वर्ण कहलाते हैं।
- (४४) कर्र प्रधचनीय—(कर्मप्रवचनीयाः, १।४।८३) अनु, उप, प्रति परि cc-o Brandev ក្នុន្នារង្វាស់ មិត្តក៏នុក្សក្នុងក្នុងស្រឹស្តិ៍ olgពុក្ខនៃ ស្វានាក់ព្រិត្តក្រុងក្រុង kosha

- (४५) कारक प्रथमा, द्वितीया आदि को कारक या विभक्ति कहते हैं। षष्ठी को कारक नहीं माना जाता है। शास्त्रीय दृष्टि से कारक ६ हैं। संबोधन प्रथमा के अन्तर्भत है।
- (४६) कृत्—(कर्तीर कृत्, ३-४-६७) धातु से होने वाले क क्तवतु शतृ शानच् आदि को कृत् प्रत्यय कहते हैं। क्त और खल् को छोड़कर शेष कृत् प्रत्यय कर्तृवाच्य में होते हैं। घञ् प्रत्यय कर्ता से भिन्न कारक तथा भाव अर्थ में होता है।

(४७) कृत्य—(तयोरेव कृत्यक्त.खलर्थाः, ३।४।७०) धातु से होने वाले तन्य,

अनीय, य आदि को कृत्य प्रत्यय कहते हैं। ये भाव और कर्म वाच्य में होते हैं।

(४८) कृद्न्त—जिन शब्दों के अन्त में कृत् प्रत्यय लगे होते हैं, उन्हें कृदन्त कहते हैं।

(४९) क्रिया—धातुवाच्य और धातुरूपों को क्रिया कहते हैं। जैसे-पचनम्,

पठनम् , पठति ।

(५०) गण-धातुओं को १० भागः में बाँटा गया है, उन्हें गण कहते हैं।

जैसे—स्वादिगण, अदादिगण, जुहोत्यादिगण आदि ।

(५१) गणपाठ—कतिपय शब्दों से एक ही प्रत्यय लगता है। ऐसे शब्दों को एक गण (समह) में रखा गया है। ऐसे शब्द-संग्रह को गणपाठ कहते हैं। जैसे—नद्यादिश्यो हक (४।२।९७)।

(५२) गति-(गतिश्च, १।४।६०) उपसर्गों को गति कहते हैं। कुछ अन्य

शब्द भी गति हैं।

('२३) गुण-(अदेङ् गुणः, १।१।२) अ, ए, ओ को गुण कहते हैं। गुण कहने पर ऋ को अर, इ ई को ए, उ ऊ को ओ हो जाता है।

(५४) गुरु—(संयोगे गुरु, १।४।११; दीर्घ च, १।४।१२) संयुक्त वर्ण बाद में

हो तो हस्य वर्ण गुरु होता है। सभी दीर्घ अक्षर गुरु होते हैं।

(५५) घ-(तरतमपौ घः, १।१।२२) तरप् और तमप् प्रत्ययों को घ कहते हैं।

(५६) घि—(शेषो ध्यसिख, १।४।७) हस्व इ और उ अन्त वाले शब्द घि क्हलाते हैं, स्त्रीलिंग शब्दों और सिख शब्द को छोड़कर ।

(५९) घु - (दाधा ध्वदाप, १।१।२०) दा और धा धातु को तथा दा और

धा रूपवाली अन्य धातुआं (दाण, धेट आदि) को घु कहते हैं, दाप को छोड़कर।

(५८) घोप — अव् (स्वर) और हश् प्रत्याहार अर्थात् वर्ग के तृतीय चतुर्थ

पंचम वर्ण और हय वरल भोप है।

(५९) जिह्नामुळीय—(कुप्तोः क्रं पौच, ८।३।३७) क ख से पहले क्रिंचिसर्ग के तुल्य ध्विन को जिह्नामुळीय कहते हैं। क करोति। यह विसर्ग के स्थान पर होता है।

(६०) टि—(अचोन्त्यादि टि, १।१।६४) शब्द के अन्तिम और से जहाँ स्वर मिले, वह स्वर और आगे यदि व्यंजन हो तो वह व्यंजन

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(६१) तपर—(तपरस्तत्कालस्य, १।१।७०) किसी स्वर के बाद त् लगा देने से उसी स्वर का ग्रहण होगा, अन्य दीर्घ आदि का नहीं। जैसे—अत् का अर्थ है हस्व अ। आत् दीर्घ आ। (६२) तिद्धित—शब्दों से पुत्र आदि अर्थों में होने वाले प्रत्ययों को तिद्धित प्रत्यय कहते हैं। (६३) तालब्य—(इच्चयशानां तालु) इ ई इ३, चवर्ग, य, श का उच्चारण-स्थान तालु है, अतः इन्हें तालक्ष्य वर्ण कहते हैं।

(६४) तिङ्—धातु के बाद लगने वाले ति तः आदि और ते एते आदि की तिङ् कहते हैं। (६५) तिङन्त—ित तः आदि से युक्त पटति आदि धातुरूपों

को तिङन्त पद कहते हैं।

(६६) दन्त्य — (लृतुल्सानां दन्ताः) ल, तवर्ग, ल, स का उचारण-स्थान दन्त है, अतः इन्ह्रें दन्त्य वर्ण कहते हैं।

(६७) दीर्घ — आ ई ऊ ऋ को दीर्घ स्वर कहते हैं। दीर्घ कहने पर हस्व के स्थान पर ये होते हैं। (६८) द्वित्व — किसी वर्ण या वर्णसमूह को दो बार पढ़ने को दित्व कहते हैं। पपाठ में पट् को दित्व है।

(६९) द्विरुक्ति—किसी शब्दरूप या धातुरूप को दो बार पढ़ना। स्मारं स्मारं, स्मृत्वा स्मृत्वा। (५०) धातु—भू पठ् कु आदि क्रियावाचक शब्दों को धातु कहते हैं।

- (७१) घातुपाठ- सू आदि धातुओं को १० गणों के अनुसार संग्रह किया गया है। इस धातु-संग्रह को धातुपाठ कहा जाता है। इसमें धातुओं के साथ उनके अर्थ आदि भी दिए गए हैं।
- (७२) नदी—(१) (यू स्त्र्याख्यो नदी, १।४।३) दीर्घ ईकारान्त ऊकारान्त स्त्रीलिंग शब्द नदी कहलाते हैं। (२) (ङिति हस्वश्च, १।४।६) इकारान्त उकारान्त स्त्रीलिंग शब्द भी ङित् विभक्तियों में विकल्प से नदी कहलाते हैं।
- (७३) नपुंसकिंग—यह तीन लिगों में से एक लिंग है। फल, वारि, मधु आदि नपुं॰ शब्द हैं। (७४) नाद्—अच् (स्वर) और हश् प्रत्याहार (वर्ग के तृतीय चतुर्थ पञ्चम वर्ण ह य व र ल) गद वर्ण हैं। (७५) नाम—प्रातिपदिक या संज्ञा शब्दों को नाम कहते हैं। 'नामाख्यातोपसर्गनिपाताश्च' निरुक्त।
- (७६) निपात—(चादयोऽसच्चे, १।४।५७) च वा ह आदि को निपात कहते हैं। (स्वरादिनिपातमन्ययम्) सभी निपात अन्यय होते हैं, अतः वे सदा एकरूप रहते हैं।
 - (७७) निष्ठा-(क्त कवत् निष्ठा, १।१।२६) क्त और क्त वृत प्रत्ययों को निष्ठा कहते हैं।
- (७८) पद —(१) (मुप्तिङन्तं पदम, १।४।१४) सुप् (ः औ अः आदि) से युक्त शब्दों और तिङ् (ति तः अन्ति आदि) से युक्त धातुरूपों को पद कहते हैं। जैसे— रामः, पटित । (२) (स्वादिष्वसर्वनामस्थाने, १।४।१७) सु (स्) आदि प्रत्यय बाद में हों तो शब्द को पद कहते हैं, ये प्रत्यय बाद में होंगे तो नहीं—सु आदि प्रथम पाँच सुप्, यकारादि और स्वर आदि वाले प्रत्यय।

CC-O. Dr. Ralman महिर्वानित्वाचिताम क्षेड्वमें (उडाठडर जेवाकिसम् अवस्तम् वर्गन्तवम् हरेवहैं n Kosha

(८०) पररूप—(एङ पररूपम्, ६।१।९४) सन्धि-नियमों में दो स्वरों को मिलाने पर अगले स्वर के तुल्य रूप रह जाने को पररूप कहते हैं। जैसे —प्र + एजते = प्रेजते।

(८१) परस्मैपद्—(लः परस्मैपदम्, १।४।९९) लकारों के स्थान पर होने वाले ति, तः, अन्ति आदि प्रत्ययों को परस्मैपद कहते हैं। ये जिनके अन्त में लगते हैं, उन्हें परस्मैपदी धातु कहते हैं। ते, एते, अन्ते आदि को आत्मनेपद कहते हैं। शतृ प्रत्यय परस्मैपद में होता है। (८२) परिभाषा— विधिशास्त्र की प्रवृत्ति और निवृत्ति के नियामक शास्त्र को परिभाषा कहते हैं।

(८३) पुंळिंग-यह तीन लिंगों में से एक है। जैसे-रामः, हरिः।

(८४) पूर्व रूप—(एङ: पदान्तादित, ६।१।१०९) सन्धि-नियमों में दो स्वरीं को मिलाने पर पहले स्वर के तुल्य रूप रह जाने को पूर्व रूप कहते हैं। जैसे-हरे+अव=हरेऽव।

(८५) (क) प्रकृति—शब्द या धातु जिससे कोई प्रत्यय होता है, उसे प्रकृति कहते हैं। इसका दूसरा पारिभाषिक नाम 'अंग' है। जैसे—रामः में राम प्रकृति है और पठित में पट्। (ख) प्रकृति-विकृति—शब्द या धातु के मृल्रूप के स्थान पर जो नया आदेश होता है, उसे प्रकृति-विकृति या विकार-भाव कहते हैं। जैसे—उवाच में प्रकृति बू धातु है, उसको विकृति विकार या आदेश वच् हुआ है। यह पूरे शब्द या धातु को भी होता है और कहीं पर उसके एक अंश को।

(८६) प्रकृतिभाव—(प्लुतप्रयह्मा अचि नित्यम्, ६।१।१२५) प्रकृतिभाव का अर्थ है कि वहाँ पर कोई सन्धि नहीं होती। प्लुत और प्रयह्म वाले स्थानों पर प्रकृति-

भाव होता है।

(८७) प्रगृह्य—(१) (ईद्देद्द्विचनं प्रगृह्यम्, १।१।११) प्रगृह्य वाले स्थान पर कोई सन्धि नहीं होती। ई, ऊ, ए अन्त वाले द्विचनान्त रूप प्रगृह्य होते हैं, अतः-सन्धि नहीं होगी। जैसे—हरी एती। (२) (अदसो मात्, १।१।१२) अदस् के म् के बाद ई, ऊ होंगे तो कोई सन्धि नहीं होगी। जैसे—अमी ईशाः। अम् आसाते।

(८८) प्रत्यय—(५त्ययः, ३।१।१) शब्दों और धातुओं के बाद लगने वाले सुप्, तिङ्, कृत्, तिद्धित आदि को प्रत्यय कहते हैं। कुछ प्रत्यय पहले (बहुच् आदि) और बीच में (अकच् आदि) भी लगते हैं। बहुपटुः। उच्चकैः। प्रत्ययों में विशेष

कार्य के लिए अनुबन्ध भी लगे होते हैं।

(८९) प्रत्याहार — (आदिरन्त्येन सहेता, १।१।७१) प्रत्याहार का अर्थ है संक्षेप में कथन। अच्, अल्, सुप्, तिङ् आदि प्रत्याहार हैं। अच्, हल् आदि के लिए पहला अक्षर अइउण् आदि १४ स्त्रों में हुँ हुँ और अन्तिम अक्षर उन स्त्रों के अन्तिम अक्षर में। जैसे — अच् = अइउण् के अ से लेकर ऐऔच् के च् तक, पृरे स्वर। सुप् = सु से सुप् के प् तक। तिङ् = तिप् से महिङ् तक।

(९०) प्रयत्न—वणों के उच्चारण में जो प्रयत्न (मनोयोगपूर्वक प्राण का व्यापार) किया जाता है, उसे प्रयत्न कहते हैं। यह दो प्रकार का है—आभ्यत्तर और

बाह्य । आभ्यन्तर चार प्रकार का है—सृष्ट, ईपत्-सृष्ट, विवृत, संवृत । बाह्य ११ प्रकार CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha का है-विवार, संवार, श्वास, नाद, घोष, अघोष आदि । (देखो सिद्धान्तकौमुदी संज्ञाप्रकरण)

- (९१) प्रातिपदिक—(१) (अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्, १।२।४५) साथक शब्द को प्रातिपदिक कहते हैं। यही विभक्ति (सु आदि) लगने पर पद बनता है। (२) (कृत्तद्वितसमासाश्च, १।२।४६) कृत् और तद्वित प्रत्ययान्त तथा समास-युक्त शब्द भी प्रातिपदिक होते हैं।
- (९२) घरणार्थक दूसरे से काम कराना । जैसे लिखना से लिखनाना । इस अर्थ में णिच् होता है। (९३) प्छुत हस्व स्वर से तिगुनी मात्रा । अक्षर के आगे ३ लिखकर इसका संकेत करते हैं। जैसे देवदत्त ३ ।

(९४) वहिरङ्ग-गौण नियम। धातु और उपसर्ग का कार्य अन्तरङ्ग होता है, द्योप वहिरङ्ग। (९५) वहुलम्-विकल्प या ऐन्छिक नियम को बहुलम् कहते हैं।

- (९६) भ (यचि सम्, १।४।१८) यकारादि और स्वर-आदि वाला प्रत्यय वाद में हो तो उससे पहने के शब्द को भ कहते हैं, सु औ आदि प्रथम पाँच सुप्वाद में हो तो नहीं। (९७) भाष्य—पतंजिल रचित महाभाष्य को संक्षेप में भाष्य कहते हैं।
- (९८) मत्वर्धक प्रत्यय-मतुप् प्रत्यय 'वाला' या 'युक्त' अर्थ में होता है। इस अर्थ में हानेवाले सभी प्रत्ययों को मत्वर्थक प्रत्यय कहते हैं। जैसे-धनवान्, धनी।
- (९९) महाप्राण—(दितीयचतुर्थी शलश्च महाप्राणाः) वर्गो के दितीय और चतुर्थ अक्षर तथा श ष स ह महाप्राण वर्ण कहलाते हैं। जैसे—ख ६, छ झ, ठ ढ।
- (१००) मात्रा स्वरों के परिमाण को मात्रा कहते हैं। हस्व या लघु अक्षर की एक मात्रा मानी जाती है, दीर्घ या गुरु की दो, प्लुत की तीन।
- (१०१) मुनित्रय—(यथोत्तर मुनीना प्रामाण्यम्) पाणिनि, कात्यायन, पतंजिल इन तीनों को मुनित्रय कहते हैं। सतभेद होने पर बाद वाले मुनि का कथन प्रामाणिक माना जाता है।
- (१०२) सूर्धन्य—(ऋदुरषाणां मूर्धा) ऋ ऋ ऋ३, टवर्ग, र, ष का उच्चारण-स्थान मूर्धा है, अतः इन्हें मुर्धन्य कहते हैं ।
- (१०३) योगरूढ—योगरूढ उन शब्दों की कहते हैं, जिनमें यौगिक अर्थात् प्रकृति-प्रत्यय का अर्थ निकलता है, परन्तु वे किसी विशेष अर्थ में रूढ या प्रचलित हो गए हैं। जैसे—पंकज का अर्थ है-कीचड़ में होने वाला। पर यह कमल अर्थ में रूढ है।
- (१०४) योगविभाग पाणिनि के सूत्रों को कात्यायन आदि ने आवश्य-कतानुसार विभक्त करके एक सूत्र (योग) के दो या तीन सूत्र बनाए हैं, इस सूत्र-विभाजनं को योगविभाग कहते हैं।
- (१०५) योगिक —योगिक उन शब्दों को कहते हैं, जिनमें प्रकृति और प्रत्यय का अर्थ निकलता है । जैसे —पाचकः-पच् + अकः, पकाने वाला ।
- (१०६) रूढ —रूढ उन राब्दों को कहते हैं, जिनमें प्रकृति और प्रत्यय का अथ नहीं निकलता हैं । जैसे—मणि, न पुर आदि । CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(१०७) लघु — (हस्तं लघु, १।४।११) हस्य अइ उ ऋ को लघु वर्ण कहते हैं।

(१०८) लिंग-संस्कृत में तीन लिंग हैं-पुंलिंग, स्त्रीलिंग, नपुंसकलिंग।

(१०२) लुक्—(प्रत्यवस्य छक्र्इछुपः, १।१।६१) प्रत्यय के लोप का ही दूसरा नाम छक् है। (११०) लुप् (रुलु)—(प्रत्यवस्य छक्र्इछुपः) प्रत्यय के लोप को छप् और रुख भी कहते हैं। (१११) लोप—(अदर्शनं लोपः, १।१।६०) प्रत्यय आदि के हट जाने को लोप कहते हैं।

(११२) वचन — संस्कृत में तीन वचन होते हैं — एकवचन, द्विवचन, बहु-वचन। एक के लिए एकवचन, दो के लिए द्विवचन, तीन या अधिक के लिए बहुवचन।

(११३) वर्ग — व्यंजनों के दुछ विभागों को वर्ग कहते हैं। जैसे-कवर्ग — क से कतक, चवर्ग — च से अ तक, टवर्ग — ट से ण, तवर्ग — त से न, पवर्ग — प से म तक।

(१९४) वर्ण — अक्षरों को वर्ण भी कहते हैं। स्वर और व्यंजन ये सभी वर्ण हैं।

(११५) वाक्य-सार्थक पदों के समृह को वाक्य कहते हैं।

(११६) बाच्य—संस्कृत में ३ वाच्य (अर्थ) होते हैं—१. कर्तृवाच्य, २. कर्म-वाच्य, ३. भाववाच्य । सकर्मक भातुओं के कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य में रूप चलते हैं तथा अकर्मक धातुओं के कर्तृवाच्य और भाववाच्य में । कर्तृवाच्य में कर्ता मुख्य होता है, कर्मवाच्य में कर्म और भाववाच्य में क्रिया । सकर्मक से भी भाव में घज् होता है ।

(१९७) वार्तिक—कात्यायन और पतंजिल के द्वारा बनाए गए नियमों को वार्तिक कहते हैं।(११८) विकल्प-ऐच्छिक (लगना या न लगना) नियम को विकल्प कहते हैं।

(११९) विभक्ति—(विभक्तिश्च, १।४।१०४) मु औ आदि कारक चिह्नों को विभक्ति या कारक कहते हैं। संबोधन-सहित ८ विभक्तियाँ हैं—प्रथमा, द्वितीया आदि।

(१२०) विभाषा—(न वेति विभाषा, १।१।४४) किसी नियम के विकल्प से लगने को विभाषा कहते हैं। इसी अर्थ में वा, अन्यतरस्याम्, वहुलम् शब्द आते हैं।

(१२१) विवार—वगों के प्रथम दितीय अक्षर (क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ), विसर्ग, द्राप स, ये विवार वर्ण हैं। इनके उचारण में मुख-द्वार खुला रहता है।

(१२२) चिवृत—(विवृतमूष्मणां स्वराणां च) स्वरां और ऊष्मां (श प स ह)

का आभ्यन्तर प्रयत्न विवृत है। इनके उचारण में मुख द्वार खुला रहता है।

(१२३) (वरोषण—विशेष्य (व्यक्ति या वस्तु आदि) की विशेषता बताने वाले गुण या द्रव्य के वोधक शब्दों को विशेषण कहते हैं। विशेषण को भेदक भी कहते हैं।

(१२४) विशेष्य — जिस (व्यक्ति या वस्तु आदि) की विशेषता बताई जाती है, उसे विशेष्य कहते हैं। विशेष्य को भेद्य भी कहते हैं।

(१२५) वीप्सा-दिरुक्ति अर्थात् दो वार पढ़ने को वीप्सा कहते हैं । जैसे-

(१२६) वृत्ति—(१) सूत्रों की व्याख्या को वृत्ति कहते हैं। (२) (परार्थाभिधानं वृत्तिः) कृत्, तद्धित, समास, एकशेष, सन् आदि से युक्त धातुरूपों को वृत्ति कहते हैं।

(१२७) वृद्धि—(वृद्धिरादैच्, १।१।१) आ, ऐ, औ को वृद्धि कहते हैं। वृद्धि कहने पर इ ई को ऐ होगा, उ ऊ को औ, ऋ ऋ को आर, ए को ऐ और ओ को औ।

(१२८) ठयंजन क से लेकर ह तक के वणों को व्यंजन या हल् कहते हैं।

(१२९) व्यधिकरण—एक से अधिक आधार या शब्दादि में होनेवाले कार्य को व्यधिकरण कहते हैं। वि = विभिन्न, अधिकरण = आधार। एक आधारवाला समानाधिकरण होता है, अनेक आधार वाला व्यधिकरण।

(१३०) शब्द - सार्थक वर्ण या वर्णसमूह को शब्द या प्रातिपदिक कहते हैं।

(१३१) शिक्षा—वर्णों के उचारण आदि की शिक्षा देनेवाले प्रन्थों को शिक्षा कहते हैं। जैसे—पाणिनीयशिक्षा आदि प्रन्थ। वैदिक शिक्षा और व्याकरण के प्रन्थों को प्रातिशाख्य कहते हैं। (१३२) इंद्रु—प्रत्यय के लोप का ही एक नाम इंद्र है। जुहोत्यादि० में इंद्र होने पर गुण होता है।

(१३३) श्वासं वर्गों के प्रथम द्वितीय अक्षर (क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ), विसर्ग, श ष स, ये श्वास वर्ण हैं। इनके उच्चारण में श्वास विना रगड़ खाए बाहर आता है। (१३४) षट्—(ष्णान्ताः षट्, १।१।२४) ष् और न् अन्त-वाली संख्याओं को षट् कहते हैं।

(१३५) संज्ञा-व्यक्ति या वस्तु आदि के नाम को संज्ञा-शब्द कहते हैं।

(१३६) संयोग—(हलोऽनन्तराः संयोगः, १।१।७) व्यंजनी के बीच में स्वर। वर्ण न हों तो उन्हें संयुक्त अक्षर कहते हैं। जैसे—सम्बद्ध में म् और ब, द् और घ।

(१३७) संवार—स्वर और हश् प्रत्याहार (वर्ग के तृतीय चतुर्थ पंचम वर्ण, ह य व र ल) संवार वर्ण हैं। इनके उचारण में मुख-द्वार कुछ संकुचित (सिकुड़ा) रहता है।

(१३८) संवृत हस्य अ बोलचाल में संवृत (मुख-द्वार संकुचित) होता है।

(१३९) संहिता-(पर:संनिकर्ष:संहिता, १।४।१०९) वर्णों की अत्यन्त समीपता को संहिता कहते हैं। संहिता की अवस्था में सभी सन्धि-नियम लगते हैं। एक पद में, धातु और उपसर्ग में, समासयुक्त पद में संहिता अवश्य होगी। वाक्य में संहिता ऐच्छिक है।

(१४०) सकर्मक — जिन धातुओं के साथ कर्म आता है, उन्हें सकर्मक धातु कहते हैं। (१४१) सत् — (तौ सत्, ३।२।१२७) शतृ और शानच् प्रत्ययों को सत् कहते हैं। (१४२) सन् — (धातोः कर्मणः ०, ३।१।७) इच्छा अर्थ में धातु से सन् प्रत्यय होता है। कृ > चिकीर्षति।

(१४३) सन्धि—स्वरों, व्यंजनों या विसर्ग के परस्पर मिलाने को सन्धि कहते हैं।

CC-O. Dr. Ram<mark>(१४४)) सम्मानाधिकर ज्^{वावां} (१६</mark>०५) <u>Digitized</u> By Siddhanta eGangotri Gyaap Kosha

(१४५) समास — समास का अर्थ है संक्षेप । दो या अधिक शब्दों को मिलाने या जोड़ने को समास कहते हैं । समास होने पर शब्दों के बीच की विभक्ति हट जाती है । समास युक्त शब्द को समस्त पद कहते हैं । समस्त शब्द एक शब्द होता है । समास के ६ भेद हैं — १. अव्ययीभाव, २. तत्पुरुप, ३. कर्मधारय, ४. द्विगु, ५. बहुवीहि, ६. द्वन्द्व ।

(१४६) समासान्त—समासयुक्त शब्द के अन्त में होनेवाले कार्यों को समा-सान्त कहते हैं। (१४७) समाहार—समाहार का अर्थ है समूह। समाहार

द्वनद्व में प्रायः नपुं० एकवचन होता है। कभी स्त्रीलिंग भी होता है।

(१४८) सम्प्रसारण—(इग्यणः सम्प्रसारणम् ,१।१।४५)य् को इ, व् को उ, र् को ऋ, ल् को ल हो जाने को सम्प्रसारण कहते हैं। सम्प्रसारण कहने पर ये कार्य होंगे।

(१४९) सर्वनाम—(सर्वादीनि सर्वनामानि, १।१।२७) अर्व, यत्, तत्, किम्, युष्मद्, अस्मद् आदि शब्दों को सर्वनाम कहते हैं। इनका सम्बोधन नहीं होता।

- (१५०) सर्वनामस्थान—(मुडनपुंसकस्य, १।१।४३) प्रथमा और द्वितीया विभक्ति के पहले पाँच सुप् (कारकचिह्न, स् ओ अ:, अम् औ) को सर्वनामस्थान कहते हैं, नपुं० में नहीं।
- (१५१) सवर्ण—(तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्, १।१।९) जिन वर्णों का स्थान और आभ्यन्तर प्रयत्न मिलता है, उन्हें सवर्ण कहते हैं। जैसे—इ चवर्ग य रा तालव्य और स्पृष्ट हैं, अतः सवर्ण हैं।
- (१५२) सार्वधातुक—(तिङ् शिल्सार्वधातुकम्, ३।४।११३) धातु के बाद जुड़ने वाले तिङ् (ति तः आदि) और शित् प्रत्यय (श् इत् वाले, शतृ आदि) सार्व-धातुक कहलाते हैं। शेष आर्धधातुक होते हैं।
- (१५३) सुप्—(स्वौजसः 'सुप्, ४।१।२) शब्दों के अन्त में लगने वाले प्रथमा से सप्तमी तक के कारक-चिह्न (स् औ अः आदि) सुप् कहलाते हैं। (१५४) सुवन्त— सुप् (स् औ आदि) जिन शब्दों के अन्त में होते हैं, उन्हें सुवन्त कहते हैं। रामः।
- (१५५) सूत्र—शब्दों के संस्कारक नियमों को सूत्र कहते हैं। इनके बाद निर्दिष्ट संख्याओं का कमशः भाव यह है—१. अध्याय-संख्या, २. पाद-संख्या, ३. सूत्र-संख्या।
- (१५६) सेट्—जिन धातुओं में बीच में प्रत्यय से पहले इ लगता है, उन्हें सेट् (इट् वाली) कहते हैं। जैसे—पट्, लिख्। (१५७) स्त्रीप्रत्यय—स्त्रीलिंग के वोधक टाप् (आ), डीप् (ई) आदि स्त्रीप्रत्यय कहलाते हैं। (१५८) स्त्रीलिंग—यह तीन लिंगों में से एक लिंग है। स्त्रीत्व का बोध कराता है। जैसे—स्त्री, नदी।
- (१५९) स्थान—(अकुहविसर्जनीयानां कण्ठः) उच्चारण-स्थान कण्ठ तालु आदि का संक्षिप्त नाम स्थान है। जैसे—अ कवर्ग ह और विसर्ग का स्थान कण्ठ है।
- (१६०) स्पर्श—(कादयो मावसानाः स्पर्शाः) क से टेकर म तक (कवर्ग से पवर्ग तक) के वर्णों को स्पर्श वर्ण कहते हैं। इनके उच्चारण में जीभ कण्ठ तालु आदि को स्पर्श करती है।

(१६१) स्वर—(अचः स्वराः) अचों (अ आ, इ ई, उ ऊ, ऋ ऋ, ल, ए ऐ,

ओ ओ) को स्वर कहते हैं।

(१६२) स्वरित—(समाहारः स्वरितः, १।२।३१) उदात्त और अनुदात्त के मध्यगत स्थान से उत्पन्न स्वरं को स्वरित कहते हैं। यह मध्यगत स्थान से बोला जाता है। (उदात्तादनुदात्तस्य स्वरितः, ८।४।६६) वेद में उदात्त स्वरं के बाद बाला अनुदात्त स्वरित हो जाता है। साधारण नियम यह है कि उदात्त से पहले अनुदात्त अवस्य रहेगा, अन्यत्र उदात्त के बाद अनुदात्त स्वरित होगा।

(१६३) हल — क से ह तक के वर्णों को हल कहते हैं। इन्हें व्यंजन भी हते हैं। (१६४) हलन्त — हल् अर्थात् व्यंजन जिनके अन्त में होते हैं, ऐसे

शब्दों या धातुओं, आदि को हलन्त कहते हैं।

(१६५) हस्व—(हस्वं लघु, १।४।१०) अइ उऋ ल को हस्व कहते हैं।

(१४) हिन्दी-संस्कृत-शब्दकोष आवश्यक-निर्देश

(१) इस पुस्तक में प्रयुक्त शब्दों का ही इस शब्दकोष में संग्रह है।

- (२) जो शब्द रामः, रमा, गृहम् के तुल्य हैं, उनके रूप राम आदि के तुल्य चलावें। से पुं०, आ से स्त्री०, अम् से नपुं० समझें। शेष शब्दों के आगे पुं० आदि का निर्देश किया गया है। उनके रूप 'शब्दरूप-संग्रह' में दिए तत्सदृश शब्दों के तुल्य चलावें। संक्षेप के लिए ये संकेत अपनाए गए हैं:—पुं० = पुंलिंग, स्त्री० = स्त्रीलिंग, न० = नपुंसक लिंग।
- (३) धातुओं के आगे संकेत किया गया है कि वे किस गण की हैं और उनका किस पद में प्रयोग होता है। धातुओं के रूप चलाने के लिए 'धातुरूप-संग्रह' में दी गयी प्रत्येक गण की विशेषताओं को देखें तथा उस गण की विशिष्ट धातु को देखें। तदनुसार रूप चलावें। 'धातुरूप कोष' में सभी धातुओं के १० लकारों के रूप दिए हैं। धातुएँ अकारादिकम ने दी गयी हैं। उसी प्रकार रूप चलावें। संक्षेप के लिए ये संकेत अपनाए गए हैं:—१ = भ्वादिगण। २ = अदादिगण। ३ = जुहोत्यादिगण। ४ = दिवादिगण। ५ = स्वादिगण। ६ = तुदादिगण। ७ = हधादिगण। ८ = तनादिगण। ९ = क्यादिगण। १० = उस्पेयद।
- (४) अव्ययों के रूप नहीं चलते हैं। उनमें कोई परिवर्तन नहीं होता। अ॰ = अव्यय।
- (५) विदोपणों के रूप तीनों लिंगों में चलते हैं। जो विदोष्य का लिंग होगा वही विदोपण का लिंग होगा। वि० = विदोषण।
- (६) जहाँ एक शब्द के लिए एक से अधिक शब्द दिए हैं, वहाँ कोई-सा एक CC-छान्द्र स्क्रिक्टेंv Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अ

अंगीठी-हसन्ती (स्री०)

अंगूठी-अङ्गुलीयकम्

अंगूठी, नामांकित—मुद्रिका

अंगूर-द्राक्षा, मृद्वीका

अंजीर-अञ्जीरम्

अखरोट-अक्षोटम्

अग्नि-कृशानुः (पुं०), जातवेदस् (पुं०)

अचार-सन्धितम्

अच्छा लगना—हच् (१ आ०), स्वद्

(१ आ०)

अच्छा है "न कि न्वरं "न (अ०)

अटारी-अट्टः

अण्डर-वीयर (जांघिया) —अधीरकम्

अतिथि-प्राघुणः, अनिथिः, अभ्यागतः

अथिति-सत्कर्ता — आतिथेयः

अद्रक-आर्द्रकम्

अद्ल-बदल-विनिमयः

अधिकार होना—प्र+भू (१ प०)

अधीन-आयत्तः (वि०)

अध्यापक-अध्यापकः, उपाध्यायः

अनर्थ-अब्रह्मण्यम्

अनार-दाडिमम्

अनुभव करना—अनु+भू (१ प०)

अनुसन्धान करना—अनु + सं + धा (३ उ०)

अन्दर अन्तः (अ०), अन्तरे (अ०)

अन्न-अन्नम्

अन्न, खेत में —शस्यम्

अपनाना—स्वी + कृ (८ ७०)

अपमान करना—अव + शा (९ उ०)

अप्राप्ति-अनुपलब्धः (स्त्री०)

अफवाह-लोकापवादः, वार्ता

अभिनय करना-अभि+नी (१ उ०)

अभ्रक-अभ्रकम्

अमचूर-आम्रचूर्णम्

अमरूद-आम्रलम्, द्ववीजम्, अमृत-

फलम्

अमावट-अाम्रातकम्

अमावस्या-दर्शः, अमावास्या

अमृत-पीयूषम्, सुधा

अरहर-आदकी (स्त्री०)

अर्गला-अर्गलम्

अलग होता-वि + युज् (४ आ०)

अलमारी-काष्टमञ्जूषा

अवश्य ननु, नूनम्, न न (अ०)

असमर्थ-अक्षमः (वि०)

असेम्बली हॉल-आस्थानम्

आ

आँख-चक्षुष् (त०), नेत्रम्, लोचनम्

आँगन-अजिरम्, अङ्गनम्, प्राङ्गणम्

ऑत—अन्त्रम्

आँधी-प्रवातः

आवड़ा-आम्रातकम्

आवला-आमलकी (स्त्री॰)

ऑस्—अश्रु (न०), अस्नम्

आक-अर्कः

आकाश — व्योमन् (न०), वियत् (न०)

आग — हुतवहः, कृशानुः (पुं०), वहिः

आगन्तुक-आगन्तुः (पुं०), आगन्तुकः

आगे-अये (अ०), ततः (अ०)

आग्रह—निर्वन्धः

आजकल-अद्यत्वे (अ०)

आज्ञा शासनम् , नियोगः, आदेशः

आज्ञा देना-अनु + शा (९ उ०)

आटा—चूर्णम्

आटे का हलुआ-यवागूः (स्रो ०)

आड़ —आर्द्रानुः (पुं०)

आइत-अभिकरणम्

आइती-अभिकर्त् (पुं०)

आदर पाना—आ+६ (६ आ०)

आधी रात-निशीयः

आना -- आगम् (१ प०), अभ्यागम् (१ प०),

आ+या (२ प०)

आ पड़ना-आ+पत् (१ प०)

आपत्तिप्रस्त आपन्नः (वि०)

आबन्स-तमालः

आभूषण-आभरणम् , आभूषणम्

आम का वृक्ष-रसालः, सहकारः, आत्रः

आम का फल-आम्रम्

आम, कलमी-राजाम्रम् आमदनी आयः, आयमध्ये (सप्तमी) आम रास्ता-जनमार्गः, जनपथः आयरन (लोहा)—अयम् (न०) आयात पर चुंगी - आयातशुल्कम् आयु अायुष् (न०), वयस् (न०) आराम कुर्सी सुखासन्दिका आरी-करपत्रम् आलस्य करना-तन्द्रय (णिच्) आॡ—आलुः (पुं०) आलू की टिकिया-पकालुः (पुं०) आल् बुखारा - आलुकम् आशंका करना आ + शङ्क् (१ आ०) आशा करना — आ + शंस् (१ आ०) इकट्टा करना सं + चि (५ उ०), अर्ज (१० उ०) इच्छुक-स्पृह्यालुः (वि०), इच्छुकः इत्र-गन्धतैलम् इंक पेन्सिल, डॉट पेन-मित्रिलिका इन्कम टेक्स-आयकरः इन्द्र-शतकतुः (पुं०), मघवन् (पुं०), वृत्रहन् (पुं०) इन्द्र-धनुष - इन्द्रायुधम् , इन्द्रधनुः (न.) हन्द्राणी-पौलोमी (स्त्री०), शची (स्त्री०) इन्धन इन्धनम् इन्फ्लुएन्ज़ा, 'फ्लु-शीतज्वर्ः इमरती—अमृती (स्त्री०) इमली-तिन्तिडीकम् इम्पोर्ट-आयातः इसलिए—अतः, अतएव, ततः (अ०)

इलायची-एला ईंट-इष्टका इंट, पक्की-पक्बेष्टका उगलना—उद्+गु (६ प०) उगला हुआ-उद्दान्तम् (वि०)

उचित-अनुचित-सदसत् (न०)

उग्र—तीक्णम्

उचित है—स्थाने (अ०) उठना - उत्था (१ प०), उचर् (१ प०), उत्+नम् (१ प०) उठाना - उन्नी (उद् + नी, १ उ०) उड़द्—माषः उड़ना—उत्पत् (१ प०), उद्गम् (१ प०) उतरना—अव + तृ (१ प०) उतार - अवरोहः उत्कंठित उत्कः, उत्कण्ठितः उत्तर, दिशा—उदीचो (स्री०) उत्तर की ओर—उदक् (उद्+अञ्च) (yo) उत्तरायण-उत्तरायणम् उत्तीर्ण होना—उत्तृ (उद्+तृ, १ प०) उत्थान-पतन -पातोत्पातः उत्पन्न होना-सं+भू (१ प०) उधार—ऋणम्, ऋणरूपेण (तृतीया) उधार खाते—नाम्न (नामन् , स०) उपजाऊ-उर्वरा उपभोग करना—उप+मुज् (७ आ०) उपयोग-विनियोगः, उपयोगः उपवास करना उप नवस् (१ प०) उपेक्षा करना उपेक्ष् (उप + ईक्ष् १ आ०) उबटन उइर्तनम् उबालना—क्वथं (१ प०) उल्लंघन करना उचर् (१ आ०), लङ्घ् (१० उ०), अति +वृत (१ आ०) उल्लू-कौशिकः, उल्कः उस्तरा—धुरम् ऊँचा-प्रांशुः (वि०) ऊँट अमेलकः, उष्ट्रः **ऊखल**—उल्खलम् ऊनी-राङ्गवम्

ऊपर फेंकना-उत्+क्षिप् (६ उ०) **ऊसर**—ऊषरः

एक एक करके-एकैकशः (अ०)

एक प्रकार से-एकधा (अ०) एक बात-एकवाक्यम् एक राय वाले—एकमतिः (स्त्री०) एक वेष-एकपरिधानम् एकान्त में - रहिस (रहस् , स०) एक्सपोर्ट-निर्यातः एजुकेशन सेकेटरी-शिक्षासचिवः एजेण्ट -अभिकर्ता (-कर्नृ, पुं०) एजेन्सी-अभिकरणम् एटम बम-परमाण्वस्त्रम् एडिशनल डाइरेक्टर-अतिरिक्त-

एरंड--एरण्डः

शिक्षासंचालकः

ओ

ओढ़नी-प्रच्छदपटः ओवरकोट- बृहतिका ओम् उद्गोधः, प्रणवः, ओंकारः ओले-करकाः

कंगन कङ्गणम् कंघी-प्रसाधनी (स्त्री०) कंठा कण्ठाभरणम् कंडाल-वारिधः (पुं०) कंघा-स्कन्धः कंधे की हड्डी-जन्न (न०) ककड़ी-कर्भटिका, कर्भटी (स्त्री॰) कक्षा का साथी-सतोध्यीः कचालू-पकालुः (पुं०) कचौड़ी-पिष्टिका कञ्चुआ कच्छपः कटहरू का पेड़-पनसः कटहल का फल-पनसम् कटा हुआ लूनम् (वि०) कटोरा-कटोरम् कटोरी-कटोरा कठफोड़ा-दार्वाघातः कड़ा, सोने आदि का-कटकः

कबाह कटाइः

कदम्ब-नीपः कद्दू - कृष्माण्डः कनफूल-कर्णपूरः कनेर-कणिकारः कप-चषकः कबाबी-मांसाशिन् (पुं०) कबूतर-पारावतः, कपोतः कठज-अजीर्णः कमर-श्रोणिः (स्री०), कटिः (स्री०) कमरख-कर्मरक्षम् कमरा-कक्षः कमल, नीला-इन्दीवरम्, कुवलयम् कमल, लाल-कोकनदम् कमल, रवेत-कुमुदम्, पुण्डरीकम्, कहारम् कमीशन-शुल्कम् कमीशन एजेण्ट-शुल्काजीवः कम्बल-कम्बलः, कम्बलम् करधन—मेखला करना-वि + धा (३ उ०), चर् (१ प०), अनु + ष्टा (१ प०) करील-करीलः करेला-कारवेलः करोंदा-करमर्दकः कर्जा-ऋणम् कर्जा देने वाला-उत्तमर्णः कर्जा लेने वाला-अधमणीः कलई, पुताई की-सुधा कलफ करना-मण्डा + कृ (८ उ०) कलम-कलमः कलमी आम-राजाम्रम् कलश -कलशः कलाई-मणिवन्धः कलाई से कनी अंगुली तक-करमः कलाकन्द कलाकन्दः कली-कलिका कल्याण का इच्छुक कल्याणाभिनिवे-शिन् (वि०) कवच-वर्मन् (न०) CC-O Si Ramuev Tripani Collection at Sarai(CSDS) Bignized By Sidonanta eGangotri Gyaan Kosha कसक्ट कांस्यक्टः करबा-नगरी (स्त्री०) कहना-अभि+धा (३ उ०), भाष् (१ आ०), उद्+गृ (६ प०), उद् +ईर (१० **उ०**) कहाँ - क, कुत्र (अ०) काँच-काचः काँच का गिलास काचकंसः काँपना - कम्प् (१ आ०), वेष् (१ आ०) काँसा-कांस्यम् कागज-कागदः कागज की रीम कागदरीमकः काजल-कज्जलम् काजू-काजवम् काटना-कृत् (६ प०), छिद् (७ उ०), लू (९ उ०) कान-शोत्रम् , श्रवणम्, कर्णः कान की बाली-कुण्डलम् कानखजूरा—कर्णजलौका कापी-संचिका काफल-श्रीपणिका कॉफी-कफव्नी (स्त्री०) काम-कर्मन् (न०), कार्यम् काम आना-उप+युज् (४ आ०) कामदेव-पुष्पधन्वन् (पुं०), मनसिजः कार्ट्रन-उपहासचित्रम् कार्तिकेय-सेनानीः (पुं०) कार्पारेशन-निगमः कालेज-महाविद्यालयः कितने-कित (वि०) किनारा-वेला किरण-मयूखः, गभितः (पुं०), दीधितिः (स्त्री०) किवाड़-कपाटम् किवाइ के पीछे का डंडा-अर्गलम् किशमिश-शुष्कद्राक्षा किसान-कृपीवलः, कीनादाः, कृपकः

कुरिया-कुटी (स्त्री०), कुटीरः कुतिया-सरमा, शुनी (स्त्री०) कुत्ता—इवन् (पुं०), कौलेयकः, सारमेयः कुराल-खनित्रम् कुन्द-कुन्दम् कुप्पी-कृतः (स्त्री०) कुबड़ा-कुब्जः कुबेर-कुवेरः, मनुष्यधर्मन् (पुं०) कुमु : की लता - कुमुदिनी (स्त्री०) कुम्हार-कुलालः, कुम्भकारः कुर्ता-कञ्चुकः कुर्सी-आसन्दिका कुलपरम्परा-कुलक्रमम् कुलफी-कुलपी (स्री०) कुली-भारवाहः कुलीन-अभिजनः, कुलीनः कृटना-अवहननम्, ताडनम् कूड़ा-अवकरः कृदना-कुद्, कृद् (१ आ०) कृपाण-कौक्षेयकः केकड़ा—कुठीरः केतली-कन्दुः (पुं०, स्त्री०) केबिनेट-मन्त्रिपरिषद् (स्त्री०) केन्सर-विद्रधिः (पुं०), विपव्रणम् केला-वदलीपलम् केवडा-केतकी (स्रो०) केंची-कर्तरी (स्नी०) के-वमथः (पुं०) कोंपल-किसलयम् कोट-प्रावारः कोठरी-लवुकक्षः कोतवाल-कोटपालः कोतवाली-कोटपालिका कोमल स्वर-मन्द्रस्वरः कोयल-परभूतः, कोकिलः कोल्ह् - रसयत्रम् कोहनी-कफोणिः (स्त्री०) कौवा-ध्वाङ्क्षः, वायसः, काकः क्या लाभ-किम्, को लाभः, कि प्रयोजनम्

CC-O के Randev Tripathi Collection at Sarai(CSDS) मुस्तितार्रिक प्रशिक्त विक्रिक्त विक्रिक्त विक्रिक्त प्रयोजनम् कुँदरु—कुन्दरः (पुं॰) न्या लाभ—किम्, को लाभः, किं प्रयोजनम्

कीचड़-पङ्गः, कर्मः

क्योंकि यतो हि, खलु (अ०) क्रीडा करना क्रोड् (१ प०), रम् (१ आ०)

क्रीम-शरः

क्रोध करना - कुध् (४ प०), कुप्

(8 do)

क्रोधी-अमर्षणः

क्लर्क-करणिकः, लिपिकारः

क्षत्रिय-क्षत्रियः, द्विजातिः, द्विजन्मन् (d.o)

क्षमा करना-मृप् (१० उ०), क्षम् (१ आ०, ४ प०)

खंजन-खब्जनः

खजूर - खर्जूरम्

खङ्ग — खड्गः, निस्त्रिशः

खपड़ा-खर्परः

खपड़ेल का - खर्परावृतम् (वि०)

ख्रस्बा-स्तम्भः

खरबूजा-खर्वुजम्

खरीद-क्रयः

खरीदना-पण् (१ आ०), क्री (९ उ०)

खर्च करना-विनियोगः, व्ययः

खिलहान-खलम्

खम्ता पूरी-राष्कुरी (स्री०)

खाँसी-कासः

खाजा-मधुशीर्पः

खाट—खट्वा

खाद - खाद्यम्

खान-खिनः (स्त्री०)

खाना-भक्ष (१० उ०), खाद्

(१ प०), भुज् (७ आ०)

खाया हुआ-जग्धम्, मुक्तम्

खिचड़ी-कृशरः

खिड्की-गवाक्षः, वातायनम्

खिन्न होना-सद् (१ प०)

खिरनी-क्षीरिका

खींचना-कृष् (१ प०)

खीर-पायसम्

खुमानी — धुमानी (स्त्री०)

खूँटी-नागदन्तकः

खून-रुधिरम्, असुज् (न०)

खेत-क्षेत्रम्

खेती-कृषिः (स्री०)

खेती के औजार - कृषियन्त्रम्

खेल का मैदान-क्रीडाक्षेत्रम्

खेर-खदिरः

खोजना-गवेष् (१० उ०)

खोदना-टङ्क (१० ७०), खन् (१ ७०)

खोवा-किलाटः

ग

गंडासा-तोमरः

गगरा-गर्गरः

गगरी-गर्गरी (स्री०)

गजक—गजकः

गञ्जा—सल्वाटः

गहरिया-अजाजीवः

गदा-गदा

गदा-तूलमंस्तरः

गधा—खरः, गर्दभः

गन्धक-गन्धकः

गम वृट-अनुपदीना

गरजना-स्तनितम्, गर्जनम्

गर्न-प्रीवा, कण्ठः

गर्मी (सूजाक) - उपदंशः

गला-कण्ठः, ग्रीवा

गली-वीधिका

गवेपणा करना—गर्दे '१० उ०)

गाँव-गामः

गाजर-गृअनम्

गाय-गो (स्त्री॰), धेनुः (स्त्री॰)

गाल-कपोलः

गाहक-माहकः

गिद्ध-गृधः

गिनना गण् (१० ४०)

गिना हुआ-संख्यातम् (वि०)

गिरना-पत् (१ प०), निपत् (१ प०).

भ्रंश् (१ आ०)

CC-O. Dr. Ramue र प्राकृतिकार विश्व है। CC-O. Dr. Ramue र Ramue र प्राकृतिकार विश्व है। CC-O. Dr. Ramue र Ram

गिलास-वंसः, काचवंसः गिलोय-अमृतवल्लरी (स्री०) गीदड्—गोमायुः (पुं०) गुझिया-संयावः गुणगान करना-वृत् (१० उ०) गुप्त-निभृतम् (वि०), गुप्तम् गुप्ती (कटारी) - व.रवालिका गुफा-गहरम्, गुहा गुलदस्ता स्तवकः, पुष्पगुच्छः गुलाब—स्थलपद्मम् गुस्सा करना - क्रुथ् (४ प०), कुप् (४ प०) गूगल-गुग्गुलः , गूलर-उदुम्बरम् गेंद-कन्द्रकः, गेन्द्रकम् गेंदा-गन्धपुष्पम् गेलरी-वीथिका

गोमी—गोजिहा गोछी— गोलिका, गुलिका गोह—गोधा ग्रीष्म ऋतु—निदाधः, ग्रीष्मर्तुः (पुं०) ग्लेशियर—हिमसरित् (स्री०), हिमापगा

गेहुँ-गोधूमः

गोवर-गोमयम्

घंटा (समय) - होरा

घ

घटना (होना)—घट् (१ आ०)
घटना (कम होना)—अप +चि (५ उ०)
घटिया—अनु (अ०),उप (अ०)
घड़ा—घटः, कुम्मः
घड़ी—घटिका
घर—सदनम्, गृहम्, भवनम्
घरेल्र फर्नीचर—गृहोपरकरः
घाटी—अद्रिद्रोणी (स्त्री०)
घायल—आहतः (वि०)
घी—आज्यम्, सर्पिष् (न०)
युँघर—किंकिणी (स्त्रा०)
घुघनी (आल्र-मटर)—कुल्माषः
घटना—जानुः (प् ०, न०)

घुड्सवार-सादिन् (पुं॰), अश्वा-

रोहिन (पु ०) CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS) Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

धूँघट काढ़ना—अवगुण्ठय (णिच्)
घूमना—भ्रम् (४ प०), चर् (१ प०),
संचर् (१ प०)
घेरा—वृतिः (स्री०)
घेवर (मिटाई)—घृतपृरः
घोंसला—कुलायः
घोड़ा—अश्वः, सप्तिः (पुं०), रथ्यः,
वाजिन् (पुं०), हयः
घोषणा करना—धुष् (१० उ०)

चकवा चक्रवाकः चकोतरा (फल)—मधुकर्भटी (स्त्री०), मधुजम्बीरम् चक्कर खाना-परि + वृत् (१ आ) चचेरा भाई-पितृब्यपुत्रः चटकनी-कीलः चटनी-अवलेहः चट्टान-शिला चढाव-आरोहः चतुःशाला—चतुःशालम् चतुर-विदग्यः (वि०), दक्षः चना-चणकः चन्द्रमा—सुधांशुः (पुं०), विधुः (पुं०), सोमः चपत-चपेटः चपरासी—लेखहारकः, प्रेष्यः चप्पल-पादुका, पादुः (स्त्री०) चब्तरा—स्थण्डिलम्, चत्वरम् चबूतरा, घर-से बाहर का-अलिन्दः चमकना—भास् (१ आ०), द्यत् (१ आ०), दिव् (४ प०) चमचम (मिठाई) - चमनम् चमवा—दर्वी (स्रो०) चमार-चर्मकारः चमेली—मालती (स्त्री॰) चम्पा-चम्पकः चस्मच-चमसः चरना-चर् (१ प०)

चर्बी, हड़ी की-मज्जा चलना—चल् (१ प०), प्र+वृत् (१ आ०), प्र+स्था (१ आ०) चलाना संचाउय (णिच्)

चाँदनी भीमुदी (स्त्री०), ज्योत्स्ना चॉक, लिखने की -कठिनी (स्री॰)

चाकु छुरिका, लवित्रम्

चाचा-पितृब्यः

चाची-पितृब्या

चाट-आवदंशः चातक-चातकः

चादर-प्रच्छदः

चान्सलर--कुलपतिः (पुं०)

चापल्यी--रनेहभणितम्

चावक-सोत्त्रम्

चाय-चायम्

चारों ओर मुड़ने वाली कुर्सी-पर्पः

चारों वर्ण-चातुर्वर्ण्यम्

चावल-न्नीहिः (प्ं०) चावल, भूसी-रहित-तण्डुलः

चाहना—ईह् (१ आ०), वाञ्छ

(१ प०), काङ्क्ष् (१ प०)

चिड़िया-पत्रिन् (पुं ०), चटका

चित्त-चेतस् (न०), चित्तम्, स्वान्तम्

चित्रकार-चित्रकारः

चिमटा-संदंशः

चिरचिटा (ओषधि) —अपामार्गः

चिरौंजी-प्रियालम्

चिलमची हस्तथावनी (स्त्री॰), पतद्महा

चिहन अङ्गः, लक्ष्मन् (न०)

चीड़ (बृक्ष)-भद्रदारुः (पु ०), सरलः

चीनी-सिता

चीफ मिनिरटर - मुख्यमन्त्रिन् (पुं॰)

चीरना-छिद् (७ उ०)

-चील-चिल्लः

चुक्की शुल्कः, शुल्कशाला

चुक्की का अध्यक्ष-शौलिकः

चुगना-चि (५ उ०)

चुनना—चि (५ उ०), अव+चि (५ उ०)

चुन्नी (ओइनी)-प्रच्छदपटः

चुन्नी (रत्न)—माणिक्यम्

चुप (चुप्पी)—जोषम् (अ०)

चुराना-मुप् (९ प०), चुर् (१० उ०)

चूँकि-ननु (अ०), यतोहि (अ०)

चूड़ी-काचवलयम्

चूल्हा—चुिहः (स्रो०), चुहो (स्रो०)

चेचक-शीतला

चेष्टा करना-चेन्ट् (१ आ०)

चोंच-चन्तुः (स्रो०), चन्त्रः (स्री०)

चोट क्षतम्

चोट मारना—तड् (१० उ०)

चोटी-शिखा, सानुः (पुं०, न०), शृङ्गम्

चोर-तस्करः, चौरः, स्तेनः, पाटचरः

चौक-चतुष्पथः, शृङ्गाटकम्

चौक्ता-प्रत्युत्पन्नमतिः (वि०)

ाैमंजिला चतुर्भूमिकः

चौराहा-चतुष्पधः, शृङ्गाटकम्

छजा-वलिभः (स्त्री॰), वलभी (स्त्री॰)

छत-छदिः (स्री०)

छाता (छत्र) — आतपत्रम्

छाती-वक्षम् (न०), उरम् (न०)

छात्र-छात्रः, अध्येत् (पुं०),

विद्याधिन् (पुं ०)

छ।त्रा-अध्येत्री (स्त्री॰), छात्रा

छानना सावय (णिच्)

छिपकली-गृहगोधिका

छिप जाना-तिरो+भू (१ प०)

छिपना-ली (४ आ०), नि+ली

(४ आ०), अन्तर्+धा (३ उ०)

छीलना-शो (४ प०), त्वक्ष (१ ७०)

छीला हुआ-र३ष्टम (वि०)

छुट्टी-विसृष्टिः (स्वी०), अवकाशः

द्धहारा-धुधाहरम्

छेद करना-छिद्र (१० ५०)

छेनी-वृश्चनः

CC-ए कि निकास Collection at Sarai(CSD अपेक हे अनुस्ति के अनुस्ति

छोड़ना-त्यज् (१ प०), मुच् (६ उ०), हा (३ प०), अस् (४ प०), अप+ अस् (४ प०), उज्झ (६ प०) छोड़ा हुआ-प्रत्याख्यातः, परित्यक्तः (वि०) जंगली चावल-इयामाकः (साँवा) जंघा-ऊरुः (पुं॰) जंजीर-शृङ्खला जंव।ई-जामातृ (पुं०) जड्-मूलम् जड़ से-मूलतः , जन्म लेना-प्रादुर्+भू (१ प०) जबतक "तबतक - यावत् "तावत् (अ०) जरा-तावत् (अ०) जर्मन सिल्वर-चन्द्रलौहम् जल-तोयम्, अम्बु (न०), वारि (न०), नीरम् जलकण-शीकरः जलतरंग (बाजा) - जलतरङ्गः जलना—ज्वल् (१ प०), इन्ध् (७ आ०) **जलपान**—जलपानम् जल-सेनापति—नौसेनाध्यक्षः जलाना-दह (१ प०) जलूस-जनयात्रा, जनौवः जलेबी-कुण्डली (स्री०) जवाकुसुम (फूल)—जवाकुसुमम्, जवापुष्पम् जस्त-यशदम् जहाज, पानी का-पोतः जहाज (वि) - न्योमयानम्, विमानम् जागना-उप (१०) जाद्गर-मायाकारः, ऐन्द्रजालिकः, मायाविन् () जानना-- श (९ उ०), अव + गम् (१ प०), अधि + गम् (१ प०) जाननेवाला-अभिज्ञः जाना-गम् (१ प०), इ (२ प०), या (२ प०)

जाल-वागुरा, जालम् जिगर-यकृत् जितेन्द्रिय-रान्तः जिद्-निर्वन्धः जिल्ड्-प्रावरणम् जीजा (बहनोई) — आयुत्तः, भगिनीपतिः जीतना—जि (१ प०), वि + जि (१ आ०) जीभ-रसना, जिह्ना जीरा-जीरकः जीविका-वृत्तिः (स्त्री०), जीविका जुकाम-प्रतिद्यायः जुती हुई भूमि—सीता जुलाहा-तन्तुवायः जुवारी-चृतकारः जूड़े की जाली—वेणीजालम् जूता (बूट) - उपानह् (स्त्री०) जुता सीने की सूई-चर्मप्रभेदिका जूही (फूल) — यूथिका जेब काटना-ग्रन्थ + भिद् (७ ७०) जेल-कारा, कारागारम्, वन्दिगृहम् जैसा '' वैसा — यथा ' तथा (अ०) जोड़ना-सं +योजय (णिच्) जोतना कृष् (१ प०, ६ उ०) जौ-यवः ज्ञात-अवगतम् ज्योंही "त्योंही - यावत् "तावत् (अ०) ज्योति-ज्योतिष् (न०), रोचिष् (न०) ज्वार-यवनालः झ झगडा-कलहः झगड़ालू - कलहप्रियः, कलहकामः झरना-प्रपातः झाड़ी-कुञ्जः, निकुञ्जः झाड़ __मार्जनी (स्त्री०) झील-सरसी (स्त्री॰) झील, बड़ी-हरः ञ्चकना नम् (१ प०), अवनम् , प्रणम् उ.ामुन — जम्बुः (स्त्री॰), जम्बुः (स्त्री॰) -O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDE) Digitized By Siddhahla eGangotri Gyaan Kosha जार, काँच का — याचिवटी (स्त्री॰) झोंपड़ी—उटजः, पर्णशाला, कुटीरः

ट टकसाल—टङ्गरालः टकसाल का अध्यक्ष-रङ्गरालाध्यक्षः टखना (पैर की हड्डी)-गुल्फः टमाटर-रक्ताङ्गः टब (पानी का) - द्रोणिः (स्री०), द्रोणी (स्त्री०) टाइप करना—टङ्क् (१० ७०) टाइप-राइटर-टक्कनयन्त्रम् टाइफाइड-संनिपातज्वरः टाइम-टेबुल-समय-सारणी (स्री॰) टॉफी-गुल्यः टिण्डा-टिण्डिशः टिकुली (वेंदी) - लला डाभरणम् टिडडी-शलभः टीयर गैस-धूमास्त्रम्, अश्रुधूमः टी (चाय) - चायम् टी॰ बी॰(तपैदिक)-राजयध्मन् (पुं॰), राजयक्षमः टीका (संगलार्थ) — ललाटिका टीन-त्रपु (न०) टीन की चदुद्र-त्रपुफलकम् टी पॉट- चायपात्रम् टी पार्टी (चाय-पानी) —सपीतिः (स्त्री॰)

दूटा हुआ-भुग्नम् (वि०) दूथ पाउडर—दन्तचूर्णम्

दृथपेस्ट दन्तिपष्टकम् टेनिस का खेल-प्रक्षिप्तकन्दुककीडा

टेलर (दर्जी)—सौचिकः

टेलर-चॉक-सौचिकवर्तिका

टैंक (हौज) — आहावः

टेक्स-करः

टोस्ट-भृष्टापूपः

ट्रेक्टर-खनियन्त्रम्

ठगना-वन्न् (१० आ०), अभि +सं +धा (३ उ०) परमाथॅन, ठीक (सत्य)-परमार्थतः,

तत्त्वतः (अ०)

ठुकराना—वि+हन् (२ प०) ठोकना (कील आदि) -कील (१ प०)

डंठल-वृन्तम् उँसना—इंश् (१ प०)

डंडी मारना-कृटमानं + क्र (८ उ०)

डबल रोटी—अभ्यूषः

उस्टर-मार्जकः

हाँटना-भत्स् (१० आ०)

डाइनिंग टेबुल-भोजनफलकम्

डाइनिंग रूम-भोजनगृहन्

डाइरेक्टर (एजुकेशन) - शिक्षामंचालकः

डाएबिटीज़-मधुमेहः, मधुप्रमेहः

डाक गाड़ी-द्राक्यानम्

डाकृ-पाटचरः लुण्टाकः, परिपन्थिन् (पुं०)

डाक्टर-भिषग्वरः

डालना-नि+क्षिप् (६ उ०), पातय (णिच्) डिनर पार्टी-सहभोजः, सग्धः (स्त्री०)

डिप्टी डाइरेक्टर (शिक्षा)-उपशिक्षा-

संचालकः

द्वबना---मस्ज् (६ प०)

डेस्क-लेखनपीठम्

ड्राइंग रूम उपवेशगृहम्

द्धाईक्लीनर-निणेजकः

ढकना-सं + वृ (५ उ०)

ढका हुआ—प्रच्छन्नः (वि०)

ढाक-पलाशः

ढिंढोरा—डिण्डिमः

ढीठ--धृष्टः

हुँढ़ना-अन्विष् (अनु + इष् ४ प०),

गवेष (१० उ०)

ढेला-लोष्टम्

ढाल-पटहः

ढोलक-ढौलकः

त

तई (जलेबी आदि पकाने की)—पिष्ट-पचनम्

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तट-तटः, कूलम् ततैया (भिरड़)-वरटा तन्दूर, (रोटी पकाने का)-वन्दुः (स्त्री०) तपाना-तप् (१ प०) तपैदिक--राजयक्मः, राजयक्मन् (पुं ०) तवतक - तावत (अ०) तबला—मुरंजः तरंग—वोचिः (स्री०) ऊर्मिः (स्री०), तरवूज—कालिन्दम् , तर्वुजम् तराई-उपत्यका तराजू—तुला तवा—ऋजीषम् तसला—धिषणा (स्रो०) तहमद (लुंगी)--प्रावृतम् तर्तरी- शरावः ताँवा-ताम्रकम् ताँवे के वर्तन बनानेवाला-शौल्वकः ताड्-तालः तानपूरा (वाजा)-तानपूरः तारा—तारा, ज्योतिष् (न०) तालाब-सरस् (न०), तडागः ताहरी (पुलाव) - पुलाकः तिजौरी-लौहमञ्जूषा तिपाई- त्रिपादिका तिमंजिला (मकान) - त्रिभूमिकः तिरस्कार-अवशा तिरस्कार होना—तिरस्+क (कर्म॰) तिरस्कृत-विप्रकृतः, तिरस्कृतः तिरस्कृत करना-परि+भू (१ प०), ° तिरस् + कृ (८ उ०) तिल-तिलः तिलक तिलकम् तिल्ली-प्लीहा तीव तीक्ष्णम् (वि०) तीव स्वर तारः तीसरा पहर-अपराजः तुच्छता अकिंचित्करत्वम्

तूणीर-तूणीरः त्तिया-नुत्थाधनम् तृप्त करना—तर्पय (णिच्) तृप्त होना-तृप् (४ प०, १० उ०) तेंदुआ—तरक्षः (पुं॰) तेज-तीवम्, शातम् (तीक्षण) तेज (ओज)—तेजस् (न॰) तेज (तीक्ष्ण) करना—तिज् (१ आ०) तेली--तेलकारः तैरना तृ (१ प०), सं + तृ (१ प०) तैयार--निष्पन्नम्, संपन्नम्, सज्जः तैयार होना--सं-पद् (४ आ०), सं-नह् (४ उ०) तो-तु, तावत्, ततः (अ०) तोइना-बुट् (१० आ०), मिद् (७ उ०), भक्ष (७ प०), खण्ड् (१० उ०) तोता-शुकः, कीरः तोप-शतव्नी (स्त्री०) तोरई—जालिनी (स्री०) तोल-तोलः तोलना-तोलनग् तोलना—तुल् (१० उ०) त्यक्त—उज्झितम् , त्यक्तम्, उत्सृष्टम् त्वचा - त्वच् (स्त्री०), त्वचा थाना-रक्षिस्थानम् थाली-थालिका, स्थालिका थूकना — ष्टीव् (१ प०, ४ प०) थोड़ी देर-मुहूर्तम् (अ०)

दक्षिण, दिशा—दक्षिणा दक्षिण की ओर-दक्षिणा, दक्षिणतः दक्षिणायन दक्षिणायनम् दग्ध (जला हुआ)—प्लुष्टम् (वि०) दण्ड देना-दण्ड (१० उ०) द्वाना अभि + भू (१ प०), दम् (४ प०), धृप् (१० उ०)

द्या-अनुक्रोशः, द्या

तुच्छता जाना नत्तरत्वम् CC-**तुरहो (बाजः) नक्ष्मे** Collection at Sarai(CSDS) Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha दर्शता —दात्रम्

द्री-आस्तरणम् दर्जी-सौचिकः दर्श-दरी (स्त्री०) दलाल—शुल्शजीवः दलाली - शुल्कम् दस्त-अतिसारः दस्त, आवयुक्त आमातिसारः दस्त, खून-युक्त-रक्तातिसारः दस्ता (कागज का)—दस्तकः दही-बड़ा-दिधवटकः दात-रदनः, दन्तः, रदः, दशनः दाढ़ी-कूर्चम् दातून-दन्तधावनम् दादी-पितासही (स्त्री॰) दाना-कणः दानी - वदान्यः, दानिन् (पुं०) दाल-दिदलम्, स्पः दालमोठ-दालमुद्गः दिन-अहन् (न०), दिनम्, दिवसः दिन में - दिवा (अ०) दिन रात -- नक्तन्दिवम्, अहोरात्रम्, रात्रिन्दिवम् दिशा-काष्ठा, दिश् (स्त्री०), ककुभ् (स्त्री॰), आशा, दिशा दीक्षा देना—दीक्ष (१ आ०) दीन-दुर्गतः, दीनः (वि०) दीवार-भित्तिः (स्री०) दुःख देना-पीड् (१० उ०), तुद् (६ उ०) दुःखित हृद्य-विमनस् (पुं०), विषण्णः दुःखित होना-विषद् (वि + सद् १ प०), व्यध् (१ आ०) दुःखी होना—वि + पद् (४ आ०) दुतई (दुहरी चादर)—द्वितयी (स्नी॰) दुपहरिया (फूछ)--वन्धूकः दुमंजिला (मकान)—द्विभूमिकः (वि०) दुराचारी—्दुराचारः, दुर्वृत्तः (वि०) दुलारा—दुर्ललितः (वि०) दुहराना—आवृत्तिः (स्नी०), पुनरावृत्तिः (ন্ধী০) द्कान-आपणः

दूकानदार-आपणिकः दूत-चरः, दूतः दूध-पयस् (न०), क्षीरम्, दुग्धम् दूर-दूरम्, आरात् (अ०) दूषित होना-दुष् (४ प०) देखना— इश् (१ प०), ईक्ष (१ आ०), अवेक्ष्, प्रेक्ष्, समीक्ष (१ आ०) अव + लोक् (१० उ०) देना -दानम्, वितरणम्, विश्राणनम् देना दा (३ उ०), वि + त (१ प०), उप+नी (१ उ०) . देर करना - कालहरणम्, विलम्बः देवता-सुरः, निर्दरः, देवः, त्रिदशः, अमरः देवदार-देवदारः (पुं०) देवर-देवरः देवरानी-यातृ (स्री०) देहली (द्वार की)—देहली (स्री०) दो-तीन-द्वित्राः (वि०) दोनों प्रकार से उभयथा (अ०) दोपहर-मध्याहः दोपहर के बाद का समय-(p. m.)-अपराह्यः दोपहर से पहले का समय—(a. m.) -पूर्वाह्नः दो प्रकार से-दिधा (अ०) दोष लगाना कुत्स् (१० आ०) द्रोह करना—दुह् (४ प०) द्वार-दारम्, प्रतीहारः द्वारपाल—प्रतीहारः, प्रतीहारी (स्त्री॰) ध धड़-कवन्धः धतूरा-धत्तूरः धन-धनम्, वित्तम्, द्रविणम्, संपद् (स्त्री०) धनिया-धान्यकम् धर्मार्थं याज्ञादि = इष्टापूर्तम् धनुर्धर-धन्विन् (पुं०), धनुर्धरः धनुष-कार्मुकम्, इवासः, कोदण्डम् , चापः धसकाना—तर्ज् (१० आ०)

धागा - स्त्रम् , तन्तुः, (पुं ०)

धानं (भूसीसहित)—धान्यकम्

धार रखने वाळा- शस्त्रमार्जः धारण करना—धु (१ उ०, १० उ०) धार रखना—तीक्ष्णय (णिच्), शान् (१ उ०) धुर्मुश (कंकड़ आदि कूटने का)-कोटिशः धूप-आतपः भूल-रजस् (न०), पांसुः (पुं०), धृलिः (स्त्री०), रेणुः (पुं०) धोखा-कैतवम् धोखा देना-वज्र (१० आ०), वि +प्र+ लभ् (१ आ०) धोती-अधोवस्त्रन्, धौतवस्त्रम् धोना-धाव (१ उ०), प्र+क्षल् (१० उ०), निज् (३ उ०) धोबिन-रजकी (स्त्री०) धोबी-रजकः, निर्णजकः धोंकनी-मस्रा ध्यान देना-अव + धा (३ उ०) ध्यान रखना-अपेक्ष (अप+ईक्ष १ आ०) ध्यान से देखना-निरीक्ष (१ आ०)

नक्षत्र—नक्षत्रम् नगद-मूल्येन (तृतीया) नगर-पत्तनम् , नगरम् , पुरम् नगाड़ा-दुन्दुभिः (पु ०, स्रा०) नदी-आपगा, सरित् (स्त्री०), निम्नगा, स्रवन्ती ननँद-ननान्द (स्त्री०) नपुंसक - हीवन्, नपुंसकम् (-कः) नफीरी (बीन बाजा)-वीणावायम् नमक-लवणम् नमक, साँभर-रोभकम्, रौमकम् नमक, सेंधा-सैन्धवम्, सैन्धवः नमकीन (अन्न) - लवणात्रम् नमकीन सेव - म्त्रकः नम्र-विनीतः, नम्रः (वि॰) नलाई (खेत की सफाई)—क्षेत्रपरिष्कारः नवग्रह—नव ग्रहाः नष्ट होना-नश् (४ प०), ध्वंस् (१ आ०), उत्+सद् (१ प०)

नाइट डेस-नक्तकम् नाइहोन का (वस्त्र)—नवलीनकम् नाई--नापितः नाक-त्राणम्, नासिका, नासा नाक का फूछ-नासापुष्पम् नाचना-नृत् (४ प०) नाड़ी-नाडिः (स्त्रीं०), नाडी (स्त्रीं०) नातिन-नप्त्री (स्त्री॰) नाती-नप्तृ० (पुं०) नाना-मातामहः नानी-मातामही (स्री०) नापना-मा (२ प०, ३ आ०) नारंगी-नारङ्गम् नारियल—नारिकेलः (वृक्ष),नारिकेलम् (फल) नाला (पहाड़ी)—निर्झरः, प्रणालः नाली-प्रणालिका, नाली (स्री०), नालिः (स्री॰) नाव-नौः (स्त्री०), नौका नाविक-कर्णधारः, नाविकः नाशपाती-अमृतफलम् नाइता - कल्यवर्तः, प्रातरादाः निःसंकोच-विस्रब्धम्, विश्रब्धम्, निःशङ्कम् निकलना - निः + स (१ प०), प्र+भू (१ प०), उद्+भू (१ प०), निर्+ गम् (१ प०), उद्+गम् (१ प०) निकालना - निःसारय (णिच्) निगलना—नि+गृ (६ प०) निचोड्ना—सु (५ उ०) निन्दा करना निन्द् (१ प०), अधि+ क्षिप् (६ उ०) निन्दित-अवगीतः, विगीतः, निन्दितः निव-लेखनीमुखम् निमोनिया-प्रलापकज्वरः नियम-नियमः निरन्तर-अभीक्षणम्, अजस्तम्, अनवरतम् निरपराध-अनागस् (पुं॰), निरपराधः निर्णय करना-निर्+णी (१ उ०) निर्भय निर्भयम्, नष्टाशङ्कः CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS) चार्कीक (प्राप्तिक प्रमुख्यों के बतार्व चर्च के gotri Gyaan Kosha निर्यात पर शुलक - निर्यातशुल्कम् निवाइ-निवारः निशान लगाना—चिह् (१० उ०) निश्चय करना-निश्चि(निस्+चि ५ उ०) निश्चय से - नूनम्, खलु, वै, नाम (अ॰) नीच-निकृष्टः, अधमः, अपकृष्टः, अपसदः नीवू-जम्बीरम् नीवू, कागजी जम्बीरकम् नीवू, विजीरा-वीजप्रः नीम-निम्यः नील कीली (स्त्री॰) नीलकण्ठ (पक्षी)—चाषः नीलम (मणि)—इन्द्रनीलः नील लगाना-नीली +कू (८ ४०) नेट (जाल)—जालम् नेत्र - लोचनम्, नेत्रम्, चक्षुष् (न०) ने क कटर -न खिनकुन्तनम् नेल पालिश-नखरअनम् नेवारी (फूल) - नवमालिका नोट-नाणकम् नौकर-कर्मकरः, भृत्यः, किकरः नौका, छोटी - उडुपः नौ रस-नव रसाः न्योता देना-नि + मन्त्र (१० आ०)

प

पकवान-पक्वात्रम्

पकाना—पच् (१ उ०)
पका हुआ—पक्वम
पकौड़ी—पक्ववटिका
परवल (साग)—पटोलः
पटरा (खेत बराबर करने का)—
लोष्ठभेदनः
पट्टी—पट्टिका
पटार—अधित्यका
पड़ना—पत् (१ प०), नि+पत् (१ प०)
पढ़ाना—पाठय (णिच्), अध्यापय (णिच्)
पतंगा—शलभः
पतला—अपचितः, तनुः (वि०), कृशः
पताका—वैजयन्ती (स्री०), पताका

पत्ता-पर्णम्, पत्रम् पत्थर - प्रावन् (पुं०),अशमन् (पुं०), उपलः पत्रलेखा (सजाना)—पत्रलेखा पद्मसमृह—निलनी (स्री०) पनडुब्बी-जलान्तरितपोतः पनवारी (पानवारा)—ताम्बूलिक; पन्ना (रत्न)-मरकतम् पपड़ी (मिठाई)-पर्पटी (स्त्री०) परकोटा-प्राकारः परवाह करना ईक्ष् (१ आ०), प्र+ ईक्ष (१ आ०) पराँठा-पूपिका पराग-मकरन्दः, परागः परा ु (फूँस)—पलालः परीक्षा करना -परीक्ष (परि+ईक्ष १ आ०) परोसना-परि+वेषय (णिच्) पर्वत-अद्रिः (पुं ०) गिरिः (पुं ०),भूमृत्(पुं ०) पलंग-पल्यङ्गः पलक-पश्मन् (न०) पवित्र-पूतम्, पवित्रम्, पावनम् (वि०) पश्चिम-प्रतीची (स्री०) पश्चिम की ओर-प्रत्यक् (अ०) पहनना-परि+धा (३ उ०) पहलवान-मल्लः पहुँचना-आ+सद् (१ प०), प्र+ आप् (५ प०) पहुँचाना-प्रापय (णिच्) पहुँची (गहना)—ऋटकः पाँच-छः--पन्नषः पाउडर-चूर्णकम् पाकड़ (बृक्ष)—प्लक्षः पाखण्डी-पाषण्डिन् (पुं०) पाजेब (गहना) - नृपुरम् पाठशाला—पाठशाला पाठ्यपुस्तक-पाठ्यपुस्तकम् पान ताम्बूलम् पानदान-ताम्बूलकरङ्कः पाना-आप् (५ प०), प्र+आप (५ प०), प्रति + पद् (४ आ०), विद् (६ उ०), समधि + गम् (१ प०)

```
पानी का जहाज-पोतः
   पापड़-पर्पटः
   पायजामा-पादयामः
   पार करना-त (१ प०), उत्+तृ
       (१ प०), निस्+तृ (१ प०)
  पारा-पारदः
  पार्क-पुरोद्यानम् , पुरोपवनम्
  पार्वती - गर्वणी (स्त्री॰), गौरी (स्त्री॰),
      भवानी (स्त्री०)
  पालक (साग) - पालकी (स्त्री॰)
  पालन करना-मुज् (७ प०), तन्त्र्
       (१०आ०), पा (२ प०), पालय (णिच्)
  पालिश-पादुरअभम् पादुरअकः
  पास जाना-उप+गम् (१ प०), उप+
      सद् (१ प०)
  पासा (जूए का)—अक्षाः (बहु०)
  पाहुन (अतिथि)—प्राघुणः, अभ्यागतः
  पिघलाना द्रावय (णिच्)
  पिघला हुआ दुतम्, गलितम्, द्रवीभूतम्
  पिलाना-पायय (पा + णिच्)
  पियानो (बाजा) तत्रीकवाद्यम्
  पिस्ता अङ्कोटम्
  पिरतौल-लघुभुशुण्डः (स्त्री०), गुलि-
      कास्त्रम्
  पीछा करना अनु + पत् (१ प०)
 पीछे चलना-अनु +चर् (१ प०)
     अनु + वृत् (१ आ०)
 पीछे जाना अनु + गम् (१ प०)
 पीछे पीछे-अनुपदम् (अ०)
 पीठ-पृष्ठम्
 पीतल-पीतलम्
 पीपल-अइवत्थः
पीपर (ओषधि)—पिष्पली (स्त्री०)
पीलिया (रोग)—पाण्डुः (पुं०)
पीसना-पिष् (७ प०)
पुखराज (रत्न)-पुष्परागः, पुष्पराजः
पुताई वाला-लेपकः
पुत्र-आत्मजः, स् नुः (पुं०), तनयः, अपत्यम्
पुत्रवधू-सनुपा
पुलाव-पुलाकः
पुष्ट करना—पुष् (४ प०)
```

```
पुष्पमाला सन् (स्री०)
   पूँजी-मूलधनम्
   पूआ-पूपः
  पूजा-सपर्या, अर्चा, अर्हणा, अपचितिः
       (親)0)
  पूजा करना - अर्च (१प०), पूज् (१० उ०)
  पूज्य-प्रतीक्यः, पूज्यः
  पूरा करना - पृ (३ प०, १० उ०)
  पूरी-पूलिका
  पूर्णिमा -राका, पूर्णिमा
  पूर्व - प्राची (स्रो०)
  पूर्व की ओर--प्राक् (अ०)
  पृथिवी-वसुधा, अवनिः (स्त्री०), भूः (स्त्री०)
  पेविश-प्रवाहिका, आमातिसारः
 पेट-कुक्षः (पुं॰), उदरम्, जठरः
 पेटीकोट-अन्तरीयम्
 पेट्ट-औदरिकः, कुक्षिमरिः (पुं॰)
 पेठे की मिठाई—कौष्माण्डम्
 पेड़ा (मिठाई)—पिण्डः
 पेन्टर - चित्रकारः
 पेन्सिल-तूलिका
 पेस्ट्री-पिष्टान्नम्
 पैदल चलने वाला-पदातिः (पुं०)
 पैदल सेना-पदातिः (पुं०)
 पैदा होना उद् + भू (१ प॰), उत्+
     पद् (४ आ०)
 पैन्ट-आप्रपदीनम्
 पैर-पादः
 पैरेलिसिस (लकवा॰)—पक्षाघातः
 पीछना-मार्जय (णिच)
 पोतना — लिप् (६ उ०)
पोता-पौत्रः
पोती-पौत्री (स्त्री॰)
पोर्टिको (बरामदा)-प्रकोष्ठः
पोस्ता-पौष्टिकम्
प्याऊ-प्रपा
प्याज—पलाण्डुः (पुं०, न०)
प्याल (फल)—प्रियालम्
प्याला-चषकः
Digitized By Sidomanta et angolf Gyaan Kosha
```

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS).

प्रचार होना-प्र+चर् (१ प०) प्रणाम करना-प्र+णम् (१ प०) वन्द्, (१ आ०)

प्रतिज्ञा करना पति + श (९ आ०) प्रतीत होना-आ-पत् (१ प०) प्रतीक्षा करना प्रतीक्ष् (१ आ०), अपेक्ष (१ आ०)

प्रमेह-प्रमेहः

प्रसन्न चित्त -प्रसन्नः, हृष्टमानसः

प्रसन्न होना-प्र+सद् (१प०), मुद् (१आ०)

प्रसिद्ध -प्रसिद्धः, प्रथितः विश्रुतः

प्रस्तुत करना -प्र+स्तु (२ उ०)

प्रस्थान करना-प्र+स्था (१ आ०)

प्राइस सिनिःटर-प्रधानमन्त्रिन् (पुं॰) प्राण-प्राणाः, असवः (असु, बहु०)

प्रातः-प्रातः (अ०), प्रत्यूषः

प्राप्त किया-आसादितम्, प्राप्तम्, लब्धम्

प्राप्त करना-प्राप् (५ प०), लभ् (१ आ०) प्रारम्भ करना - आ - रम् (१ आ०)

प्रार्थना करना-प्र+अर्थ (१० आ०)

प्रिन्सिपल-आचार्यः, आचार्या (स्ती॰)

प्रेम करना — रिनइ (४ प०)

प्रेरणा देना-प्र+ईर् (१० उ०)

प्रेरित-ईरितम्, प्रेरितम्

प्रोफेसर-प्राध्यापकः

प्रौढ-प्रौढः, प्रौढम् (वि०)

प्लास्टर—प्रलेपः

प्लेट-शरावः

फड़कना-स्पन्द् (१ आ०), स्फर

(E 40) ·

फर्नीचर-उपस्करः

फर्श - कुट्टिमम्

फल मिलना-वि+पच् (१ उ०)

फहराना--उत्+तुल् (१० उ०)

फाइल-पत्रसंचियनी (स्री॰)

फाउन्टेन पेन-धारालेखनी (स्त्री॰)

फालसा (फल)—पुंनागम्

फावड़ा—खनित्रम्

फिटकिरी रफटिका

फीस-शुल्कः

फुंसी-पिटिका

फुटबॉल-पादकन्दुकः,-कम्

फुफेरा भाई-पैतृष्वस्रीयः

फुलका (रोटी)-पूपला

फूकना-ध्मा (१ प०)

फूस - तृणम्

फूआ-पितृष्वस् (स्री०)

फूल (धातु)—कांस्यम्

कूल-प्रस्तम्, कुसुमम्, पुष्पम्, सुम-

नस् (स्त्री॰)

फेकना अस् (४ प०), क्षिप् (६ उ०)

फेफड़ा-फुफ्सम्

फरना आवर्ति (णिच्)

फैक्टरी--शिल्पशाला

फैलना—प्रथ् (१ आ०)

फैलाना—कृ (६ प०), तन् (८ उ०)

फोड़ा-पिटकः

फौजी आदमी-सैनिकः

'फ्लु (इन्फ्लुएंजा)—शीतज्वरः

बॅटस्तरा (बाट)—तुलामानम्

बकरा-अजः

बकवाद करना-प्र+लप् (१ प०)

बगुला-वकः

बचां का पार्क-वालोधानम्

बडड़ा-नत्सः

बजे नादनम्

ब इ (वृक्ष) - न्यग्रोधः

बद्हल (फरु) - लकुचम्

बहा भाई अग्रजः

बढ़ई त्वष्ट (पुं०)

बढ़कर-अति (अ०)

बढ़ना-एथ् (१ आ०), उप+चि (५ उ०)

बतक वर्तकः

बताशा-वाताशः

बथुआ (साग) — वास्तुकम् , वास्तूकम्

बद्भाश-जाल्मः, पापः, रेफः

Cकि अपने स्थालवं अपने हिंदी Collection at Sarai(CSD अर कार्नांट्स हैं) डाउस anta e Gangotri Gyaan Kosha

बधाई देना-दिष्ट्या वृध् (१ आ०) बना ठना-स्वलंकृतः, सुभूषितः बनाना सूज् (६ प०), रच् (१० त०) बनावटी कृत्रिमम्, कृतकम् (वि॰) बन्द करना-अपि (पि) + धा (३ उ०) बन्दर-शाखामृगः, कपिः (पुं०) बन्द्क—भुशुण्डिः (स्री०), भुशुण्डी (स्री०) बवूल (वृक्ष)—करीरः वम -आग्नेयास्त्रम् बम फेंकना-आग्नेयास्त्रम् +िक्षप (६ उ०) वरावर करना स्ती +क (८ उ०) बराबरी करना-प्र+भू (१ प०) बरामदा-वरण्डः बछो--शल्यम् बर्ताव करना-वृत् (१ आ०) बर्दी-सैन्यवेषः बर्फ-अवस्यायः, हिमम्, तुषारः बर्फी (मिठाई)—हैमी (स्री०) वर्मा (ओजार)-प्राविधः बवासीर-अर्शस (न०) बस-अलम् (अ०) कृतम् (अ०), खलु (370) बसुला-तक्षणी (स्री०) बस्ता - वेष्टनम्, प्रसेवः बस्ती आवासस्थानम् बहना-वह् (१ उ०), स्यन्द् (१ आ०) बहाना-अपदेशः, व्यपदेशः वहाना करना अप + दिश (६ उ०) बहिन-स्वस् (स्री०), भगिनी (स्री०) बही-वणिक्पत्रिका बहुमूत्र-मधुमेहः बहेड्। (ओपधि)-विभीतकः बहेलिया-शाकुनिकः, व्याधः बाँझ (वृक्ष)-सिन्दूरः वाँधना-वन्य (९ प०), पश् (१० उ०) बाँसुरी-मुरली (स्त्री०), वंशी (स्त्री०) बाँह-वाहुः (पुं०), भुजः बाज (पक्षी)-इयेनः

बाजार-विपणिः (स्री०), विपणी (स्री०) बाजूबन्द (गहना) - केयूरम् बाट (तोलने के) - तुलामानम् बाड़-वृतिः (स्री०) बाण-विशिखः, शरः, वाणः बाथरूम-स्नानागारम् बाद में - पश्चात् (अ०), अनु (अ०) बादाम-वातादम् बार बार - मुहु: (अ०), अभीक्ष्णम् (अ०) बारी से (बारी बारी से) - पर्यायशः (अ०) बारूद-अग्निचूर्णम् बारे में -अन्तरेण, अधिकृत्य (अ०) बाल-शिरोरहः, केशः बाल (अन्न की) - कणिशः, कणिशम् बाल काटने की सशीन-कर्तनी (स्त्री०) बालटी (बर्तन) - उदच्चनम् बालुशाही (मिठाई)-मधुमण्ठः बालों का काँटा-केशश्रूकः बासमती चावल-अणुः (पुं०) बाहर जाना (एक्सपोर्ट) — निर्यातः बाहर से आना (इम्पोर्ट) — आयातः बिकवाना - विकापय (णिच्, पर०) विक्री-विक्रयः बिगड़ना—दुष् (४ प०) बिगुल (बाजा)—संशाशंखः बिच्छ--वृश्चिकः बिजली-विद्यत् (स्त्री॰), सौदामिनी (स्त्री॰) बिजली घर-विखद्गृहम् बिताना नी (१ उ०), यापय (णिच्, उ०) बिदाई लेना—आ + मन्न (१० आ०), आ + प्रच्छ् (६ आ०) विना-अन्तरेण (अ०), विना (अ०), ऋते (अ०) बिन्दी-बिन्दुः (पुं०) बिल्ली-मार्जारी (स्त्री०) विसकुर-पिष्टकः विस्तर-शया बींधना-व्यध् (४ प०) बीच में -अन्तरा, अन्तरे (अ०) CC-O. Dr**ःस्क्रास्(अन्त)**attriरिसाइसांo(स्क्र)Sarai(CSDS). Di**क्षीःक्षे By मिल्लामार्थन**, PGangotri Gyaan Kosha बीतना (समय) - गम् (१ प०), अति + वृत् (१ आ०) बीन बाजा-वीणावाद्यम् बुकरैक-पुस्तकाधानम् बुखार—ज्वरः ब्रुनना-वे (१ उ०) बुरका-निचोलः बुर्जो (अटारी)—अट्टः बुलाक (गहना)-नासाभरणम् बुलाना-आ+मन्त्र् (१० आ०), आ+ हे (१ उ०) बूरा (चीनी) - शर्करा, सिता बेंत-वेतसः वेचना-वि+क्री (९ आ०) बेचनेवाला—विक्रेतृ (पुं॰) वेणी (गहना) - मूर्धाभरणम् बेन्च-काष्टासनम् वेर-वदरीफलम्, कर्बन्धुः (स्त्री०) बेल (फल)—िल्वम्, श्रीफलम् बेला (फूल)—मल्लिका देसन-चणकचूर्णम् बें किंग-कुसीदवृत्तिः (स्री०) बेंड-वादित्रगणः वेंगन-भण्टाकी (स्त्री०) बैठना-सद् (१ पं), नि+सद् (१ पं), आस् (२ आ०) ' बैडिमिन्टन-पत्रिक्रीडा बैना (वायन) - वायनम् बैल-उक्षन् (पुं०), अनडुह् (पुं०), गो (पुं०) बोना-वप् (१ उ०) बौर-वहरी (स्री०) ब्रह्म-उद्गीथः, ब्रह्मन् (पुं०, न०) ब्रह्मा-वेधस् (पुं०), ब्रह्मन् (पुं०) बाह्मण—द्विजः, द्विजातिः (पुं॰), अग्र-जन्मन् (पुं०) ब्रुश-वर्तिका, रोममार्जनी (स्त्री॰) ब्रा, दाँत का-दन्तथावनम् ब सलेट (बाजूबन्द) — केयूरम्

व्लाउज-कञ्चुलिका ब्लाटिंग पेपर—मसीशोषः ब्लेड (बाल बनाने का)—धुरकम् ब्लैक बोर्ड-स्यामफलकम् भंगी-संमार्जकः भँवर-आवर्तः भड्भूजा-भृष्टकारः, भ्राष्ट्रमिन्धः भतीजा—भ्रात्रीयः, भ्रातृन्यः, भातृपुत्रः भरना-पूर (१० उ०) भले ही —कामम् (अ०) भाँटा-भण्टाकी (स्त्री०) भाग्यवान् सुकृतिन् (पुं०) भाग्य से-दिष्ट्या (अ०) भाड़—आष्ट्रम् भान्जा (भानजा)—खस्रीयः, भागिनेयः भाप-वाष्पम् भाभी (भाई की स्त्री)—भ्रातृजाया भारी-गुरुः (वि०) भाला-प्रासः भालू-भल्लूकः भाव (बाजार भाव)—अर्घः भाव गिरना-अर्घापचितिः (स्त्री॰) भाव चढ़ना-अघोपचितिः (स्त्री॰) भावर (तराई)—उपत्यका भिण्डी (साग) —भिण्डकः भुस-बुसम् भूख-वुभुक्षा, अश्वनाया भूखा—वुभुक्षितः अश्चनायितः (वि०) भूनना-भ्रस्त् (६ उ०) भूलना-वि +समृ (१ प०) भूसी-तुषः भू-सेनापति-भूमेनाध्यक्षः भेजना-प्रेषय (णिच्, उ०), प्र+हि (4 TO) भेड़-मेषः भेड़िया- वृकः भैंस-महिषी (ञ्ली०) भेंसा-महिषः CC-O. Dr अक्षु में (भीग) Collection का Sarai (CSDS), Dighted By Gddnanta eGangotri Gyaan Kosha

258 भौं—भ्रः (स्रो॰) भौरा-पट्पदः, भ्रमरः, द्विरेफः, अलिः (q.o) मँगाना-आनायय (आनी + णिच्) मंजन दन्तचूर्णम् मॅजीरा-मंजीरम् मंडप-मण्डपः मंडी-महाहट्टः मकड़ी-तन्तुनाभः, लूता, ऊर्णनाभः मकान-भवनम् , सौधः, प्रासादः, निलयः मकोय (फल)—खर्गिंक्षीरी (स्त्री॰) मक्खन नवनीतम्, हैयंगवीनम् मगर-मकरः, नकः मछली-मीनः, मत्स्यः, झपः मजदूर-श्रीमकः मटर-कलायः महा-तक्रम् मथना-मन्थ् (९ उ०) मधुमक्खी - सर्घा, मधुमिद्धिका मध्यम स्वर-मध्यः, मध्यस्वरः मन-स्वान्तम्, हृद् (न०), मनस् (न०), मानसम् मन लगना-रम् (१ आ०) मनाना-अनु +नी (१ उ०) मनुष्य-नरः, द्विपाद् (पुं ०), मर्त्यः मनोहर-मनोशम्, मञ्जलम्, ह्यम्, अभीष्टम् मन्त्रणा करना-मन्त्र (१० आ०) मन्त्री-अमात्यः, सचिवः, मन्त्रिन् (पुं o) मन्दी (भाव की)-मन्दायनम् मरना-मृ (६ आ०), उप+रम् (१ आ०) मरम्मत करना—सं + धा (३ उ०) मर्म-मर्मन् (न०) मलाई-सन्तानिका मलेरिया-विषमज्बरः

मसूर-मसूरः महँगा-महार्घम् महल-प्रासादः, सौधः, हर्म्यम् महावर-अलक्तकः महुआ (बृक्ष)-मधूकः माँजना-मृज् (२ प०, १० उ०) मांस-आभिषम्, मांसम् माथा-ललाटम् मानना-मन् (४ आ०, ८ आ०), आ +स्था (१ आ०) मानसून-जलदागमः, प्रावृष् (ट) मामा-मातुलः मामी-मातुलानी (स्त्री॰) मारना-हन् (२ प०), तड् (१० उ०), सो (४ प०) मार्ग-वर्त्मन् (न०), पथिन् (पुं०), मार्गः, सरणिः (स्त्री॰) मालपुआ-अपूपः माली-मालाकारः मिजराब (सितार वजाने का)-कोणः मिद्दी-मृत्तिका, मृद् (स्त्री०), मृत्स्ना मिठाई मिष्टान्नम् मित्रता सख्यम्, सौहृदम्, सौहृार्यम्, संगतम् मिनट-कला मिर्च-मरीचम् मिल (फैक्टरी)—मिलः मिलना—मिल् (६ उ०), सं 🕂 गम् (१ आ०) मिलाना-योजय (युज्+णिच्), स+ मिश्रय (णिच्) मिस्त्री (कारीगर)-यान्त्रिकः मिस्सा आटा-मिश्रचूर्णम् मीठा-मधुरम् (वि०) मीठी गोली (टॉफी)—गुल्यः मुँह -- आननम् , वदनम् , मुखम्, आस्यम् मुकरना—अप+शा (९ आ०) मुकुट-मुकुटम् मुख्य द्वार-गोपुरम् मुख्य सङ्क राजमार्गः

CC-8 By Ramody Tripain Cullection at Sarai(QS Projection By Siddhanta e Gangotri Gyaan Kosha

मशीन-यन्त्रम्

मसाला-व्यक्षनम्, उपस्करः

मसाला डालना—उपस्क (८ उ०)

मनि-मुनिः (पुं०), वाद्यमः, दान्तः मुनीम लेखकः सर्ब्बा-मिष्टपाकः मुसम्मी (फल)—मातुकुङ्गः मुसाफिरखाना—पथिकालयः मूँग-मुद्रः मूँगरी (मिट्टी तोड़ने की) —लोधभेदनः मूँगा (रत्न)—प्रवालम् मुँछ-रमश्र (न०) मूर्ख-वैधेयः वालिशः, मूढः मुर्खता-जाड्यम् मूली-मूलकम् मूल्य-मूल्यम् मूसलाधार वर्षा-आसारः मृग-कुरङ्गः, हरिणः, मृगः मृत हतः, मृतः, उपरतः मृत्य -मृर्युः (पुं ०), निधनम् मेंढक-भेकः, दर्दरः, मण्डूकः मेंहदी-मेन्धिका मेकेनिक (कारीगर) - यान्त्रिकः मेघ-जीमूतः, वारिदः, बलाहकः मेज-फलकम् मेज, पढ़ाईकी लेखनफलकम् मेयर - निगमाध्यक्षः मेवा -शुष्कफलम् मैंडा (खेत बराबर करने का) - लोष्ट-भेदनः मैच-क्रीडाप्रतियोगिता मैना-सारिका मोटा उपचितः, पृथुः, गुरुः (वि०) मोती-मुक्ता, मौक्तिकम् मोती की माला—मुक्तावली (स्त्री॰) मोतीझरा (रोग)-मन्थरज्वरः मोर-विहिन् (पुं०), शिखिन् (पुं०) मयूरः; मोर्चाबन्दी करना-परिखया + वेष्टय (णिच) मोहनभोग (मिठाई)—मोहनभोगः मौका-कार्यकालम् सीन-वाचंयमः, जोषम् (अ०)

मौलसरी (बृक्ष)—दकुलः

मौसी-मातृष्वस् (स्री०)

मौसेरा भाई-मातृष्वस्रेयः म्युनिसिपल चेयरमैन नगराध्यक्षः म्युनिसिपिछटी-नगरपालिका यज्ञ-अध्वरः, यज्ञः, कृतुः (प्०) यज्ञ-कर्ता-यज्वन् (पुं ०) यत्न करना-यत् (१ आ०), न्यव+सो (8 do) यम कृतान्तः यश-यशस् (न०), कीर्तिः (स्त्री०) याद करना सम (१ प०), सं + स्मृ (१ प०), अधि+इ (२ प०) युद्ध साहवः, आजिः (पं०, स्त्री०) जन्यम् युनानी लिपि-यवनानी (स्त्री०) युनिफार्म-एकपरिधानम्, एकवेषः यूनिवर्सिटी-विश्वविद्यालयः योग्य होना-अर्ह (१ प०) योद्धा-योधः रंगना-रख् (१ उ०) रंगबिरंगे—नानावर्णानि (बहु॰, वि॰) रंगरेज-रञ्जकः रकम-राशिः, धनराशिः (पुं०) रक्षा करना—रक्ष् (१ प०), पाल् (१० उ०), त्रे (१ आ०), पा (२ प०) रखना-नि+धा (३ उ०) रज-रजस् (न०) रजाई—नीशारः रजिस्टर-पि अका रजिस्ट्रार-प्रस्तोतृ (पुं॰) रणकुशल-सांयुगीनः रथ-स्यन्दनम् रबड़--धर्षकः रबड़ी (मिठाई) - कूर्चिका रसोई—रसवती (स्नी०), पाकशाला, महानसम् रहना—स्था (१ प०), वस् (१ प०), अधि + वस् , उप + वस् (१ प०) रांगा-त्रपु (न०) राक्षस-असुरः, दैत्यः, दानवः

राज (मिस्त्री)-स्थपतिः (पुं०) राजदूत-राजदूतः राजा-अवनिपतिः, भूपतिः, भूमृत् (तीनों पं०) रात-विभावरी (स्त्री०), क्षपा, रात्रिः (स्त्री०) रात में -- नक्तम् (अ०) रायता-राज्यक्तम् रिवाज-प्रचलनम्, संप्रचलनम् रीठा—फेनिलः रीढ़ की हड़ी-पृष्ठास्थि (न०) रुकना-स्था (१ प०), वि +रम् (१ प०), अव +स्या (१ आ०) रूई तूलः, तूलम् रूज़ (गालों की लाली)—कपोलरक्षनम् रेगिस्तान-मरुः (पुं०), धन्वन् (पुं०, न०) रेट (भाव)—अर्घः रेतीला किनारा—सैकतम् रेफरी--निर्णायकः रेशमी-कौशेयम् रैकेट (खेलने का)—काष्ठपरिष्करः रोकना-रुध (७ उ०) रोग-रुज् (स्त्री०), रोगः, आमयः रोजनामचा (कैश-बुक, रोकड़ बही)-दैनिक-पश्चिका रोटी-रोटिका रोना—हद् (२ प०), वि + लप् (१ प०)

लंच (मध्याह्न भोजन)—सहमोजः, सिव्धः (स्त्री०) लकवा मारना—पक्षाधातः लकीर—रेखा

स्वा — लक्ष्मी: (स्वी॰), श्री: (स्वी॰),
पद्मा, कमला
लक्ष्म — लक्ष्यम्, शरन्यम्
लगना — प्र म वृत् (१ आ॰)
लगाना — नि म युज् (१० उ॰), सं मधा(३उ॰)
लच्छे (गहना) — पादाभरणम्
लजित — हीणः (वि॰)

CC-O. Dr. Ramdev Tripathi Collection at Sarai(CSDS). Digitized By Siddharita eGangotri Gyaan Kosha

लजित होना-त्रप् (१ आ०), लस्ज (६ आ०), ही (३ प०) लड़ने का इच्छुक-ये द्धुकामः, कलहकामः लड़ाई का जहाज (पानीका)-युद्धपोतः लड़ाई का विमान-युद्धविमानम् लड्डू-मोदकः, मोकदम् लता-व्रतिः (स्त्री॰), वीरुध् (स्त्री॰), लता लपसी (जो का हलुआ)—यवागूः (स्त्री०) लस्सी (दही की)—दाधिकम् लहसुन लशुनम् लहसुनिया (रतन)—वैदुर्यम् लाक्षारस -अलक्तकः, लाक्षारसः लाख (धातु)—जतु (न०) लाना-आ+नी (१ उ०), ह (१ उ०), आ+ह (१ उ०) लिए-कृते (अ०) लिपस्टिक-ओष्ठरञ्जनम् लिफ्ट (मशीन) — उत्थापनयन्त्रम् लिसोड़ा (बृक्ष)—इलेन्मातकः लीची (फल) - लीचिका लीपना - लिप् (६ उ०) लेखा बही-नामानुक्रमपश्चिका ले जाना-नी (१ उ०), ह (१ उ०), वह् (१ उ०) लेना-ग्रह् (९ उ०), आ+दा (३ आ०) लेने वाला-ग्राहकः लोई (ऊनी)--रल्लकः लोकसभा लोकसभा, संसद् (स्त्री०) लोटा-करकः, कमण्डलुः (पुं०) लोभिया-वनमुद्गः लोभी-लब्धः, गृधनुः (पुं०) लोमड़ी-लोमशा लोहा-अयस् (न०), आयसम् , लौहम् लोहा करना (वस्त्रों पर) — अयस् + कृ (८ उ०) लोहार-लौहकारः लोहे का टोप-शिरस्त्रम् लोहे की चादर-लौहफलकम् छौंग-लवङ्गम्

लोटकर आना आ + वृत (१ आ०), प्रत्या + गम् (१ प०) लौटना-नि + वृत् (१ आ०), परा + गम् (१ प०)

वंचित-विप्रलब्धः वंश-अन्वयः, अन्ववायः, वंशः वकील-प्राड्विवाकः वचन-वचस् (न०), वचनम् वज्र-पविः (पुं०), वज्रम्, कुलिशम्, अश्निः (पुं०) वन ाननम्, विपिनम्, वनम्, अरण्यम् वरुण-प्रचेतस् (पुं०), पाशिन् (पुं०), वरुणः वर्षा-वृष्टिः (स्त्री०), वर्षा वर्षाकाल-प्रावृष् (स्रो०) वस्तृतः - नूनम्, किल, खलु, वै, तावत् (अ०) वहाँ से - ततः (अ०) वाइस चान्सलर उपकुलपतिः (पुं०) वाटर वर्क्स - उदयन्त्रम् वाणी—सरस्वती, वाच् (स्रो), वाणी (स्त्री॰) वायु-मातरिश्वन् (पुं ०) पवनः, अनिलः वायुसेनापति -वायुसेनाध्यक्षः वायोि अन (बाजा) — सारङ्गी (स्त्री॰) विचरण करना-वि+चर् (१ प०) विजयी-जिष्णुः (पुं०), विजयिन् (पुं०) विद्युत्—सौदामिनी (स्री॰), विद्युत् (स्री॰), विद्वान् —विद्वस् (पुं०), विपश्चित् (पुं०), सुधी (पुं०), कोविदः, बुधः, मनोषिन् (पुं०), सूरिः (पुं०), निष्णातः विप्रत्ति-विपत्तिः (स्त्री॰), विपद् (स्त्री॰), व्यसनम् विमान-विमानम् विवाह करना-परि+णो (१ उ०), उप 十यम् (१ आ०) विश्राम-विश्रमः, विश्रामः विश्वास करना—वि+श्वस् (२ प०)

वृद्ध-प्रवगस् (पुं ०), वृद्धः वेतन-वेतनम् वेतन पर नियुक्त नौकर-वैतनिकः वेदपाठी-श्रोत्रियः, वेदपाठिन् (पुं ०) वेदी-वेदिका, वेदी (स्त्री०) वैश्य-विश्व (पुं ०), द्विजातिः (पुं ०), अर्थः, वैदयः वाली-बॉल-क्षेपकन्दुकः व्यक्त करना-वि + अञ्च (७ प०) ब्याघ्र—द्वीपिन् (पुं०), व्याघ्रः ब्यर्थ ही-वृथा (अ०), मुधा (अ०) व्यवहार करना-आ+चर् (१ प०), व्यव + ह (१ उ०) व्यापार-वाणिज्यम् , व्यापारः च्याप्त होना-च्याप् (वि + आप् ५ प०), अश (५ आ०)

शक्कर—शर्करा शपथ लेना-शप् (१ उ०) शराबी-मद्यपः शरीफा (फल)—सीताफलम् शरीर-वपुपः (न०) गात्रम्, तनुः (स्री०), कायः, विश्रहः शर्त-समयः शलगम् - र्वेतकन्दः शख-प्रहरणम्, शसम् शस्त्रागार- गुस्रागारम्, आयुधागारम् शस्य-र्यामल शाद्वलः सहत्त (फल)—त्तम् शहद-मधु० (न०) शहनाई (बाजा)—तूर्यम् शहर-नगरम्, पुरम् शान्त-शान्तः (वि०) शामियाना - चन्द्रातपः शासन करना - शास् (२ प०), तन्त्र (१০ आ०)

शिकार खेलना - मृगया शिकारी—मृगयुः (पुं॰), आखेटकः, शाकुनिकः

शिक्षा देना—शास् (२ प॰), शिक्ष् (१ आ॰) Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वृक्ष-विटिपन् (पुं०), पादपः, अनोकहः, CC-O. Dr. Railloev Theathi Collection at Sarai(CSDS).

विस्तृत-ततम्, विततम्, प्रस्तम्

विष्णु-हरिः, अच्युतः

वीर्य-शुक्रम्

शिर-शिरस् (न०), मूर्धन् (पुं०) शिला-शिला, शिलापट्टः शिल्पी-कारुः (पुं०), शिल्पन् (पुं०) शिल्पी संघ-श्रेणिः (पुं॰, स्त्री॰) शिल्पी-संघ का अध्यक्ष-कुलकः शिव ऱ्यम्बकः, त्रिपुरारिः (पुं ०), ईशानः शिष्य अन्तेवासिन् (पुं ०), छात्रः, शिष्यः, वटुः (पुं०) शीघ—सद्यः (अ०), सपदि (अ०), दुतम, शीव्रम् शीशम (वृक्ष)—शिशपा शीशा दर्भणः, मुकुरः, आदर्शः शुद्ध करना-शोधय (णिच) शुद्ध-अन्त्यजः शेर-केसरिन् (पुं०)सिंहः, मृगेन्द्रः, हरिः(पुं०) शरवानी-प्रावारकम् शोभित होना-शुम् (१ आ०), मा (२ प०) श्रद्धा करना-श्रद्+धा (३ उ०) संग्रहणी (पेचिश)-प्रवाहिका संतरा नारङ्गम् संवाद करना - सं + वद् (१ आ०) संशय करना-सं+शी (२ आ०) सजन-साधुः (पुं०), सुमनस् (पुं०) सचेतस् (प् ं०) सदक-मार्गः, पथिन् (पुं०), सरणिः (स्त्री०) सड्क, कच्ची-मृन्मार्गः सड़क, चौड़ी-रध्या सड्क, पक्की हडमार्गः सड्क, मुख्य-राजमार्गः सत्य रूप में - परमार्थतः, परमार्थेन, यथार्थतः (अ०) सदस्य सभासद् (पुं०), सभ्यः, पारिषदः सदाचारी-सद्वृत्तः, सदाचारः सदश होनां सं +वद् (१ प०), अनु+ ह (१ आ०) सधवा स्त्री-पुरन्धिः (स्त्री०) सन्तुष्ट होना—तुष् (४ प०) सन्दूक-मञ्जूषा

संन्यासी-मस्करिन् (पुं ०), परिवाजकः,

सप्ताह-सप्ताहः सफेद बाल-पिलतम् सभा-सभा, समितिः (स्त्री०), परिपद् (स्त्री०) सभागृह-आस्थानम् समधिन-सम्बन्धिनी (स्त्री०) समधी-सम्बन्धिन् (प्'०) समर्थ-प्रभविष्णुः (पं०), प्रभुः (पं०), समर्थः, शक्तः समर्थं होना-प्र+भू (१ प०) समय-वेला, कालः, समयः समाचार-वार्ता, प्रवृत्तिः (स्त्री॰), उदन्तः समाप्त-अवसितः समाप्त होना-सम्+आप् (५ प०), अव +सो (४ प०) समीक्षा करना सम् + ईक्ष (१ आ०) समीप-उप, अनु, अभि, आरात् (ा०) समीप आना-प्रत्या + सद् (१ प०), उप +या (२ प०) समीपता-संनिधानम्, सामीप्यम् समद्र-अर्णवः, अब्धि (पुं०), रत्नाकरः समुद्री व्यापारी-सांयात्रिकः समृह—संहतिः (स्त्री०), संघः समोसा-समोषः सम्बन्धी-शातिः (स्री०), बन्धुः, बान्धवः सरकार-सर्वकारः, शासनम्, प्रशासनम् सरसों-सर्पपः सर्ज (वृक्ष)—सर्जः सर्वथा एकान्ततः, सर्वथा, नित्यम् (अ०) सलवार-स्वृतवरः सलाद-शदः सस्ता अल्पार्घम् सहना-सह (१ आ०) सहपांठी-सतीर्थः, सहाध्येत (पु ०), सहपाठिन् (पुं॰) सहमोज-सिग्धः (स्री०), सहमोजः सहाध्यायी-सतीर्थः सहारा देना-अव + लम्ब् (१ आ०) सहदय सहदयः, सचेतस् (पुं ०) सांग वेदज्ञ अनुचानः CC-O. Dr.यतिः (पुरु) ripathi Collection at Sarai(CSD आंपडांगहिष्टिकः Sidelhenta (Gangotri Gyaan Kosha सांभर नमक-रीमकम् साक्षी—साक्षिन् (पं ०) साग-शाकः, शाकम् साड़ी-शाटिका सात स्वर-सप्त स्वराः साथ-सह, सावम, सार्थम, सांनिध्यम साथी-सहाध्यायिन् (पं ०) साफ करना-मृज् (२ प०, १० उ०), प्र+क्षल (१० उ०) साबुन-फेनिलम सामग्री-हिवष् (न०), संभारः, उपकरणम् सामान-पण्यः सारंगी (बाजा)—सारङ्गी (स्त्री॰) सारस-सारसः साल का पेड़—सालः साँवा (जंगली धान)- रयामाकः सास पेन (डेगर्चा) —उखा साहकार-कुसीदिकः, कुसीदिन् (पुं०) साहकारा-कुसीदवृत्तिः (स्त्री॰), कुसीदम् सिंगारदान-शङ्गारधानम् , शङ्गारपिटकम् सिंघाड़ा-शङ्गाटकम् सिका-मुद्रा सिका ढालना - टक्कनम् , टक्क् (१० उ०) सिगरेट-तमाखुवतिका सितार-वीणा सिद्ध होना — सिध् (४ प०) सिन्दूर-सिन्दूरम् सिपाही-रिक्षन् (पुं॰) सिफलिस (गर्मी, रोग)—उपदंशः सिलाई—स्युतिः (स्री०) सिलाई की मशीन स्यूतियन्त्रम् सिला हुआ-स्यूतम् सींचना-सिच् (६ ७०) सीखना-- शिक्ष् (१ आ०) सीखने वाला-गृहोतिन् (पुं ०), अधी-तिन् (पुं ०) सीढी (लकड़ी की)—निःश्रेणी (स्री०) सीना-सिव् (४ प०) सीमेन्ट-अइमचूर्णम् सीसा (धातु)—सीसम्

सुख-रार्मन् (न०), सुखम् सुनार-पदयतोहरः, स्वर्णकारः सुन्दर-रुचिरम्, मनोश्चम् , मञ्जुलम् सुपारी-पूगम्, पृगीफलम् सुराविक्रेता-शौण्डिकः सुराही-भृकारः सुअर श्वरः, वराहः सूई-स्चिका सुखना-शुष् (४ प०) सूत-सूत्रम् सती-कार्पासम् सूद-कुसीदम् सूर्य-सप्तसप्तः (पुं ०), हरिदइवः सूर्यास्त समय-प्रदोषः, गोधूलिवेला, सायम् सेधा नमक-सैन्धवम् सेंह (पञ्ज)—शल्यः सेकण्ड-विकला सेकेटरी-सचिवः सेना-चमूः (स्त्री०), पृतना, वाहिनी (स्त्री०) सेनापति—सेनापतिः (पुं०), सेनानीः (पुं०) सेफ (तिजौरी)—लौहमञ्जूषा सेफ्टी रेज़र-उपधुरम् सम-सिम्बा सेमर (बृक्ष)—शाल्मिलः (पुं०) सेल्स टैक्स-विक्रयकरः सेवं (फल)—सेवम्, आताफलम् सेवई-स्त्रिका सेवा करना-सेव् (१ आ०), उप+ चर् (१ प०) सोंठ-शुण्ठी (स्री०) सोचना-चिन्त् (१० उ०), विचार्य (णिच्) सोता (स्रोत)—उत्सः स्तेना - कार्तस्वरम्, जातरूपम्, चामीकरम् सोना-स्वप् (२ प०), श्री (२ आ०) सोफा-पर्यकुः सौंफ-मधुरा सौदा (सामान)—पण्यः सौ रुपये-शतम् स्कूल-विद्यालयः स्कूल इन्सपेक्टर-विद्यालयनिरीक्षकः

स्टूल-संवेशः स्टेनलेम स्टील-निष्कलङ्कायसम् रटेशम-यानावतारः रटोव-उद्ध्यानम् स्त्री-योपित् (स्त्री०), कलत्रम् (न०), द्याग (व.०) म्थान-धामन् (न०) स्नातक-समावृत्तः, स्नातकः स्नो-हैनम् स्पर्धा करना-स्वधं (१ आ०) स्मरण करना-रम् (१ प०),अधि+इ(२ प०) **रहेट-**-अइमपट्टिश स्बच्छ होना-प्र+मंद् (१ प०) स्वभाव-सर्गः, निस्गः, प्रकृतिः (स्त्री०) स्वभाव से सुन्दर--अव्याजमनोहरम् स्वर्ग-नाकः, त्रिदिवः, त्रिविष्टपम् स्वर्ण-कार्तस्वरम् , जातरूपम् , हिरण्यम् स्तागतार्थं जाना-प्रत्युद्+गम् (१ प०) स्वामी-प्रभविष्णुः (पुं०),प्रमुः,स्वामिन्(पुं०) स्वीकार करना—जरां +कृ (८ उ०), उररी+क (८ ५०) स्वेच्छाचारी-स्वेरः, स्वैरिन् (पुं०), कामवृत्तिः (स्त्रां०) स्वेटर--- जणावरकम् ह हंस-मराङः हंसी-वरटा हॅं भी करना-परि + हम (१ प०)

हस—मराठः हंसी—वरटा हॅं मी करना—परि+हम् (१ प०) हॅं सुर्छी (गहना)—मैत्रेयकम् हटना—अप+स् (१ प०), या (२ प०), वि०+रम् (१ प०) हटाना—व्यप+नी (१ ड०), अप+ सारय (णिच्) हथोंडो—अयोधनः हरताल-पीतकम् हराना-परा + भू (१ प०),परा + जि (१आ०) हर्-हरीतकी (स्त्री०) हल-लाङ्गलम्, हलम्, सीरः हल करना (प्रश्नादि)—साथय (णिच्) हलवाई-नान्दविकः हलुआ-लिप्सका हलका-लयुः (वि०) हल्दी-हिर्द्रा हवन करना—हु (३ प०) हाँ - आम् , तथा, अथ किम् (अ०) हाइडोजन बम-जलपरमाण्यस्त्रम् हाँकी का खेल-यष्टिकीडा हाथ का तोड़ा (गहना)—त्रोटकम् हाथीवान-हस्तिपकः हार, मोती क। -हारः हार, एक लड़ का-एकावली (स्त्रीं) हारना-परा+ति (१ आ०) हारमोनियम (बाजा) - मनोहारिवाचम् हारियार (फूल)—शेफालिका हॉल-महाकक्षः हिंसा करना—हिंस (७ प०), हन् (२ प०) हिम-अवश्यायः, हिमम् हिसाब-संख्यानम् हींग-सिङ गुः (पुं ०, न०) हीरा-हीरकः हृदय हृदयम्, स्वान्तम्, मानसम् हुका-धूम्रनलिका हैजा-विष्चिशा होठ-ओष्ठः होट, नीचे का-अधरः, अधरोष्टः होना-भू (१ प०), अस् (२ प०), विद् (४ आ०), वृत् (१ आ०) होज-आहावः

(१५) विषयानुक्रमणिका

सूच ना—१. शब्दों, धातुओं और निवन्धों के विवरण के लिए प्रारम्भिक विषय-सूची देखिए।

२. विषयानुक्रमणिका में दी गयी संख्याएँ पृष्ठ-बोधक हैं।

अनुवादार्थं गद्य-संग्रह ३५७-३७६
अभ्यास १-१२१
आत्मनेपद ५८,६०
इच्छार्थक प्रत्यय, सन् ७०
कर्नु वाच्य ५६
कर्मवाच्य—६२,६४
कारक—प्रथमा २, द्वितीया २, ४, नृतीया ६,
८, चतुर्थी १०, १२, पंचमी १४,१६,
पष्ठी १८,२०, सप्नमी २२,२४

कृत् प्रत्यय—अच् ९६, अण् १०२, अश् १०४, अप् ९६, इःणु १०४, क १००, क्त ७४, ७६, क्तवतु ७८, क्तिन् १०२, क्तवा ८६, क्तिप् १०२, खरू १००, खर् १०४, घन् ९४, ट ९८, णमुरू ८८, णिनि १००, ण्वुरू ९८, तुमुन् ८४, तृन् ९६, ल्यप् ८८, ल्युट् ९८, शतु ८०, ८२, शानच् ८२, अन्य कृत् प्रत्यय १०४,

कृत्य प्रत्यय—अनीय ९०, क्यप् ९२, ण्यत् ९२, तन्य ९०, यत् ९२

णिच् प्रत्यय-६६, ६८

तिद्धित प्रत्यय अपत्यार्थक १०६, इष्ठन् ११८, ईयसुन् ११८, चातुर्राथक १०८, चिव १२०, तमप् ११८, तरप् ११८, तुलनार्थक ११८, द्विरुक्त १२०, भावार्थक ११६, मत्वर्थक ११२, विभक्त्यर्थ ११४, शिक ११०, सात् १२०, अन्य तिद्धित प्रत्यय १२०

भातुरूपकोश २२१-२५४ भातुरूपसंग्रह १४३-२२० नामभातु-प्रत्यय ७२ निबन्धमाला २९६-३५६ पत्रादि-लेखन-प्रकार २९१-२९५ पदकम ५६ परस्मैपद ६० पारिभाषिक शब्दकोश ४०९-४१८ प्रत्यय-परिचय २०९-२८५ प्रत्यय-विचार २५५-२६८ प्रेरणार्थक णिच् ६६,६८ भाववाच्य ६२,६४ यङ् प्रत्यय ७२ स्रकार—आशीर्लंड ३६, लिट् २६,२८ लुङ् ३०,३२, लुट् ३४, लुङ् ३६ वाक्यार्थक शब्द २८६-२९० विभक्ति—देखो कारक

शब्दरूप-संग्रह-१२३-१४०

शब्दवर्ग-अन्तवर्ग ५२, अन्ययवर्ग ११२, आभूषणवर्ग १०२, आयुधवर्ग ४४, कृषिवर्ग ७२, क्रियावर्ग ११४, क्रीडासन-वर्ग ३८, क्षत्रियवर्ग ४२, गृहवर्ग ११०, दिवशालवर्ग ३२, देववर्ग २६, धातुवर्ग ११६, नाट्यवर्ग ११८, पक्षिवर्ग ९२. पञ्चवर्ग ९०, पात्रवर्ग ६०, पानादिवर्ग ५८, पुरवर्ग १०६, १०८, पुष्पवर्ग ८४, प्रसाधनवर्ग १०४, फलवर्ग ८६, ८८, ब्राह्मणवर्ग ४०, भक्ष्यवर्ग ५४, मिष्टान्न-वर्ग ५६, रोगवर्ग १२०, लेखनसामग्रीवर्ग ३०, वनवर्ग ८०, वस्त्रादिवर्ग १००, वारिवर्ग ९४, विद्यालयवर्ग २८, विशेषणवर्ग ७४, ७६, वृक्षवर्ग ८२, वैश्यवर्ग ४८, व्यापारवर्ग ४०, व्योमवर्ग ३४, शरीरवर्ग ९६, ९८, शाकादिवर्ग ६८, ७०, कि: लिपवर्ग ६४, ६६, ज्रुद्रवर्ग

संख्याएँ १४१-१४२ सन् प्रत्यय ७० सन्धि—स्वर (अच्) सन्धि २६, २८, व्यंजन (हल्) सन्धि ३०, ३२, विसर्ग-सन्धि ३४, ३६ सन्धि-विचार—२६९-२७८

सैन्यवर्ग ४६

६२, शैलवर्ग ७८, सम्बन्धिवर्ग ३६,

स्वर-सन्धि २६९-२७१, व्यंजन (हल्) सन्धि २७२-२७५, ब्रिसर्ग (स्वादि) सन्धि २७६-२७८

समास-अलुक् समास ५०,

अन्ययीभाव ३८, एकरोष ५०, कर्मधारय ४२, तत्पुरुष ४०, द्वन्द्व ४८, द्विगु ४२, बहुब्रीहि ४४, ४६

समासान्तप्रत्यय ५२

सुभाषित मुक्तावली - ३७७-४०८

अध्यातम ३७८-३८१, अर्थ ३८१-३८२, आचार ३८७-३९५, आरोग्य ३८५, कवि, काव्य, कविता ४०७, काम (भोगनिन्दा) ३८२,
चांतुर्वण्यं ३८४,
जगत्त्वरूप ३८४,
जगत्त्वरूप ३८३,
जीवन ३८४-३८५,
पुरुष-स्त्री-स्वभावादि ४०४-४०७,
भारत-प्रशंसा ३७७,
मनोभाव ४००-४०१,
राजधर्मादि ३८५-३८६,
विचारात्मक ३९७-४००,
विद्या ३९५-३९७,
विविध ४०७-४०८,
व्यवहार ४०२, ४०४,

स्रीप्रत्यय ५४ हिन्दी-संस्कृत-शब्दकोष ४२०-४४४

संस्कृत - भाषा, व्याकरण तथा साहित्य की प्रमुख पुस्तकें

काशी का इतिहास		١٤٧٥.٠٠
रचनानुवादकौमुदी	डॉ॰ कपिलदेव द्विवेदी	१२.00
प्रौढ रचनानुवादकौमुदी	डॉ० कपिलदेव द्विवेदी	₹0.00
संस्कृत व्याकरण		
तथा लघु सिद्धान्तकौ मुदी	डॉ॰ कपिलदेव द्विवेदी	¥0.00
संस्कृत-निवन्ध-शतकम	डाँ० कपिलदेव द्विवेदी	2x.00
भाषा विज्ञान एवं		
भाषा-शास्त्र	डॉ॰ कपिलदेव द्विवेदी	३२.००
मृच्छकटिक: शास्त्रीय, सामा	जिक	
एवं राजनीतिक अध्ययन	डाँ० शालग्राम द्विवेदी	X > 00
काशी की पाण्डित्य परम्पा	पं• बलदेव उपाध्याय	१२४.००
दशरूपकम्	डाँ० रमाशंकर त्रिपाठी	24.00
अभिनव-रस-सिद्धान्त	डॉ॰ दशरथ दिवेदी	90.00
		2×.00
वक्रोक्तिजीवितम्	डॉ॰ दशरथ द्विवेदी	(4.00
ध्वन्यालोक (दीपशिखा		V
टीका सहित)	डॉ॰ चण्डिकाप्रसाद शुक्त	83 80
अभिज्ञानशाकुन्तलम्		
(कालिदास)	डॉ॰ रमाशंकर त्रिपाठी	5% 60
मुद्राराक्षसम् (विशांखदत्त)	डॉ॰ रमाशंकर त्रिपाठी	80.0
उत्तररामचरितम् (भवभूति)	डॉ॰ रामअवध पाण्डेय तः	था
(बीर राघव टीका सहित)	डॉ॰ रविनाथ मिश्र	20.00
	Y Comment Form	
कादम्बरी: कथामुख	डॉ॰ बिश्वम्भरनाथ त्रिपा	90.00
	तथा डॉ॰ दशरय द्विवेदी	20.00
मेघदूत (कालिदास)	डाँ० रमाशकर त्रिपाठी	500
,		



विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी